Barcode - 99999990295335
Title - Pushti Bhakti Sudha Varsh -2 Ank -1 Thi 12
Subject - Literature
Author - Shah,Nagin Das
Language -
Pages - 310
Publication Year - 1922
Creator - Fast DLI Downloader
https://github.com/cancerian0684/dli-downloader
Barcode EAN.UCC-13

વિદ્યાભ્યા
પ્રકાશ રોક
મુંબઈ ૪

પુષ્ટિભક્તિસુધા.

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनुं स्वाम ॥ १ ॥
नाऽविरतो दुश्चरितान्नाशान्तो नासमाहितः
नाशान्तमानसो वापि प्रज्ञानेनैनमाप्नुयात् ॥ २ ॥
यस्य ब्रह्म च क्षत्रं च उभे भवत ओदनः
मृत्युर्यस्योपसेचनः क इत्था वेद यत्र सः ॥ ३ ॥

પ્રકાશક,
ચાંદીલાલ નગીનદાસ શાહ,
બી એ એલ્.એલ્.બી વકીલ હાઇકોર્ટ

ટપાલ ખર્ચ સાથે નોંધાવ્ય રૂ. ૨ છૂટક અંકના રૂ ૦-૪-૦

આવશ્યક નિવેદન

૧. આ માસિક સંબંધી સઘળો પત્રવ્યવહાર પ્રકાશકને નામે કરવો.
૨ આ માસિક દરેક માસની કૃષ્ણ એકાદશીએ પ્રકટ થાય છે
૩. આ માસિકમા છપાવવાને આવેલા લેખો લેવા ન લેવા તેમ જ તેમાં યોગ્ય સુધારો વધારો કરવો, પ્રકાશકની ઇચ્છાધીન છે
૪. શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના સિદ્ધાન્તાનુસાર જ લેખ લેવામાં આવશે
૫ વર્ષનુ નોછાવર પ્રથમથી લેવામા આવે છે.
૬. આ માસિકના પરિવર્તનમા જેમના તરફથી માસિક વા પત્ર મળશે તેમ વગર નોછાવરે આ માસિક મોકલવામાં આવશે
૭. કોઇપણ બાબતની બાબર મંગાવવી હોય તો, જવાબમાટ ટીકીટ મોકલવા તે સિવાય જવાબ આપવામા આવશે નહિ
૮ આ માસિકમા જાહેર બબર છપાવવી હોય કે હેન્ડબિલ વહેચાવવા હોય તેમણે પ્રકાશકને લખવું અથવા મલવું.

પુષ્ટિભક્તિસુધા કાર્યાલય.

પ્રિન્સેસસ્ટ્રીટ, મુંબઇ

અનુક્રમણિકા.

	વિષયો.	લેખકો.
૧.	કીર્તનો	.. બલદેવદાસ કીર્તનિયા
૨	ભગવત્પીઠિકા	.. રા૦ રા૦ શાસ્ત્રી મગનલાલ ગણપતિરામ M. A.
૩	,, અનુક્રમણિકા.	,, ,,
૪.	પુષ્ટિમાર્ગલક્ષણાનિ.	ગોસ્વામીશ્રી ૧૦૮ રમણલાલજી મહારાજ
૫.	સુરત ચતુર્થ પરિષદમાં કરવામાં આવેલા ઠરાવોની આલોચના	.. પ્રકાશક.
૬	મનુષ્યનું કર્તવ્ય, અને ધર્મજીજ્ઞાસા.	Mr. D. B. A., LL B Vakil, High Court,
૭	,, ૩૫ ૬૨૫ નું ઈનામ	.. .. ,, ,,
૮	શુદ્ધાદ્વૈતવિજ્ઞાન	.. રા૦ રા૦ મૂલચંદ તુલસીદાસ તેલીવાલા B. A.

श्रीगुसांइजीनी वधाई

राग सारंग.

नंदकुल प्रकट श्रीविट्ठलाधीश्वर पुष्टिमार्ग सुगम जन दिखायो ॥
भावभावित सकल गोपिका प्रकट भुवि साद्विको हेतु जिन श्रुतिन गायो ॥ १ ॥
नित्य लीला ललित गोकुलाधीशकी आप सेवा विविध कर बतायें ॥
स्वीय जन हेत अज्ञानहारक सबन कपटपट दूर कर सुकृत लाये ॥ २ ॥
शास्त्र श्रुति स्मृतिनमें नित्य कहि कह्यो नंदग्रह प्रकट जिय सबन भायो ॥
तेई अब वल्लभाधीश पथ प्रकट को मरम रंगी सबे रंग छायो ॥ ३ ॥
जयति श्रीवल्लभ श्रुति उद्धरन त्रिभुवन फेर नदके भवनकी केल ठानी ॥
इष्ट गिरिवरधर सदा सेवत चरन द्वार चारों वरन भरत पानी ॥ १ ॥
वेदपथ व्याससे हनुमान दाससे ज्ञानको कपिलसे कर्मजोगी ॥
माधु लक्ष्मन निपुन मनहु व्रजराजसुत प्रकट सुखराश मनो इन्द्र भोगी ॥ २ ॥
सिन्धुसम गभीर विमल मन अति धीर प्रीतिको जल क्षीर व्रज उपासि ॥
ध्यानको सनकसे भक्तको फनिगसे याइते सख्य किये व्रजमे वासी ॥ ३ ॥
मनहु-इन्द्रिय जीती कृष्णको करी प्रीत निगमकी चलि नीत अति विशेखी ॥
गर्वित अभिमानते बडे संनमानते शील ओर दाम गोविन्द देखी ॥ ४ ॥
सदा निर्मल बुद्धि अष्टसिद्धि नवनिधि द्वार भेवत तहा मुक्ति दासी ॥
रामराय गिरिधरन जान आयो शरण दीनके दुःखहरन घोषवासी ॥ ५ ॥

राग नायकी.

जनम लियो शुभ लगन विचार ॥
पौष मास कृष्ण नौमि शुभ दिन प्रकट भये द्विजवर वपु धार १ ॥
बाल विरध नरनारी मफुल्लित गावन दे कर तार ॥
मणिगनकंचन पटभूषण तन देत गुनिनको वार ॥ २ ॥
बाजत भेरि मृदंग सहनाइ झाझ झालरी तार ॥
देत अशिष सुत मागध वंदीजन गावत गुन विस्तार ॥ ३ ॥
जैजैकार भयो चहुंदिशतें वरसत कुसुम अपार ॥
शिवविरोचशुकसारदनारद करत सेव उच्चार ॥ ४ ॥
मोतिन चोक पुराय बहुविध बाधे बंधन द्वार ॥
रसिक गोसांई श्रीवल्लभग्रहे गिरिवरधर लीनो अवतार ॥ ५ ॥

श्रीगिरिधरजीकी वधाई

राग सारंग.

श्रीविट्ठलराज कुमार श्रीगिरिधर अवलोकत मन भयो आनद ॥
वेद पुरान मज्ञ न साध्य सब कलियुग उद्धरन आनंदकद ॥ १ ॥
विमल शरिर नाम जग निरमल विमल वदनकी मुसकनि मंद ॥
गोविन्दप्रभु प्रकटीत संतनहित लीलारुप धर्यो गोविन्द ॥ २ ॥

श्रीगोविंदजीकी वधाई

राग सारंग.

श्रीविट्ठलगृह आज वधाई ॥
प्रकटे श्रीगोविन्दविधु भुवपर भक्तनके सतति सुखदाई ॥ १ ॥
अति वडभाज रुक्मिनी मैया सुतमुख देखतही सुख पाइ ॥
श्रीवल्लभनंदन मन माद वढ्यो अति देत द्विजन वहु गाई ॥ १ ॥
घरघर वाधी वधनमाला और मोतीन चोक पुराई ॥
नाचत गावत करत कुलाहल वल्लभदाम देख वल जाई ॥ २ ॥
जयति गोविन्द आनदमय सर्वदा सकल व्रज ईश सेवे विहारी ॥
गोपिकाभाव उद्वोध निज दास कर दैवी जनहित निज देह धारी ॥ १ ॥
सुर मय ईशको मान मर्दन करन सुरभि पद पूजनई प्रकटचारी ॥
भक्तसुखकरन दुःखदवन संसारकृत मरम सुख रास रूप रंग कारी ॥ २ ॥

श्रीबालकृष्णजीकी वधाई

राग सारंग.

भयो श्रीविट्ठलके मन मोद ॥
पुरुषोत्तम श्रीबालकृष्ण प्रभु धाय खीये सब गोद ॥ १ ॥
वारवार विधुवदन विलोकत फुले अग न समाय ॥
वालदशाकी सहज माधुरी अचवत दृग न अघाय ॥ २ ॥
यह मुख देखही वनी आवे जाने रुक्मीकमुजान ॥
दोउ ओर मन् शोभा वाढी विष्णुदासके मान ॥ ३ ॥
आनंद भूतल पूरण है आज ॥

श्रीविठ्ठलजीके ग्रह प्रकटे श्रीबालकृष्ण महाराज ॥ १ ॥
आश्विन वदी तेरस दीन शुभ अति हरसे भक्त समाज
स्नेहभाव पुरन कृपानिधि दैवी उद्धरन काज
अद्भुत सुंदर घनश्याम प्रभु सब देवन शिरताज ॥ २ ॥
रुक्मिणी माजी गर्भे भये हरे धर्मनकी रारुन लाज ॥ ३ ॥
रूप अगाध अपार महिमा प्रभु कमलदल लोचन आज
पुष्टिभक्ति विस्तार करन हित आये प्रेमकी बाधी पाज ॥ ४ ॥
बाजत बधाई होत मगल धुनि निज जन सुखको साज
श्रीद्वारकेश रिझवत नित्य लीला दासनके उर गाज ॥ ५ ॥
जयति श्री बालकृष्णजित्कु विठ्ठल मुतन विविध रस भाव कर जीव तारे
नित्य रमणीय कमनीय नौतन वस्त्र भोग रागादि सेवा विचारे ॥ १ ॥
स्वीय हित करनको प्रीत जीय धरनको भजन हिये करनको आप कीने
सकल सामर्थ्य गुन जान जिय सर्वदा सरस रंगी जबे रंगभीने ॥ २ ॥
सुनो सखी गोकुल बाजत बधाई
श्रीविठ्ठल घर प्रकट भये श्रीबालकृष्ण सुखदाई ॥ १ ॥
सुंदर स्वरूप कोन गुन वरने लीला सब जग छाई
जे चरनन तर परे रहत जन तीनही के मन भाई ॥ २ ॥
जे सुख इंद्रादिकको दुर्लभ सो प्रभु प्रकट दिखाई
सरस रंग गोकुल गलियनमें आनंद उमग बढाई ॥ ३ ॥

श्रीगोकुलनाथजीकी बधाई.

राग सारंग.

जयति गोकुलनाथ माणपति जननके माल मुद्रा धर्म सबन दीने
वेषका साथ संन्यास दंडीयको भूप दिल्लीश घर दंड कीने ॥ १ ॥
सकल भुवन मंडलाधीश चूडा नम्यो जान माहात्म्य गुण शरन आयो
जान अपवाद जिय मूढ निज वेशको आत्मवंचक कपट दूर धायो ॥ २ ॥
जयति जयदेव तिहु लोकमें धुंन भई फिरोत विख्यात जगमा ज छाई
सरस रंगी प्रभु ईशके ईशकी शरण कीये महा सिद्धि पाई ॥ ३ ॥
आज हमारे मगल भाई प्रकट भये पुरनपुरन पुरुषोत्तम गोकुलेश सुखदाई ॥ १ ॥
तीहुं लोकमें आनद उपज्यो घर घर बजत बधाई
विष्णुदास प्रभुकी यह लीला निगम नेति कही गाई ॥ २ ॥

श्रीरघुनाथजीकी वधाई.

राग सारंग.

जयति रघुनाथ गुणगाथ विख्यातव्रत जीत पडितनको शरन लीने
शास्त्रबल जान अभिमान कर व्रजभुवन आयो मद गर्व सब खड कीने ॥ १ ॥
कपटपट दूर कर प्रकट लीला धरी भक्ति नव भाव जुत दसम दीने
जानकीरमण गुण कोन कवि कहि शके सरस रगी सबे चित्त छीने ॥ २ ॥

श्रीयदुनाथजीकी वधाई.

राग सारंग.

जयति यदुनाथ व्रज सकल पावन करन धीर गंभीर गुन कोन जाने
जयति गोकुल सुभग नित्य रमणीय जे भक्ति एकत्र करि वास ठाने ॥ १ ॥
जयति द्विजवर तिलक मुकुट विख्यात मणि सोमयाज्ञीय कृत नित्य भाजे
जयति श्रीभागवत श्रवण वाचक करन पुष्टिपथ दृढ करन नीत राजे ॥ २ ॥
जयति श्रीविठ्ठल श्रुवन प्रेम विश्रात कर विविध सेवा धर्म सबन दीने
जयति व्रजवास हुल्लास कर जननसें सरस रंगी सबे रंगभीने ॥ ३ ॥

श्रीघनश्यामजीकी वधाई.

राग सारंग.

जयति श्याम गुणधाम विश्राम जे वेद विधिविहित व्रत नित्यकारी
भक्ति अनुरागिणी देत निज जनको तेह प्रभु सकल लीला विहारी ॥ १ ॥
आप सेवा करे भक्त जिय अनुसरे स्वीय जन जान गुण गान दाता
मधुर रसपुंज रसकुंज रमणीय जे वस्तु निर्दोष ध्यान धाता ॥ २ ॥
शरन तेरे सबनकी आन भटकत श्रया परम पुरुषार्थ जहा सकल पावे
सरस रस रग सुखकंद धन छांडिके मूढ मतिमंद सोई आनद धावे ॥ ३ ॥

पुरवी.

छयरीया बांसकी फूलफूलन भरी कबहु कटिपर कबहु कर कबहु मोहत शीश धरी ॥ १ ॥
छांकी लई नीके पीयरे पट सोहत जात डरी
मोके प्रभु बोलन आवत क्योंहु घात अग सरी ॥ २ ॥

॥ श्रीभगवत्पीठिका ॥

॥ श्रीकृष्णाय नम ॥

श्रीपुरुषोत्तमनां त्रणु स्वरूप छे, प्रथम आधिभौतिक, द्वितीय आध्यात्मिक अने तृतीय आधिदैविक आधिभौतिक स्वरूप ते लक्ष्मीपति नारायण ओ क्षर स्वरूप छे आध्यात्मिक स्वरूप ते अक्षर[1] ब्रह्म, अने आधिदैविक स्वरूप ते श्रीपुरुषोत्तम[2] आ त्रणे स्वरूप सच्चिदानंद छे आधिदैविक श्रीपुरुषोत्तमने विषे पुष्टि छे, आध्यात्मिक अक्षर ब्रह्मने विषे मर्यादा छे, अने आधिभौतिक लक्ष्मीपति नारायणने विषे प्रवाह छे.

श्रीपुरुषोत्तमने सृष्टि करवानी इच्छा थाय छे त्यारे रवि अने काश्मीरना[3] योगे करीने जेम अग्नि प्रकट थाय छे तेम अक्षर ब्रह्मथी थयलो काल सदानंद श्रीपुरुषोत्तमना कटाक्षमाथी पृथक् थई जाय छे श्रीपुरुषोत्तमना भ्रुकुटिरन्ध्रमाथी काल उद्भवे छे, अने कालमांथी प्रकृति अने पुरुष प्रकट थाय छे. प्रकृतिमाथी गुणात्मक लक्ष्मीपति नारायणनो आविर्भाव थाय छे, नारायणना मनमाथी विष्णु,[4] ललाटमाथी रुद्र,[5] अने नाभिकमलमाथी ब्रह्मा[6] थाय छे. ओ ब्रह्मामाथी सृष्टि थाय छे.

वृन्दावनमा पुष्टि छे, गोकुलमा मर्यादापुष्टि, मथुरामा कालयवनना दाहपर्यन्त मर्यादापुष्टि अने पछीथी मर्यादा छे, तेम ज द्वारकामा पण मर्यादा छे,

हवे वृन्दावनमा एक अविच्छिन्न[7] आदिरास छे, अने पछी तो जे रसिक सेवक जीव उपर जेवी करुणा गोपागनाओ उपनिषद्रूपा छे अने कुमारिकाओ ऋषिरूपा[8] छे उपनिषद्रूपा गोपागनाओ अने ऋषिरूपा कुमारिकाओ उभये अनादि छे. गमनप्रसंगे[9] व्रजांगना साथे जेमनुं मिलन थयु ते ते गोपीओ सामवेदनी ऋचा छे नंदरायजीना गृहमां चतुर्व्यूहयुक्त[10] हरि छे, पछीथी शुद्ध रासमा केवल[11] श्रीपुरुषो-

---

1 केवल ज्ञानीनो आ स्वरूप विषे लय थाय छे

2 भक्तिनिष्ठ जीवोने आ स्वरूपनी प्राप्ति थाय छे.

3 केसर. 4 सत्त्वगुणावतार

5 तमोगुणावतार.

6 रजोगुणावतार.

7 नित्य.

8. अत्र संस्कृत ग्रंथग्रन्थमां उपनिषद्रूपा अने ऋषिरूपा विषे लिपिकारनो प्रमाद प्रायः थयो लागे छे कुमारिका उपनिषद्रूपा नथी, परंतु ऋषिरूपा छे श्रीमद्भागवतदशम स्कन्धना १९ मा अध्यायना श्रीसुबोधिनीजी अने ते ज उपरनु माहात्म्य जुओ.

9 अत्र रासप्रकरणना प्रथमाध्यायना श्लोक ४-५ ना श्रीसुबोधिनीजीनु अने ते उपरना माहात्म्यनु अनुसन्धान करो.

10. संकर्षण प्रद्युम्न अनिरुद्ध अने वासुदेव ओ चार व्यूह कहेवाय छे

11. व्यूहरहित शुद्धपुष्टिमार्गीय.

ત્તમ છે લઘુરાસમા विषण्णा भग्नसङ्कल्पाश्चिन्तामापु [1] એ પદે કરીને અનિરુદ્ધવ્યૂહનુ નિવારણ થયુ છે, कृत्वा मुखान्यवशुच [2] એ પદે કરીને સકર્ષણવ્યૂહનુ નિવારણ થયુ છે, અને काम्यङ्ग [3] એ પદે કરીને પ્રદ્યુમ્નવ્યૂહનુ નિવારણ થયુ છે, અને રાસક્રીડ કેવલ શ્રીપુરૂષોત્તમ સાથે જ થઇ છે.

પૂતના આદિના વધમા સકર્ષણવ્યૂહ [4] છે, દ્વારકામા ધર્મપાલનમાં અનિરુદ્ધવ્યૂહ [5] છે, દ્વારકામા રૂકિમણી આદિ સાથે કામચારમા પ્રદ્યુમ્નવ્યૂહ [6] છે, અને ગજલીલામા વાસુદેવ [7] છે

શ્રીગોવર્ધનોદ્ધરણમા તેમ જ દાનલીલામાં પણ કેવલ શ્રીપુરૂષોત્તમ છે કેવલ શરણમા પ્રવાહ છે, જપમા મર્યાદા છે, અને આત્મનિવેદનમા પુષ્ટિ છે કસના વધમ સકર્ષણવ્યૂહ છે, કુબ્જા ઉપર કૃપામા પ્રદ્યુમ્નવ્યૂહ છે, શ્રીદામા માલાકાર ઉપર કૃપામ અનિરુદ્ધવ્યૂહ છે, અને મુચુકુન્દ ઉપર કૃપામાં વાસુદેવ [8] છે એમ સર્વત્ર ચતુર્વ્યૂહ લીલા છે, તેથી (રાસ, દાન, ગોવર્ધનોદ્ધરણ ઇત્યાદિ વિના) ઇતર કોઇ પણ પ્રસંગમ શ્રીપુરૂષોત્તમ ૪ નથી

હવે પૂતનાદિના વધમા સકર્ષણયુક્ત ભગવાન્ છે, યમલાર્જુન ભંગમા સકર્ષણ છે, નલકુબર મણિગ્રીવના પ્રસંગમા અનિરુદ્ધ છે, અને નલકુબર મણિગ્રીવના ઉપ અનુગ્રહમા વાસુદેવ છે

વ્રજમા સર્વદા શ્રીપુરૂષોત્તમ જ છે, પરન્તુ નદરાયજી અને યશોદાજીને કૃપાથ દર્શન કરાવવામા ચતુર્વ્યૂહયુક્ત પુરુષોત્તમ જ છે

(વિવાહિત) ગોપાંગનામા પુષ્ટિ છે, ગોપીમા (અવિવાહિત કુમારિકામા મર્યાદા છે, અને વ્રજાંગનામા પ્રવાહ છે

અત્ર આ પ્રમાણે આશંકા થાય છે જે વ્રજકુમારિકાઓના પ્રાણ શ્રીકૃષ્ણ સાથે જ બંધાયલા છે, અને જે વ્રજકુમારિકાઓએ શ્રીકૃષ્ણ વિના અન્યત્ર સામાન્યિક ભર્તા કરવાની પણ ઇચ્છા સરખી નથી, તેવા વ્રજકુમારિકાઓને મર્યાદા કેમ કહ્યા ?

આ શંકાનુ સમાધાન કહીએ છીએ, શ્રવણ કરો. ગોપાંગના તો ભુક્તભુક્ત છે, ગૃહમા સુખનો ભોગ કરીને તે ગૃહસુખનો પરિત્યાગ પણ તેમણે તો કરેલો છે, અથવા ભુક્ત ગૃહસુખનો પરિત્યાગ કરવામા ગોપાંગનાઓએ લોકવેદનો ભય પણ જાણ્યો નથી,

---

1 શ્રીરાસપંચાધ્યાયીના પ્રથમાધ્યાયનો ૨૮ મો શ્લોક જુઓ.
2 " " " " ૨૯ મો " "
3 " " " " ૪૦ મો " "
4 સકર્ષણવ્યૂહ તામસ છે તેથી વધાદિક કાર્ય પ્રાય સકર્ષણ કરે છે.
5 અનિરુદ્ધવ્યૂહ સાત્વિક છે તેથી ધર્મપાલન કરે છે
6 પ્રદ્યુમ્નવ્યૂહ રાજસ છે તેથી કામચાર કરે છે
7 વાસુદેવવ્યૂહ નિર્ગુણ છે અને તેથી મોક્ષદાન કરે છે
8 વ્યૂહરાહુન.

ગોપાગનોએ કુટુંબની માયા અપત્ય વૈભવ [1] ગેહાધિપતિ ધન વપુ [2] પતિ ઇત્યાદિ સકલ માયાદિક ભુક્ત પદાર્થનો પરિત્યાગ [3] કરીને, સર્વ ધર્મનુ નિરાકરણ કરીને, કેવલ શ્રીપુરૂષોત્તમનુ જ ભજન કર્યુ છે, તેથી તેઓ [4] પુષ્ટ છે

પરતુ વ્રજકુમારિકા ગોપીઓએ ગોપીજનવલ્લભથી અન્યનુ ભજન કર્યુ, એટલું જ નહિ પરતુ શ્રીગોપીજનવલ્લભની પ્રાપ્તિના ઉપાય તરીકે કાત્યાયનીવ્રત પણ કર્યુ, તેથી તેમનુ અનન્ય [5] વ્રત વિનષ્ટ થયુ અને તેથી જ તેમની ભક્તિ મર્યાદા છે ગો કુમારિકાઓને ચતુર્વ્યૂહયુક્ત [6] જ પુરૂષોત્તમના દર્શન થયાં છે ગોપાગના અને કુમારિકા એ બે ઉપરાત જે વ્રજાગના કહ્યા તે વ્રજાગનામા કેવલ માતૃભાવથી પણ ભક્તિ કરનારનો સમાવેશ થાય છે એ વ્રજાગનાઓનો ઈશ્વરને [7] વિષે પુત્રભાવ છે, તેથી એ વ્રજાગનાને પ્રવાહી કહ્યાં આ પ્રમાણે ગોપીઓમા પણ ત્રણ [8] પ્રકાર છે

હવે પ્રથમ વસુદેવને મર્યાદા પુષ્ટિસ્વરૂપના દર્શન કરાવ્યા હતા, તેથી જન્મપ્રકરણમા પણ પ્રથમ વસુદેવને ચતુર્ભુજસ્વરૂપના દર્શન કરાવ્યા જન્મસ્થાનમાં પુષ્ટિરહિત વાસુદેવવ્યૂહનાં દર્શન કરાવવાને માટે ચતુર્ભુજસ્વરૂપના દર્શન કરાવ્યા, તેથી સમાધિને વિષે પ્રથમ જે સ્વરૂપના દર્શન થયા હતા તે જ આ સ્વરૂપ કે નહિ એમ જ્યારે વસુદેવજીને વિસ્મય થયો ત્યારે ભૃત્યની આર્તિ હરનાર અવિચ્છિન્ન રાસલીલામાં ક્રીડા કરનાર દયાલુ શ્રીપુરૂષોત્તમ ત્યા ત્યા સ્વકીય અંશ નિયોજીને પ્રાકૃત શિશુ [9] થઇ ગયા

પછી દધિકર્દમલીલામાં સ્વકીય અંશ અને આવેશ જ અથવા પૂર્ણ અભિષ્ટ ગોકુલ કુંજ વટ [10] ગોવર્ધન વ્રજ અને વૃન્દાવનમા જે પુષ્ટિસ્વરૂપ છે તે સર્વદા પૂર્ણ છે

હવે શ્રીનદરાયજીના ગૃહમાં મર્યાદાપુષ્ટિ સ્વરૂપ છે તેનુ વર્ણન કરવામા આવે છે એ મર્યાદાપુષ્ટિ સ્વરૂપ અષ્ટ આવરણથી સયુક્ત છે (૧) પૃથ્વી (૨) જલ (૩) તેજ (૪) વાયુ (૫) આકાશ (૬) મહત્તત્ત્વ (૭) અહંકાર અને (૮) પ્રકૃતિ એ અષ્ટ આવરણ મુકુન્દ [11] અષ્ટ આવરણે અને ચતુર્વ્યૂહ કરીને સયુક્ત છે

હવે નારાયણસ્વરૂપે [12] કરીને જે થાય છે તે કહીએ ગો દેવ ભક્ત અને સાધુના અનુગ્રહાર્થ એ નારાયણ ચાર પ્રકારે પ્રકટ થાય છે આ વક્રુહ ભગવાન્ નારાયણ ભક્તોના અનુગ્રહાર્થ અંશ કલા આવેશ અને વિભૂતિ એમ ચાર ભેદ કરે છે નૃસિંહ રામ વાસુદેવ એ ત્રણ અંશાવતાર છે, મત્સ્ય કૂર્મ વરાહ એ ત્રણ કલાવતાર છે, વામન બુદ્ધ કલ્કી એ ત્રણ આવેશાવતાર છે, અન્ય નારદાદિ વિભૂતિ છે આ પ્રમાણે ઈશ્વરની વિભૂતિયો [13] છે

---

1. બાલબચ્ચા. 2. અંગ
3 અને તેથી જ તેઓ પુષ્ટિપુષ્ટિ શુદ્ધપુષ્ટિ અથવા રાસમંડલમંડન કહેવાય છે
4 આ વિવાહિત ગોપાગનાઓનો સબંધ વ્યૂહરહિત કેવલ શ્રીપુરૂષોત્તમ સાથે જ છે.
5. ભગવત્પ્રાપ્તિને અર્થે પણ કાત્યાયનીવ્રત કરવામા કુમારિકાને અન્યાશ્રય—દોષ પ્રાપ્ત થયો, અને તેઓનુ અનન્ય વ્રત વિનષ્ટ થવાથી તેઓ મર્યાદા ચૂકાયા, તેથી પુષ્ટિમાર્ગીય વૈષ્ણવોએ અન્યાશ્રયનો તો સર્વથા પરિત્યાગ જ કરવો શ્રીગુસાંઇજી આજ્ઞા કરે છે કે અન્યસમ્બન્ધગન્ધોપિ ન્યરોધમેવ વાધતે। 6 ચતુર્વ્યૂહરહિત કેવલ શ્રીપુરૂષોત્તમના નહિ
7 જે પ્રભુમા સર્વાત્મભાવ યોગ્યો જોઇયે તેમા પુત્રભાવ યોગ્યો તેથી પ્રવાહી કહ્યા
8 (૧) વિવાહિત ગોપાગના (૨) કુમારિકા અને (૩) માતૃભાવવતી વ્રજાગનાઓ
9 વસ્તુત પ્રાકૃત શિશુ ઇત્યાદિ ઉપરના શ્રીસુબોધનીજી આદિ સાહિત્યનું અત્ર અવશ્ય અનુસંધાન કરવુ 10. વૃંગીવટ 11 મોક્ષદાતા ભગવાન 12. ક્ષર પ્રાવાહિક ૩૫.
13. આ સર્વ અધિકૃત ભેદ કીધાર્યા છે.

શ્રીમદ્ભગવત્પીઠિકાની અનુક્રમણિકા.

—o—

અંક.	સ્વરૂપ-સ્થલ-લીલા-ઇત્યાદિ.	પુષ્ટિ-મર્યાદા-પ્રવાહ-વ્યૂહ-આવરણ ઇત્યાદિ.
૧	અનિરુદ્ધ	ધર્મપાલક સાત્વિક વ્યૂહ.
૨	અક્ષર.	મર્યાદા
૩	અંશ.	નૃસિંહ-રામ-વાસુદેવ
૪	અરિષ્ટ.	પુષ્ટિ
૫	અહંકાર.	આવરણ.
૬	આકાશ	આવરણ.
૭	આત્મનિવેદન	પુષ્ટિ
૮	આદિગસ.	પુષ્ટિ
૯	આવરણ	પૃથ્વી, જલ, તેજ, વાયુ, આકાશ, મહત્તત્ત્વ, અહંકાર, અને પ્રકૃતિ
૧૦	આવેશ.	વામન-બુદ્ધ-કલ્કી.
૧૧	કલા.	મત્સ્ય-કૂર્મ-વરાહ
૧૨	કંસવધ	સંકર્ષણવ્યૂહ.
૧૩	કલ્કી.	આવેશ
૧૪	કાલ	પુરુષોત્તમનુ ભ્રૂકુટિસ્થ
૧૫	કુબ્જ	પુષ્ટિ.
૧૬	કુબ્જા	પ્રદ્યુમ્નવ્યૂહ.
૧૭	કુમારિકા	મર્યાદા
૧૮	કૂર્મ.	કલા
૧૯	ગુરુરાસ	પુષ્ટિ
૨૦	ગોકુલ	મર્યાદાપુષ્ટિ.
૨૧	ગોગણ	પુષ્ટિ
૨૨	ગોપી (કુમારિકા)	મર્યાદા
૨૩	ગોપાગના	પુષ્ટિ
૨૪	ગોવર્ધનોદ્ધરણ	પુષ્ટિ
૨૫	જય.	મર્યાદા.
૨૬	જલ	આવરણ
૨૭	તેજ	આવરણ
૨૮	દધિકર્દમ	અંશ, આવેશ, અથવા પૂર્ણ
૨૯	દાનલીલા	પુષ્ટિ
૩૦	દ્વારકા	મર્યાદા
૩૧	દ્વારકામાં કામચાર.	પ્રદ્યુમ્નવ્યૂહ
૩૨	દ્વારકામા ધર્મપાલન.	અનિરુદ્ધવ્યૂહ
૩૩	દ્વારકામા રાજલીલા	વાસુદેવ.
૩૪	નંદાલય.	મર્યાદાપુષ્ટિ
૩૫	નલકુબર અને માણિગ્રીવ	અનિરુદ્ધવ્યૂહ
૩૬	નલકુબર અને મણિગ્રીવ ઉપર અનુગ્રહ	વાસુદેવ વ્યૂહ.

૩૭	નારદાદિક	વિભૂતિ
૩૮	નારાયણ	પ્રવાહ
૩૯	નૃસિંહ	અંશ
૪૦	પુરુષ	કાલમાથી પ્રકટ થાય છે
૪૧	પુરુષોત્તમ (આધિદૈવિક)	પુષ્ટિ
૪૨	પુરુષોત્તમ (આધ્યાત્મિક)	મર્યાદા
૪૩	પુરુષોત્તમ (આધિભૌતિક)	પ્રવાહ.
૪૪	પૂતનાદિ વધ	(૧) આકર્ષણવ્યૂહ (૨) આકર્ષણવ્યૂહ-યુક્ત ભગવાન
૪૫	પૃથ્વી	આવરણ
૪૬	પ્રકૃતિ	(૧)આવરણ (૨)કાલમાથી પ્રકટ થાય છે
૪૭	પ્રદ્યુમ્ન	પ્રીતિજનક રાજસ વ્યૂહ
૪૮	બુદ્ધ	આવેશ
૪૯	બ્રહ્મા	દશ આવાન્તિક નારાયણના નાભિકમલમાથી પ્રકટ થયલો રજોગુણાવતાર
૫૦	મથુરા	(૧) મર્યાદાપુષ્ટિ (૨) મર્યાદા
૫૧	મથુરામા કાલયવનના હાડપર્યન્ત	મર્યાદાપુષ્ટિ
૫૨	મથુરામા કાલયવનના હાડ પછીથી	મર્યાદા
૫૩	મહેત્સવ	આવરણ
૫૪	મુકુન્દ	અષ્ટ આવરણ અનેચાર વ્યૂહોકરીને યુક્ત
૫૫	મુચુકુન્દ	વાસુદેવ વ્યૂહ
૫૬	યમલાર્જુનભંગ	સંકર્ષણ વ્યૂહ
૫૭	રામ	અંશ.
૫૮	રામ	કેવલ વ્યૂહરહિત પુરુષોત્તમ
૫૯	રુદ્ર	દશ આવાન્તિક નારાયણના લલાટમાથી પ્રકટ થયલો તમોગુણાવતાર
૬૦	લઘુરામ	ક્રમશ વ્યૂહની નિવૃત્તિ
૬૧	વટ	પુષ્ટિ
૬૨	વસુદેવ	(૧)પ્રથમ મર્યાદાપુષ્ટિ ચતુર્ભુજ સ્વરૂપનુ દર્શન (૨) જન્મસ્થાનમા પુષ્ટિરહિત ચતુર્ભુજ વાસુદેવનુ દર્શન
૬૩	વરાહ	કલા
૬૪	વામન	આવેશ
૬૫	વાયુ	આવરણ
૬૬	વાસુદેવ	મોક્ષદાતા નિર્ગુણ વ્યૂહ
૬૭	વિભૂતિ	નારદાદિક
૬૮	વિષ્ણુ	દશ આવાન્તિક નારાયણના મનમાથી પ્રકટ થયલો સત્ત્વગુણાવતાર
૬૯	વૃન્દાવન	પુષ્ટિ
૭૦	વૈકુંઠ (નારાયણ)	પ્રવાહ
૭૧	વ્રજ	પુષ્ટિ
૭૨	વ્રજાંગના (માતૃભાવ).	પ્રવાહ
૭૩	શ્રીકૃષ્ણ (કેવલ)	પ્રવાહ.
૭૪	શ્રીદામા માલાકાર	અનિરુદ્ધ વ્યૂહ
૭૫	સંકર્ષણ	ભૂમાનુગ્રહકર્તા તામસ વ્યૂહ

શ્રીમત્તમપીઠાધીશ્વર શ્રીમદ્ગોસ્વામિ શ્રીગોપાલલાલજીના ચિરજીવી લાલજી શ્રીમાન્ રમણલાલજીએ તા ૨૬-૩-૧૯૧૧ ને દિવસે મુંબાઈમાં શ્રીનાથસ્વરૂપની હવેલીમા '**पुष्टिमार्गलक्षणानि**' નામના શ્રીહરિરાયજીના સુપ્રસિદ્ધ ગ્રન્થ ઉપર વ્રજભાષામા વ્યાખ્યાન કર્યું હતુ તેનો ગુર્જરભાષામા સાર

॥ अथ श्रीमद्धरिरायविरचितानि पुष्टिमार्गलक्षणानि[1] ॥

सर्वसाधनराहित्य फलाप्तौ यत्र साधनम् ।
फल वा साधनम् यत्र पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १ ॥

સર્વ સાધનથી રહિત થઇ જવુ એ જ જે માર્ગમા ફલપ્રાપ્તિમા સાધન છે, જે માર્ગમા ફલસ્વરૂપ ભગવાન્ જ સાધન છે, તે માર્ગ પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે. (૧)

अनुग्रहेणैव सिद्धिर्लौकिकी यत्र वैदिकी ।
न यत्नाद्रन्यथा विघ्नः पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ २ ॥

લૌકિક અને વૈદિક જે માર્ગમાં કેવલ અનુગ્રહથી જ સિદ્ધ થઇ જાય છે, યત્નથી નહિ, અને યત્ન કરતા વિઘ્ન થાય છે તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૨)

यत्राङ्गीकरणे नैव योग्यतादिविचारणम् ।
अविलम्बः प्रभुकृत पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ३ ॥

જે માર્ગમા અંગીકાર કરવામા યોગ્યતાદિનો વિચાર કરવામા આવતો નથી, જે માર્ગમા પ્રભુ વિલંબ કરતા નથી, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૩)

स्वरूपमात्रपरता तात्पर्यज्ञानपूर्वकम् ।
अविलम्बः प्रभुकृत पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ४ ॥

જે માર્ગમાં તાત્પર્યજ્ઞાનપૂર્વક સ્વરૂપમાત્રમા નિષ્ઠા હોય છે, જે માર્ગમા ધર્મનિષ્ઠા હોતી નથી, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે. (૪)

यत्र प्रभुकृतौ नैव गुणदोषविचारणम् ।
तत्कृतावुत्तमज्ञान पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ५ ॥

જે માર્ગમા પ્રભુકૃત લીલામા ગુણદોષનો વિચાર કરવામા આવતો નથી, પરંતુ પ્રભુની કૃતિમા ઉત્તમતાનુ જ જ્ઞાન હોય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૫)

न लोकवेदमापेक्ष्यं सर्वथा यत्र वर्तते ।
सापेक्षता स्वामिमुखे पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ ६ ॥

---

૧ આ ગ્રન્થની સંસ્કૃત ટીકા અને સવિસ્તર ગુર્જર ભાષાન્તર શ્રીઅનિરુદ્ધલાલજીએ પણ પ્રસિદ્ધ કર્યું છે

જે માર્ગમા અર્થથા લોક અને વેદની અપેક્ષા નથી, જે માર્ગમા પ્રભુના સુખની જ અપેક્ષા છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૬)

चरणे दृश्यते यत्र हेतुर्नाणुरपि स्वतः ।
चरण च निजेच्छातः पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ७ ॥

જે માર્ગમા અગીકાર કરવામા અણુમાત્ર પણ હેતુ હોતો નથી, પ્રભુની ઇચ્છાથી જ चरणु (અગીકાર) કરવામા આવે છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે. (૭)

यत्र स्वतन्त्रता भक्तेराविर्भावानपेक्षणात् ।
पूर्णानुभवरूपत्वं पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ८ ॥

જે માર્ગમા ભક્તિ સ્વતત્ર છે, (પ્રભુના) આવિર્ભાવની પણ અપેક્ષા નથી, શ્રવણાદિક પણ પૂર્ણ સુખાનુભવરૂપ છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે. (૮)

लोकवेदभयाभावो यत्र भावातिरेकतः ।
सर्वबाधकतास्फूर्ति पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ ९ ॥

જે માર્ગમા અતિશય ભાવને લીધે લોકવેદનો ભય લાગતો નથી, અને કાલ કર્મ અને સ્વાભાવાદિ સર્વનો પણ પ્રતિબધ (બાધ) કરનાર આ માર્ગ છે એમ સ્ફૂર્તિ થાય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૯)

सम्बन्धः साधनं यत्र फल सम्बन्ध एव हि ।
सोपि कृष्णेच्छया जात पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १० ॥

જ્યા સાધન પણ સબધ છે, અને ફલ પણ સબધ છે, અને તે સબધ પણ શ્રીકૃષ્ણેચ્છાથી જ થાય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૦)

तत्सम्बन्धिषु तद्भावस्तद्विन्नेषु विरोधिता ।
उदासीनेषु समता पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ ११ ॥

જ્યા ભગવત્સબધીમાં તદ્ભાવ, ભિન્નમા વિરોધિતા, અને ઉદાસીનમા સમતા હોય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૧)

विद्यमानस्य देहादेर्न स्वीयत्वेन भावनम् ।
परोक्षेपि तदर्थित्वं पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १२ ॥

વિદ્યમાન દેહાદિમાં પણ જ્યાં સ્વીયતાની ભાવના નથી, પરોક્ષમા પણ દેહાદિને ભગવદર્થક માનવામા આવે છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૨)

भजने यत्र सेव्यस्य नोपकारकृति क्वचित् ।
पोषणं भावमात्रस्य पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १३ ॥

જ્યા સેવામાં સેવ્ય સ્વરૂપ તરફથી ઉપકારની અપેક્ષા નથી, માત્ર ભાવનું જ પોષણ છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૩)

भजनस्यापवादो न क्रियते फलदानतः ।
प्रभुणा यत्र तद्भावात् पुष्टिमार्गं स कथ्यते ॥ १૪ ॥

જ્યા પ્રભુ તદ્ભાવને લીધે ફલદાનથી ભજનનો અપવાદ કરતા નથી, એટલે વિરહજન્ય તાપકલેશાનન્દનો ભજનાનન્દનો અનુભવ કરવામા (પ્રકટ થઈને) ફલદાનથી પ્રતિબંધ કરતા નથી, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૪)

यत्र वा मुखसम्बन्धो वियोगे सङ्गमादपि ।
सर्वलीलानुभवतः पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ १૫ ॥

જ્યાં વિયોગમા સયોગથી પણ અધિક સુખસબંધ છે, કારણ કે વિયોગમાં સર્વ લીલાનો અનુભવ થાય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૫)

फले च साधने चैव सर्वत्र विपरीतता ।
फलं भावः साधन स पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ ૧૬ ॥

જ્યા ફલ અને સાધનમા સર્વત્ર વિપરીતતા છે, જ્યા ફલ પણ ભાવ છે, અને સાધન પણ ભાવ જ છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૬)

पश्चात्तापः सदा यत्र तत्सम्बन्धिकृतावपि ।
दैन्योद्बोधाय सतत पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ૧૭ ॥

જ્યા ભગવત્સબંધી કૃતિ છતા પણ દૈન્યના આવિર્ભાવ માટે પશ્ચાત્તાપ કરવામાં આવે છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૭)

आविर्भावे न सापेक्षं दैन्य यत्र हि साधनम् ।
फल वियोगजं दैन्य पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ ૧૮ ॥

જ્યા અન્યની અપેક્ષા વિના માત્ર દૈન્ય જ ભગવાનના આવિર્ભાવ થવામા સાધન છે, અને જ્યા ભગવાનના વિયોગથી થયલુ દૈન્ય ફલસ્વરૂપ છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૮)

समस्तविषयत्याग सर्वभावेन यत्र हि ।
समर्पण च देहादेः पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ ૧૯ ॥

જ્યા સમસ્ત વિષયનો ત્યાગ કરવામા આવે છે, જ્યા દેહાદિનુ સમર્પણ સર્વભાવે કરવામા આવે છે તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૯)

विषयस्तेन तत्त्याग स्वस्मिन् विषयता स्मृतेः ।
यत्र वै सर्वभावेन पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ૨૦ ॥

જ્યાં વિષયોમા મમતા નથી, જ્યા સર્વભાવને લીધે ભગવાન્ ભક્તનુ સ્મરણ કરે છે તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૨૦)

૩૭	નારદાદિક	વિભૂતિ
૩૮	નારાયણ	પ્રવાહ
૩૯	નૃસિંહ	અંશ
૪૦	પુરુષ	કાલમાથી પ્રકટ થાય છે
૪૧	પુરુષોત્તમ (આધિદૈવિક)	પુષ્ટિ
૪૨	પુરુષોત્તમ (આધ્યાત્મિક)	મર્યાદા
૪૩	પુરુષોત્તમ (આધિભૌતિક)	પ્રવાહ
૪૪	પૂતનાદિ વધ	(૧) સંકર્ષણવ્યૂહ (૨) સંકર્ષણવ્યૂહ-યુક્ત ભગવાન
૪૫	પૃથ્વી	આવરણ
૪૬	પ્રકૃતિ	(૧)આવરણ (૨)કાલમાથી પ્રકટ થાય છે
૪૭	પ્રદ્યુમ્ન	પ્રીતિજનક તામસ વ્યૂહ
૪૮	બુદ્ધ	આવેશ
૪૯	બ્રહ્મા	કલ્પ પ્રાવાહિક નારાયણના નાભિકમલમાથી પ્રકટ થયલો રજોગુણાવતાર
૫૦	મથુરા	(૧) મર્યાદાપુષ્ટિ (૨) મર્યાદા
૫૧	મથુરામા કાલયવનના દાહપર્યન્ત	મર્યાદાપુષ્ટિ
૫૨	મથુરામા કાલયવનના દાહ પછીથી	મર્યાદા
૫૩	મહત્તત્ત્વ	આવરણ
૫૪	મુકુન્દ	અષ્ટ આવરણ ચતુર્વ્યૂહકરીને યુક્ત
૫૫	મુચુકુન્દ	વાસુદેવ વ્યૂહ
૫૬	યમલાર્જુનભંગ	સંકર્ષણ વ્યૂહ
૫૭	રામ	અંશ.
૫૮	રામ	કેવલ વ્યૂહરહિત પુરુષોત્તમ
૫૯	રુદ્ર	કલ્પ પ્રાવર્તાહિક નારાયણના લલાટમાંથી પ્રકટ થયલો તમોગુણાવતાર
૬૦	લઘુગમ	ક્રમશ વ્યૂહની નિવૃત્તિ
૬૧	વજ્ર	પુષ્ટિ
૬૨	વસુદેવ	(૧)પ્રથમ મર્યાદાપુષ્ટિ ચતુર્ભુજ સ્વરૂપનુ દર્શન (૨) જન્મસ્થાનમા પુષ્ટિરહિત ચતુર્ભુજ વાસુદેવનુ દર્શન
૬૩	વરાહ	કલા
૬૪	વામન	આવેશ
૬૫	વાયુ	આવરણ
૬૬	વાસુદેવ	મોક્ષદાતા નિર્ગુણ વ્યૂહ
૬૭	વિભૂતિ	નારદાદિક
૬૮	વિષ્ણુ	કલ્પ પ્રાવાહિક નારાયણના મનમાથી પ્રકટ થયલો સત્ત્વગુણાવતાર
૬૯	વૃન્દાવન	પુષ્ટિ
૭૦	વૈકુંઠ (નારાયણ)	પ્રવાહ
૭૧	શચી	પુષ્ટિ
૭૨	શબ્દગના (માતૃભાવ)	પ્રવાહ
૭૩	શરણ (કેવલ)	પ્રવાહ.
૭૪	શ્રીદામા માલાકાર	અનિરુદ્ધ વ્યૂહ
૭૫	સંકર્ષણ	ભૂભારહરણકર્તા તામસ વ્યૂહ

શ્રીસપ્તમપીઠાધીશ્વર શ્રીમદ્ગોસ્વામિ શ્રીગોપાલલાલજીના ચિરંજીવી લાલજી શ્રીમાન્ રમણલાલજીએ તા ૨૬-૩-૧૯૧૧ ને દિવસે મુંબાઈમા શ્રીમાતસ્વરૂપની હુંચેલીમા '**पुष्टिमार्गलक्षणानि**' નામના શ્રીહરિરાયજીના સુપ્રસિદ્ધ ગ્રન્થ ઉપર વ્રજભાષામા વ્યાખ્યાન કર્યુ હતુ તેનો ગુર્જરભાષામા સાર

॥ अथ श्रीमद्धरिरायविरचितानि पुष्टिमार्गलक्षणानि[1] ॥

सर्वसाधनराहित्य फलाप्तौ यत्र साधनम् ।
फलं वा साधनम् यत्र पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १ ॥

સર્વ સાધનથી રહિત થઇ જવુ એ જ જે માર્ગમા ફલપ્રાપ્તિમા સાધન છે, જે માર્ગમા ફલસ્વરૂપ ભગવાન્ જ સાધન છે, તે માર્ગ પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧)

अनुग्रहेणैव सिद्धिर्लौकिकी यत्र वैदिकी ।
न यत्नाद्यन्यथा विघ्नः पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ २ ॥

લૌકિક અને વૈદિક જે માર્ગમા કેવલ અનુગ્રહથી જ સિદ્ધ થઇ જાય છે, યત્નથી નહિ, અને યત્ન કરતા વિઘ્ન થાય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૨)

यत्राङ्गीकरणे नैव योग्यतादिविचारणम् ।
अविलम्बः प्रभुकृत पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ३ ॥

જે માર્ગમા અંગીકાર કરવામા યોગ્યતાદિનો વિચાર કરવામા આવતો નથી, જે માર્ગમા પ્રભુ વિલંબ કરતા નથી, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૩)

स्वरूपमात्रपरता तात्पर्यज्ञानपूर्वकम् ।
अविलम्बः प्रभुकृत पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ४ ॥

જે માર્ગમા તાત્પર્યજ્ઞાનપૂર્વક સ્વરૂપમાત્રમાં નિષ્ઠા હોય છે, જે માર્ગમા ધર્મનિષ્ઠા હોતી નથી, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૪)

यत्र प्रभुकृतौ नैव गुणदोषविचारणम् ।
तत्कृतावुत्तमज्ञान पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ५ ॥

જે માર્ગમા પ્રભુકૃત લીલામા ગુણદોષનો વિચાર કરવામાં આવતો નથી, પરંતુ પ્રભુની કૃતિમા ઉત્તમતાનુ જ જ્ઞાન હોય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૫)

न लोकवेदसापेक्ष्यं सर्वथा यत्र वर्तते ।
सापेक्षता स्वामिमुखे पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ ६ ॥

---

૧ આ ગ્રન્થની સંસ્કૃત ટીકા અને અનિવાર ગુર્જર ભાષાન્તર શ્રીયદુનિરૂદ્ધલાલજીએ પણ પ્રસિદ્ધ કર્યુ છે.

જે માર્ગમાં સર્વથા લોક અને વેદની અપેક્ષા નથી, જે માર્ગમા પ્રભુના ગુણની જ અપેક્ષા છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૬)

वरणे दृश्यते यत्र हेतुर्नाणुरपि स्वतः ।
वरण च निजेच्छातः पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ७ ॥

જે માર્ગમા અગીકાર કરવામાં અણુમાત્ર પણ હેતુ હોતો નથી, પ્રભુની ઇચ્છાથી જ વરણ (અગીકાર) કરવામા આવે છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે. (૭)

यत्र स्वतन्त्रता भक्तेराविर्भावानपेक्षणात् ।
पूर्वानुभवरूपत्वे पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ ८ ॥

જે માર્ગમા ભક્તિ સ્વતત્ર છે, (પ્રભુના) આવિર્ભાવની પણ અપેક્ષા નથી, દ્રવ્યાદિક પણ પૂર્ણ સુખાનુભવરૂપ છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે. (૮)

लोकवेदभयाभावो यत्र भावातिरेकतः ।
सर्वबाधकतास्फूर्ति. पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ ९ ॥

જે માર્ગમા અતિશય ભાવને લીધે લોકવેદનો ભય લાગતો નથી, અને કાલ કર્મ અને સ્વાભાવાદિ સર્વનો પણ પ્રતિબધ (બાધ) કરનાર આ માર્ગ છે એમ સ્ફૂર્તિ થાય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૯)

सम्बन्धः साधनं यत्र फल सम्बन्ध एव हि ।
सोपि कृष्णेच्छया जात पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १० ॥

જ્યા સાધન પણ સબધ છે, અને ફલ પણ સબધ છે, અને તે સબધ પણ શ્રીકૃષ્ણેચ્છાથી જ થાય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૦)

तत्सम्बन्धिषु तद्भावस्तद्भिन्नेषु विरोधिता ।
उदासीनेषु समता पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ ११ ॥

જ્યા ભગવત્સબધીમા તદ્ભાવ, ભિન્નમાં વિરોધિતા, અને ઉદાસીનમા સમતા હોય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૧)

विद्यमानस्य देहादेर्न स्वीयत्वेन भावनम् ।
परोक्षेपि तदर्थित्वं पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १२ ॥

વિદ્યમાન દેહાદિમા પણ જ્યાં સ્વીયતાની ભાવના નથી, પરોક્ષમા પણ દેહાદિને ભગવદર્થક માનવામાં આવે છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૨)

भजने यत्र सेव्यस्य नोपकारकृति क्वचित् ।
पोषण भावमात्रस्य पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १३ ॥

જ્યા સેવામા સેવ્ય સ્વરૂપ તરફથી ઉપકારની અપેક્ષા નથી, માત્ર ભાવનુ જ પોષણ છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૩)

भजनस्यापवादो न क्रियते फलदानतः ।
प्रभुणा यत्र तद्भावात् पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १४ ॥

જ્યા પ્રભુ તદ્ભાવને લીધે ફલદાનથી ભજનનો અપવાદ કરતા નથી, એટલે વિરહજન્ય તાપકલેશાનન્દનો ભજનાનન્દનો અનુભવ કરવામા (પ્રકટ થઈને) ફલદાનથી પ્રતિબધ કરતા નથી, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાયં છે (૧૪)

यत्र वा सुखसम्बन्धो वियोगे सङ्गमादपि ।
सर्वलीलानुभवतः पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ १५ ॥

જ્યાં વિયોગમા સયોગથી પણ અધિક સુખસબધ છે, કારણ કે વિયોગમા સર્વ લીલાનો અનુભવ થાય છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૫)

फले च साधने चैव सर्वत्र विपरीतता ।
फलं भावः साधन स पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १६ ॥

જ્યા ફલ અને સાધનમા સર્વત્ર વિપરીતતા છે, જ્યા ફલ પણ ભાવ છે, અને સાધન પણ ભાવ જ છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૬)

पश्चात्तापः सदा यत्र तत्सम्बन्धिकृतावपि ।
दैन्योद्बोधाय सतत पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ १७ ॥

જ્યાં ભગવત્સબધી કૃતિ છતા પણ દૈન્યના આવિર્ભાવ માટે પશ્ચાત્તાપ કરવામા આવે છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૭)

आविर्भावे न सापेक्षं दैन्य यत्र हि साधनम् ।
फल वियोगज दैन्य पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १८ ॥

જ્યા અન્યની અપેક્ષા વિના માત્ર દૈન્ય જ ભગવાનના આવિર્ભાવ થવામા સાધન છે, અને જ્યા ભગવાનના વિયોગથી થયલુ દૈન્ય ફલરૂપ છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૮)

समस्तविषयत्याग सर्वभावेन यत्र हि ।
समर्पण च देहादेः पुष्टिमार्ग स कथ्यते ॥ १९ ॥

જ્યા સમસ્ત વિષયનો ત્યાગ કરવામા આવે છે, જ્યા દેહાદિનુ સમર્પણ સર્વભાવે કરવામા આવે છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૧૯)

विषयत्वेन तत्त्याग स्वस्मिन् विषयता स्मृतेः ।
यत्र वै सर्वभावेन पुष्टिमार्गः स कथ्यते ॥ २० ॥

જ્યા વિષયોમા મમતા નથી, જ્યા સર્વભાવને લીધે ભગવાન્ ભક્તનુ સ્મરણ કરે છે, તે પુષ્ટિમાર્ગ કહેવાય છે (૨૦)

एवंविधैर्विशेषेण मकारैस्तु सदाश्रितैः ।
हृदि कृत्वा निजाचार्यान् पुष्टिमार्गो हि बुध्यताम् ॥ २१ ॥

શ્રીમન્નિજાચાર્ય શ્રીમદ્વલ્લભાધીશજીને હૃદયમા પધરાવીને આશ્રિત વૈષ્ણવોએ તો શ્રદ્ધાસર્વદા એવાએવા પ્રકારે કરીને વિશેષે પુષ્ટિમાર્ગનુ સ્વરૂપ સમજવુ. (૨૧)

॥ इति श्रीमद्धरिरायविरचितश्रीपुष्टिमार्गलक्षणानि समाप्तानि ॥

સુરત પરિષદ્માં કરવામાં આવેલા ઠરાવોની આલોચના.

સુરત પરિષદ્માં જે જે ઠરાવો કરવામાં આવ્યા છે તે સઘળા ઠરાવો અમો અંક દશમામાં આપી ગયા છીએ. તત્સબધી કેટલુક વિવેચન કરવાની આવશ્યકતા જણાયાથી એક પછી એક ઠરાવ હાથ ધરી તેના ઉપરના અમારા વિચારો વૈષ્ણવવર્ગ અને ઇતર જન આગળ પ્રસિદ્ધ કરીશુ.

થયેલા સોલ ઠરાવો પૈકી ઠરાવ ૯ મો નીચે પ્રમાણે છે. (જેવી રીતે શ્રીશમાનુજ તથા શકરાચાર્યના બ્રહ્મસૂત્ર પરના શ્રી અને શારીર ભાષ્યો થી, એ અને એમ્ એ મા ટેક્સ્ટ તરીકે દાખલ કરવામા આવ્યાં છે, તેવી જ રીતે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યનુ સપ્રકાશ અણુભાષ્ય, વિદ્વન્મડન અને શાસ્ત્રાર્થપ્રકરણ-નિબધ દાખલ કરવાને પરિષદ્ તરફથી યુનીવર્સીટીને અરજી કરવી અને અરજી સાથે ઉક્ત ગ્રથોની એકેક નકલ મોકલી આપવી' આ ઠરાવ જરૂરનો છે કે કેમ અને તે કાર્ય થવું જોઇયે કે કેમ તત્સબધી એ મત હોઇ શકે જ નહિ, છતાં સાપ્રદાયિક જ્ઞાન ગૂઢ રાખવુ જોઇયે, તેને પ્રસિદ્ધ કરવુ ન જોઇયે અર્થાત્ છપાવવુ ન જોઇયે, તો પછી યુનિવર્સીટીમાં દાખલ કરવાની તો વાત જ શી એવા પ્રાચીન વિચારના કેટલાક વૃદ્ધ છે. પરતુ તે સખ્યા ઘણી જ પરિમિત હોવાથી તે વિચારની યોગ્યતાઅયોગ્યતાનો વિચાર અત્રે ન કરતા ઠરાવની જ આલોચના કરીશુ.

આ લેખના લેખકે પાટણ પરિષદમા 'આપણા પુસ્તકો' એ વિષયપર એક લેખ વાચ્યો હતો. તેમા પણ ઠરાવગત વિચાર દર્શાવ્યા હતા.

પ્રાચીન પદ્ધતિસરની કેળવણી હાલ ઘણી જ ઓછી થઈ છે બ્રાહ્મણો મૂલે જ સંસ્કૃતની કેળવણી ઓછી લે છે, તેમા સ્વસંપ્રદાયમા તો સ્વસ્વ પ્રદાય છે માટે તેનુ યથાર્થ જ્ઞાન લેવુ તેના હેતુથી સંસ્કૃત અને સાંપ્રદાયિક જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરનાર બ્રાહ્મણ જવલે જ મળી આવશે ઇતર બ્રાહ્મણો ફક્ત ઉદરપોષણાર્થ જેવું તેવુ લેભાગુ અધ્ય-

યન કરી ભાગવતના અર્થનો અનર્થ કરી વૈષ્ણવોની શ્રદ્ધા ઉપર તાગડધીન્ના કરે છે, અને સમય આવે ત્યારે આપણા સંપ્રદાયનુ રહસ્ય સમજ્યા વિના તેના ઉપર જાણે અજાણે પ્રહાર કરે છે ભાગવતની કે ઇતર ગ્રથની કથા અમૃતને બદલે શ્રોતાના નિર્મલ કર્ણમાં હાલાહલ વિષ રેડે છે. આ પ્રમાણે પાઠશાલાનુ આધિપત્ય લઈ સાંપ્રદાયિક રીતે સાંપ્રદાયિક ગ્રથની કેલવણી આપી શકે તેવા શાસ્ત્રી દુર્લભ હોવાથી જ પરિષદ્ તરફથી પાઠશાલા ખુલ્લી મુકવામા આવી નથી. બ્રાહ્મણ જેવો શિક્ષીત વર્ગ ઉપર પ્રમાણેનો હોવાથી સાંપ્રદાયિક ઇતર વૈષ્ણવોમા સંપ્રદાય સંબધી કેટલુ અને કેવુ જ્ઞાન હોય તેનો વાચકવર્ગ વિચાર કરી લેશે. અને તેના પરિણામમાં જ સ્વસંપ્રદાય ઉપર 'સ્વધર્મી' અને વિધર્મી જનો તરફથી અનેકાનેક આક્ષેપો કરવામાં આવે છે, નવીન જમાના પ્રમાણે કેલવાતી ઉધરતી નિજ પ્રજા ઉપર સ્વધર્મ સંબંધી કાઇ પણ પ્રકાશ પાડી તેના મનમાં સ્વધર્મનુ ગૌરવ, ઉત્તમપણુ પ્રકટ કરી શકાતુ નથી.

સ્વસંપ્રદાય ઉપર આક્ષેપના પુસ્તકો અને લેખો પ્રકટ કરનાર કરાવનાર કરમનદાસ મુળજી, જમનાદાસ સેવકલાલ, લક્ષ્મીદાસ ખીમજી અને અન્ય જનો વૈષ્ણવના જ પુત્રો અને વૈષ્ણવો જ હતા. તેઓ સ્વસંપ્રદાય ઉપર સ્વાભાવિક વૈરની લાગણીથી સંપ્રદાયવિરૂદ્ધ લખાણ કરવાને બહાર પડેલા ન હતા સત્ય જ્ઞાન મેળવવાની તેઓની લાલસા ન હતી તેમ ન હતુ પરતુ તે જનોના વૈષ્ણવ માબાપો કે સંપ્રદાયના ઇતર જનો સંપ્રદાયમાં શા શા ગ્રથરત્નો છે, સંપ્રદાયપ્રવર્ત્તક દયાલુ પિતાએ આપણે માટે શી અમૂલ્ય નિધિ મૂકી છે, સંપ્રદાયના સત્ય સિદ્ધાતો શું છે, અરે આપણો સંપ્રદાય 'પૃષ્ટિમાર્ગ' કહેવાય છે તો 'પુષ્ટિ' નો સત્ય અર્થ શુ, તેનાથી તદ્દન અજ્ઞાત હતા અને તેથી તત્સબધી કાંઇ પણ જ્ઞાન તેમની સંતતિને કે સગીને આપી શકતા નહિ, એટલે તેઓને વાસ્તવિક એમ જ લાગવા માંડયુ કે સંપ્રદાય કેવલ અંધ શ્રદ્ધા ઉપર જ ચાલે છે કેટલીક વ્યક્તિગત દોષોને સંપ્રદાયના દોષો માની સંપ્રદાય ઉપર આક્ષેપ તેઓએ કર્યા છે તે પ્રમાણે કરવામાં તેઓ કોઇપણ રીતે વ્યાજબી કહેવાય નહિ. અમુક સંપ્રદાયના સિદ્ધાતો શું છે, તેમના પ્રવર્ત્તક આચાર્ય શું કહે છે તે જાણવાની દરકાર કર્યા સિવાય તેના ઉપર મનોકલ્પિત મરજીમાં આવે તેવા આક્ષેપ અને પ્રહાર કરવામા આવે તે કોઇપણ અંશે સત્ય હોય નહિ. દરેક જનસમુદાયની જાણત ઉપર દરેકને પોતાના સ્વતત્ર વિચાર જણાવવાનો હક છે, તેમ જ અમુક વિવેકની હદમા રહી કોઇની લાગણી ન દુઃખાય તેવીરીતે નિસ્પૃહપણાથી સત્યની ખાતર ધર્મની જાણતમાં પણ અમુક સંપ્રદાયના સિદ્ધાંતોનુ ખંડનમંડન કરવાની પણ દરેકને છૂટ છે; પરંતુ કોઇપણ કાર્યમા પ્રવૃત્ત થતાં પહેલાં, પ્રવૃત્ત થનારે તે કાર્ય માટે સંપૂર્ણ યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરવી જોઇયે, નહિ તો હાલમાં કેટલાક એગ્લો ઇન્ડીઅનો કે જેઓને ઇન્ડીઆનુ કાંઈ ભાન નથી અને પછી મરજી મુજબ ઇન્ડીઆ જાણત પેપરમા લખે છે અને કાંદાનું કચુંબર કરે છે અને બીજાં પેપરોના હાથે મૂર્ખ બને છે, તેવી જ રીતે કોઇ પણ વિષયમાટે સંપૂર્ણ યોગ્યતા પ્રાપ્ત કર્યા સિવાય તે વિષયપર લખવાને ઉદ્યત થવું તે પોતાની હાંસી કરાવવા બરાબર છે કોઇપણ ગ્રાથની ટીકા કરવી, નિરીક્ષા કરવી

તે અમુક અભાવ કે ધિક્કારની લાગણીથી કરવાની નથી, પરતુ શુદ્ધ મનથી સત્ય સ્વરૂપ સપૂર્ણ પ્રયાસે જાણી નિષ્પક્ષપાતરીતે (ન્યાયાસન ઉપરથી ન્યાયાધીશની માફક) પોતાનો સત્ય ન્યાય અથવા અભિપ્રાય આપવાનો છે ન્યાયાધીશને કેસ (મુકદમા) ઉપર ન્યાય આપવાને માટે કેસની દરેક બાબત પ્રથમ જાણવી પડે છે તેવી રીતે દરેક ટીકાકારે પણ જે બાબત ઉપર પોતે ટીકા કરતા હોય તેની સપૂર્ણ માહીતિ મેલવવી જોઇએ છે, તેમા ઉપરચોટીયુ જ્ઞાન કોઇપણ રીતે કામમા આવે નહિ આપણા પુષ્ટિમાર્ગપર કોઇપણ પ્રકારની ટીકા કરવામાં આવી હોય તો તે તત્સંબધી અજ્ઞાનને લઇને જ કરવામા આવી છે હવે તો તે ખુલ્લી વાત છે કે શ્રીમદ્આચાર્ય-શ્રીવલ્લભાચાર્યજીએ મહા પ્રખર પડિતને પણ અજાયબી પમાડે તેવા નાના મોટા ૮૪ ગ્રથો લખ્યા છે. હવે એવા આચાર્યશ્રીને એનીબીઝાન્ટ જેવી વિદુષીબાઇ કે જે સર્વ ધર્મ પ્રતિ માનની લાગણીથી જુએ છે તે 'most illitrate' ધણા જ અભણ (તદ્દન નિરક્ષર) એ પ્રમાણે વિશેષણ સત્ય વાત જાણતી હોય તો લગાડે ખરી ? તેમ જ ભીમાર્ડન જેવા ઇતિહાસકાર મહાપ્રભુજીના સત્ય વિચાર જાણતા હોય તો લખે કે આચાર્યશ્રી ખાઈ પીને મોજ કરવાનો ઉપદેશ આપે છે ! આ સર્વ ભ્રાન્તિ દુર કરાવવાને કેવલ સસ્કૃતજ્ઞ શાસ્ત્રી શક્તિવાન્ નથી, કારણ તેને ઇંગ્રેજી પુસ્તકોમા શા શા આક્ષેપો કરવામા આવે છે તેની જાણ થતી નથી, ઇગ્રેજી કેળવણી લેતા આપણા યુવકો આપણા સપ્રદાયના સત્ય સિદ્ધાંતો જાણે તો થોડા જ વખતમાં આ આક્ષેપો દુર કરાવી શકે લોકો ઉપર છાપ પડે તેવા ગુજરાતી તથા ઇંગ્રેજીમા પુસ્તકો લખી શકે અને વ્યાખ્યાનો આપી શકે, અને તે પ્રમાણે રા રા શાસ્ત્રી મગ્નલાલભાઇ, મહેન રા બ લલ્લુભાઇ, રા રા રણછોડદાસ પટવારી કરી બતાવે છે એટલે તત્સબધી વિશેષ લખવાની જરૂર નથી આપણી ભાવી પ્રજાને ધર્મમાર્ગથી ચ્યુત થતી બચાવવી હોય તો તેઓને વ્યાવહારિક કેળવણી આપી આ જન્મને માટે સસાર ચલાવવાને લાયક બનાવવામાં આવે છે તેવી રીતે બલ્કે તેથી વિશેષ ધાર્મિક કેળવણી આપી સંસારમાં રહ્યા છતાં મુક્ત થઇ હરિરસનો આસ્વાદ લેવાને ભાગ્યવાન્ બનાવવા હોય તો વ્યાવહારિક કેળવણી સાથે ધાર્મિક કેળવણી આપવી જોઇયે. આમ કરવાને વાસ્તે વિશેષ ફંડ હોઇ પ્રાથમિક કેળવણીથી જ આપણી સ્વતત્ર સસ્થાઓ જોઇયે. તે બધું બની આવતાં વાર લાગે, તે પહેલા આપણા નામવર સરકારે આપણાપર દયા કરી જ્યારે બી. એ, એમ. એ માં ધર્મના ગ્રથો જેવી રીતે સૂત્રપરના શાંકર અને રામાનુજ ભાષ્યો દાખલ કર્યા છે તેવી રીતે આપણું તે જ સૂત્રપરનું અણુભાષ્ય યુનિવર્સીટીને યોગ્ય અરજી કરી દાખલ કરાવવામાં આવે તો દર ત્રીજા વર્ષે પણ થોડા ગ્રેજ્યુએટો આપણા સંપ્રદાયના સત્ય જ્ઞાન સાથે બહાર પડશે, અને થોડા સમયમા જ આપણા સપ્રદાય ઉપર દરેક આધુનિક કેળવણીનો સંસ્કારી હાલ યુગની નજરથી જુએ છે તેને બદલે મને ખાત્રી છે કે હેત અને માનની લાગણીથી જોતો થશે તેઓ સસ્કૃત પુસ્તકોના ગુજરાતી ભાષાંતરો પણ પ્રકટ કરશે. જનસમુદાય આગળ તત્સંબધી વ્યાખ્યાનો પણ કરશે જેથી કરી આપણા સંપ્રદાયના ઘણાખરા વૈષ્ણવોને પણ પોતાના સત્ય સિદ્ધાતોનુ ભાન નથી

તેમને પણ સારી માહીતિ મળશે. આ રીતે આપણે જોયું કે ઉક્ત ઠરાવ સર્વ પ્રકારે યોગ્ય અને પ્રશંસનીય છે, પરંતુ તે ઠરાવ જેટલા દરજ્જે પ્રશંસનીય છે તેટલી જ ત્વરાએ પરિષદના નેતાઓએ તેને અમલમા મુકવો જોઇયે. પ્રભુ તેઓની અભિલાષા પાર પાડે તેવી શુભેચ્છા સહ હાલ તો આપણે અત્ર જ વિરમીશું.

मनुष्यनुं कर्तव्य अने धर्मजिज्ञासा.

(અનુસંધાન પૃષ્ઠ ૨૮૪)

પ્રશાંત વૃત્તિના શાંતિલાલ શેઠનુ ચિત્ત સંસારાસક્ત ન હતું. પોતાને ઘેર લાખ્ખો રૂપીઆની મીલકત હતી, વાડીવજીફા, બંગલા, ગાડીઓ, મોટરો, મીલો અને કરોડાનો વ્યાપાર હતો, પણ એ શેઠ સદાસર્વદા નિશ્ચિંત મનથી, શ્રીકૃષ્ણાસક્ત ચિત્તથી, હસ્તમાં માલા ફેરવતા **श्रीकृष्ण शरणं मम** એ અષ્ટાક્ષર મંત્રનો જપ કરતા સર્વ કાર્યો શાંતિથી કરતા, અને દ્રવ્યવાન્ છતાં, વ્યવહારકુશલ છતા, દ્રવ્ય અને ઉપાધિનો ભાર એમના મસ્તકપર લેશ પણ ન હતો જે શુદ્ધ અંત કરણથી પ્રભુવિરહથી દુઃખી હોઇ દેહ, પ્રાણ, ઇંદ્રિય, અંત કરણ અને તેના ધર્મ, દારા, આગાર, પુત્ર, આસ, વિત્ત, આલોક તથા પરલોક સર્વ પોતાના આત્માની સાથે પ્રભુને સમર્પણ કરે છે, અને જે પ્રભુનો દાસ ઈશ્વરની આજ્ઞા પ્રમાણે ચાલે છે અને તેનો જ થઇ રહે છે, તેને પોતાનુ કાંઇ ન રહેવાથી કાંઈપણ સંસારની ઉપાધિ ન રહે, તેમા નવાઇ શી ? શાંતિલાલ શેઠને પ્રભુકૃપાથી, સત્સંગથી, પ્રભુનું શરણ સિદ્ધ થયું હતુ અને તેથી જ અમંગ રૂપી દૃઢશસ્ત્રથી એમના સંસારવૃક્ષનુ સમૂલ છેદન થઇ ગયું હતું, અને ઉપનિષદ્માં જે શાંતિ શાંતિનો ઉચ્ચાર શ્રુતિયો કરી રહી છે, તે શાંતિ એમને ઘણા સમયથી પ્રાપ્ત આક્ષ' હતી. એટલુ જ નહિ, પણ એમની સમક્ષમા આવનાર સર્વ સજીવ તથા નિર્જીવ નહિ. અમુક સંપ્રદાયનો'રની શાંતિ પ્રસરતી, નિરવધિ સુખનો અનુભવ થતો, અને સર્વની વાની દરકાર કર્યા સિવાય રતી જે અભેદને માટે અનેક પ્રકારના જ્ઞાનિયો તલસે છે, જે પ્રહાર કરવામાં આવે તે કોણ મારી મચડીને મનને સમજાવી પટાવવામાં જ કૃતાર્થતા ઉપર દરેકને પોતાના સ્વતંત્ર વિભેદ અહિ શાંતિલાલ શેઠના અનુભવમા આવતો એટલુ જ રહી કોઇની લાગણી ન દુઃખાય આવનાર વિદ્વાન કે વિદ્યાહીન, દ્રવ્યવાન કે દ્રવ્યહીન, અંતમાં પણ અમુક સંપ્રદાયના સો તેનો અનુભવ થતો, અને સજીવ તો શુ પણ નિર્જીવ પરંતુ કોઇપણ કાર્યમાં પ્રવૃત્ત થતાં ભાગ મળતો. આથી શાંતિલાલ શેઠના સર્વ વ્યવ- હારો પ્રાપ્ત કરવી જોઇયે, નહિ તો હાલ'રે સર્વપર એક પ્રકારની બદબુઇ અસર થતી, અને આનુ કાંઈ ભાન નથી અને પછી મરજી સાચું જીવું સમજવાની કે બહારની સફાઇથી કામ કાદાનું કચુંબર કરે છે અને બીજા પેપરંતુ નહિ શાંતિલાલ શેઠની મીલોનો માલ ઘણો પણ વિષયમાટે સંપૂર્ણ યોગ્યતા પ્રાપ્ત કર્ય, કેમકે વ્યાપારીઓને તેમાં દગાનો ભય ન હતો. તે પોતાની હાંસી કરાવવા બરાબર છે. કે નિષ્કપટથી સારૂ કામ કરતા, કેમકે શેઠ પોતે નહિ, પણ ખરીદી, વેચાણ વગેરેમાં ભળતાં

આનગી કમીશનો મિલના જ હિસાબમા જતા, કામદારો સતુષ્ટ હતા કેમકે બીજી મિલો કરતા પગાર વધારે મલતો, અને શેઅહોલ્ડરો સુખી અને સતોષી હતા કેમકે તેમને સારૂ ડિવિડડ મળતુ, અને શેરનો ભાવ આકાશણે થયેા હતેા તેમા પણ શાતિમિલનેા શેર તેા સેાનાનેા કટકેા જ ગણાતેા, અને બન્તરમા ભાગ્યે જ મળતેા

શાતિલાલ શેઠના કેાઈ કારભારી, નેાકર કે કામદારને કેાઈ પ્રકારનુ દુ:ખ પડતુ ને શેઠના જાણવામા આવતુ, તેા શેઠ તેને બેાલાવી, દ્રવ્યથી, દયાથી અને સારી સલાહથી તેના મનનુ સમાધાન કરતા, અને તેમા સેકડેા કે હજારેા રૂપીઆને વ્યય થાય તેા તેની બેદરકાર પણ દરકાર કરતા નહી, અને પેાતે આપેલી મદદ બાનગી જ રાખતા એમ બાનગી નામના છતા શાતિલાલ શેઠના પરેાપકારની કીર્તી સર્વ સ્થલે પ્રસરી હતી, અને વગર માગે લેાકમા તેમ સરકાર દરબારમા એમને બહુ સારૂ માન મળતુ આમ છતા શાતિલાલ શેઠને તેા અપમાન અને અન્માન સરખા જ હતા, કેમકે એઓનુ ચિત્ત પ્રભુમા હેાઇ એઓ તેા માનાપમાન બનેની અતરથી ઉપેક્ષા જ કરતા.

શેઠને બે પુત્ર અને એક પુત્રી છતા માત્ર પુત્રીપર-કુસુમપર-આત્મીયપણાને ભાવ હતેા કુસુમનુ મ્હલ, નિર્મલ, આહ્લાદજનક, રસમય મુખ જોઈ શેઠનું મ્હેા મલકાતુ, અને તેને બેાળામા લઈ, છાતી સરસી ચાંપી, તેના ગુલાબી ગાલપર કરી-કરીને ચુબન લેતા શેઠ ધરાતા નહી આથી એમ ન સમજવુ કે શેઠને સસારમા પુત્રીમા આટલી આસક્તિ હતી કુસુમ પેાતાની પુત્રી હતી કે બાલક હતી, કે સુદર હતી તેથી શેઠનુ મન તેનાપર લેાભાતુ એમ નહી, પણ કુસુમનેા દૈવી જીવ, સસારથી વિભિન્ન હેાઇ, અત્યત નિર્મલ હેાઇ, તેની લાવણ્યતા, સુદરતા અને રસમયતા કેાઇક દૂરના લીલામય પ્રદેશનુ ભાન કરાવતુ, અને તેની અતિ કેામલ દેહ, અને પ્રભુના દર્શનમા, મનનમા અને કીર્તનમા તન્મય પવિત્ર ઇદ્રિયેા અને પ્રાણ રસમય પુરૂષેાત્તમનાં મદિરરૂપ થઇ રહી, તે મદિરમા શાતિલાલ શેઠને પ્રભુના દર્શન થતા, અને તેથી જ ઉપર કહ્યા પ્રમાણે આત્મીયપણાનેા ભાવ હતેા ઘણા વર્ષ સુધી શેઠને મન નીતિસેન અને પુરૂષેાત્તમ તેા હતા ન હતા જેવા જ હતા જ્યારથી ગેાવિદભટ્ટજીના સહવાસથી પુરૂષેાત્તમનુ મન પ્રભુ તરફ વળ્યુ, જ્યારથી તે પ્રભુની સેવામા તન, મન અને ધન સર્વસ્વ સમર્પણ કરવા લાગ્યેા, ત્યારથી પુરૂષેાત્તમ પર પણ શેઠનેા આત્મીયપણાનેા ભાવ થયેા હતેા, અને બેાલાવવેા હેાય ત્યારે 'પુત્ર' 'પુત્ર' કહી બેાલાવતા. બે પુત્ર છતા તેમને મન તેા એક જ પુત્ર હતેા, કેમકે તે ભગવદીય હતેા, અને તેથી જ પેાતાનેા તેની સાથે સબધ હતેા આથી નીતિસેનપર તેમનેા અભાવ કે દ્વેષ હતેા એમ ન હતુ, કેમકે જેમને સર્વપર દયા હેાય તેમને કેાઈપર દ્વેષ તેા હેાય જ નહી, તેમ જ તેને મીલકતમાથી ઓછેા ભાગ આપવેા વગેરે વિચાર તેમને સ્વપ્નામા પણ આવતા નહી, કેમકે મિલકત હેાવી ન હેાવી, ઓછી વધતી હેાવી, વગેરે તેમને મન સરખુ જ હતુ—માત્ર જે અલૌકિક સબધ એક ભગવદીયનેા બીજા ભગવદીય સાથે સ્વાભાવિક રીતે હેાય છે તે સબધ પિતાપુત્રને ન હતેા, અને સસારનેા સબધ

તો ઉપર કહ્યા પ્રમાણે કયારનો અસગ શસ્ત્રથી તટી ગયેા હતેા, માટે તેની તરફ બીજી સર્વ સસારની વસ્તુની માફક ઉપેક્ષા હતી એટલું જ વિચારશીલ, ડાહ્યો નીતિસેન આ સર્વ સમજતો, અને પોતાના આચારવિચાર અત્યત ભિન્ન છતા, પિતાની રહેણીકરણી અત્યત ભિન્ન છતા અને નીરસ અને શુષ્ક લાગતા છતા, કેાઈ કેાઈ વાર તેને તેમા કેાઇક ઉચ્ચત્તમ દિવ્યપણાનેા ભાસ થતેા, અને તે દિગ્મૂઢ થતેા પણ આ સર્વ તેને ક્ષણુમાત્ર થતુ, અને પાછુ તેનું મન સસાર સુધારવા તરફ દોડતું પણ થેાડા વખતથી એના મનમા ઘણેા ફેરફાર થઇ ગયેા હતેા પુરૂષેાત્તમના તીખા વચનેાથી એનુ મન જાગૃત અને સચેત થયુ, ગેાવિદલટ્ટજીની પ્રશ્નવિદ્યાએ તેમાં પ્રવેશ કર્યેા, ગાર્ગીના મૃદુ, મીઠા અને શ્રદ્ધામય વચનેાથી તેમા દૃઢતા આવી, અને કુસુમે તેા હદ જ વાણી હતી પુરૂષેાત્તમે એને માર્ગનુ સૂચન કર્યું, ગેાવિદલટ્ટજી સાવચેતી તથા સાવધાનતાથી એને માર્ગપર દેારી લઈ ગયા, ગાર્ગીએ મૃદુતાથી એ માર્ગની રમણીયતા દર્શાવી, રૂચિ કરી, અને કુસુમે એ માર્ગનેા ફલાસ્વાદ એની શક્તિપ્રમાણે એને કરાવ્યેા, અને જોકે નીતિસેન પ્રથમથી જ દૈવી જીવ હતેા, તેા પણ આજનેા કૃતકૃત્ય થયલેા નીતિસેન કેાઇ બીજો જ હતેા, અને કાલુકાલુ બેાલતી, નિર્મળ, બાલક કુસુમ જ્યારે એને તેડીને આવતી હતી ત્યારે એની મુખમુદ્રાપર જે કેામળ ભાવ પ્રદર્શિત થતા હતા, તે એણે પહેલવહેલા જ અનુભવ્યા હતા. દિવાનખાનાના બારણા આવતા નીતિસેનનેા હાથ છેાડી, કુસુમ દેાડતી દેાડતી પિતા પાસે ગઇ, અડધે પગે પિતાની સામે ઘુંટણુપર બેઠી, નાનકડા કેામળ હાથથી પિતાનુ મુખ મેજ ઉચુ કરી તેની સામે બરાબર જોયુ, આખે આખ મેળવીને, ઉમળકાથી, પરોપકારના આનદથી ઉભરાતા મનેાભાવથી હસિતવદને કહેવા લાગી, 'ખરી વાત' પિતાજી, ગાર્ગીબા કહેતા હતા તે ખરી વાત ! મેાટા ભાઇ પણ કબુલ કરે છે ! (ડેાકુ પાછુ ફેરવી નીતિસેન સામું હસતાં હસતા જોઇ) મેાટા ભાઈ આજથી આસ્તિક થયા ! (ફરીથી પિતા સામું જોઇ) ત્યારે પિતાજી, મને શુ ઇનામ આપશેા ?' શાંતિલાલ શેઠે કુસુમને બેાળામા લીધી અને એક ક્ષણુ નીતિસેન સામું જોઇ રહ્યા એના ચક્ષુમાથી સંસાર અને તેની ઉપાધિ નીકળી ગયા હતા, અને પ્રભુપર આવેલી શ્રદ્ધાથી ચક્ષુમા શાંતિએ સ્થાન કર્યું હતુ, અને ભગવદ્ગુણેાનેા આવિર્ભાવ કાઇક કાઇક થવાથી તેમાં ભગવત્તેજ પણ આવ્યુ હતુ. ભગવદીયના આ લક્ષણેાથી શાતિલાલ શેઠને તે આજે આત્મીય લાગ્યેા. અને પેાતે ઘણા પ્રસન્ન થયા પ્રસન્નવદને કુસુમના મુખ તરફ જોતા તે બેાલ્યા, 'બહેન તારે શુ જોઇએ છે ? પ્રભુએ તને શુ નથી આપ્યુ ?'

કુસુમ—(નિર્મલ વિશાલ નેત્ર આખા ઉઘાડી પિતાના મુખ તરફ હસિતવદને જોઇ)-કહુ ? ! કહુ ? !

શાતિલાલ શેઠ તેના ઉત્કંઠાથી ઉભરાતા વદન તરફ જીજ્ઞાસાથી જોઈ રહ્યા ને બેાલ્યા 'બહેન, સુખેથી કહે'

કુસુમ—આપણે ગયે વર્ષે ગેાકુલ ગયાં હતા ત્યાં મને ફરી તેડી જજો. ત્યા મને બહુ ગમે છે, અને આનંદ આવે છે. અહીની હવા ગદી, ભારે અને બદીન

લાગે છે, ને ત્યા તો હસ્યા જ કરવાનુ. કેમ બરૂ કેની? હા કહેાની! તમને પણ ત્યા બહુ ગમતુ ઠાકેારજીની વાર્તા મને કહેતા, મારી પાસે રેાજ બે ત્રણ કલાક બેસી વગડાવતા, ને યમુનાજીના તીરપર ને વૃંદાવનમાં પ્રભુના કીર્તના ગાતા, રાસ કરાવતા, ને નવી નવી ગમ્મત રેાજ કરાવતા, ને અહીં તેા જાણે મલીનતાના ભાર નીચે દબાઇ મુગા મુંગા માળા ફેરવ્યા કરેા છેા, કેમ નહી વારૂ? ત્યારે આપણે કયારે જઇશું? હે પિતાજી?!

શાંતિલાલે તેને પેાતાના બેાળામાં બેસ્થી દાબી, તેના સામુ જોઇ રહ્યા, પેાતાનેા જે મનેાભાવ હતેા તે જ પુત્રીએ કહી બતાવ્યેા તેથી આનંદથી ગળગળા થઇ ગયા, અને એક ઉનુ અશ્રુનુ ટીપુ તેમના ચક્ષુમાથી પડયુ કુસુમે તેમના સામું જોયુ, અને પેાતાના વિચારને, પ્રશ્નને સંમતિ મળેલી સમજી જઇ તેણે વિશેષ પ્રશ્ન કર્યા નહીં

મુબઇનુ વાતાવરણ શાંતિલાલ શેઠની પ્રકૃતિને રૂચતુ નહી. લુચ્ચાઇ, દેાગાઇ, કઠેારતા, સ્વાર્થ, પાપ, વિષયેાના આકર્ષણની મલીનતા, કલેશ, દુ:ખ વગેરેની દુર્ગંધથી ઉભરાતુ મલીન વાતાવરણ શાંત પ્રકૃતિના શાંતિલાલ શેઠને ઘણુ જ દુ:ખમય લાગતુ, અને પેાતે બહાર જતા જ નહી સર્વદા દિવાનખાનામા બેસી માળા લઈ પ્રભુનુ નામ સ્મરણ કરતા, અને કેાઇ સંસારી જન આવી વૃત્તિને ખિન્ન કરે તેા બારી આગળ ઉભા રહી, સામે પ્રસરેલા અગાધ, પવિત્ર, શાંત સમુદ્રની મેાટાઈ જોઈ પેાતાનુ મન મેાટુ કરી પેાતાને ખિન્ન કરનારને અને ખિન્નતાને વિસરતા, અને પ્રભુમાહાત્મ્ય વિચારી પાછા પ્રેમપૂર્વક નામસ્મરણમા લીન થતા

નીતિસેન અને કુસુમની પાછળ વાતેા કરતા ધીરેધીરે ગેાવિંદભટ્ટ તથા પુરૂષેાત્તમ આવતા હતા

ગેાવિંદભટ્ટ—પ્રેાફેસર સ્વભાવનેા સારેા

પુરૂષેાત્તમ—અલબત નહિ તેા તકરાર અને વિતંડાવાદ કરવા મંડી જાય

ગેાવિંદભટ્ટ—પશ્ચિમના વિદ્વાનેા અહીંના પંડિતેા સાથે બહુ વાદમાં ઉતરતા નથી. વિચિત્ર પ્રશ્નેા પુછી આપણી વિદ્વત્તા જાણવાની તેમની જીજ્ઞાસા હેાય છે. અને ગમે તેટલા તેમના વિચાર આપણા વિચારથી વિરૂદ્ધ હેાય તેા પણ આપણને બાધ લાગવા દેતા નથી ફેર્કતમા વિશેષ એ હતુ કે બરાબર જાણવાની તથા સમજવાની ઇચ્છા તેનામા કુતિ થઇ ન હતી, તેથી તેણે એક શિષ્યને ઘટતી નમ્રતા તથા સરળતાથી જ પ્રશ્નેા કર્યા, અને જેમજેમ તેના ઉત્તર તેને મળતા ગયા, તેમતેમ પેાતાને મળતેા સંતેાષ અને આનંદ સ્પષ્ટરીતે પ્રદર્શિત કરતેા ગયેા

પુરૂષેાત્તમ—ત્યારે એને માયાવાદમા સંતેાષ નહીં થયેા હેાય?

ગેાવિંદભટ્ટ—માયાવાદથી બુદ્ધિને ભ્રમ થાય છે, તેથી મનુષ્ય ગુચવાઇ જાય છે અને ત્યા અટકી પડે છે, પણ સંતેાષ મળી શકતેા નથી ઘણા વર્ષ માયાવાદમા ભ્રમિત થયલી બુદ્ધિ પાછી ઠેકાણે આવવી કઠિન છે. તેથી તેવી

બુદ્ધિ આગળ સરળ, શુદ્ધાદ્વૈત બ્રહ્મવાદની તેની સગતા તથા સ્પષ્ટતાને લીધે જ અવગણના થાય છે તીવ્ર બુદ્ધિની સાથે સ્વભાવની સગતાની પણ બ્રહ્મવાદ સમજવામા જરૂર છે અમાનિત્વ, અદભિત્વ અહિંસા, ક્ષાંતિ, આર્જવ વગેરે જ્ઞાનનાં પ્રથમ પગથિયા છે

પુરુષોત્તમ—એણે ભક્તિ, પ્રભુ વગેરે વિષે કાઈ જ પ્રશ્ન ન કર્યા ?

ગોવિંદભટ્ટ—એ માયાવાદના પ્રતાપ છે પાશ્ચાત્ય વિદ્વાનોને બાદ્ર વેદાત તે જ વેદાત એવી ખબર હોય છે રામાનુજ, મધ્વ, નિમ્બાર્ક તથા આપણા આચાર્ય વિષે કશી ખબર હોતી નથી હાલમા રામાનુજ વિષે કાઇક અભ્યાસ તેઓ કરે છે, અને તેના ભાષ્યના અભ્યાસ પછી તેની ઉત્તમતા તેમને લાગવા માડી છે શકર કરતા રામાનુજનુ સૂત્રભાષ્ય વ્યાસના અર્થને વિશેષ અનુસરતુ છે એમ તેઓ સમજવા લાગ્યા છે અભ્યાસ થાય ત્યારે ખબર પડે કેની ? માયાવાદમા બ્રહ્મ નિર્ગુણ અને જગત્ તથા તદ્ગર્ત જીવ મિથ્યા એટલે કોણ કોની ભક્તિ કરે ? એટલે ભક્તિના ઉચ્છેદક માયાવાદનો અભ્યાસ કરી તેમા ભ્રમિત થયલી બુદ્ધિ પ્રભુ તથા ભક્તિને ઓળખે જ કયાથી ? તથા તે વિષે પ્રશ્ન પણ શુ કરે ?

પુરુષોત્તમ—એ તો બહુ બોટુ

ગોવિંદભટ્ટ—માટે જ આપણો ધર્મ છે કે એ લોકોને સત્ય માર્ગ દર્શાવવા આપણે પ્રયત્ન કરવો આપણા ગ્રથો છપાવી, અગ્રેજી તથા જર્મનમા ભાષાતર કરાવી જગતસમાજમા સત્ય જ્ઞાનનો પ્રચાર કરવો એ દૈવી વૈષ્ણવોનો ધર્મ છે. અદ્યાપિ પર્યંત આપણા ગ્રથો અધારામા રહ્યા છે તેનુ એક કારણ એ હતુ કે એ ગ્રથો પ્રકટ કરવાથી લોકો વગર સમજે ગ્રથોની તથા ગ્રથકારની તથા આપણા ધર્મની નિદા કરશે એમ મનાતુ હતું પણ એ ગ્રથો અપ્રકટ રહેવાથી અસબદ્ધ વાકયો કાઢી તેના અનર્થ તથા વિપરીત અર્થ કરવામા આવ્યા અને નિદાની જે ભીતિ હતી તે તો આગળ આવીને ઉભી, વૈષ્ણવો પણ પોતાનો ધર્મ ભૂલી ગયા ને ગ્રથો વગરના ઠોર જેવા થઈ ગયા

પુરુષોત્તમ—આપ સત્ય કહો છો. આ અત્યત શોચનીય સ્થિતિમાથી કેમ બહાર કરવો એ મને તો સુઝતુ નથી.

ગોવિંદભટ્ટ—પ્રથમ સ્વેચ્છા આગળ કાઈ ચાલ્યુ નથી ધર્મવિષયમા નવીનથી જાગવા વૈષ્ણવોમા થવા માડી છે તે જાગ્યા તુમ કરવાના સાધન મળવા જ જોઇએ અને મળશે આપણા ઉદ્ધારક ગ્રથો-પ્રાચીન ગ્રથો છપાયા છે, તથા માર્ગને અનુસરતા સગ્રહ ગ્રથો પણ છપાય છે હસ્તલિખિત ગ્રથો વિદ્યમાન છે તો તે છપાવવા કાઇ વિકટ નથી

અપૂર્ણ

'વિદ્યાર્થી'ને સવાસો રૂપીઆનું ઈનામ.

'ગુજરાતી' પત્રમા વિદ્યાલક્ષ્મી પાઠશાલાના 'વિદ્યાર્થીની' મહીથી અત્યાર સુધીમા જે ત્રણ લેખ પ્રકટ થયા છે, તેમે લક્ષપૂર્વક વાન્ચ્યા છે (૧) પુષ્ટિમાર્ગમા વ્યાસે શ્રીયશોદોત્સંગલાલિત શ્રીગોપીજનવલ્લભ શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતાના પ્રવક્તા છે અને શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતાના આરભથી અન્ત સુધીના સમગ્ર શ્લોકોમા કેવલ શુદ્ધ શ્રીહરિરાયજી-વિરચિત પુષ્ટિમાર્ગલક્ષણાનિ[૧] નામના ગ્રથમા પ્રતિપાદિત પુષ્ટિભક્તિનુ જ નિરૂપણ છે, (૨) શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના પ્રમાણમાર્ગભૂત શુદ્ધાદ્વૈત બ્રહ્મવાદ અને તેથી વિલક્ષણ પ્રમેયમાર્ગભૂત શુદ્ધ પુષ્ટિમાર્ગના પ્રવર્તક શ્રીવિષ્ણુસ્વામી છે, (૩ ઋગ્વેદ ઇત્યાદિમા 'પુષ્ટિ' શબ્દનુ વ્યાખ્યાન 'વિદ્યાર્થી'ના ગુરુ શ્રીગટ્ટુલાલજી અને શાસ્ત્રી મગનલાલ બનેચે પુષ્ટિમાર્ગપરત્વે કર્યુ છે તે બનેનુ વ્યાખ્યાન સર્વવિદ્ શ્રીગોપેશ્વરજીવિરચિત નવાર્થી ટીકાથી વિપરીત છે, શ્રીવ્રજભરણદીક્ષિતજીવિરચિત શ્રુત્યર્થાનન્દસ દોહનથી વિપરીત છે, શ્રીગિરિધરજીવિરચિત શ્રુતિરહસ્યથી વિપરીત છે, તેમ જ શ્રીરામકૃષ્ણભટ્ટ-વિરચિત શ્રુતિરહસ્યપ્રકાશ આદિ સાપ્રદાયિક વૈદિક સાહિત્યથી પણ વિરુદ્ધ છે, અને (૪) **स आत्मान स्वयमकुरुत** એ પાઠ શાસ્ત્રી મગનલાલે જ કલ્પ્યો છે એમ વિદ્યાર્થી વિનીત ભાષામા ખાત્રી ભરેલી રીતે સિદ્ધ કરી આપે તો હુ એ 'વિદ્યાર્થી'ને રૂપીઆ ૧૨૫, અક્કે સવાસોનુ ઈનામ આપવાનુ આપના પત્રમા આથી જાહેર કરુ છુ આ સપ્રદાયમા ગોસ્વામી શ્રીનૃસિંહલાલજીના પુત્ર શ્રીગોવર્ધનલાલજી અને શ્રીમુરલી-ધરજીના પુત્ર શ્રીઅનિરુદ્ધલાલજી એ બે ગોસ્વામી બારકો વિદ્વાન્ છે, તેથી એ બે ગોસ્વામીઓ અને આ સપ્રદાયના વિદ્વાન્ વયોવૃદ્ધ શાસ્ત્રી છગનલાલ અમરજી એ ત્રણની સમતિ આપના પત્રમા આવેથી તરત જ એ ઇનામ તે જ પરીક્ષકો દ્વારા હુ 'વિદ્યાર્થી'ને અપાવીશ આ ચેલેજ સ્વીકારવામા ઉક્ત વિદ્યાર્થી વિલબ કરશે તો શ્રીમદ્વૈષ્ણવપબ્લિક તરફથી શુદ્ધ પરોપકારબુદ્ધિથી અપાતા સાપ્રદાયિક વ્યાખ્યાનોમા પ્રતિબધ નાખવાના હેતુથી જ એ વિદ્યાર્થી (તથા જે અન્યાર્ય અને ત્રણ પડિતોએ શાસ્ત્રી મગનલાલ વિષે 'ગુજરાતી' પત્રના અધિપતિને બાનગી પત્ર લખ્યા છે તેઓ સર્વ) પ્રવૃત્ત થયા છે એમ માનવાનુ જનસમાજને મબલ કારણ મલશે

મુબાઇ.
ડિસેમ્બ્ર ૨૮ીટ
૨૨–૬–૧૯૧૨

ધીરજલાલ નગદાસ સાંકલીઆ
બી. એ એલ્ એલ્. બી હાઇ કોર્ટ પ્લીડર

---

૧. આ લેખ 'ગુજરાતી' પત્રમા મુદ્રણાર્થ મોકલવામા આવેલો, તથાપિ 'વિદ્યાર્થી'ના પક્ષપાતી અધિપતિએ તે લેખ પ્રસિદ્ધ કર્યો નહિ, તેથી વૈષ્ણવોના હિતાર્થે એ લેખ અત્ર પ્રસિદ્ધ કરવામા આવે છે.

૨ નોટ શ્રીમાન્ હરિરાયજીવિરચિત 'પુષ્ટિમાર્ગલક્ષણાનિ' નામના સસ્કૃત ગ્રથનો શબ્દાર્થ આ અકના આરભમાં જ દશમે પાને શ્રીમાન્ રમણલાલજીના વ્યાખ્યાનના સામા આપવામા આવ્યો છે, તે ઉપરથી 'વિદ્યાર્થી' સમજી લેશે એમ માનીને રા. ધીરજલાલે કરેલુ ઉક્ત ગ્રથનુ ભાષાતર અમે અત્રે પ્રસિદ્ધ કર્યુ નથી (પ્રકામક)

શુદ્ધાદ્વૈતવિજ્ઞાન.

—— o: ——

ભરતખંડના ધાર્મિક વિકાસક્રમના ઇતિહાસમાં પંદરમુ શતક એક અદ્વિતીય જ છે આ જ શતકમાં ભક્તિનો તરંગ ભરતખંડપર ફરી વળ્યો, અને પ્રાચીન વૈદિકધર્મના માંકડા બંધનોને પોતાની સાથે ઘસડી ગયો કોઇપણ દેશમાં કોઇપણ કાલમાં યોગ્ય સત્કાર પામે એવા નરરત્નોની જન્મભૂમિ થવાનુ માન આ દેશને છે. આ નરરત્નોમા સુવિખ્યાત બે મિત્ર શ્રીચૈતન્ય અને શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી હતા. ચૈતન્યના ઉપદેશથી આખો બંગદેશ રંગાયો, અને શ્રીવલ્લભાચાર્યજીના ઉપદેશથી ગોકુલ ગુજરાત અને કાઠીઆવાડ રંગાયા ચૈતન્યવત્ શ્રીવલ્લભાચાર્ય કેવલ મહાનુભાવી ભક્ત ન હતા પણ તદુપરાન્ત તે જમાનાના તેઓ મહાન્ તત્ત્વવિચારક હતા આ તત્વજ્ઞાનના અલૌકિક પ્રભાવથી વેદાદિ ચારે પ્રસ્થાનના ઉપદેશનો સાર તેઓએ સ્વકૃત તત્ત્વદીપનામક ગ્રૌઢ નિબન્ધમા આપ્યો છે આ પ્રમાણે જે સિદ્ધાન્ત તેમણે પ્રવર્તાવ્યો તે શંકરાચાર્યના માયાવાદથી વિરુદ્ધ બ્રહ્મવાદના નામથી પ્રકટ થયો એ બ્રહ્મવાદનુ નિરૂપણ એમણે સ્વકૃત નિબન્ધ, ભાષ્ય સુબોધિન્યાદિ ગ્રન્થોમાં કર્યુ છે, અને તેનો વિસ્તાર તેમના પુત્રો પ્રપુત્રો અને શિષ્યોએ કર્યો છે એ જ બ્રહ્મવાદનુ સૂક્ષ્મ દિગ્દર્શન આપણે અત્ર કરીશું

બ્રહ્મવાદ વા જે વાદમા બ્રહ્મ સર્વ છે એ ઉપનિષદોનો સિદ્ધાન્ત છે. એક જ કૂટસ્થ બ્રહ્મ કોઇપણ પ્રકારના ભેદરહિત, સ્વલીલાને વાસ્તે સ્વેચ્છાથી જ કંઈપણ વિકાર પામ્યા સિવાય જડ જીવ અન્તર્યામી રૂપે થાયછે આ પ્રમાણે આ વાદને 'અવિકૃત પરિણામ'નુ દ્વિતીય નામ પ્રાપ્ત થાય છે જે પ્રમાણે સુવર્ણમાથી કટક કુંડલાદિ અનેક અલંકારો થાય છે તોપણ સુવર્ણ સુવર્ણ જ રહે છે. બ્રહ્મ અનંત નામરૂપ કરવા છતા પોતે બ્રહ્મ જ રહે છે. જે પ્રમાણે સુવર્ણથી બનેલા અલંકારો સુવર્ણથી અનન્ય છે, તે જ પ્રમાણે આ નામરૂપ પ્રપંચ બ્રહ્મરૂપ હોવાથી બ્રહ્મથી અનન્ય છે, અભિન્ન છે. તારતમ્ય માત્ર આટલુ જ છે, આપણે સુવર્ણના અલંકારને તેના અમુક નામથી વ્યવહારીએ છીએ, નહિ કે તે માત્ર સુવર્ણ છે, તેમ જ આ સકલ પ્રપંચ બ્રહ્મરૂપ હોવા છતાં, માત્ર બ્રહ્મ છે એમ નહિ કહેવાતા, સ્વનામ અને રૂપથી ઓલખાય છે, પણ કોઇપણ પ્રકારે તેનુ બ્રહ્મત્વ ખંડિત થતુ નથી અત એવ આ સકલ પ્રપંચ (જગદાદિ) બ્રહ્મથી અભિન્ન છે આ અદ્ભુત અનન્યતા, અભિન્નતા, કાર્યકારણભાવથી સધાય છે, નહિ કે માયાથી દ્વિતીય અધ્યાયના પ્રથમ પાદના ૧૪ મા સૂત્રમા ભગવાન્ વ્યાસે કાર્યકારણની, નામરૂપની, જતિવ્યક્તિની, અંશ અને અંશીની, ધર્મી અને ધર્મની, અને શક્તિ અને શક્તિમાનની અનન્યતા સિદ્ધ કરી છે. આ પ્રમાણે કાર્યજગત્ કારણબ્રહ્મથી અનન્ય છે, અભિન્ન છે, અંશજીવ અંશિનબ્રહ્મથી અભિન્ન છે માયાના અન્તરાય વિનાનુ આ અદ્વૈત એ બ્રહ્મવાદનુ ભૂષણ છે શાંકરમતની માફક માયાનો આશ્રય કર્યા વિના સકલ પ્રપંચને માયિક કહ્યા વિના શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ આ બ્રહ્મવાદનું સ્થાપન કર્યુ છે. આ પ્રમાણે સાર્થક શુદ્ધાદ્વૈત નામની (જે નામથી વિદ્વાનવર્ગને શ્રીમદ્-

વલ્લભાચાર્યજીનો સંપ્રદાય વિદ્વિત છે તેની) સાર્થકતા આપને પ્રત્યક્ષ થઇ હશે જ ઉપનિષદોના સિદ્ધાન્તનુ પર્યવસાન અદ્વૈતમાં જ થાય છે. પણ તે અદ્વૈત માયાના સંબન્ધ વિનાનુ જ છે, એવું શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી માને છે. સકલ પ્રપચને ગધર્વનગર જેવુ સ્વપ્નવત્ આવિદ્યક માયિક કલ્પીને અદ્વૈત સાંધવાનું એમને સર્વથા અનિષ્ટ છે.

પ્રત્યક્ષ અનુમાનાદિ પ્રમાણો કરતા શ્રીવલ્લભાચાર્યજીના સિદ્ધાન્તમા શ્રુતિ-વેદના શબ્દનું પ્રમાણ સૌથી બલવાન્ છે. જ્ઞાનક્રિયાવિશિષ્ટ પરમ તત્ત્વનુ પ્રતિપાદન વેદમૂલક છે, અને શ્રીમત્વલ્લભાચાર્યજીનો આગ્રહ છે કે બ્રહ્મ જેવું વેદમાં વર્ણ-વાયેલું છે તેવું જ હોવું જોઇએ શકરાચાર્યથી ઉલટી રીતે શ્રીવલ્લભાચાર્યજી એવું માને છે કે બ્રહ્મસ્વરૂપનો યથાર્થ સાક્ષાત્કાર વેદમાથી જ થાય છે, ईक्षते न अशब्दम।

આ બ્રહ્મ સર્વધર્મવાલુ છે, સર્વશક્તિવાલુ છે. सर्वधर्मोपपत्तेश्च। सर्वोपेता च तद्दर्शनात् બ્રહ્મ સર્વધર્મવાલું છે એટલુ જ નહિ પણ ભાસમાન વિરૂદ્ધધર્મવાલુ પણ છે. બ્રહ્મ સાકાર અને નિરાકાર છે. (જે લોકો બ્રહ્મને નિરાકાર કલ્પીને સર્વજ્ઞ ઇત્યાદિ વિશે-ષણોથી ઈશ્વરની સ્તુતિ કરે છે તેઓ પોતે સ્વકલ્પનાની મનમોહન મૂર્તિમા જ સર્વધર્મનો આરોપ કરે છે નિરાકાર એટલે શુન્યાકારમા તો નહિ જ કરતા હોય?) બ્રહ્મ સગુણ તથા નિર્ગુણ છે. બ્રહ્મ સર્વ છે બ્રહ્મ વિરૂદ્ધધર્મવાલુ છે એમ મનાવવામાં શ્રીવલ્લ-ભાચાર્યજી કદિ તમારી શ્રદ્ધાનો પ્રદેશ અતિશય વિસ્તારવા નથી માગતા. શ્રુતિવાકયોનો સરલ સમન્વય કરીએ તો એ જ સત્ય નજરે તરી આવે છે બ્રહ્મ એક છે અનન્ત છે બ્રહ્મ સર્વવ્યાપક છતા પ્રત્યેક હૃદયમા અગુષ્ઠરૂપે બિરાજે છે, બ્રહ્મ મોટામાં મોટુ છે અને નાનામા નાનુ છે બ્રહ્મ નેત્રવિના દર્શન કરે છે, શ્રોત્રવિના શ્રવણ કરે છે, પાદ-વિના ધાવન કરે છે (દોડે છે) અને હસ્તવિના ગ્રહણ કરે છે. માત્ર શ્રુતિ નહિ પણ ભગવદ્ગીતા પણ આ જ તત્ત્વનુ ગાન કરે છે બ્રહ્મ પ્રભવ તથા પ્રલય છે, (अहं सर्वस्य जगत प्रभव प्रलय: तथा) ભગવાનની જ્ઞાનકલાના અવતાર કૃષ્ણદ્વૈપાયન વ્યાસનુ મત પણ આ જ છે બ્રહ્મ નિરવયવ છતાં સકલ જગત્નુ ઉપાદાન કારણ છે નિરવયવત્વ અને જગત્નું ઉપાદાન કારણત્વ પરસ્પર વિરુદ્ધ હોવા છતા સત્ય છે કારણકે ઉભય શ્રુતિમૂલક છે. (श्रुते तु शब्दमूलत्वात्) સર્વ પુરાણોમાં અત્યન્ત લોકપ્રિય અને શ્રેષ્ઠ પુરાણ શ્રીમદ્ભાગવત પણ આનો જ ઉપદેશ કરે છે ભગવાન્ પોતે આત્મારામ હોવા છતા ક્રીડા કરી રમણ કર્યું. (आत्माराम अपि अरीरमत्।) ભગવાન્ નારાયણની સમીપમા જલરૂપ કમલ અને તેજરૂપ ગદા બિરાજે છે, પરસ્પર નૈસર્ગિક શત્રુતાવાલા (વિરુદ્ધતાવાલા) નાગ તથા ગરુડ બિરાજે છે આ દૃષ્ટાન્તો માત્ર પૌરાણિક દૃષ્ટિથી જો-વાનાં નથી આ દૃષ્ટાન્તો વૈદિક અલૌકિક સત્ય કે બ્રહ્મ વિરુદ્ધધર્મવાલું છે તેનુ પોષણ કરે છે પ્રથમ અમે જે કહી ગયા છીએ કે અવિકૃત બ્રહ્મ જગદ્રૂપે પરિણામે છે, તેનાપર આપનુ ધ્યાન આપ ખેચશો એ પણ બ્રહ્મના વિરુદ્ધ ધર્માશ્રયનું દૃષ્ટાન્ત છે સૃષ્ટિમાં કેટલાક વિષયો એવા છે કે જે સૃષ્ટિના સાધારણ નિયમોનુ ઉલ્લઘન

કરે છે. એવા વિષયમા આપણે કહીએ છીએ કે વસ્તુસ્થિતિ એવી જ છે ચન્દ્રમા મહાસાગરના જલને આકર્ષે છે શાવાસ્તે ચન્દ્રમા મહાસાગરના જલને આકર્ષતો હશે તેનું સતોષકારક કારણ કઇ નથી, તે જ પ્રમાણે બ્રહ્મ જે 'मनसापि अचिन्त्यम्' છે (મનનીએ પેલે પાર છે) તેને આપણી વિકાસ નહિ પામેલી ક્ષુદ્ર બુદ્ધિના વિચારોથી બાંધવું જોઈએ નહિ, પણ જેવુ એ વિરુદ્ધધર્માશ્રયી છે, તેવુ જ અંગીકાર કરવામાં પરમ કલ્યાણ છે

આ બ્રહ્મ કર્તા તથા ભોકતા ઉભયે છે મુખ્ય પ્રાથમિક કર્તૃત્વ બ્રહ્મમાં જ છે જીવ કર્તા અથવા તો મુખ્ય કર્તા થઇ શકે નહિ કારણકે તે પરતત્ર છે પ્રકૃતિ કર્તા થઇ શકે નહિ કારણ કે તે અચેતન એટલે જડ છે કેટલાક ભારતવર્ષીય વિચારકો બ્રહ્મના કર્તૃત્વનો અત્યન્ત નિષેધ કરે છે, પણ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી તેમના સર્વ નિષેધદર્શક કારણોની ઉપેક્ષા કરે છે. જગતના જન્મ સ્થિતિ અને પ્રલય સર્વ બ્રહ્મમા જ છે આ સત્ય શ્રુતિ, ગીતા, તથા વ્યાસે વારવાર ઉપદેશેલુ છે. બ્રહ્મના કર્તૃત્વને અલીક માયિક કહીને બ્રહ્મમા કર્તૃત્વનો નિષેધ કરવો એ વેદના અલૌકિક અર્થને અત્યન્ત ભયકરરીતે મચડવાનુ સાહસ છે એમ શ્રીવલ્લભાચાર્યજી માને છે કર્તૃબ્રહ્મ તો અજ્ઞાની લોકોને ઉપદેશ કરવાનો સાધારણ રસ્તો છે, પણ અકર્તૃબ્રહ્મ તો ભાગ્યવાન વિરલ પુરૂષોને જ ખાસ ઉપદેશવામા આવે છે, એવુ કહેવુ એ આડકતરી રીતે વેદવાકયોનો પોતાના પૂર્વપ્રતિપાદિત સિદ્ધાન્તોની જોડે સમન્વય કરવાનું અતિ પાડિત્યસૂચક ચાતુર્ય છે વિશ્વમા કોઇપણ બ્રહ્મમા સાધારણ લૌકિક પ્રાકૃત કર્તૃત્વનુ પ્રતિપાદન કરતુ નથી, પણ અસાધારણ વાસ્તવિક પ્રાથમિક અલૌકિક કર્તૃત્વ બ્રહ્મ સિવાય અન્યમા કોઇપણ પ્રકારે સભવતુ નથી

બ્રહ્મ જેવુ કર્તૃ તેવું ભોકતૃ પણ છે આનુ પ્રતિપાદન વ્યાસે 'अत्ता चराच रग्रहणात्' સૂત્રમા કર્યું છે શ્રીવલ્લભાચાર્યજી બ્રહ્મમા સાધારણ પ્રાકૃત લૌકિક ભોકતૃત્વનુ પ્રતિપાદન કરતા નથી, પણ એમનુ કહેવુ એમ તો છે કે અસાધારણ અલૌકિક અપ્રાકૃત ભોકતૃત્વ બ્રહ્મસિવાય અન્ય કોઇનુ હોઇ શકે નહિ.

બ્રહ્મને કર્તૃ માનવામા સૌથી મોટુ દૂષણ તો એ આવે છે કે બ્રહ્મ કેટલાક તરફ નિર્ઘૃણ (ઘાતકી) થશે અને અન્ય તરફ વિષમ થશે આ દૂષણનો પરિહાર શ્રીવલ્લભાચાર્યજી 'स आत्मान स्वयं अकुरुत' એ શ્રુતિને આધારે કરે છે. જડ અને જીવવાલો આ સકલ પ્રપંચ એ આત્મસૃષ્ટિ છે. પિતા પોતાના છોકરાઓ તરફ દયા દર્શાવે અથવા મારે તો નિર્ઘૃણતા વા વિષમતાનો દોષ પિતાને લાગતો નથી તેમ પરમાત્મા આ સકલ જગત્ જીવના પિતા હોવાથી, આ સકલ પ્રપચ પોતાની આત્મસૃષ્ટિ હોવાથી વિષમતા વા નિર્ઘૃણતા બ્રહ્મને લાગતી નથી આ જ દૂષણનો પરિહાર વ્યાસ આપતત કર્મથી કરે છે.

આ પ્રમાણે બ્રહ્મ સર્વ ધર્મવાલુ છે, મુખ્ય કર્તૃ તથા ભોકતૃ છે, વિરુદ્ધધર્મવાલુ છે અને નિર્દોષ છે (અપૂર્ણ)

સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાંતો.

૧. જગત્ સત્ય છે.

૨ જગત્, જીવ, અંતર્યામી, અક્ષર ઇત્યાદિનો નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મ કૃષ્ણ પરમાત્મા જ છે.

૩ જીવે અવિદ્યાથી કલ્પેલો અહન્તામમતાત્મક સંસાર મિથ્યા છે.

૪ જીવ અણુ છે, શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મનો અંશ છે, વ્યાપક નથી

૫ પરબ્રહ્મ પુરૂષોત્તમ કૃષ્ણનું ધામ અક્ષરબ્રહ્મ ગણિતાનંદ છે

૬. સર્વોપરિ વેદાદિશાસ્ત્રે પ્રતિપાદિત પરમકાષ્ઠાપન્ન વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે

૭ કૃષ્ણની સેવા એ જ અંશ જીવનો ધર્મ છે, એટલે વસ્તુત સ્વધર્મ કૃષ્ણસેવા જ છે.

૮ આત્મનિવેદન અને પ્રભુપ્રપત્તિ સિવાય અન્ય વિશ્વધર્મ હોઇ શકે જ નહિ

શ્રીવલ્લભીય ગ્રંથ પ્રકાશક ફંડ.

નડીઆદના શ્રીપુષ્ટિમાર્ગીય પુસ્તકાલયના અંગે ઉપરનુ ફંડ સ્થાપ્યુ છે જેમાં પ્રથમ વ્યવસ્થામાં એક વખત રૂા ૪ ભરવાથી શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીકૃત ષોડશ ગ્રંથ શ્રીપુરૂષોત્તમજી વગેરે ગોસ્વામિ બાલકોની સસ્કૃત ટીકાઓ ઉપરથી વેદશાસ્ત્રસંપન્ન શાસ્ત્રી છગનલાલ અમરજીના હાથથી લખાએલી વિસ્તૃત અને સરળ ગુજરાતી ટીકા સાથે દરેક જુદા જુદા પુસ્તકરૂપે અને શ્રીમદ્ગુસાઇજીકૃત ભક્તિહંસ તથા શ્રીમદ્-પુરૂષોત્તમજીકૃત ઉપદેશશતકોનિરાસવાદ તથા શ્રીહરિરાયજીકૃત દુષ્ટમતવિજ્ઞાનપ્રકાર એ રીતે ૧૯ ગ્રંથો છપાય છે તે ક્રમશ વિના પોસ્ટેજે અને વગર નોંધાવરે મોકલવામા આવે છે અને આ ફંડમાં જે કાંઇ વધારો રહે તો તેમાંથી શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના બીજા ગ્રંથો પણ છપાવી સસ્તા નોંધાવરથી પ્રસિદ્ધ કરવા યોજના રાખેલી છે તો વૈષ્ણવોને બહોર લાભ લેવા વિનતિ છે

ત્રિભુવનદાસ પીતાંબરદાસ શાહ

શ્રીપુષ્ટિમાર્ગીય પુસ્તકાલયના મંત્રી અને વલ્લભીય ગ્રંથ પ્રકાશક ફંડના વ્યવસ્થાપક.

Reg. No. B. 896

વૈષ્ણવોને ક્ષમા યાચના

વૈષ્ણવો, પુષ્ટિભક્તિસુધાનું પ્રથમ વર્ષ કેટલાક અનિવાર્ય કારણોને લઈને ધાર્યું અનિયમિત પ્રસાર થયું છે તેમજ દ્વિતીય વર્ષનો પ્રથમ અંક પણ ઘણા વિલંબ પછી પ્રસિદ્ધ થયો છે તે માટે આપ સર્વની ક્ષમા યાચવામાં આવે છે.

વૈષ્ણવો, વસ્તુત તો આજે ત્રીજા વર્ષે પણ પુષ્ટિભક્તિસુધાના દ્વિતીય વર્ષનો પ્રથમ અંક પ્રસિદ્ધ થાય છે તે પણ આનંદની વાત છે, કારણ કે આ માસિકને એવી એવી જાતની અગવડો નડી છે કે પ્રભુકૃપા વિના માસિક કયારનું એ બંધ થઈ ગયું હોત, પરંતુ ઈશ્વરેચ્છાએ માસિક ચાલુ રહી નિયમિત પ્રકટ થાય તે માટે પ્રભુકૃપાથી જીવથી બને તેટલી તજવીજ કરી દ્વિતીય વર્ષનો પ્રથમ અંક પ્રસિદ્ધ કર્યો છે તેથી આશા છે કે આપ સર્વ વૈષ્ણવો તેને આનંદથી વધાવી લેશો અને પોતાના આપ્ત મિત્રમંડલમાં ફેલાવી સુધાનું પાન કરી કરાવી સુધાના પોષણ કરવામાં પણ નિમિત્ત સાધનભૂત થશો. હવે પછીના અંકોમાં ગીતા તથા આચાર્ય પર પરાવિષયક લેખો લેવામાં આવશે.

લી૦ પ્રકાશકના

ભગવત્સ્મરણ.

વર્ષ ૧૪ મું] શ્રીકૃષ્ણસંવત ૫૧૩૭, વૈશાખ

પુષ્ટિભક્તિસુધા.

કૃષ્ણ ૧૧ શ્રીવલ્લભાબ્દ ૪૩૩ [અંક ૨ જો

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनुं स्वाम ॥ १ ॥
नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ २ ॥
भक्त्या त्वनन्यया शक्य, अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप ॥ ३ ॥

પ્રકાશક,
વાડીલાલ નગીનદાસ શાહ,
ખી ઓ એન્ડ એસ્ટ ખી, ચકીલા દોશીવાડા

નોંધાવવા, વર્ષના કુલ ખપુ એકાદશી
મુંબી ૧-૮-૦ પછીથા ૩ ૨. ૦ છુટક અંકના ૩ ૦-૪-૦

आवश्यक निवेदन

---

१. आ मासिक संबंधी बधो पत्रव्यवहार प्रकाशकने नामे करवो
२ आ मासिक दरेक मासनी कृष्ण एकादशीए प्रकट थाय छे
३. आ मासिकमा छपाववाने आवेला लेखो लेवा न लेवा तेमां योग्य सुधारो वधारो करवो, प्रकाशकनी इच्छाधीन छे
४. श्रीमद्वल्लभाचार्यजीना सिद्धान्तानुसार ज लेख लेवामा आवशे
५ वर्षनु नोछावर अथमथी लेवामा आवे छे.
६. आ मासिकना परिवर्तनमां जेमना तरफथी मासिक वा पत्र मळशे, तेमने बराबर नोछावरे आ मासिक मोकलवामा आवशे
७ कोइपण बाबतनी खबर मगावबी होय तो, जवाबसारु टीकीट मोकलवी तेम सिवाय जवाब आपवामा आवशे नहि
८ आ मासिकमा जाहेर खबर छपावबी होय के हेन्डबिल वहेचावबा होय तेमणे प्रकाशकने लखबु अथवा मळबु

पुष्टिभक्तिसुधा कार्यालय,
• प्रिन्सेसस्ट्रीट, मुंबइ

अनुक्रमणिका.

	विषयो.	लेखको	
१	कीर्तनो.	.बलदेवदास कीर्तनिया .	
२	श्रीगुसांइजीनो स्वपुत्रोने पत्र .	२।० २।० मूलचंद्र तुलसीदास तेलीवाला.	B. A.
३.	शुद्धाद्वैतविज्ञान	,, ,, ,, ,, ,,	
४.	प्रमेय-रत्नार्णव.	२. २ शास्त्री वसंतराम हरिकृष्ण.	
५	श्रीमत्प्रमेयरत्नगीता.	२।० २।० शास्त्री अग्नलाल गणपतिराम	B. A.
६	पुष्टिमार्गीय चतुःश्लोकीयचतुष्टय	,, ,, ,, ,, ,,	
७	चित्तभ्रमन	२ ० नानालाल नारायणदास गांधी	B. A.

श्रीकृष्णाय नमः । गोपीजनवल्लभाय नमः ।

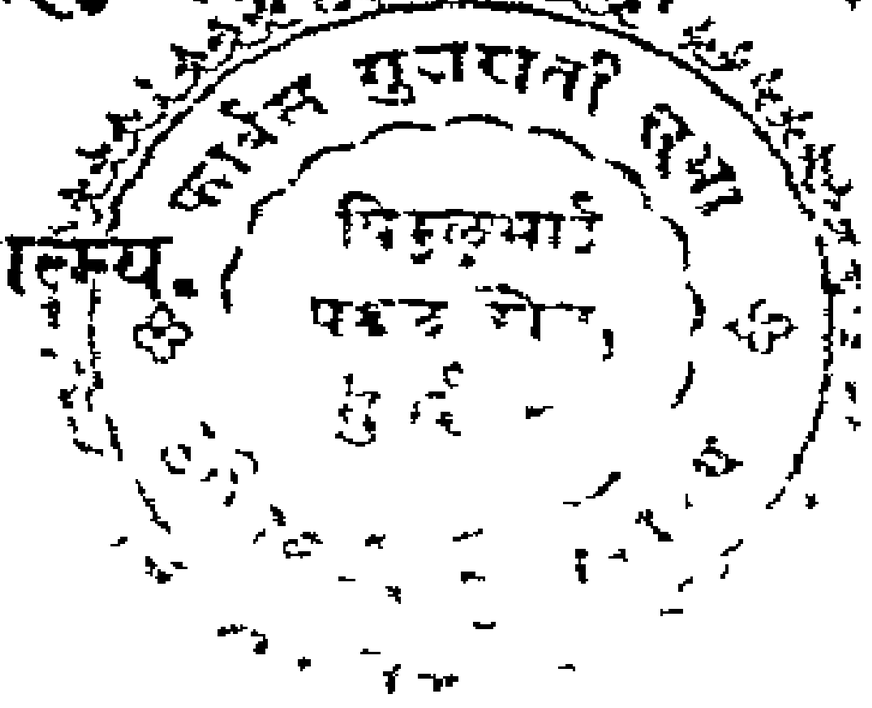

कृपण

तेन.

भक्तका लक्षण तथा माहात्म्य.

राग बिहाग.

गिरिधर ने अपनो कर जाने ।
जाको मन भक्तनकी सेवा भक्तचरणरज सदा लुभाने ॥ १ ॥
भक्तनमें मति भक्तनसों गति हरिजन हरि एको करी माने ।
कृष्णदास मनवचकर्म करी हरिजनमें कछु भेद न जाने ॥ २ ॥

(२)

यह सब जानो भक्तके लक्षण ।
कोउ निंदो कोउ वंदो कोउ मार लेहो धन गच्छन् ॥ १ ॥
कोउक आनले डारत चंदन डारि धुर कोउ देत हे भक्षन ।
कोउ कहे सूरस महा अधर्मि कोउ कहे यह तो महा विचक्षण ॥ २ ॥
भली बुरी मनमें नहि आवे कृष्णचरणगति टरे न एक छिन (क्षण) ।
सुर सुख दुःख सम करी जाने तिनकों गिरिधर मिले तत्छिन (तत्क्षण) ३

(३)

हरि उधोसों एसी कही ।
पांचो इंद्रिय छट्ठो मन जीते सो मेरो भक्त सही ॥ १ ॥
कामक्रोधमदलोभमोहमें चित्त न धरत कबहि ।
मगन भयो मेरो यश गावे जगउपहास सही ॥ २ ॥
परनिंदा मिथ्या तृष्णा ईर्षा करत नाहि ।
परम उदार सकल जीवनको चाहत हे हितहि ॥ ३ ॥
ज्ञान वैराग्य जोगको पूरो विचरत मुक्त महि ।
कृष्णदास भक्ति उपजेते जे जन शरण ग्रहि ॥ ४ ॥

(४)

उधो एसो भक्त मोहे भावे ।
सब तज आश मगन भयो नाचे जनमकरमगुण गावे ॥ १ ॥
कथनी करे निरंतर मेरी सेवा उर लावे ।
मेरी मूरत (मूर्ति) हृदय उनके वो मेरे उर आवे ॥ २ ॥

શ્રીગુસાંઈજીનું સ્વપુત્રોને પત્ર.

શ્રીકૃષ્ણાય નમ । સ્વસ્તિ શ્રીવિઠ્ઠલદીક્ષિતજીના તથા ગિરિધરના ગોવિન્દ, બાલકૃષ્ણ શ્રીવલ્લભ, રઘુનાથ, યદુનાથ, અને ઘનશ્યામને, તથા ગિરિધરના અને તમારા પુત્રોને આશિષ્ અત્ર કુશલ, તમો પણ કુશલ હશો ટોડાગામ સુધી શ્રીગોકુલનાથજીએ અમને કુશલરીતે પહોચાડયા છે, અને હોલોત્સવ (પણ) અહિ જ કરાવ્યો છે ગિરિધર વિષે તથા અમારા વિષે કાંઇ પણ ચિન્તા કરવી નહિ શ્રીગોવર્ધનેશ જ (શ્રીનાથજી જ) રક્ષણ કરવાવાલા છે ઉભયત્ર એવા સમ્યક્ (સારીરીતે) કરવી અને કરાવવી. સ્વદેહરક્ષા સર્વપ્રકારે કરવી સેવકોને પોતપોતાની મર્યાદામા રક્ષવા (રાખવા) બાલકોની રક્ષા સર્વપ્રકારે કરવી જે દ્રવ્ય આવશે (આવે) તેમાનુ સમયાનુકૂલ વ્યયને (અર્ચને) વાસ્તે જેટલુ જોઇએ તેટલુ રાખો, શેષવડે (બાકીનાથી) ઋણશોધન અવશ્ય કરવુ (દેવું જરૂર પતાવવું) વ્યય સાવધાનતાથી કરવો રાત્રિના સાવધાન (હોશીયાર) થાનિકોને (પહેરેગીરને) સ્થાપવા અહિથી મોકલેલો અશ્વ અમે ગોવિન્દભટ્ટજીને આપ્યો છે, તેને વેચી, તેનુ દ્રવ્ય તેમણે લેવુ પત્ર વાચવાર લખવુ તત્રત્ય (તમારા ત્યાનો) સર્વ વૃતાન્ત લખવો. ગિરિધરના બાલબચ્ચાના ખુશીન સમાચાર વિશેષ કરીને લખવા કાંઈ પણ ચિન્તા કરવી નહિ આપણા કુલપતિ (કુલ-દેવતા) શ્રીગોવર્ધનનાથ આપણું હિત જ કરશે किमधिकम् વધુ શું ? ચૈત્ર વદ ૪ ગોવિન્દભટ્ટ તથા ગણેશભટ્ટને આશિષ્ પદકૃત્ (કીર્તન બનાવનાર તથા ગાનાર) ગોવિન્દદાસજીને ભગવત્સ્મરણ કહેવુ મનાહિ (?) તથા કૃષ્ણદાસ વગેરેને આશિષ્ કહેશો વાસુદેવભટ્ટે પુરોહિતના ગૃહથી સ્વગૃહ જવુ કૃષ્ણરાય વગેરેને આશિષ્

વિવેચન—અહિ આ પત્રનુ ભાષાન્તર સમાપ્ત થાય છે આ પત્ર શ્રીબૃહત્સ્તોત્રસ-રિત્સાગરમાં મૂલ સસ્કૃતમાં છપાયેલુ છે, તેથી મૂલ સસ્કૃત અહિ નહિ આપતા માત્ર ભાષાન્તર જ આપ્યુ છે આ પત્રપરથી આપણને અનેક વિચાર સ્ફુરે છે

૧ જે વિદ્વાન પુરૂષોએ શ્રીગુસાઇજીના વિદ્વન્મણ્ડન, ટિપ્પણી, ભાષ્ય, ભક્તિહ્રસ ઇત્યાદિ ગ્રન્થનુ અવલોકન કર્યુ હશે, તેમને તો શ્રીગુસાઇજીની અલૌકિક વિષયમા અત્યન્ત નિપુણતાનો સાક્ષાત્ અનુભવ થયો હશે અલૌકિક વિષય ઉપરાત તેઓશ્રીમા વ્યવહારદક્ષતા પણ ઉચ્ચ પ્રકારની છે તેઓશ્રીની વ્યવહારકુશલતા તદ્વિરચિત અનેક વિદ્યમાન પત્રોપરથી સાક્ષાત્ થાય છે આવા લક્ષ્ય પત્રો આશરે બાવનેક છે આ પત્રો તેઓશ્રીના આન્તર તથા બાહ્ય જીવનપર અતિ ઉજ્જ્વલ પ્રકાશ પાડે છે, તેથી તેઓશ્રીના વિદ્યમાન પત્રો મૂલ તથા ભાષાન્તર સહિત પુષ્ટિભક્તિસુધા માં પ્રસિદ્ધ-કરવાની ઇચ્છા હશે તો આપવામા આવશે જે પત્રનુ ઉપર આપણે ભાષાન્તર આપ્યુ છે તે શ્રીગુસાઇજીની વૃદ્ધાવસ્થામા લખાયલુ છે. સસ્મરણકોના પ્રાકટય પછીનુ એ પત્ર છે

૨. શ્રીગુસાઇજી પોતાને ' આચાર્યનુ ' પદ ન લગાડતા પોતે ' શ્રીવિઠ્ઠલ-દીક્ષિત ' લખે છે, તે પણ વિચારણીય છે શ્રીગુસાંઇજીમા આચાર્યત્વની આટલી બધી યોગ્યતા પ્રત્યક્ષ છતાં શાસ્ત્રાન્તે તે પદવી તેઓશ્રીએ ધારણ ન કરી ? શ્રીગુસાઇજીનો

એવો અભિપ્રાય હોવો જોઇએ કે આચાર્ય પદવીને લાયક તો કેવલ શ્રીમહાપ્રભુજી જ છે, અને તેમના સિવાય અન્ય કોઇ [illegible] આચાર્યપદ યોગ્યતાથી ગ્રહણ કરી શકાય નહિ. આ જ કારણથી સંપ્રદાયના મહાન ગ્ર [illegible] વામીઓ શ્રીગોકુલનાથ, શ્રીહરિરાયજી, શ્રીપુરુષોત્તમજી, શ્રીગોપેશ્વરજી, શ્રી [illegible] ઇત્યાદિ વંશ્યોએ પોતે 'આચાર્યપદ' ન લખતા, માત્ર ગોસ્વામીપદ ધારણ કર્યું. એવા જ આશયથી વિદ્વન્મણ્ડન શ્રીવિઠ્ઠલેશ્વરાચાર્ય-વિરચિત ન કહેવાતા શ્રી [illegible] વિરચિત કહેવાયું, સાધનદીપક શ્રીગોપીનાથવિરચિત લખાયો, શ્રીહરિરાયજીએ સ્વગ્રન્થોમાં શ્રીહરિદાસવિરચિત એમ ઇતિશ્રી ધારણ કરી, અને પંડિતશિરોમણિ શ્રીપુરુષોત્તમજીએ શ્રીમદાચાર્યવિરચિત તત્વદીપ-નિબન્ધના 'કૃષ્ણસેવાપર વાદા દમ્ભાદિરહિતં નર, શ્રીભાગવતતત્ત્વજ્ઞ ભજેજ્જિજ્ઞાસુરાદરાત્' શ્લોકપર ટીકા કરતા 'આચાર્યત્વ સ્વાસ્મિન્ નિયચ્છન્તઃ' એમ લખ્યુ, અર્થાત્ આ અલૌકિક-પૂર્ણ-ગુણ સંપન્ન-આચાર્યત્વ શ્રીમદાચાર્યજીએ પોતાનામા જ નિયત કર્યુ છે, અતએવ સંપ્રદાય પ્રણાલિકાથી આપણે જાણીએ છીએ કે આધુનિક ગોસ્વામીઓ સર્વ ગુરુદ્વાર તરીકે [illegible] ગાય છે, નહિ કે આચાર્ય તરીકે આચાર્યશ્રી તો કેવલ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી જ, [illegible] સર્વવશ્ય (જોકે તેમને આચાર્યનુ પદ લગાડવાને કોઇપણ પ્રકારે બાધ નથી તોપણ) મહાગન્તે વસ્તુત ગુરુદ્વારભૂત તરીકે જ આપણા સાંપ્રદાયિક ગ્રન્થોમાં વર્ણવાયલા છે, નહિ કે આચાર્ય તરીકે! જ્યારે ગોસ્વામી બાલકોનુ આમ છે તોપછી કલ્પિત આચાર્ય જેવાકે 'હરિહરાત્મક સંપ્રદાયાચાર્ય' ઇત્યાદિ વૈષ્ણવ બ્રાહ્મણો સર્વથા શ્રીમદાચાર્યના આચાર્યત્વથી સુદ્ધર જ સમજવા મૂર્ખમા આ સંપ્રદાયના આચાર્ય તો કેવલ શ્રીમહાપ્રભુજી એકલા જ, અન્ય સર્વ વંશ્યો ગુરુદ્વા-રભૂત એટલે કે આપણને આચાર્યશ્રીનું વિજ્ઞાન કરાવી તેઓશ્રીની કને લઇ જનાર છે. બ્રહ્મસબન્ધ પણ મહાગન્તોદ્વારા આચાર્યશ્રીની જ આડીથી વૈષ્ણવોને પ્રાપ્ત થાય છે તેનુ ફલ પણ આચાર્યશ્રીની કૃપાથી જ.

૩ શ્રીગુસાંઇજીને સાત પુત્રો હતા પહેલા છ શ્રીરુક્મિણીજીના અને સાતમા શ્રીપદ્માવતીજીના તેઓના નામ નિચે પ્રમાણે -શ્રીગિરિધરજી, શ્રીગોવિન્દજી, શ્રીબાલકૃષ્ણજી, શ્રીવલ્લભજી, શ્રીરઘુનાથજી, શ્રીયદુનાથજી અને સાતમા શ્રીઘનશ્યામજી આ સર્વ પુત્રોના નામ શ્રીગુસાંઇજીએ પત્રમા લખ્યાં છે, છતાં માત્ર ચતુર્થ પુત્ર શ્રીવલ્લભને 'શ્રીવલ્લભ' એમ લખે છે ચતુર્થ પુત્ર શ્રીગોકુલનાથ સિવાય અન્ય છ બાલકોને બાબતે શ્રીગુસાંઇજીએ 'શ્રી' ન લગાડી એપણ કઇ અર્થ સૂચન કરે છે. સમ બાલકોમા શ્રીગોકુલનાથજીને બાબતે તેઓશ્રીનો ઉચ્ચ અભિપ્રાય હોવો જોઇએ. સમ પુત્રોના કાર્ય તથા ગ્રન્થો તરફ દૃષ્ટિ કરીશુ તો શ્રીગુસાંઇજીનો, તેમને બાબતે એ ઉચ્ચ અભિપ્રાય સમજાવુ છે એટલુ જ નહિ પણ સાર્થ છે.

૪ જેમ આધુનિક લોકો અહન્તામમતાથી પૂર્ણ હોય છે તેમ શ્રીગુસાંઇજીને ન હતુ. શ્રીગુસાંઇજીને શ્રીકૃષ્ણ જ કર્તા અકર્તા અને અન્યથાકર્તા હતા કોટિ બ્રહ્માણ્ડનુ સર્વ તન્ત્ર પ્રભુને જ આધીન છે, એમ પોતે સારીરીતે જાણતા હતા એટલું જ નહિ, પણ તેપ્રમાણે તેઓશ્રી માનતા તથા આચરતા હતા. ટોડા ગામસુધી શ્રીકૃષ્ણે જ તેમને હેમખેમ પહોચાડયા અને ત્યા જ દોલોત્સવ કરાવ્યો ભગવાને કરાવ્યો. નહિ કે પોતે કર્યો. પરબ્રહ્મ પુરુષોત્તમ શ્રીકૃષ્ણ સર્વકર્તૃ છે એ સિદ્ધાન્ત તેમને હૃદયારૂઢ હતો.

૫ શ્રીકૃષ્ણનુ શરણ પણ શ્રીગુસાંઇજીએ સુદૃઢીતે સિદ્ધ કર્યું હતું. 'અસ્માકમેવા-ધ્યેનેશ ત્વવાસ્માકમાવિતા' શ્રીકૃષ્ણસિવાય અન્ય કોઇને તેઓશ્રી પોતાના રક્ષિતા તરીકે ગણતા ન હતા અશકયમા અને સુશકયમા શ્રીકૃષ્ણનુ જ શરણ સર્વથા તેઓશ્રીને હતું

૬ પત્રના ઉભયત્ર શબ્દથી એમ જણાય છે કે તે સમયે બે મદિર હોવાં જોઇએ, એક તો શ્રીનાથજીનુ અને બીજું શ્રીનવનીતપ્રિયજીનુ

૭ શ્રીગુસાઇજી સ્વપુત્રોને પ્રભુની સેવા કરવાને તથા કરાવવાને આગ્રહથી ઉપદેશ કરે છે પોતે સેવા કરવી અને વૈષ્ણવોની પાસે ભગવાનની સેવા કરાવવી એ જ બાલકોનુ મુખ્ય કર્તવ્ય છે ભગવત્સેવા સિવાય જે કઇપણ બાલકો વા વૈષ્ણવો કરે છે તે શ્રીગુસાંઇજીના આશયથી વિરુદ્ધ છે વિચારણીય છે કે શ્રીગુસાંઇજી સ્વપુત્રોને તથા વૈષ્ણવોને સારીરીતે કેવલ ભગવત્સેવા કરવાનો જ ઉપદેશ કરે છે પ્રભુની સેવાનો ત્યાગ કરી અગ્નિહોત્રાદિ કરવાનુ કઇ ઉપદેશ કરતા નથી, ભગવત્સેવા છોડી દ્રવ્યોપાર્જનને વાસ્તે ભગવાનથી વિમુખ થવાનુ કઇ ઉપદેશ કરતા નથી શ્રીગુસાઇજીના વાકયથી સ્પષ્ટ થાય છે કે બાલકોનુ અને વૈષ્ણવોનુ મુખ્ય કર્તવ્ય ભગવત્સેવા છે, અન્યત્ સર્વ ગૌણ છે, અને પ્રભુની સેવા કરતા અવકાશ મલે તો જ લોકસગ્રહને માટે યોગ્ય લાગે તો અગ્નિહોત્રાદિ કર્મ કરવા, પણ પ્રભુની સેવા તો અવશ્ય કરવી આણ જાય તોપણ પ્રભુની સેવાનો ત્યાગ કરવો જોઇએ નહિ પ્રભુની નામસેવા અને સ્વરૂપસેવા બન્ને કરવાની અત્યન્ત જરૂર છે, તે પણ શ્રીમહાપ્રભુજીની આજ્ઞાનુસાર તનમનધનથી મનવાણીકર્મથી, અર્થાત્ સર્વ પ્રકારે કરવી

૮ શ્રીગુસાઇજી પત્રમા 'સ્વદેહરક્ષા સર્વ પ્રકારે કરવી, બાલકોની રક્ષા સર્વ પ્રકારે કરવી,' 'કાઇ પણ ચિન્તા કરવી નહિ' ઇત્યાદિ વારવાર લખે છે, તે પરથી એમ નથી સમજવાનુ કે દેહને પુષ્ટ બનાવવાને બાતર સ્વદેહરક્ષા કરવી, પણ આ દેહ વગેરે પોતાનુ તથા પોતાના પુત્રોનુ ભગવદુપયોગમા આવે, શ્રીપ્રભુની સેવાના વિનિયોગમાં આવે તેને વાસ્તે શરીરરક્ષા ઉપયોગી છે ભોજનાદિને વાસ્તે સ્વદેહરક્ષા શ્રીગુસાઇજીને ઇષ્ટ હોય એમ લાગતુ નથી ગમે તેટલુ શરીર પુષ્ટ હોય પણ જો પ્રભુસેવામા (નામ વા સ્વરૂપસેવા) ઉપયોગી ન થાય તો તે નકામુ છે

વલી પોતે 'ચિન્તા ન કરવી' એમ વારવાર લખે છે તેપરથી એમ પોતે (શ્રીગુસાઇજી) સૂચન કરે છે કે જ્યારે શ્રીકૃષ્ણ માથે રક્ષણ કરનારા બિરાજે છે તો પછી લૌકિક વૈદિક ચિન્તા સર્વથા હેય છે, ત્યાજ્ય છે જે લોકોએ પોતાનો આત્મા પણ ભગવાનને સમર્પણ કર્યો છે, તેમને ચિન્તા કરવી છાજતી નથી

૯ ઘણીવાર એવુ બને છે કે અયોગ્ય અતિ પરિચય અને સ્વામીના નિર્ભાગ્યનો લાભ લેવાને સેવકો ચૂકતા નથી સ્વામીને કુમાર્ગે ચઢાવી દે છે, એટલુ નહિ પણ તેને સુપથના કટ્ટા દુશ્મન બનાવી દે છે, માટે બાલકોએ પણ સેવકોને પોતપોતાની યોગ્યતા પ્રમાણે મર્યાદામા રાખવા, પોતે અથવા સેવકોએ મર્યાદાનુ ઉલ્લઘન સર્વથા કરવુ નહિ એવુ શ્રીગુસાઇજીનુ વિનીત મત છે

૧૦ શ્રીગુસાંઇજી સ્વપત્રમા ઋણશોધનના વિષયમાં કાંઇક આતુરતાથી લખે છે, તેપરથી એમ માનવાને સબલ કારણ મલે છે કે શ્રીગુસાંઇજીના સમયમાં પણ મોટું દેવું થઇ ગયુ હોવુ જોઇએ. અર્થાત્ મહારાજાના માથાપર દેવુ કઇ આજકાલની નવાઇ નથી, પણ શ્રીગુસાંઇજીના સમયથી ચાલ્યું આવે છે શ્રીગુસાંઇજીનુ દેવુ ભગવદર્થ જ હતું, (ભગવાનને વાસ્તે હતું) વિષયવિલાસનુ ન હતું. આ વાત પરંપરાથી પણ માનવાને કારણ મલે છે. શ્રીગુસાંઇજીનો પોતાના કાકાની સાથેના સબંધનું અત્ર અનુસંધાન કરવુ

૧૧ પ્રભુની સેવા કરતી વખતે અનેક પ્રતિબન્ધ નડે છે રાત્રિનું સ્વરૂપ જ પ્રતિબન્ધરૂપ છે, અને તેથી રાત્રિના સાવધાનતાની વિશેષ જરૂર હમેશાં પડે છે, એવા હેતુથી શ્રીગુસાંઇજી સ્વપુત્રોને સાવધાન યામિકોને (રામોશી) બેસાડવાનું લખે છે, કે જેથી કરીને કઇપણ ઉપદ્રવ થયા વિના પ્રભુની સેવા નિર્ભયતાથી નિર્વિઘ્નરીતે નિશ્ચિન્તતાથી કર્યા કરાય. યામિકોને બેસાડવાનુ મુખ્ય પ્રયોજન પ્રભુને કોઇ પણ પ્રકારનો શ્રમ ન પડે તેને વાસ્તે જ સમજવુ, નહિ કે માલમીલકતનુ રક્ષણ કરવાને. સર્વ ધન જો પ્રભુના વિનિયોગમાં ન આવે તો તે વ્યર્થ છે.

૧૨ શ્રીગુસાંઇજી શ્રીકૃષ્ણને જ સ્વકુલના દેવતા લખે છે, અને તે જ શ્રીકૃષ્ણ પોતાનુ ઐહિક અને પારલૌકિક હિત કરવાવાલા છે, એમ પોતે માને છે, અને સ્વપુત્રોને તેમ માનવાને ઉપદેશ કરે છે શ્રીગુસાંઇજી કોઇપણ દેવી દેવતાને સ્વકુલના દેવતા માનતા નથી, પણ શ્રીકૃષ્ણને જ, કેવલ શ્રીકૃષ્ણને જ સ્વકુલપતિ અન્તઃકરણથી સ્વીકારે છે સ્વકુલપતિ શ્રીકૃષ્ણનો જ અનન્યાશ્રય સર્વેએ રાખવો જોઇએ. આવા જ આશયથી શ્રીહરિરાયજી વગેરે વૈષ્ણવોને સર્વથા સર્વદા દૃઢ અનન્યાશ્રય રાખવાનો અતિ આગ્રહ કરે છે શ્રીગુસાંઇજી અત્ર શ્રીમદાચાર્યના 'अन्याश्रयो न कर्तव्य सर्वथा बाधकस्तु स' વાકયની માત્ર પુનરુક્તિ જ કરે છે. એ જ વિષયનુ અન્યત્ર પણ શ્રીમદ્ગુસાંઇજી લખે છે કે 'अन्यसम्बन्धगन्धोपि कल्पतामेव बाधते।' અન્યના સબન્ધની ગંધ માત્ર પણ ડોકુ કપાવી નાંખે છે જે લોકો શ્રીગુસાંઇજીનુ આવુ તાત્પર્ય સમજ્યા સિવાય પ્રભુસેવાનો ત્યાગ કરી અન્યત્ર શ્રાદ્ધાદિક કાર્યો કરવાને પ્રવર્તે છે, તેમની શ્રીગુસાંઇજીના અભિપ્રાય પ્રમાણે શી ગતિ થાય તે સર્વનિયન્તા પ્રભુ જાણે આ અનન્યાશ્રયનો બાધ જેટલે અંશે આપણે લોકો કરીએ છીએ તેટલે જ અંશે આપણને એ હાનિકારક નીવડે છે. આધુનિક વૈષ્ણવોને રુચો વા મા રુચો પણ શ્રીગુસાંઇજીનુ તો એવુ સુદૃઢ મત છે કે ભગવાન્ શ્રીકૃષ્ણ જ આપણા અનન્યાધિપતિ છે કેવલ શ્રીકૃષ્ણના દૃઢ આશ્રય વિના સર્વ સાધન આપણને તો તુષાવઘાત જેવા લાગે છે.

૧૩ શ્રીગુસાંઇજી પદકૃત્ ગોવિન્દદાસને ભગવત્સ્મરણ લખે છે, તે પણ કંઇ અર્થ સૂચન કરે છે આ પદકૃત ગોવિન્દદાસ તે શ્રીગુસાંઇજીના સેવક કીર્તનકાર તથા કીર્તનગાનારૂ 'ગોવિન્દપ્રભુ' જ બીજા કોઇ નહિ. આવા મહાનુભાવી ભક્તને શ્રીગુ

સાધજી સ્વમમાન ગણે તેમાં નવાઇ શી ? પોતાનાથી અધ કક્ષાવાલાને આશિષ્, ઉચ્ચ કક્ષાવાલાને નમસ્કાર અને સમાન-કક્ષાવાલાને ભગવત્સ્મરણ કરવાનો સંપ્રદાય છે, તેને અનુસરીને શ્રીગુમાઇજી ગોવિન્દપ્રભુને ભગવત્સ્મરણ કહે છે; ભગવદીય તરીકે તેને સ્વસમાન ગણે છે તેથી પોતે ભગવત્સ્મરણ કરે છે, પણ જ્યારે પોતે સ્વશિષ્ય તરીકે ગણે છે ત્યારે આશિષ્ લખે છે. શ્રીગુસાંઇજી તેથી એ જ પત્રમા શ્રીનાથજીના કારભારી કૃષ્ણદાસાદિ અષ્ટસખાને આશિષ્ લખે છે

આ પ્રમાણે શ્રીગુસાંઇજીના પત્રપરથી આપણને ઘણુ જાણવાનુ મલે છે, અને વૈષ્ણવોનુ આવશ્યક કર્તવ્ય છે કે જેપ્રમાણે શ્રીમહાપ્રભુજી શ્રીગુસાઇજી વગેરે આજ્ઞા કરે તેને પોતે અનુસરવુ એટલુ જ નહિ, પણ જેના સબધમા આપણે હોઇએ પછી તે ગુરુ હોય કે મિત્ર હોય ગમે તે કોઇ હોય તેને તે જ પ્રમાણે ઉદાત્ત મનથી ચાલવા આગ્રહપૂર્વક વિનતિ કરવી

શુદ્ધાદ્વૈતવિજ્ઞાન.

અનુસધાન પૃષ્ઠ ૨૪

હવે આપણે શ્રુતિના પ્રમાણોથી શ્રીવલ્લભાચાર્યે જીવસ્વરૂપ કેવુ સ્વીકારેલુ છે તે જોઇએ એક જ અદ્વિતીય બ્રહ્મ પોતે એકાકી રમણ કરતુ નથી, બહુ થવાને તે ઇચ્છે છે આ ઇચ્છાથી સાથે તરત જ જેમ અગ્નિમાથી તણખા ઉડે છે તેમ અનન્ત જીવો બ્રહ્મમાથી નિસર્યા બ્રહ્મના અશ તરીકે જીવમા જે અલૌકિક ધર્મ હોવા જોઇએ, તે બ્રહ્મની સ્વેચ્છાને લીધે નિત્ય સ્વક્રીડાને વાસ્તે તિરોધાન પામ્યા આ પ્રમાણે જીવાત્માને અજ્ઞાન તથા બધ પ્રાપ્ત થયાં (પરાભિધ્યાનાત્ તિરોહિત તતો હિ અસ્ય બંધવિપર્યયૌ) બ્રહ્મમાથી જીવ જેવો નિસર્યો કે તરત જ આનન્દાશનો લોપ થયો. આ આનદાશના તિરોધાને જીવને કામમય (ઇચ્છાથી ભરેલો) બનાવ્યો અલૌકિક ભગવદ્રમણમા પોતાની કાર્કિદી આરભ કરતી વખતે જીવાત્મા આવો હોય છે

જીવાત્મા નિત્ય અવિકારી અને અમરણશીલ છે જીવાત્માને જન્મ તથા મરણ નથી. જન્મ તથા મરણ એ શરીરના ધર્મ છે, નહિ કે આત્માના આ જીવાત્માનુ જીવત્વ પણ આવિદ્યક છે એમ કેટલાક લોકો માને છે, પણ તેવુ મત સર્વશાસ્ત્રવિરુદ્ધ હોવાથી અગ્રાહ્ય છે પરમાત્માની માફક જીવાત્મા પણ તેટલો જ સત્ય, વાસ્તવિક છે કેટલાક લોકો જીવનાં જીવત્વને આવિદ્યક કહે છે, તે શ્રીવલ્લભાચાર્યજીને અનિષ્ટ છે કારણ કે જીવને આવિદ્યક કહેવો, એટલે જીવાત્મા અલીક અસત્ય મિથ્યા ઠર્યો, જે મન્તવ્ય સકલ આર્યશાસ્ત્રને તિલાજલિ આપે છે

જીવાત્માના પરિમાણ વિષે ત્રણ પરસ્પર વિરુદ્ધ મત પ્રચલિત છે જૈન લોકો એવું માને છે કે જીવાત્મા મધ્યમપરિમાણી શરીરપરિમાણી છે આ મત ઘણું જ દૂષણગ્રસ્ત

હોવાથી સર્વવેદાન્તાચાર્યો એનું સંપૂર્ણરીતે ખંડન કરે છે. દ્વિતીય મત જીવાત્માને વ્યાપક વા વિભુ સ્વીકારે છે. આ મતનો સ્વીકાર શંકરાચાર્ય પણ કરે છે, તથાપિ અન્ય સર્વ વેદાન્તાચાર્યો ઘણા મોટા ભાગે શંકરાચાર્યથી જૂદા પડે છે. તે સર્વ એક કંઠરવે જીવાત્માને અણુપરિમાણી માને છે વેદાન્તમીમાંસાના દ્વિતીય અધ્યાયના તૃતીયપાદમાં એક સહેજ લાંબા અધિકરણમાં વ્યાસ આ જ વાત ઉપદેશે છે, પણ એકવાર જીવાત્મા અણુ છે એમ સિદ્ધ કરી વ્યાસશાસ્ત્રના અન્ય વર્ગના કે જેમાં જીવાત્માને વિભુ વ્યાપક કહ્યો છે, તેની તપાસ કરે છે વ્યાસ કહે છે કે વ્યાપકત્વ, વિભુત્વ એ મુખ્યશ બ્રહ્મનો જ ધર્મ છે, પણ જ્યારે જીવાત્મા બ્રહ્મ (બ્રહ્મમય) થાય છે, ત્યારે બ્રહ્મવત્ વ્યાપકત્વ, વિભુત્વનો અનુભવ તેને થાય છે. જે પ્રમાણે ગજકુંવર ગજત્વાભિમેક પછી રાજા થાય છે તેમ જીવાત્મા આનન્દાંશના પ્રાકટ્ય પછી વિભુત્વાદિ ધર્મ અનુભવે છે, (तद्गुणसारत्वात् तद्व्यपदेशः प्राज्ञवत्) આ પ્રમાણે જીવાત્મા અણુ છે. આનન્દાંશના પ્રાદુર્ભાવ પછી જીવાત્મા વિભુ થઇ શકે છે એવું શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી તથા વ્યાસ માને છે

બ્રહ્મ કર્તા તથા ભોક્તા છે તે જ પ્રમાણે જીવાત્મા પણ કર્તા તથા ભોક્તા છે. કરવાની તથા ભોગવવાની ક્રિયા મુખ્યત્વે કરીને બ્રહ્મની જ છે પણ જીવાત્મા બ્રહ્મનો અંશ હોવાથી, બ્રહ્મની માફક તે પણ કર્તા તથા ભોક્તા બને (अंशो नानाव्यपदेशात् तु तत् श्रुते) જે પ્રમાણે નેત્ર સારા તથા નઠારા પદાર્થ જુવે છે તેવીજ રીતે જીવાત્મા કેટલીક વખતે પોતાનું હિત કરે છે અને કેટલીક વખત અહિત કરે છે. કારણ કે એની શક્તિયો સંકુચિત છે, એને સમાધિ નથી કે જે વડે સત્ય જોઇ શકે અને કોઇ એવો મન્ત્ર નથી કે જે તેનું હમેશા ભલું કરે.

આ જીવાત્મા એક બ્રહ્મનો અંશ છે (अंशो नानाव्यपदेशात्) આ જીવાત્મા બ્રહ્મનો જ અંશ છે, જીવાત્મા અને પરમાત્માનો સંબંધ અંશાંશિભાવનો છે, જે પ્રમાણે અંશ અને અંશી અભિન્ન છે, તે જ પ્રમાણે જીવાત્મા અને પરમાત્મા અભિન્ન છે (तदनन्यत्वमारम्भणशब्दादिभ्यः).

આ પ્રમાણે શ્રીવલ્લભાચાર્યજીના સિદ્ધાન્તમાં જીવાત્મા સત્ય વાસ્તવિક છે, અણુ છે, કર્તા તથા ભોક્તા છે, બ્રહ્મનો અંશ છે, અને બ્રહ્મથી અભિન્ન છે, જીવ જ્યારે બ્રહ્મભાવનો અનુભવ કરે ત્યારે વિભુ થઇ શકે બને

હવે આપણે જગત્ શું છે તેનો વિચાર કરીએ આ અખિલ વિશ્વ એ બ્રહ્મનું સત્ય કાર્ય છે. જેમ કરોળીઓ સ્વેચ્છાથી જ સ્વશરીરને વાસ્તે પોતાની જાલ વિસ્તારે છે તે જ પ્રમાણે કંઇપણ વિકૃતિ પામ્યા સિવાય બ્રહ્મ આ સકલ જડજીવાત્મક પ્રપંચ પોતામાંથી વિસ્તારે છે જગતનું જન્મ સ્થિતિ અને લય બ્રહ્મમાં જ હોવાથી તે સત્ય છે, ભૂતકાલ વર્તમાન અને ભવિષ્ય એમ ત્રણે કાલમાં જગતની સ્થિતિ બ્રહ્મમાં જ છે આ પ્રમાણે જગત્ પોતાનું સત્યત્વ બ્રહ્મથી જ પ્રાપ્ત કરે છે આ જગત્ સત્ય છે, અને તેથી જ તે બ્રહ્મથી અનન્ય છે, અભિન્ન છે (सत्वाच्चावरस्य) સત્યબ્રહ્મ અને, અસત્ય માયિક કંઇક એ બેની વચ્ચે કોઇપણ પ્રકારનું અદ્વૈત સંભવતું જ નથી. (અપૂર્ણ.)

॥ શ્રીકૃષ્ણાય નમ ॥

પ્રમેયરત્નાર્ણવ

આ ગ્રંથનો આરંભ કરતા ગ્રંથકર્તા શ્રીબાલકૃષ્ણભટ્ટજી (લાલૂભટ્ટજી) શિષ્ટાચારને અનુસરીને ચાર શ્લોકથી મંગલાચરણ કરે છે તેમા પ્રથમ શ્લોકથી શ્રીગોવર્દ્ધનનાથજીનુ (શ્રીનાથજીનુ) સેવનરૂપ મંગલ કરે છે

ઉપનિષદો જે સ્વરૂપને સમજાવતાં 'તે[1] રસરૂપ છે,' એમ કહે છે એવા તે રસસ્વરૂપ શ્રીગોવર્દ્ધનનાથજીનુ હુ સેવન કરૂ છુ. શ્રીગોવર્દ્ધનનાથજી કેવા છે? શ્રીગોપીજનના નવી સુંદરતાથી ભરપૂર એવા યૌવનરૂપની અતિ મધુરતાની પ્રાપ્તિ માટે શ્રીનાથજી અતિ ઉત્કંઠાવાળા છે, વળી શ્રીનાથજી શ્રીવૃન્દાવનમા પોતાની જ ઇચ્છાથી ઉજવેલ રાસોત્સવ કરે છે, અને વળી શ્રીનાથજી દૈવી જીવોના ઉદ્ધાર માટે શ્રીમહાપ્રભુજી અને શ્રીગુસાઇજીરૂપે શુદ્ધપુષ્ટિભક્તિ પ્રકટ કરે છે, એવા શ્રીગોવર્દ્ધનનાથજીનુ હુ સેવન કરૂ છુ.

આ પ્રમાણે પ્રથમ શ્લોકથી શ્રીનાથજીની સેવારૂપી મંગલાચરણ કરી ગ્રન્થકર્તા બીજા શ્લોકથી પોતાના કુલના ઇષ્ટ શ્રીબાલકૃષ્ણજીનુ મંગલાચરણ કરે છે.

મારા કુલના ઇષ્ટ શ્રીબાલકૃષ્ણજી મારે મસ્તકે બિરાજો શ્રીબાલકૃષ્ણજી કેવા છે? શ્રીબાલકૃષ્ણજીનુ સ્વરૂપ કેવલ શુદ્ધપુષ્ટિભક્તિથી જ જાણી શકાય છે, વળી શ્રીબાલકૃષ્ણજીના મુખચંદ્રને શ્રીયશોદાજીએ ઘણાં લાડ લડાવેલા છે, અને વળી બ્રહ્માજી અને શિવજી વગેરે પણ શ્રીબાલકૃષ્ણજીના ચરણકમલને પ્રાપ્ત કરી શકયા નથી, એવા શ્રીબાલકૃષ્ણજી મારે મસ્તકે બિરાજો.

આ પ્રમાણે દ્વિતીય શ્લોકથી સ્વકીય ઇષ્ટ દેવતા શ્રીબાલકૃષ્ણજીનુ મંગલાચરણ કરીને ગ્રંથકાર ત્રીજા શ્લોકથી શ્રીમહાપ્રભુજીનુ આશ્રયરૂપ મંગલાચરણ કરે છે.

દૈવી જીવોને શરણે લઇ પોતાના જ અનુગ્રહરૂપી બલથી નંદનંદન શ્રીકૃષ્ણની પ્રાપ્તિ કરાવી આપનાર શ્રીમહાપ્રભુજીનો આશ્રય કરૂં છું. શ્રીકૃષ્ણ કેવા છે? શ્રીકૃષ્ણ આનંદસ્વરૂપ છે, અને ઉપનિષદો શ્રીકૃષ્ણની સ્તુતિ કર્યા કરે છે, અને વળી શ્રીકૃષ્ણ લૌકિક ધર્મથી રહિત છે, એવા પૂર્ણપુરૂષોત્તમ શ્રીકૃષ્ણની પ્રાપ્તિ કરાવી આપનાર શ્રીમહાપ્રભુજીનો આશ્રય કરૂ છું.

તૃતીય શ્લોકથી શ્રીમહાપ્રભુજીનુ મંગલાચરણ કરીને ચતુર્થ શ્લોકથી શ્રીગુસાઇજીનુ પ્રણિપતનરૂપ મંગલાચરણ કરે છે

શુદ્ધ પ્રેમરૂપી પુષ્ટિભક્તિનુ સ્વરૂપ સમજાય માટે શ્રીગુસાઇજીને પ્રણમુ છુ. શ્રીગુસાંઇજી કેવા છે? શ્રીગુસાઇજીનુ અંત કરણ નિરંતર શ્રીગોપિકાજીના શુદ્ધ પ્રેમમાં જ મગ્ન છે અથવા અતિ મસ્ત છે, અને વળી વેદાંતમા વર્ણવેલું શ્રીપુરૂષોત્તમનુ રસસ્વરૂપ

[1] રસો વૈ સઃ ।

અનુભવી શકાય એમ શ્રીગુસાંઇજીએ વિદ્વન્મડનાદિ ગ્રંથોથી સ્પષ્ટ કર્યું છે. એવા શ્રીગુસાંઇજીને પ્રણમુ છું.

ઉપર પ્રમાણે ચાર શ્લોકથી મગલાચરણ કરીને ગ્રંથકાર ગ્રંથનો પ્રારભ કરે છે

શ્રીસુબોધિનીજી, શ્રીતત્વદીપનિબધ, શ્રીમદણુભાષ્ય, વિદ્વન્મંડન વગેરે ગ્રંથરૂપી સમુદ્રમાંરહેલાં મુખ્ય મુખ્ય સિદ્ધાતરૂપી રત્નોનો જ સગ્રહ કરી આ ગ્રથ રચવામાં આવે છે

આ ઉપરથી પોતાનો રચેલો આ ગ્રથ કલ્પિત નથી, એવો આશય ગ્રથકર્તા જણાવે છે આ ગ્રથના એકંદરે સાત પ્રકરણો છે. તે આ પ્રમાણે—૧ પ્રપચવિવેક ૨ જીવસ્વરૂપનિરૂપણ ૩ મૂલસ્વરૂપનિરૂપણ ૪. પુષ્ટિવિવેક ૫. અધિકારનિર્ણય ૬. સર્વાત્મભાવનિરૂપણ અને ૭ ફલવિવેક.

ઉપરના સાત પ્રકરણમાંથી પહેલા 'પ્રપંચવિવેક' નો જ પ્રારભ શામાટે કરવો ? એ પ્રશ્નનો ઉત્તર આપી ગ્રથકાર પ્રથમ પ્રકરણનો પ્રારભ કરે છે

પ્રપચ એટલે જગત્ તે સત્ય છે, મિથ્યા નથી, પણ ભગવત્સ્વરૂપ છે, માટે જો પહેલા ભગવદ્રૂપ પ્રપચનુ જ્ઞાન થાય તો ભગવાન્‌ના માહાત્મ્યનો પણ સારીરીતે અનુભવ થાય, અને તે અનુભવ ભગવદ્ભજનમા પણ ઉપયોગી થઇ પડે, માટે પહેલા પ્રપચ એ શું છે તે સમજાવવા માટે પ્રપચનો જ વિવેક કરવામાં આવે છે. નિબધમાં પણ પહેલાં તેનો જ વિચાર કરેલો છે, માટે અત્ર પણ તેનુ જ અનુસરણ થાય છે.

આપણા બ્રહ્મવાદમા કોઇપણ જાતના અનવા તર્ક અથવા યુક્તિ વગેરેથી કોઇપણ પ્રકારનો નિશ્ચય કરવામાં આવતો નથી એટલામાટે જ બીજાઓની માફક ઘણા પ્રમાણો ન માનતાં કેવલ શબ્દ[1] પ્રમાણ જ માનીએ છીએ શ્રુતિ એટલે વેદ જેવો અર્થ જણાવે તેવો ને તેવો જ અર્થ કઇપણ પોતાની બુદ્ધિના તર્કનુ મિશ્રણ કર્યા વગર જ સ્વીકારવો એ આપણું પરમ સૂત્ર છે, અને તેને અનુસરીને શ્રીલાલૂભટ્ટજી પહેલા શ્રુતિનાં જ પ્રમાણથી પ્રારભ કરી સત્ય સિદ્ધાતનો નિશ્ચય કરે છે.

'તેમણે[2] પોતે જ પોતાના આત્માને જગદ્રૂપ કર્યો' 'તે[3] આટલા (જગદ્રૂપ) થયા છે' 'આ[4] સર્વ જગત્ તે જ છે' 'આ[5] બધુ જે છે તે આત્મા છે' આ[6] સર્વ આત્મા છે.' 'તે[7] જ સર્વ સ્વરૂપે થાય છે' 'આ[8] સર્વ પુરૂષ જ છે' વગેરે શ્રુતિઓથી એમ નિશ્ચય થાય છે કે-ભગવાન્ પોતે જ પોતાની ઇચ્છાથી આ જગદ્રૂપે થયા છે, પોતે જ આ જગતને ઉત્પન્ન કર્યું છે, એટલે બ્રહ્મ પોતે કારણ છે, અને આ જગત્ તે કાર્ય છે

શકા—જો તમે આ પ્રપચને (જગતને) ભગવાન્‌નું કાર્ય છે એમ માનશો

---

૧ વેદાદિ. ૨ स आत्मान॑ स्वयमकुरुत । ३ स हैतावानास । ४ स वै सर्वमिदं जगत् । ५ इदं सर्वं यदयमात्मा । ६ आत्मैवेदं सर्वम् । ७ स सर्वं भवति । ८ पुरुष एवेदं॑ सर्वम् ।

તો ભગવાન્‌માં પણ વિકાર પ્રાપ્ત થશે. અર્થાત્ ભગવાન્‌ને કારણ માનતાં ભગવાન્ વિકારી થશે જેમકેઃ--દૂધથી દહિં થાય છે તેમાં દૂધ કારણ અને દહિં કાર્ય છે, જ્યારે કારણરૂપ દુધ કાર્યરૂપ દહિ થાય છે. એટલે દહિરૂપે પરિણામ પામે છે, ત્યારે કારણરૂપ દૂધનુ અસલ સ્વરૂપ પલટાઇ જાય છે, અને દહિંરૂપી કાર્ય થતી વખતે કારણમાં વિકાર થાય છે માતલબ કે —કારણ રૂપ દૂધનુ અસલરૂપ સ્વરૂપ કાર્યરૂપ દહિ વખતે રહેતું નથી, અને તેમ જ જો તમે ભગવાન્‌ને પણ કારણ માનશો તો ભગવાન્‌માં પણ દૂધની પેઠે વિકાર પ્રાપ્ત થશે

ઉત્તર—તમે જે દૃષ્ટાત આપી કાર્યકારણનુ સ્વરૂપ બતલાવો છો, તે વાદને વિકૃતપરિણામવાદ કહેવામા આવે છે, એટલે તે વાદમાં કારણનો વિકાર થાય છે અને કારણ કાર્યરૂપે પરિણામ પામે છે આ વાદને પોષણ કરનાર એક પણ પ્રમાણ મળતું નથી, માટે તે અગ્રાહ્ય છે, અમારા બ્રહ્મવાદમા આ વિકૃત પરિણામવાદથી ઉલટો અવિકૃત પરિણામવાદ જ સ્વીકારવામા આવે છે શ્રુતિ અને બ્રહ્મસૂત્રે વારવાર જે વાદ સિદ્ધ કર્યો છે, તે અવિકૃત પરિણામવાદ જ અલૌકિક તત્વવિચારમા સ્વીકારવો જોઇએ.

અવિકૃત પરિણામવાદનુ સ્વરૂપ આ પ્રમાણે છે, કોઇપણ કારણ કાર્ય થાય તો પણ કારણ તેવુ ને તેવુ જ રહે, કારણ લેશમાત્ર પલટે નહિ આ પ્રમાણે કારણ કાર્યરૂપે થાય તોએ પણ કારણ અવિકૃત (વિકારવગરનુ) રહે એમ જે વાદ નિરૂપણ કરે છે તેને અવિકૃત પરિણામવાદ કહેવામા આવે છે ઉદાહરણથી આ વાદ સ્પષ્ટ થશે.

સુવર્ણના ઘણા આભૂષણો બનાવવામાં આવે છે, પણ સુવર્ણ તો ત્રણે અવસ્થામા[1] પોતાનુ સ્વરૂપ છોડતુ નથી, તેવી રીતે મૃત્તિકાના પણ ઘણાં પાત્રો થાય છે પણ મૃત્તિકામા કંઇ વિકાર થતો નથી ઘટ વગેરે પદાર્થો ત્રણે અવસ્થામાં મૃત્તિકા જ છે આ પ્રમાણે કારણરૂપ ભગવાન્ કાર્યરૂપ પ્રપંચરૂપે પરિણામ પામ્યા છે, તોપણ ભગવાન્‌માં કોઈ પણ જાતનો વિકાર પ્રાપ્ત થતો નથી.

એ તો પ્રકટય, સ્થિતિ, અને તિરોભાવ વખતે પણ તેના તે જ છે એટલે અમારો દર્શાવેલો વિકૃત પરિણામવાદ શ્રુતિ તથા યુક્તિ વિરુદ્ધ છે, માટે જ તેનો સ્વીકાર અનુચિત છે વ્યાસજીના બનાવેલા બ્રહ્મસૂત્રમાં કહ્યુ છે કે 'આ[2] પ્રપચ ભગવાન્‌ની કૃતિ છે, જગદ્રૂપે ભગવાન્ જ પરિણમે છે, અને તે સ્થલે ભગવાન્ ભાષ્યકારે પણ અવિકૃત પરિણામવાદ જ સિદ્ધ કર્યો છે આ શ્રૌત સિદ્ધાતથી જગત્‌ને જુઠું માનનારા અને જગત્ માયાથી જ દેખાય છે, વાસ્તવિક જગત્ જેવો કોઇ પદાર્થ જ અસ્તિત્વ ધરાવતો નથી, વગેરે કહેનારા માયાવાદીઓ પરાસ્ત થાય છે ભગવાન્ પોતે જ જગદ્રૂપ છે,. કાર્ય અને કારણ જુદા નથી, તેથી જ પ્રપચ પણ સત્ય છે મિથ્યા નથી, ભગવાન્‌થી જુદો નથી, પરંતુ ભગવદ્રૂપ છે. માટે જ પ્રપચ (જગત્) ઉત્પન્ન નથી થતો તેમ જ નાશ પણ નથી પામતો પરંતુ તે ભગવદ્રૂપે હતો અને ભગવાન્‌ની જ ઇચ્છાથી પ્રકટ થયો છે. તે જ પ્રપચનો આવિર્ભાવ તેવીજરીતે ભગવાન્‌ની ઇચ્છાથી ભગવાન્‌માં સમાઇ જાય તે પ્રપચનો તિરોભાવ તે બેઉ આ બ્રહ્મવાદમાં સ્વીકારાય છે નાશ કે

---

૧ ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ, લય. ૨ આત્મકૃતેઃ પરિણામાત્ બ્ર સૂ અ. ૧-૪-૨૬

ઉત્પત્તિનો તો અવકાશ જ નથી વવાને તો શુ પણ નાશ અને ઉત્પત્તિ, એ બે શબ્દો તો અમારા બ્રહ્મવાદના શ્રુતિસિદ્ધ શબ્દકોષમા પ્રવેશ સુદ્ધા નથી હવે પ્રપચમા આવેલા બીજા પદાર્થો જેવા કે ઘટ પટ વગેરેનો નાશ કે ઉત્પાત્ત ન સ્વીકારતા મૃત્તિકારૂપી કારણમા રહેલો ઘટ પ્રકટ થાય છે, અને મૃત્તિકારૂપી કારણરૂપે પરિણામ પામે છે તેને જ લોકો ઘટ ઉત્પન્ન થાય છે અને ઘટ નાશ પામે છે એમ કહે છે. પણ તે વાસ્તવિક નથી

ભગવાન્ પણ શ્રીમુખથી આજ્ઞા કરે છે કે 'જે વસ્તુ ખોટી છે, એટલે ઝાંઝવાના નીર જેવી છે તેનુ હોવાપણુ કદી સભવતું નથી તેમ જ જે વસ્તુ ખરી છે, અસ્તિત્વ ધરાવે છે તેનુ નહિ હોવાપણુ પણ કદી સભવ જ નહિ ભગવદ્રૂપ પ્રપંચ તો સત્ય છે અસ્તિત્વ ધરાવે છે તેને મિથ્યા અથવા તુચ્છ કેમ કેહેવાય? તેને ઉત્પન્ન થયો અથવા નષ્ટ થયો કેમ કેહેવાય' માટે પ્રપચને પ્રકટ કરનારી આવિર્ભાવશક્તિ તથા પ્રપચને સંકેલી લેનારી તિરોભાવશક્તિ જ બે પ્રભુને આધીન છે તેનાથી જ સર્વ શાસ્ત્રની સગતિ યથાર્થ રીત થાય છે નહિ તો નહીં જ ઉપરના ઉત્તમ સિદ્ધાંતથી નૈયાયિકોએ જે ચાર અભાવો કલ્પ્યા છે તે વ્યર્થ જઇ જાય છે તેનો વિચાર અત્ર લગારથી આપવામા આવ્યો છે. નૈયાયિકો પોતાના કલ્પેલા ચાર અભાવો પૈકી પહેલા અભાવને પ્રાભાવ કહે છે અને તેને કાર્ય ઉત્પન્ન થવામાં કારણ પણ માને છે. તેને સમજવા માટે આ દૃષ્ટાંત આપે છે જ્યાસુધી ઘટ ઉત્પન્ન નથી થયો અને કેવલ મૃત્તિકા જ છે, ત્યા ઘટનો પ્રાગભાવ છે, એટલે કે ઘટ ઉત્પન્ન થયાં પહેલા ઘટનુ નહિ હોવાપણું. તેમ બીજે સ્થલે પણ સમજી લવુ.

આ પ્રાગભાવ માનવો અને તેને કારણ પણ કલ્પવુ, એ વિચારયુક્ત નથી. પહેલા સિદ્ધ કર્યુ છે કે મૃત્તિકામા ઘટ છે કઇ નવો ઉત્પન્ન નથી થતો, એટલે મૃત્તિકા હોય ત્યારે પણ ઘટનુ તદ્દન નહી હોવાપણુ ન જ કહી શકાય માટે ઘટનો પ્રાગભાવ તો યુક્તિ સિદ્ધ પણ નથી ત્યારે તે પ્રાગભાવને કારણ માનવાનુ સાહસ તો દૂર જ રહ્યુ મૃત્તિકામા ઘટનો પ્રાગભાવ છે તે કઇ મૃત્તિકાથી જુદો દેખાતો નથી માટે ઘટ પ્રકટ થવામાં મૃત્તિકાને જ કારણ માની લઇને શામાટે કાર્યકારણ ભાવની યથાર્થ સગતિ ન કરવી કે.—બીજી વ્યર્થ મન કલ્પનાના ભોગ થઈ પડવુ. આવી રીતે નૈયાયિકોના પહેલા અભાવ પ્રાગભાવનુ ખંડન સમજી લેવું.

હવે નૈયાયિકો બીજા અભાવને પ્રધ્વસભાવ કહે છે તેમા યુક્તિ આ પ્રમાણે છે. ઘટના ફૂટી જવા પછી ઘટનું નહી હોવાપણું જે નજરે આવે છે, તેને ઘટ પ્રધ્વસભાવ કહે છે. તેનો પણ અત્ર અવકાશ નથી. ઘટ ફૂટી ગયો એટલે સદંતર નાશ થયો એમ નહીં પણ તે માટીરૂપે પરિણામ પામ્યો અર્થાત્ તે ઘટ ફૂટી ગયો છતા મૃત્તિકા રૂપે તો છે જ માટે ઘટનો નાશ નહિ પણ તિરોભાવ થાય છે. આ ઉપરથી ઘટનો પ્રધ્વસાભાવ પણ ટકી શકતો નથી. આપ્રમાણે બે અભાવોનુ ખંડન સમજી લેવું હવે અથકાર નૈયાયિકોના ત્રીજા અભાવનું એટલે અન્યોન્યાભાવનુ ખંડન કરવા શકા ઉઠાવે છે.

॥ શ્રીમદ્વિટ્ઠલેશ્વરવિરચિત ॥

॥ શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતાતાત્પર્ય ॥

॥ શ્રીગોપીજનવલ્લભાય નમઃ ॥

શ્રીગોકુલેશે[1] કૃપા કરીને જેમના[2] કુલનો સ્વતઃ[3] અંગીકાર કર્યો, તે પિતૃચરણના
મંગલાચરણ કૃપામધુ[4] ચરણકમલયુગલને[5] પ્રણામ કરું છું.

હવે, તેમના મુખકમલમાંથી[6] પતિત ગીતારૂપ પીયૂષસમુદ્રના[7] પ્રાકટયના
ઉપક્રમ કારણનો વિમર્શ[8] ઈશ્વરના અનુગ્રહથી[9] કરું છું.

હરિ સ્વયં[10] નિજ તત્ત્વનો ઉપદેશ પાર્થ[11] પ્રતિ કરે છે, તેથી ધૃતરાષ્ટ્રના[12]
પૂર્વપક્ષ. વચનથી[13] તેમ જ દુર્યોધનના[14] વચનથી આ ગ્રન્થનો પ્રારંભ કરવો એ
પ્રથમ અયુક્તતર[15] છે. વલી, આ ગ્રન્થના પ્રારંભમાં પાર્થનો જે વિષાદ[16] છે તે પણ

---

૧ શ્રીમદ્ગોકુલના રાજાધિરાજ શ્રીમન્નૃષ્ણચંદ્ર

૨. શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરના.

૩ સાક્ષાત્ સ્વરૂપથી જ

૪ કૃપારૂપ મધુ જેમા છે તે એવા ચરણકમલ કમલમા મધુ અર્થાત મકરન્દ હોય છે, તેમ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યવર્યના ચરણકમલમા કૃપામકરન્દ હોય છે

૫. એ ચરણારવિન્દ

૬ શ્રીગોકુલેશનુ મુખ અગ્નિસ્વરૂપ છે, અગ્નિનો સ્વભાવ ઉષ્ણતા છે, તથાપિ આત ભગવદીયને આ શ્રીગોકુલેશના મુખથી શાન્તિ શિશિરતા ઇત્યાદિ પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી શ્રીમુખને કમલ કહ્યું

૭ સુધાનો સમુદ્ર તેજમાથી જલ થાય એ શ્રુત્યુક્ત ક્રમ છે, તેથી શ્રીમુખાગ્નિમાથી સુધાસમુદ્ર પ્રકટે એ યોગ્ય જ છે.

૮ વિચાર શ્રીકૃષ્ણના મુખારવિન્દમાથી ગીતાસુધાસમુદ્ર કેમ પ્રકટ થયો તે વિચાર છે

૯ એ વિચાર જીવમાત્રથી અશક્ય છે, 'ઈશ્વરના અનુગ્રહથી' જ શક્ય છે

૧૦ સાક્ષાત્.

૧૧ પૃથાના પુત્ર, અર્જુન

૧૨. અભક્ત, અને સર્વાંશે અન્ધ

૧૩ 'ધૃતરાષ્ટ્ર ઉવાચ' શબ્દોથી ગીતાનો પ્રારંભ કરવો યોગ્ય નથી, ગીતાના પ્રારંભના ભગવત નામોચ્ચારને સ્થાને દુષ્ટ અભક્તનો નામોચ્ચાર કરવો યુક્ત નથી, એ વાદીની શંકાનુ મર્મ છે

૧૪ ધૃતરાષ્ટ્રનો પુત્ર દુર્યોધન અત્યન્તબહિર્મુખ રાક્ષસાવતાર છે સર્વાંશે અન્ધ ધૃતરાષ્ટ્રનો અને અત્યન્તબહિર્મુખ દુર્યોધનનો પ્રસંગ ગીતાના પ્રારંભમા જ આવે એ યોગ્ય નથી.

૧૫. અત્યન્ત અયુક્ત

૧૬ શોક

તેવો[17] જ છે, કારણ કે એ વિષાદ કાંઇ ભક્તિરૂપ નથી, અર્જુનને વિષાદ થયો ત્યારે જ ભગવાને[18] શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતારૂપ લઘુ ભક્તિશાસ્ત્રનો ઉપદેશ કર્યો, તેથી અર્જુનનો વિષાદ ઉપદેશમા બાધક નથી, પ્રત્યુત અર્જુનનો વિષાદ શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતાના ઉપદેશમાં સાધક છે, અર્થાત્ ગીતાશાસ્ત્રના ઉપદેશના હેતુભૂત અર્જુનવિષાદનુ ગીતાશાસ્ત્રના પ્રારંભમાં જ કથન યોગ્ય જ છે, એમ અત્ર કદાચિત્ કહેવામા આવે તો તેમ પણ ઘટતુ નથી[19], કારણ કે વિષાદ વિક્ષેપાત્મક[20] છે, વિક્ષેપાત્મક વિષાદમાં શાન્તિ ઇત્યાદિનો[21] અભાવ છે, અને વિષણ્ણ વિક્ષિપ્ત અશાન્તનો બ્રહ્મવિદ્યામા અધિકાર નથી એ સ્પષ્ટ[22] છે આ પ્રકારે ગીતાના આરંભનાં જ વાક્યોથી નિશ્ચય થઇ રહે છે કે વિષણ્ણ વિક્ષિપ્ત અશાન્ત અર્જુનનો બ્રહ્મવિદ્યાના ઉપદેશમાં અધિકાર નથી, તેથી ગીતામાં તેવી[23] લૌકિક કથા જ છે, બ્રહ્મવિદ્યાનો[24] ઉપદેશ નથી, એમ માનવું યોગ્ય છે. અપરચ, બ્રહ્મવિદ્યાના શ્રવણથી વૈરાગ્ય થાય, અને વૈરાગ્યથી સર્વત્યાગ થાય એ યુક્ત છે, પરન્તુ બ્રહ્મવિદ્યાના શ્રવણથી ગુર્વાદિનુ[25] હનન[26] અને રાજ્યભોગિતા[27]

---

૧૭ અયુક્તતર

૧૮ શ્રીઞાદાગ્ય ઉપનિષદ્મા સનત્કુમાર અને નારદનો પ્રસંગ છે, અને ત્યા નારદને શોક થયો ત્યારે સનત્કુમારે નારદને સર્વાત્મભાવરૂપ બ્રહ્મવિદ્યાનો ઉપદેશ કર્યો એ સુપ્રસિદ્ધ છે. તેમ અત્ર પણ શોકાર્ત અર્જુનને ભગવાને ગીતાનો ઉપદેશ કર્યો, તેથી શિષ્યનો શોક બ્રહ્મવિદ્યામા બાધક નથી. પણ સાધક છે,

૧૯. નારદનો શોક બ્રહ્મવિદ્યાને જ અર્થે છે, પરન્તુ આ અર્જુનનો શોક તો પાપભીતિથી જ થયેલો છે, અર્થાત્ નારદનો શોક અને અર્જુનનો શોક અતીવ વિલક્ષણ છે, નારદે સનત્કુમારને પ્રાર્થના કરી છે કે 'મને આત્મવિદ્યાનું (પરમાત્મવિદ્યા બ્રહ્મવિદ્યાનુ) દાન કરો,' પરન્તુ અર્જુને શ્રીકૃષ્ણને તેવી પ્રાર્થના કરી નથી અર્જુનને પાપની ભીતિ લાગે છે, તેથી અર્જુન શોકાર્ત છે, એટલુ જ નહિ પણ અર્જુનને બ્રહ્મવિદ્યાની આકાક્ષા હોય એમ પણ ગીતાના આરંભથી જણાતુ નથી, તેથી નારદનો શોક બાધક નથી, પરન્તુ અર્જુનનો શોક તો બાધક જ છે.

૨૦. બ્રહ્મવિદ્યામા સ્થિતપ્રજ્ઞતાની આવશ્યકતા છે, અને વિષાદ તો બુદ્ધિને અસ્થિર કરે છે.

૨૧. બ્રહ્મવિદ્યોપયોગી સાત્વિક ધર્મોનો.

૨૨ અનુચિતમિદ્

૨૩ શોકાર્ત અર્જુનના બાધક જેવો આના નો જ કથા

૨૪. અધિકારિક શુદ્ધાંત બ્રહ્મવાદનો.

૨૫. ગુરુ ઇત્યાદિનુ.

૨૬. ઘાત.

૨૭. રાજ્યનો ઉપભોગ બ્રહ્મવિદ્યાના અભ્યાસથી તો વૈરાગ્ય થવો જોઇએ, અને વૈરાગ્યથી રાજ્યાદિ સર્વ પદાર્થનો ત્યાગ થવો જોઇએ, પરન્તુ અર્જુનને તો વૈરાગ્ય અને સર્વત્યાગ ન થયો એટલું જ નહિ પણ ગીતાના શ્રવણ પાછી ત્વરિત જ સ્વકીય ગુરુ દ્રોણ ઇત્યાદિનો વધ કરવા પ્રવૃત્ત થયો. અને યુદ્ધમાં શત્રુનો ઘાત કરીને અર્જુને અંતે રાજ્યનો જ ઉપભોગ પણ કર્યો. ગીતાના ઉપદેશનુ અર્જુનમા આ સાંસારિક ફલ જોતાં પણ એમ નિશ્ચય થાય છે કે ગીતામા બ્રહ્મવિદ્યાનો આધિકારિક ઉપદેશ નથી, પરતુ અર્જુનને યુદ્ધમા પ્રવૃત્ત કરવાની પ્રવૃત્તિ જ કથા છે.

થાય એ તો યુક્ત નથી ગીતામાં અર્જુનને બ્રહ્મવિદ્યાનો ઉપદેશ કર્યો એમ માનવું આ પ્રકારે પૂર્વ[૨૯] અને ઉત્તર[૩૦] કથાથી જરા વિરુદ્ધ જેવું ભાસે છે રમેશ્વર[૩૦] પરમેશ્વર અર્જુનને બ્રહ્મવિદ્યાનો ઉપદેશ કરે, અને અર્જુન સત્યસંકલ્પ[૩૧] ભગવાન્ પાસેથી બ્રહ્મવિદ્યાનું શ્રવણ કરીને વિરાગી[૩૨] સર્વત્યાગી ન થતા ગુર્વાદિનું હનન અને રાજ્યનો ઉપભોગ કરે, ત્યારે બ્રહ્મવિદ્યાનુ સંસારોપરતિરૂપ[૩૩] ફલ અર્જુનને પ્રાપ્ત થાય નહિ, અર્થાત્ ભગવાન્નો ઉપદેશ નિષ્ફલ થઇ જાય, પરંતુ ભગવાન્નો ઉપદેશ નિષ્ફલ થાય એ તો સંભવે પણ નહિ, તેથી પણ ગીતામાં બ્રહ્મવિદ્યાનો ઉપદેશ નથી, પ્રત્યુત[૩૪] તેવી લૌકિક કથાનો જ ઉપદેશ છે, એમ માનવુ યુક્ત છે. વિચારકની મતિ આ પ્રકારે સંદેહમાં[૩૫] પડી[૩૬] છે

એમ પૂર્વપક્ષ કરવામા આવતો હોય તો હરિની કૃપાથી ગીતાનું તાત્પર્ય અમે[૩૭] ઉત્તર પક્ષ વદીએ છીએ ભક્તિમાર્ગની રીતિ અલૌકિક[૩૮] છે, સાધારણ[૩૯] રીતિથી તેનો[૪૦] નિર્ણય કરવો એ યોગ્ય નથી .પાર્થોનો[૪૧] ભક્તિમાર્ગમાં સ્વીયત્વે[૪૨] કરીને

---

૨૮. ધૃતરાષ્ટ્રદુર્યોધનના અને અર્જુનવિષાદના કથાપ્રસંગથી

૨૯ ગીતાનુ શ્રવણ થઇ રહ્યા પછી અર્જુને ગુર્વાદિકનો ઘાત કર્યો અને રાજ્યનો ઉપભોગ કર્યો એ ઉત્તર કથાપ્રસંગથી.

૩૦ રમાના અર્થાત્ શ્રીલક્ષ્મીજીના ઇશ્વર.

૩૧. સત્ય છે સંકલ્પ જેનો એવા ભગવાન્, જીવના સંકલ્પ અને ભગવાન્ના સંકલ્પમા એ જ તારતમ્ય છે કે ભગવાન્ જે સંકલ્પ કરે છે તે સત્ય જ હરે છે. અર્જુનને બ્રહ્મવિદ્યાનો ઉપદેશ ભગવાન્ કરે, અને તે બ્રહ્મવિદ્યાનુ અલૌકિક ફલ ન આવતા, ગુરુવધાદિક લૌકિક જ ફલ આવે, તો પ્રભુની સત્યસંકલ્પતામા જ બાધ આવે, તેથી પણ ગીતામા બ્રહ્મવિદ્યાનો ઉપદેશ નથી, પરન્તુ લૌકિક કથા જ છે, એમ માનવુ યુક્ત છે.

૩૨ વૈરાગ્યવાન્

૩૩. સંસારની શાન્તિરૂપ ફલ સંસારની શાન્તિ એ બ્રહ્મવિદ્યાનુ ફલ છે.

૩૪. પરંતુ તેથી ઉલટી

૩૫. સંશયમાં

૩૬. અત્ર પૂર્વપક્ષીનુ કથન સમાપ્ત થાય છે જે વિષય પર ચર્ચા પ્રારંભી હોય તે વિષયમાં વાદીને જે કહેવુ હોય તે પ્રથમ કહેવા દેવામા આવે છે, અને વાદીનો પૂર્વપક્ષ સમાપ્ત થાય ત્યાર પછી જ સિદ્ધાન્તી ઉત્તર પક્ષથી નિજ મન્તવ્યનુ સ્થાપન કરીને પૂર્વપક્ષનો નિરાસ કરે છે

૩૭ શ્રીમદગ્નિકુમારશ્રીવિઠ્ઠલેશ્વરપ્રભુચરણ

૩૮ અસાધારણ અસાધારણ ભક્તિમાર્ગીય ગ્રન્થમા આરંભે ધૃતરાષ્ટ્ર ઉવાચ પણ બાધક અસંગત નથી

૩૯ લૌકિક વૈદિક

૪૦. અલૌકિક ભક્તિમાર્ગનો ગીતામા ભક્તિમાર્ગનો ઉપદેશ છે, ભક્તિમાર્ગ અલૌકિક છે, તેથી લૌકિક પ્રકારે ગીતોક્ત ભક્તિમાર્ગનો નિર્ણય કરવો યોગ્ય નથી.

૪૧. પૃથાના પુત્રો

૪૨ સ્વકીયતાસંબંધે કરીને

અંગીકાર છે, એથી જ ભગવાન્ મુકુન્દ[૪૩] દેવે પાર્થોનો તો અનુગ્રહ કર્યો એમ વિદુરનું વાક્ય[૪૪] છે પાર્થોનો ભક્તિમાર્ગમા અંગીકાર છે, તેથી જે 'ભ્રાતા[૪૫] ભ્રાતાનુ હનન કરે' એ ન્યાયે લૌકિક પુરુષવત્ પાર્થો પણ શત્રુઓને મારીને સ્વય[૪૬] રાજ્ય કરે, તો, તેવા[૪૭] રાજ્યને ભગવત્સમ્બધ[૪૮] ન હોવાથી, રાજ્યનો ભોગ કરતી વખતે ભગવદીયત્વ[૪૯] રહે નહિ એમ[૫૦] હોવાથી, પાર્થની તેમાથી સ્વત[૫૧] જ નિવૃત્તિ કહીને,[૫૨] કૌરવોમા લૌકિક[૫૩]રીતિનો અનુભાવ, અને પાર્થમા[૫૪] લૌકિક રીતિનો અભાવ કહ્યો. 'ક્ષત્રિયોનો આ ધર્મ છે' એ વચનથી. શૂર પાર્થો યુદ્ધમા ઉપસ્થિત[૫૫] થાય ત્યારે વસ્તુસ્વભાવથી[૫૬] વીર રસ જ ઉત્પન્ન થાય, વૈરાગ્ય[૫૭] ઉત્પન્ન થાય નહિ, અને યુદ્ધમાં પણ

૪૩. મોક્ષદાતા.

૪૪. અત્ર શ્રીમદ્ભાગવતના તૃતીય સ્કન્ધના પ્રથમ અધ્યાયના દ્વાદશ શ્લોકનુ અનુસન્ધાન કરો ભગવાન્ મુકુન્દ દેવે પાર્થો ઉપર અનુગ્રહ કર્યો છે, તેથી કૌરવોમા વીર રસ પ્રકટ થયો તે જે યુદ્ધપ્રસ્તાવમા શૂર અર્જુનને વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થયું, એવા વૈરાગ્યવાન્ ભક્તને ભક્તિમાર્ગનો જ ઉપદેશ કરવો યોગ્ય છે, તેથી ગીતામા ભક્તિમાર્ગ ઉપદેશીને અર્જુનદ્વારા ભગવાને ભૂભારનું હરણ કરાવ્યુ

૪૫. એક ભાઇ રાજ્યાસનાર્થે બીજા ભાઇનો વધ કરે

૪૬ ભગવાનને નિવેદન કર્યા વિના જ, ભગવાનની આજ્ઞા વિના જ.

૪૭ ભગવદાજ્ઞા વિના જ શત્રુઓને મારીને ભગવાનને નહિ સમર્પેલા

૪૮. પ્રભુને નિવેદન કરવાથી તે તે પદાર્થને ભગવત્સમ્બધ થાય છે, નિવેદન કર્યા વિના ભગવત્સમ્બધ સિદ્ધ થતો નથી

૪૯. ભગવત્સમર્પિત વસ્તુનુ જ ગ્રહણ કરવુ એ ભગવદીયત્વ.

૫૦ ભગવાનની આજ્ઞા વિના જ યુદ્ધ કરીને પ્રાપ્ત અને ભગવાનને નહિ સમર્પેલા રાજ્યના ઉપભોગથી ભગવદીયત્વની જ હાનિ થઇ જાય તેથી.

૫૧ કોઇ પણ પ્રકારે ભગવાનના નિયન્ત્રણ વિના જ.

૫૨. ગીતાના પ્રથમાધ્યાયમા

૫૩. અભક્તિમાર્ગીય.

૫૪. કૌરવોનો પ્રસગ પ્રથમ વર્ણન કરીને તેમની પ્રાકૃતના અને અર્જુનની ભગવન્નિષ્ઠા જણાવી.

૫૫. હાજર.

૫૬ લોહચુમ્બક લોહને આકર્ષે છે એ વસ્તુસ્વભાવ છે, અગ્નિ દાહ કરે છે એ વસ્તુસ્વભાવ છે, તેમ વીર યુદ્ધમા ઉપસ્થિત થાય ત્યારે તેમા વીર રસ ઉદ્ભવે એ વસ્તુસ્વભાવ છે, અને કૌરવોમા એ વસ્તુસ્વભાવ દૃશ્યમાન પણ થયો

૫૭. વીર રસથી વિપરીત

પુષ્ટિમાર્ગીય ચતુ:શ્લોકીચતુષ્ટય..

આપણા પુષ્ટિસમ્પ્રદાયમાં 'ચતુ શ્લોકી' નામના ચાર ગ્રન્થ સુપ્રસિદ્ધ છે. એક ચતુ.શ્લોકી[1] શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ પ્રકટ કરી છે, અને તેમા મર્યાદામાર્ગીય ધર્માદિ ચાર પુરુષાર્થથી પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્મ અર્થ કામ અને મોક્ષ એ ચાર પુરુષાર્થની વિલક્ષણતા પ્રતિપાદન કરી છે શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરના દ્વૈતીયીક કુમાર શ્રીમદ્વિઠ્ઠલેશ્વરે પણ 'ચતુ શ્લોકી' નામના બે ગ્રન્થ પ્રકટ કર્યા છે તેમાના 'વૃત્રચતુ શ્લોકીકારિકા' નામના ગ્રન્થમા, શ્રીમદ્ભાગવતના ષષ્ઠ સ્કન્ધના એકાદશ અધ્યાયના ૨૪ મા શ્લોકથી પ્રારભીને ૨૭મા શ્લોક પર્યન્તના ચાર શ્લોકે કરીને વૃત્રાસુરે ભગવાન્ની જે સ્તુતિ કરી છે, તેનુ સ્વારસ્ય નિરૂપણ કર્યુ છે વૃત્રચતુ શ્લોકી ઉપર શ્રીગુસાઇજીનો આ ગ્રન્થ 'વૃત્રચતુ-શ્લોકી કારિકા' નામથી સંપ્રદાયમાં સુપ્રસિદ્ધ છે શ્રીગુસાઇજીની વૃત્રચતુ શ્લોકીકારિકા ઉપર દશદિગન્તવિજયી શ્રીમદ્ગોસ્વામિ શ્રીપુરુષોત્તમજી મહારાજાધિરાજે સસ્કૃત ટીકા પણ કરેલી છે ઉકત સસ્કૃત ટીકાનો નિગૂઢ આશયનુ ગ્રહણ કરીને વૃત્રચતુ શ્લોકીને, ગુર્જર ભાષામા પણ અનુવાદ શ્રીમદ્ગોસ્વામિ શ્રીનૃસિંહલાલજી મહારાજની આજ્ઞાથી ભગવચ્છાસ્ત્રનિષ્ણાત છગનલાલ અમરજી શાસ્ત્રીએ કર્યો છે. શ્રીમદ્વિઠ્ઠલેશ્વરની દ્વિતીય 'ચતુ શ્લોકી'મા શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરની ચતુ શ્લોકીનુ જ અનુસ્મરણ છે આ બન્ને ચતુ શ્લોકી ઉપરાત શ્રીહરિરાયજીએ પણ 'ચતુ શ્લોકી' નામનો એક ગ્રન્થ પ્રકટ કરીને પુષ્ટિમાર્ગીય નિજ જનોને શિક્ષા આપી છે પુષ્ટિમાર્ગીય વૈષ્ણવોવુ કર્તવ્ય શુ છે ? તેમનો જ્ઞાતવ્ય પદાર્થ શો છે ? તેમનુ ભજનીય સ્વરૂપ કેવુ છે ? પુષ્ટિમાર્ગમા પ્રવેશ કરવાથી શા શા પુરુષાર્થ સિદ્ધ થાય છે ? ઇત્યાદિ પ્રશ્નોનુ ઉત્તર આ ચાર ગ્રન્થોને વિષે સૂક્ષ્મ દૃષ્ટિકાથી આપાયલુ છે, તેથી અત્ર ચારે ચતુ શ્લોકીનો પ્રથમ અક્ષરાર્થ આપીને એ ચારે ગ્રન્થોનો નિષ્કર્ષ વાચક સમક્ષ મૂકવામા આવે છે યદ્યપિ આ ચારે સસ્કૃત ચતુ શ્લોકીનુ મુદ્રણ થયુ છે, તથાપિ સસ્કૃત શ્લોક આપીને જ તેનો અક્ષરાર્થ આપવામા આવે તો વૈષ્ણવોને સહજે વિશેષ લાભ થાય એમ માનીને અત્ર સસ્કૃત શ્લોકનો પણ ઉપન્યાસ કરવામા આવે છે.

॥ अथ श्रीमद्वल्लभाचार्यविरचिता चतुःश्लोकी ॥

सर्वदा सर्वभावेन भजनीयो व्रजाधिपः ।
स्वस्यायमेव धर्मो हि नान्यः क्वापि कदाचन ॥ १ ॥
एवं मदा स्म कर्तव्यं स्वयमेव करिष्यति ।
प्रभु सर्वसमर्थो हि ततो निश्चिन्तता व्रजेत् ॥ २ ॥
यदि श्रीगोकुलाधीशो धृतः सर्वात्मना हृदि ।

१. આ ગ્રથ ઉપર સસ્કૃતમા ઘણી ટીકા છે

ततः किमपर ब्रूहि लौकिकैर्वैदिकैरपि ॥ ३ ॥
अतः सर्वात्मना श्रयद्गोकुलेश्वरपादयो ।
स्मरणं भजन चापि न त्याज्यमिति मे मतिः ॥ ४ ॥

અક્ષરાર્થ—

સર્વદા સર્વભાવે ભજના અધિપતિ સેવનીય છે નિજ જનનો એ જ ધર્મ છે (કારણ કે) કોઇ પણ દેશમા અને કોઇ પણ કાલમા (તેમનો) અન્ય (ધર્મ) જ નથી (૧) સર્વસમર્થ પ્રભુ પોતે જ એ પ્રકારે કર્તવ્ય સદા કરશે જ, તેથી નિશ્ચિંતતા પ્રાપ્ત કરવી (૨) સર્વાત્મતાથી હૃદયમાં જે શ્રીગોકુલાધીશ પધાર્યા તો હવે લૌકિક અને વૈદિકે કરીને પણ અન્ય શુ ? બોલો (૩) એથી નિત્ય સર્વાત્મતાએ શ્રીગોકુલેશ્વરના ચરણકમલનુ સ્મરણ અને ભજન (કરવુ સ્મરણ અથવા ભજન કદાપિ) ત્યજવુ નહિ એવી મારી મતિ છે

તાત્પર્ય—

શ્રીમદ્ભાગવતના દશમ સ્કંધના જન્મપ્રકરણના શ્રીસુબોધિનીજીમા શ્રીમદાચાર્યચરણ આજ્ઞા કરે છે કે 'નિરસાધન દૈવ જીવના ફલરૂપ આ ભગવાનનો ગોકુલમા[1] પ્રાદુર્ભાવ થયો છે, તેથી અમે સર્વત જ સુનિશ્ચિન્ત થયા છીએ,' નિરસાધન જીવોને અર્થે ભગવાન પુરૂષોત્તમ શ્રીમદ્ગોકુલમા પ્રકટ થયા છે, તેથી દૈવી સૃષ્ટિમાં પ્રકટ થયલા નિરસાધન જીવોએ શ્રીવ્રજેશ્વરની જ સેવના સદાસર્વદા સર્વાત્મભાવે કરવી દેહ ઇન્દ્રિય પ્રાણ અન્તઃકરણ સ્ત્રી પુત્ર ધન ગૃહ ઉત્યાદિ સર્વ ભગવાનનુ છે મારુ નથી એવો પુષ્ટિમાર્ગીય વૈષ્ણવને જે નૈસર્ગિક ભાવ હોય છે તે સર્વાત્મભાવ કહેવાય છે. દેહ પ્રાણ ઇન્દ્રિય અન્ત કરણ ઇત્યાદિ સર્વ ભગવાનનુ છે એવા સર્વાત્મભાવપૂર્વક સદાસર્વદા શ્રીવ્રજેશ્વરની જ સેવના કરવી એ જ નિજ જનનો સ્વધર્મ છે શ્રીવ્રજેશ્વરે જે જીવોનુ સ્વકીયતાથી વરણ કરેલુ છે એવા નિજ જનનો શ્રીવ્રજેશ્વરની સેવના વિના કોઈ પણ દેશમા અને કોઇ પણ કાલમા અન્ય ધર્મ જ નથી, સદાસર્વદા સર્વાત્મભાવે શ્રીવ્રજેશ્વરની સેવના વિના કોઇ પણ દેશમાં અને કોઇ પણ કાલમા અન્ય ધર્મ જ નથી એમ જ્યારે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી શ્રીમુખથી આજ્ઞા કરે છે, ત્યારે

---

૧ પુષ્ટિમાર્ગાનભિજ્ઞ પુરુષત્વાભિમાની પ્રતિનમ્મન્યની માન્યતા છે કે શ્રીકૃષ્ણનુ પ્રાકટય કેવલ મથુરામા જ થયુ છે, શ્રીમદ્ગોકુલમા શ્રીકૃષ્ણનુ પૃથક્ પ્રાકટય થયુ નથી, એ અધપરંપરાનો વિધ્વસ કરવાને શ્રીમદાચાર્યચરણની કારિકાનો જ અત્ર ઉપન્યાસ કરવામા આવે છે, તથાપિ વિશેષજીજ્ઞાસુને આ પ્રકરણના શ્રીસુબોધિનીજી અને તેનુ સાહિત્ય વાચવાની પ્રાર્થના કરવામા આવે છે એ કારિકા આ પ્રમાણે છે

निस्साधनफलात्मायं प्रादुर्भूतोस्ति गोकुले ।
ततो वय सुनिश्चिन्ता जाता. सर्वत एव हि ॥

સ્વધર્મં નિધન શ્રેય પરધર્મો ભયાવહ ઇત્યાદિ શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતાના શ્લોકનુ અનુસંધાન કરીને, ભયાવહ પરધર્મનો પરિત્યાગ કરીને, સદાસર્વદા સર્વાત્મભાવે શ્રીવ્રજેશ્વરની જ સેવારૂપ સ્વધર્મનુ પરિપાલન કરવામાં બદ્ધપરિકર થવુ એ આવશ્યક છે પુષ્ટિમાર્ગસ્થ ભક્તોનો કેવલ એક જ ધર્મ છે, અને તે એ જ કે સદાસર્વદા સર્વાત્મભાવે વ્રજના અધિપતિ શ્રીગોપીજનવલ્લભ શ્રીકૃષ્ણચંદ્રની સેવના કરવી, એ સિદ્ધાન્તની કદાપિ વિસ્મૃતિ ન થવી જોઇએ આ પ્રકારે પ્રથમ શ્લોકમાં પુષ્ટિમાર્ગીય નિજ જનનો સેવારૂપી ધર્મ નિરૂપણ કરીને શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરે પુષ્ટિમાર્ગીય પ્રથમ પુરુષાર્થનુ પ્રતિપાદન કર્યુ માયાના જીવો ઐહિક અર્થની આકાંક્ષા રાખે છે, માર્યાદિક દૈવ જીવો આમુષ્મિક અર્થની આકાંક્ષા રાખે છે, પરન્તુ પુષ્ટિમાર્ગીય ભક્તોના તો અર્થરૂપ પણ સર્વસમર્થ ભગવાન્ જ છે અન્ય લૌકિક વૈદિક અર્થ કેવલ અર્થ જ છે, પરન્તુ આ ભગવાન્ તો સમર્થ–સમ્યક્ સુન્દર રમણીય અર્થ છે સર્વકરણસમર્થ સર્વભવનસમર્થ શ્રીમજ્જેશ્વર પુષ્ટિમાર્ગસ્થ ભક્તના અર્થ થઇને રહ્યા છે, તેથી વૈષ્ણવોએ સદાસર્વદા નિશ્ચિન્ત જ રહેવુ ભગવાન્ સર્વભવનસમર્થ અને સર્વકરણસમર્થ છે, એટલુ જ નહિ પરતુ શરણાગત પુષ્ટિમાર્ગસ્થ જીવના ઐહિક આમુષ્મિક હિતાર્થે જે જે કર્તવ્ય છે તે તે પણ ભગવાન્ સ્વત જ કરી લે છે સર્વસમર્થ પ્રભુ જે જે કર્તવ્ય છે તે સ્વત જ કરી લે છે એમ આતર વિશ્વાસ થયો ન હોય ત્યા પર્યન્ત જ ચિતાને અવકાશ મલે છે, તેથી વૈષ્ણવોના અર્થ સર્વસમર્થ ભગવાન જ છે અને તે સર્વસમર્થ ભગવાન્ કર્તવ્ય પણ સ્વત જ કરી લે છે, એમ આતર વિશ્વાસનુ અવલબન કરીને પુષ્ટિસ્થ ભગવદીયે દિનપ્રતિદિન નિશ્ચિન્ત થવુ જોઇએ આ પ્રકારે દ્વિતીય શ્લોકમા સર્વસમર્થ શ્રીવ્રજેશ્વર સર્વ જ કરશે એમ અર્થનુ નિરૂપણ કરીને શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરે દ્વિતીય પુરુષાર્થનુ પ્રતિપાદન કર્યુ શ્રીમદ્ગોકુલના અધીશ્વર શ્રીમત્કૃષ્ણચન્દ્ર સર્વાત્મતાથી હૃદયમા વિરાજમાન થઇ ગયા ત્યારે હવે લૌકિક વૈદિક સાધનો કરીકરીને પણ અન્ય કયો કામ સિદ્ધ કરવાનો રહ્યો ? બોલો લૌકિક વૈદિક સાધનો કરીકરીને પણ જો સિદ્ધ થાય તો સ્વર્ગાદિ જ કામ સિદ્ધ થવાનાં, અને અત્ર પુષ્ટિમાર્ગમા તો કામના પણ કામ કોટિમન્મથમન્મથ શ્રીગોકુલાધીશ સર્વાત્મતાએ હૃદયમાં વિરાજમાન થઇ જાય એમ છે, અરે, વિરાજમાન થઇ ગયા છે, ત્યારે હવે શ્રીગોકુલાધીશ્વરથી પણ અન્ય કયો ઉત્કૃષ્ટતર કમનીય પદાર્થ રહ્યો કે જેને અર્થે લૌકિક વૈદિક સાધનની અપેક્ષા પુષ્ટિસ્થને રહે ? શ્રીગોકુલાધીશ્વર જ ઉત્કૃષ્ટોત્કૃષ્ટ કમનીય સ્વરૂપ છે, અને તે હૃદયમા વિરાજમાન થઇ ચુકયા છે, તેથી લૌકિક વૈદિક સાધનથી પણ નિરપેક્ષ થઇને એ ઉત્કૃષ્ટોત્કૃષ્ટ કમનીય પદાર્થ હૃદયમા નિત્ય સ્થિતિ કરે એ જ પુષ્ટિમાર્ગમા કામ છે આ પ્રકારે તૃતીય શ્લોકમાં શ્રીગોકુલાધીશ્વરરૂપ કામનું નિરૂપણ કરીને શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરે તૃતીય પુરુષાર્થનુ પ્રતિપાદન કર્યુ અનવસરમા વિપ્રયોગસ્મનો અનુભવ થાય એ ઉદ્દેશથી દીનતાપૂર્વક પ્રભુનુ સ્મરણ કરવુ, અને પ્રભુના સનિધાનમા સયોગસ્મનો અનુભવ થાય એ આકાક્ષાથી આર્દ્રતાથી પ્રભુની સેવના કરવી એવા અને સ્મરણ પરસ્પર પોષક

છે, જેથી સ્મરણનુ પોષણ થાય છે, સ્મરણથી સેવાનું પોષણ થાય છે, અને પ્રતિદિન ઉત્તરોત્તર પરસ્પર પોષણથી અનિર્વચનીય વિગાઢ ભાવનુ ઉદ્દીપન થાય છે; તેથી સદાસર્વદા સર્વાત્મભાવે સેવા અને સ્મરણ ઉભયે કરવાં સેવા અને સ્મરણમાં અમુક મુખ્ય અને અમુક ગૌણ છે એમ માનીને મુખ્યનુ ગ્રહણ કરવાની અને ગૌણનો ત્યાગ કરવાની બુદ્ધિ થાય તો શ્રીમદાચાર્યચરણ પ્રતિષેધ કરે છે કે સેવા કે સ્મરણ એ બેમાથી એકેનો પણ ત્યાગ કરવાનો નથી. આ પ્રકારે ચતુર્થ શ્લોકમાં સર્વાત્મતાએ સદાસર્વદા શ્રીગોકુલેશ્વરના સેવાસ્મરણના સાતત્યરુપ મોક્ષનુ નિરુપણ કરીને શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરે પુષ્ટિમાર્ગિય ચતુર્થ પુરુષાર્થનું પ્રતિપાદન કર્યું. પુષ્ટિમાર્ગિય ધર્મ અર્થ કામ અને મોક્ષ એ પુરુષાર્થ-ચતુષ્ટયના પરિજ્ઞાનપૂર્વક ચતુઃશ્લોકી ગ્રન્થનો નિત્ય પાઠ કરવાનો આદર થાય એવી સુમતિ શ્રીમદાચાર્યચરણના કૃપાકટાક્ષથી સ્વમાર્ગિય વૈષ્ણવોને પ્રાપ્ત થાય એવી ઉત્કટ અભિલાષાનું સૂચન કરીને આ નિષ્કર્ષ સમાપ્ત કરું છું.

એ જ પ્રકારે શ્રીગુસાંઇજીની બે ચતુઃશ્લોકી અને શ્રીહરિરાયજીની ચતુઃશ્લોકીનો પણ અક્ષરાર્થ અને નિષ્કર્ષ યથામતિ આપીશ

॥ श्रीगोकुलेशो जयति ॥

વિદ્વન્મણ્ડન

અથવા

વિદ્વાનોનું ભૂષણ

निजमुरलिकानादाह्वानागतव्रजसुन्दरी-
निरुपमनवस्नेहाऽम्भोधेर्विचित्रतरोर्मिभिः ।
किमपि पगितश्चार्द्रार्द्रोऽस्तु मभु प्रकटीभवन्
प्रतियुवतिसम्भेदेनात्मदृक्शां विषयः सदा ॥ १ ॥

પોતાના મુરલિકાના નાદથી બોલાવવાથી આવેલી વ્રજસુંદરીઓના નિરૂપમ નવિન સ્નેહરૂપી સમુદ્રના અતિવિચિત્ર (મનોરથરૂપી) તરંગોથી વર્ણન ન થઇ શકે તેમ સર્વતઃ આર્દ્ર આર્દ્ર થઈ રહેલા, દરેક યુવતી સાથે સંગમ માટે પ્રકટ થતા પ્રભુ અમારા ચક્ષુઓનો સદા વિષય હો.

પ્રારંભમા શ્રીમત્પ્રભુચરણ મંગલાચરણ કરે છે ગ્રંથ રચતા કદાપિ વિઘ્ન આવે અને ગ્રંથ અપૂર્ણ રહે એવુ ન થાય એ હેતુથી મંગલાચરણ પ્રારંભમા કરવાનો આચાર છે પૂર્વના દુરિતથી વિઘ્ન ઉત્પન્ન થએલા હોય તો તેનો નાશ કરવા માટે અથવા ભવિષ્યમા વિઘ્ન ઉત્પન્ન થાય એવો સંશય રહેવાથી મંગલાચરણ ગ્રંથના પ્રારંભમા કરવાનો આચાર છે. અત્ર એવુ કોઇ પણ કારણ નથી 'હે ભારત, જ્યારે જ્યારે ધર્મની ગ્લાનિ થાય છે અને અધર્મ પ્રસરે છે ત્યારે ત્યારે હું અવતાર લઉ છું' એ શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતાવાક્ય પ્રમાણે શ્રીમદ્વિઠ્ઠલપ્રભુચરણ ભગવાનનો અવતાર છે પ્રભુચરણ ભગવાનનો અવતાર હોવાથી તેમને પૂર્વના દુરિત નથી, અને સર્વજ્ઞ હોવાથી તેમને સંશય નથી, તેથી જે પ્રયોજનથી મંગલાચરણ કરવાનો આચાર છે તે પ્રયોજન અત્ર નથી તથાપિ 'આ ગ્રંથનુ અધ્યયન સંપૂર્ણ થએ' એમ અધ્યયન કરવા ઇચ્છનાર શિષ્યોની મંગલસિદ્ધિ માટે પ્રસંગ હોવાથી ગ્રંથારંભમા પ્રભુચરણ મંગલાચરણ કરે છે

પ્રભુ અમારા ચક્ષુઓનો સદા વિષય હો

કેવા પ્રકારના પ્રભુ ચક્ષુના વિષય હો એ પ્રથમ ત્રણ પાદમાં વર્ણન કરેલુ છે 'પોતાના મુરલિકાનાદથી બોલાવવાથી આવેલી વ્રજસુંદરીઓના નિરૂપમ નવિન સ્નેહરૂપી સમુદ્રના અતિવિચિત્ર તરંગોથી વર્ણન ન થઇ શકે તેમ સર્વત આર્દ્ર આર્દ્ર થઇ

ગ્રહેલા' પ્રભુ અમારા ચક્ષુઓનો વિષય હો પ્રભુએ પોતાના મુરલીકાનાદથી ગોપિકાઓને બોલાવી છે 'પોતાની મુરલિકાના નાદથી' નહિ પરન્તુ 'પોતાના મુરલિકાના નાદથી' વ્રજસુંદરીને બોલાવેલી છે 'નિજ' નો અન્વય 'નાદ' સાથે છે 'મુરલિકા' સાથે નથી 'નિજ' નો મુરલિકા સાથે અન્વય કરીએ તો પ્રભુની મુરલિકા લઈ અન્ય ગોપ નાદ કરે તોપણ વ્રજસુંદરીને બોલાવેલી ગણાય, પરન્તુ અમ નથી સાક્ષાત્ પ્રભુએ કરેલો નાદ જ ગોપિકાઓના આહ્વાનનો જનક છે, અન્ય ગોપે કરેલો નાદ નહિ, એવો ભાવાર્થ છે પ્રભુએ કરેલા મુરલિકાનાદથી વ્રજસુંદરીને આહ્વાન ક્ષયુ નાદ જ્ઞાનરૂપી હોવાથી નાદવડે આહ્વાન સુલભ જ છે આહ્વાન થવાથી વ્રજસુંદરીઓ આવી. આ સુંદરીઓને ઉપમા આપી ન શકાય એવો નવિન સ્નેહ છે 'નવિન' અર્થાત્ આધુનિક અથવા ઉત્પન્ન થએલો નહિ પરન્તુ 'અતિવિલક્ષણ' 'નવિન' એટલે જન્ય નહિ, પરન્તુ ઇતર કોઇ સ્થલે પ્રકટ નહિ થએલો એવો આ સુંદરીઓનો પ્રેમ જન્ય નથી, પરન્તુ પ્રભુ પ્રતિ જેવો પ્રેમ પ્રકટ થાય છે તેવો ઇતર કોઇ સ્થલે પ્રકટ થતો નથી આ પ્રેમ અથવા સ્નેહ એ જ ભક્તિ શ્રીમદાચાર્ય-ચરણ પણ તત્ત્વદીપનિબંધમા ' સ્નેહને ભક્તિ એમ કહે છે ' એમ કહે છે આ સ્નેહ નિરૂપમ છે કારણ કે મોક્ષસુખથી પણ અધિક છે આ સ્નેહ અથવા ભક્તિ એ જ સમુદ્ર, અર્થાત્ આ સ્નેહ અતિશય અગાધ છે એ સમુદ્રના અતિવિચિત્ર તરંગો થાય છે સમુદ્રમા જેમ તરંગ થાય છે તેમ વ્રજસુંદરીઓને સ્નેહને લીધે અતિવિચિત્ર મનોરથ ઉત્પન્ન થાય છે આ અતિવિચિત્ર મનોરથરૂપી તરંગોથી વર્ણન ન થઇ શકે એમ પ્રભુ સર્વત આર્દ્ર આર્દ્ર થઇ રહે છે આ અતિવિચિત્ર તરંગોથી વ્રજસુંદરીઓની સંખ્યા ઘણી મોટી હોવાથી પ્રભુ સર્વત આર્દ્ર થાય છે પ્રભુ આર્દ્ર આર્દ્ર અથવા અતિશય આર્દ્ર થાય છે આ સ્થિતિ બહુ કાલ સુધી રહેવાથી પ્રભુ અતિશય આર્દ્ર થાય છે. આ સ્થિતિ બહુકાલ સુધી રહે છે તેથી પ્રભુની વ્રજસુંદરીપર અતિશય કૃપા છે એમ સૂચવાય છે

વલી પ્રભુ દરેક યુવતી સાથે સંગમ માટે પ્રકટ થાય છે, અર્થાત્ જેટલી ગોપયુવતી છે તેટલા પોતાના રૂપ ધારણ કરે છે, અને આ પ્રમાણે દરેક યુવતી સાથે સંગમ માટે યુવતીની સંખ્યા જેટલા રૂપ પ્રકટ થાય છે

વ્રજસુંદરીના સ્નેહરૂપી સમુદ્રના તરંગોથી આર્દ્ર આર્દ્ર થઇ રહેલા, અને દરેક યુવતી સાથે સંગમ માટે પ્રકટ થતા પ્રભુ અમારા ચક્ષુઓનો સદા વિષય હો. આ આશીર્વાદરૂપી મંગલાચરણ છે, કારણ કે 'પ્રભુ અમારા ચક્ષુઓનો વિષય હો' એ આશિષ છે વળી આ મંગલાચરણમા વસ્તુનિર્દેશ અર્થાત્ ગ્રંથમા જે વિષય આવવાનો હોય તેનુ નિરૂપણ પણ છે ભગવાનની નિત્ય લીલા ગ્રંથમા સિદ્ધ કરવાની છે, તેનુ અહિં વર્ણન કરેલ છે મંગલાચરણ ત્રણ પ્રકારના છે. (૧) આશીર્વાદરૂપ (૨) નમનરૂપ (૩) વસ્તુનિર્દેશરૂપ આ ત્રણમાથી પ્રથમ શ્લોકમાં આશીર્વાદરૂપ અને વસ્તુનિર્દેશરૂપ મંગલાચરણ થયાં.

હવે દ્વિતીય શ્લોકમાં પ્રભુચરણ નમનરૂપ મંગલાચરણ કરે છે

पितृचरणान्नत्वाह हरितिमार्गाम्बुजातमार्तण्डान् ।
तदनुग्रहतः किञ्चिल्लेखामि यत्नाद्यथाबुद्धि ॥ २ ॥

હરિતિમાર્ગરૂપી કમલના સૂર્યરૂપી પિતૃચરણને નમન કરી, તેમના અનુગ્રહથી યત્ન કરી યથાબુદ્ધિ કાંઇક લખું છું

હરિતિમાર્ગ અર્થાત્ હરિમા રતિ અથવા પ્રેમ જે માર્ગમા છે તે માર્ગ, અથવા હરિની રતિ અથવા પ્રેમ જેમા છે તે માર્ગ, તેથી હરિરતિમાર્ગનો અર્થ 'પુષ્ટિમાર્ગ' થાય છે આ પુષ્ટિમાર્ગરૂપ કમલ છે તેના સૂર્યરૂપ પિતૃચરણ શ્રીમદાચાર્યચરણ છે કમલ સૂર્યથી ખીલે છે. કમલને સૂર્ય ખીલાવે છે તેમ જ પુષ્ટિમાર્ગને શ્રીમદાચાર્યચરણે પ્રકટ કર્યો છે, તેથી શ્રીમદાચાર્યચરણ આ પુષ્ટિમાર્ગરૂપી કમલને ખીલાવનાર સૂર્ય છે સૂર્યને માટે મૂલ શ્લોકમાં માર્તણ્ડ શબ્દ છે અણ્ડ એટલે બ્રહ્માડ મૃત થયુ અથવા નાશ પામ્યુ ત્યારે તેમા સૂર્ય થયો, તેથી તે માર્તણ્ડ કહેવાય છે, એવી આ શબ્દની પચમ સ્કન્ધમા વ્યુત્પત્તિ છે, તેથી શ્રીમદાચાર્યચરણે ભક્તમાર્ગનો પ્રકાશ કર્યો તે પહેલા આ જગત્ મૃત જેવુ જ હતુ એવો આ માર્તણ્ડ શબ્દનો ભાવાર્થ છે શ્રીવલ્લભાષ્ટકમા પણ 'આપ જો આવિર્ભાવ પામ્યા ન હોત' શ્લોકમા આ જ આશય છે પુષ્ટિમાર્ગરૂપી કમલના સૂર્યરૂપ પિતાને (શ્રીમદાચાર્યચરણને) નમન કરી તેમની જ કૃપાથી બુદ્ધિ પ્રમાણે યત્નથી કાંઇ લખુ છુ આ પ્રમાણે શ્રીમદ્વિઠ્ઠલેશ્વર પ્રભુચરણ પિતૃચરણને નમન કરી ગ્રથ રચવાની પ્રતિજ્ઞા કરે છે

श्रुतिसूत्रादिमणिभिर्जटित युक्तिमौक्तिकै ।
ग्रथित कुरुते विद्वन्मण्डन विठ्ठलः सुधी ॥ ३ ॥

શ્રુતિ સૂત્ર વગેરે રૂપી મણિઓથી જડેલુ યુક્તિરૂપી મોતીઓથી ગ્રથેલુ વિદ્વન્મણ્ડન સદ્બુદ્ધિવાળા શ્રીવિઠ્ઠલ કરે છે

શ્રુતિ સૂત્ર વગેરેરૂપી મણિઓથી જડેલુ વિદ્વન્મણ્ડન શ્રીમત્પ્રભુચરણ રચે છે 'વગેરે' શબ્દથી શ્રીમદ્ભાગવત અને શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતાનો સમાવેશ થાય છે, તેથી આ વિદ્વન્મણ્ડન શ્રુતિ અથવા વેદ, વ્યાસસૂત્ર, વ્યાસજીની સમાધિભાષા શ્રીમદ્ભાગવત અને શ્રીકૃષ્ણવાક્ય શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતા એ પ્રમાણચતુષ્ટય વાક્યરૂપ મણિઓથી જડેલુ છે. આભૂષણ

મણિઓથી જડેલુ હોય તોપણ મુખ્યાદર્શની અતિશય શોભે છે તેથી મણિજડિત વિદ્ય-
ભ્રકટમાં પણ યુક્તિરૂપી મૌના અર્થેલા છે. વળી આ વિદ્ય-ભ્રકટ ગ્રંથનાર પણ 'શ્રીવિ-
દ્યુલ' છે. 'વિદ્ય' એટલે જ્ઞાનથી, 'શ્રી' એટલે શૂન્ય, અને 'ભ્રાન્તિ' એટલે ભય કરે છે
અર્થાત્ દૂર કરે છે. જ્ઞાનથી શૂન્ય અર્થાત્ મૂર્ખને દૂર કરનાર એટલે તેમને જ્ઞાન આપી
તેમની મૂર્ખાઈનો નાશ કરનાર એથી વિદ્યુલપદની વ્યુત્પત્તિ છે શ્રીવિદ્યુલ જ્ઞાનનુ દાન
કરી અજ્ઞાન દૂર કરે છે. જ્ઞાનનુ દાન કરનાર શ્રીવિદ્યુલ આ વિદ્ય-ભ્રકટ ગ્રંથ રચે છે.
આ વિદ્ય-ભ્રકટ અર્થવા વિદ્વાનોના ભૂષણરૂપ ગ્રંથના અધ્યયનરૂપ ધારણથી અભ્યા-
સિજ્ય થશે, તેથી આભૂષણ ધારણ કરવાથી સિદ્ધરૂપી શોભા પ્રાપ્ત થશે એવો
ભાવાર્થ છે.

સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાંતો.

— o —

૧. જગત્ સત્ય છે

૨ જગત્, જીવ, અંતર્યામી, અક્ષર ઇત્યાદિના નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મ કૃષ્ણ પરમાત્મા જ છે

૩ જીવે અવિદ્યાથી કલ્પેલો અહન્તામમતાત્મક સંસાર મિથ્યા છે.

૪ જીવ અણુ છે, શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મનો અંશ છે, વ્યાપક નથી

૫ પરબ્રહ્મ પુરૂષોત્તમ કૃષ્ણનું ધામ અક્ષરબ્રહ્મ ગણિતાનંદ છે

૬ સર્વોપરિ વેદાદિશાસ્ત્રે પ્રતિપાદિત પરમકાષ્ઠાપન્ન વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે

૭ કૃષ્ણની સેવા એ જ અંશ જીવનો ધર્મ છે, એટલે વસ્તુત સ્વધર્મ કૃષ્ણસેવા જ છે

૮ આત્મનિવેદન અને પ્રભુશરણપ્રપત્તિ સિવાય અન્ય સ્વધર્મ હોઇ શકે જ નહિ.

શ્રીવલ્લભીય ગ્રંથ પ્રકાશક ફંડ

નડીઆદના શ્રીપુષ્ટિમાર્ગીય પુસ્તકાલયના અંગે ઉપરનું ફંડ રથાપ્યું છે જેમા પ્રથમ વ્યવસ્થામા એક વખત રૂા ૪ લરવાથી શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીકૃત ષોડશ ગ્રંથ શ્રીપુરૂષોત્તમજી વગેરે ગોસ્વામિ બાલકોની સંસ્કૃત ટીકાઓ ઉપરથી વેદશાસ્ત્રસંપન્ન શાંસ્ત્રી છગનલાલ અનન્તજીના હાથથી લખાએલી વિસ્તૃત અને સરળ ગુજરાતી ટીકા સાથે દરેક જુદા જુદા પુસ્તકરૂપે અને શ્રીમદ્ગુસાંઇજીકૃત ભક્તિવર્ધિની તથા શ્રીમદ્-પુરૂષોત્તમજીકૃત- ઉપદેશશતકાનિરાસવાદ તથા શ્રીહરિરાયજીકૃત દુર્ગમવિજ્ઞાનપ્રકાશ એ રીતે ૧૯ ગ્રંથો છપાય છે તે ક્રમશ: વિના પોસ્ટેજે અને વગર નોકલવામા આવે છે અને આ ફંડમાં જે કાઇ વધારો રહે તો તેમાથી શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના બીજા ગ્રંથો પણ છપાવી સસ્તા નોકલવથી પ્રસિદ્ધ કરવા યોજના ગયેલી છે તો વૈષ્ણવોને સદર લાભ લેવા વિનતિ છે

ત્રિભુવનદાસ પીતાંબરદાસ શાહ.

શ્રીપુષ્ટિમાર્ગીય પુસ્તકાલયના મંત્રી અને વલ્લભીય ગ્રંથ પ્રકાશક ફંડના વ્યવસ્થાપક

मनकर्मवचन और नहि जाचत मुम(स्म)रत और मुम (स्म)रावत ॥ २ ॥
मिथ्या वाद उपाधिरहित व्है विमल विमल जश गावत ।
सूरदास प्रीति कर तिनमों जो हरि सुरत (स्मरण) करावत ॥ ३ ॥

(५)

तिहारे जनम करम गुण गाउ ।
माधोजु तुमपे मुक्ति न मागु नहि वैकुंठ आवु ॥ १ ॥
संत मडली संग रहींक गाउ तिहारे गीत ।
हे हरिचरण चित्त जाको सोइ परम पुनीत ॥ २ ॥
जहां जहा जनम देहो तहां जाउ धरु न मान अपमान ।
सूर दासको दास कहाउ यह अभयपद्दान ॥ ३ ॥

(६)

मवनतें हरिदासनसो हेत ।
हरि दासनके संग रहत है हरि दासनमें चित्त ॥ १ ॥
हरि दासनकी महिमा जानत हरि दासन सुख देत ।
छितस्वामि गिरिधरन श्रीविट्ठल हरि दासनकी सेत (सेतु) ॥ २ ॥

(७)

माधो यह मसाद हों पाउं ।
तुव भृत्यभृत्यपरिचारक दासको दास कहाउं ॥ १ ॥
वे परमारथ मोय गुरु शिखायो श्यामा श्यामकी पूजा ।
यह वासना बसो जिय मेरे देव न देखु दूजा ॥ २ ॥
परमानद दास तुम ठाकुर यह नातो जिन टुटो ।
नदकुमार जशोदानदन हिलमिल प्रीत न छूटो ॥ ३ ॥

(८)

श्याम भक्तवत्सल निज जानो ।
नाति गोत्र कुलको न गिनत नहि रंक होय के राणो ॥ १ ॥
ब्रह्मादिक शिव कोन जान प्रभु हो अजान नहि जानों ।
भक्ता जहा तहां प्रभु नाहि मो द्वैतको मानो ॥ २ ॥
भक्ट खंभतें देह दिखाइ यादवकुलको दानो ।
यदुकुल मखा कृष्ण सहाइ गोकुल कीनो धान्यो ॥ ३ ॥
[illegible] रजपुत विदुर दासीसुत कोन कोन अब ज्ञानो ।
[illegible] ॥ ४ ॥
[illegible]) ।

શુદ્ધાદ્વૈત વિજ્ઞાન.

અનુસંધાન પૃષ્ઠ ૩૨

સ્વપ્નના દૃષ્ટાન્તથી ઘણાએક જગત્ને અસત્ય મિથ્યા કલ્પવાને લલચાય છે, પણ આ કઇ વસ્તુસ્થિતિનો યથાસ્થિત વિચાર નથી. જગત્ વિશ્વ જે આપણે જોઇએ છીએ, તે સ્વપ્નથી અત્યન્ત વિધર્મિ છે, અત્યન્ત ભિન્ન છે, આ જગત્ અને સ્વપ્ન વચ્ચે કઇપણ સામ્ય નથી જ્યારે સામ્ય નથી ત્યારે દૃષ્ટાન્તપણે પણ અસંભવિત થાય છે. (वैधर्म्याच्च न स्वप्नादिवत् ।) આ જગત્ બ્રહ્મકાર્ય સિવાય અન્ય કઇ નથી જગત્ બ્રહ્મમાથી જ સ્વસત્તા ધારણ કરે છે, પણ કોઇ પ્રકારે એની બ્રહ્મરૂપતા ખંડિત થતી નથી શ્રીવલ્લભાચાર્યજીના ઉપદેશનો સાર એ છે કે જે કઇ બ્રહ્મમાથી ઉદ્ભવે છે. તે બ્રહ્મનુ જ રૂપ છે અને તે સત્ય છે. અલૌકિક ઇચ્છાથી અલૌકિક નિત્ય રમણને વાસ્તે ભિન્ન ભિન્ન નામ તથા રૂપ બ્રહ્મના કાર્યને લાગુ પડે છે

વસ્તુત કંઈ પણ નાશ પામતું નથી, માત્ર કેટલાક નવિન પદાર્થ આપણી દૃષ્ટિએ પડે છે, જ્યારે બીજા આ દૃષ્ટિની બહાર લય છે પદાર્થ આપણી દૃષ્ટિએ ન દેખાય એટલે તેનો નાશ વા અભાવ સિદ્ધ થતો નથી તેવીજરીતે આવિર્ભાવ અને તિરોભાવ નામક એ બ્રહ્મની શક્તિથી જગત્ના જન્મ સ્થિતિ અને લય થાતી રહ્યા છે અતએવ જગત્ પણ નિત્ય છે

તત્ત્વવિચાર સંપૂર્ણ કરતા પહેલા શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના સિદ્ધાન્તના એક અગત્યના વિષયપર આપનુ ધ્યાન મને ખેચવા દો આપ ત્યારે જ જોઇ શકશો કે એ કેવા સૂક્ષ્મદર્શિક વિચારક હતા એમના પહેલાના કોઇ પણ આચાર્યે જગત્ અને સંસારનુ તારતમ્ય આટલુ બધુ પ્રત્યક્ષ છતા દર્શાવ્યુ ન હતુ જગત્ અને સંસારનુ તારતમ્ય શ્રીવલ્લભાચાર્યજીએ અત્યન્ત સબલરીતે દર્શાવ્યુ છે જગત્ એ બ્રહ્મનુ કાર્ય છે, જગત્ સત્ છે, સત્ય છે અને નિત્ય છે, જ્યારે સંસાર અસત્ છે, માત્ર અભિમનિ છે, મિથ્યા છે. જગત્નુ ઉપાદાન અને નિમિત્તકારણ ઉભયે બ્રહ્મ છે. જ્યારે સંસારનુ ઉપાદાન કારણ કઇ નથી અને નિમિત્તકારણ અવિદ્યા છે ભિન્ન પદાર્થોની સત્તા એ અવિદ્યાનુ કાર્ય નથી, પણ પદાર્થોના પૃથક્ત્વનુ જ્ઞાન (જેવુ કે આ પદાર્થો બ્રહ્મરૂપ નથી પણ તે ભાગ અથવા તારા છે) એ જ્ઞાન અવિદ્યાથી પ્રેરાયલુ હોવાથી અસત્ય છે મિથ્યા છે જ્યારે મનુષ્ય અહંતામમતાથી (ભાગતારાથી) મુક્ત થાય છે, ત્યારે તે સંસારથી મુક્ત થાય છે. જ્ઞાનની પ્રાપ્તિ થયા પછી સંસારનો નાશ થાય છે પણ આ જગત્ તો બ્રહ્મરૂપે સત્તા ભોગવતું જ્ઞાનીને માલૂમ પડે છે

જ્ઞાનાવતાર વ્યાસ ઉપદેશે છે કે બ્રહ્મ જ વાસ્તવિક અને પરમ પુરુષાર્થ છે (पुरुषार्थः अत शब्दात् बादरायण ।) આ બ્રહ્મની પ્રાપ્તિને માટે કર્મ ઉપાસના જ્ઞાન અને ભક્તિ નામના કેટલાક સાધનો આપણે સાધારણરીતે જાણીએ છીએ યથાર્થ-રીતે જો ધર્મમાર્ગ અનુસરવામા આવે તો જ તે લાભકારક છે કર્મમાર્ગ અત્યન્ત કઠિન છે. યથાર્થરીતે કર્મ કરવામા કલાશા ન હોવી જોઇએ, પણ સર્વ કોઇ જાણે છે કે

ફલાશામાથી મુકત થવું એ આપણને કેટલુ બધુ કઠિન છે આપણે આપણી અહતા-મમતાથી એટલા બધા ભરેલા છીએ કે આપણા સ્વત્વને (બતને) ભૂલી જઇને પ્રભુનુ સ્મરણ કરવુ એ કઠિન છે એટલુ જ નહિ પણ અશકયવત્ છે, માટે શ્રી-વલ્લભાચાર્યજીના સિદ્ધાન્તમાં સાધન તરીકે કર્મ છેક છેલ્લી પક્તિમા છે, તેમ છતા (ઉપર વર્ણવેલા કારણો છતા) કર્મકરણ એ વૃથા નથી એમ શ્રીવલ્લભાચાર્યજી માને છે. યથાસ્થિતરીતે જો કોઇ કર્મ કરી કે તો તેમ કરવાથી તેના ચિત્ત તથા આત્માને શુદ્ધિ પ્રાપ્ત થાય છે. આ શુદ્ધિ પાછી જ્ઞાનભક્તિના ઉચ્ચ પ્રદેશો પ્રાપ્ત કરવાને પાયારુપ થઇ પડે છે

કેટલાક લેખકો ભક્તિ અને ઉપાસનાનો ઘોટાડો વાળે છે શ્રીમદ્વલ્લભાચા-ર્યજી એ બેની વચ્ચે યથાર્થ તારતમ્ય દર્શાવે છે ઈશ્વરની શક્તિઓની વિભૂતિઓની પૂજા તેનુ નામ ઉપાસના, ઈશ્વરનુ માહાત્મ્યજ્ઞાન થયા પછી ઈશ્વર પ્રતિ નિરવધિ સ્નેહ તેનુ નામ ભક્તિ વિભૂતિની વા દેવતાની ઉપાસના ઈશ્વરની મોટાઈનુ જ્ઞાન આપે છે, જે માહાત્મ્યજ્ઞાન પાછુ ઈશ્વરને વાસ્તે સ્નેહ પ્રકટાવે છે.

આ પ્રમાણે શ્રીવલ્લભાચાર્યજીના સિદ્ધાન્તમા કર્મ ઉપાસના જ્ઞાન વગેરે સર્વ ભક્તિના સાધન છે, અગ છે પરમતત્ત્વનુ માહાત્મ્યજ્ઞાન અનુભવ્યા પછી જે સ્નેહ પરમતત્ત્વને વાસ્તે પ્રકટ થાય છે તેનુ નામ ભક્તિ તે પરમપુરુષાર્થ ભક્તિથી જ સિદ્ધ થાય છે યથાસ્થિત કર્મકરણથી ચિત્તપ્રસન્નતા પ્રાપ્ત થાય છે, ઉપાસના પરમતત્ત્વનુ માહાત્મ્યજ્ઞાન કરાવે છે એ જ્ઞાન દુ ખનો નાશ કરી બ્રહ્મજ્ઞાન પ્રાપ્ત કરાવે છે એ ત્રણના મલવાથી પરમતત્ત્વપ્રતિ સ્નેહ પ્રકટ થાય છે, એ સ્નેહથી જ પરમ પુરૂષાર્થ સિદ્ધ થાય છે

હવે આપણે બ્રહ્મવાદમા ફલનો વિચાર કરીએ કર્મકરણનુ ફલ પ્રાયશ અમ-કૃત જન્મ ને મરણ છે કર્મકરણ પ્રાય પ્રાકૃત ભોગ સિદ્ધ કરે છે. આ પ્રાકૃત ભોગ પણ એક પ્રકારના બધનરૂપ છે જો સત્યરીતે કર્મ કરાય તો જ તે ભક્તિનુ અંગ બને છે, અને પરપરાથી બ્રહ્મપ્રાપ્તિમા સાધનરૂપ થાય છે

કર્મ કરતા જ્ઞાનની કક્ષા ઉચ્ચ છે. બ્રહ્મજ્ઞાન માત્ર પ્રાકૃત સુખદુ ખનો અત્ય-ન્ત નાશ કરે છે એટલુ જ નહિ પણ તે જ્ઞાની જીવનો અક્ષરબ્રહ્મમા લય સિદ્ધ કરે છે. આ અક્ષરબ્રહ્મ બ્રહ્મવાદમા પુરૂષોત્તમની પ્રતિષ્ઠા છે આ જ અક્ષરને નકાર શ્રુતિ-ઓ વર્ણવે છે. અક્ષર સર્વવ્યાપક છે, તેજોમય છે. જીવોનુ અક્ષરબ્રહ્મ સહ સપૂર્ણ અદ્વૈત એ જ્ઞાનથી સિદ્ધ થતુ પરમ ફલ છે.

પણ જ્યારે જ્ઞાની ભકત થાય છે ત્યારે પરમ પ્રભુ એ જ્ઞાની જીવનો અક્ષરમાથી ઉદ્ધાર કરીને, ઉચ્ચતર કક્ષામાં પ્રવેશ કરાવે છે વૈકુણ્ઠાદિ લોકમાં નિત્ય સ્થિતિ એ જ્ઞાની ભક્તનુ પરમ ફલ છે

અત્યાર સુધી જે અને કહ્યુ તે પ્રાચીન ઋષિઓના બ્રહ્મવાદના સંબધમાં હતુ. આ બ્રહ્મવાદમા માત્ર ત્રૈવર્ણિક જ અધિકારી થઈ શકે છે મોક્ષ તો માત્ર બ્રાહ્મણથી જ

સિદ્ધ થઈ શકે છે શ્રીવલ્લભાચાર્યની પૂર્વે કોઇને આ ધર્મની સંકુચિતતા આટલી બધી પ્રત્યક્ષ થઈ ન હતી, પણ શ્રીવલ્લભાચાર્યજી જેવા વિશાલદૃષ્ટિવાલા મહાન્ તત્ત્વવેત્તાને પ્રાચીન વૈદિક ધર્મના સંકુચિત બંધનો અને સમયાનનુયાયિત્વ પ્રત્યક્ષ થયા વિના કેમ રહી શકે ? અને તેથી તેમણે બ્રાહ્મણ ક્ષત્રિય, વૈશ્ય, શૂદ્ર અને સ્ત્રીને વાસ્તે એક વેદથી અવિરુદ્ધ નવીન માર્ગ સ્પષ્ટ રીતે કોતરી કાઢયો પ્રાચીન ધર્મમા શૂદ્રનો અધિકાર ન હતો. પ્રાચીન ધર્મના સંકુચિત બંધનોને ભગવાન્ શ્રીકૃષ્ણે સ્પષ્ટ જોયા અને તેથી સ્ત્રીશૂદ્રના ઉદ્ધારને માટે એમણે નવીન માર્ગ પ્રકટાવ્યો. મનુષ્ય કે સ્ત્રી, ત્રૈવર્ણિક કે શૂદ્ર, આર્ય કે અનાર્ય કોઇપણ પ્રભુની ભક્તિ કરી શકે અને પરમપુરૂષાર્થ સિદ્ધ કરી શકે શ્રીકૃષ્ણના વાક્યોમાંથી જે સિદ્ધાન્ત શ્રીવલ્લભાચાર્યજીએ તારવી કાઢયો તે 'પુષ્ટિમાર્ગ' નામથી પ્રસિદ્ધ થયો. સર્વ મનુષ્યોને પ્રભુના અનુગ્રહ વાસ્તે યત્ન કરવાનો છે, અને એ જ અનુગ્રહ સર્વનો ઉદ્ધાર કરવાને સમર્થ છે શ્રીવલ્લભાચાર્યજીનુ મન એટલુ બધુ વિશાલ હતુ કે નીચમા નીચ જાતના હિંદુ ઉચ્ચમા ઉચ્ચ જાતના હિંદુ સાથે શ્રીકૃષ્ણની ભક્તિ કરી શકે એવો અધિકાર સર્વને આપ્યો સ્ત્રી જે અદ્યાપિ સુધી સર્વ પ્રકારે અધિકારરહિત ગણાતી હતી, અને વેદધર્મમા તો અનધિકારી જ હતી, તે આ પુષ્ટિમાર્ગમા પરમ ઋત્વિજ (ગુરુ) ગણાઈ રતિપથ (પ્રેમમાર્ગ) ના ઉચ્ચ વિચાર-શ્રેણિની વિજયપતાકા શ્રીગોકુલની શ્રીગોપિકાઓએ ફરકાવી મનુષ્યના સ્વકૃતસાધનથી નહિ પણ પ્રભુ સ્વકૃપાથી સર્વનો ઉદ્ધાર કરે છે આ જ સન્દેશ શ્રીકૃષ્ણે ભગવદ્ગીતાના અન્તમા પ્રકટ કર્યો છે આત્મનિવેદન અને ભગવત્પ્રપત્તિ (પ્રભુ અને પ્રભુની ઇચ્છાનુ અત્યન્ત શરણ લેવું) એ આ માર્ગના મુખ્ય લક્ષણ છે ગમે તે જાતિનો મનુષ્ય હોય, ગમે તે વર્ણનો મનુષ્ય હોય, સ્ત્રી કે પુરૂષ હોય, તો પણ જો આત્મનિવેદન અને ભગવ-ત્પ્રપત્તિ સિદ્ધ કર્યા હોય તો ઈશ્વરકૃપાથી જ તેનો જરૂર ઉદ્ધાર થાય છે આ બેનો ઉપદેશ શ્રીકૃષ્ણે કર્યો છે આ જ ઉપદેશ શ્રીવલ્લભચાર્યજીએ પ્રકટ કર્યો છે પ્રભુને આત્મનિવેદન, સ્વનિ.સાધનતા, પ્રભુની ઇચ્છા અને કૃપામા દૃઢ અને સંપૂર્ણ આશ્રય, અને પ્રભુને વિષે નિરવધિ પ્રેમ એ પુષ્ટિમાર્ગના મુખ્ય લક્ષણો છે આ જ ઉપદેશથી શ્રીકૃષ્ણ सर्वोद्धारप्रयत्नात्मा (સર્વના ઉદ્ધાર કરવાવાલા) કહેવાયા, આથી જ શ્રીવલ્લભ-સિદ્ધાન્ત પરમ ઉદાર ગણાયો, અને આથી જ વિશ્વધર્મનાં ઉચ્ચતમ વિચારોને પ્રકટ કરવાનુ માન શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીને મળ્યુ છે

श्रीकृष्णार्पणमस्तु ।

દર્પદલન.

તા. ૨૬-૩-૧૧

પુષ્ટિમાર્ગના ધુરંધર પંડિત અને અદ્વિતીય વિદ્વાન્ ભગવદીય મન્નલાલ શાસ્ત્રી માથે વિદ્યાલક્ષ્મી પાઠશાલાનો વિદ્યાર્થી આ જ કેટલોક સમય થયા 'ગુજરાતી' પત્રમાં જે તકરાર કરી રહ્યા છે તે વાંચી ખેદ થયા વિના રહેતો નથી

શાસ્ત્રીજીની વિદ્વત્તા માટે સંપ્રદાયમા બે મત નથી વડોદરાની પરિષદ્ વખતે તેમણે કરેલુ વ્યાખ્યાન સર્વ વૈષ્ણવને પ્રિય થઈ પડયુ હતુ. નંદકુમારની પરિષદ્ તથા સુરતની પરિષદના સમયના તેમના વ્યાખ્યાને તો અવધિ કરી હતી. તે યોગ્યતાની કદર કરી સુરત પરિષદ્ વખતે તેમને સુવર્ણ-પદક પરિષદ્ તરફથી આઠ ગોસ્વામિબાલકો તથા પાંચ હુન્નર વૈષ્ણવો સમક્ષ આપવામા આવ્યુ હતુ ત્યારથી પરિષદ્ સ્થપાઇ ત્યારથી તેમને પરિષદના વિદ્યાવિભાગના પ્રમુખ ચુંટવામા આવ્યા છે, એટલુ જ નહિ પણ જ્યારે જ્યારે પુષ્ટિમાર્ગ વિષે કાઇ પણ મારિતી કોર્ટમા અથવા અન્ય ગૃહસ્થોને અપાવવી હોય છે ત્યારે ગોસ્વામિબાલકો પણ તેમને જ પસંદ કરે છે. આ ઉપરથી નિઃસંશય સિદ્ધ છે કે મન્નલાલ શાસ્ત્રી પુષ્ટિમાર્ગમા આધાર રાખવા લાયક વિદ્વાન્ પંડિત છે અને તેથી વિદ્યાર્થીનુ તેમની સામે લખવુ સૂર્ય સામે ધૂલ ઉડાડવા બરાબર છે. હવે પ્રસ્તુત વિષયપર આવીએ ગુરુપરંપરાની તકરાર પ્રાચીન સમયમા ન હતી પણ લાયબલ કેસ પછી કેટલાકોએ પુષ્ટિમાર્ગને પ્રાચીન જણાવવા ખાતર નવી પરંપરા યોજી, અને ગટ્ટુલાલાના અને પ્રાચીન ગ્રંથ એ પક્ષમાં મહારાજશ્રીઓ ચઢિયાઇ ગયા તે પુષ્ટિમાર્ગના ભગવદીયોને અન્યાયુ નથી એ નવી પરંપરાની વિરુદ્ધ ના રા મન્નલાલ શાસ્ત્રીએ તા. ૫-૩-૧૧ ના 'ગુજરાતીના' અંકમાં જે સબલ કારણ આપ્યા છે તેમાના એકનો પણ ઉત્તર વિદ્યાર્થી આપી શકયો નહિ, ત્યારે 'મન્નલાલ શાસ્ત્રી પણ પોતે વિષ્ણુસ્વામીની પરંપરા માને છે અને તેમની સહી માથેનો કાગલ મારી પાસે છે અને તેઓ હજુ ના કહેશે તો હું જાહેરમા મૃકીશ' વગેરે મિથ્યા પ્રલાપ કરી તેમની સહીની જાણે નકલ હોય એમ 'ગુજરાતી' પેપરમા મોટે અક્ષરે છાપવામાં આવ્યુ તરત જ મન્નલાલ શાસ્ત્રીએ ઉત્તર આપ્યો કે એ હડહડતુ જુઠાણુ છે, મારી પાસે કોઇએ સહી માગી નથી, તેમ મે સહી આપી પણ નથી, માટે પત્ર બેલાશક છાપવો'. આજ તેને ૨૧ દિવસ થઇ ગયા, પણ તે પત્ર છાપ્યો નહિ. વિદ્યાર્થીએ તે પત્ર ત્રિજોરીમા સંતાડી રાખ્યો હોય તો જાહેરમાં મૂકવાની તેની ફરજ છે, નહિ તો મન્નલાલ શાસ્ત્રીની તેમ જ જાહેરમા સર્વ વાચક-વર્ગની માફી

---

૧. આ લેખ 'ગુજરાતી' પત્રમા પ્રસિદ્ધિને માટે મોકલવામા આવ્યો હતો, પરંતુ વિદ્યાર્થીના પક્ષપાતી અધિપતિએ તે લેખ પ્રસિદ્ધ ન કર્યો એટલું જ નહિ પરંતુ અમારી અને શાસ્ત્રીજીની એટલી તો નિન્દા કરી કે તે સિવાય ઉપાય મલતે લઈ શકાય એમ હોવા છતા અમે અમારા સંપ્રદાયની નિર્ગુણતા લક્ષમા રાખીને અધિપતિની દ્વેષવૃત્તિની ઉપેક્ષા જ કરવી ઉચિત માનીએ છીએ સત્ય વસ્તુસ્થિતિનું વૈષ્ણવોને પરિજ્ઞાન થાય એવા મદ્ હેતુથી અમે અમારા સમક્ષ લેખ અત્ર પ્રસિદ્ધ કરીએ છીએ.

માગવી એ તેની ફરજ છે વિદ્યાર્થીએ વિદ્યા ભણવાનું મુકી આમ પુષ્ટિમાર્ગને માટે પ્રાણ આપનાર પુષ્ટિમાર્ગીય અદ્વિતીય શાસ્ત્રી સામે વિતંડાવાદ કરવો ઉચિત નથી કોઇ પણ સમજતા વાચનારને સ્પષ્ટ સમજાશે કે મગનલાલ શાસ્ત્રીના જણાવ્યા પ્રમાણે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ સ્વય શ્રીસુબોધિનીજીમા આજ્ઞા કરી છે કે ભક્તિમાર્ગના ચાર ભેદ છે, તામસ રાજસ સાત્વિક અને નિર્ગુણ. તેમા વિષ્ણુસ્વામીએ પ્રવર્તાવેલ ભક્તિમાર્ગ તામસ, મધ્વાચાર્યે પ્રવર્તાવેલ રાજસ, રામાનુજે પ્રવર્તાવેલ સાત્વિક, અને શ્રીમદ્વલ્લભાધીશરે પ્રવર્તાવેલ નિર્ગુણ છે, તો પછી તામસ ભક્તિમાર્ગના આચાર્ય જે વિષ્ણુસ્વામી તેને નિર્ગુણ ભક્તિમાર્ગના આચાર્ય તરિકે શ્રીમાન્વલ્લભાચાર્યજીએ અગીકાર કર્યા નથી, અને કરાય પણ નહિ, એ દીવા જેવુ ઝલકતુ છે. આ સચોટ પ્રમાણસહ ઉત્તર પછી અમે એવી જ રીતના ઉત્તરની વિદ્યાર્થી પાસેથી અપેક્ષા રાખતા હતા પણ તેને બદલે મગનલાલ શાસ્ત્રી અવૈષ્ણવ છે ઇત્યાદિ ગાલિપ્રદાન સિવાય બીજુ કાઇ તેના લેખમા જોવામા આવતુ નથી વેદ, સૂત્ર, ગીતા તથા ભાગવત વગેરે દૈવશાસ્ત્રીય ગ્રથોમાં મર્યાદાજીવોએ કયા સાધનોથી મુક્તિ મેળવવી એ વાતનો વિચાર કરીને કર્મજ્ઞાનના સમુચ્ચયપૂર્વક ભક્તિમાર્ગનો અને નિસ્સાધન જીવોને માટે કેવલ પુષ્ટિ-ભક્તિમાર્ગનો ઉપદેશ કરેલો હોય છે ગીતામા સાખ્ય, યોગ, વૈરાગ્ય, તપ અને ભક્તિ એમ પાચ પ્રકારની વિદ્યાનો સાધકદિક જીવને અર્થે અને નિસ્સાધન ભક્તને અર્થે સર્વ ધર્મના પરિત્યાગપૂર્વક ભગવચ્છરણનો ઉપદેશ છે, તેથી સમગ્ર ગીતામા ભક્તિમાર્ગનો જ ઉપદેશ કરેલો છે. ભક્તિમાર્ગપ્રતિપાદક એ સકલ ગીતાશાસ્ત્ર મને શિરસા વદ્ય છે એમ મગનલાલ શાસ્ત્રીએ ફરીફરીને કહ્યુ છે, ને પોતે તેના પરનું સાહિત્ય પ્રસિદ્ધ કર્યુ છે મર્યાદા સાધનમાર્ગથી વિલક્ષણ-વિપરીત પુષ્ટિભક્તિ-માર્ગમાં ભગવાનના અનન્ય આશ્રયની અને તે પણ તેની કૃપા-સાધ્ય હોવાથી કેવલ કૃપાની જ જરૂર છે સાખ્ય યોગ, આદિ વિદ્યાના પર્વની અપેક્ષા શુદ્ધ 'પુષ્ટિ-માર્ગમા નથી એમ ગીતાના ઉક્ત અર્ધ શ્લોકમા સ્પષ્ટરીતે ભાર મૂકીને જણાવવામા આવ્યુ છે, અને તે શ્લોક સકલ શાસ્ત્રના સદોહરૂપ છે એમ ભગવાન્ સ્વય કહે છે અને તે જ પ્રમાણે પ્રાચીન કાલથી મનાતુ આવ્યુ છે '**ફલતિસાધ્ય સાધન જ્ઞાનભક્તિરૂપ શાસ્ત્રેણ બોધ્યતે તાભ્યાં વિહિતાભ્યાં મુક્તિ મર્યાદા તદ્રહિતાનામપિ સ્વસ્વરૂપત્વેન સ્વપ્રાપણ પુષ્ટિ ઇતિ ઉચ્યતે** ઇત્યાદિ ભાષ્યમા આપેલા પુષ્ટિ તથા મર્યાદાના લક્ષણો તથા શ્રીહરિરાયજીએ કરેલા 'પુષ્ટિમાર્ગલક્ષણાનિ' નામના ગ્રથમા આપેલા પુષ્ટિ-માર્ગના લક્ષણો વાચી, સમજી, ગીતાવાક્ય અથવા કોઇપણ શાસ્ત્રના વાક્યના સ્વરૂપનો વિદ્યાર્થી વિચાર કરશે તો રા રા શાસ્ત્રીના સિદ્ધાન્ત સાથે મળ્યા વિના ગત્યન્તર જ નથી. પરતુ દુરાગ્રહ કરી શુદ્ધાદ્વૈત બ્રહ્મવાદ અને શુદ્ધ પુષ્ટિમાર્ગનો વિપ્લવ કરી ગમે તે લેખ સાને લખવો એમ કરીને જ કાંઇ પણ લખશે તો પછી 'ब्रह्मापि नर न रञ्जयति' ન્યાયે તેને કોઇ પણ મનાવી શકનાર નથી ઉક્ત અર્ધ શ્લોકમા ભગવાન્ સર્વ સાધ-નના ત્યાગનો ઉપદેશ આપી કેવલ નિસાધન બની ભગવાનનો જ આશ્રય ગણવા આજ્ઞા કરી તે શ્લોકને જ શુદ્ધ પુષ્ટિભક્તિમાર્ગીય શ્લોક કહ્યો એમા શુ ખોટુ છે? એથી ગીતાશાસ્ત્રને શુ દૂષણ લાગ્યુ ? વિદ્યાર્થીને નિસાધન પુષ્ટિમાર્ગ ન રુચતો હોય

તો તે ભલે સાંખ્ય, યોગ, વૈરાગ્ય આદિ સાધન કરે, પરન્તુ તેથી પુષ્ટિમાર્ગ સ્પષ્ટ સમજવવાના અત્યુત્તમ આનંદદાયક ભાષણમા ગ. રા. મગનલાલ શાસ્ત્રીએ જે શાસ્ત્રીય વાત મર્મોનો જાણે છે અને કહી ગયા છે તેનો અનુવાદ કર્યો તેમાં સમજ્યા વિના મિથ્યા વિતંડા કરવામા શો લાભ? જો વિદ્યાર્થીની જીજ્ઞાસા વિદ્યા શીખવાની જ હોય તો શાસ્ત્રો વાચી. રા રા મગનલાલ શાસ્ત્રી અથવા તેઓ પર શ્રદ્ધા ન હોય તો બીજા ગ. ગ. છગનલાલ શાસ્ત્રી અથવા શ્રીમદ્ગોસ્વામિ શ્રી ૬ગોવર્ધનલાલજી જેવા અદ્વિતીય વિદ્વત્પ્રવર પાસે શાસ્ત્રો સમજવા, અને સમજ્યા પછી જ પંડિતોની સાથે તકરારમા ઉતરવાની ધૃષ્ટતા કરવી

જો વિદ્યાર્થી પુષ્ટિમાર્ગસૂચક 'પુષ્ટિ શબ્દ વેદમાં નથી એમ માનતો હોય તો અમે તેનુ દુર્ભાગ્ય સમજીએ છીએ. તે માટે રા રા. મગનલાલ શાસ્ત્રીને રૂ ૧૦૦) નુ ઇનામ આપવા નીકળ્યો છે તે પરથી અમારે આમ કહેવું પડે છે પુષ્ટિમાર્ગસૂચક 'પુષ્ટ' શબ્દ વેદમા છે કે નહિ તે સારૂ વિદ્યાર્થીએ પોતાના જ ગુરુ પં ગટૂલાલા-જીકૃત સત્સિદ્ધાતમાર્તણ્ડ ગ્રન્થ જોવો તેમા પૃષ્ઠ ૧૮૨ મા ઋગ્વેદમા 'ત્રયમ્બકં યજામહે સુગન્ધિ પુષ્ટિવર્ધનમ્' ઋચાનો અર્થ પ ગટૂલાલાજીએ નીચે પ્રમાણે આપ્યો છે 'પુષ્ટીતિ। પુષ્ટિમાર્ગાખ્યસમ્પ્રદાયસ્ય સર્વત્ર પ્રવર્તનેન વૃદ્ધિકર્તારમ્। અત્રાપિ હેતુ'। ત્રયમ્બકમિતિ। અર્થાત્ ત્રિકાલજ્ઞમિતિ। ન ચાત્ર પુષ્ટિશબ્દેન શરીરાદિપોષણ ગ્રાહ્યમ્।' અર્થ –પુષ્ટ ઇત્યાદિ પુષ્ટિમાર્ગ નામના સમ્પ્રદાયના સર્વત્ર પ્રવર્તને કરીને વૃદ્ધિ કરનાર તેમા હેતુ કહે છે, ત્રયમ્બક અર્થાત્ ત્રિકાલને જાણવાવાળા, અત્ર પુષ્ટિશબ્દે કરીને શરીરાદિ પોષણનુ ગ્રહણ કરવુ નહિ ત્યાથી થોડેક આગળ પૃષ્ઠ ૧૮૩ મા પત્રમા કહે છે કે 'એવમન્યત્રાપિ શ્રુત્યાદિષુ સહસ્રશોઽસ્તીતિ તત્ર તત્ર દ્રષ્ટવ્યમ્।' અર્થ એમ અન્યત્ર પણ શ્રુતિ વગેરેમા સહસ્રશ છે ત્યાત્યાથી જોઇ લેવુ આ ઉદાહરણથી સ્પષ્ટ જણાય છે કે ગ. રા શાસ્ત્રી મગનલાલ અને પડિત ગટૂલાલાજી બંને 'પુષ્ટિ' શબ્દનો અર્થ 'પુષ્ટિમાર્ગ નામનો સમ્પ્રદાય' કરે છે પ. ગટૂલાલાજી આ શ્રુતિ રૂઢ ત્રયમ્બક પદ્યે લગાડીને શિવજીને પુષ્ટિમાર્ગના આચાર્ય કહે છે અને રા રા શાસ્ત્રી મગનલાલ યૌગિક અર્થ કરીને શ્રીકૃષ્ણના શ્રીમુખાધિષ્ઠાતા મુખ્ય આધિદૈવિક અગ્નિપરત્વે આ શ્રુતિ યોજે છે, પરતુ 'પુષ્ટિ' શબ્દનો અર્થ તો બંને સરખો જ કરે છે મગનલાલનો 'પુષ્ટિ' શબ્દનો અર્થ ખોટો હોય તો ગટૂલાલાજીનો પણ અર્થ તેટલો જ અગત્ય છે એમ વિદ્યાર્થીએ કબુલ કરવું પડશે, અને તેથી મગનલાલનો દ્રોહ કરવા જતા ગુરુદ્રોહ પણ આમ થશે. આખો વેદ પુષ્ટિમય છે એમ કહેનાર વિદ્યાર્થી વેદના 'પુષ્ટિ' શબ્દનો અર્થ પુષ્ટિમાર્ગ, વિના બીજો શુ કરવા માગે છે તે સ્પષ્ટ જણાવશે તો વાચકવર્ગ ઉપર કૃપા થશે.

વળી વિદ્યાર્થી કહે છે કે મગનલાલ શાસ્ત્રીએ ગીતા છપાવી તે તો પ્રાચીન લેખ છે તે કાઇ મગનલાલ શાસ્ત્રીનો નથી. બરોબર જ વાત છે અને તે સહુ કોઇ જાણે

છે મન્નલાલ શાસ્ત્રી તો પ્રાચીન લેખ પ્રસિદ્ધ કરે છે અને બીજા વિદ્વાનો અને વૈષ્ણવોને પણ તેમ જ કરવાનુ કહે છે. નવા મનકલ્પિત ગ્રથો કરવાની તે ઓ વિરુદ્ધ છે, કેમ કે તેમા નવુ નવુ માર્ગથી વિરુદ્ધ ઘુસાડવામા આવે છે તે એ શુદ્ધ ભગવદીયંને બીલકુલ રુચતું નથી વળી એ છપાવવાના અને વેચવાના પૈસા મન્નલાલ શાસ્ત્રી પોતે નફારૂપ લે છે એ વાત તદ્દન જૂઠી અને બીનપાયાદાર છે. ધર્મકાર્યમાથી એક પાઇ પણ નફો ન કરવો એ તેમની પ્રતિજ્ઞા છે જીજ્ઞાસુ બાલકોને પોતે કલાકોના કલાકોસુધી શ્રમ લઇ એક પાઇ પણ લીવા વિના ભણાવે છે હાલમા પણ બે ત્રણ વૈષ્ણવો સ્વમાર્ગીય ગ્રથો તેમની પાસે મફત ભણે છે ધર્મને માટે પોતાના સર્વસ્વનો ભોગ આપનાર દયાલુ વિદ્વાન ભગવદીયપર ખોટા આક્ષેપ કરવા એ શુ વિદ્યાર્થી બ્રહ્મકર્મ સમજે છે ? વળી ગીતાસાહિત્ય સબધી લખતા વિદ્યાર્થી લખે છે કે શાસ્ત્રીજી પોતાને ઘનશ્યામ અર્થાત્ કૃષ્ણ કહે છે અને તેથી પોતે અભિમાની થઇ ગયા છે વગેરે પણ વસ્તુત જોતાં તો વિદ્યાર્થી તે નિવેદનપત્રિકાનો અર્થ જ સમજ્યો નથી. પોતાને વિદ્યાર્થી કહેવરાવતા છતા પડિતમ્મન્યવત્ વિતડાવાદ કરે છે તે બરોબર ખેદની વાત છે તે નિવેદનપત્રિકા અને તેનો અર્થ નીચે પ્રમાણે છે —

निवेदन-पत्रिका

श्रीघनश्यामेन या गीता घनश्यामैश्च दीपिता
निवेदये घनश्याम घनश्यामाय ता मुदा ॥

અર્થ —

નિવેદન-પત્રિકા

શ્રીઘનશ્યામે (કૃષ્ણે) જે ગીતા ગાઇ, અને ઘનશ્યામે (શ્રીમહાપ્રભુજીએ) જે ગીતા ઉપર તત્ત્વદીપ નિબધનુ શાસ્ત્રાર્થપ્રકરણ અને પ્રકાશ કર્યા તે ગીતાને (હુ) શ્રી ઘનશ્યામલાલજી મહારાજ (પ્રસિદ્ધ કર્તા) ઘનશ્યામને (કૃષ્ણને) નિવેદન કરુ છું નિવેદનમા ખેદ પ્રધાન છે વિધિ નહિ. અત્ર સધિ-વિશ્લેષ તો અર્થની સુગમતા માટે છે, અને અનુષ્ટુપ્ છદ છે એમ કહેવામાં આવ્યુ નથી એટલે તે છદ છે એમ માનીને આક્ષેપ કરવો અયુક્ત છે વાચકવર્ગની પણ આથી ખાત્રી થશે કે શાસ્ત્રીજી પર વિદ્યાર્થીએ જે જે આક્ષેપો કર્યા છે તે અજ્ઞાનવશાત્ અને અસત્ય છે મન્નલાલ શાસ્ત્રીના પુષ્ટિમાર્ગ શુ છે, કેવો ઉત્કૃષ્ટ છે, તે સ્પષ્ટરીતેથી દર્શાવતા આનદદાયક ભાષણોથી જે આનદ સભામા બિરાજતા ગોસ્વામિબાલકોને અને ભગવદીયોને પ્રાપ્ત થાય છે તેનુ વિદ્યાર્થીને જ્ઞાન કયાથી હોય ? તેથી વિદ્યાર્થીએ પોતે પોતાની આબરૂ સાચવવી હોય, પોતાનુ શ્રેય કરવુ હોય તેમજ સપ્રદાયનુ શ્રેય ઇચ્છવુ હોય તો હવે પછી મિથ્યા વિતડાવાદનો ઉપસર્ગ કરી દંભ મૂકી આર્જવ ગ્રહણ કરી ભગવદ્ભાવપરાયણ થવુ એ જ ઇષ્ટ છે વિદ્યાર્થી શાસ્ત્રી સાથે શાસ્ત્રાર્થ ભલે કરે પરંતુ તે વિવેકની મર્યાદામા રહીને કરે એ જ અભીષ્ટ છે, પરતુ રાંય ક્રોપેન પૂરયેત્ એમ ન થવુ જોઇએ

श्रीहरिरायजीकृतश्रीकृष्णशरणाष्टकम् ॥

श्रीकृष्णाय नमः ॥ स्वर्गसाधनहीनस्य पराधीनस्य सर्वतः ॥
पापपीनस्य दीनस्य श्रीकृष्णः शरण मम ॥ १ ॥

હું સર્વ સાધન રહિત છું, સર્વ રીતે પરાધીન છું, પાપથી ભરેલો છું, શ્રીકૃષ્ણ મારૂં શરણ થાઓ-રક્ષણ કરો.

संसारसुखसम्प्राप्तिमन्मुखस्य विशेषतः ॥
बहिर्मुखस्य सततं श्रीकृष्णः शरणं मम ॥ २ ॥

સંસારના સુખની સારી રીતે પ્રાપ્તિ કરવામાં હું તત્પર છું. વિશેષે કરીને હું બહિર્મુખ છું, હમેશાં શ્રીકૃષ્ણ મારૂ શરણ થાઓ

सदा विषयकामस्य देहारामस्य सर्वथा ॥
दुष्टस्वभाववामस्य श्रीकृष्णः शरण मम ॥ ३ ॥

હું સદા વિષયની કામના-ઈચ્છા-વાળો છું, સર્વથા દેહમા આનંદ કરનારો છું, દુષ્ટ સ્વભાવથી હું આડો થયલો છું, શ્રીકૃષ્ણ મારૂં શરણ થાઓ

संसारसर्पदष्टस्य धर्मभ्रष्टस्य दुर्मतेः ॥
लौकिकप्राप्तिकष्टस्य श्रीकृष्णः शरण मम ॥ ४ ॥

સંસારરૂપી સાપ મને કરડયો છે, ધર્મથી હું ભ્રષ્ટ થઈ ગયો છું, મારી બુદ્ધિ બરાબ થઇ ગઇ છે, લૌકિકપ્રાપ્તિરૂપી કષ્ટ મને આવી પડયુ છે, શ્રીકૃષ્ણ મારૂં શરણ થાઓ.

विस्मृतस्वीयधर्मस्य कर्ममोहितचेतसः ॥
स्वरूपज्ञानशून्यस्य श्रीकृष्णः शरणं मम ॥ ५ ॥

હું મારો ધર્મ ભૂલી ગયો છું, મારૂં ચિત્ત કર્મમાં મોહિત થઈ ગયું છે, સ્વરૂપજ્ઞાન વગરનો હું થઈ ગયો છું, શ્રી કૃષ્ણ મારૂ શરણ થાઓ.

संसारसिंधुमग्नस्य मग्नभावस्य दुष्कृतेः ॥
दुर्भावलग्नमनसः श्रीकृष्णः शरण मम ॥ ६ ॥

સંસાર સમુદ્રમાં હું ડુબી ગયો છું, મારા ભાવ જતા રહ્યા છે, દુષ્કર્મનો કરનાર હું થઈ ગયો છું, નઠારા ભાવોમાં મારૂં મન લાગેલુ છે, શ્રીકૃષ્ણ મારૂં શરણ થાઓ

विवेकधैर्यभक्त्यादिरहितस्य निरन्तरम् ॥
विरुद्धकरणासक्तः श्रीकृष्णः शरण मम ॥ ७ ॥

હું વિવેક ધૈર્ય ભક્તિ વગેરેથી રહિત થઇ ગયેા છું, હંમેશા વિરૂદ્ધ કામેામાં હું આસક્તિ રાખુ છુ, આ૩ શરણુ શ્રીકૃષ્ણુ થાએા.

विषयाऽक्रान्तदेहस्य वैमुख्यहतसन्मते ॥
इंद्रियाश्वगृहीतस्य श्रीकृष्ण शरण मम ॥ ८ ॥

વિષયેાથી મારેા દેહ ભરાઇ ગયેલેા છે, વિમુખતાથી સારી બુદ્ધિ હણાઇ ગઇ છે, ઇંદ્રિએારૂપી ઘેાડાઓએ મને વશ કર્યો છે, શ્રીકૃષ્ણુ આ૩ શરણુ થાએા

एतदष्टकपाठेन श्रेतदुक्तार्थभावनात् ॥
निजाचार्यपदाम्भोजसेवको दैन्यमाप्नुयात् ॥ ९ ॥

આ અષ્ટકનેા પાઠ કરવાથી, એમાં કહેલા અર્થની ભાવના કરવાથી, શ્રીમહા-પ્રભુજીના ચરણકમલના દાસને દૈન્ય પ્રાપ્ત થાય

इति श्रीहरिरायविरचित शरणाष्टकं संपूर्णम् ॥

मनुष्यनुं कर्तव्य अने धर्मजिज्ञासा.

(अनुसंधान पृष्ठ १६)

પુરૂષોત્તમ—છપાવવા વિકટ તેા નથી, પણ કેાણુ છપાવે ?

ગોવિંદભટ્ટ—ધર્મના નેતાઓએ પેહેલ કરવી જોઇએ, પુષ્ટિમાર્ગના તિલકાયિત શ્રીનાથ-દ્વારાના ગાદિપતિ શ્રીગોવર્દ્ધનલાલજીએ આ કામ અવશ્ય હાથ ધરવું જોઇએ, શ્રીનાથદ્વારામાં લક્ષ્મીની કાઈ ખેાટ નથી પ્રભુની દાસી થઇ સદૈવ ત્યા રહે છે. ભાષાતર માટે સસ્કૃત પડિતેાની પણ ખેાટ નથી- છપાવવાના કામ માટે શાસ્ત્રીઓ જોઇએ તે પણ લક્ષ્મીથી પ્રાપ્ય છે સર્વે પર દેખરેખ રાખવા માટે આપણા પેાતાના ઘરના શાસ્ત્ર જાણનાર પડિતેા પણ વિદ્યમાન છે ભારતમાર્તણ્ડ પડિત ગટ્ટૂલાલાની લાયબ્રેરીમાં, તથા રાજનગરમા શ્રી-નટવરલાલજીના મદિરમા પણ આ સપ્રદાયના પુસ્તકેાના ભડાર છે અન્યસ્થલેથી પણ સાંપ્રદાયિક પુસ્તકેા મલી શકે તેમ છે. વિલબ માત્ર ઇચ્છાનેા જ છે. શ્રી ગોવર્દ્ધનલાલજી એમ આજ્ઞા કરે કે, સાપ્રદાયિક સસ્કૃત પુસ્તકેા યથાર્થ ભાષાંતર સાથે છપાવવા છે, તથા વૈષ્ણવેાને આપણે માર્ગ શું છે તે સમજાવવેા છે તેા એ કાર્યમા કેાઇપણ પ્રકારની અડચણ આવે એમ મને લાગતું નથી. માટે જલદી 'આ કાર્ય હાથ ધરવુ જોઇએ એમ' કરવાથી જ ધર્મજીજ્ઞાસુ વૈષ્ણવેાની જીજ્ઞાસા તૃપ્ત થશે, વૈષ્ણવેા પેાતાનેા ધર્મ સમજશે

અને હાલ જે પાશ્ચાત્યવિદ્યાથી અંજાઇ ગયા છે તે સ્વધર્મપરાયણ થશે, અંગ્રેજી ભણેલા પણ પોતાનો માર્ગ શુ છે. તે જાણી સમજી ધર્મના રસ્તાપર આવશે, અને હાલમાં ધર્મ તરફ જે આંખ્યા ઘટતી જાય છે તે જરૂર વધશે, વળી કાંકરોલીના તિલકાયિત શ્રીબાલકૃષ્ણલાલજી પણ આ કાર્યપર યોગ્ય ધ્યાન આપતા નથી એ અત્યંત આશ્ચર્યકારક છે. એઓ પણ જો ધારે તો એમને એ કામ ઘણુ જ સેહેલ છે માટે જલદી આ કાર્ય હાથ ધરવુ જ જોઇએ. મુબઇવાલા શ્રીદેવકીનંદનલાલજી વિદ્વાન્ ગણાય છે, મુબઇઇલાકાની સ્થિતિથી વાકેફ છે, અને ધારે તો તેઓ પણ એ કાર્ય ઘણી સેહેલાઇથી કરી શકે એમ છે, માટે એમણે પણ સમયની જરૂરીઆત શુ છે તે સમજી વૈષ્ણવોને માર્ગ સમજાવનાર સંસ્કૃત ગ્રંથો તથા તેના યથાર્થ ભાષાન્તર છપાવવા જરૂર લક્ષ આપવુ જોઇએ મુબાઇના મોટામંદિરવાળા શ્રીગોકુલનાથજી અને પોરબંદરવાળા શ્રીજીવણુલાલજી પણ વિદ્યાવિલાસી છે, તેઓ પણ ધારે તો આ કાર્ય કરી શકે એમ છે, માટે એમણે પણ આ બાબત ઉપર જરૂર લક્ષ આપવુ જોઈએ વળી ગટ્ટુલાલજીની લાયબ્રેરીના ટ્રસ્ટીઓ જેઓ ઘણા સુજ્ઞ ગૃહસ્થો છે તેઓ પણ ધારે તો આ કાર્યની યોજના કરી શકે તેમ છે. પુસ્તકો, પુસ્તક શોધનાર, ભાષાન્તર કરનાર તથા દ્રવ્ય એ ચાર વસ્તુની મિલાવટ કરેથી આ કાર્ય ઘણી સરળતાથી પાર ઉતરે એમ છે.

પુરૂષોત્તમ—ત્યારે ટીલ શાની છે ?

ગોવિંદભટ્ટ—આ કાર્યમા પ્રબલ, ઉત્કટ ઇચ્છા જણાતી નથી

પુરૂષોત્તમ—આમ ઉપેક્ષા રાખવાથી પરિણામ ઘણું માઠુ થશે.

ગોવિંદભટ્ટ—એ ખરી વાત છે, અને પરિણામમા ક્ષાંઇ બાકી રહી નથી.

પુરૂષોત્તમ—કેટલાક અંગ્રેજી ભણેલા અથવા અન્યરીતે સુભાવિત ગૃહસ્થો તો પોતે વલ્લભસંપ્રદાયના અનુયાયી છે એમ જાહેરમા કહેતા પણ શરમાય છે.

ગોવિંદભટ્ટ—લાયબલ કેસમાં કેટલાક શ્લોકોના અર્થના અનર્થ થયા, અને કેટલાક આક્ષેપો તથા કટાક્ષો આ સંપ્રદાયપર કરવામા આવ્યા ત્યારથી આવી સ્થિતિ ચાલી છે. માટે જ ગોસ્વામીબાલકોની ફરજ છે કે પોતે વિદ્વાન્ થઇ નીતિની છાપ બેસાડી માર્ગપર બેઠો કલંક લાગ્યો છે તે કાઢી નાખવો. પોતાના સંપ્રદાયની ઉત્તમતા પોતે સમજી વૈષ્ણવોને સમજાવવા પ્રયત્ન કરવો જોઇએ. અજ્ઞાનપણાથી લાગેલો કલંક જ્ઞાનરૂપી શસ્ત્રથી કાઢી નાખવો જોઇએ આવા આવા ઘણા શુભ કાર્યો કરવાનાં છે તે ન કરતાં જ્યારે કેટલાક ગોસ્વામીઓને-કેટલાએક સભાવિત ગોસ્વામીઓને હું કેટલીકવાર નાટકશાળામાં નાટકો જોવામાં રાત્રિઓ વ્યતીત કરતા જોઉ છુ, ત્યારે મારૂ હૃદય બળી જાય છે, અને ગ્લાનિ આવે છે. આ સંપ્રદાયનુ શુ થવા બેઠુ છે તે મને તો સમજ પડતી નથી.

(અપૂર્ણ)

પણ વૈરાગ્યની ઉત્પત્તિ થાય.[૬૩] આ[૬૪] સર્વ જણાવવાને માટે જ આદિમા[૬૫] ધૃતરાષ્ટ્ર અને તેના પુત્રની કથા કહી. એ કથાથી કૌરવોનો ઉત્સાહ[૬૬] જણાવ્યો ભગવાન્ જે વિચારે તે કાર્ય વિષે ઉન્મુખ[૬૭] જ મતિ ભગવદીયને[૬૮] તો ઉચિત છે તેથી[૬૯] વિરુદ્ધ તે 'કુમતિ' જ છે એમ ન[૭૦] હોય તો, ધર્મશાસ્ત્ર[૭૧] ઇત્યાદિમાં[૭૨] ગુર્વાદિનુ હનન નિષિદ્ધ[૭૩] છે તેથી, ગુર્વાદિના નિષિદ્ધ હનનમાથી નિવર્તક[૭૪] મતિ 'કુમતિ' કહે વાય નહિ 'વ્યવહિત[૭૫] સેનાનો અગ્ર ભાગ નિરીક્ષીને[૭૬] દોષબુદ્ધિએ[૭૭] કરીને સ્વજન-વધથી[૭૮] વિમુખ અર્જુનની કુમતિ જેણે આત્મવિદ્યાથી[૭૯] હરી' એ શ્રીમદ્ભાગવતના શ્લોકમા[૮૦] અર્જુનની મતિને 'કુમતિ'[૮૧] કહી છે આથી એમ સિદ્ધ થયું કે ભક્તિમાર્ગની[૮૨] 'મર્યાદા લોક અને વેદથી અતીત છે, તેથી લોક અને વેદને લઇને

૬૩ પરતુ કૌરવામા ભગવદીય વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન ન થતા ક્ષાત્ર વીર રસ જ ઉદ્બોધ્યો

૬૪. અર્જુનની ભગવદીયતા અને કૌરવોની લૌકિકતા, એમ પરસ્પર વિપરીતતા

૬૫ પ્રથમ પ્રાકૃત પુરુષોની પ્રાકૃત કથા કહી.

૬૬. બહિર્મુખતાસૂચક

૬૭. ઉદ્ભૂત છે મુખ જેનુ એવી (તત્પર) મતિ

૬૮. સદાસર્વદા ભગવદિચ્છાને જ અનુસરવુ એવી બુદ્ધિ ભગવદીયે રાખવી.

૬૯ ભગવદિચ્છાને અનુસરતી બુદ્ધિથી વિરુદ્ધ બુદ્ધિમાત્ર ભક્તિમાર્ગમા કુમતિ લેખાય છે.

૭૦ ભગવદિચ્છાને અનુસરતી બુદ્ધિથી વિરુદ્ધ બુદ્ધિમાત્ર કુમતિ ન કહેવાની હોય તો.

૭૧ મનુસ્મૃતિ ઇત્યાદિ ગ્રંથોમા

૭૨ અર્થશાસ્ત્રાદિકમા.

૭૩ ધર્મશાસ્ત્રાદિકમા ગુર્વાદિના વધનો નિષેધ છે

૭૪ ધર્મશાસ્ત્રાદિકમા નિષિદ્ધ ગુર્વાદિવધમાથી નિવૃત્તિ કરનારી અર્જુનની બુદ્ધિ ધર્મશાસ્ત્રાદિના દૃષ્ટિબિન્દુથી તો સુમતિ કહેવાય, તથાપિ ભક્તિમાર્ગના દૃષ્ટિબિન્દુથી અર્જુનની બુદ્ધિને કુમતિ કહેવામા આવે છે, કારણ કે, ભક્તિમાર્ગમા ધર્મશાસ્ત્રાદિકનો વિચાર પણ ન રાખતા, ભગવાનની આજ્ઞાને અનુસરે તે જ બુદ્ધિ સુમતિ કહેવાય છે. ભક્તિમાર્ગમા ભગવદાજ્ઞાનુ અનુસરણ એ જ ધર્મ, અને તેથી વિપરીત તે સર્વ જ વિપરીત

૭૫ વ્યવધાન પામેલી, દૂરસ્થિત, અથવા વિશેષે કરીને જનુ રહ્યું છે હિત જેમાથી એવી

૭૬ નિરખીને

૭૭ પાપની બીતિથી

૭૮ કૌરવાદિના વધથી.

૭૯. સ્વકીય જ્ઞાનવિદ્યા

૮૦. અત્ર શ્રીમદ્ભાગવતના પ્રથમ સ્કંધના નવમા અધ્યાયનો ૩૬મો શ્લોક જુઓ

૮૧ મન્વાદિ ધર્મશાસ્ત્રને અનુસરતી અર્જુનની મતિને કુમતિ ન કહેવાય એમ કોઇને શંકા થાય તો તેનુ નિવારણ કરે છે કે શ્રીમદ્ભાગવત જ અર્જુનની તે મતિને કુમતિ કહે છે.

૮૨ ભક્તિમાર્ગ અવૈદિક નથી, પણ લોકથી એને વેદથી અતીત નામ 'પેલે પાર' છે ભક્તિ-માર્ગની રીતિ લોક અને વેદથી વિલક્ષણ છે એ જણાવવાને આગલમા ધૃતરાષ્ટ્ર અને દુર્યોધનની કથા અને અર્જુનનો વિષાદ કહ્યો.

ભક્તિમાર્ગનો વિચાર કરવો એ યોગ્ય[૮૩] નથી, તેથી જ બ્રહ્મવિદ્યાનો ઉપદેશ થઈ રહ્યો કે ત્વરિત જ આસુરહનનરૂપ ભગવત્કાર્યમાં[૮૪] અર્જુનની પ્રવૃત્તિ થઈ. એથી[૮૫] 'આ ગીતાના શ્રવણથી અનન્તર સર્વત્યાગ ઉચિત હતો, ગુર્વાદિનું હનન ઉચિત ન હતું' એ પક્ષનો[૮૬] નિરાસ થયો એમ સમજવું. વસ્તુતઃ તો સર્વત્યાગ પણ આ[૮૭] જ, કારણ કે લોક અને વેદના ત્યાગપૂર્વક અત્ર ભગવાનનું જ ગ્રહણ થાય છે એથી જ, 'હે પાર્થ[૮૮], તે એકાગ્ર ચિત્તે આ શ્રવણ કર્યું કે?' એમ જ્યારે ભગવાને અર્જુનને પુછ્યું ત્યારે 'મોહ નષ્ટ થયો' એમ આરંભ કરીને 'આપનું વચન[૮૯] કરીશ' એમ અર્જુને ઉત્તર આપ્યું. તેથી[૯૦] અર્જુન કેવલ ભગવદ્દીય છે એમ ફલે છે. મુક્તિમાં રાજ્યાદિ પ્રતિબંધક[૯૧] છે એમ જાણીને જ રાજ્યાદિકનો ત્યાગ કરવામા આવે છે, પરન્તુ અર્જુનના તો રાજ્યાદિકમા પ્રભુસબંધ છે. તેથી[૯૨] તે[૯૩] તુચ્છતર[૯૪]

---

૮૩. ભક્તિમાર્ગના વિચારમા લોકની અને વેદની અપેક્ષા નથી, તેની અપેક્ષા રાખીને ભક્તિમાર્ગનો યથાયોગ્ય વિચાર જ થઈ શકતો નથી

૮૪ ભગવદિચ્છાનુસાર ભગવત્કાર્ય કરવું એમ ભક્તિમાર્ગીય મર્યાદા હોવાથી, ગીતાની બ્રહ્મવિદ્યાનો ઉપદેશ સમાપ્ત થયો કે ત્વરિત જ ભૂભારહરણરૂપ ભગવત્કાર્યમા પાર્થની પ્રવૃત્તિ થઈ.

૮૫ બ્રહ્મવાદનુ શ્રવણ થતા જ અર્જુનની પ્રવૃત્તિ ભગવત્કાર્ય કરવા તરફ થઈ, તેથી

૮૬. ભગવદ્ગીતાનુ શ્રવણ કરીને ગુરુવધ ન કરતા, અર્જુને સર્વત્યાગ કરવો હતો, એમ પૂર્વપક્ષીનું મતવ્ય છે તે યથાર્થ નથી. ભગવદ્ગીતાના શ્રવણથી અર્જુનને બ્રહ્મવાદનો બોધ થયો, અને ભગવત્કાર્યમા અર્જુનની પ્રવૃત્તિ થઈ એ જ યથાર્થ છે, કારણ કે ગીતામા બ્રહ્મવાદપૂર્વક ભક્તિમાર્ગની મર્યાદાનુ નિરૂપણ છે. ભગવાનને અધીન થઇ ને ભગવત્કાર્ય કરવા એ જ વાસ્તવિક સર્વત્યાગ છે, એ હમણાં જ કહેવાશે.

૮૭ અર્જુન આદિ બધાં કરે છે તે જ સર્વત્યાગ છે, કારણ કે ભક્તિમાર્ગીય સર્વત્યાગમા લોક એને વેદ ઉભયના ત્યાગપૂર્વક કેવલ ભગવાનનુ જ ગ્રહણ કરવામા આવે છે. ભગવત્કાર્યાર્થે લોક અને વેદ ઉભયનો ત્યાગ એ જ સર્વત્યાગ, અને એ સર્વત્યાગ ભક્તિમાર્ગમા જ દૃશ્યમાન થાય છે.

૮૮. યચ્ચેતત્શ્રુત પાર્થ ઇત્યાદિ શ્લોકનુ અત્ર અનુસંધાન કરો

૮૯, આપની આજ્ઞાને અનુસરીશ.

૯૦ યચ્છ્રેય વચન તત્ર એ અર્જુનના ઉત્તરથી

૯૧. મુક્તિમા પ્રતિબંધક પદાર્થનો ત્યાગ કરવો યોગ્ય છે, પરંતુ અત્ર તો ભગવદાજ્ઞાને અનુસરીને આસુરનુ હનન કરવામા આવે છે, અને આસુરના હનન પછી પ્રાપ્ત થયલા રાજ્યનુ પણ ભગવાનને જ સમર્પણ કરવામા આવે છે, તેથી રાજ્યાદિને પણ ભગવત્સબંધ છે, અને ભગવત્સબંધી પદાર્થનો ત્યાગ ન કરવામા આવે તોએ ભગવદીયકૃત સર્વત્યાગમા ન્યૂનતા રહી એમ કહી શકાય નહિ.

૯૨. રાજ્યાદિકને ભગવત્સબંધ હોવાથી.

૯૩. ભગવત્સબંધી રાજ્યાદિ.

૯૪. અત્યન્ત તુચ્છ આ અર્થથી એમ સિદ્ધ થાય છે કે ગીતામાં મુખ્યતાથી ભક્તિનો જ ઉપદેશ છે, અને બીજું બધું ભક્તિના ઉપદેશનુ જ અંગ છે.

નથી પરન્તુ ભગવદિચ્છાને અનનુરૂપ[૯૬] મતિ ભક્તમાં થઈ જ કેવી રીતએ ? એમ અત્ર સન્દેહ થતો હોય તો તેનુ પણ આ પ્રકારે નિરાકરણ કરવામાં આવે છે વસ્તુત અર્જુન ભગવદીય હતો, તથાપિ ભગવાને[૯૭] અદ્યાવધિ અર્જુનને નિજ ઇચ્છા જણાવી ન હતી તેથી ભગવાનને અધીન થઈને યુદ્ધાદિક કરીશ એવુ[૯૭] જ્ઞાન અર્જુનને ન હતું અર્જુનને તો એવુ જ જ્ઞાન હતુ કે હુ સ્વકીય ક્ષાત્ર ધર્મનુ અવલબન કરીને યુદ્ધાદિક કરીશ અર્જુનની તેવી[૯૮] કૃતિ ભક્તને શોભતી નથી, કારણ કે એવી કૃતિ તદીયત્વથી[૯૯] વિરુદ્ધ છે, તેથી તેના[૧૦૦] જ અત કરણને વિષે વિરાજમાન ભગવાનના અનુભાવે[૧૦૧] કરીને અર્જુનની તેવી[૧૦૨] મતિ ભગવદિચ્છાના[૧૦૩] પ્રાકટ્યના કારણભૂત[૧૦૪] થઈ અન્નભક્ષણ કરાવવાને ક્ષુધાનું ઉત્પાદન કરવાનુ આવે છે, તેમ ભગવદિચ્છાથી[૧૦૫] જ અર્જુનની તેવી મતિ થઈ. એથી[૧૦૬] પ્રભુતત્ત્વ પણ પ્રભુ જ્યારે જણાવવાની કૃપા

૯૫. અનુકૂલ નહિ એવી

૯૬. ઐશ્વર્ય-વીર્ય-શ્રી યશ -જ્ઞાન-અને વૈરાગ્ય એ છ 'ભગ' કહેવાય છે, ભગ જેનામા હોય તે ઐશ્વર્યવીર્યશ્રીયશોજ્ઞાનવૈરાગ્યવાન્ ભગવાન્

૯૭ ભગવાને અર્જુનને નિજ ઇચ્છા જણાવી ન હતી, તેથી અર્જુન સ્વકીય વર્ણાશ્રમધર્મનુ અવલબન કરીને યુદ્ધમા પ્રવૃત્ત થયો હતો, ભગવદ્ધર્મનુ અવલબન કરીને પ્રવૃત્ત થયો ન હતો ભક્તે વર્ણાશ્રમધર્મને અધીન થવાનુ નથી, પરતુ ભગવાનને અધીન થવાનુ છે, એટલુ જ નહિ પણ વર્ણાશ્રમધર્મને જ નિજ સ્થિત્યર્થ ભગવાનનુ અવલબન કરવુ પડે છે એ ભક્તિમાર્ગીય સિદ્ધાન્તની અત્ર વિસ્મૃતિ ન થવી જોઇએ

૯૮ કેવલ ક્ષાત્ર ધર્મનુ જ અવલબન કરીને યુદ્ધ કરવાની પ્રવૃત્તિ

૯૯ ભગવદીયને શોભતી ભગવદ્દીનતા

૧૦૦ અર્જુનના અર્જુન પુષ્ટિપુષ્ટિ કે શુદ્ધપુષ્ટિમા નથી પરતુ પુષ્ટિમર્યાદામા છે એ હમણાં જ કહેવાશે, તેથી પુષ્ટિમર્યાદાભક્ત અર્જુનના હૃદયમા વિરાજમાન ભગવાન્ પણ પુષ્ટિ-પુષ્ટિ કે શુદ્ધપુષ્ટિમાર્ગીય નથી, એ સૂક્ષ્મ દૃષ્ટિમાથી નિરીક્ષણ કરવા યોગ્ય છે

૧૦૧ સામર્થ્યે

૧૦૨ ભગવદ્ધર્મથી વિલક્ષણ, કેવલ વર્ણાશ્રમધર્મનુ અવલબન કરીને યુદ્ધ કરવાની

૧૦૩. કેવલ ભગવાનને જ અધીન થઈને યુદ્ધ કર એવી ભગવદિચ્છાના.

૧૦૪. વર્ણાશ્રમધર્મપૂર્વક યુદ્ધ કરવાની અર્જુનની કુમતિ જોઈને, ભગવાને અર્જુનને નિજ ઇચ્છા જણાવીને, તે કુમતિનો પરિહાર કર્યો, તેથી અર્જુનની કુમતિથી જ ગીતાદ્વારા ભગવદિચ્છાનુ પ્રાકટ્ય થયુ

૧૦૫ ક્ષુધા વિના વસ્તુત અન્નભક્ષણ થઈ શકતુ નથી, તેથી અન્નભક્ષણ કરાવવાની ઇચ્છાથી વૈદ્યરાજ પ્રથમ ક્ષુધા ઉત્પાદન કરાવે છે, તેમ ભગવાને પણ અર્જુનને વિષે નિજેચ્છાનુ પ્રાકટ્ય કરવાની ઇચ્છાથી જ પ્રથમ તેવી કુમતિ પણ પ્રકટ કરી, અર્થાત્ કુમતિ અને તેનો પરિહાર એ ઉભયનુ કારણ ભગવદિચ્છા જ છે.

૧૦૬ અર્જુન પણ સ્વસામર્થ્યથી ભગવદિચ્છા જાણી ન શક્યો તેથી, અથવા ભગવદિચ્છાથી જ અર્જુનની પણ તેવી મતિ થઈ તેથી.

કરે ત્યારે જ ભક્ત પણ તે તત્ત્વ જાણે છે. ભક્ત સ્વતઃ[૧૦૭] તે જાણી શકતો નથી. એમ સિદ્ધ થયું અપરંચ, પુષ્ટિમાર્ગમાં અંગીકાર હોય તો સ્વત જ પ્રભુતત્ત્વની સ્ફુર્તિ થાય જ, પરન્તુ પાર્થોનો તો અંગીકાર પુષ્ટિમર્યાદામાં[૧૦૮] છે, તેથી પ્રથમ અર્જુનની તેવી મતિ થઈ, અને પછીથી ઉપદેશે કરીને તે મતિની નિવૃત્તિ થઈ

ઉપસંહાર—આ પ્રકારે પિતૃચરણકમલના દાસ શ્રીવિટ્ઠલે ભક્તિમાર્ગની નિજહૃદય-સ્થિત મર્યાદા નિરૂપણ કરી

॥ इति श्रीमद्गोस्वामिश्रीविट्ठलेश्वरकृतगीतातात्पर्यस्य गुर्जरानुवादः सटिप्पणिकः समाप्त ॥

---

૧૦૭ ભગવાની સ્વકીય સાધનસામર્થ્યથી

૧૦૮. पुष्टिमार्गाङ्गीकारे स्वत एव तत्स्फूर्ति स्यादेव, पार्थास्तु पुष्टिमर्यादायामङ्गीकृता એ અનિમ પક્તિમા પુષ્ટિમાર્ગ અને પુષ્ટિમર્યાદામાર્ગ એ ઉભયની વિલક્ષણતા શ્રીગુસાઇજીએ સૂચન કરી છે પુષ્ટિમાર્ગમા પ્રભુતત્ત્વની સ્ફુર્તિ સ્વત જ થાય છે, પરતુ પુષ્ટિમર્યાદામાં તો પ્રભુ સ્વતત્ત્વ જણાવે ત્યારે જ પુષ્ટિમર્યાદા ભક્તને તે તત્ત્વનુ જ્ઞાન થાય છે પુષ્ટિમર્યાદાન્તર્ગત અર્જુનને પ્રથમ કુમતિ થઈ, અને તાદૃશ ભગવાને કૃપા કરીને તે કુમતિનો પરિહાર કર્યો શુદ્ધ-પુષ્ટિમાર્ગન્તર્ગત અને પુષ્ટિપુષ્ટિમાર્ગન્તર્ગત ગોપીજનને નથી થઈ કુમતિ, કે નથી કરવો પડ્યો ભગવાનને તે કુમતિનો પરિહાર

॥ શ્રી ગોકુલેશો જયતિ ॥

આ જગત્માં વિવિધ દુ ખના તાપથી તપતા સર્વ જનના મોક્ષમાટે શ્રુતિપુરાણોમા શ્રવણ વગેરેનુ પ્રતિપાદન કરેલું છે, અને તેમનો (શ્રવણ વગેરેનો) વિષય પ્રહ્મજ કહેલો છે. તે (પ્રહ્મ) નિર્ધર્મક કે સધર્મક એવી જીજ્ઞાસુની શકા થાય છે. કારણ કે તેનુ ઉભયરૂપથી વર્ણન કરેલુ છે.

કારણ કે, ૧. " હવે અહીથી નેતિ નેતિ એવો આદેશ છે " બૃ. મુ ૨. હાથ પગરહિત દોડનાર અને ગ્રહણ કરનાર ચક્ષુવિના જુએ છે અને કર્ણ વિના સાભળે છે ઇત્યે. ૩ ૩ ' તેણે કહ્યુ ગાર્ગિ આ તે અક્ષર છે જેને બ્રાહ્મણો અસ્થૂલ, અનણુ અહ્રસ્વ, અદીર્ઘ, અલોહિત, અસ્નેહ, અચ્છાય, અતમ અવાયુ, અનાકાશ, અસગ-સ્પર્શ, અગન્ધ, અરસ, અચક્ષુષ્ક, અશ્રોત્ર, અવાક્ અમન અતેજસ્ક, અપ્રાણ, અમુખ અનામ, અગોત્ર, અજર, અમર, અભય, અમૃત, અરજ અશબ્દ, અવિવૃત્ત અસંવૃત્ત અપૂર્વ અનપર, અનન્તર, અબ્રાહ્ય કહે છે કોઈ તેનો ભોગ કરતુ નથી તે કોઇનો ભોગ કરતુ નથી, બૃ ગા ૪ દિવ્ય અમૂર્ત પુરૂષ સબાહ્યાભ્યન્તર અજ છે ' મુ૦ ૫. શરીરોમા અશરીર. અનવસ્થમા અવસ્થિત, મહાન્ વિભુ આત્માનુ મનન કરી, ધીર શોક કરતો નથી, ક્ક ૬ 'પ્રાણરહિત મનરહિત શુભ્ર ' મુ ૭ 'આ પુરૂષ અસગ છે' બૃ જ્યો. ઇત્યાદિ શ્રુતિઓ, અને ૧ 'આ અવ્યક્ત અચિન્ત્ય , ગી૦ ૨ તે સત્ કે અસત્ કહેવાતુ નથી' મૈ૦ ૩ તે દેવ અસુર મર્ત્ય કે તિર્યક્ નથી, સ્ત્રી પણ પુમાન્ કે જન્તુ નથી, શુભ કે કર્મ નથી, સત્ કે અસત્ નથી નિષેધશેષ અશેષ જય પામો ' ભા૦ ઇત્યાદિ પુરાણવાક્યો નિર્વિશેષ પ્રહ્મનુ પ્રતિપાદન કરે છે ૧ ' જેમાંથી આ ભૂતો ઉત્પન્ન થાય છે, જેનાથી ઉત્પન્ન થએલા જીવે છે, જેમા લય પામી તન્મય થાય છે ખરે, આનન્દમાત્રીજ આ સર્વ ભૂતો ઉત્પન્ન થાય છે, ' તૈ ૨ 'તેણે વિચાર્યુ તેણે 'હુ પ્રહ્મ થઉ' એમ આત્માનેજ જોયુ ' પ્ર ૩ ' સર્વને વશ રાખનાર સર્વનો ઇશાન' બૃ૦ ' જે સર્વજ્ઞ સર્વશક્તિ ' ૪ વિશ્વત ચક્ષુવાળા, વિશ્વત મુખવાળા, વિશ્વત બાહુવાળા, વિશ્વત પાદવાળા એક (જ) દેવ દ્યાવાપૃથિવીને ઉત્પન્ન કરત બાહુવડે પતત્રવડે સયોગ કરે છે. ' તૈ ઋ૰ ૫ ' સર્વકામ, સર્વગન્ધ, સર્વરસ ઇત્યાદિ શ્રુતિઓ અને ૧ સર્વત્ર પાણિ અને પાદના અન્તવાળું, સર્વત્ર અક્ષિ શિર: અને મુખવાળુ સર્વત્ર કર્ણવાળુ, લોકમાં સર્વ ઢાકીને રહે છે ' ગી. ૧૩ નિર્દોષ અને પૂર્ણગુણ વિગ્રહવાળા, આત્મતત્ર નિશ્ચેતન શરીરના ગુણવિનાના કેવલ આનદનાજ કર પાદ મુખ ઉદર વગેરે વાળા અને સર્વત્ર સ્વગતભેદરહિત ' ના પદ્ય ઇત્યાદિ સ્મૃતિઓ અવિશેષ પ્રહ્મનું પ્રતિપાદન કરે છે આ બેમાથી યોગ્ય શુ છે ?

પૂ૰ (પ્રહ્મ) નિર્વિશેષ (છે) એજ (યોગ્ય છે) (૧) કોઇ પણ વિષયમાં સશય હોય તેનુ નિવારણ કરવા ગ્રથ રચાય તો તે યોગ્ય કહેવાય કોઈ સ્થલે સશય ન હોય તો ગ્રથ રચવાનુ કાઇ પણ પ્રયોજન રહે નહિ આ ગ્રથ પણ કોઇ સશય

દૂર કરવા રચેલો હોવો જોઇએ, નહિતો ગ્રથ રચવામા કાંઇ પ્રયોજન ન હોવાથી તે નિરર્થક થઇ જાય તેથી પ્રથમ સશય દર્શાવે છે.

આ જગત્મા વિવિધ દુ ખના તાપથી લોકો તપે છે, અનેક જન્મથી દુ મહુ દુ:ખથી લોકો પીડાય છે. તેઓના મોક્ષ માટે શ્રુતિમા અને પુરાણોમા શ્રવણ મનન અને નિદિધ્યાસનનુ પ્રતિપાદન કરવામાં આવેલુ છે આ લોકો શ્રવણ ઇત્યાદિ કરે તો તેમને મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય અને દુ.ખ નાશ પામે એમ વેદ અને પુરાણ ઉપદેશ કરે છે આ શ્રવણ વગેરે બ્રહ્મનાજ કરવાના કહેલા છે બ્રહ્મ અથવા ભગવાન્નું શ્રવણ મનન અને નિદિધ્યાસન કરે તો દુ ખથી પીડાતા લોકો દુ.ખથી મુક્ત થઇ મોક્ષ પ્રાપ્ત કરે. ' આત્માનું (પરમાત્માનું) દર્શન કરવુ, શ્રવણ કરવુ , મનન કરવુ, અને નિદિધ્યાસન કરવું ' શ્રુતિ, અને 'વિષ્ણુનું શ્રવણ, કીર્તન, સ્મરણ, પાદસેવન, અર્ચન, વદન દાસ્ય, સખ્ય, અને આત્મનિવેદન ' એ પુરાણવાક્ય એજ ઉપદેશ કરે છે. બ્રહ્મના શ્રવણ ઇત્યાદિ કરવાના છે બ્રહ્મ ધર્મવાલુ છે કે ધર્મરહિત છે, બ્રહ્મને ગુણ છે કે નથી એ સશય થાય છે આ સશય દૂર કરવો એ આ ગ્રથ રચવાનુ એક પ્રયોજન છે આ સશય ઉત્પન્ન થવાનુ કારણ એ છે કે બ્રહ્મને કેટલાક વેદવાકયમા નિર્ધર્મક અથવા ધર્મરહિત કહેલુ છે તેજ પ્રમાણે કેટલાક પુરાણવાકયમા સધર્મક અને કેટલાકમાં નિધર્મક કહેલુ છે.

(૨) કઇ શ્રુતિ અને કયા પુરાણ વાકયમાં બ્રહ્મ નિર્ધર્મક કહેલુ છે, અને કયા કયાં તેને સ્રધર્મક કહેલુ છે તે જણાવે છે પ્રથમ નિર્ધર્મક વાકયો જણાવે છે, ૧ ' હવે અહિથી નેતિ નેતિ એવો આદેશ છે ' આ વાકય બૃહદારણ્યક ઉપનિષત્મા મૂર્તામૂર્ત બ્રાહ્મણમા છે આ વાકય પ્રપચમાં મૂર્ત અને અમૂર્ત એવાં જે બે રૂપ છે તેનો બ્રહ્મમા નિષેધ કરે છે મૂર્ત અર્થાત્ અમુક પરિમાણવાળુ, અમુક કદવાળું અથવા ક્રિયાવાળુ મૂર્ત નહિ તે અમૂર્ત પ્રપચમા મૂર્ત અને અમૂર્ત એવા બે રૂપ છે. અમુક પદાર્થ જેવાં કે વૃક્ષ, પશુ, મનુષ્ય વગેરે મૂર્ત છે અને અમુક પદાર્થો જેવા કે આકાશ, દિશા વગેરે અમૂર્ત છે બ્રહ્મમાં મૂર્ત અથા અમૂર્ત રૂપ નથી એમ આ વાકય કહે છે. ૨ હાથ પગ રહિત દોડનાર અને ગ્રહણ કરનાર ચક્ષુવિના જૂએ છે અને કર્ણ વિના સાંભળે છે શ્વેતાશ્વતર ઉપનિષત્ અધ્યાય ૩. આની પછી ' તે જાણવાનુ જાણે છે ' તેને જાણનાર કોઇ નથી, તેને અગ્ર મહાન્ પુરુષ કહે છે ' વાકય છે. અજ્ઞાનના સાક્ષી તરીકે જતો હોય તેમ ભાસ છે તેથી દોડનાર છે અજ્ઞાનના સાક્ષી તરીકે ગ્રહણ કરતો હોય તેમ જણાય છે તેથી ગ્રહણ કરનાર તેજ પ્રમાણે અજ્ઞાનના સાક્ષી તરીકે જોતો હોય અને સાભળતો હોય તેમ ભાસે છે તેથી તે 'જૂએ છે' અને ' સાભળેછે ' એમ ઉપદેશ છે. વસ્તુત: તેને પગ, હાથ, ચક્ષુ. અથવા કર્ણ નથી તેથી તે દોડી, ગ્રહણ કરી જોઇ અથવા સાભળી શકે નહિ, પરંતુ અજ્ઞાનના સાક્ષી તરીકે આ કાર્ય કરતો હોય તેમ ભાસે છે તેથી તે કાર્ય કરે છે એમ લખ્યુ છે ૩, તેણે કહ્યુ ગાર્ગિ આ તે અક્ષર છે જેને બ્રાહ્મણો. તે કોઇનો ભોગ કરતું નથી. બૃહદારણ્યકોપનિષત્ અધ્યાય ૨ ગાર્ગિબ્રાહ્મણ અક્ષર અર્થાત્ જડથી ભિન્ન

તે સ્થૂલથી ભિન્ન છે, સ્થૂલ નથી અનણુ. અણુથી ભિન્ન હ્રસ્વથી ભિન્ન અદીર્ઘ દીર્ઘથી ભિન્ન આ ચાર વિશેષણ પરિમાણુ અથવા કદનો નિષેધ કરે છે તેને પરિમાણુ નથી. અલોહિત રતુ નહી તે અલોહિત હોવાથી તે અગ્નિથી ભિન્ન છે અથવા અગ્નિ નથી, અસ્નેહ સ્નેહરહિત સ્નેહ જલનો ગુણ છે લોટ અથવા બીજા કોઈપ્રકારના ભૂકામાં જલ નાખીએ તો તેના અણુઓ એકત્ર થઇ જાય છે, અને તેનો પિણ્ડ બનાવાય છે. જલના જે ગુણને લીધે આ પ્રમાણે અણુઓ એકત્ર થાય છે તેને સ્નેહ કહે છે તે સ્નેહરહિત હોવાથી જલ નથી. અચ્છાય છાયા અથવા દીપ્તિથી ભિન્ન અતમ અધકારથી ભિન્ન અવાયુ વાયુથી ભિન્ન, અનાકાશ આકાશથી ભિન્ન પ્રથમ ચાર વિશેષણથી પરિમાણુનો નિષેધ કર્યો, તેથી તે મૂર્ત નથી એમ સિદ્ધ થયુ. વાયુ અને આકારથી ભિન્ન હોવાથી તે અમૂર્ત દ્રવ્ય પણ નથી અસગ સગથી ભિન્ન ને વાસના પણ નથી અસ્પર્શ સ્પર્શથી ભિન્ન, અગધ, ગધથી ભિન્ન, અરસ રસથી ભિન્ન. આ વિશેષણો રૂપ, રસ, ગન્ધ વગેરે ગુણનો નિષેધ કરેછે અચક્ષુષ્ક ચક્ષુથી ભિન્ન અશ્રોત્ર કર્ણથી ભિન્ન અવાક્ વાણીથી ભિન્ન, અમન મનથી ભિન્ન આ વિશેષણો તે ચક્ષુ વગેરે ઇન્દ્રિય નથી એમ કહે છે અતેજસ્ક તેજ અથવા વૃત્તિરૂપ જ્ઞાનથી ભિન્ન, અપ્રાણ પ્રાણથી ભિન્ન, અમુખ મુખથી ભિન્ન અનામ નામ અર્થાત્ નામથી ઉપલક્ષિત શરીરથી ભિન્ન વગેરે અવિવૃત ખુલ્લુ નહિ તે અનન્તર અછિદ્ર અસવૃત ઢાકેલુ નહિ તે પ્રત્યેકનો નિષેધ કરવો અશકય હોવાથી, ભોકતા અથવા ભોગ્ય તરીકે સર્વને ગણી તેમનો નિષેધ કરે છે કોઇ તેનો ભોગ કરતુ નથી, તે કોઇનો ભોગ કરતુ નથી, અર્થાત્ તે ભોગ્ય નથી અને ભોકતા પણ નથી. ૪ 'તે દિવ્ય અમૂર્ત પુરૂષ બાહ્યાભ્યન્તર અજ છે' મુડકોપનિષત્ દિવ્ય અર્થાત્ દ્યોતનવાલો અથવા દિવિ એટલે પોતામાજ ભવ એટલે ઉત્પન્ન થએલો અર્થાત્ અલૌકિક અમૂર્ત અર્થાત્ પ્રથમ મૂર્તિથી રહિત પુરૂષ અર્થાત્ પૂર્ણ બાહ્યાભ્યન્તર અર્થાત્ બહાર-નામને અદરના ભાગે રહે છે તે અજ પોતાથી અન્ય કોઇ પણ નિમિત્ત નહિ હોવાથી કોઇ પણ પદાર્થમાથી ઉત્પન્ન થતો નથી તેથી અજ, આ પદથી સર્વ ભાવ-વિકારનો નિષેધ થાય છે કારણ કે સર્વ ભાવવિકાર જન્ય છે અથવા ઉત્પન્ન થાય છે, અને આ અજ અથવા અજન્ય છે અજ પદથીજ જરા, મરણ, ભય, ક્ષય વગેરેનો નિરાસ થાય છે આ પ્રમાણે આ શ્રુતિનો અર્થ માયાવાદી કરે છે સિદ્ધાન્ત પ્રમાણે અર્થ ભિન્ન છે દિવ્ય અર્થાત્ અલૌકિક, અમૂર્ત-'આટલુ' એમ પરિમાણુ અથવા કદ રહિત, 'બાહ્યાભ્યન્તર' માથી 'સ' પદ છુટું છે સ તે, લોક અને વેદમા પ્રસિદ્ધ બાહ્યાભ્યન્તર—બહાર અને અદર રહે છે તે. ૫ -શરીરોમા અશરીર, અનવસ્થમાં અવસ્થિત મહાન્ વિભુ આત્માનુ મનન કરી ધીર શોક કરતો નથી શકરાચાર્યના ગત પ્રમાણે આનો અર્થ નીચે પ્રમાણે છે અશરીર-સ્વરૂપથી આકાશ જેવુ શરીરોમા—દેવ, નાનાં પ્રાણી વિગેરે રૂપોમા, અનવસ્થ—અવસ્થા રહિત અથવા નશ્વર પદાર્થમાં, અવસ્થિત રહેલુ તેથી નિત્ય અને વિકારરહિત એવો અર્થ થાય છે. મહાન્ અને વિભુ. મહત્ (મોટુ) શબ્દ લઘુની અપેક્ષા રાખનાર હોવાથી વિભુ અર્થાત્ વ્યાપક પણ કહ્યું પોતાનાથી ભિન્ન નથી, પોતાથી અનન્ય છે એમ દર્શાવવા 'આત્મા' શબ્દનો

પ્રયોગ કર્યો છે એવા આત્માનુ મનન કરીને, 'આ હુ કુ' એમ જાણીને, ધીર અર્થાત્ બુદ્ધિમાન્ પુરૂષ શોક કરતો નથી, અર્થાત્ શોકથી મુક્ત થાય છે સિદ્ધાન્તમાં આ જીવપ્રકરણ નથી પરતુ બ્રહ્મપ્રકરણ છે. કારણ કે પૂર્વ 'સર્વ વેદ જેના પદનું ધ્યાન કરે છે' ઇત્યાદિ કહેલુ છે અર્થ નીચે પ્રમાણે થાય છે. અશરીર—શરીર અથવા વિશરણ, એટલે નાશ પામવાનો સ્વભાવ જેમા નથી તે અર્થાત્ જેના ધર્મ નિત્ય છે અથવા લૌકિક શરીર જેને નથી તે મહાન્—સર્વ પ્રકારે મોટુ', 'તેની સમાન કોઈ નથી' ઇત્યાદિ શ્રુતિમા કહ્યા પ્રમાણે સર્વપ્રકારે મોટુ વિભુ—વ્યાપક, અનવસ્થ-અવસ્થારહિત અર્થાત્ જેનો તિરોભાવ થાય છે એવા પદાર્થોમા, અવસ્થિત રહેલુ. શંકરાચાર્યના અર્થ પ્રમાણે અશરીર, મહાન્ અને વિભુ એ ત્રણે પદ એકજ અર્થનો બોધ કરનાર હોવાથી બે પદ વ્યર્થ થાય છે. ૬ 'પ્રાણરહિત મનરહિત શુભ્ર' મુંડક ઉપનિષત્ શુભ્ર-શુદ્ધ. 'પ્રાણરહિત' આદિ પદ કરણનો નિષેધ કરે છે ૭ 'આ પુરૂષ અસંગ છે' બૃહદારણ્યક ઉપનિષત્ જ્યોતિર્બ્રાહ્મણ આ જીવપ્રકરણ છે, સ્વપ્નમા સ્ત્રીનો સંગ રમણ ઇત્યાદિ થાય તેના પાપથી જીવ લેપાતો નથી, એવો અર્થ છે આ અર્થ માયાવાદમા અને સિદ્ધાન્તમા તુલ્યજ છે આ શ્રુતિઓ બ્રહ્મ નિર્ધર્મક છે એમ પ્રતિપાદન કરે છે બ્રહ્મને નિર્ધર્મક વર્ણવનારી સ્મૃતિઓ હવે કહે છે ૧ 'આ અવ્યક્ત અચિંત્ય' ભગવદ્ગીતા જીવપ્રકરણમા આ વાક્ય છે અવ્યક્ત—અદૃશ્ય અથવા અસ્પષ્ટ. અચિંત્ય-વિચારી ન શકાય તેવો ૨ 'તે સત્ કે અસત્ કહેવાતુ નથી.' ભગવદ્ગીતા. જ્ઞેય (બ્રહ્મ) વિષે આ વાક્ય કહેલુ છે સત્—નામ અને રૂપથી સ્પષ્ટ થએલુ અસત-નામ અને રૂપથી સ્પષ્ટ નહિ થએલુ ૩ તે દેવ અસુર . નિષેધશેષ અશેષ જય પામે. શ્રીમદ્ભાગવતમા આઠમા સ્કંધમા આ ગજેંદ્રનુ વાક્ય છે અહિ દેવ વગેરેના નિષેધથી તેઓના રૂપનો નિષેધ કરેલો છે અર્થાત્ તે દેવરૂપ, અસુરરૂપ વગેરે નથી. 'જન્તુ નથી' ત્રણે જાતિથી શૂન્ય સર્વ પ્રાણીઓનો નિષેધ કરેલો છે. સર્વનો નિષેધ કર્યા પછી બાકી જે રહે તે નિષેધશેષ વળી માયાથી સર્વરૂપ પણ તેજ છે, તેથી 'નિષેધશેષ અશેષ' કહેલુ છે એવો શંકરાચાર્ય પ્રમાણે અર્થ થાય છે સિદ્ધાન્તમાં વિરુદ્ધ સ્વધર્મનો આધાર હોવાથી સર્વાત્મક છે, તેથી 'અશેષ' કહેલુ છે

એ પ્રમાણે નિર્વિશેષ બ્રહ્મનુ પ્રતિપાદન કરનાર શ્રુતિ અને સ્મૃતિઓ કહી, હવે સવિશેષ બ્રહ્મનુ પ્રતિપાદન કરનાર શ્રુતિ અને સ્મૃતિઓ કહે છે. ૧. 'જેમાથી આ ભૂતો ઉત્પન્ન થાય છે' તૈત્તિરીય ઉપનિષત્, ભૃગુપ્રપાઠક. આ બ્રહ્મનુ લક્ષણ છે. 'આ ભૂતો' અર્થાત્ બ્રહ્માથી આરંભી તૃણના તરખલાં સુધીના સર્વ પ્રાણીઓ જીવે છે—પ્રાણ ધારણ કરે છે. ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને પ્રલય કાલમા પણ પ્રાણીઓ બ્રહ્માત્મતાનો ત્યાગ કરતા નથી. શંકરાચાર્યના મતમા ઉપહિત અર્થાત્ માયાની ઉપાધિવાળુ બ્રહ્મ જ જગતનુ ઉપાદાન કારણ હોવાથી આ પરબ્રહ્મનુ વાસ્તવિક લક્ષણ નથી, પરતુ તટસ્થ લક્ષણ છે સિદ્ધાન્તમા પરબ્રહ્મ જ જગતનું ઉપાદાન કારણ છે. જે પદાર્થની અમુક વસ્તુ બને છે તે વસ્તુનું તે પદાર્થ ઉપાદાન કારણ કહેવાય છે જેમકે માટીનો ઘડો બને છે તેમાં માટી ઘડાનુ ઉપાદાન કારણ છે. ૨ તેણે વિચાર્યું . ...જોયું' પ્રશ્નોપનાનુ શંકરાચાર્યના મતમા આ વિચારનાર 'તે' સમજવો છે. સિદ્ધાન્તમા તે બ્રહ્મજ છે

શંકા—નૈયાયિકોએ કલ્પેલા ચાર અભાવો પૈકી પેહેલા બે અભાવો (પ્રાગભાવ અને પ્રધ્વંસાભાવ) શ્રુતિ અને યુક્તિ આગળ ટકી શકતા નથી. એ તમોએ સારીરીતે સિદ્ધ કરી બતાવ્યુ. એટલે તે બે અભાવોના વ્યર્થપણા માટે કશો પણ સંશય રહ્યો નથી પરન્તુ ત્રીજો અન્યોન્યાભાવ તો એટલો બધો અનુભવસિદ્ધ છે કે, તેને જો તમે નહિ સ્વીકારો તો તમારા સિદ્ધાન્તમાં ઘણા દોષ પ્રાપ્ત થશે.

અન્યોન્યાભાવ એટલે જુદી જુદી વસ્તુઓમા રહેનારો જુદી જુદી વસ્તુઓનો અભાવ દૃષ્ટાન્ત-ઘટ પોતે કઇ પટ નથી, એ અનુભવથી ઘટમા પટનો અભાવ જણાય છે તેમજ પટને પણ ઘટ નથી કેહેવામા આવતો માટે પટમા પણ ઘટનો અભાવ રહે છે એમ અન્યોન્ય (પરસ્પર) એકમેકનો એકમેકમા અભાવ જણાય છે, તેને અન્યોન્યાભાવ કેહેવામા આવે છે

પેહેલાં ભગવાન્ અને પ્રપંચમા (જગત્મા) કઇપણ ભેદ નથી એમ નિશ્ચય કરેલો છે એટલે ભગવાન્ અને પ્રપંચની વચ્ચે અન્યોન્યાભાવને પેસાડવાની કોશેશ વ્યર્થ જ છે નિષ્ફલ છે પરતુ અન્યોન્યાભાવને ઘટાડવા માટે ઉપર જે દૃષ્ટાન્ત આપેલ છે, તે ઠેકાણે તો અન્યોન્યાભાવ સ્પષ્ટ છે કિંતુ તે ઠેકાણે તો તે અભાવ માનવામાં તમોએ અત્યાર સુધી કરેલા સિદ્ધાન્તો પણ આડા આવે તેમ જણાતુ નથી કેમ કે ઘટ અને પટ વગેરે પદાર્થો પ્રપંચના પેટામા આવેલા છે તમોએ તો આખા પ્રપંચને અને ભગવાન્ને એક ઠરાવેલ છે, પણ પ્રપંચના પેટામા રહેલા ભિન્ન ભિન્ન અનુભવાતા પદાર્થોની એકતા નથી સિદ્ધ કરી પ્રપંચમા રહેલી જુદી જુદી વસ્તુઓ તો કંઇ એક નજ કેહેવાય! તેથી એકમેકનો અભાવ એકમેકમા હોવોજ જોઇએ તેને જ નૈયાયિકો અન્યોન્યાભાવથી ઓળખે છે.

હવે આ અન્યોન્યાભાવ તો તમારે પણ માનવો જ પડશે નહિ માનો તો પ્રપંચના પેટામા આવેલી સર્વ વસ્તુઓને એક જ માનવી પડશે, તે જુદી નથી એમ સ્વીકારી લેવુ પડશે, એટલે તુરત ઘટ અને પટ જુદા ન હોવાથી પટનુ ઢાકવાનુ—આચ્છાદન કરવાનુ કાર્ય ઘટ પણ કરી લેશે! ઘટનુ જલ ભરવાનુ કાર્ય પટથી પણ થઇ શકશે!! વધારે તો શુ પણ પ્રાપંચિક સર્વપદાર્થો એક હોવાથી ફક્ત એક જ વસ્તુથી તમામ પ્રાપંચિક પદાર્થોના કાર્યો થઇ જશે!!! વિચાર કરતા આથી બીજા પણ અનેક દૂષણો જોહોરી લેવા પડશે માટે અન્યોન્યાભાવ સ્વીકાર્યા વગર છુટકો નથી

સમાધાન—શ્રુતિ (વેદ) કહે છે કે,-'હું[1] એક છુ છતા બહુરૂપે થાઉ એવી ઇચ્છાથી ભગવાન્ બહુરૂપે થયા છે આ ઠેકાણે એ વિચારવાનુ છે કે ભગવાન્ બહુરૂપે થયા એમ શ્રુતિ કહે છે, એક પ્રપંચરૂપે જ થયા એમ નથી વર્ણવતી. બહુરૂપે થયેલા કયારે ગણાય? જ્યારે પ્રપંચમા ભિન્ન ભિન્ન જણાતી વસ્તુઓ પણ ભગવાન્ જ છે, એમ નિશ્ચય કરીએ ત્યારે ભગવાન્ જ ઘટ, ભગવાન્ જ પટ અને સર્વ ભિન્ન જણાતા પદાર્થો પણ ભગવદ્રૂપ જ છે આ જ શ્રુતિનો યથાર્થ ઉપદેશ છે

---

१ एकोऽहं बहु स्याम्

ભગવાન્ બહુરૂપે થયા છે, ભગવાન્મા સર્વધર્મો છે, ઘટ પણ ભગવાન્ જ છે, બીજા સર્વ પદાર્થ ભગવાન્ જ છે, માટે ઘટમા અને અન્ય સર્વપદાર્થોમાં સર્વધર્મ છે ઘટમાં જેમ ઘટનો પોતાનો સ્વતન્ત્ર ધર્મ છે, તેમ બીજા તમામ પદાર્થોના ધર્મો પણ ઘટમાં રહેલા છે ઘટમા પણ સર્વધર્મ છે તેથી પટનો પણ ધર્મ ઘટમાં માનતા ઘટ પટનું આચ્છાદન કરવાનુ કાર્ય કેમ ન કરી શકે? તેમજ બીજા સર્વપદાર્થોના કાર્યો ઘટથી કેમ નથી થતા? આ પ્રશ્નનું ઉત્તર એવું છે કે-ઘટ ભગવદ્રૂપ હોવાથી ઘટમાં સર્વધર્મ છે તેમા કશો પણ સશય નથી, પરતુ ઘટમા ભગવાન્ની જ ઇચ્છાથી ફક્ત ઘટનો જ ધર્મ પ્રકટ છે બીજા સર્વ ધર્મો ગુપ્ત છે. તેમ જ સર્વપદાર્થમાં પોતપોતાના ધર્મ પ્રકટ હોઇ બીજા અન્ય સર્વ ધર્મો ગુપ્ત રહે છે. માટે કોઇ પણ પદાર્થ બીજા પદાર્થનુ કામ કરી શકે નહી ઘટથી તેનુ જલ ભરવાનુ જ કાર્ય થઈ શકે કારણ ઘટમાં ઘટનો જ ધર્મ પ્રકટ છે ઘટથી પટનુ ઢાંકવાનું કાર્ય ન થઇ શકે કારણ કે તેમાં પટનો ધર્મ ગુપ્ત છે આવી વેદસિદ્ધ વ્યવસ્થા સર્વત્ર સમજી લેવી.

વળી ભગવાને પહેલેથી જ એવો નિયમ કરેલો હોય છે કે, આ પદાર્થરૂપે હું આટલુ કાર્ય કરીશ ઘટરૂપે જલ ભરવાનુ વગેરે. વાસ્તે એકમેકનું કાર્ય એકમેકથી થતું નથી. ભગવાન્ની ઇચ્છા એક પદાર્થથી જ સર્વ કાર્ય કરવાની હોય તો બહુરૂપે શામાટે થાય? રમણ કરવા સારૂ બહુરૂપે તો થયા છે. માટે ઘટ વગેરે સર્વે પદાર્થો ભગવદ્રૂપ છે, તેમાં સર્વે ધર્મો પણ છે. એ નિ સંશય સિદ્ધ થયું.

હવે ઘટ એ પટ નથી અર્થાત્ ઘટમા પટાભાવ છે, એમ કેમ કહેવાય? તેમ જ પટ એ ઘટ નથી એટલે પટમાં ઘટાભાવ છે, એમ પણ કેમ કહેવાય? ઉપરના અનુભવથી નૈયાયિકોએ કલ્પેલો અન્યોન્યાભાવ પણ શી રીતે ગળે ઉતરે? આ પ્રમાણે શ્રુતિ અને યુક્તિના બલથી બલવાન્ બનેલા સિદ્ધાંત આગળ માનુષકલ્પનાના નહિ જેવા ટેકાવાળો અન્યોન્યાભાવ અત્યત નિર્બલ થઇ તદ્દન વ્યર્થ થઇ જાય છે

લાયનીય શ્રુતિમા કહ્યુ છે કે-—[1]'સર્વ સર્વસ્વરૂપ છે' એટલે સર્વ પદાર્થ સર્વ પદાર્થ રૂપ છે, એટલે સર્વ પદાર્થમાં સર્વ ધર્મો છે. એથી જ ઉપનિષદ્મા 'તે[2] અથવા આ જોઇને વામદેવઋષિને જ્ઞાન થયું કે હું જ મનુ હતો અને હું જ સૂર્ય હતો' આ રથલે કહેલો સર્વાત્મભાવ પણ ઘટે છે ને જો અન્યોન્યાભાવ માનીએ તો વામદેવ ઋષિ મનુ પણ નહિ કહેવાય અને સૂર્ય પણ નહિ કહેવાય અને શ્રુતિ ખોટી ઠરશે! માટે અન્યોન્યાભાવ તો બ્રહ્મવાદમાં બહુ જ બાધક છે

હવે બાકી રહેલા છેલ્લો ચોથો અભાવ અત્યંતાભાવ' જે કે અન્યોન્યાભાવના ખંડનથી આ અભાવ પણ ખંડિત જ છે, તો પણ તેનો અત્ર ઉહાપોહ કરવો ઉચિત લાગે છે.

---

૧ સર્વં સર્વમયમ્ ૨ તદ્વૈતદ્ પશ્યન્નૃષિર્વામદેવ પ્રતિપેદેઽહં મનુરભવં સૂર્યશ્ચ.

જે ઠેકાણે ઘટ નથી જોવામાં આવતો તે ઠેકાણે ઘટ નથી, એવો વ્યવહાર જોવામા આવે છે. તે અનુભવ આગળ કરીને તે લોકો (નૈયાયિકો) ત્રીજો અત્યતાભાવ માને છે અત્યન્તાભાવ એટલે વસ્તુનુ તદ્દન નહિ હોવાપણુ. ઘટ જ્યાં ન હોય ત્યાં ઘટનુ તદ્દન નહિ હોવાપણુ તે લોકો કબૂલે છે. હવે જો કે જે ઠેકાણે ઘટ નથી તે ઠેકાણે ઘટનો અભાવ જણાય છે, પણ તે વાસ્તવિક નથી ભલે તે સ્થલે ઘટ ન હોય પણ બીજો પદાર્થ તો અવશ્ય હશે જ અરે છેવટે તણુખલુ અથવા આકાશ તો હશે જ! સર્વ પદાર્થ સર્વરૂપ છે, એમ આપણે શ્રુતિથી સિદ્ધ કરી ગયા એટલે જે ઠેકાણે ઘટ નથી તે ઠેકાણે તણુખલા રૂપે અથવા તો આકાશરૂપે તો ત્યાં ઘટ છે જ તેથી તે ઠેકાણે ઘટનુ તદ્દન નહિ હોવાપણું જણાવનાર અત્યંતાભાવ પણ શ્રુતિ તથા યુક્તિથી વેગળો છે માટે તેને સ્વીકારવાની પણ કશી અગત્ય નથી

ઉપર મુજબ નૈયાયિકોએ વ્યર્થ કલ્પનાકૂટથી ઉપજાવી કાઢેલા ચારે અભાવો શ્રુતિ તથા સદ્યુક્તિ આગળ ટકતા નથી પ્રભુની આવિર્ભાવ અને તિરોભાવ રૂપી બે શક્તિથી જ બધી શાસ્ત્રવ્યવસ્થા સુયોગ્ય છે આજ બ્રહ્મવાદનો અતિશ્રેષ્ઠ સિદ્ધાંત છે

આ પ્રમાણે ગ્રંથકાર નૈયાયિકોના અભાવોનુ ખંડન કરી પ્રતિપાદન કરેલા વૈદિકસિદ્ધાંતનો નિશ્ચય ભૂલી ન જવાય માટે ફરી કહે છે

સર્વ પદાર્થ સર્વરૂપ છે. સર્વ પદાર્થ સર્વસ્થલે રહે છે સર્વ પદાર્થ ભગવદ્રૂપ છે તેથી જ આ વાદને જ શુદ્ધ બ્રહ્મવાદ કહેવામા આવે છે કારણરૂપ બ્રહ્મ કાર્યરૂપ જગત્રૂપે પરિણમે છે, કારણ બ્રહ્મ છે કાર્ય જગત્ છે કારણ અને કાર્યમાં ભેદ નથી શ્રીવ્યાસજી પણ કહે છે કે,-"[1]ભગવાનની જ આ કૃતિ છે અને તે જ આ જગદ્રૂપે પરિણામ પામે છે જેમ મોહોટું વસ્ત્ર પોહોળુ કરીએ-ઉકેલીએ ત્યારે ચોમેર ફેલાઇ રહે છે, અને તેને સકેલી લઇએ ત્યારે ઘણુ જ ટુકામા આવી રહે છે' તેમજ ભગવાન્ જગત્નો આવિર્ભાવ કરી ફેલાવે છે અને સકેલી પણ લે છે આ વાદ વિસ્તારથી જાણવા ઇચ્છનારાઓએ નિબંધના સર્વનિર્ણય નામના પ્રકરણમાં જોઇ લેવો નિબંધમા શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે;-આ પ્રપંચ ભગવાન્મા જ ગુપ્ત રહ્યો હતો તે ભગવદિચ્છાથી જ પ્રકટ થયો છે

હવે પ્રપંચના પેટામાં આવેલા ઘટ વગેરે પદાર્થોની કાર્યકારણવ્યવસ્થા આ પ્રમાણે સમજવી ઘટ તે કાર્ય અને મૃત્તિકા તે કારણ કારણરૂપ મૃત્તિકામાથી ભગવદ્રૂપ ઘટનો આવિર્ભાવ થાય છે આપણા સિદ્ધાંતમા કાર્ય કારણ વચ્ચે તદ્દાવત્ત માનવામા નથી આવતો, માટે કાર્ય અને કારણ જુદી રીતે સમજાવવા માટે ગ્રંથકાર તેનો પ્રકાર જણાવે છે

જે ભગવદ્રૂપમા બીજા ભગવદ્રૂપનો આવિર્ભાવ થાય તે ભગવદ્રૂપ પદાર્થ કારણ કહેવાય મૃત્તિકારૂપી ભગવદ્રૂપમાથી ઘટરૂપ ભગવદ્રૂપનો આવિર્ભાવ થયો માટે મૃત્તિકારૂપી ભગવદ્રૂપ કારણ છે. તેમ જ જે ભગવદ્રૂપ પદાર્થનો આવિર્ભાવ થાય તે કાર્ય.

---

1 अत्मकृतेः परिणामात् पटवच्च

મૃત્તિકામાથી ઘટરૂપ ભગવદ્રૂપનો આવિર્ભાવ થયેા છે. માટે ઘટ કાર્ય છે. આ પ્રમાણે કાર્યકારણવ્યવસ્થા સમજી લેવી

શ્રીમદ્વલ્લભપ્રભુજી નિબંધમા ફરી આજ્ઞા કરે છે કે,-"[1]મૃતિકા વગેરે ભગવદ્રૂપ જ છે અને તેમાં જ ઘટ વગેરે આકારો પ્રકટ થાય છે, તે પણ ભગવદ્રૂપ જ છે

આ સિદ્ધાંત સ્વીકારવાથી જ 'આ[2] બધું બ્રહ્મ છે' એ પ્રમાણે વેદમાં કહેલાં સર્વ પદાર્થના બ્રહ્મરૂપત્વનું બે ધડક અને નિડરપણે પ્રતિપાદન કરી શકાય છે. માયા વગેરે અન્ય કલ્પિત અસત્પદાર્થોની ભેળસેળ કરીને સર્વનુ બ્રહ્મરૂપત્વ સિદ્ધ કરવા જતાં શ્રુતિના યથાર્થ અર્થનો ઘાત થાય છે, છતા સર્વનુ બ્રહ્મરૂપત્વ સિદ્ધ નથી થતું. વાસ્તે ઉપર જે વાદનુ નિરૂપણ કરવામા આવ્યુ છે તેજ વાદ ખરેખરો બ્રહ્મવાદ છે આ સિદ્ધાંતથી જુદો પડનારો વાદ તે બ્રહ્મવાદ નહીં પણ તે વાદ બ્રહ્મવાદના નામ નીચે કરવામાં આવતો ભ્રમવાદ જ છે બ્રહ્મવાદનો તો આડંબર માત્ર કરવામા આવે છે. વાસ્તવિક તો તે ભ્રમવાદ, આસુરવાદ કહો કે માયાવાદ જ છે.

વેદ, ગીતા અને બ્રહ્મસૂત્રમાં જે કઇ સંશય થાય તો તેના નિરાકરણ માટે સર્વશિરોમણિ, વેદરૂપી કલ્પવૃક્ષનુ ફલ, નિત્યસિદ્ધ શ્રીમદ્ભાગવત જ છે માટે તેને ઉપબૃંહણ કહેવામા આવે છે. માટે ગ્રન્થકાર શ્રીમદ્ભાગવતનું પ્રમાણ આપે છે.

ભગવાન્ આજ્ઞા કરે છે કે,-"મનથી[3], વાણીથી, દૃષ્ટિથી અને અન્ય ઇંદ્રિઓથી જે કઇ અનુભવાય છે, તે સર્વ માત્રથી જુદુ નથી તે હુ જ છું એમ ખચિત સમજો.

શંકા—સર્વ જગત્ તથા તદન્તર્ગત પદાર્થમાત્ર ભગવદ્રૂપ છે, એમ શ્રુતિ, સ્મૃતિ અને શ્રીમદ્ભાગવતના પણ પ્રમાણથી સિદ્ધ થયુ. હવે જ્યારે સર્વ દૃશ્યમાન પદાર્થ ભગવદ્રૂપ છે તો તે સર્વ ભગવદ્રૂપ ન દેખાતાં વિચિત્રરૂપે કેમ દેખાતા હશે? ભગવાન્થી જુદા અને કઇ વિલક્ષણ કેમ જણાય છે? ભગવદ્રૂપ છતા કઇ વિલક્ષણ દેખાવાનુ કારણ?

સમાધાન-સર્વ પદાર્થ ભગવદ્રૂપ જ છે, તેમાં કઈપણ શક નથી પરતુ તે ભગવદ્રૂપે જણાતા નથી અને અન્યસ્વરૂપે જણાય છે તેનુ કારણ માયા છે. માયાનો સ્વભાવ જ એવો છે. માયા મોહમાં નાખનારી છે, માટે જીવને મોહપમાડે છે. જીવની બુદ્ધિમા પ્રપંચની વસ્તુ સરખો માયિક પદાર્થ ઉત્પન્ન કરે છે, અને તેથી જ નજર આગળ રહેલા ભગવદ્રૂપ પદાર્થને વીટી લે છે. ઢાંકી દે છે. હવે જ્યારે પાસે પડેલા ભગવદ્રૂપ પદાર્થને જાણવા જઇએ છીએ, ત્યારે માયાએ બુદ્ધિમાં ઉત્પન્ન કરેલા માયિક પદાર્થનો ભાસ થાય છે પણ ભગવદ્રૂપ નથી જણાતું માટે તેને ભ્રમ કહેવામા આવે છે. કોઇપણ ભગવદ્રૂપ પદાર્થને જાણવા જતા માયિક પદાર્થનુ જ જ્ઞાન માયા કરાવી દે છે, માટે જ ભગવાન્ શ્રીમદ્ભાગવતમાં ઉદ્ધવને આજ્ઞા કરે છે કે,-

---

૧ મૃદાદિ મદવદ્રૂપ ઘટાદ્યાકારસયુતમ્ ૨ સર્વ ખલ્વિદ બ્રહ્મ ૩ મનસા વચસા દૃષ્ટયા ગૃહ્યતેઽન્યૈરપીન્દ્રિયૈ અહમેવ ન મત્તોઽન્યદિતિ બુધ્યેત્તદા

સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાંતો.

—•૦•—

૧ જગત્ સત્ય છે

૨ જગત્, જીવ, અંતર્યામી, અક્ષર ઇત્યાદિનાં નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મ કૃષ્ણ પરમાત્મા જ છે

૩. જીવે અવિદ્યાથી કલ્પેલો અહન્તામમતાત્મક સમાજ મિથ્યા છે.

૪ જીવ અણુ છે, શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મનો અંશ છે, વ્યાપક નથી

૫. પરબ્રહ્મ પુરુષોત્તમ કૃષ્ણનું ધામ અક્ષરબ્રહ્મ ગણિતાનંદ છે

૬. સર્વોપરિ વેદાદિશાસ્ત્રે પ્રતિપાદિત પરમકાષ્ઠાપન્ન વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે

૭ કૃષ્ણની સેવા એ જ અંશ જીવનો ધર્મ છે, એટલે વસ્તુત સ્વધર્મ કૃષ્ણસેવા જ છે.

૮ આત્મનિવેદન અને પ્રભુપ્રપત્તિ સિવાય અન્ય સ્વધર્મ હોઇ શકે જ નહિ.

શ્રીવલ્લભીય ગ્રંથ પ્રકાશક ફંડ

નડીઆદના શ્રીપુષ્ટિમાર્ગીય પુસ્તકાલયના અંગે ઉપરનુ ફંડ સ્થાપ્યુ છે જેમા પ્રથમ વ્યવસ્થામાં એક વખત રૂા ૪ ભરવાથી શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીકૃત ષોડશ ગ્રંથ શ્રીપુરુષોત્તમજી વગેરે ગોસ્વામિ બાલકોની સંસ્કૃત ટીકાઓ ઉપરથી વેદશાસ્ત્રસંપન્ન શાસ્ત્રી છગનલાલ અનજીના હાથથી લખાએલી વિસ્તૃત અને સળ ગુજરાતી ટીકા સાથે દરેક જુદા જુદા પુસ્તકરૂપે અને શ્રીમદ્ગુસાઇજીકૃત ભક્તિહંસ તથા શ્રીમદ્-પુરુષોત્તમજીકૃત ઉપદેશસારસિદ્ધાંતવાદ, તથા શ્રીહરિરાયજીકૃત દુ:સંગવિજ્ઞાનપ્રકાર એ રીતે ૧૯ ગ્રંથો છપાય છે તે ક્રમશ વિના પોસ્ટેજે અને વગર નોટાવરે મોકલવામાં આવે છે અને આ ફંડમાં જો કાઇ વધારો રહે તો તેમાથી શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના બીજા ગ્રંથો પણ છપાવી સસ્તા નોટાવરથી પ્રસિદ્ધ કરવા યોજના ગોઠવેલી છે તો વૈષ્ણવોને સદર લાભ લેવા વિનતિ છે

ત્રિભુવનદાસ પીતાંબરદાસ શાહ.

શ્રીપુષ્ટિમાર્ગીય પુસ્તકાલયના મંત્રી અને વલ્લભીય ગ્રંથ પ્રકાશક ફંડના વ્યવસ્થાપક.

વર્ષ ૨ જું] શ્રીકૃષ્ણાબ્દ ૫૧૩૭, આષાઢ

પુષ્ટિભક્તિસુધા.

કૃષ્ણ ૧૧ શ્રીવલ્લભાબ્દ ૪૩૩ [અંક ૪ થો.

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनु स्वाम् ॥ १ ॥
नाह वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ २ ॥
भक्त्या त्वनन्यया शक्यः अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥ २ ॥

પ્રકાશક,

વાડીલાલ નગીનદાસ શાહ,

બી એ એલએલ બી. વકીલ હાઇ કોર્ટ.

નોંધાવર, જન્માષ્ટમી સુધી	પોસ્ટથી વી. પી થી
રૂ. ૧-૮-૦	રૂા ૨-૨-૦

છૂટક અંકના ૩ ૦-૪-૦

Printed by E Miller, Superintendent British India Press Byculla Bombay and Published by Vadilal Nagindas Shah B A, L L B Princess street, Bombay

आवश्यक निवेदन.

१ આ માસિક સબંધી સઘળો પત્રવ્યવહાર પ્રકાશકને નામે કરવો.

૨ આ માસિક દરેક માસની કૃષ્ણ એકાદશીએ પ્રકટ થાય છે.

૩. આ માસિકમાં છપાવવાને આવેલા લેખો લેવા ન લેવા તેમ જ તેમાં યોગ્ય સુધારો વધારો કરવો પ્રકાશકની ઇચ્છાધીન છે

૪ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના સિદ્ધાન્તાનુસાર જ લેખ લેવામા આવશે

૫ વર્ષનું નોટિસ પ્રથમથી લેવામા આવે છે.

૬. આ માસિકના પરિવર્તનમાં જેમના તરફથી માસિક વા પત્ર મલશે તેમને વગર નોટિસે આ માસિક મોકલવામા આવશે.

૭ કોઇ પણ બાબતની ખબર મગાવવી હોય તો જવાબ સારૂ ટિકિટ મિડવી તે સિવાય જવાબ આપવામા આવશે નહિ

૮. આ માસિકમાં જાહેર ખબર છપાવવી હોય કે હેન્ડબિલ વહેચાવવા હોય તેમણે પ્રકાશકને લખવુ અથવા મલવુ

પુષ્ટિભક્તિસુધા કાર્યાલય,
પ્રિન્સેસ સ્ટ્રીટ,
મુંબાઈ.

પ્રકાશક

અનુક્રમણિકા.

	વિષયો.		લેખકો.
૧	પ્રાચીન કીર્તનો	.. ..	બલદેવદાસભાઇ કીર્તનીઆજી
૨.	અભિનન્દનપત્ર.	... ...	પરિષદના સેક્રેટરીઓ.
૩	મનુષ્યનુ કર્તવ્ય અને ધર્મજીજ્ઞાસા. . .		Mr. D. B A LL. B. High Court Pleader.
૪	પ્રશ્નોત્તર		પ્રકાશક
૫.	મહાનુભાવી શ્રીગોપાલદાસજી.		ગ મૂલચંદ તુલસીદાસ તેલીવાલા B A
૬.	મિ ઇન્ડિયમ અને મગનલાલ શાસ્ત્રી		ગ ગણેશપ્રસાદ કેશવલાલ મરીખ.
૭	પ્રમેયરત્નાર્ણવ (પ્રપંચવિવેક) ..		વે શા સં વસંતરામ હરિકૃષ્ણ શાસ્ત્રી.
૮.	પુષ્ટિમાર્ગીય ચતુર્વિધપુરુષાર્થ ...		વે શા સં મગનલાલ ગણપતિરામ શાસ્ત્રી M. A

॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥
॥ श्रीगोपीजनवल्लभाय नमः ॥
॥ कीर्तनो ॥
॥ घनदामिनीके पद ॥
(राग सुहा बिलावल, ताल आडो चोताल.)

वापस तेरी कंचन चांच मढाउ जो मेरे आवे घनश्याम ।
बहुत वेर तेरो सगुन सांच भयो यह प्रतीत मोये ताते हो मात उडाउ ॥ १ ॥
पाय लागि बूझों पिय आगम पढ्यो बिम जो पाउ ।
संयम वचन साधती आराधती देवी देव मनाउ ॥ २ ॥
वाम नेत्र अरु वाम बाहु मूल फरकत है अब ताउ ।
सुरारिदास प्रभु सेन समे सपनोंसों में देखत जाग परे गुन गाउ ॥ ३ ।
नेन उनी दे हो रंगराते ।
मन हु गुलाब पंखुरी पर सजनी फिरत अंग मदमाते ॥ १ ॥
प्रेमभवाह पांखुरी चलवल पुलकित मदन लजाते ।
सदा सुवास विलास विलोचन प्रकट प्रेमके नाते ॥ २ ॥
मंद मंद मारुत जभावर उदित मुदित द्रग ताते ।
सांचे सूर रसिक निज भामिनी हितकर केलि कलाते ॥ ३ ॥
बरसिउ घर गयो घन टपकत पांत द्रुम बेली ।
झमकत झार नीर भरे देखियत शोभा देख सहेली ॥ १ ॥
हौं यमुना वर्तत नहि मानत प्रकटी प्रीत नवेली ।
तानसेनके प्रभुकी छव निरखत याते तुं गर्वगहेली ॥ २ ॥
किशोरी अंग अंभेटी श्याम ही ।
कृष्णतमालतरु भुज श्याम लटक रही ज्यों दाम ही ॥ १ ॥
गिरिवरधरन सुरत रतिनायक रति जीत्यो संग्राम ही ।
सूर कहे यह उभय सुभट बिच को जु बसे रिपु काम ही ॥ २ ॥
आवे बावानंदको हाथी ।
बाहु विशाल कमलदललोचन संकरपनको साथी ॥ १ ॥
अपुनी इच्छा रहत व्रज भीतर ग्वालनके संग खेल्यो ।
केशी तृणावर्त गहि मार्यो शकट पायन पेल्यो ॥ २ ॥
वसुदेव देवकीनंदन कंसवंशको काल ।
परमानंददासको ठाकुर नायक नंदको लाल ॥ ३ ॥

हरिमुख निरखत नेन भुलाने ।
ज्यों मधुकर रवि कमलको सब सभि रहुतो न उडाने ॥ १ ॥
कुंडल मकर कपोलनकी छवि जानो रवि रेन विहाने ।
द्रगचंचलता देखत ही मानो खंजन मीन लजाने ॥ २ ॥
अरुन अधर द्युत वज्रपांत मिल नव घन रूप समाने ।
सूरदासप्रभु श्याम पीतपट क्योंहु न जात बखाने ॥ ३ ॥
चलो सखी सोतनके घर जैये ।
मान घटे तो कहा घट जे हे प्रियेके दर्शन पैये ॥ १ ॥
यह जोबन अंजुलीको पानी समय गये पछतैये ।
धोंधीके प्रभु रसबस करके नेनन तृपत न पैये ॥ २ ॥
भुज भर लई श्याम घन तरल तडित इत इतरात ।
रीझत रीझत मिले कबहुंक दृग नीद भरी पलके झपकात ॥ १ ॥
ऐसे कपटीसों को बोले कैधों दूर मुरजात ।
वल्लभरसिक व्यास दुलरावत हे आयो परभात ॥ २ ॥
सुंदर लालचिते हों जीवत ।
हरिमुख कमल भवर मेरे लोचन निसवासर मधु पीवत ॥ १ ॥
कुंडल मकर चलत छवि उपजत श्याम कपोल महा गत ।
जैसे प्रतिबिंब वारि गगन रविसों मिल डोलत ॥ २ ॥
अरु उर श्याम विचित्र माल सखि कंठ जल दामिनी भ्राजत ।
सूरदास प्रभु दसन वसन छवि घनदामिनी हि लजावत ॥ ३ ॥

अभिनंदनपत्र.

ગત આષાઢ શુક્લ દ્વિતીયાને દિવસે શ્રીવૈષ્ણવપરિષદ્ તરફથી કામવનવાલા ગોસ્વામી શ્રી. ૫ ગોપાલલાલજી મહારાજ તથા તેઓશ્રીના લાલભાવા ગોસ્વામી શ્રી ૫ રમણજી મહારાજને એક અભિનંદનપત્ર આપવાનો સમારંભ અત્રે સાત સ્વરૂપની હવેલીમા કરવામા આવ્યો હતો, જે વખતે ભાવુક વૈષ્ણવોની સારી સંખ્યા હાજર હતી. મહારાજશ્રીના જન્મદિનનો માંગલિક પ્રસંગ પણ તે જ દિવસે હોવાથી વૈષ્ણવોના આનંદમા વૃદ્ધિ થઈ હતી. આરંભમા રા રા. મગનલાલ શાસ્ત્રીએ પ્રસંગાનુસાર વિવેચન કરતા જણાવ્યુ હતુ કે મહારાજશ્રીએ અત્રે બિરાજી વ્યાખ્યાનમાલા યોજી વૈષ્ણવો ઉપર અનહદ ઉપકાર કર્યો છે ત્યારબાદ રા વાડીલાલભાઈએ માનપત્રનો ભાવાર્થ સમજાવી જણાવ્યુ હતુ કે આપણા સંપ્રદાયમાના અણસમજુ વેદોની ભ્રાન્તિ દૂર થવા સારૂ ગ્રંથો વંચાર પાડવાની ઘણી જરૂર છે આશા છે કે આ અપીલ ઉપર વૈષ્ણવો અવશ્ય ધ્યાન આપશે. પછીથી અભિનંદનપત્ર સ્વીકારવાની મહારાજશ્રીને વિનતિ કરવામા આવતા તેઓશ્રીએ તે સ્વીકાર્યું હતુ. આ ઉપરથી સ્પષ્ટ સમજાશે કે મહારાજશ્રીઓના સત્કાર્યની કદર કરવામા વૈષ્ણવો પાછા પડતા નથી. આવી જ રીતે અન્ય મહારાજશ્રીઓ ને વૈષ્ણવોને ઉત્તેજન આપતા રહેશે તો અવશ્ય તેઓશ્રીની પણ કદર કરવામાં વૈષ્ણવો પાછા નહિ જ પડે

॥ श्रीमन्मन्मथमन्मथो विजयतेतमाम् ॥

॥ अभिनन्दनपत्रम् ॥

सौन्दर्यं निजहृद्गतं प्रकटितं स्त्रीगूढभावात्मकं
पुंरूपं च पुनस्तदन्तरगतं भावीविशत् स्वामिये ।
संश्लिष्टावुभयोर्विभौ रसमयः कृष्णो हि यत्साक्षिकं
रूपं तत् त्रितयात्मकं परमभिध्येयं सदा वल्लभम् ॥ १ ॥

શ્રીમત્સમ્રમપીઠાધીશ્વર ગોસ્વામિતિલક શ્રી ૬ ગોપાલલાલજી મહારાજ તથા શ્રીરમણજી મહારાજ

ચોગ્ય,

આ વર્ષના પૌષ માસથી આરંભીને આષાઢ માસ પર્યન્ત આપશ્રીએ પુષ્ટિમાર્ગીય વ્યાખ્યાનો આપવાની યોજના કરીને સાક્ષાદ્ભગવદ્ગમાથી પ્રકટ થયલી પુષ્ટિસૃષ્ટિ ઉપર જે પરમ અનુગ્રહ કર્યો છે તેનો કોઈ પણ પ્રકારે પ્રત્યુપકાર કરવાને અમે અત્યન્ત નિસ્સાધન છીએ, અતએવ અમે આપશ્રીના સર્વથા ઋણી છીએ એમ પ્રકટ સ્વીકારીને અમારૂ ઋણિત્વ આપ સમક્ષ અંગીકાર કરીએ છીએ

સુગૃહીતનામધેય શ્રીમદ્વિઠ્ઠલેશજી મહારાજ શ્રીસુબોધિનીજીનુ સુધાપાન વૈષ્ણવોને સદૈવ કરાવતા. શ્રીમાન્ નૃસિંહલાલજી મહારાજ તો શ્રીસુબોધિનીજીના નિત્ય વ્યાખ્યાન ઉપરાંત પ્રતિરવિવાર સાપ્રદાયિક ભાષણો પણ આપતા આ બે શ્રીગોસ્વામી બાલકો નિત્ય લીલામા પધાર્યા તે પછી શ્રીનવરત્નમલાલજીએ આગ્રહપૂર્વક શ્રીસુબોધિનીજીની કથા આરંભી હતી, પરન્તુ તેઓશ્રી નિત્ય લીલામા પધાર્યા પછી વૈષ્ણવોનુ હિત વિચારીને ક્રમશ શ્રીપુષ્ટિભક્તિ શ્રીગદ્યમન્ત્ર શ્રીપુષ્ટિમાર્ગ-લક્ષણ શ્રીન્યાસાદેશ શ્રીવલ્લભાષ્ટક શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતાતાત્પર્ય અને શ્રીસુરતકૃષ્ણપ્રેમામૃત ગ્રન્થોના યથાસંપ્રદાય વ્યાખ્યાન નિયમશ આપવાની જેવી યોજના આપશ્રીએ યોજી તેવી યોજના અત્રત્ય કોઈ પણ ગોસ્વામીએ અદ્યપર્યન્ત કરી નથી એમ સ્પષ્ટ કથવામા અમે કોઈ પણ રીતિથી સત્યનુ અતિક્રમણ કરતા નથી મર્યાદા અને પુષ્ટિ એમ ભક્તિના બે ભેદ, અને પુષ્ટિના પણ મિશ્ર અને શુદ્ધ એમ બે ભેદ, અને મિશ્રના પણ પ્રવાહ મર્યાદા અને પુષ્ટિ એમ ત્રિવિધ ભેદપૂર્વક પુષ્ટિનુ યથાર્થ સ્વરૂપ, શ્રીમદ્રાસલીલૈકપરાયણ શ્રીગોપીજનવલ્લભ સાથે અમારો નિત્ય સબંધ, શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરના અતીવ અલૌકિક સ્વરૂપ અને ગુણ, શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતાનુ પરમ રહસ્ય, પુષ્ટિમાર્ગીય સર્વાત્મભાવ અને તેથી ફલિત થતો અર્જુન અને ઉદ્ધવથી પણ શ્રીમદ્ગોપીજનનો સર્વોત્કર્ષ—આ સર્વ વિષયોનુ યથાર્થ પરિજ્ઞાન કરાવી આપશ્રીએ કૃપા કરીને અમને અભયમાર્ગમા વિચરતા કર્યા છે એમ પ્રકટ કથવામા અમને લેશમાત્ર પણ સંકોચ થતો નથી મુબાઈની સૃષ્ટિ ઉપર આ પ્રકારે અતિમહતો ઉપકૃતિ કરીને ઇતર પ્રાન્તના વૈષ્ણવોના હિતાર્થે પ્રસ્થાન કરવાની તૈયારીમા જ હતા એવામાં પણ અમારી સર્વની અતિનમ્ર વિનતિનો અંગીકાર કરીને આપશ્રીના જન્મદિનપર્યન્ત વિરાજવાની કૃપા કરી એટલુ જ નહિ પરન્તુ આપશ્રી અત્રેથી પધારો તે પછી પુષ્ટિમાર્ગીય વ્યાખ્યાન સદૈવ અપાયા જ કરે એવી યોજના આપશ્રીએ અનુગ્રહ કરીને શ્રીમન્નૃસિંહલાલજીના શ્રી ....વલ્લભ સાથે કરી, તેથી સમગ્ર મુબાઇનગરી ઉપર આપશ્રી અને તેઓશ્રી ઉભયનો ઉપકાર થયો છે તે કાંઈ એકાદ બે દિવસ માટેનો નથી, પરન્તુ સદાનો છે આપશ્રીના વ્યાખ્યાનોમા ઉપસ્થિત થવાને આપશ્રી અત્રત્ય સર્વ શ્રીમદ્ગોસ્વામીબાલકો અને શ્રીમદ્ગોસ્વામિનીઓને નિમન્ત્રણ આપતા, અને

આપશ્રીના નિમન્ત્રણને અનુમોદન આપીને શ્રીમન્માતૃચરણસહિત શ્રીમત્કલ્યાણરાયતનય શ્રીમદ્ગોપાલલાલજી અને દ્વિતીય શ્રીમદ્ગોવર્ધનલાલજીએ અત્ર પધારીને આપશ્રીને અને અમારી, વસ્તુત આપનીજ, શ્રીમદ્વૈષ્ણવપરિષદ્ને જે શોભા આપી તેનું કથન પણ અત્ર અસામ્પ્રત ગણાશે નહિ.

શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યવર્યના બ્રહ્મવાદ અને પુષ્ટિભક્તિના યથાર્થ સ્વરૂપનો નિર્ભયતાથી ઉદ્ઘોષ કરવો એ આ પરિષદ્નુ પરમ અને પ્રથમ કર્તવ્ય છે, અને તે કર્તવ્ય વ્યાખ્યાનદ્વારા સફલ કરવામાં આપશ્રીએ એ સસ્થાને જે સાહાય્યદાન કર્યું છે તે આપશ્રીની ઉદારતાનુ લક્ષ્મ છે. આપશ્રી સમસ્ત પીઠના અધીશ્વર છો અને આપશ્રીની મહોદારતાનુ અનુકરણ કરીને અન્ય ઉત્તરોત્તર પીઠાધીશ્વરો પણ આ પરિષદ્ને યોગ્ય સાહાય્યનુ દાન કરશે તો સ્વલ્પ કાલમા બહિર્મુખોનાં દુર્મુખ સ્તબ્ધ થયા વિના રહેશે જ નહિ. આપણા નિર્ગુણ ગુણાતીત સમ્પ્રદાયના સસ્કૃત સાહિત્યના યથાર્થ અનુવાદની આવશ્યકતા મુબાઈનિગરીના શ્રીમાન્ વૈષ્ણવોના લક્ષમા આવવા માડી છે તે આપની આ વ્યાખ્યાનયોજનાનુ જ પરિણામ છે આપણા અપ્રાકૃત સમ્પ્રદાયના પરમોત્કર્ષનુ એ મહામગલ ચિન્હ છે, આપશ્રીના હાર્દ આશીર્વચનથી આ મુબાઈનિગરીના વૈષ્ણવો સામ્પ્રદાયિક સસ્કૃત ગ્રન્થો યથાર્થ અનુવાદસહિત પ્રસિદ્ધ કરવામા બદ્ધપરિકર થાય, અને એમના સ્વધર્માભિમાનની ઉત્તરોત્તર અભિવૃદ્ધિ થાય એવી આશસા પ્રકટ કરીને અમે આ અભિનદનનો ઉપસહાર કરીએ છીએ

મુબાઈ
શ્રીમદ્વૈષ્ણવપરિષદ્
૧૯૬૭ આષાઢ શુકલ ૨.

શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરદાસાનુદાસ,
છગનલાલ વાલજી,
લક્ષ્મીદાસ નાગરદાસ ઓઝ,
વાડીલાલ નગિનદાસ શાહ,
બી. એ એલ્એલ્બી. બીના સાષ્ટાગ દણ્ડવત્પ્રણિપાત

मनुष्यनुं कर्तव्य अने धर्मजिज्ञासा.

(અનુસધાન પૃષ્ઠ ૪૮ થી)

આમ બોલતા બોલતા ગોવિંદભટ્ટજીના ચક્ષુમાથી આસુ ખર્યા એમના હૃદયની સ્થિતિ ધણીજ દીન થઈ ગઈ આ સુદર સમ્પ્રદાય માત્ર સાડીચારસો વર્ષ ભૂતલ પર રહેશે ત્યારે બાલપણથી સાભળેલા વચનો સ્મરણમા આવ્યા લાયબલ કેસ, ગોસ્વામી બાલકો પર થયલા હુકમનામા, તેમના પર નીકળેલા વારંટો, તેમના કેટલાકની લગભગ નિર્ધન સ્થિતિ, કેટલાકની વિદ્યાહીન દશા, કેટલાકની લમ્પિટહીન ક્રિયર્યા તથા રીતરિવાજ, અને સામટી રીતે મોટા ભાગની સમય સમજવાની ચેતવાની અને સમયને અનુસાર સર્વે બાબતોમા સુધારા કરવાની બેદરકારી જોઈ તેમને અત્યત ખેદ થયો તેમણે એક ઉડો નિશ્વાસ મુક્યો ફિક્કા પડેલા વદીયા થઈ ગયલા મુખથી ઉચે આકાશ તરફ જોયુ આસપાસ શુ છે તે સર્વ ભૂલી ગયા એકલવાયા જેવા થઈ ગયા, અને ગભરાઈ ગયા તેમને એક લાયટીયું આવ્યુ, અને પુરુષોત્તમના ખભા પર હાથ ટેકવી બે ત્રણ મિનિટ શાત ઉભા પુરુષોત્તમ આ સર્વ સમજ્યો, તેમની આ અવસ્થા જોઈ ગભરાયો, અને તેમને શાત પાડવા ધીરેથી બોલ્યો "પ્રભુએ જે સમયે જે થવુ વિચાર્યુ હશે તેમા રતિમાત્ર પણ ફેર પડશે નહિ, માટે મનુષ્યોએ કરવો એ મિથ્યા છે"

અન્ય સમયે ગોવિંદભટ્ટજી આ કબુલ કરી લેત, પણ આ આવેશભરેલી ઉશ્કેરાયલી સ્થિતિમાં તેની ઉલટી જ અસર થઈ. પ્રભુએ સર્વ રીતે યોગ્યતા આપી હતા પોતે પણ ધર્મના કાર્યમા તેનો સદુપયોગ કર્યો નથી એમ તેમને લાગ્યું, પોતે પોતાને દોષિત સમજવા લાગ્યા, અને જેવા જ આવેશથી કાકરે પોતાનો, કાકરે બીજાનો, કાકરે સર્વેનો દોષ કરતા હોય એવા જગતો જોવવા લાગ્યા.

ગોવિંદભટ્ટજી—"પ્રભુઇચ્છા શુ છે તે મનુષ્યને આગલથી ખબર પડતી નથી. આપણી આંખ આગલ આવી પડેલુ કાર્ય એ બ્હાને આપણે ન કરીએ તો દોષપાત્ર જ ઠરીએ, **कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन** જે બુદ્ધિ પ્રભુએ આપેલી છે તેનો ઉપયોગ કરવો જ જોઇએ **बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतव** મનુષ્યનુ મનુષ્યત્વ જ એમા રહેલુ છે માટે પ્રભુઇચ્છાનુ બ્હાનું કાઢી કૃપણ અથવા કાયર થવામા સર્વ પ્રકારની હાનિ જ છે. માટે જ પ્રભુઇચ્છા હમેશા શુભ હોય છે એમ સમજી ઉત્સાહથી ધર્મની ઉન્નતિના કાર્યમા આપણે મંડ્યુ જ જોઇએ જો ખરા અંતઃકરણથી ગોસ્વામી બાલકો તથા વૈષ્ણવો આ કાર્યમા મંડી પડે તો સર્વ પ્રકારે લાભ જ છે ગુરુ અને શિષ્ય ઉભયના જીવનનુ સાર્થક્ય થવાનો આ જ રસ્તો છે " આમ બોલતા બોલતા ગોવિંદભટ્ટજી પુરુષોત્તમના સામુ વખતોવખત જોવા લાગ્યા

પુરુષોત્તમને લાગ્યુ કે ગોવિંદભટ્ટજી મારો દોષ કાઢે છે, તેથી તે એકદમ બોલી ઉઠ્યો "આપની આજ્ઞા પ્રમાણે ચાલવાને હું તૈયાર છુ "

ગોવિંદભટ્ટજી—દ્રવ્યવાન, બુદ્ધિવાન્ અને વિદ્વાન્ વૈષ્ણવોનુ એક મંડલ સ્થાપવુ જોઇએ, તેમા સર્વેએ પોતપોતાની અહંતામમતા ભૂલી, પ્રભુના દાસ થઈ, પોતે જે કામને માટે યોગ્ય હોય તે કામ ઉપાડી લેવુ જોઇએ દ્રવ્યવાને નિરહંકાર વૃત્તિથી દ્રવ્યની સહાય કરવી જોઇએ, બુદ્ધિમાને નિરભિમાનવૃત્તિથી સર્વને એકત્ર કરી સદ્બુદ્ધિથી યોગ્ય સલાહ આપવી જોઇએ, અને વિદ્વાને વિદ્યામદ છોડી, ક્ષણિક કીર્તિ પ્રાપ્ત કરવાની આશાનો અને તેથી ઉદ્ભવતા વિતંડાવાદનો સર્વથા ત્યાગ કરી, દીનત્વ અને દાસત્વ સ્વીકારી, પ્રભુએ આપેલી વિદ્યા વૈષ્ણવોની સેવાદ્વારા પ્રભુને જ અર્પણ કરવી જોઇએ સત્તાવાન્ ગોસ્વામી બાલકોએ પણ ધર્મશીલ સાંપ્રદાયિક વિદ્વાનોનો દ્રોહ કરવો મુકી દઈ, સાંપ્રદાયિક કલ્યાણાર્થે જ તેમની યોજના કરવી જોઇએ સત્તાવાન્, વિદ્વાન્, બુદ્ધિમાન્ અને શ્રીમાન્ સર્વેએ સાંપ્રદાયિક ઉત્કર્ષાર્થે કામ, ક્રોધ, લોભ, મોહ, મદ અને મત્સરનો વિજય કરીને પ્રવર્તવુ જોઇએ ત્યાગ જેવા સમૃદ્ધિમાન્ બુદ્ધિમાન્ અને વિદ્વાન્ વૈષ્ણવો આ કાર્ય ઉપાડી લે તો થણ થઈ રાકે નિર્ધન સ્થિતિના રત્નગોપાલભટ્ટે કેટલુ બધું કર્યું! શ્રીપુરુષોત્તમજીના પ્રકાશ સાથે અણુભાષ્ય, શ્રીગુસાઇજીનો અદ્વિતીય વિદ્વન્મંડન ગ્રંથ, શ્રીમહાપ્રભુજીનો નિબંધ વગેરે સંસ્કૃત ગ્રંથોને નષ્ટ થતા ઉગારી વૈષ્ણવ વર્ગ ઉપર મહાન્ ઉપકાર એણે કર્યો પણ અફસોસ! કેટલા વૈષ્ણવોને તેની ખબર પણ છે! કોણ તેની દરકાર કરે છે? રા રા લલ્લુભાઇએ પણ ગયા આઠ વર્ષમા ધર્મપરાયણ રહી વૈષ્ણવોના ઉપર કેટલો બધો ઉપકાર કર્યો છે! પણ કાર્ય કરનારા આગલીને ટેરવે ગણાય એટલા જ છે, કરવાનુ ઘણું છે, જે થયુ છે તે નામમાત્ર જ થયુ છે. જ્યાં સુધી દરેક વૈષ્ણવ સ્ત્રી પુરુષ અને બાલક પોતાનો ધર્મ શુ છે તે યથાર્થ સમજશે નહીં, જ્યા સુધી ધર્મ સમજવાને તેમની ભાષામા સરલ ગ્રંથો તેમને પ્રાપ્ત થશે નહીં, જ્યા સુધી સત્સંગ કરવા લાયક વૈષ્ણવ વર્ગ ઉત્પન્ન થશે નહીં, જ્યા સુધી વૈષ્ણવોમાથી મદિરામાથી અને ગોસ્વામીઓમાથી અનાચારનુ મૂલ નષ્ટ થશે નહીં, જ્યા સુધી શુદ્ધ ભક્તિમાર્ગ પુષ્ટિમાર્ગ નિષ્કલંક થશે નહીં, જ્યા સુધી એ માર્ગની લાવણ્યતા સરલતા અને સ્વાભાવિક સુંદરતા સર્વ જનસમૂહના જાણવામા આવશે નહીં, ત્યા સુધી ત્યાગ જેવા સમૃદ્ધિમાન્ વિદ્વાન્ અને ગુણવાન્ વૈષ્ણવનુ ઝવનર સર્વથા નિષ્ફલ છે, ત્યા સુધી (પોતાના હૃદય સામુ અંગુલિ દેખાડી) આ જન્મ વૃથા છે, ત્યા સુધી—"

અત્યંત આવેશમા આવી ગયેલા ગોવિંદભટ્ટજી વધારે બોલે તે પહેલા તેમના બને હાથ પુરુષોત્તમના વાસાનો ટેકો લેતા હોય તેમ અરધી-છૂટી, તેમનું શરીર મૂર્છાવશ જમીન પર પડ્યુ. તેમની બાની પુષ્કલ બગડી હતી, તેમનું મુખ તથા આખુ શરીર લાલચોળ દેખાતુ હતુ, અને તાત્કાલિક ઉપાયો ન લેવાયા હોત તો આનુ પરિણામ માઠું આવત, પણ ચપલ, હુશિયાર પુરુષોત્તમે

ઘરમાથી તુરત શીતલ જલ તથા સમયોચિત સામગ્રી મગાવી, ગોવિંદભટ્ટને હોશીઆર કરી, ઘરમા લઈ જઈ બિછાનાપર સુવડાવી દીધા

પુરૂષોત્તમનો જુનો મિત્ર વિચિત્રવીર્ય તેને મળવા આવ્યો હતો, તે ઘરમાં દિવાનખાનામા બેઠા બેઠા તેની વાટ જોતો હતો, ને કુસુમની જોડે વાતો કરતો હતો.

વિચિત્રવીર્ય—આજે **મારા** વિક્ટોરિયા ગાર્ડનમા તમને સર્વેને લઈ જવાનો મેં વિચાર કર્યો છે.

કુસુમ—(હસતાં હસતા) પણ સિપાઈ તમને અંદર જવા દેશે કે ?

વિચિત્રવીર્ય—કુસુમ બ્હેન ! મારી એમ મરકરી ન કરો હજુ તમને બ્યાર નથી. મારા જેવા સભાવિત આબરૂદાર સદ્‌ગૃહસ્થો ઘરધણીને દર મહિને નવ રૂપીઆ ભાડુ રોકડું આપે નહીં, તો ઘરધણી કર ક્યાથી ભરે ? ને કર ન ભરાય તો મ્યુનિસિપાલિટિ બાગની માવજત-ને સારૂ પૈસા ક્યાથી લાવે ? મ્યુનિસિપાલિટિ તે કોણ ? હુ જ. અંગ્રેજમાં તો એને **Self-government** એટલે સ્વરાજ્ય કહે છે, **સ્વ** એટલ હું અને મારૂ, માટે માલી સિપાઈ તથા બાગના સર્વે નોકર **મારા** નોકર છે, બાગ **મારો** છે તેમ જ આ સુંદર મુબાઈ શહેરના રસ્તા, એની ભવ્ય લાઈટ વગેરે સર્વે **મારાં** જ છે અરે ! અમેરિકામા તો રેલવે ટેલિગ્રાફ સ્ટીમરો વગેરે સર્વેના માલિક મારા જેવા સમજુ માણસો જ છે !

કુસુમ—(વધારે હસીને)–અને આ ઘર પણ **તમારૂં** ને દુનીઆ પણ **તમારી** !

(હસે છે.)

વિચિત્રવીર્ય—કુસુમ બ્હેન, એમા તે મે શુ ખોટુ કર્યુ ? આ ઘર બ્રહ્મ, દુનિયા બ્રહ્મ, અને હું પણ બ્રહ્મ, માટે આ સર્વ **મારૂ**, એમા શુ આશ્ચર્ય ?

કુસુમ—(હસતા હસતા) ત્યારે તો **તમે** દુનીઆના ધણી–પરમેશ્વર !*(હસે છે)

વિચિત્રવીર્ય—બ્હેન, તમે બરી વાત કહી. શ્રુતિસ્મૃતિમા કાઈ ફેર નથી, વેદમા તો પાનેપાને લીટીએલીટીએ અને અક્ષરેઅક્ષરે કહ્યુ છે કે **અહ બ્રહ્માઽસ્મિ** આ તો લોકોને મિથ્યા ભ્રમ થયો છે !

કુસુમ—(હસતા હસતા) ત્યારે પરમેશ્વરને વલી ભાડુ આપવુ પડે કે ?

પુરૂષોત્તમ—(જે આવી પહોચ્યો હતો)–આખી દુનીઆના માલિકને તે વલી એક ઓરડીનુ નવ રૂપીઆ ભાડુ આપવુ પડે કે ?

વિચિત્રવીર્ય—(શુચવાય છે)

કુસુમ—(હસતા હસતા)–અરે હા ! વિચિત્રભાઈ ભાડુ ન ભરે તો મુબાઈમાં લાઈટ ન થાય, બંદુબસ્ત અધાઉ થઈ જાય ! તેથી મુબાઈના લોકો પર દયા કરીને ભાડુ ભરે છે ! એમની તો આખી દુનીઆ પર કૃપા છે !

વિચિત્રવીર્ય—કુસુમ બ્હેન, બરૂ પુછવો તો આ દુનીઆ જ મિથ્યા છે !

કુસુમ—(બડબડાટ હસીને) ત્યારે તો તમારો બાગ મિથ્યા !!

વિચિત્રવીર્ય—હા બ્હેન, હા બાગ પણ મિથ્યા, બાલુ પીલુ પણ મિથ્યા, દુનિઆ પણ મિથ્યા, ને આ શરીર પણ મિથ્યા.

કુસુમ—(હસતા હસતા) ત્યારે તો તમારૂં ભેજું પણ મિથ્યા, ને બોલવુ પણ મિથ્યા !

વિચિત્રવીર્ય—હા, બ્હેન, હા. આપણા વેદવેદાંતમા એમ જ કહ્યુ છે જે દેખાય છે તે તો માયા છે

પુરૂષોત્તમ—તે માયા તો મિથ્યા નહીં ને ?

વિચિત્રવીર્ય—તે તો સત્ય અને અસત્ય બને

કુસુમ—(હસતા હસતા) એટલે વિચિત્ર ભાઈના જેવી વિચિત્ર !

વિચિત્રવીર્ય—અરે, એ માયાના પ્રતાપથી તો આ દુનીઆ ચાલે છે.

કુસુમ—(હસતા હસતાં) વિચિત્રને વિચિત્રના ઉપર જ પ્રેમ હોય !

પુરૂષોત્તમ—ત્યારે બ્રહ્મ શુ ?

વિચિત્રવીર્ય—બ્રહ્મનુ તો વર્ણન જ ન થાય, વર્ણન કર્યું કે તે માયા થઈ જાય !

કુસુમ—દુનીઆ તો બધી માયાથી થાય, ત્યારે બ્રહ્મ શુ કરે ?

વિચિત્રવીર્ય—બ્રહ્મ શુ કરે ? કાઇ નહી.

કુસુમ—(બડખડાટ હસીને) બ્રહ્મ ઉંઘે ને નસકોરા બોલાવે !

પુરૂષોત્તમ—ના, બ્હેન, ના વિચિત્રભાઈનુ વિચિત્ર બ્રહ્મ તો ઉંઘે એ નહી ને જાગે એ નહી. બોલે એ નહી ને ચાલે એ નહીં. બ્રહ્મને વિષે કાઇ બોલ્યા કે જાદુમતરથી તેની માયા થઈ જાય !

વિચિત્રવીર્ય—(કુસુમ અને પુરૂષોત્તમ બને બડખડાટ હસે છે) તમે બને ગમે તેટલુ હસો, પણ જો વેદવેદાત સત્ય હોય તો મારૂ કહેલુ અક્ષરશ સત્ય છે.

પુરૂષોત્તમ—(હસતાં હસતાં) પણ દુનિયા મિથ્યા તો વેદવેદાત સત્ય કયાથી થયા ? તે પણ મિથ્યા જ !

કુસુમ—(હસતા હસતાં) વિચિત્ર ભાઈ, બધુ મિથ્યા મિથ્યા કહી ઉડાવો નહી મારે તો **તમારા** બાગમાના મેના, પોપટ, મેના ઝીણુઝીણુ લિંચકા ખાતી ચલ્લીઓ, ઝીણાઝીણા ભાત-ભાતના છોડવા—બધુ જોવુ છે

વિચિત્રવીર્ય—તો હુ નોકરને મોટર તૈયાર કરવા હુકમ આપુ છુ

એમ કહી વિચિત્રવીર્ય નીચે ગયો ગરીબ માબાપનો પુત્ર હોવાથી પુરૂષોત્તમની ઉદાર મૈત્રીથી પુરૂષોત્તમની સાથેસાથે ભણી એ ગ્રેજ્યુએટ થયો હતો પણ એનુ મગજ બહુ ઉંચા પ્રકારનુ ન હતુ મોટા મોટા વિચારોમા તે ઝપલાવતો અને બધાનો બીચડો કરતો, તેથી હાસ્યપાત્ર થતો મોટર તૈયાર થતા પુરૂષોત્તમ કુસુમ અને વિચિત્રવીર્ય નીતિસેનને સાથે લઈ બાગમા ગયા.

પ્રશ્નોત્તર.

અનુસંધાન પ્રથમ વર્ષ ચતુર્થ અંક પૃષ્ઠ ૮૪

પ્રશ્ન ૧૬ મો—ગીતાશાસ્ત્ર જ્ઞાનશાસ્ત્ર હોવા છતા તમો તેને ભક્તિશાસ્ત્ર કેમ કહોછો ?

ઉત્તર ૧૬ મો—ગીતાશાસ્ત્ર જ્ઞાનશાસ્ત્ર હોય તો તેમા આરભમા મગલાચરણ હોત, અને અભક્ત અને અંધ એવા ધૃતરાષ્ટ્રની વાણીથી ગીતાશાસ્ત્રનો પ્રારભ થાત નહિ, તેમજ તેના સસારાસક્ત દુર્યોધનાદિ પુત્રોની વાર્તા પણ આવત નહિ વલી અર્જુનને જ્ઞાનનો ઉપદેશ જ ગીતામા કર્યો હોત તો આરભમા અર્જુનનો જે વિષાદ—ખેદ—બતાવવામા આવ્યો છે તે ન હોત, કારણ કે વિક્ષિપ્તચિત્તવાળાને શાન્તિ આદિનો અભાવ હોવાથી જ્ઞાનનો અધિકાર નથી, તે સ્પષ્ટ છે તેમજ અર્જુનને કૃષ્ણભગવાને જ્ઞાનનોજ ઉપદેશ કર્યો હોત તો ઉપદેશ પછી ગુર્વાદિહનન (ગુરૂ આદિનો વધ) અને રાજ્યભોગમા અર્જુનની પ્રવૃત્તિ ન થાત વલી કાલ (યુદ્ધનો દારૂણ કાલ) અને સ્થાન (રણક્ષેત્ર) જોતા પણ જ્ઞાનનો ઉપદેશ સભવતો નથી આ પ્રમાણે ઉપક્રમ (આરભ)

અને ઉપસંહાર જોતા ગીતાશાસ્ત્ર જ્ઞાનશાસ્ત્ર નથી એ નિઃસંદિગ્ધ સિદ્ધ થાય છે 'આ પ્રકારે ગીતાશાસ્ત્ર જ્ઞાનશાસ્ત્ર નથી એમ સિદ્ધ કરી, ગીતાશાસ્ત્ર ભક્તિશાસ્ત્ર છે એમ અમે સ્પષ્ટ પ્રતિપાદન કરીએ છીએ, ભક્તિ લોકવેદાતીત છે, ભક્તિમાર્ગની રીતિ અલૌકિક હોવાથી સાધારણ રીતે લોક વેદથી તેનો નિર્ણય થઈ શકતો નથી લોક અને વેદ સગુણ છે, અને ભક્તિમાર્ગ નિર્ગુણ છે, તેથી ભક્તિનો નિર્ણય લોકવેદથી થઈ શકતો નથી. ભક્તિ લોકવેદાતીત હોવાથી તે અવૈદિક કરતી નથી, પરન્તુ લોકવેદાતીત એટલે લોક અને વેદથી પણ પેલે પાર છે વેદ ધર્મોનુ સ્વરૂપ વાણીથી સમજાવે છે અને ભક્તિ તેનો સાક્ષાત્ અનુભવ કરાવે છે, એજ ભક્તિનુ જ્ઞાન કરતાં ઉત્કૃષ્ટપણુ છે અર્જુનનો પણ અંગીકાર ભક્તિમાર્ગમાં છે અર્જુનની યુદ્ધમા પ્રથમ પ્રવૃત્તિ નથી થતી તેનુ કારણ એજ કે લોકન્યાયે ભાઈને પણ ભાઈ મારીને રાજ્ય કરે તો તે રાજ્યને ભગવત્સબન્ધનો અભાવ હોવાથી તે રાજ્યનો ભોગ ભગવદીય નહિ પણ લૌકિક થાય, અને તેવો ભોગ ભક્ત અર્જુનને રુચે નહિ તે સ્પષ્ટ છે માટે ભગવદાજ્ઞા થયા પછી ભક્તિમાર્ગની રીતિએ સર્વ ધર્મ કરતા ભગવાન્ની આજ્ઞાને મુખ્ય માની, સર્વ શાસ્ત્રના વિચારનો અને સર્વ ધર્મનો ત્યાગ કરી કેવલ ભગવાન્ની આજ્ઞા પાલવામા અર્જુન પ્રવૃત્ત થઈ '**करिष्ये वचनं तव**' 'આપની આજ્ઞા પાલીશ' એમ કહે છે ભગવાન્ની આજ્ઞાથી યુદ્ધ કરી રાજ્યભોગ કરે છે તેથી તે રાજ્યભોગ ભગવદીય અથવા ભગવત્સબન્ધી થાય છે, અને તેવો રાજ્યભોગ ભક્તને યુક્ત છે '**क्षत्रियाणामयं धर्मः**' ઇત્યાદિ વાક્ય સાભલીને ક્ષત્રિયના ધર્મ પ્રમાણે અર્જુનને શૂરાતન આવત, તેનામા વીર રસ ઉત્પન્ન થાત, પણ તેમ ન થતા અર્જુનને યુદ્ધમાંથી વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થાય છે, તે તેનુ ભગવદીયત્વ બતાવે છે તેમ ન હોત તો દુર્યોધન અને અર્જુનમા સર્વ રીતથી (યોગક્ષેમની) સમાનતા હોવાથી તેને (દુર્યોધનને) પણ વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થાત, પણ અભક્ત દુર્યોધનને એ થતું નથી (વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન થતો નથી) એ પ્રમાણે ભક્ત અને અભક્તનો તફાવત બતાવવાને સારુ જ પ્રથમ ધૃતરાષ્ટ્રના પુત્રોની વાર્તા કહી છે વળી અર્જુનની બુદ્ધિ ગુર્વાદિના વધમાથી નિવૃત્ત થઈ તેથી તે બુદ્ધિ સુબુદ્ધિ અથવા સુમતિ કહેવાની જોઇએ, કારણકે શાસ્ત્રમાં પણ ગુર્વાદિના વધનો નિષેધ છે, તેમજ ભગવાન્ના ઉપદેશ પછી, અર્જુનની બુદ્ધિ ગુર્વાદિના વધમાં પ્રવૃત્ત થઈ, માટે ઉપદેશ પછીની બુદ્ધિ દુર્મતિ અથવા કુમતિ કહેવાની જોઇએ, પણ તેમ ન કહેવાતાં અર્જુનની પ્રથમની (ગુર્વાદિના વધમાથી નિવૃત્ત થતી) બુદ્ધિને શાસ્ત્રમા દુર્બુદ્ધિ અથવા કુમતિ કહેવામા આવે છે, અને ઉપદેશ પછીની (ગુર્વાદિના યુદ્ધમા પ્રવૃત્ત થતી) બુદ્ધિને સુબુદ્ધિ અથવા સુમતિ કહેવામા આવે છે આ પણ ભક્તિમાર્ગની એક અલૌકિક વિપરીતતા છે, અને તેથીજ ભક્તિમાર્ગની મર્યાદા લોકવેદાતીત છે

અને તેથી લોક અને વેદને લઈને ભક્તિમાર્ગનો નિર્ણય કરવો યુક્ત નથી, કારણકે ભક્તિમાર્ગ તેનાથી (લોકવેદથી) અતીત એટલે પેલે પાર છે, અને તેથીજ ભગવાન્ ગીતાજીમાં આજ્ઞા કરે છે કે "**त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन**" 'વેદ ત્રૈગુણ્યવિષય હોવાથી, હે અર્જુન, તુ નિસ્ત્રૈગુણ્ય થા ગીતાશાસ્ત્ર ભક્તિશાસ્ત્ર હોવાથી જ અને અર્જુન ભક્ત હોવાથી જ આત્મવિદ્યાના ઉપદેશ થયા પછી તત્ક્ષણે જ ગુર્વાદિ આસુરોના હનનમાં તેની પ્રવૃત્તિ થઈ ગીતા ભક્તિશાસ્ત્ર હોવાથી અન્તમાં સર્વત્યાગ નહિ પણ ગુર્વાદિહનન ઉચિત ગણાય છે, વસ્તુત જોઇએ તો ભગવદીયનો સર્વ ત્યાગ પણ લોકવેદના ત્યાગપૂર્વક કેવલ ભગવાન્નુ શરણ એજ જ છે અને તેથીજ અન્તમાં ભગવાન્ના પ્રશ્નના ઉત્તરમા અર્જુન સ્પષ્ટ કહે છે કે '**करिष्ये वचनं तव**' આ સર્વથી અર્જુનનું કેવલ ભગવદીયપણુ સ્પષ્ટ ફલિત થાય છે. આથી હવે સ્પષ્ટ થયું હશે કે ગીતાશાસ્ત્ર લોકવેદાતીત ભક્તિશાસ્ત્ર છે, એટલે કે ગીતાશાસ્ત્ર લોકવેદાતીત ભક્તિમાર્ગની મર્યાદા નિરૂપણ કરે છે,

પ્રશ્ન ૧૭ મો–આપે જે કહ્યુ તેથી નિ સંદિગ્ધ સિદ્ધ થયુ કે ગીતા ભક્તિશાસ્ત્ર છે, અને ભક્તિ તે લોકવેદાતીત છે, પણ અર્જુન જેવા ભક્તને ભગવાન્ની વિરુદ્ધ મતિ કેમ થઈ?

ઉત્તર ૧૭ મો—અર્જુન ભગવદીય છે તો પણ ભગવાનની ઇચ્છાને અધીન થઇને હું યુદ્ધ કરૂં છું એમ પ્રથમથી તેને જ્ઞાન ન હતુ, કારણ કે ભગવાને તેને એમ જણાવ્યુ ન હતુ અર્જુનને તો 'ક્ષાત્રધર્મથી હું યુદ્ધ કરૂં છું' એમ જ્ઞાન હતુ, અને તે પ્રમાણે ક્ષાત્રધર્મના અભિમાનથી યુદ્ધ કરવુ ભક્તને ઉચિત નથી, કારણ કે તેમ કરવામા તદીયપણામાં (ભગવદીયપણામાં) વિરોધ આવે, તેથી કરીને અન્તર વિરાજમાન ભગવાને જ યુદ્ધમાથી નિવૃત્તિ ઉત્પન્ન કરી, અને પછી ઉપદેશથી તે કુમતિને શાન્ત કરી જેવી રીતે કોઇને અન્ન ખવડાવવુ હોય તો પહેલાં ક્ષુધા ઉત્પન્ન કરવી પડે છે, તેવી રીતે અર્જુનને આજ્ઞા પળાવી યુદ્ધ કરાવી ભગવત્સબન્ધી રાજ્યભોગ ભગવાનને ભગવવો છે, તેથી આજ્ઞા કરવાના હેતુથી જ, ભગવાનની ઇચ્છાથી જ, પોતાની ઇચ્છાવિરૂદ્ધ પ્રથમ યુદ્ધમાથી અર્જુનની નિવૃત્તિ થઈ અને તેથી પોતાની ઇચ્છાથી પ્રભુ સ્વતત્ત્વ જણાવે તો જ ભક્તને પણ તત્ત્વનુ જ્ઞાન થાય છે, પોતાના મેળે થતુ નથી, એ જ મુખ્ય ભક્તિમાર્ગનુ તાત્પર્ય છે ભગવાનનો અતિવિશેષ અનુગ્રહ ભક્ત ઉપર હોય એટલે કે ભક્ત પુષ્ટિપુષ્ટિ અથવા શુદ્ધપુષ્ટિ હોય તો ભગવાનની ઇચ્છા શુ છે તેની સ્ફૂર્તિ ભક્તને સ્વત પણ થાય, ઉપદેશની આવશ્યકતા રહે નહિ, પરતુ અર્જુનનો અગીકાર તો પુષ્ટિમર્યાદામા છે, તેથી પ્રથમ ભગવાનની ઇચ્છાવિરૂદ્ધ યુદ્ધમાથી નિવૃત્તિવાળી અર્જુનની બુદ્ધિ થાય છે, અને પછી તે બુદ્ધિની ઉપદેશદ્વારા ભગવાન્ નિવૃત્તિ કરે છે ભક્તમા પણ અર્જુન સામાન્ય અધિકારી છે, ઉત્તમ અસાધારણ અધિકારી નથી, તેથી જ ભગવાનને પોતાની ઇચ્છા જણાવવા સારૂ તેને ઉપદેશ કરવો પડેછે ઉત્તમ[1] અધિકારી તો સ્વત જ ભગવદ્ઇચ્છા શુ છે તે સમજી જાય છે

મહાનુભાવી શ્રીગોપાલદાસજી.

ગુર્જરગિરાના કાવ્યસાહિત્ય પ્રતિ દૃષ્ટિ કરતા આપણને માલૂમ પડે છે કે સાહિત્યની સેવા કરવામા મુખ્યત્વે કરીને ભક્તો છે ગુર્જરગિરાના પ્રદેશને વિશાલ અને ઉન્નત બનાવવામા ભક્તકવિઓએ પોતાની મહાન્ ઇશ્વરદત્ત બુદ્ધિનો ઉપયોગ કર્યો છે આ ભક્ત કવિઓએ પ્રથમ તો ભક્ત તરીકે જ ભજન કર્યુ છે, સાધારણ સૃષ્ટિના સાધારણ વિષયો પર એમની કવનશક્તિનો ઉપયોગ તેઓએ કર્યો નથી, પણ તેઓએ તેનો ઉપયોગ સૃષ્ટિના મહામહલના અધિપતિના સ્વરૂપ ગુણ અને ક્રિયા વર્ણવવામા કર્યો હોય એમ આપણને પ્રત્યક્ષ થાયછે આ ભક્તોને કવિ તરીકે પ્રસિદ્ધ થવાનુ ઇષ્ટ ન હતુ, પણ ભક્ત તરીકે ભગવદ્દાસ્ય પ્રાપ્ત કરવુ એ જ તેમને ઇષ્ટતર હતુ, અને વસ્તુત અદ્યાપિપર્યન્ત આપણે તેમને ભક્ત તરીકે જ ઓળખતા આવ્યા છીએ સસ્કૃતભાષા જ્યારે નષ્ટપ્રાય થવા લાગી અને પ્રાકૃત આધુનિક ભાષાઓ જન્મી ઉદ્ભવવા લાગી ત્યારે પ્રત્યેક ભાષામા પ્રથમ ભક્ત કવિનુ જ કવન છે, કેવલ કવિનુ નહિ ગુર્જરસાહિત્યની રગભૂમિ ઉપર પ્રથમ સૂત્રધાર નરસિંહમહેતા છે નરસિંહમહેતા સૃષ્ટિના સાધારણ વિષયોનુ વર્ણન નહિ કરતા, અખિલ વિશ્વમા પરમરમણીય પરમતત્ત્વનુ જ વર્ણન કરવામા પોતાની સર્વ કવનશક્તિનો ઉપયોગ કરે છે. 'હું કવિ છું' એવુ ભાન જ ગુર્જર ભક્તકવિઓને ઘણુ મોડુ થયુ છે આવા ભક્તકવિઓએ ગુર્જરસાહિત્યને આદિથી તે અદ્યાવધિ શણગારીને અત્યન્ત દીપાવ્યુ છે આદિમા નરસિંહમહેતા શ્રીગોપાલદાસાદિ છે, મધ્યમા પ્રેમાનન્દાદિ છે, અને અન્તમા દયારામભાઇ છે

'અખિલ બ્રહ્માણ્ડમા એક તુ શ્રીહરિ જુજવે રૂપ અનન્ત ભાસે,' 'કનકકુંડલ વિષે ભેદ ન્હોય,' ઇત્યાદિ નરસિંહમહેતાના અખડબ્રહ્મવાદ ઉપદેશ કરવાવાલા અને ક્વચિત્ ક્વચિત્—

'સારમા સાર અવતાર અબળા તણો જે બલે બળભદ્રવીર રીઝે,
પુરૂષપુરૂષાતન શુ કરૂ હે સખી ? જેથી નહિ માહરૂ કાજ સીજે
મુક્તિ પર્યન્ત તો ગ્રામિ છે પુરૂષને સત્ય જો એવુ ભાવ રાખે,
રસભર્યુ રમણ નાથ નોહરા કરે તે નહિ નારી અવતાર પાખે

---

૧. આ અને ઉપરની સર્વ વાત સમજવાને શ્રીયુસાઇજીકૃત 'ગીતાતાત્પર્ય' જુઓ.

ઇન્દ્ર આદિક અજ ઈશ ને મહામુનિ ગોપિકાચરણરજ તેહ વદે,
ગોપીથી આપનું અધમપણુ લેખવે નરપણુ નવ રૂચે આપ નદે.
વેદવેદાન્ત ઉપનિષદો ખટ મલી જે મથીને રસ પ્રકટ કીધો,
તે રમ ભાગ્યનિધિ ભામિની ભોગવે, અહોનિશ અનુભવ સગ લીધો'

....

'પ્રેમરસ પાનનુ મોરના પિચ્છપર તત્ત્વનુ કુપણુ તુચ્છ લાગે,
કુણલા ડોરનુ કૃશકે મન ચલે ચતુર્થા મુક્તિ તેચ્યો ન માગે
પ્રેમની વાત પરીક્ષિત પ્રીછ્યો નહિ શુકજીએ સમજી રસ સંતાડ્યો,
જ્ઞાનવૈરાગ્ય કરી ગ્રન્થ પૂરો કર્યો મુક્તિનો માર્ગ સુધી દેખાડ્યો.
મારીને મુક્તિ આપી ઘણા દૈત્યને જ્ઞાની વિજ્ઞાની બહુ મુનિરે જોગી,
પ્રેમને જોગ તો વ્રજતણી ગોપિકા અવર વિરલા કોઈ ભક્ત ભોગી.'

....

'મે ગ્રહ્યો હાથ ગોપીનાથ ગરવાતણો અવર બીજુ કાંઇએ ન ભાવે'

ઇત્યાદિમા પુષ્ટિભક્તિનુ સ્વરૂપ પ્રકટ વા ગર્ભિત રીતે દર્શાવતા નરસિંહ મહેતાનાં પ્રભાતીઓનું સગીત હજુ ગુર્જર દેશમા મદ પડ્યુ નથી, તે સમયે નરસિંહમહેતા પછી આશરે અર્ધશતક નરસિંહમહેતાના કિંવદન્તી પ્રમાણે અપરાવતાર શ્રીગોપાલદાસજીનો પ્રાદુર્ભાવ રાજનગર પાસે આવેલા 'અસારવા'મા થયો

આ શ્રીગોપાલદાસજી શ્રીગુસાઇજીના[1] સેવક ભાઇલા કોઠારીના જમાઈ હતા, અને ભાઇલા કોઠારીની સાથે જ રાજનગર પાસે આવેલા અસારવા ગામમા વસતા હતા શ્રીગોપાલદાસજી મૂક (મુગા) હતા એમની ધર્મપત્નીનુ નામ ગગા હતુ, આથી વિશેષ આ ભક્તકવિ વિષે આપણને બીજી નથી એમની મૂકતા કેમ નિવારણ થઈ અને અલૌકિક રસમાધુર્યથી અને ભક્તિભાવથી પ્રતિપદે પૂર્ણ એવુ શ્રીવલ્લભાખ્યાન વા શ્રીનવાખ્યાનનો પ્રાદુર્ભાવ કરવામા તેઓ કેવી રીતે વિજયી થયા તેને વાસ્તે વૈષ્ણવોમા કેટલીક ગાથાઓ પ્રચલિત છે એવુ કહેવાય છે કે એક વખત શ્રીગુસાઇજી રાજનગર પધાર્યા અને ત્યાં પોતાના સેવક ભાઇલા કોઠારીને ત્યાં બિરાજ્યા, તે સમયે શ્રીગુસાઇજીની કૃપાથી શ્રીગોપાલદાસજીની મૂકતા નિવારણ થઈ, અને 'ગગાનો વર સાગર હોવો જોઇએ' એવી એઓશ્રીની ઇચ્છા પ્રમાણે શ્રીગોપાલદાસજી ગંગાયોગ્ય 'સાગર' થયા આવી રીતે અલૌકિક ભગવત્પ્રસાદ પ્રાપ્ત કરવાથી તેમના સૌભાગ્યમા કોઈ પણ ન્યૂનતા રહી નહિ, અને તે જ સમયે 'વદુ શ્રીવિઠ્ઠલવર સુદર નવઘનશ્યામતમાલ' એ મગલાચરણથી શ્રીનવાખ્યાનનો પ્રારભ કર્યો.

શિષ્ટાચાર પ્રમાણે પ્રથમ આખ્યાનના આરભમા ભક્તકવિ પોતાના પરમદૈવતરૂપ શ્રીગુસાંઇજીને નમન કરે છે, અને પછી શ્રીગુસાઇજીના સ્વરૂપનુ દિગ્દર્શન કરાવીને પ્રથમ આખ્યાનના અન્ત સુધી બ્રહ્મવાદ અને પુષ્ટિનો અતિસૂક્ષ્મ પણ અતિપ્રકટ વિસ્તાર કરીને દૈવી અને આસુરી એમ દ્વિવિધ સૃષ્ટિના પ્રાકટ્યનું નિરૂપણ કરીને આ સર્વ પ્રભુની લીલા છે એમ દૃઢતાથી સ્થાપે છે. દ્વિતીય આખ્યાનમાં શ્રીગોપાલદાસજી શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીનાં અલૌકિક સ્વરૂપ અને અલૌકિક ચરિત્રનુ નિરૂપણ કરીને અન્તમા દર્શાવે છે કે શ્રીકૃષ્ણ સ્વત શ્રીગુસાઇજીરૂપે શ્રીમદ્વલ્લભગૃહે પ્રકટ થયા છે. તૃતીય આખ્યાનમાં શ્રીગોપાલદાસજી શ્રીગુસાઇજીના પ્રાકટ્યોત્સવનુ નિરૂપણ કરે છે, ચતુર્થમાં શ્રી ગુસાઇજી જ પરમ તત્ત્વ છે એમ લક્ષણાજ દૃઢતાથી દર્શાવીને, પચમમાં શ્રીગુસાઇજીની અલૌકિક કૃતિ અને જગત્ પર તેઓશ્રીએ કરેલા મહાન્ ઉપકારનુ વર્ણન કરે છે ૬ઠ્ઠા આખ્યાનમા ભગવલ્લીલાનો ગુણાનુવાદ કરીને શ્રીકૃષ્ણ અને શ્રીગુસાઇજીની અનન્યતા દર્શાવે છે. સાતમમાં શ્રીગુસાઇજીની કૃતિ અને પ્રતાપનો વિશેષ વિસ્તાર કરે છે. અષ્ટમ આખ્યાન પણ એજ દિશામા છે નવમ

---

૧. શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના દ્વિતીય પુત્ર શ્રીવિઠ્ઠલેશજી 'શ્રીગુસાઇજી' નામથી ઓળખાય છે

આખ્યાનમા શ્રીમહાપ્રભુજી શ્રીગોપીનાથજી શ્રીગુસાંઇજી અને તેઓશ્રીના સમ બાલક તથા પરિકરનુ કલ્પદ્રુમરૂપે વર્ણન કરી (' પુત્રપૌત્રાદિક સુખ શુ કહુ જો તુ મુખમા એક રે રસના,' 'શ્રીવિઠ્ઠલકલ્પદ્રુમ ફલ્યો જેની શાખા પ્રસરી અનેક રે રસના,') નિરવધિ આનદમા અવગાહન કરતા કરતા ભક્તિભાવથી ગ્રન્થનો ઉપસહાર કરે છે

આ પ્રમાણે શ્રીવલ્લભાખ્યાનનો સૂક્ષ્મમા સાર લઈને હવે આપણે તેમાથી સ્ફુરતા વિચારોને સહજ વિસ્તારથી દર્શાવીએ શ્રીવલ્લભાખ્યાનમા બે વિષયનુ મુખ્યત્વે કરીને શ્રીગોપાલદાસજીએ વર્ણન કર્યું છે પ્રથમ સિદ્ધાન્ત દર્શાવ્યો છે અને પછી ચરિત્રનિરૂપણ કર્યું છે

'વ્યાપક રૂપ અદ્વૈત બ્રહ્મ જે તેહનેમય કહેવાય,
આર્યપથ અધિકારી મુનિજન તે માહે લય થાય ૧–૪
અક્ષર આદિ અખડ અનુપમ ઉપમા કહી ન જાય,
અસ્તિ વસ્તુ સૌકો મલી બોલે, નિગમ નેતિ નેતિ ગાય. ૧–૫
નિર્ગુણનો નિર્દેશ અટપટો રસના શી પેરે કહીએ,
રૂપ વર્ણ વપુ દૃષ્ટ પદાર્થ ત્યા એકો નવ લહીએ'. ૧–૬

આ પ્રમાણે પ્રથમ આખ્યાનમા (૪–૫–૬ તુકથી) શ્રીગોપાલદાસજી શુદ્ધાદ્વૈતજ્ઞાનીથી પ્રાપ્ય પરમફલ અક્ષરસ્વરૂપનુ વર્ણન કરે છે આ જ અક્ષરસ્વરૂપમા કેવલ શુદ્ધાદ્વૈતી જ્ઞાનીઓનો નિર્વિશેષ લય થાય છે વિશેષમા ભક્તકવિ એમ સૂચન કરે છે કે વેદમા 'અત્યન્ત નિર્ગુણ નિરજન' ઇત્યાદિ નકાર વિશેષણોથી વર્ણવાયલુ અક્ષરબ્રહ્મ જ શુદ્ધાદ્વૈતજ્ઞાનીથી પ્રાપ્ય પરમફલ છે શુદ્ધાદ્વૈતજ્ઞાનીનુ શુદ્ધ અદ્વૈત (સાયુજ્ય) આ અક્ષરસ્વરૂપ સાથે જ થાય છે પ્રાચીન વૈદિક અદ્વૈત સિદ્ધાન્ત આ પ્રમાણે જ સિદ્ધ થાય છે, અન્ય કોઈ પણ પ્રકારે નહિ

આ પ્રમાણે આ (૪–૫–૬) તુકમા શુદ્ધાદ્વૈત બ્રહ્મવાદનો અતિસૂક્ષ્મમા પણ સ્પષ્ટતાથી નિષ્કર્ષ કાઢી બીજી તુકામા શ્રીગોપાલદાસજી નિર્ગુણ શુદ્ધપુષ્ટિભક્તપ્રાપ્ય પરમપુરુષોત્તમની અક્ષરસ્વરૂપથી ઉત્કૃષ્ટતા અને અદ્વૈત હોવા છતા પણ અધિકતા દર્શાવે છે

' તેહ થકી પુરુષોત્તમ અલગા લીલા અચલ વિહાર,
બ્રહ્મજ્ઞાની ને મુક્તિમાર્ગીય સ્વપ્ને નહિ વ્યવહાર '

આવી રીતે પુરુષોત્તમના સ્વરૂપનુ પ્રતિપાદન કરીને તેમના ધામનુ વર્ણન કરેછે—

' જ્યા વૃન્દાવન આદિ અચલ શશી શરદ રેણુ બહુવેષ,
વનદેવી પદ કુંકુમ મુખસુખ સ્પર્શે રગ વિશેષ ૧–૮
જ્યા સરિતા ચામીકર મણિગણ ઉભયબદ્ધ સોપાન,
કમલ કુમુદ નાના અલિ સુદર મધુર કરે ત્યાં ગાન. ૧–૯
કનકલતા ભાલતી મલિકા વિવિધ કુસુમ મકરદ,
શીતલ પવન ઝકોરે લહેરે સ્પર્શે અતિ આનન્દ. ૧–૧૦.
પદ્મરાગ મરકતમણિ સ્ફાટિક શ્રીગોવર્ધન સોહે,
બ્રહ્મરુદ્ર ત્યા કોણ બાપડા શ્રીહરિના મન મોહે ૧–૧૧.
નાના પક્ષીની શબ્દ માધુરી શોભા તણો નહિ પાર,
વિવિધ પ્રકારે જુજ્વા કહેતા ગ્રન્થ થાય વિસ્તાર' ૧–૧૨

આ તુકામા શ્રીગોપાલદાસજીએ પુરુષોત્તમના પરમ ધામ શ્રીમદ્ગોકુલનુ વર્ણન કર્યું છે પ્રથમ તો શ્રીમદ્વૃન્દાવનની અલૌકિકતા અને આધિદૈવિકતા દર્શાવી છે શરદ ઋતુના નિત્ય ચદ્રમાની આધિદૈવિકતા દર્શાવી છે, અને વનદેવીઓના સૌભાગ્યનુ વર્ણન કર્યું છે પછી જ્યાં નિરતર ભ્રમર ગુજાર કરી રહ્યા છે એવાં મણિજટિતઉભયતટવાલા શ્રીયમુનાજીનુ અલૌકિક વર્ણન કર્યું છે ત્યાર પછી મરકતમણિયી જટિત રત્નધાતુમય શ્રીમાન્ ગોવર્ધનપર્વતનુ વર્ણન આવે છે આ પ્રમાણે શ્રીવૃન્દાવ-

નધામની નિત્ય શોભાનુ વર્ણન કરી, બ્રહ્મ ૩૮ અને શ્રીહરિને પણ તે સ્થલ અગમ્ય છે એમ સ્પષ્ટતાથી સૂચવ્યુ છે શ્રીવૃન્દાવનધામનુ વર્ણન કર્યા પછી શ્રીપુરૂષોત્તમનુ વર્ણન કરે છે.

'શ્યામા શતદલનયન સુંદરી યૂથ તણો નહિ પાર,
અનેક રાસમંડલ રચના રચી ખેલે શ્રીનંદકુમાર' ૧-૧૩.'
'એણી પેરે નિત્ય નવલ લીલા ઘોષવાદ ઝંકાર,
અગમ્વેદમંદરદે મોહ્યા મધુપ કરે ગુંજાર' ૧-૧૪

આ ૯૮ સ્થલ શ્રીરાસમંડલરચનાનુ છે, અને અહિ શ્રીમદ્ગોકુલચંદ્ર નિત્ય નવલ લીલા નિત્ય ભગવદીયોની સાથે કરીને તેમને નિત્ય અલૌકિક રસનો આસ્વાદ કરાવે છે, અને એ પ્રમાણે કવિ 'સોઽ શ્નુતે સર્વાન્કામાન્ સહ બ્રહ્મણા વિપશ્ચિતા' એ પુષ્ટિમાર્ગીય પરમફલ નિરૂપણ કરતી શ્રુતિનુ આપણને અનુસંધાન કરાવે છે બ્રહ્મવાદ અને પુષ્ટિમાર્ગના પરમફલનાં નિરૂપણ કર્યા પછી શ્રીગો પાલદાસજી સૃષ્ટિપ્રકાર અને તદનુસાર સાધન વગેરે વર્ણવે છે

'બ્રહ્મથી સૃષ્ટિ નીપની અતિસુંદર અહાઠ,
ચૌદ લોક નાના વૈચિત્ર્ય ભૂમંડલ નવખંડ ૧-૧૬
પર પોતાની વ્યક્તિ કરવા સૃષ્ટિ તે દ્વિધા પ્રકાર,
દૈવી આસુરી બે ઉપજાવી પ્રભુ મન કરી વિચાર ૧-૧૭
ભક્તિ સુંદરી ને માયા દાસી બે મૂર્તિ પ્રકટાવી,
તેમા પહેલી નખશિખસુભગા શ્રીહરિને મન ભાવી ૧-૧૮
કૃપાકટાક્ષે હુવા અક્ષરમા ઉપન્યા સત્ત્વ અનન્ત,
ભક્તિલીન હુવા સૌભાગી તે વૈષ્ણવ ગુણવન્ત ૧-૧૯
બીજી કટાક્ષે જે જન ઉપન્યા માયામા થયા લીન,
કર્મજડ આસુર અન્યઉપાસક ભજનધર્મથી હીન. ૧-૨૦
એણી પ્રકારે સૃષ્ટિ દ્વિધા ગુણમિશ્રિત ચાલી જાય'

કૃપાકટાક્ષથી પ્રકટ થયલા સુભાગી જીવો ભક્તિરસમાં લીન થયા બીજા કટાક્ષથી ઉત્પન્ન થયલા કર્મજડ આસુર અન્યઉપાસક અને ભજનધર્મથી હીન જીવો માયામા લીન થયા. આ પ્રમાણે, દ્વિધા ગુણમિશ્રિત સૃષ્ટિ ચાલી જાયછે, પણ ('ભક્તિમાર્ગીય જીવ સ્વતંત્ર કેવલ ભક્ત ન થાય') ભક્તિમાર્ગીય દૈવી જીવ ભગવત્કૃપા વિના સ્વતન્ત્ર ભક્ત થઈ શકતો નથી, અને તે વિના પોતાનો (પ્રભુનો) સેવાપ્રકાર તથા કથારસનુ યથાર્થ નિરૂપણ થઈ શકતુ નથી, તેથી પ્રભુએ પોતે શ્રીમદ્વલ્લભરાજકુમારરૂપે પ્રકટ થઇને ભક્તજીવના સૌભાગ્યનો વિસ્તાર કર્યો. શ્રીગોપાલદાસજીએ આવી રીતે પ્રથમથી તે અન્ત સુધી શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરપ્રતિપાદિત બ્રહ્મવાદ અને પુષ્ટિમાર્ગનુ રસભર વર્ણન કર્યુ છે.

પ્રથમ આખ્યાનમા સિદ્ધાન્તનુ દિગ્દર્શન કરાવી દ્વિતીય આખ્યાનમા તે સિદ્ધાન્તના પ્રવર્તક શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના અલૌકિક પ્રાકટ્ય સ્વરૂપ કૃતિ ગુણ અને ચરિત્રનુ વર્ણન કરે છે. શ્રુતિમા જેના ગુણ ગવાયલા છે એવા પરમપુરૂષ શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ છે એમનું સ્મરણમાત્ર દુષ્કૃતનો નાશ કરે છે, અને દ્વિજનને સદ્ગતિ આપનાર ઉતરવાનુ સહજ સાધન બને છે. શ્રીમદાચાર્યજી ભગવન્મુખારવિંદરૂપ અલૌકિક અગ્નિ છે એવા શ્રીમદ્વલ્લભપ્રભુ આસુર મતનો ધ્વંસ કરવાને પ્રકટ થયા છે એમ જાણી દેવર્ષિઓએ દુંદુભિનાદ કર્યો. શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરે પ્રકટ થઈને વેદાન્તસૂત્ર ઉપર ભાષ્ય પ્રકટ કરી, શ્રીમદ્ભાગવતાદિ અન્ય સર્વગ્રન્થોને પણ રસરૂપ બનાવી દીધા ગ્રન્થો પર માત્ર વ્યાખ્યાન કર્યુ એટલુજ નહિ પણ દશ દિગ્વામા પદયાત્રા કરી દિગ્વિજય કર્યો, અને જ્ઞાનરૂપ માયિક મતનુ ચૂર્ણરૂપ ખંડન કર્યુ. સર્વ તીર્થયાત્રા કરીને પોતે કાશી પધાર્યા, અને ત્યા કાશીવિશ્વેશ્વરજીના મંદિર પર બ્રહ્મવાદનો ઉંધો કરતુ 'પત્ર' ટાંગી સર્વ મત્તમાતંગ માયાવાદીઓને પરાજય કર્યો આ પત્રગ્રન્થ સંપ્રદાયમાં 'પત્રાવલંબન' અભિધાનથી પ્રસિદ્ધ છે. માયિકમતનું ખંડન કરીને માયાવાદીઓ જેને સ્વભ્રાન્તિથી

સગુણ આવિર્ભાવ કરતા હતા તે કોટિક દર્પલાવણ્ય (કામદેવના પણ કામદેવ) શ્રીકૃષ્ણ જ પૂર્ણ બ્રહ્મ છે એમ સુદૃઢ સ્થાપન કર્યું કોટિક દર્પલાવણ્યમય શ્રીકૃષ્ણના ભજનાનન્દનું જીવોને દાન કરવાને તેમને પોતે પંચી નામ[1] આપ્યા આવી રીતે સર્વ જીવોનું કલ્યાણ કરવાને પોતે દેશાન્તર પધાર્યા, અને અંગ વંગ કલિંગ કૈકટ મગધ મરૂ શૂર સિંધ આદિ દેશોના પદરજગન્ધમાત્રથી પાપ હર્યાં આટલું કહ્યા પછી કવિ વિદ્યાનગરના મહારાજા કૃષ્ણદેવની વાર્તાનું આપણને અનુસંધાન કરાવે છે આ જ કૃષ્ણદેવરાજાની સભામા સર્વે આચાર્યોએ મળીને શ્રીમદ્વલ્લભપ્રભુને આચાર્યપદનું સમર્પણ કર્યું કૃષ્ણદેવરાજાના કનકનો ત્યાગ કરી પોતે પાદુરંગ પધાર્યા, ત્યા શ્રીવિઠ્ઠલનાથજીએ સ્વપ્રાકટ્યની ઇચ્છા નિરૂપણ કરી પંઢરપુરથી શ્રીમહાપ્રભુજી વૃન્દાવન પધાર્યા, ત્યા તેમને ભગવલ્લીલાનાં દર્શન થયા ત્યાથી પોતે કેશીઘાટ પધાર્યા અને શ્રીમદ્ભાગવતની કથા કરીને શ્રીકૃષ્ણ જ રસપુંજ પુરૂષોત્તમ છે એમ સિદ્ધ કરી આપ્યું. કેશીઘાટથી પોતે શ્રીગિરિરાજજી પર પધાર્યા, ત્યા શ્રીગોવર્ધનધરની સાથે હળીમળીને પછી નિજધામ ચરણાદ્રિ પધાર્યા અહિ શ્રીગુસાંઇજીનું પ્રાકટ્ય થયું આ પ્રમાણે ૨૮ તુકથી આચાર્યશ્રીનું ચરિત્ર નિરૂપણ કરીને, તૃતીય આખ્યાનમા શ્રીગુસાંઇજીના પ્રાકટ્યોત્સવનું સવિસ્તર નિરૂપણ કરવાને શ્રીગુસાંઇજીના અલૌકિક સ્વરૂપ ગુણ કૃતિ ઇત્યાદિનું રસભર વર્ણન ભક્ત કવિરાજ પ્રારંભે છે

મિ. ઇચ્છારામ અને મગનલાલ શાસ્ત્રી.

આ વર્ષના જનેવારી માસમા મુંબાઇમા સાત સ્વરૂપની હવેલીમા શ્રીમદ્વૈષ્ણવપરિષદ્ તરફથી બે શા સ મગનલાલ ગણપતરામ એમ એ એમણે કામવનવાલા શ્રીગોપાલલાલજી મહારાજ શ્રીરમણજી અને રાજનગરવાલા શ્રીમંસુખનલાલજી મહારાજ એ ત્રણ મહારાજોની ધર્માધ્યક્ષતા નીચે 'પુષ્ટિભક્તિ' ઉપર વ્યાખ્યાન આપ્યું હતુ આ ભાષણ ઉપર મુંબાઇની વિદ્યાલક્ષ્મી પાઠશાલાના મૂલશંકર નામના કોઇક વિદ્યાર્થીએ તા ૨૨-૧-૧૧ ના 'ગુજરાતી' પત્રમા આક્ષેપ કર્યા હતા મગનલાલ શાસ્ત્રીએ તા ૨૯-૧-૧૧ ના 'ગુજરાતી'મા એ ફુમલાઓના સૂક્ષ્મમા રદીઓ આપ્યા હતા વિદ્યાર્થીએ ફરીથી તા ૫-૨-૧૧ ના 'ગુજરાતી'મા આક્ષેપ કર્યો, અને મગનલાલ શાસ્ત્રીએ તા ૨૬-૨-૧૧ અને ૫-૩-૧૧ ના 'ગુજરાતી'મા તે તે ફુમલાઓના પણ વિસ્તારથી રદીઓ આપ્યા મગનલાલ શાસ્ત્રી અને વિદ્યાર્થી વચ્ચે આ પ્રમાણે શાસ્ત્રીય વિષયની ચર્ચા ચાલતી હતી, તેવામાં 'ગુજરાતી'મા અધિપતિ મિ ઇચ્છારામે મગનલાલ શાસ્ત્રીના લેખમા ભાષા કહણ છે અને અવિવેક છે એમ બે આક્ષેપ કરીને મગનલાલ શાસ્ત્રીને ધમકી આપી કે 'કોઈ પણ પક્ષની નિંદા કે તિરસ્કાર કરનારા કટુ વચનોનો અમોઆદર કરીશું નહિ' મિ. ઇચ્છારામની આ અન્યાય ભરેલી વર્તણુક પછી સ્વમાન જાળવવા ખાતર મગનલાલ શાસ્ત્રીએ 'ગુજરાતી'મા એ વિષય પર પોતાના વિદ્વત્તાભરેલા લેખ આપવા બંધ કર્યા શાસ્ત્રીય વાદ દૂર રહે અને મગનલાલ શાસ્ત્રી તરફના પ્રતિપક્ષી વિદ્યાર્થીના મગનલાલ શાસ્ત્રી ઉપર અગત ફુમલાવાલા ઘણા જ નીચ અને અસભ્ય લેખને 'ગુજરાતી'મ જગ્યા મળે, અને મગનલાલ શાસ્ત્રીના સભ્ય અને મુદ્દાસર લેખ ઉપર ભાષાની કઠિણતા અને અવિવેક એમ આક્ષેપ મિ. ઇચ્છારામ તરફથી મુકાય તે સહન નહિ થઈ શકવાથી રા વાડીલાલે બે લેખ મિ ઇચ્છારામને મોકલ્યા આ બંનેમાથી એક પણ લેખને 'ગુજરાતી'મા જગ્યા મળી નહિ, એટલું જ નહિ પણ તા ૨૬-૩-૧૧ અને તા ૨-૪-૧૧ ના 'ગુજરાતી'મા એ બન્ને ગૃહસ્થો તરફ ઘણી અસભ્ય ભાષા વાપરી મિ ઇચ્છારામના પક્ષપાતથી વિદ્યાર્થીને ખાસ ઉત્તેજન મળ્યું, અને તેણે નીચ ગાળોવાલા લેખ ચાલુ રાખ્યા, ૧૧ ૬-૧૧ ના 'ગુજરાતી'મા પોતાના કોઇ મિત્ર પાસે કહેવાને બોતે જ 'વિદ્વાન્ વૈષ્ણવ'ની સહીથી મગનલાલ શાસ્ત્રી ઉપર ફરીથી આક્ષેપ શરૂ કરીને વિદ્યાર્થીએ શ્રીમદ્ વૈષ્ણવ પરિષદ્ની પણ નિંદા કરવામા કચાસ રાખી નથી. આટલી હકીકતનું સ્મરણ કરાવીને હવે હું મારા મુખ્ય મુદ્દા પર આવું છું આગે ત્રણ વિષયો પર વાચનારનું ધ્યાન દોરવાનું છે મગનલાલ

---

૧. પુષ્ટિમાર્ગમા અષ્ટાક્ષરમંત્રના ઉપદેશને નામકરણ સરકાર કહે છે.

શાસ્ત્રી અને વિદ્યાર્થી વચ્ચે શાસ્ત્રીય વાદ ચાલતો હતો તેની વચમા મિ. ઇચ્છારામે મગનલાલ શાસ્ત્રી ઉપર આક્ષેપ કરીને જે પાર્ટ ભજવ્યો તે વ્યાજબી છે કે કેમ? ૨ રા મગનલાલ શાસ્ત્રી અને વિદ્યાર્થી એ બેના શાસ્ત્રીય વાદમા કોનુ કહેવુ સપ્રદાયના ગ્રથોને આધારે છે? અને ૩ 'વિદ્વાન્ વૈષ્ણવ'ની સહીથી 'ગુજરાતી' મા જે લેખ પ્રસિદ્ધ થયો છે તે સત્યશોધક બુદ્ધિએ થયો છે કે કેમ? આ ત્રણમાથી મિ ઇચ્છારામને વિષે પ્રથમ કહી લઈને પછી બે વિષય ચર્ચીશ,

મગનલાલ શાસ્ત્રીના પ્રથમ લેખની નીચે તા ૨૯-૧-૧૧ ના 'ગુજરાતી'મા સદરહુ શાસ્ત્રીની ભાષા વિષે મિ ઇચ્છારામ આક્ષેપ કરેછે, અને તે જ આક્ષેપ તા ૫-૩-૧૧ ના 'ગુજરાતી' મા પણ ચાલુ છે અને આ આક્ષેપ તદન બિનપાયાદાર લાગે છે જેવો વિષય તેવી ભાષા હોય એ કુદરતી છે જેટલો ગહન વિચાર તેટલી ગભીર ભાષા હોય એ સ્વાભાવિક છે 'મહાભારત' અને 'પચદશી' જેવા સસ્કૃત ગ્રથના ભાષાતરકર્તા અને 'યદ્રકાત'ના તો કર્તા કહેવડાવતા મિ ઇચ્છારામ પણ મગનલાલ શાસ્ત્રીની ભાષા ન સમજે તો તેથી મગનલાલ શાસ્ત્રીની ભાષાને દોષ આપતા મિ ઇચ્છારામની પોતાની વિદ્વત્તા કેટલી છે તે પણ અકાય છે મિ ઇચ્છારામે મિ નર્મદાશકર મિ મણિલાલ અને મિ ધ્રુવની ભાષાનું અનુકરણ કરવા મગનલાલ શાસ્ત્રીને સૂચના પણ કરી નાખી! મિ નર્મદાશકર અને મિ ધ્રુવ બન્નેએ વહેવારૂ વિષય ચર્ચ્યા છે, અને મગનલાલ શાસ્ત્રીનો વિષય શુદ્ધાદ્વૈત બ્રહ્મવાદ છે, જેનો તેમણે ગયા ૩૦ વર્ષથી તનમનધનથી અભ્યાસ કર્યો છે. સદ્ગત મણિલાલભાઈના તમામ ગ્રથો મગનલાલ શાસ્ત્રીએ સારી રીતે વાચ્યા છે, અને ગુર્જર વાઙ્મયના પાકટ અભ્યાસીને મણિલાલભાઈ અને મગનલાલ શાસ્ત્રીની ભાષામા સાદશ્ય પણ લાગે છે. મગનલાલ શાસ્ત્રીના આ બે લેખ સમજવાને પણ અસમર્થ અને મગનલાલ શાસ્ત્રીની સૂક્ષ્મ યથાર્થ શાસ્ત્રીય ભાષા અને મિ વાડીલાલની વહેવારૂ ભાષાનું અતર સમજવાને પણ અસમર્થ મિ. ઇચ્છારામ મિ. મણિલાલનુ અધ્યાસભાષ્ય કે વૃત્તિપ્રભાકર સમજતા હોય એમાં શક જેવું છે મણિલાલભાઈના અધ્યાસભાષ્ય અને વૃત્તિપ્રભાકર કરતા મગનલાલ શાસ્ત્રીના લેખ ઘણે દરજ્જે સરલ છે. જે વિષયના જે ધરાક હોય છે તે વિષય તે ધરાક વાચે છે મિ ઇચ્છારામ પણ 'ગુજરાતી'મા પહેલુ કૉર્મ અગ્રેજીમાં લખાવે છે તે 'ગુજરાતી'ના સર્વ ધરાક વાચી શકે છે? ગુજરાતી ભાષા જાણનાર દરેક ધરાક પહેલેથી છેલ્લે સુધી 'ગુજરાતી' પેપર વાચતો જ હોવો જોઇએ એમ મિ ઇચ્છારામ માની લેતા હોય તો તે પણ ભ્રાંતિ જ છે. જીજ્ઞાસુ વૈષ્ણવો તો મગનલાલ શાસ્ત્રીના લેખ આનદથી વાચે છે.

મિ ઇચ્છારામનો બીજો આક્ષેપ અવિવેક છે મગનલાલના લેખમા અસભ્ય શબ્દો આવે છે એમ કહીને મિ ઇચ્છારામ એક મહારાજ અને ત્રણ શાસ્ત્રીઓની તેમા સમતિ જણાવે છે શ્રીમદ્-વૈષ્ણવપરિષદ્ના ચતુર્થ સમેલન પછી શાસ્ત્રીઓ સાથે મહારાજે પણ ગ્રેન્યુએટોનો ઠોષ કરતા થયા છે એ સત્ય પરિસ્થિતિ ધ્યાનમા રાખીને મિ ઇચ્છારામે મગનલાલ શાસ્ત્રીના લેખમાથી કોઇ અસભ્ય શબ્દ ટાકી બતાવવાની તસ્દી લીધી હોત તો ઉપકાર થાત મિ. ઇચ્છારામની ઇચ્છા હોય તો તેમના કુલ વિદ્યાર્થીના લેખમા ભગપટ્ટે અપશબ્દ હું બતાવું 'વિદ્યાર્થી' અને 'વિદ્વાન્ વૈષ્ણવ' બન્નેએ પોતાના તમામ લેખમાં મગનલાલ શાસ્ત્રી ઉપર અગત આક્ષેપ કર્યા છે, છતા તે બન્નેના લેખ **લખનારની સહી સાથે** મિ. ઇચ્છારામે પ્રકટ કર્યા નથી, તેથી—'કોઇ પણ લેખ પછી તે ગમે તેવી અગત્યનો હશે તેમા કોઇ પણ વ્યક્તિ કે કોઇ અમુક પુરુષ સામે આક્ષેપ કરવામાં આવેલો હશે તો તેવો લેખ લખનારની સહી સાથેજ પ્રકટ કરવામા આવશે'—આ મિ. ઇચ્છારામના નિયમનો ભગ 'વિદ્યાર્થી' અને 'વિદ્વાન્ વૈષ્ણવ'ના ખુલ્લેખુલ્લા નામ નહિ આપવામાં મિ ઇચ્છારામે કર્યો નથી શુ? મગનલાલ શાસ્ત્રી અવિવેકી છે એમ જે મહારાજે મિ ઇચ્છારામને કાગલ લખ્યો તે મહારાજની કહેવાતી વિદ્વત્તા મગનલાલ શાસ્ત્રીની વિદ્વત્તાથી અજાઈ જતી હોવી જોઇએ, અને કદાચિત્ વિદ્યાર્થીને તે જ મહારાજે ચઢાવ્યો હોય એ પણ બનવાજોગ છે.

આ બે આક્ષેપ ઉપરાંત મિ ઇચ્છારામે ત્રણ મુદ્દા કાઢ્યા છે, તે પણ બરોબર નથી. પુષ્ટિ-માર્ગનો જ એક અવાંતર ભેદ પુષ્ટિમર્યાદા છે એમ ભગનલાલ શાસ્ત્રીએ તા ૨૬-૨-૧૧ ના 'ગુજરાતી'માં કોઠો આપીને સ્પષ્ટ સપ્રમાણ સમજાવ્યું છે આખી ગીતા ભક્તિશાસ્ત્ર તરીકે પુષ્ટિ મર્યાદાનું અને **सर्वधर्मान्** ઇત્યાદિ પુષ્ટિપુષ્ટિ અને શુદ્ધપુષ્ટિનું પ્રતિપાદન કરે છે, એમ ભગ નલાલ શાસ્ત્રી ખુલ્લું કહે છે, ત્યારે ગીતા અને તેના વક્તા મર્યાદા કે પુષ્ટિ એ પ્રશ્ન નથી, પરંતુ ગીતા અને તેના વક્તા પુષ્ટિમર્યાદા પુષ્ટિપુષ્ટિ કે શુદ્ધપુષ્ટિ એ પ્રશ્ન છે શ્રીગુસાંઇજીના 'ગીતા-તાત્પર્ય' અને 'ન્યાસાદેશ' ગ્રંથથી ગીતા પુષ્ટિમર્યાદા છે એમ નિશ્ચય થાય છે. વિષ્ણુસ્વામીને શ્રીવલ્લભાચાર્યના ગુરુ માનવામાં ન આવે તેટલામાત્રથી શ્રીવલ્લભાચાર્યજી 'નગુરા' થઈ જતા નથી, કારણ કે શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વરના નિત્ય ગુરુ શ્રીકૃષ્ણ છે જ. જનોઈ દઈને વિદ્યાભ્યાસ પણ શ્રીવલ્લભા-ચાર્યજીને તેમના પિતા શ્રીલક્ષ્મણભટ્ટજીએ કરાવ્યો હતો, તેથી તે અર્થમાં શ્રીલક્ષ્મણભટ્ટજી પણ શ્રીવલ્લભાચાર્યજીના ગુરુ છે સવાલ એ છે કે પુષ્ટિમાર્ગમાં સર્વને અપાતા અષ્ટાક્ષર અને બ્રહ્મસંબંધ એ બે મંત્રનો ઉપદેશ શ્રીવલ્લભાચાર્યજીને વિષ્ણુસ્વામીએ આપ્યો હતો કે સાક્ષાત્ શ્રીકૃષ્ણે? શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના પ્રાદુર્ભાવ પહેલા વિષ્ણુસ્વામીના પંથમાં અષ્ટાક્ષર અને બ્રહ્મસંબંધ નામના બે મંત્ર જે પુષ્ટિમાર્ગીય વૈષ્ણવને અપાય છે તે જ અપાતા હતા શું? સરવું બે મંત્ર શ્રીવલ્લભાચાર્યજીને વિષ્ણુસ્વામીએ અથવા બિલ્વમંગલે આપ્યા એમ પુષ્ટિમાર્ગના ગ્રંથોથી સિદ્ધ કરવાનો બોજો વિદ્વા-ર્થીને શિર છે વિષ્ણુસ્વામીના વાસ્તવભેદાત્મક તામસ ભક્તિમાર્ગથી શ્રીવલ્લભાચાર્યજીનો નિર્ગુણ ભક્તિ-માર્ગ અત્યંત જુદો જ છે એમ ભગનલાલ શાસ્ત્રીએ તો ક્યારનું સિદ્ધ પણ કરી બતાવ્યું છે વેદમાં 'પુષ્ટિ' શબ્દનો અર્થ 'પુષ્ટિમાર્ગ' થતો નથી તો મિ ઇચ્છારામ અને વિદ્વાર્થી તે શબ્દનો અર્થ શું કરવા માંગે છે તે સ્પષ્ટ રીતે લખીને તેમાં વિદ્વાર્થીના પોતાના જ કહેવાતા ગુરુ ગટ્ટુલાલાજીની સંમતિ આપશે તો ઉપકાર થશે **स आत्मानं स्वयमकुरुत** પાઠ પ્રાચીન છે કે ભગનલાલ શાસ્ત્રીએ નવો કલ્પ્યો એ નિર્ણય કરવાને ભગનલાલે ટાંકેલા સાંપ્રદાયિક પ્રાચીન હસ્તલિખિત પુસ્તકો મિ ઇચ્છારામે જાતે જોવાની તસ્દી લેવી જોઇએ ત્યારે હવે મિ ઇચ્છારામ મુદ્દા બનાવે છે એમ નહિ, પણ તે મુદ્દા નીચે પ્રમાણે ઘડાવવા જોઇએ

૧ પુષ્ટિમર્યાદા પુષ્ટિપુષ્ટિ અને શુદ્ધપુષ્ટિ એટલે શું? ગીતામાં આ ત્રણમાંથી શેનો ઉપદેશ છે? સમગ્ર ગીતામાં પુષ્ટિપુષ્ટિ અને શુદ્ધપુષ્ટિ કયા શ્લોકમાં છે?

૨ શ્રીવલ્લભાચાર્યજીને અષ્ટાક્ષર અને બ્રહ્મસંબંધ એ બે પુષ્ટિમાર્ગીય મંત્ર સાક્ષાત્ પ્રકટ થઈને શ્રીકૃષ્ણે જ આપ્યા હતા કે વિષ્ણુસ્વામીએ? વિષ્ણુસ્વામીનો સંપ્રદાય તામસ ભક્તિમાર્ગ કહેવાય છે અને શ્રીવલ્લભાચાર્યજીનો નિર્ગુણ ભક્તિમાર્ગ કહેવાય છે, એ વાત સાચી છે? વિષ્ણુસ્વામી પારમાર્થિકભેદવાદી હતા કે શુદ્ધ અદ્વૈત બ્રહ્મવાદી પુષ્ટિમાર્ગીય હતા? શ્રીવલ્લભાચાર્યજીના પ્રાકટ્ય પહેલા વિષ્ણુસ્વામીના પંથમાં આ બે મંત્રનો ઉપદેશ થતો હતો ખરો?

૩ 'પુષ્ટિ'શબ્દ વેદમાં આવે છે તેનો અર્થ સંપ્રદાયના ગ્રંથોમાં શું કરેલો છે?

૪. '**स आत्मान स्वयमकुरुत**' એ પાઠ ભગનલાલે નવીન કલ્પ્યો છે કે પ્રાચીન સાંપ્રદાયિક ગ્રંથોમાં '**तदात्मान स्वयमकुरुत**' ની પેઠે '**स आत्मान स्वयमकुरुत**' એ પાઠ પણ વિદ્યમાન છે?

મિ ઇચ્છારામને આ વાદનો નિર્ણય કરાવવાનો ઉત્સાહ હોય તો તેમણે આ ચાર પ્રશ્ન પ્રત્યેક ગોસ્વામી મહારાજને પુછવા, અને તે દરેક તરફથી જે જે સપ્રમાણ ઉત્તર આવે તે મિ ઇચ્છારામના **પોતાના મોકલેલા પત્રની નકલ સાથે** પ્રસંગાનુસાર પ્રકટ કરવા મહારાજોને પણ વિનતિ કરવી કે આ યુગ બુદ્ધિબલનો છે, આ યુગમાં બાબાવાક્ય પ્રમાણ અથવા પોપનું ખુલ્લ કોઇ માનતું નથી, માટે જે નિર્ણય આપવામાં આવે તે સપ્રમાણ જ આપવાની કૃપા કરવી તિલકાયિત શ્રીગોવર્ધનલાલજી

કાંકરોલીવાલા શ્રીબાલકૃષ્ણલાલજી કામવનવાલા શ્રીવિઠ્ઠલેશનંદનલાલજી પોરબંદરવાલા શ્રીજીવણલાલજી અને મુબાઈના મોટામંદિરવાલા શ્રીજીવણલાલજીની ગાદીએ બેઠેલા શ્રીગોકુલનાથજી એ પાંચ મહારાજો તો પ્રસિદ્ધ રીતે ગટ્ટૂલાલના પક્ષપાતી છે, તેથી આચાર્યપરંપરાની બાબતમાં માત્ર તેમના જ પત્રો પ્રકટ કરવામાં આવશે તો તટસ્થ વાચનારને મિ. ઇચ્છારામ તેથી કાંઈ પણ સંતોષ આપી શકશે નહિ. મધ્યસ્થ વિદ્વાન્ ગોસ્વામીઓના અભિપ્રાયનું વજન વધારે પડે એ દુરસ્તી છે

'ધનિશ્રી'ની બાબતમાં મિ ઇચ્છારામ પોતાની પાસની શ્રીસુબોધિનીજીમાં 'વિષ્ણુસ્વામિમતવર્તી'-ની ધનિશ્રી છે એમ કહે છે, પણ કોટાવાલા ગોકુલદાસ પંડિત હાલ શ્રીસુબોધિનીજી પ્રસિદ્ધ કરે છે, તે પણ પ્રાચીન પ્રત ઉપરથી જ કરે છે, અને તેમાં 'વિષ્ણુસ્વામિમતવર્તી' નથી મુંબાઈમાં શ્રી-ગોવર્ધનલાલજીને ત્યાં શ્રીસુબોધિનીજીનું હસ્તલિખિત પુસ્તક સેવામાં બિરાજે છે, તેમાં કેવી ધનિશ્રી છે તે મિ ઇચ્છારામે જાતે પાસ જોવી જોઇએ શ્રીમદાપ્રભુજીએ શ્રીમાધવભટ્ટજીને લખાવેલું એ પુસ્તક છે એમ કહેવાય છે

મિ. ઇચ્છારામ વિષે એક જ વાત હવે બાકી છે. પંડિતો વાદ કરતા હોય ત્યારે તેમાં પક્ષપાત કરીને વચ્ચે ટાપશી પુરવી વ્યાજબી નથી મિ ઇચ્છારામે તેવી ટાપશી પુરી તેથી મગનલાલ શાસ્ત્રી એ વિષય લખતા બંધ થયા, અને 'ગુજરાતી'ના વાચનારને પ્રશ્નની બન્ને બાજુ તપાસવાનું દ્વાર બંધ થયું મિ. ઇચ્છારામે તેવી ટાપશી પુરી તેથી જ મિ ધીરજલાલે અને મિ વાડીલાલે, પોતાના લેખ 'ગુજરાતી'માં ન છપાયા તો, 'પુષ્ટિભક્તિસુધા'માં પણ છપાવ્યા ન્યાયબુદ્ધિનું સમતોલન રાખીને મિ. ઇચ્છારામે તે લેખ પણ પ્રસિદ્ધ કરવા જોઇતા હતા. તેમના લેખની અયોગ્ય નિંદાથી મિ ઇચ્છારામ ઉપર સજ્જડ વહેમ જાય છે કે 'ગુજરાતી પ્રેસમાં છપાયલા આત્મપુરાણ યોગવાસિષ્ઠ અને પંચદશી એ ત્રણ ગ્રંથ માયાવાદના છે, અને શ્રીવલ્લભાચાર્યજીના બ્રહ્મવાદ સાથે એ ત્રણ ગ્રંથને કાંઇ પણ સંબંધ નથી' એમ નવા મહારાજોની સમક્ષ વૈષ્ણવપરિષદના નેતાઓએ જાહેર કરવાથી પોતાના વેપારમાં નુકશાન પહોંચે તેથી દ્વેષબુદ્ધિથી મિ ઇચ્છારામે વૈષ્ણવપરિષદના સર્વ નેતાઓને એક પછી એક ગબડવા માંડ્યા છે ૧૯૧૦ના મેમાં વૈષ્ણવપરિષદની વિરુદ્ધ પ્રેક્ષક મોકલેલા લેખને 'ગુજરાતી'માં જગ્યા આપી, અને 'પ્રેક્ષકને પ્રત્યુત્તર' એ મથાળાના મિ તેલીવાલાના લેખને 'ગુજરાતી'માં મિ. ઇચ્છારામે જગ્યા ન જ આપી, એટલું જ નહિ પરંતુ તે લેખની પહોંચ પણ ત્રણત્રણ રિમાઇન્ડર પછી મિ. ઇચ્છારામ તરફથી સ્વીકાર કરવામાં આવી, અને તે પણ આખા સંપ્રદાયની નિંદાપૂર્વક (જુઓ ગયા વર્ષની 'ગુજરાતી'ની ફાઇલ) સુરતની શાંકર સમાજના સર્વ લેખને 'ગુજરાતી'માં જગ્યા આપી, પરંતુ પંડિત છગનલાલ અમરજીના લેખને મિ ઇચ્છારામે જગ્યા ન જ આપી આજથી ૧૦ વર્ષ ઉપર શ્રીનરસિંહલાલજી અને ગટ્ટૂલાલાજી વચ્ચે આચાર્યપરંપરા વિષે ચાલતી તકરારમાં પણ મિ ઇચ્છારામે લાલાજીનો પક્ષ સ્વીકાર્યો હતો ગુજરાતી પ્રેસમાં છપાયલા શ્રીભાગવતની પ્રસ્તાવનામાં મિ ઇચ્છારામે બનતે વિષ્ણુસ્વામીની પરંપરા માની છે આ સર્વ હકીકતનું આ વર્ષના બનાવ સાથે અનુસંધાન કરીએ છીએ, ત્યારે ગટ્ટૂલાલાજીના પક્ષપાતી મિ ઇચ્છારામે ગટ્ટૂલાલાજીના કહેવાતા વિદ્યાર્થીનો ખુલ્લેખુલ્લો પક્ષપાત કરીને વૈષ્ણવપરિષદના નેતા મગનલાલ શાસ્ત્રીને પૂર્ણ અન્યાય આપ્યો છે એમ સ્પષ્ટ કહેવામાં મને જરા પણ ભય નથી. મગનલાલ શાસ્ત્રી વૈષ્ણવપરિષદના નેતા ન હોત, વિદ્યાર્થી ગટ્ટૂલાલાજીનો શિષ્ય કહેવાતો ન હોત, વિદ્યાર્થી શ્રીદ્વિજીનંદનલાલજી શ્રીજીવણલાલજી અને જોડે બીમજીભાઈ કુંવરજીનો આશ્રિત ન હોત, અને મિ ઇચ્છારામે વિષ્ણુસ્વામીની પરંપરા પોતાના શ્રીભાગવતમાં સ્વીકારી ન હોત, તો મિ ઇચ્છારામે આ શાસ્ત્રીય ચર્ચામાં મગનલાલ શાસ્ત્રી ઉપર જે ક્રૂર દૃષ્ટિ રાખી છે તે રાખત નહિ એમ તટસ્થ વાચનારનો અભિપ્રાય છે.

'હે 'ઉદ્ધવ! મનથી, વાણીથી, નેત્રથી, તેમ જ શ્રવણથી જે આ પદાર્થ જણાય છે, તે માયાએ ઉપજાવી કાઢેલા છે, એમ સમજ' 'મનથી[૧] કલ્પેલા, ખરૂ જોતાં નહિ જેવા, આ દેહને પામીને આંધળી બુદ્ધિવાલા મનુષ્યોને 'આ મારૂ છે,' 'હું ધું,' આ હું અને આ બીજો' એવો મિથ્યા અભિમાન થાય છે, તેથી તેવા મનુષ્યો પાર ન પામી શકાય એવા ઘોર અજ્ઞાનરૂપી અધ કારમા ગોથા ખાય છે' હે[૨] ઉદ્ધવ! તારામા જે દેહરૂપી ઇન્દ્રિયરૂપી અને અતઃકરણરૂપી ત્રણ વિકારો જણાય છે, તે પ્રકૃતિના છે માયાથી સ્વરૂપ ઢકાઈ ગયુ છે, માટે તે જણાય છે વસ્તુત તે વિકારો બ્રહ્મ નથી, કારણ કે પહેલા (દેહાદિ પહેલા) તે વિકારો ન હતા અને છેવટે (દેહાદિના તિરોભાવ પછી) નથી જ રહેવાના તે તો ફક્ત દોરડામા સર્પની ભ્રાન્તિ થાય છે તેમ મધ્યાવસ્થામા જ દેખાય છે, દોરડુ દેખ્યા પહેલાં સર્પભ્રમ નથી, દેખ્યા પછી તે થાય છે દોરડાનુ ખરેખરૂ જ્ઞાન થતા તે સર્પભ્રમ ટળી જાય છે માટલમ કે જેમ સર્પભ્રમ મધ્યાવસ્થામા જ છે તેમ તે વિકારો પણ મધ્યાવસ્થામા જ માયાથી દેખાય છે વસ્તુત તે વિકારો ખરા નથી, માટે વિકા રોને અને તારે કશુએ લાગતુવગળતુ નથી જન્મ વગેરે વિકારો દેહને થાય છે તને નથી થતા, કારણ કે તુ દેહથી જુદો છે. દોરડુ પહેલા અને છેવટે દોરડારૂપ જ છે, તેમ જ મધ્ય વખતે (સર્પભ્રમ વખતે) પણ તે તો સ્વસ્વરૂપ જ છે, સર્પ વગેરે ખોટા વિકારો દોરડામાં નથી થતા, પરતુ બુદ્ધિમા થાય છે હે ઉદ્ધવ! ઉપરના દૃષ્ટાતની માફક દેહના જન્મ વગેરે વિકારો દેહને થાય છે પણ તારામા નથી થતા ''સસાર સ્વપ્ન સરખો છે, બુદ્ધિ પણ ત્યા પહોચી વળી શકે તેમ નથી, તે ઘણો જ દુ ખમય છે

હવે કોઇ પણ ભગવદ્રૂપ પદાર્થને જણવા જતા માયિક પદાર્થનુ ભાન થતુ હોવાથી ઉપરના વાક્યોને અવકાશ મરે છે આવા ભ્રમની પ્રતીતિના આધારભૂત વાક્યોને અનુસરીને વિવર્તવાદના—એટલે માયાવાદની—કહો કે ભ્રમવાદની[૩] પ્રવૃત્તિ થઈ છે, એટલે ઉપલા વાક્યોનુ ખરેખર રહસ્ય સમજ્યા વગર અલ્પબુદ્ધિ મનુષ્યોએ ભ્રમવાદ ફેલાવ્યા છે પુરાણોમા ભ્રમવાદને નહિ જેવા ટેકારૂપ થઈ પડતા 'આ બધું માયિક છે' 'ખોટુ છે' 'અનિત્ય છે' વગેરે વાક્યો વૈરાગ્ય ઉત્પન્ન કરવા માટે છે સસારમાથી અત્યત આસક્તિ ઉઠી જાય અને ભગવાનમા જ પ્રીતિ થાય માટે તે વાક્યો છે શ્રીમદ્પ્રભુજી પણ તત્ત્વદીપનિબધમા આવો જ નિશ્ચય કરે છે માટે માયાથી મોહ પામેલા પુરષોનો અનુભવ જ માયિક છે, ખોટો છે, પરતુ કઇ પદાર્થ માયિક અથવા ખોટા નથી જગત્ અને તેમાના પદાર્થો તો ત્રણે કાલમા સત્યજ છે, માયાના પેદા કરેલા અથવા ખોટા નથી. શ્રીમદ્ભાગવતમા પણ ભગવાન બ્રહ્માને આજ્ઞા કરે છે કે ' 'પદાર્થ વગર પણ જે દેખાય છે—અનુભવાય છે, તે મારી માયા છે. તે આત્મામા પ્રતીત નથી થતી. દૃષ્ટાત— દર્પણમા મુખ ખરેખર હોતુ નથી છતા દેખાય છે, તેવી

---

૧. यदिद मनसा वाचा चक्षुर्भ्यां श्रवणादिभिः । नश्वर गृह्यमाणं च विद्धि मायामनो-मयम् ॥ ૨. देहमनोमात्रमिम गृहीत्वा ममाहमित्यन्धधियो मनुष्याः । एषोऽहमन्योऽयमिति भ्रमेण दुरन्तपारे तमसि भ्रमन्ति ॥ ૩. त्वय्युद्धवाश्रयति यस्त्रिविधो विकारो मायान्तरापतति नाद्यपवर्गयोर्यत् । जन्मादयोऽप्यस्य यदमी तव तस्य किं स्युराद्यन्तयोर्यदसतोऽस्ति तदेव मध्ये. ૪. स्वप्नामसस्तधिषण पुरुदुःखदुःखम् ॥

૫ ऋतेऽर्थं यत्प्रतीयेत न प्रतीयेत चात्मनि । तद्विद्यादात्मनो मायां यथा भासो यथा तम ॥ આ શ્લોક સહેલાઇથી સમજી શકાય તેવો નથી. ગ્રથકાર આ શ્લોકના શ્રીસુબોધિનીજી પોતાના ગ્રથમા ઉતારે છે, તેથી તે વધારે કઠિન થાય તે સ્વાભાવિક જ છે. માટે પહેલા તેનો સક્ષેપમાં અર્થ આપ્યો છે, ત્યારબાદ શ્રીસુબોધિનીજીનુ રહસ્ય વિસ્તારથી વર્ણવ્યુ છે ભાષાતરની જેમ અક્ષરાર્થ કરી બટકવાની નથી, પણ જેમ બને તેમ સરલ અને સમજાવી શકાય તેમ કરવાની છે.

રીતે પદાર્થ ન હોય છતાં જે દેખાય તે માયા છે આ માયા આત્મામા નથી અનુભવાતી, 'દૃષ્ટાંત– અંધારૂ જ્યાં પ્રકાશ નથી તે સ્થલે જ અવબોધાય છે, અજવાળાવાલા સ્થલમા કદી નજરે નથી પડતુ, તેમજ માયા આત્મામાં નથી જણાતી '

આ શ્લોકનુ વિવરણ કરતાં શ્રીમદ્‌પ્રભુજી શ્રીસુબોધિનીજીમાં લખે છે કે—કૃષ્ણ માયાથી અજાયલી બુદ્ધિ ભગવદ્રૂપ પદાર્થને અન્યરૂપે જુએ છે. પદાર્થમાં કોઈ પણ જાતનો ફેરફાર અથવા તફાવત નથી થતો તે તો ભગવત્સ્વરૂપ જ રહે છે આગળના શ્લોકોમા (દ્વિતીયસ્કંધના નવમાધ્યાયના બત્રીસ શ્લોક સુધી) પ્રમેયનુ નિરૂપણ કર્યું હવે પ્રમાણનુ નિરૂપણ કરે છે પ્રમાણભૂત તો વેદ જ છે અને તે વેદ ઉપદેશે છે કે,–' આ બધુ બ્રહ્મ છે[1], ' બ્રહ્મજ્ઞાની સત્પુરુષોનો પણ આ સર્વ બ્રહ્મ છે એવો જ અનુભવ છે, આ માયિક છે, ખોટુ છે વગેરે ભ્રમનો અનુભવ નથી સર્વ સ્થલે બ્રહ્મને બદલે ભ્રમને અનુભવ કરનારા ભ્રાન્ત મહાત્માઓના ([1]) મિથ્યા અનુભવને કોઇ પણ રીતે યુક્તિ તથા શ્રુતિનુ વજન નથી મળતુ. માટે આવા અનુભવથી કોઇ પણ અર્થનો નિશ્ચય ન જ થઈ શકે, તેવા ભ્રાન્તોના અનુભવથી જોવા જઇએ તો આપણી દૃષ્ટિ પણ ભ્રમિત થાય, ચગદોળે ચડે, અને વેદ જે જગતને બ્રહ્મરૂપ કહે છે નિત્ય કહે છે, તેને બદલે તેજ જગતને ઝાંઝવાનાં નીર જેવુ, આકાશના પુલ જેવુ, વાઝણીના પુત્ર જેવુ કહેનાર મિથ્યાજ્ઞાનથી વંચિત થયેલા પુરુષોના ભ્રાન્ત નિશ્ચય ઉપર આવી જઇએ આવા તુચ્છ નિશ્ચય ઉપર ન આવવા માટે એક **વિષયતા** માયાથી ઉત્પન્ન થનાર અને બ્રહ્મનુ પ્રત્યક્ષ કરાવનાર માનીશુ (**વિષયતા** એટલે શુ ? તે કેમ સમજવી ? એમ સ્વાભાવિક સંશય થાય, પણ તે ઉત્તરોત્તર વધારે આગલ ઉપર સ્પષ્ટ થતી જશે). જ્યારે વિષયતારહિત દૃષ્ટિ થાય ત્યારે જ ' આ સર્વ બ્રહ્મ છે ' એવુ જ્ઞાન થાય છે આ પ્રમાણે સંક્ષેપથી જણાવી તેજ વિષયને વધારે સ્પષ્ટ કરવા શ્રીમદ્‌પ્રભુજી નિષ્કર્ષ સમજાવે છે **વિષયતા** માયાથી ઉત્પન્ન થાય છે પદાર્થનુ સ્વરૂપ ઢાંકી ભ્રાંતિ ઉત્પન્ન કરે છે, વિષયરૂપ ભગવાન્ છે હવે જે બ્રહ્મજ્ઞાની ન હોય અને ભ્રાંત હોય તેને પેલી માયાથી ઉત્પન્ન થયલી **વિષયતા** જ દેખાય છે. ભગવાનના સત્યસ્વરૂપનું જ્ઞાન તો બ્રાંત લોકોથી દૂર નાસે છે એમ ખાસ કરીને કહેવાનુ મન થાય છે ગોળ ચકરી ખાતો (ચગડોળે ચડેલો) પુરુષ બધા પદાર્થોને ગોળ ફરતા જુએ છે આ પુરૂષને ઘટની આકૃતિ જણાય છે, પણ તે ફરતી જણાય છે, જેવી છે તેવી નથી જણાતી આ દાખલા પ્રમાણે જ બ્રાંત પુરૂષોની સ્થિતિ છે ઉપરના દૃષ્ટાંતમા ઘટ વગેરે પદાર્થો વિષય છે, તેનુ સત્ય જ્ઞાન થવામા ભ્રમણરૂપી વિષયતા નડે છે, એટલે તે પદાર્થો ફરતા દેખાય છે, આ પ્રમાણે અહીં આગળ વસ્તુરૂપ ભગવાન્ પોતે વિષયરૂપ છે અને ભગવાનમા નાશ, ઉત્પત્તિ, તુચ્છ પદાર્થો, અન્યોન્યાભાવ વગેરે જે જણાયછે તે વિષયતારૂપ છે. જેમ ઘટ ફરતો નથી છતા તેમા ભ્રમણ જણાય છે, તેમ ભગવાનમાં પણ માયિક વિષયતાનુ ભાન થાય છે ભગવાનથી ભિન્ન અને ઘટપટ વગેરે રૂપે જગત્ દેખાય છે, તે વિષયતાથી દેખાય છે ખરે-ખર જોતાં જગત્ ભગવાનથી જુદુ પણ નથી અને માયિક પણ નથી આ શ્લોકનું જ વ્યાખ્યાન શ્રીસુબોધિનીજીમા કરતા કહ્યું છે કે–વિષયતાથી ઉત્પન્ન થયેલુ જ્ઞાન ભ્રમરૂપ છે (ખોટુ છે) અને વિષયથી (ભગવાનથી) ઉત્પન્ન થયલુ જ્ઞાન સત્ય છે. શ્રીસુબોધિનીજીમા વિષયતા બે પ્રકારની જણાવી છે ત્યારે એક વિષયતા પદાર્થના સ્વરૂપને ઢાંકી દે છે, ત્યારે બીજી વિષયતા વસ્તુના ખરેખરા રૂપને કઈ બીજાજ સ્વરૂપમા (કઈ વિચિત્ર તરેહથી) બતલાવે છે દર્પણમા જેમ મુખનુ પ્રતિબિંબ પડે છે, પ્રકાશરહિત પ્રદેશમા જેમ અંધકારનુ જોર જામે છે, તેમ માયાથી મોહિત થયલી પુરૂષની બુદ્ધિમા પેલી બે વિષયતા ઉત્પન્ન થાયછે ઉત્પન્ન કરનારી માયા છે. હવે વિષયતાનુ સ્વરૂપ અહીંયાં ધ્યાનમા આવે એમ સમજાવે છે એક વિષયતા પદાર્થની બ્રહ્મરૂપતાનો પ્રકાશ નથી થવા દેતી, બીજી વિષયતા જગદ્રૂપ છે પહેલી વિષયતા બ્રહ્મસ્વરૂપતાનો પ્રકાશ નથી થવા દેતી એમ કહેવાથી પ્રસ્તુત

---

૧. सर्वं खल्विदं ब्रह्म.

શ્રીમદ્ભાગવતના ષષ્ઠ સ્કન્ધમાથી વૃત્રાસુરનો ઇતિહાસ કોઈ પણ વાચક સ્વત વાચી લે એમ છે તેથી તેના અનુવાદની અત્ર અપેક્ષા ન રહેતાં, એકાદશ અધ્યાયના ૨૪મા શ્લોકથી ૨૭મા શ્લોક પર્યન્તની વૃત્રચતુ શ્લોકીનુ જ તાત્પર્ય અત્ર સ્પષ્ટ કરવામા આવે છે શ્રીમદ્ભાગવતના ષષ્ઠ સ્કન્ધના એકાદશ અધ્યાયના ૧૪મા શ્લોકથી વૃત્રાસુરના વચનનો પ્રારભ થાય છે ૧૪મા શ્લોકથી ૨૩મા શ્લોક પર્યન્તના એ સર્વ બોધવચન ઇન્દ્ર પ્રતિ ઉદ્દેશ્યા છે આ બોધવચન ઉચ્ચારતા વૃત્રની ભક્તિથી ભગવાન્ પ્રસન્ન થાય છે, અને વૃત્રને ભગવાનના સાક્ષાત્ દર્શન થાય છે અન્યત્ર ફલ અદૃષ્ટ અથવા પરોક્ષ હોય છે, પરન્તુ પુષ્ટિમા ફલ દૃષ્ટ અર્થાત્ સાક્ષાત્ હોય છે. દૃષ્ટફલ પુષ્ટિમા ફલ અદૃષ્ટ અથવા પરોક્ષ નથી, પરન્તુ પ્રત્યક્ષ હોય છે ફલાત્મક ભગવાનનો પ્રત્યક્ષ સાક્ષાત્કાર થયા પછી ૨૪મા શ્લોકથી ભગવાનની જ પ્રાર્થના વૃત્રાસુર કરે છે, અને એ ચતુ શ્લોકાત્મક પ્રાર્થના 'વૃત્રચતુ શ્લોકી' સજ્ઞાથી સુપ્રસિદ્ધ છે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યવિરચિત ચતુ શ્લોકીમા પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્મ અર્થ કામ અને મોક્ષ એ ચાર પુરુષાર્થનુ નિરૂપણ કર્યું છે, તે જ પ્રકારે આ વૃત્રચતુ - શ્લોકીમા પણ પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્મ અર્થ કામ અને મોક્ષ એ ચાર પુરુષાર્થનુ નિરૂપણ કર્યું છે આ વૃત્રચતુ શ્લોકી ઉપર શ્રીગુસાઈજીની કારિકા છે, અને તે ઉપર શ્રીપુરુષોત્તમજીની ટીકા છે, એ પૂર્વ કહેવાઈ ગયુ છે.

વૃત્રાસુરચતુ શ્લોકીના પ્રથમ શ્લોકમા પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્મનુ નિરૂપણ છે સ્મરણ કીર્તન અને સેવા એમ ત્રિવિધ પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્મ છે પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્માદિ ચારે પુરુષાર્થનો અધિકાર દાસ્યથી જ થાય છે, અને દાસ્યપૂર્વક પુરુષાર્થચતુષ્ટયનો અધિકાર પણ વસ્તુત ભગવત્કૃપાથી જ થાય છે, તેથી પ્રારંભમા કૃપા અને દાસ્યની યાચના કરીને વૃત્ર પ્રથમ શ્લોકમા પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્મનુ નિરૂપણ કરે છે મન પ્રાણપતિનુ સ્મરણ કરે વાણી કીર્તન કરે અને શરીર સેવા કરે એજ પુષ્ટિમાર્ગીય કાયિક વાચિક અને માનસિક ધર્મ છે પ્રવૃત્તિસાધ્ય લૌકિક અર્થ અને નિવૃત્તિસાધ્ય વૈદિક અર્થનો અતિવિરલ સમાહાર ભગવાન્ વિના અન્યત્ર નથી, તેથી વસ્તુત ભગવાન્ જ અર્થ છે ભગવાનના પડ્ ગુણથી ત્રિવિધ લૌકિક અને ત્રિવિધ વૈદિક એમ પૂર્ અર્થનુ નિરાકરણ થઈ રહે છે, તેથી પુષ્ટિમાર્ગીય વૈષ્ણવોને નાકપૃષ્ઠ પારમેષ્ઠ્ય સાર્વભૌમ રસાધિપત્ય યોગસિદ્ધિ કે અપુનર્ભવની અપેક્ષા નથી સમગ્રસ ભગવાન્ જ અર્થ છે, અને સર્વથી નૈરપેક્ષ્ય એ અર્થ પ્રાપ્ત કરવાનો ઉત્તમોત્તમ ઉપાય છે જેમ પક્ષરહિત પક્ષી જનનીના દર્શનની આકાક્ષા રાખે, જેમ વત્સ સ્તન્યની અપેક્ષા રાખે, જેમ પ્રિયા પ્રોષિતભર્તાના દર્શનની અપેક્ષા રાખે, તેમ મન ભગવાનના દર્શન કરવાની ઇચ્છા રાખે, એ જ પુષ્ટિમાર્ગીય કામ છે ભગવાનનો નિશ્ચલ અવિચ્છિન્ન સબધ એ પુષ્ટિમાર્ગીય મોક્ષ છે, તેમા પણ ઉત્તમશ્લોક ભગવાનના નિજ જનનુ સખ્ય એ **પુષ્ટિમર્યાદામાર્ગીય** મોક્ષ છે, લીલોપયોગિની માયાએ કરીને આત્મા આત્મજ દારા અને ગેહમાં આસક્તિ એ **પુષ્ટિપુષ્ટિમાર્ગીય** મોક્ષ છે, અને વ્રજભક્તવત્ પ્રવાહસર્વાત્મભાવે ભગવત્પ્રપત્તિ એ **શુદ્ધપુષ્ટિમાર્ગીય** મોક્ષ છે. અર્જુન **પુષ્ટિમર્યાદા** છે, ઉદ્ધવ **પુષ્ટિપુષ્ટિ** છે, અને વ્રજભક્ત **શુદ્ધપુષ્ટિ** છે આટલા ઉપોદ્ઘાત પછી વૃત્રચતુ શ્લોકીનુ સ્વારસ્ય સવિશેષ અનુભવારો.

॥ श्रीवृत्रचतुःश्लोकी ॥

अहं हरे तव पादैकमूलदासानुदासो भवितास्मि भूयः ।
मनः स्मरेतासुपतेर्गुणानां[1] गृणीत वाक् कर्म करोतु कायः ॥ १ ॥
न नाकपृष्ठं न च पारमेष्ठ्यं न सार्वभौमं न रसाधिपत्यम् ।
न योगसिद्धीरपुनर्भवं वा समञ्जस त्वा.विरहय्य काङ्क्षे ॥ २ ॥
अजातपक्षा इव मातरं खगाः स्तन्यं यथा वत्सतराः क्षुधार्ताः ।
प्रियं प्रियेव व्युषितं विषण्णा मनोरविन्दाक्ष दिदृक्षते त्वाम् ॥ ३ ॥

---

१ गुणांस्ते એમ પણ પાઠ છે

ममोत्तमश्लोकजनेषु सख्यं संसारचक्रे भ्रमतः स्वकर्मभिः ।
त्वन्मायया त्मात्मजदारगेहेष्वासक्तचित्तस्य न नाथ भूयात् ॥ ४ ॥

અક્ષરાર્થ—

હે હરે ! હું આપનો છું તેથી કેવલ આપના ચરણના મૂલનો પુનઃ દાસાનુદાસ થઈશ મન પ્રાણપતિનુ સ્મરણ કરો, વાણી ગુણોનુ ગાન કરે, અને કાય કર્મ[2] કરો (૧) હે સમંજસ,[3] આપનો વિરહ પ્રાપ્ત કરીને મને સ્વર્ગની અલ્પલોકની સાર્વભૌમની[4] રસાધિપત્યની[5] યોગસિદ્ધિની[6] કે મોક્ષની[7] આકાક્ષા નથી (૨) અજાતપક્ષ[8] પક્ષી જનનીની[9], ક્ષુધાર્ત[10] વત્સતર[11] સ્તન્યની[12], અને વિષ્ણુ[13] પ્રિયા પ્રોષિત[14] પ્રિયની દિદૃક્ષા[15] કરે, તેમ હે અરવિન્દાક્ષ[16] મન આપની દિદૃક્ષા કરે છે (૩) સ્વકર્મથી સંસારચક્રમા ભ્રમણ કરતો જે હું તે મને ઉત્તમશ્લોકજનને[17] વિષે સખ્ય (થાઓ), હે નાથ, આપની માયાથી[18] આત્મા[19], આત્મજ[20], દાર[21] અને ગેહમા[22] આસક્તચિત્તને[23] (ઉત્તમ શ્લોકજનને વિષે સખ્ય) મા થાઓ

॥ श्रीमद्विट्ठलेश्वरविरचिता ॥

॥ वृत्रासुरचतुःश्लोकीकारिकाः ॥

पूर्वमिन्द्रं प्रति प्राह ततो भक्त्याग्रतो हरिम् ।
दृष्ट्वा तत् प्रार्थयामास पुष्टिर्दृष्टफला यतः ॥ १ ॥
आद्ये तु पुष्टिमार्गीयो धर्मः स्मरणकीर्तने ।
सेवा चेति त्रयं तेन प्रार्थितः स निरूप्यते ॥ २ ॥
आत्मनश्चाधिकारित्वमुत्तमं दीनभावतः ।
प्रार्थनीयतया तस्य साधनं च कृपोच्यते ॥ ३ ॥ (१)
लौकिको वैदिकश्चार्थस्त्रिविधः प्राकृतैर्गुणैः ।
क्रमेणातो भगवतो गुणैः षड्भिर्निराकृतः ॥ १ ॥
स्वर्गभूमिरसैश्वर्य सात्त्विकादि तु लौकिकम
मोक्षश्च पारमेष्ठ्यं च सिद्धयश्चेति वैदिकम् ॥ २ ॥
प्रवृत्तिधर्मसाध्यत्वात् सामान्यं तत्तु लौकिकम् ।
निवृत्तिधर्मसाध्यत्वाद्विशेषं वैदिकं परम् ॥ ३ ॥
प्रत्येकमेव ते चार्था न तु सम्भूय कुत्रचित् ।
भगवत्यखिलात्मत्वाद्भवन्त्येव तथा हि ते ॥ ४ ॥
अतोऽर्थो भगवानेव पुष्टिमार्गेङ्गमन्यतः ।
सर्वतो नैरपेक्ष्यं च तथात्रापि निरूप्यते ॥ ५ ॥ (२)

---

૨ ભગવત્સેવનાત્મક ૩ સર્વાર્થરૂપ ૪ ભૂતલના ચક્રવર્તિ રાજ્યની. ૫ પાતાલના આધિપત્યની ૬ અણિમાદિ અષ્ટ યોગસિદ્ધિની ૭ જ્ઞાનપ્રાપ્ય સાત્ત્વિક મોક્ષની ૮ પાખવિનાના ૯ માની. ૧૦ ક્ષુધાથી પીડિત. ૧૧ વાછરુ ૧૨ દુગ્ધની ૧૩. લોકાર્ત ૧૪ પ્રવાસે ગયલા ૧૫ દર્શન કરવાની ઇચ્છા ૧૬ કમલલોચન ૧૭ ઉત્તમ અર્થાત શાસ્ત્રાર્થ જાણનાર જેનુ કીર્તન કરે છે તે ઉત્તમશ્લોક, તેના જન નામ ભક્ત ૧૮. લીલાપયોગિની ૧૯ આત્મતાસ્પદ જીવ દેહ પ્રાણ અંતકરણ અને ઇન્દ્રિયો ૨૦ મમતાસ્પદ પુત્ર ૨૧. મમતાસ્પદ સ્ત્રી ૨૨ મમતાસ્પદ ગૃહ ૨૩. આસક્ત છે ચિત્ત જેનુ એવાને.

पुष्टिमार्गे हरे रूपदिदृक्षा मनसो यदि ।
कामो निरूप्यते तत्र दृष्टान्तत्रितयं यथा ॥ १ ॥
द्वितयं लौकिकं प्रोक्तमेकं शास्त्रीयमुत्तमम् ।
लौकिकस्त्रिगुणाभ्यर्य दृष्टान्तः स्यादलौकिके ॥ २ ॥
अन्यथैकतरेणापि सिद्धार्थे त्रितयेन किम ।
क्षुद्रपो लौकिकः कामो रसरीत्या[१] तु शास्त्रतः ॥ ३ ॥
[म]भोस्तु रसरूपत्वात् स्वस्यैकत्वेन चोत्तमः ।
अयमेव हि दृष्टान्तस्तेनान्ते चैकतोदितः ॥ ४ ॥ (३)
पुष्टिमार्गे हरेर्दास्यं धर्मोऽर्थो हरिरेव हि ।
कामो हरेर्दिदृक्षैव मोक्षः कृष्णस्य चेद् ध्रुवम् ॥ १ ॥ (४)

અક્ષરાર્થ—

વૃત્રાસુર[૨] પ્રથમ ઇન્દ્ર પ્રતિ વચન કહ્યા, અને તે પછી ભક્તિથી પોતાના સમક્ષ હરિના દર્શન કરીને પ્રાર્થના કરી, કારણ કે પુષ્ટિ દૃષ્ટફલ[૨૪] છે (૧) સ્મરણ[૨૫] કીર્તન[૨૬] અને સેવા[૨૭] એમ ત્રિવિધ પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્મની વૃત્રાસુરે યાચના કરી છે, તેથી પ્રથમ શ્લોકમા પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્મનુ નિરૂપણ છે (૨) દીનભાવથી પોતાનુ ઉત્તમ[૨૮] અધિકારિત્વ યાચ્યુ છે, તેથી તત્સાધન[૨૯] કૃપાનુ પણ કથન છે. (૩) ૧

લૌકિક અને વૈદિક અર્થ[૩૦] પ્રાકૃત ગુણે કરીને ત્રિવિધ છે, તેથી ભગવાનના ૬૬ ગુણથી ક્રમે કરીને તેનુ નિરાકરણ કર્યુ (૧) સ્વર્ગ ભૂમિ અને રસાનુ ઐશ્વર્ય લૌકિક છે, અને મોક્ષ પારમેષ્ઠ્ય અને સિદ્ધિ વૈદિક છે, એમા સાત્ત્વિક[૩૧] પ્રથમ છે (૨) લૌકિક[૩૨] અર્થ સામાન્ય છે, કારણ કે તે પ્રવૃત્તિધર્મથી સાધ્ય છે, વૈદિક અર્થ અસાધારણ છે, કારણ કે તે નિવૃત્તિધર્મથી સાધ્ય છે, એ વિશેષ છે (૩) આ[૩૩] સર્વ અર્થ ભિન્નભિન્ન હોય છે, પરન્તુ કોઈ પણ સ્થળે સાથે હોતા નથી ભગવાનને વિષે તે સર્વ સાથે હોય છે, કારણ કે ભગવાન્ સર્વના આત્મા છે. (૪) તેથી ભગવાન્ જ પુષ્ટિમાર્ગમા અર્થ છે, અને અન્ય સર્વથી નિરપેક્ષતા[૩૪] તેનુ અગ છે, તે પ્રકારે અન્ન પણ (અર્થ અને તેના અગનુ) નિરૂપણ કર્યુ છે (૫) ૨

જ્યારે હરિના રૂપની મનમા દિદૃક્ષા થાય છે, ત્યારે તે પુષ્ટિમાર્ગમા કામ[૩૫] કહેવાય છે તેના ત્રણ

---

૨૪ દૃષ્ટ છે ફલ જેનું એવી પ્રત્યક્ષફલવતી ૨૫ માનસ ધર્મ ૨૬. વાચિક ધર્મ ૨૭ કાયિક ધર્મ ૨૮ ચારે પુરુષાર્થના અધિકારરૂપ ૨૯ અધિકાર કૃપાસાધ્ય છે ૩૦ લૌકિક અને વૈદિક એમ ધર્મના બે પ્રકાર છે, અને તેમા પણ સાત્ત્વિક રાજસ અને તામસ એમ અવાતર ભેદ છે ભગવાનના ઐશ્વર્યાદિ ૬૬ ગુણે કરીને સાત્ત્વિકલૌકિક (સ્વર્ગ) રાજસલૌકિક (પૃથ્વી) તામસલૌકિક (પાતાલ) સાત્ત્વિકવૈદિક (મોક્ષ) રાજસવૈદિક (બ્રહ્મલોક) અને તામસવૈદિક (સિદ્ધિ) એ ૬ અર્થનુ નિરાકરણ કર્યુ ૩૧ સ્વર્ગ ભૂમિ અને પાતાલ ક્રમશ સાત્ત્વિક રાજસ અને તામસ છે, તેમ જ મોક્ષ બ્રહ્મલોક અને સિદ્ધિ પણ ક્રમશ સાત્ત્વિક રાજસ અને તામસ છે ૩૨ પ્રવૃત્તિસાધ્ય સાધારણ ૩૩ ભગવાન્ વિના અન્યત્ર આ ૬ અર્થનો સમાહાર નથી, તેથી વસ્તુત ભગવાન્ જ અર્થ છે. ૩૪ ભગવદ્રૂપ અર્થ સિદ્ધ કરવાનો એક જ ઉપાય છે અને તે એ જ કે ભગવાન્ વિના ઇતર સર્વથી નિરપેક્ષ વૃત્તિ રાખવી ૩૫ હરિના દર્શન કરવાની ઇચ્છા એ જ પુષ્ટિમાર્ગમા કામ કહેવાય છે આ સંપ્રદાયને કામનુ દૂષણ દેનાર નિર્લજ્જ આ કારિકાનો વિચાર કરશે ?

દૃષ્ટાન્ત છે, તે આ પ્રમાણે (૧) એ૩૬ લૌકિક અને એ૩૭ ઉત્તમ શાસ્ત્રીય. લૌકિક ત્રિગુણિત૩૮ થઈને અલૌકિકમાં એક દૃષ્ટાત થાય છે. (૨) અન્યથા૩૯, એકથી૪૦ પણ સિદ્ધ અર્થમા અણુનો શો ઉપયોગ ? ક્ષુધારૂપ૪૧ લૌકિક કામ છે, અને રસગીતિથી૪૨ શાસ્ત્રીય છે (૩) પ્રભુ રસરૂપ૪૩ છે, પોતે એક૪૪ છે તેથી ઉત્તમ છે, એ જ દૃષ્ટાન્ત છે, તેથી અને એકતાએ૪૫ કરીને કહ્યો છે. (૪) ૩.

પુષ્ટિમાર્ગમા૪૬ હરિનુ દાસ્ય ધર્મ છે, હરિ જ અર્થ છે, હરિની દિદક્ષા જ કામ છે, અને કૃષ્ણનો અચલ સબન્ધ મોક્ષ છે. (૧) ૪.

નિષ્કર્ષ—

હે હરે ! આપ હરિ છો, આપ ભક્તોના આધિભૌતિક આધ્યાત્મિક અને આધિદૈવિક એમ ત્રિવિધ દુઃખનુ હરણ કરો છો જ્ઞાનથી પણ દુઃખાભાવરૂપ મોક્ષ સિદ્ધ થાય છે, પરન્તુ તે જ્ઞાન તો આપનો એક ધર્મ છે, અને આપ તો સાક્ષાત્ ધર્મી છો ધર્મના આશ્રય કરતા ધર્મિનો આશ્રય ઉત્કૃષ્ટ છે, તેથી હું જ્ઞાનનુ અવલબન ન કરતા આપનો જ આશ્રય કરૂ છુ હું આપનો છુ, અર્થાત્ આપનો મારા ઉપર અનુગ્રહ છે આપની કૃપાથી જ હુ આપનો દાસાનુદાસ થઈ શકું એમ છે. આપના દાસ્યથી જ પુષ્ટિમાર્ગીય મોક્ષ ધર્મ અર્થ અને કામ એ ચારે પુરૂષાર્થનો અધિકાર સિદ્ધ થઈ શકે છે. પુષ્ટિમાર્ગમા આપનો (**तव**) સબધ મોક્ષ છે, કેવલ ચરણારવિન્દના મૂલનું જ દાસ્ય (**पादैकमूलदास**) કામ છે, અનુસરણ (**अनु**) અર્થ છે, અને દાસ્ય (**दास**) ધર્મ છે, એ ચારે પુષ્ટિમાર્ગીય પુરૂષાર્થનો અધિકાર દાસ્યથી પ્રાપ્ત થાય છે, તેથી હુ તો પુન દાસ જ થઈશ વસ્તુત ભજનાનન્દનો અનુભવ એ જ મોક્ષ છે, દેહ ઇન્દ્રિય પ્રાણ અને અંતકરણ વિના ભજન થઈ શકતુ નથી, તેથી હુ તો પુન દાસ જ થઈશ. મોક્ષરૂપ ભજનાનન્દનો અનુભવ દાસ્યથી જ થાય છે, તેથી શ્રીગોપીજનોએ પણ ‘ **पुरुषभूषण देहि दास्यम्** ’,‘ **भवाम दास्य** ’ ઇત્યાદિથી દાસ્યની જ યાચના કરી છે આપનુ દાસ્ય પુષ્ટિમાર્ગીય મોક્ષનો જ અધિકાર સપાદન કરે છે એમ પણ નથી, કામ અર્થ અને ધર્મનો પણ અધિકાર દાસ્યથી જ સિદ્ધ થઈ શકે છે, તેથી વ્રજભક્તોએ પણ આપના કેવલ ચરણારવિંદના મૂલનુ દાસ્ય અગીકાર કરીને અલૌકિક કામનો અધિકાર સિદ્ધ કર્યો. વસ્તુત ભજનાનન્દનુ વિશેષે કરીને ધારણ **સ્ત્રીઓથી** જ બની શકે છે, અને પુરૂષોને પણ તે આનન્દ તદ્દ્વારા જ પ્રાપ્ત થાય છે દાસને અનુસરવુ એ પુષ્ટિમાર્ગીય અર્થ છે, અને દાસ્ય એ પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્મ છે, એ ઉભયનો પણ અધિકાર દાસ્યથી જ સિદ્ધ થાય છે, તેથી પુષ્ટિમાર્ગીય અર્થ અને ધર્મની આકાક્ષાથી પણ આપનુ દાસ્ય જ અભીષ્ટ છે પૂર્વ જન્મમા હું ચિત્રકેતુ હતો ત્યારે સકર્ષણ ભગવાનના દાસ્યથી અભિમાન થયો અને પરિણામે આસુર યોનિ પ્રાપ્ત થઈ, તેમ પુન ન થાય તેથી હુ આપના દાસનો અનુદાસ થઈશ જીવ સદૈવ ભગવદ્દાસ છે, તથાપિ પ્રતિબધક આસુર દેહની નિવૃત્તિ થયા પછી પુન દાસ્ય પ્રાપ્ત થશે. પ્રથમ જન્મમા હું દાસ જ હતો અને પુન દાસ જ થઈશ શ્રવણ કીર્તન-અને સેવા એ ત્રણ પુષ્ટિમાર્ગીય ધર્મ છે, તેથી મન પ્રાણપતિનુ સ્મરણ કરે, વાણી કીર્તન કરે, અને હાથ સેવા કરે એ જ મારી અભિલાષા છે શ્રવણ અને કીર્તનમા સ્વાર્થ મુખ્ય છે, અને સેવામા પરાર્થ–ભગવદર્થ–મુખ્ય છે સ્મરણ અને કીર્તન શ્રવણને અધીન છે તેથી અન્યની અપેક્ષા પણ રહે છે, પરતુ સેવામા તો સ્નેહ જ નિયામક છે, અને તો સ્નેહ પ્રભુકૃપાથી જ સિદ્ધ થાય છે ૧.

---

૩૬ પક્ષી અને વત્સ એ બે ૩૭ પ્રિયા ૩૮ લૌકિક દૃષ્ટાન્તને ત્રણે ગુણોને ત્રિગુણિત કરીએ ત્યારે અલૌકિક એક દૃષ્ટાન્ત થાય ૩ લૌકિક દૃષ્ટાન્ત= ૧ અલૌકિક દૃષ્ટાન્ત. ૩૯ એમ ન હોય તો. ૪૦. એક દૃષ્ટાન્તથી પણ વાક્યનો આશય સ્પષ્ટ હોય તો અશુદ્ધદેવ૭ ત્રણ દૃષ્ટાત શા માટે આપે ? ૪૧ પક્ષી અને વત્સની ૪૨. પ્રિયાની પ્રિયદર્શનેચ્છા ૪૩ **रसो वै स** ઇત્યાદિ શ્રુતિ અત્ર પ્રમાણ છે ૪૪ ભગવાન્ અને પ્રિય ઉભય એકવચનમા છે, તેથી ઉત્તમ વાસ્તવિક દૃષ્ટાંત આ છેલ્લુ જ છે ૪૫. આ કારિકા શ્રીમદાચાર્યચરણની છે એમ વે શા. સ છગનલાલ અમરેલીનુ પણ મતવ્ય છે.

સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાન્તો.

૧ જગત્ સત્ય છે

૨ જગત્, જીવ, અન્તર્યામી, અક્ષર પરબ્રહ્મ આદિના નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ
પ્રકૃતિ પુરુષ પરમાત્મા જ છે

૩ જીવે અવિદ્યાથી કલ્પેલો અહન્તામમતાત્મક સંસાર મિથ્યા છે.

૪ જીવ અણુ છે, શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મનો અંશ છે, વ્યાપક નથી.

૫. પરબ્રહ્મ પુરુષોત્તમ કૃષ્ણનું ધામ અક્ષર બ્રહ્મ ગણિતાનંદ છે

૬ સર્વોપરિ વેદાન્તશાસ્ત્રે પ્રતિપાદિત પરમકલ્યાણ વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે.

૭ કૃષ્ણની સેવા એ જ અંશ જીવનો ધર્મ છે, એટલે વસ્તુત સ્વધર્મ કૃષ્ણસેવા જ છે

૮. આત્મનિવેદન અને પ્રભુપ્રાપ્તિ વિના અન્ય સ્વધર્મ હોઈ શકે જ નહિ

Reg. No. B. 896.

પુષ્ટિભક્તિસુધાના ગ્રાહકોને સવિનય નિવેદન.

આ માસિકના દ્વિતીય વર્ષના ચાર અંક નિયમિત પ્રસિદ્ધ થઈ ચુક્યા તથાપિ કેટલાક વૈષ્ણવભાઇઓ તરફથી હજી પણ આ વર્ષનું નોંધાવર આવ્યું નથી. જે વૈષ્ણવભાઈઓએ નોંધાવર મોકલ્યું નથી તેમણે જન્માષ્ટમી પહેલા તે મોકલવાનું ધ્યાનમાં રાખવું જન્માષ્ટમી સુધીમાં રૂા. ૧-૮-૦ નહિ મોકલનાર ગ્રાહકોને પાંચમો અંક વી પી. થી મોકલવામાં આવશે, અને તેઓની પાસે રૂા. ૧-૮-૦ ને બદલે રૂા. ૨-૧-૦ લેવામાં આવશે

આ માસિકના સર્વ લેખકો જે લેખ લખે છે તે સાંપ્રદાયિક સેવા કરવાની વિમલ બુદ્ધિથી પણ [illegible] છે, તેથી બીજા પત્રોની માફક આ માસિકના લેખકોને આપવામાં દ્રવ્યનો ખરચ બિલકુલ વસ્તુત [illegible] આવતા આનંદ થાય છે. માસિકની છપામણી વગેરે ખરચ ઘણી જ કરકસરથી તદ્દ્વારા જ પ્રાપ્ત થાય છે [illegible] નોંધવરમાંથી જે કાંઈ બચશે તેમાંથી સાંપ્રદાયિક પ્રાચીન, અર્થો પ્રસિદ્ધ ધર્મ છે, એ ઉભયનો [illegible] વૈષ્ણવભાઇઓએ આવા માસિકના પોતે ગ્રાહક થવું જોઇએ, એટલું જ નહિ આકાંક્ષાથી પણ આપ વાનના દાસ્યથી અભિમાનીએ આવા ધાર્મિક કાર્ય તરફ પ્રેરવાનું ખાસ લક્ષમાં રાખવું જોઇએ

દાસનો અનુદાસ થઈશ

પંખી પુન દાસ્ય પ્રાપ્ત
ક્ષીનેન અને સેવા એ ત્રા
કરે, અને વાય સેવા કર [illegible] બાદ,
સેવામા પરાર્થ-ભગવદર્થ-મુ [illegible] સ્ટ્રીટ. } પ્રકાશક.
પણ રહે છે, પરતુ સેવામા

---

૩૬ પક્ષી અને વત્સ એ બે
અલૌકિક એક દૃષ્ટાન્ત થાય છે [illegible]
૪૦. એક દૃષ્ટાન્તથી પણ વાક્યનો આશય
૪૧ પક્ષી અને વત્સની ૪૨. પ્રિયાની પ્રિયદર્શિનીએ ૪૩ રસો બે છે
છે ૪૪ ભગવાન્ અને પ્રિય ઉભય એકવચનમાં છે, તેથી ઉત્તમ પ્રાપ્તા [illegible]
૪૫. આ કારિકા શ્રીમદાચાર્યચરણની છે એમ વે. શા. સ. છગનલાલ અમરજી

વર્ષ ૨ જું] શ્રીકૃષ્ણાબ્દ ૫૧૩૮, શ્રાવણ

પુષ્ટિભક્તિસુધા.

પૃષ્ઠ ૧૧ શ્રીવલ્લભાબ્દ ૪૩૩ [અંક ૫ મો.

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनु स्वाम् ॥ १ ॥
नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ २ ॥
भक्त्या त्वनन्यया शक्यः अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥ ३ ॥

પ્રકાશક,

વાડીલાલ નગીનદાસ શાહ,

બી. એ એલએલ. બી. વકીલ હાઇ કોર્ટ.

નોબતર, રા ૨—૦—૦ છૂટક અંકના ૩ ૦—૪—૦

Printed by B Miller Superintendent British India Press, Bombay, and Published by Vadilal Nagindas Shah, B A , LL. B Princess Street Bombay

प्यारि तेरे नेना दोऊ राते उनिंदरेनके जागे ॥
गोभित है मानो कुसुम गुलालके मधुपमात्र मधु पीवन लागे ॥ १ ॥
मरगजि सारीतन सीथल भेय भूषन आलस भेर अंग रतिरंगसो पगे ॥
कृष्णदासप्रभु गिरिधरसग रति मानी कुंजभवन रसरग उमगे ॥ २॥
प्यारे अवध वदि गये रात ।
मोथलगात अरसात जंभात पिय कहत बात तुतरात ॥ १ ॥
बारबार मुसक्यात चलत डगमगात जानक भाल सुहात नैन नींद अपकान ॥
गोविदप्रभु गिरिधर बहु नायक अधिक पडात जात कोहकीजु लजात ॥ २ ॥
बिहारिन बिलसत श्याम धनी ।
नंदनंदन वृषभाननन्दनी रतिरस केलि ठनी ॥ १ ॥
श्यामस्वरूप सन्यो प्रियतनमें ज्यों घन तडित बनी ॥
कृष्णदासप्रभु रसबस कर लीने गुन गावत सजनी ॥ २ ॥
बिहारिन मोहे श्याम धनी ।
अंबुजवदन अहो मृगनयनी काजरेरेख अनी ॥ १ ॥
दशन कुंद अरु अरुन बिंबफल नासा जलद मनी ॥
कृष्णदासप्रभु रीझ विवश भये मूरत चित्र ठनी ॥ २ ॥
दोऊ अलसान राजत मात ।
श्रीवृषभाननदनी नन्दसुत रसिक सलोने गात ॥ १ ॥
नील पीत अंबर लपटाने छिनछिन अधिक सिहात ॥
मानो घनदामिनी अपुनी छब होय एकत्र बिगसात ॥ २ ॥
पवन मद अरविंद मिल अंग अंग लपटात ॥
सुखसागर गिरिधरन छबिलो निरख अनंग लजात ॥ ३ ॥
माननी मान मोहन द्वार ठाढे ।
तेरी तो प्रकृति आन पियकी पीर न जात बोले नो बहोत डफान त्यों
त्यों व आगरे कपाट दिये गाढे ॥ १ ॥
बरसेरेनकारी तोसो तो हिलग भारी एसेरी लालनपर तनमनदीजे गाढे ॥
सुनत वचन प्यारी कंठ लागी गिरिधारी गोविंदप्रभुको हृदो प्रेमजलसो
बुझायो आय विरहानल डाढे ॥ २ ॥
कोउ मेरे आंगन व्हजुगयो ।
जगमग जोति वदनकी री माई सपनो सो जु भयो ।
हों दधि मेल मोरी सुन सजनी लेन गई जू मथानी ॥
कमलनयनकी नांई चित यो वह मूरतमें जानी ॥ २ ॥

करन हि चलत देहगति थाकी बहुत दुःखमें पायो ॥
परमानंदप्रभु चरन चलत ग्रह रहत कित घर आयो ॥ २ ॥
श्यामाजुको श्याम गनावन आयें ।
सन्मुख व्हेके चरन छुवावत मुकुटकी परछायें ॥ १ ॥
इन दरपन लेहो नाहिनाहि करत हे छबिसो धासिके आयें ॥
सूरश्याम वृन्दावन जीवन छलसो हां हां खायें ॥ २ ॥

महानुभावी श्रीगोपालदासजी.

(अनुसंधान पृष्ठ ५७)

द्वितीय आख्याननी समाप्तिमा भक्त कविगजे 'नवरंगनागर प्रगटिया मन पूर्वा बहु काम' એમ દર્શાવ્યુ હવે તૃતીય આખ્યાનમા શ્રીગુસાઈજીના પ્રાકટયોત્સવનુ ચિત્ર આલેખીને કૃષ્ણપ્રાકટ્યસમયના નંદમહોત્સવનુ સ્વરૂપ ભક્તશિરોમણિ શ્રીગોપાલદાસજી આપણા નેત્ર અને હૃદયની સન્મુખ ખડુ કરે છે

'આ પોષ મધ્યાહ્ને નોમે શ્રીનાથજી, અક્કાજી ઉર ઉપન્યો આનન્દ,
આ ચંદ શ્રીવૃન્દાવનનજો પ્રગટિયો' ઇત્યાદિ

પુષ્ટિમાર્ગ સાથે નિત્ય સબન્ધ ધરાવતા પોષમાસની કૃષ્ણપક્ષની નવમીને દિવસે મધ્યાહ્ને શ્રીમદ્ વૃન્દાવનચંદ્ર શ્રીગુસાઈજીરૂપે પ્રગટ થયા, અને તેથી શ્રીમન્માતૃચરણ શ્રીમહાલક્ષ્મીજીને ઉરમા અતિ આનન્દ ઉપજ્યો શ્રીગુસાઈજીના પ્રાકટ્યસમયે સર્વત્ર આનન્દ વર્તાઈ રહ્યો છે તેનુ વર્ણન એમ પ્ય લુક્યા શ્રીગોપાલદાસજી કરે છે

'સૌભાગ્યસુંદરી મળી ધવલ ગાયે, સુહાય રુડા કહ્યુ નાદ
આનન્દ ઉપન્યો તે અંગોઅંગ ઘણો
સૂતિકા સદન સુહામણુ, શોભા રુડી વ્હેલ્ય જાય
આ વાજીત્ર વાજે તે સમેતણા' ઇત્યાદિ

અંગોઅંગ આનન્દથી ભરેલી સૌભાગ્યવતી સુંદરીઓ સુન્દર કંઠથી ધવલ ગાવા લાગી, સૂતિકાસદન પણ શોભાવા લાગ્યુ અને વાજીત્ર વાગવાથી આનન્દ સર્વત્ર વ્યાપી રહ્યો સુકુમાર પુત્રના પ્રાકટ્યનુ શ્રવણ કરી પરમ ઉદાર શ્રીમદ્વલ્લભપ્રભુ સર્વસ્વનુ દાન કરવા લાગ્યા, પાતાલમા શેષનાગ અને સ્વર્ગાદિકમા ઇન્દ્રાદિદેવતા આનન્દ પામ્યા, અને તે જ ક્ષણે મંગલ નિશાન વગડાવ્યા ગાન્ધર્વ અને અપ્સરાઓ આનન્દથી નૃત્ય તથા ગાન કરવા લાગ્યા, આ પ્રાકટ્યથી જગતના જીવોનો મોહ દૂર્યો જાણી બ્રહ્મા મહાદેવાદિ હર્ષ પામ્યા અને કુસુમવૃષ્ટિ વરસાવી જગત્પતિ શ્રીવિઠ્ઠલનાથજીને ભેટતા સત્યવ્રત સહસ્ર શાખાથી સુદ્રગાન કરવા લાગ્યો શ્રીમદ્વલ્લભપ્રભુએ વેદવિહિત સર્વકર્મ કર્યા અને બહુપ્રકારે ગાયોનુ દાન કર્યું દશકથાવમા કુમ અતિ કૃર્યા તથા મણિમયી પારિજાત પુષ્પની માલાઓ મંગાવી, તેનાથી સ્વજનને સંતોષ પમાડ્યા શ્રીશ્રીગોપીનાથ ત્યારે પ્રગટ્યા ત્યારે ઢાગધર સહકારના (આમ્બાના) પર્ણના તોરણ શોભાવા લાગ્યા, તથા ધરણીપર ચંદનતણા નીર રેલાવા લાગ્યા દધિ દુગ્ધ ઘૃત મધુ ઇત્યાદિની સુગન્ધ મંડપમા તથા ગ્રહનાપર ફરેફરી રહેવા લાગી અને ત્યા ભ્રમરના ટોળેટોળાં આવવા લાગ્યા સુત ભાઈ ચારણ ભટ્ટીને આનન્દ પામ્યા અને ઉન્માદમા ને ઉન્માદમા તેમને નિરોધ પ્રાપ્ત થયો

'કનકચોવા કુકુમ ભર્યા, અક્ષતદૂર્વા ભરીયે સુથાલ,
આ માત પત્નિતની મહમહે
તોરણ પર્ણ સહકારના ધરણીયે ચંદનતણા નીર
નીર શ્રીગોપીનાથ શ્રીવિઠ્ઠલ પ્રગટિયા

દધિ દુધ ઘૃત મંડુ માડવે, ગોપિયે વહેંચે સુગન્ધ,
સુગન્ધે મોહ્યાં અલિકુલ આવિયા
સુત માગધ સાંડુ સર્વે મળ્યા, મલીઆ તે માહોમાહ
ઉત્સાહભર્યા કોઇ કોને જાણે નહિ' ઇત્યાદિ

શ્રીગિરિધરણ માગ શ્રીમદ્ભાગવતનુ નિરીક્ષણ કરશે એમ જાણી શુકદેવજી પણ આનન્દ પામ્યા, અને શ્રીમદ્વલ્લભપ્રભુના ચરણને વન્દન કર્યું તેલગ બ્રાહ્મણોના તિલકરૂપ, નવઘન તથા મરકતમણિના જેવી કાન્તિવાલા શ્રીગુસાઇજી કલિકાલમા ભક્તોના મનોવાંછિત કાર્ય પૂર્ણ કરવા સકલકલાથી કલ્પદ્રુમરૂપે પ્રકટ થયા ત્યારે ગર્ગાદિક ગણકોએ આવીને આશીર્વાદ દીધા આખ્યાનના અન્તમા આ ધવલ ગા નારને સારસ્વતલીલાના સાક્ષાત્કારરૂપી ફલનુ દાન થશે, એમ કહીને આનન્દથી શ્રીગોપાલદાસજી પ્રાકટયોત્સવના વર્ણનની સમાપ્તિ કરે છે

'ધવલ ધન્યાશ્રી ગાન જે કરે, ઉચ્ચારે શ્રીવિઠ્ઠલજી અવતાર
સારસ્વતલીલા તે જન લહે.'

તૃતીય આખ્યાનમા શ્રીગોપાલદાસજીએ સ્મરીને શ્રીગુસાઇજીના પ્રાકટયોત્સવનુ વર્ણન કરી નદમહોત્સવનો આપણને સાક્ષાત્કાર કરાવ્યો, હવે ચતુર્થ આખ્યાનમા શ્રીગુસાઇજી જ પરમતત્ત્વ શ્રી-કૃષ્ણ છે એમ દર્શાવવા એમ્હોશ્રીને જ નમન કરતા ચતુર્થ આખ્યાન પ્રારંભે છે.

'તે પદ વદુ શ્રીવલ્લભનદજી, ત્રિભુવનમગલ પરમાનન્દજી,
સકલજીવનો ટાલ્યો દુન્દુજી, જગમા વ્યાપ્યો મુખમડંદજી'

સર્વજનના ઉદ્ધાર માટે નિગમની (વેદની) રહસ્યવિદ્યાનો જેમ્હોશ્રીએ વિચાર કર્યો છે એવા શ્રીય-મુનાના સુકુમાર સુખદ ચરણકમલને વન્દન કરજો શ્રીવૃન્દાવનના શૃંગાર શ્રીમદ્ગોકુલચન્દ્ર ભૂમિભાર ટાલ વાને બ્રાહ્મણકુલમા શ્રીવિઠ્ઠલનાથ એવુ નિરુપમ નામ ધારણ કરી પ્રકટ્યા શ્રુતિયોથી પણ પાર ન પમાય એવી જેમ્હોશ્રીની નિત્યનૂતન નિત્યલીલાનુ વર્ણન એક રસનાથી થવાનુ અગમ્ય દર્શાવી શ્રીગોપાલદાસજી શ્લોકમા જણાવે છે કે શ્રીગુસાઇજી જ પરમતત્ત્વ છે.

'સકલશાસ્ત્રપ્રમાણ એવે પદ ગાઇ માહે સાર,
તત્ત્વમાહે તત્ત્વ ત્રિભુવન ભક્તનો આધાર'

આ પ્રમાણે ભક્ત વત્સિલ શ્રીગુસાઇજી જ પરમતત્ત્વ છે એમ દર્શાવી નીચવી તુરત શ્રીગુ સાઇજીના અલૌકિક સ્વરૂપનુ વર્ણન કરે છે

'મર્યે અગોઅગ રસભર્યા રમભર્યા લોયન બાર (૨)
વચનુવલણે બોધ્યા હૃદયભાવ અનેક પ્રકાર'

જેમ શ્રીકૃષ્ણ 'रसो वै सः' શ્રુત્યનુસાર રસપુર્ણ પ્રકટ પુરુષોત્તમ છે તેમ રીતે શ્રીગુસાઇજી પણ સર્વપ્રકારે રસમય છે, અને હૃદયના અનેક ભાવ જેમ્હોશ્રીના નેત્ર દર્શાવે છે જેમ્હોશ્રીના મુખમા-થી વર્ષેલા મોહિત ભક્તજનો ત્યા આવીને જેમ્હોશ્રીના ગુણગાન કરે છે, અને શ્રીગુસાઇજીના સરસ વચનના ઉચ્ચાર માત્રથી તેમના સર્વપાપનો પરિહાર થાય છે

હવે શ્રીગુસાઇજીની કૃતિ દર્શાવે છે. પ્રભુના નામમન્ત્રથી મુક્તિનાદાર પ્રકટ કર્યો પરમ ઉદ્ધાર શ્રીગુસાઇજીએ બુદ્ધિના બ્યર્થથી ભક્તજનના ભય હર્યા જે લોકો અસારમા આસક્ત હતા તેમને પોતે ભગવદ્સેવાપરાયણ થવા પ્રેર્યા, અને સર્વ ઉચ્ચ નીચ નરનારીઓને રાજરાજે કેવી કીધા (૭-૮) તુરત શ્રીગુસાઇજીની કૃતિ દર્શાવી નીચવી તુરતમા શ્રીગોપાલદાસજી જેમ્હોશ્રીની મહત્ત્વપથી અનન્યતા દર્શાવે છે.

'આગે તે અગે પ્રકટિયા તે મન્ય કર્યા અપાર,
શ્રીયમોદા ઉત્સગવાલિત પૂર્ણ અતિસુકુમાર

અનેક ધર્મ કહ્યા પ્રભુજીએ નિગમને અનુસાર
ગિરિરાજધરનો તાપ ટાળ્યો શ્રીલક્ષ્મણસુત નિર્ધાર
પોતે પ્રાકટ્ય પોતાતણો રસતણો કર્યો છે ઉચ્ચાર
પોતે તે અંગોઅંગ સુખદ શોભા સદન અંગીકાર'

આ પ્રમાણે શ્રીગોપાલદાસજી શ્રીગુસાઇજીની મહાત્મ્યકથી અનન્યતા, અને ગૃહસ્થાશ્રમનો તેઓશ્રીએ કરેલો અંગીકાર દર્શાવીને ચતુર્થ આખ્યાનનો ઉપસંહાર કરે છે

'સ્કંધસખ્યાએ કહ્યા પદ, શ્રીભાગવત રસગજ,
ભક્તજનપદ્મજ પ્રતાપે, સકલ સરીયા કાજ'

શુદ્ધસનાતન બ્રહ્મવાદમા અકૂતીના તત્ત્વ છે તદનુસાર દ્વિતીય આખ્યાનમા ૨૮ તુકથી આચાર્ય વીના ચરિત્રનુ વર્ણન કર્યું તેમ અહિ રસગજ શ્રીમદ્ભાગવતના દ્વાદશસ્કન્ધ પ્રમાણે દ્વાત્રિંશ તુકથી શ્રીગોપાલદાસજીએ શ્રીગુસાંઇજીનુ વર્ણન કર્યું છે

આ પ્રમાણે ચતુર્થ આખ્યાનનુ અવલોકન કરીને હવે આપણે પંચમ આખ્યાનમા ભક્ત વિગજ શુ દર્શાવે છે તે જોઇએ આઠમની ચાર તુકથી શ્રીગોપાલદાસજી શ્રીગુસાઇજીએ ભૂતલપર પ્રકટ થઇને જે જે કાર્ય કર્યા છે તેનુ વર્ણન કરે છે શ્રીવ્રજપતિ રાસવિહારી શ્રીગુસાઇજીએ પ્રકટ થઇને સકલ દુર્ગતિનુ નિવારણ કર્યું, માયિકમતનુ ખંડન કર્યું અને ભક્તિમાર્ગનુ બહુ પ્રકારે મંડન કર્યું, અને ભક્તિમાર્ગને સર્વપ્રકારે સુદૃઢ રીતે સ્થાપન કર્યો જે વાક્યોએ શ્રોત્રથી શ્રીગુસાઇજીના વચન સુધારસનુ પાન કર્યું તેમના સકલ અર્થ સિદ્ધ થયા, એટલુ જ નહિ પણ તેમનો લીલામા અંગીકાર પણ થયો જેનાપર શ્રીગુસાઇજી કૃપા કરીને લીલામા અંગીકાર કરે છે તેમના સકલતાપનો નાશ થાય છે અને ચાર પુરુષાર્થ તેમના સન્મુખ ખડા રહે છે, એટલુ જ નહિ પણ તદુપરાન્ત તેમને ભજનાનન્દનુ દાન કરી વ્રજમંડલમા સ્થિર કરીને સ્થાપે છે જે વાક્યો શ્રીગુસાંઇજીના કૃપાપાત્ર થયા છે તેઓ ભક્તશિરોમણિ થાય છે અને દેવમુનિ સર્વ તેમનુ ગાન કરે છે આ ભક્તોને કાલ કર્મ સ્વભાવ બાધ કરતા નથી, યમ તેમના પર ધનુષ્ય તાણતો નથી આ પ્રમાણે શ્રીમદ્વલ્લભનો માર્ગ જ એવો છે કે ત્યા અજ્ઞાનિનો તો પ્રવેશ જ નથી, એટલે અજ્ઞાની સૃષ્ટિમા બાધ કરનારા કાલ કર્મ સ્વભાવાદિ અને સત્તા ભોગવનાર યમાદિનુ બલ પુષ્ટિમાર્ગમા અકિંચિત્કર છે

'તેને કાલ કર્મ નવ બાધે, જમ તે શિર ધનુસ ન સાંધે
એવો માર્ગ શ્રીવલ્લભરનો, જ્યા નહિ પ્રવેશ વિધિહરનો'

આ તુક વાચતા આપણને શ્રીમદાચાર્યપ્રોક્ત '**पुष्टि कालादिबाधिका, न जातु यमयातना भवंति ते पय पानत, न ते पाखण्डतां यान्ति**' ઇત્યાદિ વાક્યનુ સ્મરણ થાય છે

આ પ્રમાણે શ્રીગોપાલદાસજી પુષ્ટિમાર્ગનુ અને તન્નિષ્ઠ ભક્તના મહાત્મ્યનુ વર્ણન કર્યા પછી શુદ્ધપુષ્ટિભક્તિથી પ્રાપ્ય પરમધામ શ્રીમદ્ગોકુલનુ અદ્ભુત વર્ણન પુન કરે છે

'જ્યા નિત્યરાસ બહુ પેરે, મંડ્યનાયક નૃત્યત ઘેરે,
જ્યા રત્નજટિતતટસરિતા, નવપલ્લવ ભ્રમિ હરિતા,
જ્યા ધાતુરત્ન ગિરિ રાજે, વાજીત્ર વિવિધ પેરે વાજે,
જ્યા યુવતીયૂથ બહુ માહે શ્રીજી સ્યામવર્ણ સુહાયે

શ્રીવ્રજમંડલમા વિવિધ પ્રકારે નિત્યરાસ થયા કરે છે અને એક એક ગોપી બીચ બીચ માધવ એ પ્રકારે કૃષ્ણ એ ગોપી મધ્યે વિરાજીને નૃત્ય કરે છે રત્નથી જડેલા ઉજ્જ્વલતટવાલા શ્રીયમુનાજી ત્યા શોભી રહ્યા છે, અને ત્યાની સદન ભૂમિ નવપલ્લવથી છવાઈ જવાથી હરિત (હરીઆળી) થઈ રહી છે રત્નધાતુમય શ્રીગિરિરાજ પણ ત્યા જ શોભાય છે, અને વિવિધ પ્રકારના વાજીત્ર પણ ત્યા જ વાજે છે અસંખ્ય યુવતીયૂથમા સ્યામવર્ણ શ્રીમત્કૃષ્ણચન્દ્ર ત્યાં સુહાયી રહ્યા છે. આ પ્રમાણે

શ્રીગોપાલદાસજી શ્રીવ્રજમંડલનું વર્ણન કર્યા પછી અન્ય જીવોને શિક્ષા આપે છે કે તમે પણ શ્રીગુસાંઈજીને શ્રીકૃષ્ણરૂપ જાણી, એમનો અહોભાવ ભજન કરો, કોઈ પણ જીવને તેમ કરવાથી તે જ ઠામે પરમ સુખ થશે અન્તમા શ્રીગોપાલદાસજી શ્રીમત્પ્રભુચરણની પ્રાર્થના કરીને કહે છે 'પ્રભો ! આપનો દાસ છું, અને ભક્તત્વરૂપથી મારો જે વિયોગ થયો છે તેનું આપ નિવારણ કરો જે મંદ મતિવાળા શ્રીગુસાંઈજીના આવા અલૌકિક સ્વરૂપને નહિ સમજીને, ઐહિક આમુષ્મિક ભોગનો ત્યાગ કરીને, જેમના નામમાત્રથી સમૃદ્ધિ પ્રાપ્ત થવા છતા ઉપકારનું વિસ્મરણ કરી કૃતઘ્ન થઈને, સમ્પ્રદાય સ્વરૂપના સંપૂર્ણ અજ્ઞાન સાથે સંપ્રદાયથી અત્યન્ત વિરુદ્ધ સ્વચ્છન્દાચારી થઈને, '**सत्यं परं धीमहि**' સૂત્રનો ત્યાગ કરી '**द्रव्यं परं धीमहि**' એ સૂત્રને આધારે આચરણ કરીને, કૃતઘ્નતાની ગંધ જેમ નાબૂદ થઈ ગઈ છે તેવા થઈને, સમયને અનુસાર સત્યનો ત્યાગ કરી ઘડીકમાં તદ્દન બદલાઈને અન્ય જનોને મુગ્ધ કરે છે, એટલું જ નહિ પણ જેમનામા શ્રીગુસાંઈજીનું મન્તવ્ય સ્વકર્તવ્યથી અત્યન્ત વિપરીત હોવાથી તેઓશ્રી વિષે 'ગાંડપણ' ની (શ્રીગુસાંઈજી ગાંડા– હતા એવી) બુદ્ધિ ઉત્પન્ન થાય છે, તેમને વિષે મહાનુભાવી શ્રીગોપાલદાસજીનો શું અભિપ્રાય હોઈ શકે તે તો અમારાથી કહી જવાનું નથી, પણ આવા જડમનુષ્યોને વાસ્તે અમારા શ્રીમદાચાર્યના કુલમુકુટમણિ પંડિતરાજ શ્રીપુરુષોત્તમજી જે ઉપમા પ્રયુક્ત કરે છે તે જ ઉપમા અમે તેવાઓને અર્પતા તેમને **जारजात**' માનીયે તો બહુ અનુચિત કર્યું નહિ કહેવાય, અને પુષ્ટિમાર્ગમા તો **प्रार्थिते वा तत्त किं स्यात् स्वाम्यभिप्रायसशयात्** પ્રમાણે પ્રભુને પ્રાર્થના પણ ન થાય છતા જીવબુદ્ધિથી પ્રાર્થના થઈ જાય છે કે હે પ્રભો ! આવા મંદમતિઓના દુર્મુખ ભવિષ્યમા સ્તબ્ધ કરે !

આ પ્રમાણે પંચમ આખ્યાનમા અન્તે 'મેવદજનદાસ નમાંગે તેને કૃપાવિયોગ નિવારે' એમ કહ્યાની શ્રીગોપાલદાસજી ષષ્ઠ આખ્યાનમા તે જ અભિલાષાને વિસ્તારે છે, અને પછી ભગવદ્લીલાનો ગુણાનુવાદ કરીને શ્રીકૃષ્ણ જ 'શ્રીવિઠ્ઠલ' એવું નિરુપમ નામ ધારણ કરી પ્રકટ થયા

'સગુણ સ્નેહી શ્યામલા જાતા અહર્નિશ દર્શન આપોજી
પરમ સુખ દેવાને કાજે વ્રજમંડલ સ્થિર કરી સ્થાપોજી'

નિર્દોષપૂર્ણગુણ ભક્તવત્સલ પ્રિયપ્રભુ અહર્નિશ આપનું દર્શન અમને થાઓ, અને પરમ સુખનું દાન કરવાને હે પ્રભો, અમને શ્રીવ્રજમંડલમા સ્થિર કરીને સ્થાપો આવી ઉત્કટ અભિલાષા પૂર્ણ કરવાવાળા શ્રીગુસાંઈજી છે, તેથી તેમના નામનું સ્મરણ નિરન્તર કરવું, અને એમના સ્વરૂપામૃતનું માધુર્યનું પાન નેત્રપુટ પુન પુન કરવું, એમ કહીને એ જ શ્રીવિઠ્ઠલપ્રભુએ સાક્ષાત્કારપમા કૃષ્ણદાસે કરેલી અષ્ટાક્ષરલીલાના દર્શનની પ્રબલ ઇચ્છા દર્શાવતા શ્રીગોપાલદાસજી તે જ લીલાનું બાહુલ્ય જનને યોગ્ય વર્ણન કરે છે

'તે પદ ક્યારે દેખાનું જે ગોધન પુંઠે ધાયેજી
નન્દસુદની મુખસુખ પામીને વારવાર અમાયેજી'

અહિંથી ભગવદ્લીલાનો અનુવાદ આરંભે છે જે પ્રભુ ગાયોને વનમા લઈ જતા હતા અને જેમનું મુખસુખ પામીને નન્દસુદનીઓ વારવાર તૃપ્ત થતી હતી એવું શ્રીગોકુલના ગોપીજનોનું દર્શન અમને ક્યારે થશે ' એમ આરંભમા કર્યાની આખ્યાનના અન્તમા પણ તે જ અભિલાષા શ્રીગોપાલદાસજી દર્શાવે છે

'જે લીલા માંહે મન વસ્યા તે ભક્ત ભાવે ગાનજી'

શ્રીગોપાલદાસજી (૩–૮) તુંકામા ભગવદ્લીલાનો અનુવાદ 'શ્રીગોપીજનવલ્લભ' એ નામને અનુસાર પ્રથમ કરે છે

'દિવસ સર્વ ગ્યામા મળી, રમ્યા નવો વરતા ગાયેજી,
ગોપમંડળી મધ્ય દેખીને વારવાર સુખ થાયેજી

વાસર નિર્વાહ એમ કરે સખી સાયકાલે પેખેજી (પ્રેમે૦)
અલકમુખ ખુરજ લાગીતે કમલભ્રમર વિરોધેજી
ગોપબાલકમંડલીમધ્યે રંગ અનેક ઉપજાવેજી
મત્તગજગતિ મલપતો વહાવો શ્રીગોકુલમા આવેજી
લોચનભૃગ પીયે ધાય તે પ્રકટ મુખમકરંદજી,
કમલપાંખડી આખડી તે તોઈ જોઈ ટાળ્યા દુઃખદજી
જોતા તૃપ્તિ ન ઉપજે પ્રભુ અધરસુધારસ પાયેજી
ભુજલતા બાંધી ભામિનીનો વિરહતાપ બુઝાવેજી

શ્રીકૃષ્ણે શ્રીગોપીજનવલ્લભરૂપે જે ક્રીડા કરી હતી તેનુ વર્ણન કર્યા પછી શ્રીયશોદાસુતરૂપે જે ક્રીડા કરી છે તેનુ વર્ણન ભક્તકવિરાજ શ્રીગોપાલદાસજી નીચની તુકમા કરે છે

'પર્યુ મુખ દઈ ગોકુલમા પ્રભુ આવરા પાઉધારેજી,
યશોમતી બે ભામણા મુતને નિરાજન ઉતારેજી
વસ્ત્રાયન મુખરજ પોછીને હરિરૂપ સકલ નિહારેજી,
ઉભી થાયે રોમાવલી કે કોમલ અગ સભારેજી
ધીરે ધીરે કરી વાલ્હા મુતને સદનમા પધરાવેજી,
મુદરી ગૃહકાજ મિટ વલી નિજધ્યાને આવેજી
ઉખોદ્યા સોંધા મેલી હરિને અગ અથાલ કરાવેજી
અગવસ્ત્ર કરી સ્વચ્છવપુને પાટે તેલ મલાવેજી
વિવિધવસન સુગધ નીવી ફુલ અબોડે ફાવેજી
હણુ હણુનો વહાવો લાડકડો તે ભોજનશાલાયે આવેજી
શ્રીમધા અધરસુધા વિના પિયુને બીજુ દાઈ નવ ભાવેજી
પ્રાન પખારે ને નિરાએ આવે પ્રીતિ નવી ઉપજાવેજી

.. . .

સકલ વજમા પોઢીયા વહાવો વિવિધરસ સુખદાનજી

આ પ્રમાણે શ્રીગોપાલદાસજીએ કરેલા ભગવલ્લીના ગુણાનુવાદનો અનુભવ કરવામા જેટલે અશે ભગવદ્રામા ન્યૂનતા તેટલે જ અશે તે અનુભવમા પણ ન્યૂનતા અને અપૂર્ણતા શ્રીગોપાલદાસજીએ આદિ ભગવલ્લીતાનો અનુવાદ એવો તો સરસ કર્યો છે કે શ્રીમદ્ભાગવતમા શ્રીશુકદેવજીના તે જ અનુવાદનુ આપણને અક્ષરે અક્ષરે સ્મરણ કરાવે છે

આ પ્રમાણે પ્રભુવિરહતાપથી નમ થયેલી ગોપીઓને અધરરસનુ દાન કરી તેમના વિરહતાપનુ નિવારણ કરી, પોતે ગોકુલમા પધારે છે આદિ શ્રીયશોદાજી તેમના ઓવારણા લઈ, વસ્ત્રાચનથી મુખરજ લુછીને પ્રભુના સકલ શ્રીઅગને નિહાળે છે સ્નેહથી રોમાચ થયેલા હસ્તવડે પ્રભુનુ કોમલઅગ સભાળે છે અને પછી ધીમે ધીમે પ્રભુને ગૃહમદિરમા પધરાવે છે આદિ અન્ય વ્રજસુદરીઓ ગૃહકાર્યના બહાના કાઢી પ્રભુના દર્શન કરવાને આવે છે પ્રભુને ગૃહમદિરમા પધરાવ્યા પછી શ્રીયશોદાજી સુગન્ધી ઉષ્ણજલથી સ્નાન કરાવી, સ્વચ્છ વપુને અગવસ્ત્ર ધરે છે, પ્રભુના અબોડે ફુલ ગુથે છે, ત્યારપછી પ્રભુને ભોજન મન્દિરમા પધરાવે છે, જ્યા માતાનુ મન ભોજન કરતા પ્રભુ બહુવારથી આવેલે છે, અને ત્યારપછી સકલવ્રજમા વિવિધરસનુ દાન કરતા પ્રભુ પોતે પોઢે છે એજ પ્રભુનુ દ્વિભુજરૂપ આ શ્રીવિઠ્ઠલનાથજી છે

આ પ્રમાણે પદ આખ્યાનમા શ્રીગુસાઈજી અને શ્રીકૃષ્ણની અનન્યતા દર્શાવતા ભગવલ્લીતાનો ગુણાનુવાદ કરી અન્તમા શ્રીગોપાલદાસજી પ્રેમાલભક્તને 'ભજે એમ પર્યુ ભક્તિભાવથી ઉપસહાર કરે છે

'શ્રીવિઠ્ઠલદ્વિભુજરૂપ તમારુ લીલા એહવી પેરે ગાઝોજી
ઓળવે કેમ ચાલને જે પ્રીતિ અમસુ બાઝીજી.'

અથ ચતુર્થી વિજ્ઞપ્તિઃ।।

શ્રીકૃષ્ણાય નમ ।। પહેલા ભવમા જે સુભાગ્ય હતુ તેનુ મહત્વ હુ જાણતો નથી. તે વડે કરીને તારી કૃપા જે અત્યત દુર્લભ તે માગ પર પૂર્ણ હતી (૧) જે તારો હોય અને તારી સેવાથી દૂર હોય તે જીવશોભા હે નાથ, તુ જો માનતો હોય તો આ મારી સત્ય વિનપ્તિ છે (૨) માગ પ્રાણ પોતાને રહેવાનો યોગ નથી એમ માનવા છતા પણ મારા શરીરને છોડતા નથી તેથી તેમને હુ બેશરમ માનુછુ. (૩) હે નાથ, તારી કૃપાથી પહેલા ત્યાગ વગેરેનો હુ તુચ્છકાર કરતો હતો, પણ હાલ હે પ્રભુ, તારી કૃપા વિના તે મને દુખ દે છે (૪) હે પ્રભુ, તારો જે હુ તે તારી સેવામા અયોગ્ય, એ માગ અભાગ્યની પરાકાષ્ઠા એમ હુ માનુછુ (૫) મારુ જીવન એમ તારા સયોગમાજ હોા, તારા ચરણકમલના એક ક્ષણના પણ વિપ્રયોગમા મરણ થાયેા, માટે એવો ભાવ છે માટે તુજ મારુ શરણ છે (૬) અહહ! ત્રિભગલલિત આકૃતિવાન્ પ્રાણનાથના અંગસગ વિનાના ઘણા દિવસ ગયા, ઘણા વહી જાયછે, ને ઘણા જશે એવી એક પણ ક્ષણ આવતી નથી કે જેમા મહારુ ભાગ્યોદય થાય હુ મ્હારા જીવનપ્રાણની કયારે હરીને ઝાખી કરીશ? (૭), અદ્યાપિ પર્યત ગોકુલેશ કદાપિ નિજજનને માટે વિલબ કરતા નહી, પણ હમણા મારી તદ્દન ઉપેક્ષા કેમ કરી એ વિચારમા મારુ મન ક્ષણે ક્ષણે ખેદ પામે છે (૮) મારા અપરાધનો સમુહ મોટો છે, તોપણ તુ સ્વકીયને ત્યજતો નથી, તેથીજ હે પ્રાણપતિ, મારી આવી દશા છતા મને કાઈપણ ચિતા નથી (૯) આ હૃદય તારા વિરહને ઇચ્છે છે પણ આખ તે કબુલ કરતી નથી હે વ્રજનાથ, હુ શુ કરૂ? મારા ઘણુ સમજવતા છતા પણ પરસ્પર નિર્વાહ કાઈપણ સ્વાર્થત્યજતુ નથી (૧૦) હે નાથ, હે જીવનહાર, હે કમલનાયન, તને જેમ યોગ્ય લાગે તેમ કર, એવી આ ત્વદીયની પ્રાર્થના છે (૧૧), રાત્રી થઈ, અધારુ થયુ, આખે દિવસમા કાઈ આવતુ જતુ નથી, એમ ન છે, તુ ચતુર છે હુ લાયેા વખત થયા સગના અભિલાષવાળી છુ, તોપણ પ્રાણશ્રેષ્ઠ મળતા નથી, તેથી હે પ્રિયસખિ મારી ખાત્રી છે કે મને આલિગન સુખ મળવામા વિધિ જ વાકો છે (૧૨) સ્વનવભક્તિરૂપ શ્રીગધિકાજી અથવા શ્રીસ્વામિજીની પ્રાપ્તિમા પ્રતિબધની નિવૃત્તિ કરનાર તારા શિવાય બીજી કાઇને હુ જોતી નથી માટે જેમ મારો પ્રાણ મને મળે તેમ તુ કર (૧૩) કામબાણથી પીડિત મારા પ્રાણ જેમતેમ કરતા તારા મીઠા વાકયોથી વ્રજજનના પ્રભુના સગની આશાથી ટકી રહ્યા છે, હવે તો હેસખિ, પ્રિયતમનુ આલિગન થશે તોજ વિરહજ્વાને શાત કરનાર જીવન રહેશે (૧૪) હેસખિ, હુ શુ કહુ? પ્રાણપ્રિયના વિરહાગ્નિથી બળેલી હુ જીવુછુ તેજ મને શરમ પમાડનાર છે (૧૫) હેસખિ, આ તારે લખી રાખવુ કે અતિપ્રયત્નથી રાધિકા-નાથ કૃપા કરશે જ, નહિ તો મારે મનોરથો વડે જ જન્મનો નિર્વાહ કરવો ભાવિ છે (૧૬) હે વ્રજેશ, તારા વિયોગાગ્નિનો દાહ મને અપ્રિય જેવો લાગે છે, કેમકે તારા સગના વિયોગમાજ મને નડે છે, નહિતો (સગમા) કાઈ દિવસ નડતો નથી (૧૭) હેસખિ, ગોપીશના વિરહમા પણ જીવવાની આશા બળવાન્ છે, કેમકે હાલમા તુ મારી દુખીઆરીનુ કારણ છે (૧૮) હેનાથ, એમ સભળાય છે કે તારા પરનો ભાવ સર્વેને મુક્તિવગેરે ફલ આપે છે, હે વ્રજનાથ, તેજ ભાવે મને તો વિરહદુખરૂપીફલ આપ્યુ છે (૧૯) મારી પ્રિયાના ચરણની રેણુનો સમુહ જો મારા હૃદયમા ન હોત, તો તારા વિયોગનો દાવાગ્નિ મને બાળી નાખત નહીં? (૨૦) તારા વિયોગમા પણ મારા પ્રાણ રહે તે ઉચિતતો નથી, પણ તેમના રહ્યા વિના વિપ્રયોગ દુખ નજ થાત (અનુભવાત નહીં) (૨૧) હે પ્રાણપ્રિય, તારા જેમના દર્શન કરવાથી સર્વેને સતોષ થાય છે, પણ હાય, તેજ જેમના

દર્શનથી મને કષ્ટ થાય છે, એમ ક્રમ૨ કહે (૨૨) હેસખિ, કમલલોચન (પ્રભુ) માર હૃદયમા રહેલુ જ્ઞાનરૂપીગ્ન પોતાને વ્યહુને વિનારૂપી સમુદ્રમા નાખીને કયા ગયા૨ (૨૩) તાર વિયોગાગ્નિની ભડભડની ઝાળથી બળી ગયલા છતા મારા પ્રાણ હજી રહે તેમા નવાઇ નથી, કેમકે હુ બેશરમ છુ (૨૪) પ્રાણેશના વિરહથી દુખી થયલા મારા પ્રાણ કેવી રીતે હજી રહ્યા૨ (ઉત્ત૨) વિયોગાગ્નિથી બળેલાને યમ પણ અડતો (સ્પરતો) નથી (૨૫)

ઇતિ શ્રીવિઠ્ઠલેશ્વ૨કૃતા ચતુર્થી વિજ્ઞપ્તિ સમાપ્તા

मगनलालशास्त्रीना भाषणो.

संप्रदायनिरीक्षण.

(अ) उपक्रम

પરમભાગ્યવાન્ વૈષ્ણવો,

આપણા શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યના સંપ્રદાયના સિદ્ધાન્ત થોડા અવકાશમા સર્વત આપ સમક્ષ સમજાવવા એ કાર્ય બહુ કઠિન છે શ્રીમદાચાર્યચરણના વચનોનુ રહસ્ય જોઇએ તો ગંભીર અને અગાધ છે કે મારા જેવા સામાન્ય પુરૂષથી તે યથાયોગ્ય શબ્દોમા આપી શકાય એમ નથી, તો પણ શ્રીમદ્ગોસ્વામી શ્રીઅનિરુદ્ધાચાર્યજી તેમ જ આપ સર્વના આગ્રહથી યથામતિ મારે જે અનુવાદ કરવો પડે છે, તે અનુવાદ કરવામા શ્રીમદાચાર્યચરણની કૃપામાત્રનુ જ અવલંબન કર્યુ છુ, અને તેમના અનુગ્રહ ઉપર વિશ્વાસ રાખીને યથાશક્તિ જે કંઇ છુ તે એકચિત્તથી આદરપૂર્વક શ્રવણ કરશો એમ આપ સર્વને નમ્રતાપૂર્વક પ્રાર્થના કરૂ છુ

વૈષ્ણવો, આપ વિવેકથી જોશો તો આપ સર્વને સ્પષ્ટ પ્રતીત થશે કે હાલ આપણા એક જ વૈષ્ણવ સંપ્રદાયમા બે વર્ગ છે એક શ્રદ્ધાવાન વર્ગ નિત્ય પ્રભુદર્શનાદિક કર્યા વિના અન્નપાનાદિ પણ કરતો નથી એ વર્ગની શ્રદ્ધાને કેટલાક આધુનિક અંધશ્રદ્ધા કહે છે વૈષ્ણવોમા બીજો વર્ગ કેળવણી પામેલો છે તેમની બુદ્ધિને સારા સંસ્કાર મળેલા હોવાથી તેમની મતિ અતિતીક્ષ્ણ થયલી હોય છે માત્ર અંધશ્રદ્ધા તે વર્ગને માન્ય થઈ શકતી નથી આ બે વર્ગ વધારે નિકટના સંબંધમા આવે તો બને વર્ગ પરસ્પર ઉપકાર કરી શકે એમ છે પ્રથમ વર્ગમા બુદ્ધિનો સંસ્કાર ન્યૂન છે બીજા વર્ગમા શ્રદ્ધાદિ દૈવી સંપત્તિ વિશેષ દૃશ્યમાન થાય છે માત્ર શ્રદ્ધા કે માત્ર બુદ્ધિથી યથાયોગ્ય કાર્ય થવુ શક્ય નથી બુદ્ધિ અને શ્રદ્ધા બન્નેના મેળાપની બહુ જ આવશ્યકતા છે. મારે બતાવવાનુ માત્ર એટલુ જ છે કે એકલી શ્રદ્ધા કે એકલુ જ્ઞાન મુક્તિને વાસ્તે બસ નથી, પણ શ્રદ્ધા અને જ્ઞાન ઉભયની જરૂર છે શુદ્ધ તર્ક સંપૂર્ણ શ્રદ્ધા અને જ્ઞાન મેળવવાની ઉત્કંઠા એ બને તત્ત્વની પ્રાપ્તિ થતે ત્યારે જ આપણે આપણુ કર્તવ્ય યથારીતિ કરી શકીશુ, નહિ કે કેવલ શ્રદ્ધાથી કે કેવલ જ્ઞાનથી શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ જે જે અનુપમ ગ્રંથો રચ્યા છે તે ગ્રંથોનો અભ્યાસ પણ આપણે શ્રદ્ધાથી કરીશુ તો જ તેમાથી સારાસાર નિર્ણય કરીને ખરૂ તત્ત્વ પ્રાપ્ત કરી શકીશુ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યના ગ્રંથોના અધ્યયન વાસ્તે જેટલી શ્રદ્ધાની જરૂર બીજા વર્ગને છે, તેટલે જ દરજ્જે શ્રદ્ધા ઉપરાંત શ્રીમદાચાર્યચરણના સિદ્ધાન્તનો આશ્રય કરવામા શ્રીમદાચાર્યજીના ગ્રંથોના જ્ઞાનની પણ જરૂર છે જ્ઞાન અને શ્રદ્ધા બન્નેની ઘણી જ આવશ્યકતા છે બને વર્ગ શુદ્ધ મતિ કરણથી પોતાના સદ્ગુણોનુ પરસ્પર સંવર્ધન સંવર્ધન કરે એ સર્વતે અભીષ્ટ છે.

---

૧ શ્રીમદ્વૈષ્ણવ પરિષદના પ્રાથમિક સંમેલનસમયે વડોદરામા શ્રી અનિરુદ્ધલાલજીની પ્રમુખતા નીચે તા ૧૫-૭-૧૯૨૬ને દિવસે આ ભાષણ કર્યું હતુ

કેટલાક અન્યમતી અને પાશ્ચાત્ય પુરુષો એવો આક્ષેપ કરે છે કે શ્રીમદ્વલ્લભસંપ્રદાયમાં જ્ઞાનસામગ્રી દુર્બલ છે, અર્થાત્ એ સંપ્રદાયમાં વિદ્વત્તા નથી આ માન્યતામાં કેટલું સત્ય છે અને કેટલું અસત્ય છે તે તપાસવામાં કેટલીક દલિલો આપવી પડશે જે પુરુષો ઉપર પ્રમાણે આક્ષેપ કરી રહ્યા છે, તેમાના એક પણ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યના શ્રીમદણુભાષ્યનિબંધાદિ ગ્રંથો તરફ દૃષ્ટિ કરી હોત તો તેમને પોતાને પણ તેમણે કરેલા આક્ષેપનું સત્યાસત્યત્વ જણાત "બાપાવાક્ય પ્રમાણ"ન્યાયે "હું કહીએ તે જ માનો" એવું કોઈ પણ સ્થળે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ કર્યું નથી પોતાના ગ્રંથોના હમેશા પોતે ચાર પ્રકરણ પાડે છે, અને તેમાં પ્રથમ પ્રકરણમાં પ્રમાણનો યથાયોગ્ય નિર્ણય થઈ રહ્યા પછી પ્રમેય સાધન અને ફલનું વર્ણન કરે છે જ્યાં સુધી પ્રમાણનો નિર્ણય થઈ રહ્યો ન હોય ત્યાં સુધી, પ્રમાણનિર્ણય વિના, પ્રમેય બ્રહ્મસ્વરૂપ કેવી રીતિથી સિદ્ધ થઈ શકે ? પ્રમાણનું લક્ષણ શું ? પ્રમાણ કેટલાં માનવાં ? તે માનવાની શું જરૂર છે ? ઇત્યાદિ નિર્ણય પ્રથમ કરીને પ્રમાણ-પ્રકરણ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી પ્રમેયનો—બ્રહ્મસ્વરૂપનો—વિચાર પ્રારંભ કરે છે જે પ્રમિતિ[1] કરે તેનું નામ પ્રમાણ અથવા જેથી વસ્તુનું યથાર્થ જ્ઞાન[2] થઈ શકે તે પ્રમાણ આર્ય જ્ઞાનમાર્ગમાં સર્વત્ર પ્રમાણ નિર્ણય ઉપર બહુ લક્ષ આપવામાં આવે છે તે યોગ્ય જ છે, કારણ કે પ્રથમતઃ પ્રમાણનિર્ણય થવો અત્યાવશ્યક છે આ આવશ્યકતાને અચ્છી રીતે ધ્યાનમાં રાખીને શ્રીમદાચાર્યવર્યે પ્રથમ પ્રમાણનો વિચાર[2] કરીને પછી જ પ્રમેય અર્થાત્ બ્રહ્મસ્વરૂપના વિચારનો પ્રારંભ કર્યો છે.

સમ્પ્રદાયમા જ્ઞાનસામગ્રી દુર્બલ છે"

(ચ) પ્રમાણવિચાર

શ્રીમદ્-વ્યાસાચાર્યવિરચિત તત્ત્વસૂત્ર વા બ્રહ્મસૂત્રમાં પ્રથમાધ્યાયના પ્રથમ પાદમાં **ઈક્ષતેર્નાશબ્દમ્** એમ ચતુર્થ તત્ત્વસૂત્ર છે એ સૂત્રના શ્રીમદણુભાષ્યમાં શ્રીમદાચાર્યવર્યે પ્રથમ પ્રમાણનો વિચાર કર્યો છે પૂર્વપક્ષીએ એવી શંકા કરેલી છે કે બ્રહ્મને કોઈ પણ પ્રમાણ પહોંચી શકતું નથી, કોઈ પણ પ્રમાણથી બ્રહ્મસ્વરૂપનો નિર્ણય થઈ શકતો નથી, બ્રહ્મ સર્વપ્રમાણાતીત છે બ્રહ્મ સર્વ પ્રમાણવ્યવહારથી પણ અતીત જેવું પાર છે, માટે વેદાદિ કોઈ પણ પ્રમાણ બ્રહ્મનો નિર્ણય કરી શકે તેમ નથી, એટલું જ નહિ પણ જો વેદાદિ પ્રમાણથી ગમ્ય બ્રહ્મ છે, અને વેદાદિ નિગમાગમ પ્રમાણથી બ્રહ્મસ્વરૂપનો નિર્ણય થઈ શકે છે એમ બ્રહ્મવાદી આગ્રહ કરશે, તો સર્વવેદાતીત સર્વવ્યવહારાતીત બ્રહ્મ માત્ર વ્યવહાર્ય થઈ જશે આ પૂર્વપક્ષના ઉત્તરમાં સિદ્ધાન્તી સૂત્રકાર **ઈક્ષતે ર્ન અશબ્દમ્** એમ સૂત્ર યોજે છે ઉપનિષદમાં કહ્યું છે કે **તદ્ ઐક્ષત** તે બ્રહ્મે જોયું, અભિધ્યાન કર્યું, માટે બ્રહ્મ અપ્રાપ્ત કહેવાય નહિ, શબ્દપ્રમાણ પણ બ્રહ્મનું પ્રતિપાદન ન કરી શકે એમ કહેવાય નહિ, માત્ર વેદરૂપ અપૌરુષેય શબ્દપ્રમાણ જ બ્રહ્મનો નિર્ણય કરી શકે છે બ્રહ્મનો નિર્ણય કરવામાં અપૌરુષેય અર્થ જણાવનાર વેદ વિના બીજા કોઈ પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણની જરૂર રહેતી નથી

પ્રથમ અલૌકિક શબ્દ-પ્રમાણૈકગમ્ય છે

વેદને પ્રમાણ માનવામાં પણ બહુ ભેદ છે કેટલાક વેદમાંથી માત્ર કર્મકાંડ જ માને છે અને જ્ઞાનકાંડ માને છે તો પણ તેને ગૌણ (હલકો) કહે છે બીજા વળી, નથી ઉકટા, વેદમાંથી માત્ર જ્ઞાનકાંડ જ માને છે, અને કર્મકાંડને ગૌણ કહે છે હાલમાં કેટલાક "સંહિતા"ને જ વેદ કહે છે, "બ્રાહ્મણ"-નામના વેદના ભાગને પણ કેટલાક વેદ તરીકે માનતા નથી કેટલાક ઉપનિષદને વેદરૂપ ગણે છે, બીજા તેમ ગણતા નથી આ પ્રમાણે વેદને પ્રમાણ માનનારાઓમાં પણ અનેક મતભેદ છે

વેદના પ્રામાણ્યમાં મતભેદ

---

૧ પ્રમિણોતિકરણં વા પ્રમાણમ્ । ૨ અનધિગતાર્થગન્તૃ પ્રમાણમ્ । ૩ માનાધીના મેયસિદ્ધિ ।

ગગનવિહારાચાર્યજીનો વેદ વિષે નિર્ણય

મીમાંસાચાર્યજી નિર્ણય આપે છે કે 'વેદ' સાક્ષાત્ નારાયણ છે, સર્વ વેદથી જ જ્ઞાન થાય છે' સર્વ વેદને સમાનતાથી પ્રમાણ માનવા વેદના કોઈ ભાગ ઉપર કે કોઈ કાંડ ઉપર અતિશય ભાર મૂકવાની જરૂર નથી અલૌકિકસામર્થ્ય-યુક્ત પ્રભુને ધર્મસ્વરૂપે લીલા કરવાની ઇચ્છા થાય છે ત્યારે કર્મકાંડથી પણ નૈષ્કર્મ્ય પ્રાપ્ત થાય છે, અને એ જ પ્રભુને બ્રહ્મસ્વરૂપે=જ્ઞાનસ્વરૂપે રમણ કરવાની ઇચ્છા થાય છે ત્યારે જ્ઞાનકાંડથી પણ સાયુજ્યમુક્તિ થાય છે, માટે વેદમાં અમુક કાંડ મોટો અને અમુક કાંડ નાનો એવી મિથ્યા તરકટ ન ઉઠાવતા ચારે વેદની સંહિતા બ્રાહ્મણ ઉપનિષદ્ ઇત્યાદિ સર્વ ભાગને સરખી રીતિથી જ પ્રમાણ માનવા એક ભાગ બીજા ભાગથી ન્યૂન છે વા અધિક છે એવા કપોલકલ્પિત તરંગ ઉઠાવી વેદિક મનમાં ભેદ પાડવાની કોઈ પણ જરૂર જ નથી ચારે વેદની સંહિતા બ્રાહ્મણ અને ઉપનિષદ સર્વ પ્રમાણ સમાનતાથી જ અંગીકાર કરવા

ષડંગ વિષે નિર્ણય

હાલ જેમ આપણા લેખકો પુસ્તકોમાં પરિશિષ્ટ (appendix) રાખે છે તે જ પ્રકારે વેદમાં પણ છ પરિશિષ્ટ છે, અને તેને 'અંગ' કહેવામાં આવે છે વેદના એ છ અંગ વેદના ઉચ્ચાર અર્થ અને અનુષ્ઠાન ગ્રંથે વેદોક્ત સાધન કરવામાં બહુ ઉપયોગમાં આવે છે, તેથી છ અંગનો પણ વેદમાં જ અભ્યાસ કરવો શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી 'તત્ત્વદીપનિબંધ'માં આજ્ઞા કરે છે 'કે વેદના છ અંગ છે.' 'એ છ અંગ વેદની રક્ષા કરે છે, માટે અંગ કહેવાય છે એ [૧]અંગ વેદની રક્ષા બહુ રીતિથી કરે છે, કોઈ અંગ વેદનું સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કરે છે, કોઈ અંગ વેદના અર્થ આપે છે, અને કોઈ અંગ વેદિક સાધન કેવી રીતે કરવા તે પ્રકાર બતાવે[૨] છે' શ્રીમદાચાર્યચરણ ઉપદેશ કરે છે કે '[૩]શિક્ષા છંદ નિરુક્ત વ્યાકરણ જ્યોતિ અને કલ્પ એ છ વેદના અંગ કહેવાય છે તેમાં, શિક્ષામાં વેદના વર્ણોચ્ચાર કેવી રીતે કરવા એ પ્રતિપાદન કર્યું છે છંદનામના બીજા વેદાંગમાં વૈદિક વૃત્ત અથવા છંદ આપેલા છે અમુક મંત્રમાં કેટલી માત્રા છે કેટલા અક્ષર છે કયા ગણમાં કેવી શૈલીથી મંત્રોચ્ચાર કરવો એ વિચાર આ છંદનામના અંગમાં કરવામાં આવેલો છે શિક્ષા અને છંદ એ બે અંગ મંત્રના ઉચ્ચાર અને વૃત્ત પ્રતિપાદન કરે છે, અર્થાત વેદનું સ્વરૂપ કેવું છે તે જણાવે છે નિરુક્તનામના વેદના ત્રીજા અંગમાં કઠિન વૈદિક શબ્દોની વ્યુત્પત્તિ અથવા નિર્વચન છે, અને કવચિત્ કવચિત્ મંત્રોનું વ્યાખ્યાન પણ તેમાં દૃશ્યમાન થાય છે વ્યાકરણનામના ચોથા વેદાંગમાં પ્રાચીન પાણિનિમહર્ષિકૃત વ્યાકરણનો સમાવેશ થાય છે, અર્થાત્ નિરુક્ત અને વ્યાકરણ એ બે વેદાંગ વેદના અર્થ સમજવામાં ઉપયોગી છે જ્યોતિનામના પાંચમા વેદાંગમાં યજ્ઞ કરવાના શુભ મુહૂર્તાદિનો વિચાર છે, અને એ જ્યોતિ આપણા પ્રાચીન ખગોલશાસ્ત્રનું મૂલ છે કલ્પનામના છઠ્ઠા અંગમાં વૈદિક યજ્ઞ કેવી રીતે કરવા તે સમજાવવામાં આવ્યું છે, અર્થાત્ જ્યોતિ અને કલ્પ એ બે અંગમાં વૈદિક સાધનનો અનુષ્ઠાનનો પ્રકાર સમજાવવામાં આવ્યો છે' આ પ્રમાણે છ અંગ વેદનું રક્ષણ કરનાર હોવાથી વેદવત્ જ માન્ય ગણાય છે

ચાર ઉપાંગ વિષે નિર્ણય

ચાર વેદની સંહિતા બ્રાહ્મણ ઉપનિષત્ અને વેદના છ અંગ માત્ર જ માનવાથી ઉત્તમ અધિકારીનું કાર્ય ચાલી રહે, પરંતુ હીન અને મધ્યમ અધિકારીને બીજા ચાર ઉપાંગ માનવાની જરૂર રહે છે ઉત્તમ અધિકારીએ છ અંગથી વેદનો નિશ્ચય કર્યો છે, તે જ અર્થ દૃઢ કરી આપનાર આ ચાર ઉપાંગ હોવાથી ઉત્તમાધિકારીને પણ આ ચાર ઉપાંગ માનવા ઇષ્ટ છે. પુરાણ ન્યાય મીમાંસા અને ધર્મશાસ્ત્ર એ ચાર ઉપાંગ છે પુરાણમાં ઇતિહાસનો પણ સમાવેશ થાયછે, આ ઇતિહાસપુરાણ

---

૧ વેદો નારાયણ સાક્ષાત । ૨ વેદૈશ્ચ સર્વૈરહમેવ વેદ્ય । ૩ ષડંગાનિ તથા વેદે વેદરક્ષાફલાનિ હિ સ્વરૂપનોર્ય્યનર્થ્યેવ ત્વનુષ્ઠાનાત્ ત્રિધા હિ તત્ । ૪ શિક્ષા છંદ સ્વરૂપે તુ નિરુક્ત વ્યાકૃતિસ્તથા અર્થ જ્યોતિસ્તથા કલ્પો ત્વનુષ્ઠાન પ્રયોજક ।

પૂર્વ વૈદિક સિદ્ધાન્ત જેવા પ્રકારથી આચરણમા આવતો એ વર્ણવે છે કેટલાક વેદના મન્ત્રનુ સમજી શકાય એવી રીતિથી આખ્યાન પણ ઇતિહાસપુરાણમા આપવામા આવેલુ છે. કાઈક અંશે વૈદિક ઇતિહાસનો ખ્યાલ એ ઇતિહાસપુરાણથી આવે છે ન્યાયનામનુ બીજુ ઉપાંગ છે, એ ન્યાય તે ગૌતમઋષિપ્રણીત ન્યાયશાસ્ત્ર નહિ, પરતુ આખ્યાયનાદિ બ્રહ્મવિદ્યાપારંગત પ્રાચીન આચાર્યોએ વૈદિક સિદ્ધાતનુ સમર્થન કરવા જે વૈદિક યુક્તિપ્રયુક્તિઓ આપેલી છે તે અપૂર્વ ન્યાય એથી Vedic logicનો ખ્યાલ આવે છે ન્યાય વડે કેટલાક નીતિશાસ્ત્ર સમજે છે તે પણ અયુક્ત નથી બીજુ અંગ મીમાસા છે, એ મીમાસામા પૂર્વ ધર્મમીમાસા અને ઉત્તર બ્રહ્મમીમાસાનો સમાવેશ થાય છે વેદના પૂર્વકાંડના સંદેહનો નિર્ણય જૈમિનિઋષિએ ધર્મમીમાસામા કર્યો છે, અને બાદરાયણજીએ ઉત્તરકાંડનો નિર્ણય બ્રહ્મમીમાસામા કર્યો છે, માટે એ સમસ્ત જ મીમાસા ઉપાંગ છે ચોથુ ઉપાંગ ધર્મશાસ્ત્ર છે, એમા મનુ યાજ્ઞવલ્ક્ય વગેરે ધર્મશાસ્ત્રનો અથવા સ્મૃતિનો સમાવેશ થાય છે સ્મૃતિ એટલે 'ઋષિના પૂર્વચરિતનું સ્મરણ' એમ શ્રીમદાચાર્યચરણ આજ્ઞા કરે છે એ સ્મૃતિઓ આપણા પ્રાચીન ઋષિઓની જીવનકલા (biography) છે તેમની જીવનકલાનો બ્યાલ એ સ્મૃતિથી આવે છે.

ચૌદ વિદ્યા

અઢાર વિદ્યા

અગત્સ્યે, આ પ્રમાણે ચાર વેદ છ અંગ અને ચાર ઉપાંગ મળીને એકંદર ચતુર્દશ (ચૌદ) વિદ્યા થઈ એ ચતુર્દશ વિદ્યાથી વેદના અર્થનો નિર્ણય કરવો જોઇએ "સાંગોપાંગ વેદ"થી વેદના અર્થનો નિર્ણય કરવો, માત્ર વેદથી જ વેદના અર્થનો નિર્ણય થઈ શકે નહિ તેથી સાંગોપાંગ વેદ એટલે છ અંગ અને ચાર ઉપાંગથી તેનો નિર્ણય કરવો, માટે જ પ્રાચીન આચાર્યો પ્રમાણવચનના ગણાવે છે કે '[1]ષડંગસહિત ચાર વેદ, અને પુરાણ, ન્યાય, મીમાસા અને ધર્મશાસ્ત્ર એમ ચાર ઉપાંગ મળીને એકંદરે ચૌદ વિદ્યાના અને ધર્મના [2]સ્થાન કહેવાય છે'

આ ચૌદ વિદ્યામા પણ જો ચાર વેદના ચાર ઉપવેદ ઉમેરો તો ૧૮ વિદ્યા થઈ રહે છે, અને એ ૧૮ વિદ્યાથી જેનુ બ્રહ્મસ્વરૂપ કલિત થાય તેવુ આગ્રહ વિના ગ્રહણ કરવુ એમ શ્રીમદાચાર્યજીનો ઉપદેશ છે ચાર ઉપવેદમા પ્રથમ ઋગ્વેદનો ઉપવેદ આયુર્વેદ છે, તે શારીરિક સંપત્તિ સિદ્ધ કરવામા ઉપયુક્ત છે, કારણ કે આરોગ્ય વિના ધર્મ સિદ્ધ થઈ શકતો નથી યજુર્વેદનો ઉપવેદ ધનુર્વેદ છે, જેથી પ્રજાનુ સંરક્ષણ કરવામા તે ઉપયુક્ત છે સામવેદનો ઉપવેદ ગાંધર્વ છે, તેથી ચિત્તનો ઉદ્વેગ નિવૃત્ત થઈ જાય છે ચોથા અથર્વવેદનો ઉપવેદ સ્થાપત્ય છે, તે શિલ્પાદિ કલાનુ પ્રતિપાદન કરે છે. આ પ્રકારે અષ્ટાદશ વિદ્યા વેદાર્થનો નિર્ણય કરવામા ઉપયુક્ત છે, માટે એ અષ્ટાદશ વિદ્યાને પ્રમાણ માનવી અર્થાત્ ચાર વેદ, ચાર ઉપવેદ, છ અંગ, અને ચાર ઉપાંગ ઉપરાંત બીજા પ્રમાણ વધારવાની કાંઈ પણ જરૂર નથી આ અષ્ટાદશ વિદ્યાનો અતિદેશ જ શ્રીમદાચાર્યજીએ 'વેદા શ્રીકૃષ્ણવાક્યાનિ વ્યાસસૂત્રાણિ ચૈવ હિ સમાધિભાષા વ્યાસસ્ય પ્રમાણ તચ્ચતુષ્ટય' શ્લોકમા આપેલો છે અલૌકિક અષ્ટાદશ વિદ્યા જ માત્ર પ્રમાણ માનનારને બાસ પ્રત્યક્ષ અનુમાન ઇત્યાદિ પ્રમાણ વેદાર્થનિર્ણયમા માનવાની જરૂર રહેતી નથી પુરુષમાત્રમા તમોગુણ રજોગુણ અને સત્ત્વગુણ છે, તેમા વૈદિકસાધનદ્વારા અન્નાદિશુદ્ધિથી જેમનુ સત્ત્વ શુદ્ધ થયુ છે, જેમની બુદ્ધિ શુદ્ધ થયલી છે, તેવા પુરુષોનુ પ્રત્યક્ષપ્રમાણ અંગીકાર કરવામા અડચણ નથી પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણનો આધાર જીવની બુદ્ધિશુદ્ધિ ઉપર જ રહે છે જેની બુદ્ધિ શુદ્ધ ન હોય તેવા રાજસ તામસ પુરુષોને પ્રમાણમા અપ્રમાણબુદ્ધિ થાય છે અને અપ્રમાણમા પ્રમાણબુદ્ધિ થાય છે, માટે પ્રત્યક્ષપ્રમાણની પરીક્ષા કરતા નિશ્ચય થાય છે કે જેનો સત્ત્વગુણ ઉદય પામ્યો હોય તેનુ જ પ્રત્યક્ષ યથાર્થ હોય છે અર્થાત્ પ્રત્યક્ષપ્રમાણ સત્ત્વગુણ ઉપર જ આધાર રાખે છે, અને સત્ત્વગુણ વૈદિક સાધનના આચરણ ઉપર આધાર રાખે છે, એટલે વૈદિક અલૌકિક અષ્ટાદશવિદ્યાને પ્રમાણ માનનાર

---

१ ऋषीणा पूर्वचरितस्मरण स्मृतिरुच्यते । २. पुराणन्यायमीमासाधर्मशास्त्रागमिश्रिता वेदास्स्थानानि विद्याना धर्मस्य च चतुर्दश ।

પુરુષ લૌકિક પ્રત્યક્ષાદિપ્રમાણ માનવાની જરૂર રહેતી નથી, માટે આપણે પ્રત્યક્ષાદિ પ્રમાણ ઉપર વિશ્વાસ ન રાખતા ચાર વેદ ચાર ઉપવેદ છ અંગ અને ચાર ઉપાંગ એમ અષ્ટાદશ વિદ્યા ઉપર જ વિશ્વાસ રાખવો યુક્ત છે, ઉત્તમ છે સ્વત પ્રમાણભૂત વેદને કોઇ પ્રમાણની અપેક્ષા જ રહેતી નથી, કારણ કે વેદ નિરપેક્ષ સ્વત । પ્રમાણ છે

લૌકિક પદાર્થનિર્ણય શાસ્ત્ર પ્રત્યક્ષાદિ પણ પ્રમાણ। શાસ્ત્રયુક્તતા

આ પ્રકારે અલૌકિક વેદાર્થનિર્ણય કરવાને માટે વેદ પ્રમાણ છે, પરંતુ લૌકિક પદાર્થના નિર્ણય થવાને શું કરવું ? અતિપ્રસિદ્ધ લૌકિક વ્યવહારમાં પણ અમુક વસ્તુ સત્ય છે અમુક અસત્ય છે એમ જાણવાની અને નિર્ણય કરવાની જરૂર રહે છે લૌકિકમાં નામજ્ઞાન અત્યત અનિષ્ટ અને અસત હોવાથી તે તો નિરર્થક છે, પરંતુ ગજજ્ઞાન ઉપયુક્ત થઈ શકે છે, અર્થાત્ જેમ નિર્ગુણ કે સાત્ત્વિક જ્ઞાનાદિગ્રન્થોમા વેદમાત્રથી કાર્ય ચાલી રહે છે, તેમ વ્યવહારસન્નિપાતમા ચાલતુ નથી, માટે વ્યવહારસન્નિપાતમા વેદ ઉપરાત વેદને અનુકૂલ પ્રત્યક્ષ, વેદને અનુકૂલ અનુમાન, અને વેદને અનુકૂલ ઐતિહ્ય એમ ત્રણ પ્રમાણ પણ માનવાની જરૂર રહે છે, એમ દશશ્લોકીવિજયી ગોસ્વામી શ્રીપુરુષોત્તમજીએ પોતાના 'પ્રસ્થાનરત્નાકર'નામના ગ્રથમા નિર્ણય આપ્યો છે આ શ્રીપુરુષોત્તમજીમહાપ્રભુએ નવરત્નગ્રન્થોપર ગ્રથો લખ્યા છે, એ પણ જરા આપ ધ્યાનમા લેશો, અને આપના સમ્પ્રદાયમા જ્ઞાનસામગ્રી દૂષિત છે કે પ્રસન્ન છે તેનો ખ્યાલ કરશો

(ક.) પ્રમેયવિચાર.

આ પ્રકારે પ્રમાણનો નિર્ણય થઈ ગયા પછી શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્ય પ્રમેયનો નિર્ણય કરે છે વેદ માત્ર પ્રમાણ છે, અર્થાત્ ચાર વેદ ચાર ઉપવેદ છ અંગ અને ચાર ઉપાંગ એમ પ્રમાણ છે અને એ પ્રમાણથી જે નિશ્ચિત થાય તે પ્રમેય અથવા પ્રથમ પ્રમેયવિચાર બાબ પ્રકરણ કહેવા છે પ્રથમ તો પ્રથમ સ્વરૂપ કેવું છે તે નિર્ણય કરવો જોઇએ, ત્યારપછી પ્રથમનો ૨૪ તત્ત્વોમા અને ત્યારપછી સમષ્ટિવ્યષ્ટિરૂપે નિર્ણય થઈ શકે

સ્વરૂપવિચાર બ્રહ્મમા સર્વ ધર્મ કે બ્રહ્મમા વિરુદ્ધ ધર્મ પણ છે સગુણ નિર્ગુણ બ્રહ્મ

પ્રમેયવિચાર કરતા આપણે પણ પ્રથમ પ્રથમના સ્વરૂપના જ વિચાર કરીએ આપણે કોઈ સામાન્ય પુરુષને પુછીએ તો તે પણ કહેશે કે 'બ્રહ્મ નિરંજન નિરાકાર નિર્ગુણ છે' આ વાક્યના અર્થ આપણે પ્રથમ જાણવા જોઇએ સાકાર એટલે શું ? અને નિરાકાર એટલે શું ? સગુણ એટલે શું ? અને નિર્ગુણ એટલે શું ? એ શબ્દોના અર્થનો નિર્ણય થયા પહેલા સમજ્યા વિના જ બ્રહ્મને સગુણ કે નિર્ગુણ કે સાકાર કે નિરાકાર કહી દેવુ અયુક્ત છે નિર્ગુણનો અર્થ માત્ર ગુણરહિત ધર્મરહિત વિશેષણરહિત એટલો જ થતો હોય, તો તે અર્થમા બ્રહ્મ નિર્ગુણ ન કહેવાય, કારણ કે બ્રહ્મમા ઐશ્વર્ય વીર્ય શ્રી યશ જ્ઞાન વૈરાગ્ય ઇત્યાદિ અનેક દિવ્ય અલૌકિક ગુણ ધર્મ વિશેષણ રહેલા જ છે ગુણશબ્દનો અર્થ અપ્રાકૃત થાય છે, અને તે અર્થ આપણે હજી પણ "ગુણ-પટ' (ગુણપાટ) વગેરે શબ્દોમા વાપરીએ જીએ, 'ગુણ'ના આ અર્થમા બ્રહ્મ ગુણરહિત જ છે કારણ કે બ્રહ્મ કોઈ લૌકિક ધર્મથી લૌકિક ગુણથી લૌકિક વિશેષણથી બાધાઈ શકાતુ નથી એ અર્થમા બ્રહ્મને નિર્ગુણ કહેવુ અનિષ્ટ છે સાખ્ય લોકો પ્રકૃતિના ત્રણ ગુણ માને છે, તે સાખ્ય પ્રકૃતિના પ્રાકૃત લૌકિક સત્ત્વ રજ અને તમ ગુણોથી બ્રહ્મ બાધાતુ નથી માટે તે અર્થમા બ્રહ્મ નિર્ગુણ જ છે, અર્થાત્ બ્રહ્મ પ્રાકૃત પ્રકૃતિના સત્ત્વ રજ અને તમ ગુણથી રહિત છે પરંતુ બ્રહ્મમા કોઈ પણ ધર્મ જ નથી, કોઈ પણ વિશેષણ જ નથી એમ કહી શકાય નહિ એ જ પ્રકારે 'સગુણ' શબ્દનો અર્થ પ્રકૃતિના સત્ત્વ રજ અને તમ એ ત્રણ પ્રાકૃત ધર્મ (ગુણ) લેવામા આવે તો બ્રહ્મ સગુણ નથી, પણ ગુણનો અર્થ સ્વતત્ર ઐશ્વર્યાદિ દિવ્ય ધર્મ લેવામા આવે તો તે અર્થમા બ્રહ્મ સ્વત સગુણ પણ છે વાસ્તવિક રીતિએ કહીએ તો

બ્રહ્મ સગુણ છે એમ વેદાંતીઓએ કહેવું યોગ્ય જ નથી, કારણ કે "સગુણ" શબ્દ સાધ્ય વોધનો છે, અને તે સાધ્ય સિદ્ધાંતીઓ "ગુણ" નો અર્થ પ્રકૃતિના ત્રણ ગુણ જ કરે છે એમ સાધ્ય વોધની બાબામા "ગુણ" અર્થ વાપરીએ તો બ્રહ્મ સગુણ કહેવાય જ નહિ પરંતુ ગુણનો અર્થ યોગ્યતા (merit, quality) ઇત્યાદિ લેવામા આવે તો બ્રહ્મ સગુણ પણ કહેવાય, કારણ કે બ્રહ્મમા વિવિધ વિચિત્ર યોગ્યતા તો છે જ વસ્તુત બ્રહ્મસ્વરૂપનો વિચાર કરીએ તો બ્રહ્મ નિર્ગુણ પણ છે અને સગુણ પણ છે નિર્ગુણ એટલે પ્રાકૃતગુણરહિત અને સગુણ એટલે અપ્રાકૃત અર્થાત્ હિકર્ષમયુક્ત બ્રહ્મ એક જ છે, તે એક પ્રકારે નિર્ગુણ પણ છે, અને બીજા પ્રકારે સગુણ પણ છે, માટે આપણા શ્રીમદ્ગોસ્વામી શ્રીવિઠ્ઠલનાથજીક્ષિત (શ્રીગુસાંઇજી) શ્રીસર્વોત્તમસ્તોત્રના પ્રારંભમા જ મંગલાચરણ કરે છે કે 'બ્રહ્મ પ્રાકૃત ધર્મથી રહિત છે, તો પણ દિવ્ય અપ્રાકૃત અનૌપચિક ધર્મથી યુક્ત છે' સગુણ બ્રહ્મ તો જુદું અને નિર્ગુણ બ્રહ્મ તો જુદું એમ બે બ્રહ્મ માનતા અદ્વૈતની જ હાનિ થઈ કારણ માટે સગુણ બ્રહ્મ ઇલકું અને નિર્ગુણ બ્રહ્મ ઝીણું એમ બે બ્રહ્મનું પ્રતિપાદન કરવું એ પ્રતારણા (ઠગાઈ) છે બ્રહ્મ એક જ અદ્વિતીય છે, અને તે જ અદ્વિતીય બ્રહ્મ પ્રાકૃત લૌકિક ધર્મથી રહિત છે માટે નિર્ગુણ છે અને તે જ બ્રહ્મ દિવ્ય અલૌકિક ધર્મથી યુક્ત છે માટે સગુણ પણ છે

એ જ પ્રકારે એક જ અદ્વિતીય બ્રહ્મ સધર્મક પણ છે અને નિર્ધર્મક પણ છે સાકાર પણ છે અને નિરાકાર પણ છે બ્રહ્મ સર્વ અલૌકિક ધર્મથી યુક્ત છે, એટલે એ વિરુદ્ધ ધર્મ પણ બ્રહ્મમા એકી વખતે રહી શકે છે એવું બ્રહ્મનું અપ્રતર્ક્ય અચિંત્ય માહાત્મ્ય છે બ્રહ્મના માહાત્મ્યનું અવલંબન કરીને બ્રહ્મવિદ્યાનો પ્રચાર કરનાર આપણા આચાર્ય આ પ્રકારે બ્રહ્મમા બે વિરુદ્ધ ધર્મ (જેવા કે નિર્ગુણત્વ અને સગુણત્વ સાકારત્વ અને નિરાકારત્વ, સધર્મત્વ અને નિર્ધર્મકત્વ) એક જ સમયમા માને છે, માટે આપણો સિદ્ધાંત 'વિરુદ્ધધર્માશ્રય'નામથી પણ પ્રસિદ્ધ છે આ વિરુદ્ધસર્વધર્માશ્રયનું મર્મ બરાબર ધ્યાનમા આવી જાય તો સમસ્ત બ્રહ્મવિદ્યામા દાખી શકાય જ એવું નથી

साकार-निराकार, सधर्मक-निर्धर्मक, सविशेष-निर्विशेष

બ્રહ્મ કર્તા છે કે અકર્તા છે એમ પણ વારંવાર શંકા કરવામા આવે છે, તેનું સમાધાન પણ બરાબર છે બ્રહ્મ સ્વતંત્ર છે માટે લીલા કરે છે, અને પ્રથમ અદૃશ્ય એવું જગત લીલાથી બનાવીને પોતાના સ્વરૂપમાંથી જ પ્રકટ કરે છે માટે બ્રહ્મ કર્તા છે પરંતુ આવું અચિન્ત્ય જગત પોતામાંથી પ્રકટ કરવા છતા તે બ્રહ્મ જગતમા અહંતામમતા રાખતું નથી, નિર્લેપ રહે છે, માટે બ્રહ्म અકર્તા

कर्तृ अकर्तृ

પણ છે, અર્થાત્ એક અર્થમા બ્રહ્મ કર્તા છે અને બીજા અર્થમા બ્રહ્મ અકર્તા પણ છે માયાથી બ્રહ્મ કર્તા બને છે એમ માનવું યોગ્ય નથી, કારણ કે માયાથી બ્રહ્મ પરતંત્ર થઈ જાય, અને પરતંત્ર વસ્તુથી કોઈ કાર્ય સિદ્ધ થઈ શકતું નથી અવતારમા પણ કાર્ય કરવાની સ્વતંત્રતા હોય તો જ તે કાર્ય થઈ શકે છે, અર્થાત્ માયાને અધીન થઈને બ્રહ્મ જગદ્રૂપે ભાસે છે એમ કહેવું એ દોષ છે અવતારમા પણ નિયમ છે કે કર્તા સ્વતંત્ર હોવો જોઇએ, માટે માયાને અધીન માયાશબલ બ્રહ્મનું કર્તૃત્વ ન માનતા, શુદ્ધ બ્રહ્મનું કર્તૃત્વ માનવું યુક્ત છે બ્રહ્મ સ્વત જ સ્વતંત્ર હોવાથી પોતામાંથી જ જગતની રચના કરે છે, પોતે જ પરિણામ પામે છે, તેથી બ્રહ્મ કર્તા છે, અને અહંકારથી લેપાતા નથી, જગતના કોઈ પણ દોષનો સ્પર્શ બ્રહ્મને થતો નથી એવા પ્રકારે આત્મામાંથી જગત પ્રકટ કરે છે, વૈષમ્યનૈર્ઘૃણ્ય દોષથી પણ બ્રહ્મ મુક્ત છે, તેથી બ્રહ્મ અકર્તા પણ છે આ પ્રકારે બ્રહ્મ સગુણ પણ છે અને નિર્ગુણ પણ છે, સધર્મક પણ છે નિર્ધર્મક પણ છે, સાકાર પણ છે નિરાકાર પણ છે, કર્તા પણ છે અને અકર્તા પણ છે

---

१ प्राकृतधर्मानाश्रयमप्राकृतनिखिलधर्मरूपमिति । २. स्वतंत्र कर्ता ।

૩ 'સર્વને વશ રાખનાર સર્વનો ઇશાન' બૃહદારણ્યક ઉપનિષત્ શારીરકબ્રાહ્મણ ઈશાન રાજ કરનાર ૪ વિશ્વત ચક્ષુવાળા ..પ્રયોગ કરે છે, તૈત્તિરીય અને શ્વેતાશ્વતર ઉપનિષત્ બ્રહ્માથી આરંભી તૃણના તરખલા સુધીના સર્વના ચક્ષુ જેના છે તે વિશ્વત ચક્ષુવાળા આગળ પણ ગ્રંથ કર પ્રમાણે અર્થ કરવો. ચક્ષુ, વિગેરે પદ સર્વ ઇન્દ્રિયોના ઉપલક્ષક છે, સર્વ ઇન્દ્રિયો માટે આ પદો યોજેલા છે પતન્ત પતનના સાધન, (અ) પગો અને (આ) પાંખો ૫ 'સર્વ કામ સર્વગંધ સર્વરસ' ઇદીમ્ય ઉપનિષત્ શાંડિલ્યવિદ્યા આ શ્રુતિઓ બ્રહ્મને સવિશેષ કહે છે વળી સવિશેષ બ્રહ્મનુ પ્રતિપાદન કરનારી સ્મૃતિઓ પણ છે ૧ 'સર્વત્ર પાણિ અને પાદના અંતવાળુ . સર્વ ટાંકીને રહે છે' ભગવદ્ગીતા અધ્યાય ૧૩ ૨ 'નિર્દોષ અને પૂર્ણ ગુણ વિગ્રહવાળા સ્વગતભેદ રહિત' નારદપંચરાત્ર

આ ગ્રંથના પ્રારંભમા બ્રહ્મસ્વરૂપનો વિચાર આરંભ્યો છે વિચાર કરવામા ચાર વસ્તુની અપેક્ષા છે ૧ વિષય અથવા જે વાતનો વિચાર કરવાનો હોય તે અહિ વિષય બ્રહ્મ અર્થાત્ બ્રહ્મસ્વરૂપ છે એમ પ્રથમ કહેલુ છે ૨ વિષય અથવા સંશય અહિ બ્રહ્મ નિર્વિશેષ છે કે સવિશેષ છે એ સંશય છે એમ પણ કહેલુ છે આ સંશયનુ મૂલ ઉભય પ્રકારની શ્રુતિ અને સ્મૃતિ છે એમ કહી, ઉભય પ્રકારની શ્રુતિ અને સ્મૃતિ કહી હવે આ બે માથી યોગ્ય શુ છે એમ પ્રશ્ન કરી, ઉત્તરમા ૩ પ્રથમ પૂર્વપક્ષ કરે છે ૩. પૂર્વપક્ષ અહિ બ્રહ્મને નિર્વિશેષ માનનાર શંકરાચાર્ય પર્યંતની છે ૪ સિદ્ધાન્ત પૂર્વપક્ષ પૂરો થયા પછી, પૂર્વપક્ષના ખંડનપૂર્વક સિદ્ધાન્ત અથવા સ્વમતનુ સ્થાપન કરવામા આવશે

અક્ષરાર્થ:—

પૂર્વપક્ષ — (બ્રહ્મ) નિર્વિશેષ જ (છે) (એ યોગ્ય છે)

ક્રમ ૨—**उपजीव्यत्वत श्रौतत्वाकर्यश्चान्यपरत्वत ।**
अन्तरङ्गत्वतश्चापि निर्विशेषं निरूप्यते ॥

(સવિશેષ ના) .ઉપજીવ્યત્વને લીધે, અને શ્રૌત વાક્યને અન્યપર છે તેથી અને (નિર્વિશેષ સવિશેષનુ) અન્તરંગ છે તેથી, (બ્રહ્મ) નિર્વિશેષ કહીએ છીએ

કારણ કે, સવિશેષ વાદીને પણ વિશેષના આધાર તરીકે બ્રહ્મસ્વરૂપનો અવશ્ય અંગીકાર કરવો પડશે, નહિ તો વિશેષ કોના વર્ણવેલા કહેવાય ? તેથી આધારનુ નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિ નિર્બાધ હોવાથી આધેય નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિથી અન્યથા કરી શકાય નહિ ધર્મી સ્વરૂપનુ નિરૂપણ કરી, ધર્મ નિરૂપણ કરવાથી ઉભય શ્રુતિ સાર્થક થશે, એમ પણ કરી શકાય નહિ, કારણ કે 'अस्थूल વિગેરે શ્રૌતવાક્ય ધર્મના નિષેધ કરે છે,—પણ નિર્વિશેષ બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરનાર શ્રુતિ ધર્મ વિના તેનુ નિરૂપણ કરી શકે નહિ, કારણ કે નિરૂપણ લક્ષણથી થાય, અને લક્ષણ અસાધારણ ધર્મરૂપે અહિ (નિર્વિશેષ બ્રહ્મમા) ધર્મ ન હોવાથી, પ્રથમ ધર્મનુ નિરૂપણ કરી, અસ્થૂલાદિ વાક્યથી (ધર્મના) અભાવથી નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિની ધર્મનિરૂપણ કરનારી શ્રુતિ નિર્બાધ છે, કારણ કે અભાવનુ નિરૂપણ પ્રતિયોગીના નિરૂપણને આધીન છે તેથી શ્રૌતત્વ અને નિર્બાધત્વ સમાન હોવાથી, એકપણ શ્રુતિનો બાધ યોગ્ય નથી વિરોધથી બાધ ગણીએ, તો વર્ણવેલી યુક્તિથી ઉભયનો બાધ યોગ્ય છે એમ કહેવાથી શૂન્યતા થાય, એમ બૌદ્ધની ભીતિથી પલાયન કર્યા ઝેરી સર્પના મુખમાં પાત થશે. 'બ્રહ્મને અસત્ જાણે તે અસત્જ્ઞ બને' એવા (શૂન્યવાદની) નિન્દાશ્રુતિને લીધે, શૂન્યવાદના પણ અંગીકાર કરી શકાશે નહિ—એમ નહિ કારણ કે શ્રુતિસિદ્ધ ધર્મનો નિષેધ કરવામા આવતો નથી, પરન્તુ અનુવાદપૂર્વક લૌકિક સ્થૂલત્વ આદિ ધર્મનો નિષેધ કરેલો છે તેથી શ્રૌતધર્મનુ નિર્બાધપણુ કયા રહ્યુ ? નિષેધનો વિષય ભિન્ન હોવાથી વિરોધના અભાવને લીધે એક પણ શ્રુતિનો બાધ યોગ્ય નથી, તેથી બ્રહ્મ નિર્વિશેષ અને સવિશેષ ઉભય સિદ્ધ થાય છે એમ કહેવુ પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે સૌનત્વ વગેરે શ્રૌતધર્મનો પણ 'જનાથી વાણી પાછી ફરે છે' ઇત્યાદિ વાક્યથી નિષેધ કરેલો છે નિર્બાધત્વથી થનો બાધ પણ નથી, કારણ કે એના

પ્રકારનુ નિર્વાહકત્વ અપ્રયોજક છે, નહિ તો અભાવ નિરૂપણનો ઉચ્છેદ થઇ જાય આ પણ યોગ્ય નથી કારણ કે લોકમા જે પદાર્થમા જ્યારે જે ધર્મ છે એમ નિરૂપણ કરવામા આવે તે જ ધર્મ-નો તે જ પદાર્થમા તે જ સમયે વિરોધને લીધે નિષેધ કરી શકાય નહિ પણ પ્રથમ શ્યામ વર્ણવેલા પાકથી પકવ થયેલા વટને અશ્યામ કહીએ તેમ કાલભેદે તેનો નિષેધ કરી શકાય બ્રહ્મ સત્ય ચૈતન્ય હોવાથી તેમા એવુ સભવતુ નથી તેથી ધર્મનિરૂપણ કેમ સભવે અને વળી તેનો નિષેધ કેમ સભવે ? એમ મિથ્યાવાદી તર્કના સાણસામા પડેલા છે ———એમ નહિ ધર્મ નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિનો વિષય અન્ય છે કારણ કે સોપાધિ બ્રહ્મની ઉપાસનાથી ચિતશુદ્ધિ થાય ત્યારે નિર્વિશેષ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન થશે, એવા તાત્પર્યથી તે શ્રુતિ સોપાધિ બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરે છે પછી નિર્વિશેષ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન કરાવવા પૂર્વોક્ત ધર્મનો નિષેધ કરે છે, કારણ કે અવિદ્યા કલ્પિત તરીકે જ તેમનો અગીકાર કરેલો હતો. તેથી અપવાદ કરવા માટે જ કર્તૃત્વાદિથી, પછી તેમનો નિષેધ કરે છે, એવી કલ્પનાથી સર્વ સમજ્યા જ છે

विवेचन.

પૂર્વપક્ષ (અહિ શકરાચાર્ય પૂર્વપક્ષ કરે છે શકરાચાર્યનો મત કેવલાદ્વૈત કહેવાય છે આ મતમા માત્ર બ્રહ્મ જ સત્ય છે, અન્ય સર્વ મિથ્યા છે સર્પમા જેમ રજ્જુની ભ્રાતિ થાય છે, તેમ બ્રહ્મમા જગતની ભ્રાતિ થાય છે આ મતમા આભાસવાદ અવચ્છેદવાદ, પ્રતિબિમ્બવાદ વગેરે જૂદા જૂદા વાદ માનવામા આવે છે તે સર્વનો આ ગ્રથમા આગળ નિરાસ કરવામા આવશે સર્વ વાદમા બ્રહ્મ નિર્ગુણ જ માનવામા આવ્યુ છે)

શકરાચાર્યના મતમા આ પ્રમાણે બ્રહ્મ ગુણરહિત અથવા નિર્વિશેષ હોવાથી, બ્રહ્મ નિર્વિશેષ જ છે એમ પૂર્વપક્ષ કરે છે બ્રહ્મને નિર્વિશેષ કેમ કહેવુ તે હેતુ દાખિલામા આપ્યા છે ૧ નિર્વિશેષ બ્રહ્મ સવિશેષ બ્રહ્મનુ ઉપજીવ્ય છે તેથી બ્રહ્મને નિર્વિશેષ કહીએ છીએ ઉપજીવ્ય અર્થાત્ નિર્વાહક સવિશેષ બ્રહ્મનો નિર્વાહક નિર્વિશેષ બ્રહ્મ છે નિર્વિશેષ બ્રહ્મથી સવિશેષ બ્રહ્મનો નિર્વાહ થાય છે. નિર્વાહક અથવા નિર્વાહ કરનાર પ્રથમ હોવુ જોઇએ નિર્વાહ્ય ન હોય તો જેનો તેનાથી નિર્વાહ થતો હોય તે જ્યારે જ હોય ! નિર્વાહક મુખ્ય હોવાથી બ્રહ્મને નિર્વિશેષ કહેવુ એ જ યોગ્ય છે ૨ શ્રૌત વાક્ય અર્થાત્ શ્રુતિના વાક્યો ઉપાસનાનો બોધ કરનાર શ્રુતિના વાક્યો હોવાથી, ધર્મનુ નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિઓ અન્યપર છે ઉપાસનાનો બોધ કરનારી શ્રુતિઓ હોવાથી, ધર્મનુ નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિઓ ઉપાસના માટે છે નિર્વિશેષની ઉપાસના થઈ શકે નહિ, તેથી ઉપાસના માટે સવિશેષ બ્રહ્મ છે, અને સવિશેષ શ્રુતિઓ તેનુ વર્ણન કરે છે ઉપાસના માટે સવિશેષ બ્રહ્મ છે, તેથી સવિશેષ શ્રુતિઓનુ ઉપાસનામા તાત્પર્ય હોવાથી તે વસ્તુત બ્રહ્મનું નિરૂપણ કરતી નથી તેથી બ્રહ્મ નિર્વિશેષ જ છે ૩ નિર્વિશેષ બ્રહ્મ સવિશેષ બ્રહ્મનુ અગ છે આધાર આધેય અર્થાત્ જેનો તે આધાર હોય તેનો અગ છે આધેયના નિરૂપણ કરતા આધારનુ નિરૂપણ વધારે મુખ્ય છે નિર્વિશેષ બ્રહ્મ સવિશેષ બ્રહ્મનુ અગ હોવાથી, મુખ્ય પ્રાથમિક છે તેથી પણ બ્રહ્મ નિર્વિશેષ જ છે

પૂર્વપક્ષી આ પ્રમાણે બ્રહ્મને નિર્વિશેષ કહેવાના કારણો ટૂકમા દાખિલામા વર્ણવી તેનુ વિસ્તારથી વિવેચન કરે છે

૧ 'ઉપજીવ્યપણે લીધે' એ પ્રથમ હેતુનુ વિસ્તારપૂર્વક વિવેચન કરે છે બ્રહ્મ સવિશેષ માને તેને બ્રહ્મના વિશેષ કયા રહે છે તે અવશ્ય કહેવુ જોઇએ વિશેષનો આધાર બ્રહ્મનુ સ્વરૂપ જ કહેવુ પડે વિશેષ અર્થાત્ ગુણ દ્રવ્યમા જ રહે સવિશેષ બ્રહ્મના વિશેષનો આધાર બ્રહ્મસ્વરૂપ અર્થાત્ વિશેષ રહિત બ્રહ્મ જ છે એમ અવશ્ય સ્વીકારવુ પડશે જો આ પ્રમાણે બ્રહ્મસ્વરૂપ અર્થાત્ વિશેષરહિત બ્રહ્મને સવિશેષ બ્રહ્મના વિશેષનો આધાર સ્વીકારીએ નહિ, તો અન્ય કોઈ તેનો આધાર હોઈ શકે તેમ નથી, તેથી વિશેષ અર્થાત્ ગુણનો આધાર અમુક દ્રવ્ય હોવુ જ જોઇએ એ નિયમનો બાધ થાય તેથી વિશેષના આધાર અને તેથી જ સવિશેષ બ્રહ્મના આધાર તરીકે વિશેષરહિત અર્થાત્ નિર્વિશેષ બ્રહ્મનો સ્વીકાર

કરવો જ પડશે આધાર મુખ્ય છે આધાર વિના આધેય (જેનો તે આધાર હોય તે) સંભવે જ નહિ નિર્વિશેષ બ્રહ્મ સવિશેષ બ્રહ્મનો આધાર હોવાથી, નિર્વિશેષ બ્રહ્મ વિના સવિશેષ બ્રહ્મ સંભવતુ જ નથી. શ્રુતિ ઉભય પ્રકારના બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરે છે, પરતુ ઉભય પરસ્પર વિરુદ્ધ છે ઉભય પરસ્પર અત્યત વિરુદ્ધ હોવાથી ઉભય સંભવે નહિ એમાથી એક જ બ્રહ્મનુ સત્ય સ્વરૂપ હોવુ જોઇએ એમાથી કયા બ્રહ્મને મુખ્ય માનવુ અથવા એમાથી બ્રહ્મનુ કયુ સ્વરૂપ સત્ય માનવુ એ નિર્ણય કરવા આપણે આધાર કયુ બ્રહ્મ છે તે તપાસ્યુ. આમાં નિર્વિશેષ બ્રહ્મ વિના આધેય સવિશેષ બ્રહ્મ સંભવતુ જ નથી, તેથી આધાર નિર્વિશેષ બ્રહ્મને જ બ્રહ્મનુ સત્યસ્વરૂપ માનવું જોઇએ નિર્વિશેષ બ્રહ્મ સવિશેષ બ્રહ્મનો આધાર હોવાથી, નિર્વિશેષ બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિઓ મુખ્ય છે અને સવિશેષ બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિઓ તેને અન્યથા કરી શકે નહિ તેથી નિર્વિશેષ બ્રહ્મ જ મુખ્ય છે, અને બ્રહ્મ વસ્તુત નિર્વિશેષ જ છે

અહિ સિદ્ધાન્તી શકા કરે છે એ પ્રમાણે શ્રુતિઓનો અર્થ કરીએ તો સવિશેષ બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિઓ નિરર્થક થઇ જાય તેથી એ પ્રમાણે અર્થ કરવો યોગ્ય નથી તેથી ઉભય પ્રકારની શ્રુતિ સાર્થક થાય તે માટે નિર્વિશેષ શ્રુતિઓ ધર્મીના સ્વરૂપનુ નિરૂપણ કરે છે, અને સવિશેષ શ્રુતિઓ ધર્મનુ નિરૂપણ કરે છે, એમ માનવુ જોઇએ ધર્મીનુ સ્વરૂપ નિર્વિશેષ છે, બ્રહ્મ નિર્ગુણ છે, તોપણ તેને વિશેષ અર્થાત્ ધર્મ અથવા ગુણ છે એમ સિદ્ધ થાય છે ઉભય પ્રકારની શ્રુતિ સાર્થક થાય છે, અને બ્રહ્મ પણ વિરુદ્ધ ધર્મનો આશ્રય થાય છે નિર્ગુણ હોવા છતા બ્રહ્મને ગુણ છે તેથી વિરુદ્ધ ધર્માશ્રય થાય છે તેથી આ પ્રમાણે અર્થ કરી ઉભય પ્રકારની શ્રુતિ સાર્થક કરવી જોઇએ

પૂર્વપક્ષી—એમ કહી શકાય નહિ. શ્રુતિઓનો અર્થ એ પ્રમાણે પણ ઘટાવી શકાય નહિ 'અસ્થૂલ અનણુ' વગેરે શ્રુતિઓ બ્રહ્મમા ગુણ નથી, એમ ગુણનો નિષેધ કરે છે એ પ્રમાણે અર્થ કરીએ તો બ્રહ્મમા ગુણ નથી એમ કહી શકાય નહિ પરતુ શ્રુતિ ગુણનો નિષેધ પણ કરે છે બ્રહ્મને વિશેષ હોય તો વિશેષ અર્થાત્ ગુણનો નિષેધ કરનારી શ્રુતિઓ અસત્ય થઇ જાય બ્રહ્મમા ગુણનો નિષેધ કરનારી શ્રુતિઓ હોવાથી, બ્રહ્મમા ધર્મ છે એમ કહી શકાય નહિ, તેથી એવો અર્થ ઘટતો નથી

સિદ્ધાન્તિશકા—નિર્વિશેષ બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિ પણ ધર્મવિના તેનુ નિરૂપણ કરી શકે નહિ કારણ કે નિરૂપણ લક્ષણથી થાય અમુક પદાર્થનુ નિરૂપણ કરવુ એટલે તેનુ લક્ષણ કહેવુ, તેનુ અન્ય સર્વ પદાર્થથી વૈલક્ષણ્ય કહેવુ આ કાર્ય તે પદાર્થનુ લક્ષણ અથવા વ્યાખ્યા આપીએ તો જ થઇ શકે લક્ષણ અથવા વ્યાખ્યા આપવી એટલે તેના અસાધારણ ધર્મ કહેવા સાધારણ ધર્મ એટલે સામાન્ય ધર્મ, એકથી વધારે પદાર્થમા રહેલા ધર્મ તે પદાર્થોનો સામાન્ય ધર્મ કહેવાય જે ધર્મ માત્ર એક જ પદાર્થમા રહેલા હોય તે તે પદાર્થનો અસાધારણ ધર્મ કહેવાય આ અસાધારણ ધર્મનુ આપણને જ્ઞાન થાય તો જ તે પદાર્થનુ જ્ઞાન થાય તેથી બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરવામા બ્રહ્મના અસાધારણ ધર્મનુ જ્ઞાન થવુ જોઇએ બ્રહ્મ નિર્વિશેષ અર્થાત્ ધર્મરહિત હોય તો તેમા અસાધારણ ધર્મ ન હોવાથી તેનુ જ્ઞાન થઇ શકે જ નહિ 'ધર્મીભાવ' એ જ તેનો અસાધારણ ધર્મ હોય તોપણ પ્રથમ ધર્મ નુ છે તેનુ જ્ઞાન થાય ત્યાર પછી જ ધર્મીભાવનુ જ્ઞાન થાય તેથી ધર્મીભાવનુ જ્ઞાન ધર્મના જ્ઞાનને અધીન છે તેથી ધર્મ ન હોય તો ધર્મીભાવનુ નિરૂપણ થઇ શકે નહિ, અને ધર્મીભાવનુ નિરૂપણ થાય નહિ ત્યાસુધી બ્રહ્મનુ નિરૂપણ થઇ શક નહિ આ પ્રમાણે નિર્વિશેષ બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરવામા પણ ધર્મની આવશ્યકતા છે તેથી ધર્મનુ નિરૂપણ મુખ્ય અર્થાત્ ઉપજીવ્ય છે, અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મનુ નિરૂપણ તેને અધીન છે તેથી ધર્મનુ નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિ અર્થાત્ સવિશેષ શ્રુતિ, ધર્મના અભાવથી બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરનારી શ્રુતિ અર્થાત્ નિર્વિશેષ શ્રુતિની નિરપેક્ષ છે અમુક ધર્મના અભાવનુ નિરૂપણ કરવુ હોય તો તે ધર્મનુ નિરૂપણ કર્યા વિના તેના અભાવનુ નિરૂપણ થઇ શકે નહિ કારણ કે અભાવનુ નિરૂપણ તેના પ્રતિયોગીના નિરૂપણને અધીન છે દાખલા તરીકે ઘટના અભાવનુ નિરૂપણ કરવુ હોય તો ઘટનુ નિરૂપણ પ્રથમ થવુ જોઇએ ઘટ શુ છે તે જાણ્યા વિના ઘટાભાવનુ જ્ઞાન થાય નહિ તેથી ઘટાભાવનુ નિરૂપણ તેના પ્રતિયોગી ઘટના નિરૂપણને અધીન છે તેથી નિર્વિશેષ શ્રુતિનો આધાર સવિશેષ શ્રુતિ છે

આ પ્રમાણે સવિશેષ અને નિર્વિશેષ ઉભય પ્રકારની શ્રુતિ છે, અને ઉભય એક બીજાની નિર્વાહક છે તેથી સમાન હોવાથી કોઇ એક બીજાનો બાધ કરવા સમર્થ નથી એ બે પ્રકારની શ્રુતિમા વિરોધ છે તેથી બાધ છે એમ ગણીએ તો ઉપર કહેલા હેતુથી ઉભય પ્રકારની શ્રુતિનો બાધ થાય, અને તેથી શૂન્ય જ અવશિષ્ટ રહે, અને શૂન્યવાદનો સ્વીકાર કરવો પડે એ તો વીંછીની બીકથી નાસતા સર્પના મુખમા પડવા જેવુ થાય વળી શૂન્યવાદ પણ સ્વીકારી શકાય નહિ કારણ કે 'બ્રહ્મને અસત્ જાણે તે અસત્ જ થાય' શ્રુતિ જ શૂન્યવાદની નિંદા કરે છે

પૂર્વપક્ષી—એમ નથી નિર્વિશેષ શ્રુતિ સવિશેષ શ્રુતિએ કહેલા ધર્મનો નિષેધ કરતી નથી, પરન્તુ લૌકિક સ્થૌલ્ય વગેરે ધર્મોનો અનુવાદ કરી તેમનો જ નિષેધ કરે છે તેથી સવિશેષ શ્રુતિએ કહેલા ધર્મો નિર્વિશેષ શ્રુતિના નિર્વાહક નથી નિર્વિશેષ શ્રુતિ સવિશેષ શ્રુતિએ વર્ણવેલા ધર્મનો જ નિષેધ કરતી હોત તો સવિશેષ શ્રુતિ તેની નિર્વાહક થાત, પરન્તુ લૌકિક ધર્મનો જ નિષેધ કરતી હોવાથી સવિશેષ શ્રુતિ તેની નિર્વાહક નથી અને તે સવિશેષ શ્રુતિની નિર્વાહક હોવાથી, તેનાથી સવિશેષ શ્રુતિનો બાધ થાય છે

સિદ્ધાન્તી—એમ હોય તો અમુક ગુણ વર્ણવી, અન્ય લૌકિક ધર્મનો બાધ વર્ણવેલો હોવાથી, વિરોધ રહેતો નથી, અને તેથી બ્રહ્મ સવિશેષ અને નિર્વિશેષ એમ ઉભય સિદ્ધ થાય છે અને એકેક પ્રકારની શ્રુતિનો બાધ થતો નથી

પૂર્વપક્ષી—એમ નહિ 'જ્યાથી વાણી પહોંચ્યા વિના મનસહિત પાછી ફરે છે' વગેરે શ્રુતિઓ 'આત્માનુ શ્રવણ કરવુ' ઇત્યાદિ શ્રુતિએ વર્ણવેલા શ્રોતવ્યપણુ વગેરે ધર્મનો પણ બાધ કરે છે, લૌકિ-ધર્મનો બાધ કેટલીક શ્રુતિ કરે છે તે જ પ્રમાણે શ્રુતિએ વર્ણવેલા ધર્મનો પણ બાધ કેટલીક શ્રુતિ કરે છે તેથી બ્રહ્મ સવિશેષ અને નિર્વિશેષ ઉભય સિદ્ધ થઇ શકે નહિ

સિદ્ધાન્તી—શ્રુતિએ વર્ણવેલા ધર્મનો પણ અન્ય શ્રુતિ નિષેધ કરતી હોય તો નિષેધ કરનારી નિર્વિશેષ શ્રુતિની ધર્મનુ વર્ણન કરનારી શ્રુતિ નિર્વાહક છે ને તેથી સવિશેષ શ્રુતિ નિર્વાહકપણાથી નિવિશેષ શ્રુતિનો બાધ કરે છે

પૂર્વપક્ષી—એવા પ્રકારનુ નિર્વાહકપણુ કાઇ પણ કાળ કરી રાકતુ નથી, અર્થાત્ એવા નિર્વાહકપણાથી બાધ થતો નથી એવા નિર્વાહકપણાથી બાધ થતો હોય તો અભાવનુ નિરૂપણ થઇ શકે જ નહિ

સિદ્ધાન્તી—એમ પણ યોગ્ય નથી અમુક ધર્મ બ્રહ્મમા વર્ણવી તે જ ધર્મનો તે જ સમયે તેમાં નિષેધ કરવો એ અત્યત વિરુદ્ધ છે એક જ પદાર્થમા અમુક કાળે ધર્મ છે ને અન્ય સમયે તે જ નથી એમ કહીએ તો કદાચ ચાલે કારણ કે ઘટ વગેરે પકવ્યા પહેલા શ્યામ રગના હોય છે અને પકવ્યા પછી લાલ રગના થાય છે બ્રહ્મ સદા એક જ પ્રકારનું હોવાથી કાલના ભેદથી પણ તેમ અમુક ધર્મનો ભાવ અને તેનો અભાવ છે એમ કહી શકાય નહિ તેથી ધર્મ વર્ણવવા અને વળી તેને નિષેધ કરવો એમ બને જ કેમ? તેથી આ પ્રમાણે મિથ્યાવાદી મહાન્ કષ્ટમા આવી પડયો છે

પૂર્વપક્ષી—એમ નથી ધર્મનિરૂપણ કરનારી શ્રુતિનો હેતુ ભિન્ન જ છે નિર્વિશેષ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન ચિત્તશુદ્ધિ થયા વિના સભવતુ નથી તેથી પ્રથમ સવિશેષ બ્રહ્મનુ નિરૂપણ એવા હેતુથી કરેલુ છે કે તેની ઉપાસના કરવાથી ચિત્ત શુદ્ધ થાય ચિત્તશુદ્ધિ થયા પછી નિર્વિશેષ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન કરાવવા પર્વે વર્ણવેલા ધર્મોનો નિષેધ કરે છે ધર્મને અવિદ્યાથી કલ્પિત જ સ્વીકારેલા છે. તેથી કર્તાપણુ વગેરે ધર્મોનો આગળ ઉપર અપવાદ કરવા જ વર્ણન કર્યુ છે અને પછી તેમનો નિષેધ કરે છે એવી કલ્પના કરવાથી કોઇ પણ પ્રકારનો વાંધો આવતો નથી તેથી નિર્વિશેષ શ્રુતિ સવિશેષ શ્રુતિનો બાધ જ કરે છે.

શ્લોકમાના "અર્થ ભગવદ્રૂપ પ્રત્યક્ષ નથી થતો" આ અર્થને દૃઢ કરે છે બીજી વિષયતા જગદ્રૂપ છે એમ કહેવાથી આલુ શ્લોકમા "અર્થ વગર જણાય છે" આ ભાવને મજબૂત કરે છે પહેલી વિષયતા બ્રહ્મરૂપત્વના પ્રકાશમા આડી આવે છે બીજી વિષયતા ન હોય તેવી વસ્તુને અનુભવમા લાવનારી છે. બ્રહ્મને ન જણાવતા જગતને જ આગળ ઉભુ કરે છે બીજી વિષયતા જગદ્રૂપ છે એમ કહેવાથી જગત્ જ વિષયતા છે એમ ન સમજી લેવુ, પરતુ જગત્ જેમ સત્ય છે તેમ આ પણ સત્ય છે એમ કહેવાનો મુદ્દો છે આ જ ભાવાર્થ મૂલ શ્લોકના દૃષ્ટાતમા બતાવ્યો છે

શંકા—બીજી વિષયતા જગદ્રૂપ છે એમ સ્વીકાર્યાથી તો આ દેખાતુ જગત્ પણ વિષયતા છે, એમ માની લીધેલુ ગણાય! વિષયતા તો માયાથી ઉત્પન્ન થાય છે એમ કહી ગયા છો, તો જગદ્રૂપ વિષયતા છે એમ માન્યુ કે તુરત જગત્ પણ માયાથી ઉત્પન્ન થયુ છે,' એમ કહેવાનો વખત આવ્યો પહેલા જગતને બ્રહ્મરૂપ માની લીધુ છે અને હવે માનો માયાથી ઉત્પન્ન થયેલુ એટલે પૂર્વ સિદ્ધાત સાથે તમારે જ વિરુદ્ધપણુ બતાવવાનો પ્રસગ આવશે!!

સમાધાન—આગળ એમ નિરૂપણ કરવામા આવ્યુ છે કે વિષય ભગવાન્ છે અને વિષયતા માયાથી ઉત્પન્ન થાય છે. આ ઠેકાણે જગત્ તો ભગવદ્રૂપ હોવાને લીધે વિષય હરે છે, અને તેથી પોતે વિષયતા તો ઘણી જ અલગ રહે છે. તેથી વિષયતા જ જગત્ છે એમ કેમ કહેવાય? અહીં વિષયતા જગદ્રૂપ છે એમ જે કહ્યુ છે તેનો મતલબ જગત્ જ વિષયતા એમ નથી, પણ વિષયતા જગતના સરખી છે એમ છે એટલે જગત્ જેમ સત્ય છે તેમ વિષયતા પણ સત્ય છે આવી રીતે ન માનીએ તો બ્રહ્મ પોતે વિષય નથી, જ્યારે જગદ્રૂપ થાય છે ત્યારે વિષય કહેવાય છે હવે જો જગતને વિષયતા માનીએ તો બ્રહ્મ વિષય છે એમ કહેવુ નિરર્થક ઠરે છે માટે વિષયતા જગદ્રૂપ છે એ કથનનો નિશ્ચયાર્થ ઉપર મુજબ સમજવો હવે વિષયતાને સત્ય માનવાની મતલબ એ છે કે વિષયતા આગળ પડેલા પદાર્થનુ સત્યરૂપ ઢાકી દઈ નવુ જ વિચિત્ર રૂપ બતાવે છે તે કાંઈ ખોટુ નથી પ્રકાશ વિનાના સ્થલમા જે શ્યામ અધકાર જણાય છે અને તેમા પણ જે શ્યામતાનો (કાળાશનો) અનુભવ થાય છે, તે શ્યામરૂપ સત્ય પ્રપચની બીજી શ્યામવસ્તુ સરખુ સત્ય છે આ જ જગદ્રૂપ વિષયતા છે, એમ સૂક્ષ્મદૃષ્ટિથી સમજવુ અધકાર વિષયતા છે, પણ તેનુ શ્યામરૂપ તો સત્ય જ છે, માટે વિષયતા જગતની મેઠે સત્ય જ છે આ ઠેકાણે કેટલીક બાબત ખાસ જાણવા જેવી છે તે એ છે કે, માયા કોઇ ઠેકાણે વિષયતારૂપ ધર્મને ઉત્પન્ન કરે છે અને કોઈ ઠેકાણે વિષયતારૂપ ધર્મને પ્રકટ કરે છે ભ્રમવાળી દૃષ્ટિથી ઘટમા જે ભ્રમણ (ફરવાપણુ) દેખાય છે તે વિષયતારૂપ હોઇ ધર્મ છે, માટે આ દૃષ્ટાતમા વિષયતારૂપ ધર્મને ઉત્પન્ન કરે છે પ્રકાશરહિત દેશમા અધકારરૂપી ધર્મી વિષયતારૂપ છે, માટે આ સ્થલે વિષયતારૂપ ધર્મને ઉત્પન્ન કરે છે આ પ્રમાણે જે વિષયતા જગતના સરખા આકારવાળી છે, માટે તેને જગદ્રૂપ કહી છે છેવટે ઉપરના સિદ્ધાતોનુ તારણ કરતા એવો જ નિશ્ચય થશે કે માયાથી ઉત્પન્ન થતી વિષયતા પદાર્થોનુ સ્વરૂપ ઢાકી દઈ વિચિત્ર નવીનતાથી પદાર્થોને અનુભવમા લાવે છે બધા જોતા પદાર્થોમા કોઈપણ જાતનો ફેરફાર નથી થતો કેમ કે તે તો ભગવદ્રૂપ છે સ્વરૂપને ઢાકનારી અને અન્યસ્વરૂપ દેખાડનારી એ વિષયતા કૃત્રિમ બ્રહ્મજ્ઞાનથી જ નાશ પામે છે સુબોધિનીમા લખ્યુ છે કે, તે એ વિષયતા ટળી જાય માટે સત્યજ્ઞાનની જરૂર છે, આવો ભાવાર્થ છે આ પ્રપચ જેવો અધિકારી હોય તેવો દેખાય છે ઉત્તમ, મધ્યમ અને કનિષ્ઠ એ ત્રણ જાતના અધિકારી ઘણુ કરીને સર્વ શાસ્ત્રમા હોય છે, તેમ અત્ર પણ તેવા જ ત્રણ અધિકારી છે પ્રપચ ત્રણે અધિકારીને ત્રણ સ્વરૂપે જુદો જુદો દેખાય છે બ્રહ્મમા એકતાન થયેલા ઉત્તમ અધિકારીને આ પ્રપચ શુદ્ધ બ્રહ્મસ્વરૂપ ભાસે છે બ્રહ્મ વિના એ કાંઇ પણ દેખતો જ નથી જેમ જે ક્ષણમા પોતાના શ્વેતરૂપવાળો પટ જણાય છે અને તે વખતે પટના શ્વેતરૂપ વગર બીજા કોઇપણ પદાર્થનો ખ્યાલ સુદ્ધા આવતો નથી, તેમ જ ઉત્તમા-

વિચારીને આ પ્રપચ શુદ્ધ બ્રહ્મસ્વરૂપ જ જણાય છે શાસ્ત્રથી જ્ઞાનરૂપી ચક્ષુ (નેત્ર) પ્રાપ્ત કરનારા મધ્યમાધિકારીને આ પ્રપચ બ્રહ્મના અને માયાના ધર્મથી મિશ્રિત લાગે છે આ અધિકારીને જે કે બ્રહ્મ અને માયાના ધર્મથી યુક્ત પ્રપચ જણાય છે, પરતુ બ્રહ્મના ધર્મ નિત્ય છે, સત્ય છે, અને માયાના ધર્મો મિથ્યા છે, એવો બ્રહ્મદ્રષ્ટિવે- (માયામોટાની સમજણ) અવશ્ય હોય છે દૃષ્ટાત–લીલો પટ જોતા બાહોશ, વિવેકી પુરુષને અણસમજુ દેખતા કરતા બીજો જ અનુભવ થાય છે તે એવુ સમજે છે કે, લીલાપટમા પટની આકૃતિ વગેરે છે તે સત્ય છે, પણ તેમા જે લીલો રગ છે તે જ ફકત ઉપાધિરૂપ છે, માયિક છે, મૂલ પટના કરતાં તે અલગ છે આ લૌકિક દૃષ્ટાત બ્રહ્મવાદના મધ્યમાધિકારીને સમજવા માટે આપેક્ષિક છે વિવેકશૂન્ય કનિષ્ઠ અધિકારીને તો આ પ્રપચ બ્રહ્મ અને માયાના ધર્મની ભેળસેળવાળો જણાય છે વળી તે બ્રહ્મ અને માયાના ધર્મને એક જ માની બેસે છે જુદા સ્વરૂપે જણવાની તેનામા જ્ઞાનશક્તિ નથી દૃષ્ટાત–અજ્ઞાન બાલક લીલા રગના ચશ્મા પહેરી કોઈ પણ પદાર્થને જોશે તો તે જરૂર તે પદાર્થને લીલા જ માની બેસશે તે નહિ સમજે કે આતો ચશ્માના કાચને લઈને આ પદાર્થો લીલા જણાય છે, અને ખરે જોતા તે લીલા નથી આ દૃષ્ટાત કનિષ્ઠ અધિકારીને સમજવા વાસ્તે યોગ્ય છે, આ પ્રમાણે શ્રુતિ, યુક્તિ અને અનુભવથી પણ એમજ નિશ્ચય થશે કે, પ્રપચને જોનારાઓને જુદુ જુદુ ભાન થાય છે, પણ ભગવાન્ અને પ્રપચમા કોઇપણ ભેદ નથી હવે ગ્રંથકાર ફરી એકવાર શ્રુતિસિદ્ધ શુદ્ધાદ્વૈત સિદ્ધાતનો ઉદ્ઘોષ કરી પ્રસ્તુતવિષયનો ઉપસહાર કરે છે જેઓને વેદ ઉપર અચલ વિશ્વાસ છે, વેદ જેમા આજ્ઞા કરે તેમ માની લેવા જેઓ નિશ્ચયચિત્તે તૈયાર છે, મનુષ્યબુદ્ધિના મિથ્યા અને શુષ્ક તર્કને વેદના શુદ્ધ અને ઉજ્જવલ અર્થમા મેળવી વેદને કલકિત કરવા જેઓ ચહાતા નથી તેઓએ તો 'આ જગત્ સત્ય છે, ભગવાનથી જુદુ નથી, ભગવદ્રૂપ છે,' એ શ્રુતિસિદ્ધ પરમશ્રેષ્ઠ સિદ્ધાતના જ આગ્રહી રહેવુ જોઈએ અવનવા તર્કો અને તર્કથી કલ્પેલા કલ્પનાના જ ગભારામા બેસી આવેલો છે, જેઓ માનસ તરગોને વશ થઈ શ્રુતિમા પણ 'માયા' જેવા મિથ્યા પદાર્થને ઘુસાડવામા જ પોતાની પડિતાઈ માની બેઠેલા છે, તેઓએ તો શ્રુતિના યથાર્થ અર્થના વાતનુ સ્વપ્ન પાપ ભોગવવાનુ છે એમ નિશ્ચિત થયેલુ છે ભગવત્સ્વરૂપ પ્રપચમા ઉત્પત્તિ, નાશ, તુચ્છ પદાર્થો અને ભેદ વગેરે જે દેખાય છે તે બધા માયિક છે એમ સમજવુ

भगवत्सेवा.[૨]

ભગવાનની મૂર્તિના સબધમા બધા કરતા આપણા વિચારો જુદા છે જેમ બીજા લોકો *ઈશ્વર પ્રત્યે શ્રદ્ધા થવા પુરતી જ મૂર્તિપૂજાની આવશ્યકતા સ્વીકારે છે* તેમ આપણા માર્ગમા નથી

---

૧ ગ્રથકારનો એવો નિયમ છે કે વારવાર સિદ્ધ કરેલા પણ સિદ્ધાતનુ છેવટે સૂક્ષ્મરૂપે સિદ્ધાવલોકન કરી જવુ

૨ ગ્રથકાર ચાલુ પ્રકરણમા એક અગત્યનો વિષય ચર્ચે છે, તે **ભગવત્સેવા** છે આધુનિક મતની ભાષામા બોલીએ તો તે **મૂર્તિપૂજા** છે આધુનિકમતવાદિઓના ડરથી સનાતનધર્મના નામ નીચે મૂર્તિપૂજા માટે હાલમા એક નવી પદ્ધતિ પોષાઈ છે પ્રાચીન મૂર્તિપૂજાના લક્ષ્યબિદુ કરતા આજની મૂર્તિપૂજા વિષેની શોધખોલ અને મતવ્ય વિચિત્ર પ્રકારના છે તેના ઉપર કુતર્કપ્રધાન નવીનમતની ઘણી જ છાયા પડેલી લાગે છે શકરાચાર્યના મત ઉપર બૌદ્ધમતની જેમ ચોકકસ છાયા પડેલી છે, તેમ જ મૂર્તિપૂજાના સબધમા છે નવીન ચાર્વાકપ્રાય લોકો જ્યારે મૂર્તિપૂજાનો સદતર નિષેધ કરે છે, ત્યારે સનાતનીઓ કહે છે કે મૂર્તિપૂજા તો ઈશ્વર ઉપર શ્રદ્ધા થવા માટે જ છે, ઈશ્વર ઉપર શ્રદ્ધા થયા પછી તેની કઈ પણ આવશ્યકતા નથી કેમકે મૂર્તિ કઇ ઈશ્વર નથી આવી મુખ્ય મતલબની હેઠળ ઘણી તકલેદી દલીલો રજુ કરી ગડબથલ મચાવે છે શોચનીય વાત એ છે કે ફકત સામા પક્ષને તોડવાની ધૂનમા પોતાના પગ ઉપર જે પ્રહાર પડે છે તેની તે લોકો લેશ માત્ર પણ દરકાર કરતા હોય એમ લાગતુ નથી 'મૂર્તિ વસ્તુત જડ છે, તે પરમાત્મા નથી, શ્રદ્ધા થવા પુરતી જ તેની આવશ્યકતા છે વગેરે સનાતનીના કથનો કેટલા પરસ્પર વિરુદ્ધ છે તે જણાવીશ મૂર્તિ જડ

ભગવાનની મૂર્તિને જડ માનનારાઓ ભ્રાંત છે તે લોકોમા ભક્તિનો લેશ પણ ન હોવાથી તેમની બુદ્ધિમા પેલી માયા વિષયતાને ઉત્પન્ન કરે છે માટે જ તે લોકોને સાક્ષાદ્ભગવત્સ્વરૂપમા ભગવાનનો સાક્ષાત્કાર નથી થતો અને જડ પદાર્થ જ જણાય છે માયાની વિષયતાથી આંધળા બનેલા લોકો ભગવત્સ્વરૂપ ન માનતા જડ માને છે તે લોકોમા થોડો પણ ભક્તિનો અંકુર હત તો માયા તેમની બુદ્ધિમા વિષયતા ઉત્પન્ન ન કરત, અને ભગવત્સ્વરૂપમા જડતી ભ્રાન્તિ પણ ન જ થાત પરંતુ તે ન હોવાથી માયા પોતાનો દોર ચલાવી તે નિરહંકારને ભગવત્સ્વરૂપનુ ભાન નથી થવા દેતી એ અત્યન્ત યુક્ત છે આ ઉપરાંત એક બાબત ખાસ ધ્યાનમા રાખવાની છે આપણા) માર્ગમા જે સ્વરૂપની સેવા કરવામા આવે છે તે સ્વરૂપને મૂર્તિ અથવા જડ માનીને નથી કરવામા આવતી પણ સાક્ષાત્ રસાત્મક પ્રભુ પુરુષોત્તમ માનીને જ કરવામા આવે છે એટલા માટે જ તે સ્વરૂપમા ઐશ્વર્યાદિ ધર્મો પ્રકટ છે, તેથી જ પેલી માયા ભગવત્સ્વરૂપમા વિષયતા કેમ કરી શકતી નથી પહેલા એવુ કહેવામા આવ્યુ કે કે, માયા જે વિષયતાને ઉત્પન્ન કરે છે એટ વિષયતા પદાર્થના સ્વરૂપને ટાળી કે છે, અને બીજી વિષયતા બુદ્ધિમા કેવરાવ કરી પદાર્થોને વિચિત્રરૂપે અનુભવમા લાવે છે માટે પ્રાપંચિક પદાર્થો ભગવદ્રૂપ ન જણાતા કંઈ વિલક્ષણ રીતે અનુભવાય છે. આ પ્રમાણે અહીં પણ બેટ વિષયના બે સ્વરૂપને ટાળે—છુપાવે અને બીજી વિષયતા ભક્તિરહિત પુરુષની બુદ્ધિમા કેવરાવ કરી નાખે એમ સમજવાનો સંભવ છે પણ તેમ અત્ર માનવાનુ નથી કારણ કે પ્રાપંચિક સર્વ પદાર્થો ભગવદ્રૂપ છતા તેમા સર્વે ભગવદ્ધર્મ પ્રકટ નથી, માટે માયાની વિષયતા જે પદાર્થોને ઢાંકી દેવાની શક્તિ ધરાવે છે પણ અહીં તો અખંડિત સર્વધર્મયુક્ત ભગવત્સ્વરૂપ છે માટે માયાની વિષયતા કંઈ પણ કરી શકતી નથી માયા ભગવાનની દાસી છે, માટે ભગવત્સ્વરૂપને ટાકવાનુ તેમા સામર્થ્ય હોય જ કયાંથી ? કેવળ મનુષ્યની (ભક્તિરહિત મનુષ્યની) બુદ્ધિમા કેવરાવ કરવાનુ સામર્થ્ય હોય છે ખરું તેથી તે મનુષ્ય જ્યારે ભગવત્સ્વરૂપનું દર્શન કરે છે ત્યારે તને વિપરીત ભાન થાય છે અર્થાત્ ભગવાનના દર્શનથી તે દીનભાવ દૂર થઇ જાય છે. એટલે જ પ્રભુ જ્યારે જ્યારે જે જે અવતાર ધારણ કરે છે તે તો સાક્ષાત્ ભગવાન્ જ છે એટલા માટે જ કહ્યું છે —"કલિયુગના દોષોનો નાશ કરનાર વિષ્ણુના ચરણારવિંદમા તથા વૈષ્ણવોના ચરણરજમા જરાપણ ભાવના ન કરવી" આવાગમન કરાવે જેવુ તે જરા પણ જેવુ મનમા કદી ન લાવવુ આવા બીજા પણ ઘણા લાભોથી ભ્રાન્ત બુદ્ધિને વખોડી કાઢવામા આવી છે વળી કહ્યું છે કે —"હે નારદ ! ભગવત્સ્વરૂપમા કદી પણ પથ્થરની ભાવના કરવી નહિ કેમ કે અચિન્ત્ય (અલૌકિક) કાર્ય કરનાર જ્ઞાનસ્વરૂપ આનન્દસ્વરૂપ સાક્ષાત ભગવાનનો તેમા આવિર્ભાવ છે" ઇત્યાદિ વાક્યોથી મૂર્તિમા સાક્ષાત ભગવાનનો આવેશ છે, તે ભગવ-

---

હોય અને પરમાત્મા ન હોય તો તેના પૂજનથી પરમાત્મા ઉપર શ્રદ્ધા કયાંથી થાય ? જડના પૂજનને અને પરમાત્માના ઉપરની શ્રદ્ધાને સંબંધ શો ? આવી ઘણી યુક્તિથી કલ્પિતમત બુદ્ધિ સ્વીકારે તેવો બાળતો નથી આપણા માર્ગમા મૂર્તિપૂજા જ નથી સાક્ષાત્ રસાત્મક પૂર્ણ પુરુષોત્તમના સેવા છે આ રહસ્ય પ્રથમથી સ્પષ્ટ સમજાવે છે.' તેથી તેનો વાચકવર્ગને તુરત ખ્યાલ આવશે આ વિષય ઉપર ભગવાન્ ભાષ્યકારે ભાષ્યમાં નવમીકે ન હિ સ એ સૂત્રમાં સારીપેઠે લખ્યું છે જિજ્ઞાસા હશે તો આગળ ઉપર ભાષ્ય અને નિબંધના સંપૂર્ણ આશય સાથે આ વિષય વિસ્તારથી ચર્ચવામાં આવશે

' આપણા રમણીય સિદ્ધાંતોને રસાતાલમા લઇ જઇ, તેને તિલાંજલિ આપી, આધુનિકમતવા । સનાતનનામધારી બહુતો પાસે મૂર્તિપૂજનનો ઉપદેશ અપાવનારા સંપ્રદાયના અગ્રણી નેતાઓ (') આ સિદ્ધાંત ઉપર લક્ષ આપી પોતાની વર્તણૂક સુધારશે કે ?

' વિષ્ણોર્વિં વૈષ્ણવાના કલ્મિલમથને પાદતીર્થેऽમ્બુબુદ્ધિ. ॥ ૨ શિલાબુદ્ધિર્ન કાર્યા ચ તત્ર નારદ કદાચિત્ । જ્ઞાનાનન્દાત્મકો વિષ્ણુર્યત્ર તિષ્ઠત્યચિન્ત્યકૃત્ ॥

સ્વરૂપ બીજા પ્રાપંચિક પદાર્થ જેવું નથી, માટે તિરોહિતાનંદ પ્રપંચ કરતાં આ ભગવત્સ્વરૂપ વિલક્ષણ છે, એમ સ્વીકારી લેવું "શ્રીમદ્ભાગવતના એકાદશસ્કંધમાં અગિયારમા અધ્યાયના ૩૩મા શ્લોકથી આરંભીને ભગવાન્ વિસ્તારથી ભગવત્સ્વરૂપના સેવનની આજ્ઞા કરે છે 'કાલનિર્ણયદીપિકા' ની અંદર 'વિષ્ણુધર્મ' ના વાક્યથી પ્રતિપાદન કરેલું છે કે,—"પ્રતિમામાં ભગવત્પૂજન અત્યંત શ્રેષ્ઠ છે, એમ કહેલું છે." શ્રીમહાપ્રભુજી નિબંધમાં ગુરુ કેવા કરવા? એ પ્રશ્ન ઉભો થતા આજ્ઞા કરે છે કે,—"શ્રીકૃષ્ણસેવામાં તલ્લીન હોય અને દંભ વગેરે દોષથી મુક્ત હોય, વળી શ્રીમદ્ભાગવતના તત્ત્વને-રહસ્યને જાણતા હોય એવા ગુરુની જીજ્ઞાસુઓએ સેવા કરવી" શ્રીમહાપ્રભુજીએ આવી આજ્ઞા કરી, પણ પાછો આપને વિચાર આવ્યો કે,—'આગળ ધુરંધર કલિકાલમાં મારા ભાવિસ્વરૂપોમાં હું આજ્ઞા કરું છું તેવું ગુરુત્વ રહેશે કે કેમ?" આપ ત્રિકાલજ્ઞ છે તેથી આ બાબતનો ચોકસ નિર્ણય કરે છે આપ જાણે છે કે "ભાવિસ્વરૂપોમાં હું આજ્ઞા કરું છું તેવું ગુરુત્વ રહેનાર નથી, માટે આ માર્ગનું ગુરુત્વ પોતા માટે જ નિયત કરે છે[૨]" વળી આજ્ઞા કરે છે કે,—"કોઈ દેશમાં આવા ગુરુ ન હોય તો જીજ્ઞાસુએ પોતે ભગવત્સ્વરૂપ કલ્પી તેનું નિરંતર સેવન કરવું. તે સ્વરૂપ ભગવત્સ્વરૂપ જ છે અને તેમાં સાક્ષાત્ ભગવાન્ સ્થિત છે, એમ સમજી સેવન કરવું" આ શ્લોકનું વ્યાખ્યાન કરતા આજ્ઞા કરે છે કે,—"વાસ્તવિક વિચાર કરતાં તો આ સર્વ ભગવદ્રૂપ જ છે, પણ આ સ્થળે આટલો વિશેષ છે જ્યારે ભગવાનની ઇચ્છા થાય છે કે **"હું આ રૂપે આનો ઉદ્ધાર કરીશ** ત્યારે મૃત્તિકારૂપે અથવા અન્યરૂપે પ્રકટ થાયછે." અર્થાત્ તે તે મૃત્તિકા વગેરે સ્વરૂપમાં પોતાના સર્વ ધર્મો પ્રકટ કરે છે માટે જ ભગવત્સ્વરૂપ (સેવ્ય) તે સાક્ષાત્ રસાત્મક પૂર્ણ પુરુષોત્તમ છે, માટે તે પ્રપંચથી વિલક્ષણ છે શ્રીમદ્ભાગવતના એકાદશસ્કંધમાં ભગવાને શ્રીઉદ્ધવ પ્રત્યે ઘણા જ વિસ્તારથી ભગવત્પૂજનની આજ્ઞા કરી છે આવીરીતે યમુનાજલ ગંગાજલ વગેરે જલ સાધારણ જલ જેવા નથી, એમ સમજવું. તેમ જ તુલસીને સાધારણ વૃક્ષરૂપ ન કહેવાય, શ્રીગોપીચંદનને બીજી મૃત્તિકા પેઠે મૃત્તિકા રૂપ ન જ મનાય, ભગવાન્ના અનન્ય ભક્તને સાધારણ મનુષ્યની ગણનામાં ન જ ગણી કઢાય, આ માનવામાં માન્ય પુરુષોના અનુભવસહિત વાક્યો પ્રમાણભૂત છે. માટે યમુનાજલાદિમાં સાધારણ વસ્તુની ભાવના ન કરવી. કેમકે યમુનાજલાદિના તે તે સેવકો પોતપોતાના તે તે સેવ્યમાં પોતાના ઉદ્ધારમાં ઉપયોગી થઈ પડે એવા ધર્મો અનુભવે છે એટલા માટે જ ભગવન્મૂર્તિ વગેરેના સંબંધથી ઘણા માણસોને ભગવત્પ્રાપ્તિ થઇ છે, એમ પુરાણોમાં અવલોકીએ છીએ આ શાસ્ત્ર કેવલ શબ્દ પ્રમાણ જ માનનારૂં છે એટલે વેદ, ગીતા, બ્રહ્મસૂત્ર, શ્રીભાગવત જે અર્થ જણાવે તેને દૃઢપણે સંકોચ વગર શિરસામાન્ય ગણનારૂં છે તેમાં શુષ્ક તર્કોને સ્થાન આપવામાં નથી આવતું માટે ઉટપટાંગ તર્કોને તિલાંજલિ આપીને જ આ શાસ્ત્રમાં નિર્ણય કરવામાં આવે છે માટે જે લોકોને આ વૈદિક અને પરમરમણીય શાસ્ત્રમાં વિહરવું હોય, પોતાના માનુષ જન્મની સાર્થકતા ઇચ્છવી હોય, તેમણે શુષ્ક તર્કોને આધીન બનવું નહિ, તેનાથી ભમવું નહિ, તેનાથી ડગી જઈ વૈદિક સિદ્ધાંતથી ભ્રષ્ટ પણ થવું નહિ.

શંકા—સર્વ બ્રહ્મરૂપ છે, સત્ય છે, મિથ્યા નથી, ભગવદ્રૂપ છે, એમ તમે શ્રૌતસિદ્ધાંતથી સિદ્ધ કર્યું, પરંતુ એ માનવામાં એક શંકા કાયમ રહે છે સર્વને બ્રહ્મરૂપ માનીએ તો સર્વમાં આપણે દેવ પણ આવ્યો, તે પણ બ્રહ્મરૂપ જ કહેવારો! ત્યારે નાસ્તિક ચાર્વાક મત સાથે તે અંશમાં મળ-

---

૧ ત્યાં આ વિષય અતિવિસ્તૃત છે, માટે જીજ્ઞાસુઓએ ત્યાં અવલોકવું ૨ અલૌકિક પુષ્ટિમાર્ગની નિઃસ્થંભ (નિરાધાર-કપોલકલ્પિત) ગુરુશ્રેણી કલ્પનાર અને "અભિનવસમ્પ્રદાયાચાર્ય" બનનાર શ્રીપુરુષોત્તમજીની આ પંક્તિનો વિચાર કરશે કે? ३ तदभावे स्वयं वापि मूर्तिं कृत्वा हरेः क्वचित्। पारंपर्यं सदा कुर्यात्तद्रूपं तत्र च स्थितम्॥ અર્થમાં તો કંઇક આ જ શ્લોક ઢાંકયો છે. પૂર્વાપરાનુસંધાનાર્થે આગળના શ્લોકનો ભાવાર્થ અને શ્રીપુરુષોત્તમજીના આચરણ ભંગનો ભાવાર્થ કોઈક સ્થળે લીધો છે

તાપણ સ્વીકારવુ પડશે ! ! કેમકે ચાર્વાકો આ પંચમહાભૂતના પૂતળાને જ આત્મા તરીકે માને છે કદાચ તમો શ્રુત્યુકત સિદ્ધાંતથી બેચાર સર્વને બ્રહ્મરૂપ માનવાની હઠ નહિ છોડો અને ઉકત દોષ બેાદી લેશેા તેા વેદવૃક્ષ શ્રીભાગવતનેા વ્યકોપ વ્હોરી લેવેા પડશે કેમકે શ્રીભાગવતમા દેહમા આત્મબુદ્ધિ રાખનારાઓનેા સખ્તરીતે તિરસ્કાર કરવામા આવ્યેા છે હવે ઉભયત પાશારજ્જુન્યાયે તમેા એક પણ સિદ્ધાંત સ્વીકારી એકવાક્યતા કરવા ધારેા તેા તે થવી નિષ્ફલ છે

સમાધાન—ખરી વાત આ શંકા અત્ર ઉપસ્થિત થવી જ જોઇએ. તેનુ પણ અત્ર નિરાકરણ કરવામા આવે છે અમે તેા પહેલેથી જ કહી તથા યુક્તિના સામટા બલથી સિદ્ધ કર્યું છે કે, સર્વ બ્રહ્મરૂપ જ છે તેા તેમા દેહ પણ બ્રહ્મરૂપ જ હેાય એમા નવાઈ જ શી ? પણ તે કોને માટે ? જે માણસ સર્વ પદાર્થને બ્રહ્મરૂપ જ દેખતેા હેાય તેને માટે માયાની વિષયતા પણ જેની બુદ્ધિમા ફેરફાર કરવાનુ થેાડુપણ સામર્થ્ય ન ધરાવતી હેાય તેવા માટે તે મનુષ્ય જેમ સર્વને બ્રહ્મરૂપ જ માને છે તેમ જ દેહને પણ વિકારરૂપ ન માનતા બ્રહ્મરૂપ જ માનશે એમા અમને કશેા વાંધેા નથી હવે જે લેાકેા બ્રહ્મનુ જ્ઞાન ધરાવતા નથી, જે લેાકેા દેહને વિકારી જુએ છે, જે લેાકેા કેવલ માયાના મેાહને આધીન થઈ **શિવેાઽહ** કરે છે, તે લેાકેા દેાષપાત્ર જ છે આવા લેાકેાની જ સર્વ શાસ્ત્રમાં નિંદા કરવામા આવી છે આ લેાકેા માયાની વિષયતાથી અજ્ઞાન થઇ ગયા છે, અને સર્વ પદાર્થને બ્રહ્મરૂપ જોતા નથી, ફકત પેાતા દેહને જ આત્મા હેાવાનેા દાવેા કરે છે, માટે તે લેાકેા જ્ઞાત જ છે તેનુ મન્તવ્ય તદ્દન બેાટુ છે નાસ્તિક ચાર્વાકોની બુદ્ધિ પણ કુંઠિત છે—બુઠ્ઠી છે, માટે તે લેાકેા જે દેખે છે તેને જ સત્ય માને છે અને જે દેખતા નથી તેને માનતા નથી એટલે તે લેાકોને પરમ-તત્વવિચારની શ્રેણી કયાથી જણાય ? તે લેાકેા દેહને દેખે છે માટે દેહને જ આત્મા માની બેઠા છે વાસ્તે આવા કનિષ્ઠપક્ષના અધિકારીઓનેા અનુભવ પણ વજનદાર ન જ ગણાય શ્રીમદ્ભાગવતમા પણ આવારીને દેહને આત્મા માનનારાઓને જ નિંદ્યા છે સર્વ સ્થલે બ્રહ્મનેા અનુભવ કરનાર મહાત્મા તેા દેહને પણ બ્રહ્મરૂપે જ જુએ છે, ભગવાન્ ભાષ્યકાર આજ્ઞા કરે છે કે,—'વિચારવાળી બુદ્ધિ હેાય અને દેહમા આત્મબુદ્ધિ થાય તેા તે દેાષપાત્ર જ ગણાય'

શંકા—તમારા નિર્ણિત થયેલા સિદ્ધાંત મુજબ કદાપણ બેાટુ છે જ નહિ, તેા 'હે ભગવાન્! તુ એક છે છતા તારામા આ ભ્રમ થાય છે' વગેરે વાકયેાની શી ગતિ ?

સમાધાન—ભગવાન્ એક જ છે, વ્યાપક છે, તેમા કદાપણ ભ્રાન્તિ અથવા મિથ્યા જેવુ કશુ હેાય જ નહિ કેમ કે પ્રભુ સત્યસ્વરૂપ છે ત્યારે મિથ્યા શુ ? મિથ્યા જે જીવે કલ્પ્યુ હેાય તે જીવ જે આ ભાઇ, આ બેન, આ બીલ્લે વગેરે જે કલ્પે છે તે જ મિથ્યા છે તે જ ભ્રમ ભગવાનમા થાય છે 'સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાંતેા'મા પહેલેા સિદ્ધાંત 'જગત્ સત્ય છે' એ છે તેનેા જ આ પ્રકરણમા વિસ્તારથી વિચાર કરવામા આવ્યેા છે છેવટે પણ તેનેા જ અનુવાદ કરી ગ્રંથકાર પ્રચલિત વિષયનેા ઉપસંહાર કરતા લખે છે કે,—આ વિષય ઉપર વધારે જાણવાની ઇચ્છા રાખનારે નિબંધમા જોવુ ત્યા આ વિષય ઉપર ઘણેા ઊહાપેાહ કરવામા આવ્યેા છે

સિદ્ધાંત.

જગત સત્ય છે જીવે કલ્પેલેા અહંતામમતાત્મક સંસાર મિથ્યા છે.

આ ઠેકાણે શ્રીલાલભટ્ટજીએ કરેલા પ્રમેયરત્નાર્ણવમા પહેલેા 'પ્રપંચવિવેક' સંપૂર્ણ થાય છે

જીવસ્વરૂપનિરૂપણ.

હવે ગ્રંથકાર પ્રપંચના સ્વરૂપનો વિચાર કરીને જીવના સ્વરૂપનો વિચાર કરે છે. શ્રુતિવગેરેના પ્રમાણદ્વારને પ્રથમપદ આપવાના સ્વમાર્ગીય નિયમને અનુસરીને સિદ્ધાંતનો નિર્ણય કરે છે "હે શ્વેતકેતુ! તે (બ્રહ્મ) તુ (જીવ) છે," "આ[૨] આત્મા બ્રહ્મ છે, અતત્વરૂપથી તેને જાણવો" "જીવભાવમાં જે જીવસ્વરૂપે રહેલો છે તે ભાગ અંશ છે અને તે સનાતન છે"

'જીવ[૩] બ્રહ્મ છે એમ પ્રતિપાદન કરનારી શ્રુતિ ઉપલબ્ધ નથી, (પરંતુ તેથી વિરુદ્ધ જીવને વ્યાપક કહેનારી શ્રુતિ મળે છે) માટે જીવ બ્રહ્મ નથી, એવી શંકા ન કરવી કેમકે વ્યાપકત્વનું નિરૂપણ કરનાર શ્રુતિ જીવ માટે નથી, એ તો બ્રહ્મ વ્યાપક છે એમ પ્રતિપાદન કરે છે પ્રસંગ બ્રહ્મના વર્ણનનો આવ્યો છે, માટે વ્યાપકપણાનુ પ્રતિપાદન કરનાર શ્રુતિ વ્યાપકસ્વરૂપે બ્રહ્મનો જ પરિચય કરાવે છે, જીવનો નહિ.' [૪]'વિવેકી પુરૂષો આપણા બન્ને વચ્ચે લેશ પણ તફાવત જોતા નથી'

આ પ્રમાણે શ્રુતિ,[૫] શ્રીકૃષ્ણવાક્ય, વ્યાસસૂત્ર, સમાધિભાષા, એ ચારે પ્રસ્થાનોના વાક્યથી સિદ્ધ થાય છે કે, જીવ બ્રહ્મથી જુદો નથી, જીવ બ્રહ્મનો અંશ છે, જીવ અણુ છે જીવની ત્રણ અવસ્થા છે ૧ શુદ્ધ, ૨ સંસારી, ૩ મુક્ત (આ ત્રણે ભેદનુ ઉત્તરોત્તર નિરૂપણ થતુ જશે) "જેમ અગ્નિમાથી સૂક્ષ્મ તણખાઓ નિકળે છે,' તેમ હેતુભૂત અક્ષરબ્રહ્મમાથી સદ્રૂપ, ચિદ્રૂપ અને આનંદાત્મક સૂક્ષ્મ અંશ નિસરે છે, એમ વેદ વદે છે નિકળ્યા પછી પૂર્વોક્ત અંશમાનો આનંદાંશ ગુમ થાય છે આનંદાંશ ગુમ થવાનુ કારણ વિશુદ્ધસત્ત્વ છે વિશુદ્ધસત્ત્વ એ ભગવદ્ધર્મ છે તે અક્ષરધામમા છે શ્રીભાગવતમા પણ કહ્યુ છે કે,—[૬]'વિશુદ્ધસત્ત્વધર્મસ્વરૂપ તારુ શાંત ધામ છે,' આ પ્રમાણથી અક્ષરધામ વિશુદ્ધસત્ત્વવાળુ છે અક્ષરધામમાંથી જીવ બ્યુચ્ચરે છે, માટે તેમા પણ વિશુદ્ધસત્ત્વ હોય જ, એમા કંઈ પ્રત્યવાય રહે જ નહિ કારણના ગુણ કાર્યમા હોય છે એવો સાધારણ નિયમ

---

૧ तत्त्वमसि श्वेतकेतो' આ શ્રુતિનો વિષય ઘણો જ તકરારી છે, આ કેફાએ માયાવાદી પોતાના કલ્પિત તર્કતાંડવમા ઘણો જ મશગુલ થઈ જાય છે, પોતાના સિદ્ધાંતને 'ગગનકુસુમસમાન' કરનારી આ શ્રુતિ સાથે પોતાના મિથ્યામતની સંગતિ માટે પોતાની મગજ હદપાર દોડાવે છે તે વંચિત બિચારાને આગળ પાછળના પ્રકરણના અનુસંધાનનુ ભાન પણ રહેતુ નથી તે જીવને મિથ્યા માને છે, માટે તેના મતમા હજારો તર્કોને આશ્રય લેતા પણ જીવ અને બ્રહ્મનુ ઐક્ય નથી સંભવતુ રામાનુજ, નિંબાર્ક, માધ્વ વગેરે પણ આ શ્રુતિને મારીમચડીને પોતાના મતને અનુસરતા અર્થ કાઢવા મથે છે, પણ પોતાના પ્રયાસના પ્રમાણમા ઘણા જ પાછળ પડે છે આપણા મતમા તે શ્રુતિના અર્થની લગારે પણ ખેંચતાણ કરવી પડતી નથી જેવો અર્થ પ્રકરણને મળતો આવે છે તેવો જ અર્થ સ્વીકારવામા આવ્યો છે તત્ તે (બ્રહ્મ) ત્વ (જીવ) અસિ છે આપણે જીવને બ્રહ્મનો અંશ માનીએ ત્યારે એટલે જીવ અને બ્રહ્મની એકતા ઘટે છે શ્રુતિના ઉજ્જ્વલ અર્થમા કંઈપણ કેરફાર કરવો પડતો નથી બીજાઓના ભાગ્યમા તો તર્કક્લેશ કાયમ જ છે આ વિષય વિસ્તારથી જાણવો હોય તો ચે-શા-સ છગનલાલ શાસ્ત્રીનુ શુદ્ધાદ્વૈતમાર્તંડનુ ભાષાંતર જુઓ ૨ સ્યોઽણુરાત્મા चेतसा वेदितव्य । ૩ नाणुरतच्छ्रुतेरिति चेन्नेतराधिकारात । બ્ર-સૂ-અ-૨-૩-૨૨ । ૪ न नौ वस्यन्ति कवय चिद्रूप जातु मनागपि । આશ્લોક શ્રીમદ્ભાગવતના ચતુર્થસ્કંધમાના પુરંદરોપાખ્યાનમા છે તેનો ભાવાર્થ આ છે —(નારદજી तत्त्वमसि વગેરે વાક્યમા ઉપદેશેલ જીવ બ્રહ્મૈક્ય પ્રાચીનબાર્હિષને સમજાવે છે 'હું શુ તે જ તુ છે તુ મારાથી જુદો નથી તુ છે તે જ હુ છુ, એમ જો વિવેકી પુરૂષો આપણા બન્ને વચ્ચે કંઈપણ ભેદ જોતા નથી ૫ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી નિબંધમા આજ્ઞા કરે છે કે,-'વેદ, શ્રીકૃષ્ણવાક્ય, (ગીતા) વ્યાસસૂત્ર, (બ્રહ્મસૂત્ર) સમાધિભાષા (શ્રીમદ્ભાગવત) એ ચારે પ્રસ્થાનો મુખ્ય પ્રમાણ છે ગ્રંથકાર અનુક્રમે સિદ્ધાંતદાઢર્યાર્થ ચારેના પ્રમાણો રજુ કરે છે ૬ यथाग्ने सूक्ष्मा विस्फुलिङ्गा व्युच्चरन्ति स, विशुद्धसत्त्व तव धाम शान्तम् ।

સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાન્તો.

૧ જગત્ સત્ય છે

૨ જગત્, જીવ, અન્તર્યામી, અક્ષર ઇત્યાદિના નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ
બ્રહ્મ કૃષ્ણ પરમાત્મા જ છે

૩ જીવે અવિદ્યાથી કલ્પેલો અહન્તામમતાત્મક સંસાર મિથ્યા છે.

૪ જીવ અણુ છે, શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મનો અંશ છે, વ્યાપક નથી.

૫. પરબ્રહ્મ પુરુષોત્તમ કૃષ્ણનું ધામ અક્ષર બ્રહ્મ ગણિતાનંદ છે

૬ સર્વોપરિ વેદશિરોમણિ પ્રતિપાદિત પરમકારણરૂપ વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે

૭. કૃષ્ણની સેવા એ જ અમારા જીવનો ધર્મ છે, એટલે વસ્તુત સ્વધર્મ કૃષ્ણસેવા જ છે -

૮ આત્મનિવેદન અને અનુગ્રહપ્રાપ્તિ વિના અન્ય વિશ્વધર્મ હોઈ શકે જ નહિ

પુષ્ટિભક્તિસુધાના ગ્રાહકોને સવિનય નિવેદન.

આ માસિકના સર્વ લેખકો જે લેખ લખે છે તે સાપ્રદાયિક સેવા કરવાની બિમ
ત લખે છે, તેથી અન્ય પત્રોની માફક આ માસિકના લેખકોને આપવામા દ્રવ્યનો અંશ
થતો નથી, એ જણાવતા આનદ થાય છે." માસિકની છપામણી વગેરે ખરચ ઘણુ જ કર
કરવામા આવે છે, તેથી નોંધવમાંથી જે કાંઈ વધે તેમાંથી સાપ્રદાયિક પ્રાચીન ગ્રંથો
કરવામાં આવશે. વૈષ્ણવભાઈઓએ આવા માસિકના પોતે ગ્રાહક થવુ જોઈએ, એટલુ જ
પણ પોતાના મિત્રોને પણ આવા ધાર્મિક કાર્ય તરફ પ્રેરવાનુ ખાસ લક્ષમા રાખવુ જોઈએ

મુંબાઇ,
પ્રિન્સેસ સ્ટ્રીટ.

પ્રકાશક.

ગુરુકુલ

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनुं स्वाम ॥ १ ॥
नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ २ ॥
भक्त्या त्वनन्यया शक्यः अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥ ३ ॥

પ્રકાશક,
વાડીલાલ નગીનદાસ શાહ
બી. એ. એલએલ. બી. બારીસ્ટર-એટ-લૉ

॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥
॥ श्रीगोपीजनवल्लभाय नमः ॥
॥ श्रीठाकुरजीकी वधाई ॥
(राग भैरव, चोताल)

सबमिल आवो गावो बजावो मृदंग आज हमारे लालजुकी वरसगांठ ॥
कनकथारभर मुक्ताफल ले नोछावर करवावो ॥ १ ॥
नवलनवपल्लवबदनमाला द्वारद्वार बंधावन ॥
आनंदघनप्रभुको जनम सुनतही लाग्यो सुजस सुहावन ॥ २ ॥

(राग धन्याश्री, ताल धमाल)

पुत्र भयो हे आज श्रीव्रजराजके ।
मथम यथामति वरनहीहो पुष्टिमारग रसरूप ॥
भूतल प्रकट आयके हो श्रीगोकुलके भूप ।
श्रीनदरायके दूर गये दुःख भाज श्रीव्रजराजके ॥ १ ॥
व्रजवासी सब सुनतही हो आवत चहुटिस धाय ।
ले कावर दधिदूधकी हो तनकी सुधि विसराय श्रीव्रज०
जिन छांडि दिये घरकाज श्रीव्रज० ॥ २ ॥
हरद दूध दधि अक्षत कुमकुम देत परस्पर सींच ।
भीर भइ नंदद्वारमें हो आंगन माची कींच श्रीव्रज० ॥
तिन तजी लोककी लाज श्रीव्रज० ॥ ३ ॥
नंदजू पकर नचावही हो देहदसा गइ भूल ।
मगलस्नान करावही मन पुत्रजन्मकी फूल श्रीव्रज० ॥
सूत सबहिनके सीरताज श्रीव्रज० ॥ ४ ॥
गर्ग पराशर बोलके हो जातकर्म कर नंद ।
श्रुति पुरान गुन गावही हो मकटे आनंदकद श्रीव्रज० ॥
करत वेदधुनि गाज श्रीव्रज० ॥ ५ ॥
चंदनभवन लिपावहि हो धरत साथिये चित्त ।
मोतीन चोक पुरावही हो करी वेदविध रीत श्रीव्रज० ॥
कलस लिये सबसाज श्रीव्रज० ॥ ६ ॥
दुंदुभि देव बजावही हो चहूटिस घुरे निशान ।
बोहोविध बाजे बाजही हो करत ससुर गान श्रीव्रज० ॥
गावत सरस समाज श्रीव्रज० ॥ ७ ॥

दे तनधाइ सब व्रजनारी जसुमतिकु खसिराय ।
मंगलसाज सिंगार सुभगतनमेर धरत ले आय श्रीव्रज० ॥
चरननूपुरधुनि बाज श्रीव्रज० ॥ ८ ॥
जाचकजन मनीमाल पेहेराई विमन दीनी गाय ।
सोनो मोती हीरा पन्ना दीये भंडार लुटाय श्रीव्रज० ॥
दित दान व्रजराज श्रीव्रज० ॥ ९ ॥
श्रीवृखभान आदि गोपनको बहोत कर्यो सन्मान ।
प्रकट्यो नंदनंदासको ठाकुर देत अभेपददान श्रीव्रज०
तुम करो श्रीगोकुलराज श्रीव्रज० ॥ १० ॥

(राग सारंग, ताल त्रिताल.)

लालको सुफल जनमदिन आयो ॥
गांउगांउ तजान आपुनी मोतीन चोक पुरायो ॥ १ ॥
दिनदसपेले बाजे बाजत पंचशब्द धुनघोर ॥
सबमिल गावत गीत बधाई घोख कुतोहलभोर ॥ २ ॥
प्रथममक्षर्मा राजभोगमें वल्लभमोहनभोग ॥
करत बियारू नंद जातिमिलि सेनभोगसंजोग ॥ ३ ॥
भादो कृष्ण उठे रवि आठे वर व्रत दिन ठहराय ॥
कृष्णजनमदिन पुत्रजनमते अतिमफुलित नंदराय ॥ ४ ॥
घटिका द्वेकराति ही तबते उठे कृष्णगुन गाय ॥
लाल न्हवावत पंचामृतसो व्रजजुवती मंगल गाय ॥ ५ ॥
फुनिफुनि ले अरु अंग उबटनो केसर सोहे गात ॥
उष्णोदक ले न्हवावत लालन अगअगो छतमात ॥ ६ ॥
रंग केसरी बागो कुलही सूथनपटुका लाल ॥
आभूखन बहुविध सोपहरे काजर नेनविसाल ॥ ७ ॥
भाल तिलक गोरोचन मृगमदकमलपत्र दोउ गाल ॥
गुंजा मोरचंद्र धर बेठे सिंघासन नंदलाल ॥ ८ ॥
सनमुखते सिंगार लडेती भूखनभाव अनूप ॥
स्याम अंतरी सारी केसरी राजत जुगलस्वरूप ॥ ९ ॥
उपर पीतांबर ले ओढ्यो व्रजजन गावत गीत ॥
कनकथारमे मोतीसाथिये मुठिया आरतीचीत ॥ १० ॥

अक्षनपीरे कुमकुम चीरे तिलक करनहे भांत ॥
भेट धरत फुनि मुठिया वारत आरती करी वली जात ॥ ११ ॥
तिल गुड मेल दूध ओट्यो फुनि वीरादेत विशेख ॥
हरखित दांत देत नंदवावा द्वारकेश सुख देख ॥ १२ ॥

॥ राग नायकी, आडो चोताल. ॥

सब मिल आवो मंगल गावो सुनी अहो सखी भादोमास सुहायो
रसवृंद अमी ॥
झुलायो अहो व्रजरानि दोटा जायो दोटा जायो सुनी ॥ १ ॥
अहो चहुंदिसतें पायस आई अहो तिहिविरिया वृंद सोहाई ॥
नहा वाजत रंग वधाई रंग वधाई धुनी ॥ १ ॥
अहो घरघरतें गोपी आई मिल पांवरचरो लाई ॥
नंदरानीकु खसुरानी कुखसुरानी ॥ २ ॥
अहो अलि स्यामघन जस गावे व्रजवासिन अमृतपावे ॥
वृंदावन वसवोडीभावे वसवोडीभावे फुनि ॥ ४ ॥

॥ श्रीगुसांईजीके पलनांके पद ॥

(राग आसावरी, ताल धमाल.)

श्रीविट्ठलनाथ पालने झूले मात अकाजू झुलावे हो ॥
वारवार निहार कमलमुख भावसहित गुन गावे हो ॥ १ ॥
कबहुक सुरंगखिलोंना ले ले नानाभात खेलावे हो ॥
देखदेख मुसकाय मनोहर द्वेदतियां दरसावे हो ॥ २ ॥
मृगमदतिलक लिलाट विराजत कछुला कठ बनावे हो ॥
विष्णुदासचरननको सेवक पर्यो द्वार जस गावे हो ॥ ३ ॥
मनिमय आगन श्रीवल्लभके कनकपालनो सोहे हो ॥
मात अकाजू झुलावे श्रीविट्ठल देखि देखि मन मोहे हो ॥ १ ॥
सुंदरमुख मृदुहास मनोहर चंचलनेन विशाल हो ॥
घुघरारी अलके अतिराजत मृगमदतिलक सुभाल हो ॥ २ ॥
कनकफूल कटी हथमाकर झगुली ननसुख झीनी हो ॥
स्निग्ध सचिक्कन झलकत झांई सुंदरता सवदीनी हो ॥ ३ ॥
वदन निहारत वारत सर्वस चुंबन दे चुचकारी हो ॥
किलकि किलकि जननी तन चितवन गई लोन उतारी हो ॥ ४ ॥

श्रीवल्लभ समस्मर श्रीविट्ठल एसे ओर न कोई हो ॥
वल्लभदास दरसको प्यासो देखे सबसुख होई हो ॥ ५ ॥

(राग धन्याश्री, ताल धमाल.)

झूले श्रीविट्ठलनाथ मनिमय पालने ॥
निजजन कीये सनाथ लाललालने ॥ ध्रु ॥
रमकि झमकि घुघरु घंटावलि कनकजटित मनि हीर ॥
रत्नकलस कलपाट पलाकन ऊपर दछिन चीर ॥ १ ॥
मनिमोतिनके झूमक बिचबिच लटकन लटकत लोल ॥
छबिसो धगनमगनवल्लभ सुत भूलत झोटन बोल ॥ २ ॥
सिर कुलहि उलही लट लटकन तिलक भाल भ्रगु बंक ॥
नेन विशाल कृपाल कृपानिध मुखछब सरदमयक ॥ ३ ॥
चटकचटक चुटका कग्तारी चटकिचटकि चुटकारी ॥
जुवतिवृद हसिहसि झुलगवत अपनो तनमनवारि ॥ ४ ॥
आनंदभरी अकाजू मैया निरखि लडावति लाले ॥
मंगल गाय मुदित नरनारी वारत मोतिन माले ॥ ५ ॥
जसुमतिके घर पलनां झूले बहुत असुरसिंघारे ॥
सो श्रम निगकरन वल्लभगृह व्रजमंडल पाउ धारे ॥ ६ ॥
द्विज अवतार सोई पुरुषोत्तम कलिके जीव उद्धारे ॥
गोकुलप्रभु तुमवेग बडे होउ पुष्टिभक्ति बिस्तारे ॥ ७ ॥

॥ सांझीके पद ॥

(राग गोरी, ताल धमाल.)

मेरी कुंवरी लडेती खेलही सब सखीयन लीने सग हो ।
कोयल केली ले फूलनकों अली लालीले आवे हो ॥
सरद सोहाए गीत द्वार घरघरभु हट गावे हो ॥ १ ॥
मोपे कही न जात सखीरी दुपेरीयांकी शोभा ॥
सांझीको देखे मन फूले सांझी लायक लोभा हो ॥ २ ॥
तिलके फूलसीयोरी केतो रंढनके सब तोरे ॥
सनके सर खंडीके सीतल सांझीको सब जोरे हो ॥ ३ ॥
सूरजमुखी फूलन सोफूली चदमुखी ले आवे ॥
प्रभुलायक फूलनको गहनो सुंदरी सबे बनावे हो ॥ ४ ॥

पीयवासेके फूलनकी पहरे पीयरी तनमाला ॥
सिंगार हारके फूलनको सिंगार करत ब्रजबाला हो ॥ ५ ॥
अरुवासेके सेतफूल ले पीतफूल ले आई ॥
मधु माधुरिके फूलनंकी गुही सखी माधुरी लाई हो ॥ ६ ॥
जुई जाई माला ले आई जुई प्राननकी प्यारी ॥
चमेली चंपेके फूलकी गुहिले लाई सारी हो ॥ ७ ॥
सदा सेवती श्रीस्यामाको फूल सेवती आने ॥
रायबेलको सबगहनो सखी रायबेलगुहि जाने हो ॥ ८ ॥
दल गुलाबके तोरी सखीरी प्रिय गुलाब ले दोरी ॥
बोलसरीको श्रीस्यामाकों सखी बोल कीसोरी हो ॥ ९ ॥
सखी मालतीकी माला ले फूल मालती फूले ॥
कटंचनके सेतनकुंदीके दसनकुंदसम तूले हो ॥ १० ॥
कमलासाकर कमल फिरावत सखी कमलनसी ठाढी ॥
कमल कुचनपर चंदनचोली सांचे सोभर काढी हो ॥ ११ ॥
नैननकी नवलासी मारत सखी निवारी प्यारी ॥
आपुसमे के फूलनकी सखी अरवासबेनी सवारी हो ॥ १२ ॥
सोनेकसे फूल सखीरी सोन जायके सोहे ॥
सोनो अंग सुगध सखीरी जाकी पटतर कोहे हो ॥ १३ ॥
पाडर जाय सखी लखियनमे करपाडरकी माला ॥
पाडरके पायनमें लोटत पचवानकी वाला हो ॥ १४ ॥
प्रेमपीया रुचसो ले आई पारजातकी बोडी ॥
सबहनको मनमथ्यो सखीरी मनमथमालकी मोडी हो ॥ १५ ॥
मुकुलितकली मोगरेकी गुहिगुहिके गेंदु बनावे ॥
सुंदरि सब सांझीसी फूली खेलन सांझी आवे हो ॥ १६ ॥
टरियनमें फरियनमे फूले फूल गोटमे लीने ॥
चूरखु भी पीय पोतजोत सदा गाईकीने हो ॥ १७ ॥
एकएक बेढी बदनकी चिबुकमध्य छवि नीले ॥
सखी बाला अलीलीला मानों चदमधू चटकीले हो ॥ १८ ॥
कठनमें दुलरी सोनेकी पायन पनसुरा चमकें ॥
झरत फूल मनहरत हसनमे दसन दामिनी दमके हो ॥ १९ ॥
चमचम जीमुख चद्रमानकी चाव चोधी चित्त चोर्यो ॥
उज्वल उरजनमे गुरजनमे रपट पर्यो मन मोर्यो हो ॥ २० ॥

निरखनिरख नक फूली नाककी लोभी मन ललचायो ॥
वारनसों मन वारवार ले वारनमें अरु झायो हो ॥ २१ ॥
जेते फूल वादक हे कविसखी फूल होए आंई ॥
हसिहसिके व्रखभानसुता आंखिनसों आंखि मिराई हो ॥ २२ ॥
सांझी रची गायगोवरसों फुनि कोयल ज्यो कूजे ॥
वंदनवंदन मनऊ बिजुरी स्यामघटामें पूजे हो ॥ २३ ॥
जो सांझी फूलनसो पूजे फूलन फूल चढावे ॥
सांझीके पूजेको यह फल सुफल फूलसों पावे हो ॥२४ ॥
लाल लटूकेरयो भट्ट हो झमकि लियो भुज झेल ॥
करत आरती कुवरी कुवरको श्रीघनस्याम सहेल हो ॥ २५ ॥

॥ अथ पंचमी विज्ञप्तिः ॥

શ્રીકૃષ્ણાય નમ ॥ હે ઈશ, અસહ્ય કામજ્વરથી મારી દેહ જર્જરિત થઈ ગઈ છે, વિરહાગ્નિનિ જ્વાળાથી હું બળી ગઈ છું. તારા પ્રેમરૂપી સર્પે મને ડખ્યો છે, હવે હું કોને શરણે જઉં? (૧). હે વ્રજનાથ, લક્ષ્મીને દુર્લભ, એવું તારૂ અધરામૃત મે એકવાર ચાખ્યું, પણ તેથી મારૂ મોત થયું, તો ગોપીજનોએ તો તેનું વારવાર પાન કર્યું છે, તેમને શું નહીં થયું હોય? (૨). હે કૃપાનિધે, તારા અધરામૃતના પાનથી મને પૂર્ણપણે કામ પ્રકટી નીકલ્યો છે, તે કામના બાણથી અત્યંત વ્યથા થાય છે, તે વ્યથા કદંબની કોમલ મંજરી તથા પ્રફુલ્લિત સુંદર કુંજનો ગુહ્યાગારમા તારા શ્રીઅંગના આલિંગન, અમૃતરસ વગેરેનું દાન કરીને, તે વ્યથા શાંત કર (૩) હે પ્રિય, હે ઉદાત્તલીલાવાળા, આ પવન, કામ દેવનો મિત્ર, નિર્મળ કમળના ગર્ભની સુગંધ ફેલાવતો આવે છે, પ્રથમની માફક ગમે તેમ કરીને ફરીથી ક્રીડા કર (૪) હે પ્રેમ, આલિંગન, ચુંબન વગેરે ભાવો તેં (મારાપર) કર્યા છે, અને મને મોહિની લગાડી મૃદુ કરી છે. હે કામદેવના જેવા સુંદર, તે મૃદુપણું મારામાં રહ્યું, પણ તે સુંદર ભાવો જતા રહ્યા છે (૫) હે કૃષ્ણ, હે મંજરીવન, યમુનાતટ ઉપર નિકુંજ પ્રદેશમા મદોન્મત્ત ગજરાજ જેવી ક્રીડા તેં કરી હતી, તે હમણા મને માનવાને જ કરી હતી કે શું? (૬) તારો અધરરસ મને શું કરવા પાયો? અને તારી વેણુનો કર્ણને આનંદદાયક કોમળ સ્વર શું કરવા સંભળાવ્યો? (૭) હે ગોપીપતિ, તારા મુખારવિંદ રિવાયની બીજી વસ્તુઓમાથી તે મારી રુચિ કાઢી નાખી, હવે તે મુખ પણ મને દેખાડતો નથી, તારી મોહિની બહુ કઠિન છે (૮) હે વીર, વિરહથી કુંકુમિત મારા સ્તનમંડળપર તારો અધરરસ દે, મારા વિયોગનુ દુઃખ હરી લે, હે પ્રભુ, મારી છાતી જે કામદેવનુ નિવાસસ્થાન છે ત્યા વિલાસ કર (૯). વિયોગનો રોગ મહાભારત છે, તેમા અહીં મળેલા કોઈ લોક એ વાત સમજતા નથી, તારા વિના—વૈદ્ય વિના, હું ખરેખર મરી જઈશ (૧૦) હે વ્રજનાથ, હવે, હું શું કરું? ક્યાં જઉં? મારૂ ચિત્ત કયા ઠેકાણે આવશે? હે તમાલનીલ, તારા મુખારવિંદ વિનાની આ દિશાઓ સર્વે શૂન્ય લાગે છે (૧૧). હે પ્રેમ, સ્વભાવથી જ હું ઠંડક આપનાર સ્નેહાળ, અલકાવલીથી આવૃત તારૂં વદનકમળ જો મારા હૃદયમા પધારે તો જ જેમતેમ કરીને મારા પ્રાણ રહે, નહિ તો, દાવાગ્નિની જ્વાળા જેવા તારા બાણના વિરહથી જર્જર થઈ ગયેલા મારા દુખી પ્રાણ કામદેવની અંદરની પીડાથી એકદમ જતા રહેશે (૧૨) તારા વિવિધ પ્રકારના મધુર આલાપ સુંદર ચરિત, વિવિધ પ્રકારના કટાક્ષો, આલિંગનો અને સુંદર હસિત સંભારી સંભારીને હું ઝૂરૂ છું

—મરતી રહુછુ (૧૩) હે વહાલા, તારા સબધવાળી કોઇપણ વસ્તુ મારા સ્મરણમા આવે છે, ત્યારે મારા ગાત્રો અદરથી ચૂરેચૂરા થઈ જાય છે, અને વિવેક, લજ્જા અને ધૈર્ય જતા રહે છે. (૧૪) વિયોગના દુખથી પડતા આસુ અટકાવવા બહુ કઠિન છે, અને (અટકાવતા છતા) જે તે જણાઇ આવે છે, તો તે નહીં સમજનાર અજ્ઞાન માણસોની શરમ લાગે છે, ત્યારે હુ શુ કરૂ? (૧૫) તારા મુખારવિદે મારૂ હૃદય ચોરી લીધુ છે, તારા વિહાર-મદમદ હાસ્ય વગેરેએ મારા પ્રાણ હરી લીધા છે, વિરહ સમુદ્રમા હુ ડુબી ગઈ છુ, આવી હુ તારા વિના કેમ જીવુ છુ? (૧૬) હે પ્રાણપ્રિય, તારા અગના આલિંગને મારૂ ચિત્ત ચોરી લીધુ છે, અને હે વહાલા, જે હુ તારૂ પ્રેમથી ખીચેલી ભ્રુકુટિ, મંદમદ હાસ્ય, વિલક્ષણ કટાક્ષ વગેરેથી મોહ પમાડનારૂ મુખ જોઇ હુ નહીં જોઉં તો કેમ થશે? (૧૭) હે વ્રજરાય, હે વલાલા, તારા અગરાગ વિના વિરહથી પીડિત એવી હુ આ જન્મારો કેમ પૂરો કરીશ? (૧૮) હે નાથ, તારી જે હુ તેને તારા હોવા છતા પણ તારા વિયોગના દુખની પીડા સર્વદા થયા કરે તે ઉચિત નથી (૧૯) તારૂ વદન સુધાનિધિ, જેની લીલાએ ગોપિકાદિકને મોહિત કરી નાખ્યુ છે, તે અત્યત દુખથી દીન થયલીને એકવાર પણ દેખાડ (૨૦) હે શત્રુઓને હણનાર, વૃદાવનમા જલદી મેળાપ થશે એવી આશા મારા મનમાં સર્વદા રહેતી, પણ ત્યા પણ અત્યારસુધી મેળાપ થયો નહી, માટે હે વ્રજેશ, હે પ્રભુ, તને તે પણ ગમતુ નથી? (૨૧) તારા વિરહરૂપી મોટા પ્રહારથી મારી આશાઓના ચૂરેચૂરા થઈ ગયા છે, અને ક્ષણેક્ષણે મહામોહમા હુ પડુ છુ, મને કોણ જીવાડશે? (૨૨) તારા સગમની અવધ પૂરી થયા છતા મારા હૃદયના એકદમ ટુકડે ટુકડા કેમ નહીં થતા હોય તે હુ સમજી શકતી નથી (૨૩) બ્રહ્મા, શિવ વગેરે જેનો પાર પામતા નથી એવો તુ ક્યાં? અને હે વિભુ, પશુ જેવી, મૂઢ હૃદયવાળી, હુ ગોવાલણી કયા? તો પણ તારા વિલાસ અને હાસ્યથી મારૂ મન મોહ્યુ છે, અને હે પ્રિય, આતુર થઈ તારામાજ ચોટી જઇ ગયુ છે, હું શુ કરૂ? (૨૪) હે પ્રેમ, તારાપર મારો પ્રેમ છે, એમ પણ મારૂ મન કબુલ કરતુ નથી, કેમ કે હે વહાલા, તારા અગ-સગના વિયોગમા પણ હુ ધૂંથા જીવુ છુ (૨૫)

ઇતિશ્રીવિઠ્ઠલેશ્વરકૃતા પચમી વિજ્ઞપ્તિ સમાપ્તા

बालबोध.

સૃષ્ટિમા સર્વ મનુષ્યો મહાન્ ગ્રન્થોમા અવગાહન કરવાની શક્તિવાલા નથી હોતા, અથવા કવચિત્ હોય છે તો તેટલો પરિશ્રમ લેવાની ઇચ્છાવાલા નથી હોતા, તેથી મહાન્ ગ્રન્થોના કર્તા એવા આચાર્યોને સ્વમન્તવ્ય દર્શાવવાને મહાન્ ગ્રન્થોના સારરૂપ પ્રકરણ ગ્રન્થોમા સિદ્ધાન્તનુ ખડશ નિરૂપણ કરવાના શિષ્ટાચારને અનુસરે છે આવા જ આશયથી શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ સપ્રદાયમા ષોડશગ્રન્થ નામથી પ્રસિદ્ધ એવા ૧૬ ગ્રન્થો પ્રકટ કર્યા છે આમ કરવામા તેઓશ્રીની સ્વકીય જન ઉપર કૃપા જ સમજવી.

આ ગ્રન્થોમા પ્રથમ શ્રીયમુનાષ્ટક છે આ ગ્રન્થરત્નના પાઠ કરનારને સર્વ દુરિતનો ક્ષય, મુકુન્દમા રતિ પ્રેમ અને તદીય નવીન તનુની પ્રાપ્તિ સર્વાત્મભાવ ઇત્યાદિ અષ્ટ ફલની સિદ્ધિનુ દાન કરવાનુ સામર્થ્ય શ્રીયમુનાજીમા છે એમ શ્રીમદાચાર્યચરણે નિરૂપણ કર્યુ છે એ ગ્રન્થરત્નના પાઠથી મનુષ્યનુ મન સર્વપ્રકારે નિર્મલ થાય છે જ્યા મન નિર્મલ થયુ તેની સાથે તે વિચારે છે કે મારૂ કર્તવ્ય શુ? શુ કરવાથી પુરુષાર્થ સિદ્ધ થાય? પુરુષાર્થ તે વળી શુ? ઇત્યાદિ નાના પ્રકારના વિચાર પોતાને કરે છે જ્યારે આ પ્રમાણે તે વિચાર પ્રારંભે છે અને સૃષ્ટિમા સર્વત દૃષ્ટિ ફેરવે છે ત્યારે સૃષ્ટિના વિવિધપ્રકારના વિચારકોના પુરુષાર્થવિષે વિવિધ અભિપ્રાય પોતાની દૃષ્ટિગોચર થાય છે કેટલાક દાન ભોગ વગેરેને પુરુષાર્થ માની પ્રવર્તતા દેખાય છે તો કેટલાક સ્વર્ગ ઐશ્વર્યાદિકને જ બહુ માને છે, કેટલાક કીર્તિ તો કેટલાક કામને જ સાધે છે, કેટલાક 'શૌચ આચારવિહીનોની

સમસ્ત ક્રિયા નિષ્ફલ છે' 'આચારમૂલક ધર્મ છે' ઇત્યાદિ વાક્યાનુસાર સ્મા૰તાંદિ આચારને જ પરમ વદે છે, તો કેટલાક ધર્મમાં જ પ્રવર્તે છે, કેટલાક 'દેવો તપથી દેવતા થયા' ઇત્યાદિ શ્રુતિપ્રમાણે તપમાં જ મચ્યા રહે છે, ત્યારે કેટલાક સાંખ્યયોગાદિના વિદ્વાનો સન્યાસ અન્ય શમ દમાદિમા જ સર્વ સમાયલુ છે એમ સમજે છે, કેટલાક શિવને જ પરમતત્વ માની ઉપાસે છે તો કેટલાક વિષ્ણુને જ પરમ માની તેની ઉપાસના કરે છે, ઇત્યાદિ વિવિધ પ્રકારના મતમતાંતરનુ દર્શન કરીને હતનિ શ્ચયરહિત બાલક હોવાથી નકારીય બને છે. શ્રીયમુનાષ્ટકના પાઠથી બુદ્ધિ નિર્મલ થઇ છે તેથી પુરુષાર્થ સિદ્ધ કરવાની ઇચ્છા થાય છે, છતા પુરુષાર્થ–વિષે વિવિધ વિરુદ્ધ વિચારોથી ક્વચિત્ અરીય જન મુગ્ધ થાય તો તેમ મા થાઓ એવી ઇચ્છાથી શ્રીમદાચાર્યચરણ તેવાઓને પુરુષાર્થ વિષેનુ સત્યસ્વરૂપનો બોધ કરવા આ કરણથી શ્રીબાલબોધ ગ્રન્થ નિષ્ઠાચાર પ્રમાણે સદાનન્દ પ્રભુને નમન કરતા પ્રારંભે છે.

नत्वा हरिं सदानन्दं सर्वसिद्धान्तसद्दृढं ।
बालप्रबोधनार्थाय वदामि सुविनिश्चितम ॥ १ ॥

'સદાનન્દ હરિને નમીને બાલપ્રબોધનાર્થે સર્વ સિદ્ધાન્તસમ્મત સુવિનિશ્ચિત વદુ છુ આ પ્રમાણે શ્રીમદાચાર્યચરણ ગ્રન્થનુ મગલાચરણ કરે છે, અને તેની સાથે ગ્રન્થ યોજવાનુ શુ પ્રયોજન તથા ગ્રન્થના શ્રવણ મનનથી શુ ફલ તે પણ અતિ સુદરરીતે અહિ જ સૂચવે છે આ ગ્રન્થ યોજવાનુ મુખ્ય કારણતો સ્વન પોતાનુ હિત નહિ સમજનાર હતનિશ્ચયરહિત બાલોનુ કલ્યાણ કરવાનુ છે, અને તેથી જેવો બાલક જ અહિ અધિકારી થાય છે દીનતાપૂર્વક પ્રભુને નમન અને સાધન સૂચવે છે, અને સદાનન્દ પદ સુખસ્વરૂપ શ્રીકૃષ્ણ જ ફલ છે એમ સૂચવે છે સર્વ સિદ્ધાન્તોના સાધન ફલ વગેરેનો નિષ્કર્ષ એ આ ગ્રન્થનો વિષય છે બાલકને અશ્રદ્ધા ન થાય તેથી પોતે સુવિનિશ્ચિત પદ મૂકે છે, એટલે કે આ નિષ્કર્ષ કોઇની કલ્પનામાંથી ઉદ્ભવેલો નથી પણ વેદાદિ શાસ્ત્રના સબલ પ્રમાણોથી નિશ્ચિત થયેલો છે આ પ્રમાણે મગલાચરણ કરીને ગ્રન્થના વિષયનો પ્રારંભ કરે છે સુગમતાને વાસ્તે આપણે આ ગ્રન્થનો સાર નીચે આપેલા ચિત્રમા જ સમાવીશુ, અને પછી સવિસ્તારનુસાર વિષય ચર્ચાસહ પૂર્ણ કરવાને વિષય વિવેચન કરીશુ પ્રથમતો આચાર્યશ્રી પુરુષાર્થની ગણના કરે છે પુરુષાર્થની ગણના કરવાનુ મુખ્ય પ્રયોજન અનન્ત પ્રકારના ભ્રાન્તપ્રતિપાદિત ભ્રાન્ત પુરુષાર્થનો નિરાસ કરવાનુ છે અર્થ તો ચાર બાબ્રી બીજા બધા અર્થાભાસ સમજવા

पुरुषार्थ.

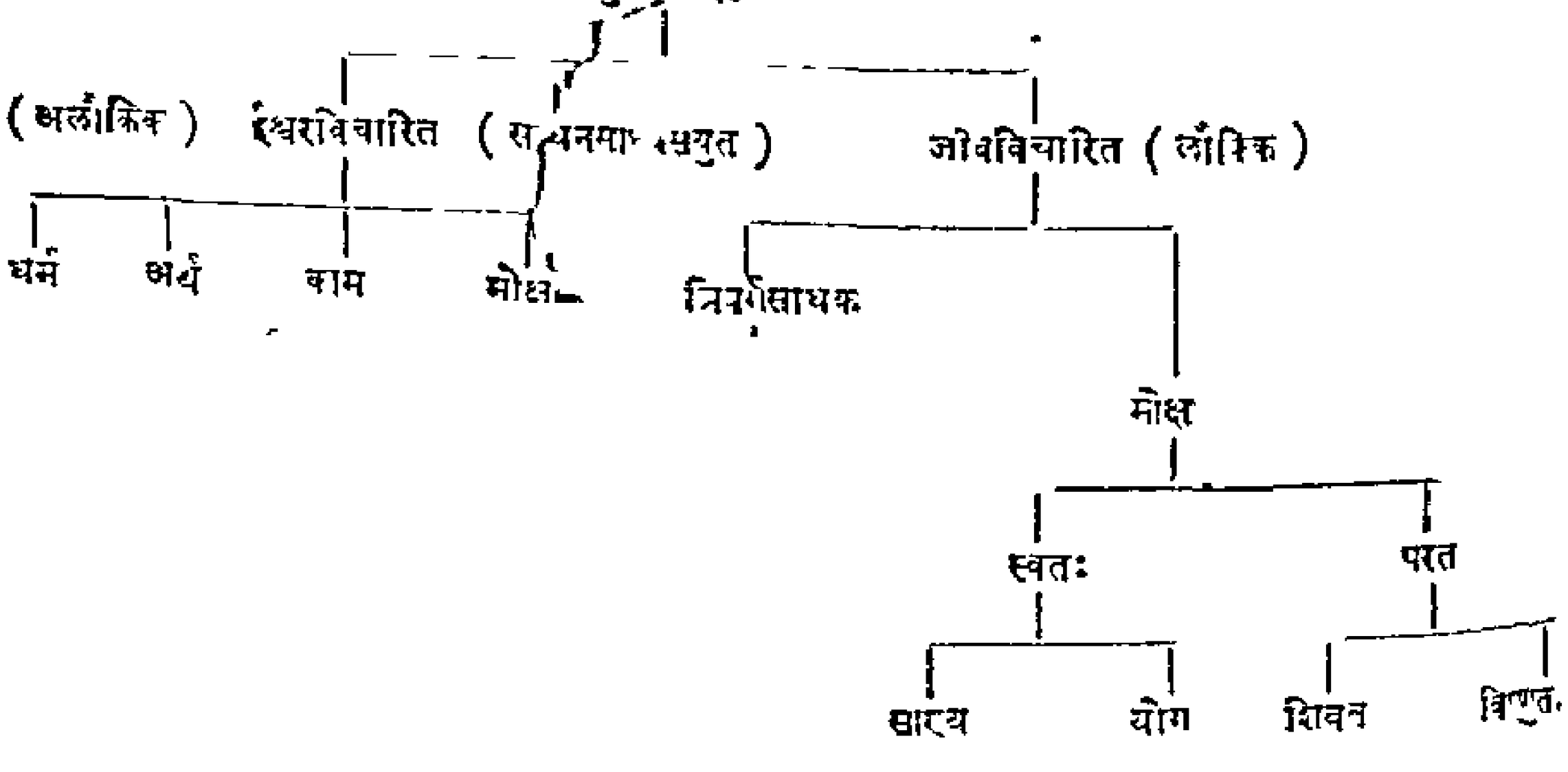

અત્ર ગ્રન્થમા આચાર્યશ્રી પુરુષાર્થપદ ન યોજતા માત્ર અર્થ પદ જ યોજે છે, તે પરથી એમ સૂચન થાય છે કે આચાર્યશ્રીના અભિપ્રાય પ્રમાણે વસ્તુત પરમપુરુષાર્થ ભક્તિ જ છે, અને ધર્મ અર્થ કામ મોક્ષાદિ તો માત્ર મનીષિનના અર્થ છે પરંપરાથી પણ પુરુષાર્થ ચાર પ્રકારના ગણાય છે આ ચતુ પુરુષાર્થ દ્વિપ્રકારક છે, અલૌકિક અને લૌકિક અલૌકિક એટલે ઈશ્વરવિચારિત અથવા વેદપ્રતિપાદિત અને લૌકિક ઋષ્યાદિ જીવવિચારિત ઈશ્વરની શિક્ષાથી ઋષિઓએ પુરુષાર્થનુ સ્વરૂપ સ્મૃત સ્મૃતિ વગેરેમા પ્રતિપાદન કર્યુ છે વેદોક્ત અલૌકિક પુરુષાર્થ તો સાધ્યસાધનસયુત છે, અને વેદથી જ તેનો નિર્ણય થતો હોવાથી આચાર્યશ્રી અત્ર તે વિષે નિર્ણય આપતા નથી. આજ પોતે દ્વિતીય અને તૃતીય શ્લોકમા આમા કરે છે

धर्मार्थकाममोक्षाख्याश्चत्वारोऽर्था मनीषिणाम् ।
जीवेश्वरविचारेण द्विधा ते हि विचारिताः ॥ २ ॥
अलौकिकास्तु वेदोक्ताः साध्यसाधनसंयुताः ।
लौकिका ऋषिभिः प्रोक्तास्तथैवेश्वरशिक्षया ॥ ३ ॥

મનીષિન(બુદ્ધિમાન)ના ધર્મ અર્થ કામ અને મોક્ષ નામના ચાર અર્થ છે તે અર્થનો દ્વિધા વિચાર થયેલો છે, એક ઈશ્વરથી અને બીજો જીવથી (ઈશ્વરવિચારિત) અલૌકિક વેદોક્ત અથા સાધ્ય તથા સાધનથી સયુત છે (જીવવિચારિત લૌકિક અર્થોનુ તે જ પ્રમાણે ઈશ્વર શિક્ષાથી ઋષિઓએ પ્રતિપાદન કર્યુ છે વેદના પૂર્વકાડમા કેટલાક મત્રો એવો ઉપદેશ કરે છે કે સ્વર્ગની કામનાવાળાએ જ્યોતિષ્ટોમ યજ્ઞ કરવો, અને કોઈ પણ પ્રાણીની હિંસા કરવી નહિ એમ કેટલાક મત્રો અમુક કર્તવ્યનુ વિધાન કરે છે અને કેટલાક અમુક કર્તવ્યનો નિષેધ કરે છે આ પ્રમાણે વેદમા કેટલાક વાક્યો એવા મને છે કે જે મનુષ્યને અમુક કરવાને અને અમુક નહિ કરવાને પ્રેરે છે આ પ્રેરણા એ ધર્મનુ લક્ષણ છે હવે અમુક કરવાની પ્રેરણા જેવી કે સ્વર્ગકામ નાવાળાએ જ્યોતિષ્ટોમ યજ્ઞ કરવો એ વિધિ કહેવાય કારણ કે એમા અમુક કરવાનુ વિધાન છે કરવાના વિધાનને લીધે જ એને પ્રવૃત્યાત્મક કહે છે આ સિવાય બીજા કેટલાક વાક્ય કોઇ પ્રાણીની હિંસા ન કરવી ઇત્યાદિ અમુક કરવાની મના કરે છે, તેથી એને નિષેધ કહે છે આવા વાક્યો અમુક કર્મથી નિવૃત્ત કરે છે જ્યોતિષ્ટોમાદિ યજ્ઞકરણ ક્રિયાને આધારે થવાથી એ પ્રવૃત્યાત્મક છે, અને હિંસાદિ નિષેધ આન્તરવૃત્તિનો સકોચ કરવાનુ હોવાથી નિવૃત્યાત્મક છે આ પ્રમાણે ધર્મ બે પ્રકારનો છે એમ સિદ્ધ થાય છે એક તો પ્રવૃત્તિરૂપ અને બીજો નિવૃત્તિરૂપ પ્રવૃત્તિરૂપ ધર્મ બાહ્યક્રિયાત્મક છે, અને નિવૃત્તિરૂપ ધર્મ આન્તક્રિયાત્મક છે

આ પ્રમાણે ધર્મનુ સ્વરૂપ સમજીને આપણે અર્થનો વિચાર કરીએ અર્થ તે ધન જગતમા અર્થ અનન્ત પ્રકારના છે દ્રવ્ય, વનિતા, ભૂમિ, આભરણ, ગૃહ ઇત્યાદિ અસખ્ય પદાર્થોનો અર્થમા સમાવેશ થઇ જાય છે જેને વિષે મમત્વબુદ્ધિ થાય તે સર્વનો સમાવેશ અર્થમા થાય છે

જેમ અર્થ અનન્તવિધ છે તેમ કામ પણ અનન્તવિધ છે અનેક ઇન્દ્રિયના વિષયનો ઉપભોગ કામ સજ્ઞાથી ઓળખાય છે. સર્વ માયાની નિવૃત્તિરૂપ અથવા સ્વરૂપલાભ એમ મોક્ષ એકવિધ છે, છતા અવાન્તર તત્રભેદ વડે કરીને બહુવિધ થાય છે આમ હોવા છતા મોક્ષ શબ્દ તો સર્વત્ર સાધારણ રીતે યોજાય છે મોક્ષનુ સ્વરૂપ ભિન્ન હોવા છતા તે જ નામથી ચતુર્થ પુરુષાર્થનુ પ્રતિપાદન સર્વ કોઇ કરે છે, અને તે જ સિદ્ધ કરવામા પર્યવસાન પામે છે

આ પ્રમાણે આપણે ચાર અર્થનુ નિદર્શન કર્યુ હવે આપણે આચાર્યશ્રી એના અવાન્તર ભેદનુ પ્રતિપાદન કેમ કરે છે તે જોઇએ

ધર્મ અર્થ કામ અને મોક્ષ એ પ્રમાણે ચાર પુરુષાર્થ છે આ ચતુર્વર્ગ પુરુષાર્થનુ પ્રતિપાદન એ રીતે થયેલુ છે ઈશ્વરે જ પુરુષાર્થનુ નિરૂપણ કર્યુ છે એમ તો વેદકાર અને બીજા ઋષિકાર

વેદમા પ્રતિપાદન કરેલા આ ચાર પુરુષાર્થ અલૌકિક કારણ કે ભગવત્કૃતિ સદાસર્વદા અલૌકિક જ હોય છે, અને ઈશ્વરની આજ્ઞાથી વા શિક્ષાથી ઋષિમુનિયોએ સ્મૃતિમા પ્રતિપાદન કરેલા એ જ ચાર પુરુષાર્થ લૌકિક કહેવાય છે, કારણ કે એ જીવકૃત છે. ઈશ્વરની કૃતિ હમેશા પૂર્ણ હોય એ સ્વાભાવિક છે, તે પ્રમાણે વેદમા પ્રતિપાદન થયેલા આ ચાર પુરુષાર્થના સાધ્ય તથા સાધન સહિત હોય છે, અને વેદથી જ તેમનો નિર્ણય થાય છે તેથી આચાર્યશ્રી અત્ર તેનો નિર્ણય નહિ આપતા માત્ર લૌકિક પુરુષાર્થાદિનો જ નિર્ણય આપે છે વેદમા યાગાદ્યાત્મક ધર્મનું પ્રતિપાદન પણ કરેલુ છે, અને તેને સિદ્ધ કરવાના સાધન પણ વર્ણવેલા છે, અને તે તે સાધન કરીને જીવ ધર્મ, અર્થ, કામ અને મોક્ષ એમ ચાર અલૌકિક પુરુષાર્થ સિદ્ધ કરે છે એટલે તેના વિશેષ નિર્ણયની અત્ર આવશ્યકતા નહિ હોવાથી, એનો વિચાર આચાર્યશ્રી અત્ર નહિ કરતા માત્ર લૌકિક પુરુષાર્થનો નિર્ણય કરે છે[1]

लौकिकांस्तु प्रवक्ष्यामि वेदाद्या यतः स्थिताः ।
धर्मशास्त्राणि नीतिश्च कामशास्त्राणि च क्रमात् ॥
त्रिवर्गसाधकानीति न तन्निर्णय उच्यते ।

આદ્ય (અલૌકિક) અર્થ વેદથી જ વ્યવસ્થિત છે તેથી (તેનો નિર્ણય નહિ આપતા) લૌકિક (અર્થ) તો હુ વદીશ (લૌકિકમા) ધર્મશાસ્ત્રો નીતિ અને કામશાસ્ત્રો એ ક્રમે ત્રિવર્ગસાધક હોવાથી તેનો નિર્ણય (પણ) અત્ર નહિ કહેવાય)

અલૌકિક પુરુષાર્થમા મુખ્ય તો ધર્મ અને મોક્ષ આ બેમા ધર્મનો નિર્ણય જૈમિનિઋષિએ પૂર્વકાંડના સમન્વયદ્વારા આપ્યો છે, અને મોક્ષનો શ્રીબાદરાયણવ્યાસે ઉત્તરકાંડના સમન્વયદ્વારા આપ્યો છે અને અર્થ અને કામ એ બેની અન્તર્ગત હોવાથી અનુક્તસિદ્ધ છે, તેથી જેનો નિર્ણય થયેલો છે તેનો નિર્ણય કરવાનો અતિપ્રયાસ અત્ર આચાર્યશ્રી લેતા નથી

અલૌકિક પુરુષાર્થ વેદમા વ્યવસ્થિત હોવાથી તેનો નિર્ણય અત્ર આચાર્યશ્રી નહિ કરતા માત્ર ઋષિપ્રોક્ત સ્મૃતિયોમા પ્રતિપાદન થયેલા લૌકિક પુરુષાર્થનો નિર્ણય પોતે આપે છે. અત્ર નિર્ણય આપવાનું પ્રયોજન અતિગૂઢ છે ઈશ્વરની શિક્ષાથી કેટલાક ઋષિઓએ વેદના અર્થ મારી મચડીને તેનો અન્યાર્થપણ કલ્પ્યો છે કવચિત્કો એ ઋષિઓ વેદને અનુસર્યા પણ છે અને કવચિદકો નથી અનુસર્યા તેથી બાલકો એ ઋષિયોની વાણીથી મોહ ના પામો એવી સકરુણ ઇચ્છાથી શ્રીમદાચાર્ય-ચરણ તેનો માત્ર લૌકિકનો જ નિર્ણય કરે છે શ્રીમદાચાર્યશ્રીનું પ્રાકટ્ય દૈવી જીવના ઉદ્ધાર (મોક્ષ) માટે છે, અને તેથી એમનુ તાત્પર્ય જીવના પ્રથમના ત્રણ અર્થ સિદ્ધ કરવાનુ નથી, પણ એ અર્થોમા શિરોમણીભૂત મોક્ષ જીવનો ક્રમ ત્વરાથી સિદ્ધ થાય તેને માટે છે. વલી ધર્મ[2] અર્થ[2] અને કામ[3] એ સૃષ્ટિમા સાધારણ ફલ સિદ્ધ કરનારા છે, અને આચાર્યશ્રી પોતાના અમૂલ્ય કાલનો આવા ક્ષુલ્લક અર્થોમાં વ્યય નહિ કરતા, જેનાથી જીવનુ આત્યંતિક કલ્યાણ થાય એવા મોક્ષનો જ વિચાર આરંભે એ અત્યન્ત સ્વાભાવિક છે. આ પ્રમાણે આચાર્યશ્રી જેમ અલૌકિક અર્થ વેદથી જ વ્યવસ્થિત હોવાથી તેનો વિચાર નથી કરતા તેમ લૌકિક અર્થમા પણ ધર્મ અર્થ અને કામ જ્ઞાન હોવાથી તેનો પણ નિર્ણય અત્ર નથી કરતા, પણ હવે એ સર્વમા અવશિષ્ટ મોક્ષનો જ વિચાર સહુજ વિસ્તારથી આરંભે છે

मोक्षे चत्वारि शास्त्राणि लौकिके परतः स्वतः । द्विधा द्वे,

(૧ અત્ર ટીકાકારોમા અલૌકિક શબ્દ વિષે મતભેદ છે, શ્રી દેવકીનન્દનજી અલૌકિકનો અર્થ બલવાદાનુસાર કરે છે, અને શ્રીપુરુષોત્તમજી અલૌકિક એટલે લોકથી વિલક્ષણ એમ અર્થ કરે છે શ્રી દ્વારકેશજી ઈશ્વરનો અર્થ વેદ કરે છે વેદોક્ત પુરુષાર્થ પુરુષોત્તમસબધી હોવાથી અલૌકિક છે એમ એએશ્રીનો આશય છે)

૧ મન્વાદિસ્મૃતિપ્રતિપાદિત ૨ નીતિશાસ્ત્રપ્રતિપાદિત ૩ વાત્સાયનસૂત્રપ્રતિપાદિત

લૌકિક—(ઋષિ-સ્મૃતિ-પ્રતિપાદિત) મોક્ષમાં ત્યાગ શાસ્ત્રો છે. એક પરત મોક્ષ અને બીજો સ્વત મોક્ષ એ બન્ને પણ બે પ્રકારના છે' પરતોમોક્ષમા પર વિષ્ણુ શિવાદિ પ્રસન્ન થઇને સ્વ-સેવકને મોક્ષનુ દાન કરે છે, અને સ્વતોમોક્ષમા જીવ સ્વપ્રયત્નથી સાખ્યયોગાદિ શાસ્ત્રમા પ્રતિ-પાદન કરેલા સાધનવડે મોક્ષ સિદ્ધ કરે છે.

શુદ્ધાદ્વૈતવિજ્ઞાન.

પ્રિયવાચક, શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ પ્રકટ કરેલા સિદ્ધાન્તનુ તુ દર્શન કરે ત્યાર પહેલા પ્રાચીન ભારતના ધાર્મિક વિકાસ તરફ અથથી તે ઇતિસુધી દૃષ્ટિ ફેરવ તેનુ સિંહાવલોકન કરતા તને ભાસમ પડશે કે પ્રાચીનતમ ભારતના ઋષિમુનિઓ કેવા હતા તને વિશેષમા દર્શન થશે કે અનન્ત અનન્ત વર્ષોપૂર્વના આર્યાવર્તમા બ્રાહ્મમુહૂર્તમા ઊષાદેવીનુ પ્રાકટ્ય સર્વત્ર થયુ છે, અને સારથિ અરુણ સવિતાનારાયણના આગમનનુ સૂચન માત્ર કરે છે તે સમયે મન્ત્રદ્રષ્ટા મહર્ષિઓ સવિતાનારાયણ ભર્ગ દેવનુ ધ્યાન ધરે છે અને દીનતાપૂર્વક પ્રાર્થે છે કે ' હે પ્રભો અમારી બુદ્ધિઓને આપ આપની પ્રતિ પ્રેરો.' મહર્ષિ આરુણિ વેદાધ્યયનમાત્રથી ઉદ્ધત થયેલા સ્વપુત્ર શ્વેતકેતુને પુછે છે કે ' સૌમ્ય તને એક વિજ્ઞાનથી સર્વ વિજ્ઞાન થયુ ' અર્થાત્ વેદાધ્યયન તુ કરી આવ્યો ખરો પણ વેદાર્થ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન તને થયુ છે ખરુ ? જ્યારે સ્વપુત્ર પોતાને તે જ્ઞાન ન હોવાથી દીન બને છે ત્યારે કૃપાળુતાથી પિતા સ્વપુત્રને **'एकविज्ञानेन सर्वविज्ञानम्'** નો ઉપદેશ કરે છે સર્વાત્મક બ્રહ્મના જ્ઞાનથી બ્રહ્મમાથી આવિર્ભાવ પામેલા સર્વ ભૂતભૌતિક પ્રપચનુ જ્ઞાન થાય એ સ્વાભાવિક છે અન્યત્ર મહર્ષિ યાજ્ઞવલ્ક્ય સ્વપત્ની મૈત્રેયીને પણ અત્યન્ત ઉદાર ને માર્મિક ઉપદેશ કરે છે, અને સ્વપત્નીને કહ્યે છે, કે જ્યારે પરમાત્માનુ સ્વરૂપ હૃદયમા સ્ફુરે છે ત્યારે સકુચિત પ્રિયત્વનો નાશ થઇ જાય છે, અને બ્રહ્મસબધથી પ્રિયત્વ બ્રહ્મવત્ સર્વત્ર વિશ્વમા છવાઈ જાય છે **आत्मनस्तु कामाय सर्वं प्रिय भवति ।** નો યથાર્થ સાક્ષાત્કાર મૈત્રેયીને થાય છે, અને સાસારિક મનુષ્યથી ઉલટીરીતે તેનું મમત્વ અને તેનુ સહચારી પ્રિયત્વ પણ અખિલવિશ્વમા વ્યાપી રહે છે આ પ્રમાણે પ્રાચીન આર્ય તત્ત્વવેત્તાઓ તને આનન્દઘન બ્રહ્મવાદમા વિચરતા તારી દૃષ્ટિએ પડશે સશયાત્મક માર્ગિક સાધક મનનુ બીજ અત્યન્ત પ્રયાસ કરીશ તો પણ, તને વૈદિક કાલમા નહિ જડે પણ શોચની વાત તો એ છે કે યુગના પરિવર્તન સાથે અધોગામી સવિષ પ્રવાહે આ બ્રહ્મવાદભવનના અતિશય દૃઢ પાયાને પણ જર્જરિત કરી નાખ્યો, અને તેના પરિણામમા અનેક નાસ્તિક આસ્તિક સાકર મતોનો જન્મ થયો આ મતોમા બ્રહ્મવાદનો આનન્દ કે સાદ્ય આશા વગેરે ક્યાય પણ દૃષ્ટિગોચર થતા નથી પણ તેને બદલે દુઃખનિરાશા વગેરેનો સાક્ષાત્કાર સર્વત્ર થાય છે બ્રહ્મવાદ ભવનના જર્જરિત થયેલા પાયાપર જે મતો ખડા થયા તેમાના કેટલાકના નામ નીચે પ્રમાણે છે સાખ્ય યોગ ન્યાય વૈશેષિક અને પૂર્વમીમાસા એટલા વેદના પ્રામાણ્યનો અગીકાર કરતા હોવાથી આસ્તિક દર્શનો તરીકે લેખાય છે, અને જૈનમત, બૌદ્ધમત અને ચાર્વાકનો જડવાદ એ વેદનુ પ્રામાણ્ય નહિ સ્વીકારવાથી નાસ્તિક સજ્ઞાથી ઓળખાય છે આ સર્વમતમતાન્તરનુ અતિસૂક્ષ્મ અવલોકન આપણે અત્ર કરીશુ, પણ આપણે કઈ તેમનુ ખડન કરવાનો પ્રયાસ નહિ આદરીએ કારણકે ભગવાન્ વ્યાસે તે સર્વનુ ચૂર્ણીકરણ ખડન સર્વશ બ્રહ્મવાદાનુકૂલ બ્રહ્મમીમાસામા અતીવ નિપુણતાથી કર્યું છે

સુગમતાને ખાતર આપણે પ્રથમ નાસ્તિક મતોનુ અવલોકન કરીશુ

સ્વભાવત આપ લોકોનુ હૃદય શ્રદ્ધાળુ હોય છે અને તેથી ચાર્વાક લોકોનો શૂન્યાત્મક જડવાદ તેમને એક ક્ષણભર પણ મોહ પમાડે એ અશક્ય છે ભગવાન્ વ્યાસ પણ આ મતનો ઉપન્યાસ-માત્ર પણ કરતા નથી અને અત્ર તત્ર એ મતના ગુપ્ત અનુયાયીઓ કદાચિત્ દૃષ્ટિગોચર થતા હશે તોપણ એ મતનો વિચાર આપણે અત્ર નહિ કરીએ તો તેટલામાત્રથી જ આ ગ્રથને ન્યૂનતારૂપ દોષનો સ્પર્શ થાય એમ કોઇપણ પ્રકારે સભવિત નથી.

ભગવાન્ આ નાસ્તિક મતોમા અગાઉ બૌદ્ધમત અને જૈનમતનુ ખંડન વિશેષ આવ્યા નાથી કરેછે. જૈનમતના પ્રવર્તક 'અર્હત્' છે અને બુદ્ધમતના 'ગૌતમબુદ્ધ' છે આ ઉભય મતમા વેદનુ પ્રામાણ્ય નથી સ્વીકારતું, અને તેથી તે નાસ્તિકકોટિમા ગણાય છે. આ બને મતે પ્રાચીન વેદધર્મ સામે રીગરા આપ્યા વેદના ક્રિયામક પ્રર્વકાડનો સર્વમતે નિષ્ફાર કર્યો આ અનિષ્ટ તિરસ્કારનું ફલ તેમને એ મળ્યુ કે બૌદ્ધમતનું ભારતવર્ષમાથી સમૂલોન્મૂલન થયુ, અને બીજાની સ્થિતિ સર્વપ્રકારે નિર્માલ્ય થઈ ગઈ. સત્તાવાદ સર્વપદાર્થોનુ ક્ષણિકત્વ, સર્વનુ શૂન્યત્વ, અમનમાથી મુક્તા ઇત્યાદિ બૌદ્ધમતના મુખ્ય સિદ્ધાન્તો છે વેદધર્મમા નિત્ય આત્મા મનાય છે તેમ બૌદ્ધમતમા તેનુ કઈ નથી, પણ આલયવિજ્ઞાન આત્માનુ કાર્ય સારે છે ઈશ્વર જેવા કોઈ મહત્તમ સર્વપ્રશાસકનો સ્વીકાર એ મતમા નથી, પણ કર્મ જ સર્વનુ મુખ્યત નિયમન કરે છે

જૈન લોકો અનેકાન્તવાદિન્ છે એમનો મુખ્ય સિદ્ધાન્ત સમભગીનય છે, આ સમભગીનય તે લોકો સર્વવસ્તુને લાગુ પાડે છે. ઉપરોક્ત બૌદ્ધલોકોએ એમ દર્શાવ્યુ કે સર્વ ગન્ય છે, પણ જૈનલોકો તેમનાથી સહજ બુદ્ધિશાળી હોવાથી તેમણે લાગ્યુ કે સર્વને શૂન્ય કહેવુ એ તો ઠીક નહિ પણ સર્વ છે જ એમ પણ નિશ્ચિત કેમ કહી શકાય, આવા દાર્શનિક આશયથી જૈન સમભગીનયનો જન્મ થયો હોય એમ લાગે છે, અને તેને લીધે સમગ્ર મત તટસ્થને તો સશયાત્મક લાગે છે, સર્વ ભાવ પદાર્થોમા અસ્તિ નાસ્તિ ઇત્યાદિ અનેક વિકલ્પો કલ્પવા એ એક જાતનુ બુદ્ધિની તુચ્છ પારદાને હાથે દારુણનાશ આવન થઈ જાય છે. આ મતમા બૌદ્ધલોકોની માફક જગતનો ઈશ્વરનુ અસ્તિત્વ સ્વીકારતુ નથી એમનો આત્મા (જીવાત્મા) પરમાણુનો સમૂહ છે આ આત્મા પણ નરીપરિમાણી વા મધ્યમપરિમાણી છે જો કે કેટલાક આધુનિક જૈનો ના કહે છે છતાં વસ્તુત આ મતદય નિરાશાત્મક જ છે. મનુષ્યના જીવનને સર્વત નિયત ક્રમ બનાવનુ એ જ નિયમો નૂ કીર્તિ ધરી રાખવાનુ માન આ બે મતને છે, અને તેટલે જ અંશે ધર્મ તરીકે તેમની ગણના થઈ રહે છે બ્રહ્મમીમાસાના દ્વિતીય અધ્યાયના દ્વિતીય પાદમા ભગવાન્ બાદરાયણ વ્યાસે આ બહુ નિપુણતાથી કર્યુ છે વિશેષ જિજ્ઞાસા થતી હોય તો તે પાદનુ અનુસધાન કરવુ

યોગદર્શનને માત્ર એક જ સૂત્રથી પતાવી દે છે આમ કરવાનુ મુખ્ય પ્રયોજન એટલુ જ છે કે બે દર્શનોમા બહુ વિશેષ નથી

આ પ્રમાણે સાખ્યદર્શન વેદબાહ્ય છે એમ કહીને ભગવાન વ્યાસ તાર્કિકમત (ન્યાય અને વૈશેષિક) પણ વિરોધ વેદબાહ્ય છે એમ નિરૂપણ કરે છે વૈદિક તરીકે પોતાને ગણાવવાના તેમના હેતુઓ પણ અતિ નિર્બળ છે ગૌતમ ન્યાયદર્શનના અને કણાદ વૈશેષિકદર્શનના પ્રવક્તા છે આ ઉભય મત જગતને પરમાણુજન્ય માને છે સાખ્યથી વિરુદ્ધ થઈને તેઓ ઈશ્વરનો સ્વીકાર કરે છે તેમનો ઈશ્વર (પ્રજાપ્રતિ જેમ ઘટનુ નિમિત્ત કારણ છે તેમ) જગતનુ કેવલ નિમિત્ત કારણ છે જીવાત્માઓ અનન્ત અને સર્વવ્યાપક ઇત્યાદિ ગુણવિશિષ્ટ છે દુ ખનો આત્યન્તિક અભાવ એ મોક્ષની તેમના મતમા પરમ અવસ્થા છે આ દર્શનનુ પારિભાષિક નામ આરમ્ભવાદ અથવા અસ કાર્યવાદ છે મૃત્તિકામા અસ્તિત્વ નથી એવા ઘટનુ મૃત્તિકામાથી ઉત્પન્ન થવુ એ પરમાણુમા સત્તા નથી એવા જગતની પરમાણુમાથી ઉત્પત્તિ ઉદાહરે છે.

સ્વશિષ્ય અને પૂર્વમીમાસાના કર્તા જૈમિનિ સાથે ભગવાન્ વ્યાસને અતિશય કલહનુ પ્રયોજન નથી. જૈમિનિએ પૂર્વમીમાસામા સિદ્ધ કરેલી પ્રમાણપદ્ધતિનો સ્વીકાર વ્યાસ બહુધા કરે છે આમ પ્રમાણપદ્ધતિ સ્વીકાર કરે છે છતા જૈમિનિને ઇષ્ટ એવા કેવલ કર્મનુ જ વિશ્વમા સપૂર્ણ નિયામકત્વ વ્યાસજીને સર્વથા અનિષ્ટ છે કર્મની સપૂર્ણ નિયામકતાનો જો સ્વીકાર કરવામા આવે તો ઈશ્વરના ઈશ્વરત્વનુ ખડન થઈ જાય તેથી વ્યાસને કર્મનુ નિરકુશ નિયામકત્વ રતિમાત્ર રુચતુ નથી વ્યાસ કર્મને ઈશ્વરની સ્વગત અનન્ત શક્તિઓમાની એક માને છે તાત્પર્ય એ છે કે ઈશ્વર સ્વશક્તિ કર્મપ્રમાણે ફલદાન કરે તો તે બહુ બાધકારક નથી શક્તિ અને શક્તિમાન્ સર્વથા અનન્ય હોવાથી વ્યાસજીનુ શુદ્ધ અદ્વૈત સપૂર્ણરીતે અખ્ખલિત રહે છે

હવે માત્ર સર્વ દર્શનોમા શિરોમણીભૂત વેદાર્થને સપૂર્ણરીતે અનુસરતી બ્રહ્મમીમાસા અવશિષ્ટ રહે છે આ મીમાસાના પ્રવક્તા ભગવાન્ વ્યાસ છે ભગવાન્ વ્યાસ વેદના પરમ શાસ્તા છે. વેદના શાખાવિભાગ, અષ્ટાદશ પુરાણ, મહાભારત, વેદાન્તસૂત્ર અને પાતજલયોગસૂત્ર ઉપર ભાષ્ય ઇત્યાદિ સર્વ ગ્રન્થરત્નોનુ કર્તૃત્વ વ્યાસનુ જ એમ સર્વ આર્યવિદો માને છે ભારતવર્ષીય સર્વ આચાર્યો બાદરાયણ વ્યાસજીને ભગવાનના જ્ઞાનાવતાર માને છે અને જગતપર પરમ અનુગ્રહ કરવાને ભગવાન્ વ્યાસે સમસ્ત વેદાર્થનો યથાર્થ સમન્વય બ્રહ્મમીમાસામા કરી આપ્યો છે, અને આ સમન્વયદ્વારા કેટલાક વિચારકોની બુદ્ધિદોષથી વેદોમિા પરસ્પર વિરુદ્ધતાના આપાતત દૃષ્ટિગોચર થતા સર્વ દોષોનુ નિરાકરણ કર્યુ છે, સાખ્યવગેરે કહેવાતા આસ્તિક દર્શનોના વૈદકત્વનો નિરાસ કર્યો છે, કેવલ શુષ્ક તર્કના દૃષ્ટિબિન્દુથી બૌદ્ધ તથા જૈન મતોની નિર્મૂલતા પ્રકટ કરી છે, અને ભવિષ્ય માયાવાદી ટીકાકારને હેત્વાભાસની સાહાય્ય વિના અને સમસ્ત શ્રૌતશાસ્ત્રના તાત્પર્યનો નેત્ર મીચીને અનગીકાર કર્યા વિના જેનુ વ્યાખ્યાન અત્યન્ત અશક્ય થઈ પડે એવા કેટલાક સચોટ અધિકરણો રચ્યા છે

કહેવાય છે કે બૌદ્ધમતનો સ્વજન્મભૂમિમાથી ઉચ્છેદ થયો છે, પણ આ અક્ષરશ સત્ય નથી કારણ કે અદ્યાપિપર્યન્ત એ મત પ્રચ્છન્નરૂપે અસ્તિત્વ ભોગવે છે યથાર્થરીતે વિચારાય તો ભાસ પડશે કે માયાવાદ બૌદ્ધમતનુ રૂપાન્તર જ છે એ મતનુ પર્યવસાન બૌદ્ધના જેવુ જ છે. આ માયાવાદને બૌદ્ધના શૂન્યવાદ સાથે બહુ નિકટનો સબધ છે આ સમગ્ર માયાવાદનો ઉદ્ભવ પોતાના પ્રવર્તકના [1] દુષ્પસસ્કારના પ્રાબલ્યને આભારી છે આ વાદ પરમ વૈદિક હોવાનો મિથ્યા આડબર કરે છે તથાપિ સત્યરીતે વેદના નિત્ય ત્રિકાલાબાધ્ય સિદ્ધાન્તો પોતાના અત્યન્ત અભાવથી જ પ્રત્યક્ષ થાય છે કલ્પનાનુ ક્લેશ અને કલ્પનાગૌરવ તો આ મતને પ્રતિક્ષણ બાધ કરે છે અત

---

૧ શાકરભાષ્યનુ આનન્દમયાધિકરણ જુઓ.

૨ જુઓ, આનન્દમયાધિકરણ, દહરાધિકરણ, દ્વિતીય અધ્યાય પ્રથમપાદ બ્રહ્મમીમાંસા, ચતુર્થ અધ્યાય તૃતીયપાદ સૂત્ર ૮ થી ૧૬

એવ સર્વ વેદાન્તાચાર્યોએ આ મતના વૈદિકત્વનુ અસ્વીકૃતિ ખંડન કર્યું છે. બ્રહ્મસૂત્રોમા તો નાસ્તિકમત કેમે બોધ્યો જાતો નથી એમ પાશ્ચાત્ય વિદ્વાનો પણ સ્વીકારે છે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી આવા મતની અત્યન્ત વિરુદ્ધ એ સ્વાભાવિક અભિમાન નહિ તો બીજુ શું હોઇ શકે?

જ્યારે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીનુ પ્રાકટ્ય થયુ ત્યારે આ નાસ્તિકવાદ બહુ પ્રચલિત હતો, લોકોની સાધારણ અજ્ઞાનતાને લીધે અદ્યતના પણ એ મતનો પ્રચાર મટ પડ્યો નથી રામાનુજ મધ્વ વગેરે આચાર્યોએ આ મતનુ ખંડન કર્યું તથાપિ પોતાના અપૂર્વ પાંડિત્યને લીધે શાંકરનુ પ્રાબલ્ય કોઈ પણ પ્રકારે મટ પડ્યુ નહિ સમગ્ર વેદાન્તસૂત્રોને આ અદ્વૈતિક માયાવાદે અવિરુદ્ધ કરી નાખ્યા બૌદ્ધ મતમાથી ઉદ્ભવના આ મતે પ્રાચીન વૈદિક મહર્ષિઓના બ્રહ્મવાદનુ આચ્છાદન કરી નાખ્યુ. તથાપિ વેદાન્તસૂત્રોમાથી માયાવાદનો નિરસ કરીને પ્રાચીન વૈદિક મહર્ષિઓના શુદ્ધસનાતન બ્રહ્મવાદનુ સ્થાપન કરવાનુ કાર્ય શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીને જ માટે નિર્માણ થયુ હતુ શ્રીવલ્લભાચાર્યજીનો વૈદિક સિદ્ધાન્ત 'શુદ્ધાદ્વૈત બ્રહ્મવાદ' અભિધાનથી પ્રસિદ્ધ છે પ્રસ્થાનચતુષ્ટયનો નિષ્કૃષ્ટ અર્થ તે જ આ બ્રહ્મવાદ છે પ્રસ્થાનચતુષ્ટયપર ભાષ્ય રચીને શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ સર્વની અતિ સરસ એકવાક્યતા સિદ્ધ કરી છે. શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીની પૂર્વે અને પછી પ્રસ્થાનત્રયની એકવાક્યતા કરવાના આવા પ્રયાસો શંકર, રામાનુજ, ભાસ્કર, મધ્વ, નિમાર્ક શ્રીકંઠ અને ભિક્ષુએ કર્યા છે કોઇપણ મતનો સ્વીકાર નથી કર્યો એવા કોઇ પણ નિષ્પક્ષપાતી વાચકને માલમ પડશે કે આ સર્વ મતો પ્રસ્થાનત્રયના સરલ વ્યાખ્યાનમાથી ઉદ્ભવતા નથી

આ વાક્યે વિશેષ વક્તવ્ય હવે રહેતુ નથી, તથાપિ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના સિદ્ધાન્તોનુ અવતરણ કરતી વખતે તન્મતનો પણ ઉપન્યાસ થશે, એટલે બન્ને મતોની તુલના કરવાનુ તટસ્થ વાચકને અપેક્ષિત સાધન મલશે શ્રીરામાનુજ અને શ્રીકંઠ બન્ને વિશિષ્ટાદ્વૈતવાદી છે, પણ એક વૈષ્ણવ છે અને દ્વિતીય શૈવ છે આ બંનેમત શાંકરમતથી અત્યન્ત ભિન્ન છે તદ્ધપરિ વાચકવર્ગનુ આમ ધ્યાન ખેંચવામા આવે છે શંકરને તો બ્રહ્મા વિષ્ણુ શિવાદિ સર્વ આવિદ્ય અને સ્વપ્નદૃષ્ટ પદાર્થરૂપ મિથ્યા છે, પણ જેમ રામાનુજ, મધ્વ અને નિમાર્કને વિષ્ણુ જ પરમ વસ્તુ છે, જેમ પુરુષોત્તમ જ શ્રીવલ્લભાચાર્યજીને પરમવસ્તુ છે તેમ શ્રીકંઠને પરમવસ્તુ શિવ જ છે. શ્રીકંઠના શિવ શાંકરમતવત્ આવિદ્ય નથી ભાસ્કર અને નિમાર્ક દ્વૈતાદ્વૈતવાદી છે. ભાસ્કરમતમા દ્વૈત ઔપાધિક છે, અને અદ્વૈત વાસ્તવિક છે, પણ નિમાર્કમતમા અદ્વૈત ઔપાધિક છે અને દ્વૈત વાસ્તવિક છે. મધ્વાચાર્ય દ્વૈતવાદી છે, તથાપિ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્ય એના સિદ્ધાન્તને દ્વૈતાદ્વૈત નજરે માને છે, કારણ અમુક અંશે એ લોકો પણ અદ્વૈતનો સ્વીકાર કરે છે ભિક્ષુનો મત અવિભાગાદ્વૈત નામથી પ્રસિદ્ધ છે આ મત સાંખ્ય, યોગ અને વેદાન્તના બીચગામાથી નીકળ્યો છે આ સર્વ મત પ્રસ્થાનત્રયને સંપૂર્ણ ન્યાય નથી આપી શક્યા એમ શ્રીપુરુષોત્તમજીએ સ્વકૃત શ્રીમદણુભાષ્યપ્રકાશમા આ સર્વ મતનો ઉપન્યાસ કરી સિદ્ધ કર્યું છે સર્વ ભાષ્યોની તુલના કરવાથી સિદ્ધ થાય છે કે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્ય પ્રકટિત બ્રહ્મસૂત્રભાષ્ય પ્રાચીનતમ યથાશ્રુત અને શ્રેષ્ઠ છે, અને તદ્વિરુદ્ધ સર્વ મતમતાન્તરોએ સત્યના નિત્ય પ્રકાશની માત્ર અપૂર્ણ ઝાંખી કરી છે હવે પત્રીના પૃષ્ઠોમા વર્ણિત શુદ્ધાદ્વૈત બ્રહ્મવાદના વાચનથી અમારા અભિપ્રાયના સત્યત્વનો આવિર્ભાવ નિષ્પક્ષપાત વાચકવર્ગને થયા વિના રહેશે જ નહિ એમ વસ્તુ અનિર્વચનીય તો નહિ જ ગણાય

---

૧ see Dr Thibant s introduction to Shanker Bhashya,

૨ શાંકરભાષ્યનુ તદનન્યત્વાધિકરણ જુઓ ઈશ્વરસ્ય ઈશ્વરત્વ × × ×ન પરમાર્થત

૩. ગાયત્રીભાષ્ય વેદાર્થ સમજવાની કુંચી છે, ગીતાશાસ્ત્રાર્થપ્રકરણ ગીતાનુ તાત્પર્ય સમજાવે છે. શ્રીમદ્ભાષ્ય અને શ્રી સુબોધિનીજી તો પ્રત્યક્ષ છે

भगनलालशास्त्रीनां भाषणो.

संप्रदायनिरीक्षा.

(अनुसंधान पृष्ठ ७४ थी)

સર્વ વિરુદ્ધ ધર્મ પણ બ્રહ્મનો આશ્રય કરીને રહી શકે છે, એવા વિરુદ્ધધર્માશ્રય સિદ્ધાન્તનુ મર્મ જ્યાં સુધી યથાયોગ્ય સમજી શકાતુ નથી ત્યા સુધી બ્રહ્મનુ માહાત્મ્યજ્ઞાન પ્રાપ્ત થઈ શકતુ નથી માહાત્મ્યજ્ઞાન વિના ભક્તિ સિદ્ધ થઈ શકતી નથી, અને માહાત્મ્યજ્ઞાનપૂર્વક ભક્તિ વિના સંસારમાંથી નિવૃત્તિ પણ થતી નથી સમસ્ત વેદમા બ્રહ્મના અનેક વિવિધ વિચિત્ર વિરુદ્ધ ગુણ ધર્મ શક્તિઓનું જ વર્ણન છે, અને તે માહાત્મ્યજ્ઞાનાર્થે જ છે

જો સર્વ શક્તિમા પણ જ્ઞાનશક્તિ અને ક્રિયાશક્તિ એ જે શક્તિ મુખ્ય છે વેદના પૂર્વકાંડમા બ્રહ્મની ક્રિયાશક્તિનુ પ્રતિપાદન કરેલુ છે, અને ઉત્તરકાંડમા બ્રહ્મની જ્ઞાનશક્તિનુ વર્ણન કરેલુ છે, અર્થાત્ ક્રિયાશક્તિ અને જ્ઞાનશક્તિ એમ ઉભયશક્તિયુક્ત બ્રહ્મ છે બ્રહ્મ માત્ર જ્ઞાનરૂપ જ છે અને ક્રિયાશક્તિનો આભાસ તો માત્ર માયા વડે જ બ્રહ્મમા થાય છે એ કલ્પના દુષ્ટ છે. જ્ઞાનશક્તિ અને ક્રિયાશક્તિ ઉભયે શક્તિ બ્રહ્મમા આવશ્યક છે, એક વિના બીજી શક્તિ નિરર્થક પડી જાય, તેથી બ્રહ્મમા જ્ઞાન અને ક્રિયા એમ ઉભયે શક્તિની સમાનતા જ વૈદિકોએ માનેલી છે

જ્ઞાનક્રિયાશક્તિયુક્ત બ્રહ્મ

આ પ્રકારે જ્ઞાનક્રિયાશક્તિયુક્ત બ્રહ્મ બીજા કરવાની ઇચ્છા કરે છે, ત્યારે એ જ બ્રહ્મ પોતાની સ્વશક્તિથી આનન્દરૂપ ધર્મનુ તિરોધાન કરીને અક્ષરબ્રહ્મરૂપ થઈ જાય

અક્ષર

જે શુદ્ધાદ્વૈત જ્ઞાનીઓને જ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે તે આ અક્ષર બ્રહ્મ છે

એ અક્ષરને જ ગીતામા 'અવ્યક્ત' પણ કહેલુ છે, અને એ જ 'અવ્યક્ત' અથવા 'અક્ષર' પરબ્રહ્મનુ પરમ ધામ છે [1]ભગવાને શ્રીમુખે આજ્ઞા કરી છે કે 'જે ધામ પ્રાપ્ત કર્યાથી જગતમા પુનરાવૃત્તિ થતી નથી તે જ પરમ ધામ છે 'અવ્યક્ત' અક્ષર' ઇત્યાદિ શબ્દનો અર્થ કેટલાક 'માયા' કરે છે એ અર્થ કરવામા કેટલુ અસત્ય છે તે પણ હવે આપ ગીતાના વાક્યથી સ્વત જ જોઈ શકશો

[2]

કાલ કર્મ અને સ્વભાવ

એ પરબ્રહ્મના સ્વરૂપમા જ અક્ષર કાલ કર્મ અને સ્વભાવ એ ચારેનો સમાવેશ થઇ જાય છે આપણા શુદ્ધાદ્વૈત વેદાન્તમા અક્ષર કાલ કર્મ અને સ્વભાવ એ ચારે બ્રહ્મની સ્વરૂપકોટિમા ગણાય છે.

બ્રહ્મના સ્વરૂપના વિચારનો ઉપસંહાર કરતા આપ સર્વને સ્મરણ કરાવુ છુ કે સચ્ચિદાનન્દ બ્રહ્મમા સર્વ અપ્રાકૃત ધર્મ છે બ્રહ્મમા સર્વ વિરુદ્ધ ધર્મ પણ છે બ્રહ્મ કર્તૃ છે, તેમ જ નિર્લેપ છે બ્રહ્મ સર્વ સૃષ્ટિમા આત્મરૂપ થઈને રહે છે તેથી

આત્મસૃષ્ટિ

આત્મસૃષ્ટિમા વૈષમ્ય અને નૈર્ઘૃણ્ય દોષનો પણ બ્રહ્મને સંબંધ નથી

બ્રહ્મનો સ્વરૂપવિચાર

સમાપ્ત કરીને હવે આપણે બ્રહ્મના તત્ત્વનો વિચાર કરીએ કેટલાક વાદી એક તત્ત્વ માને છે, કેટલાક બે માને છે, કેટલાક છ માને છે,

તત્ત્વ વિચાર

કેટલાક સાત માને છે, અને કેટલાક આગળ વધીને ચોવીસ અને પચ્ચીસ પણ માને છે આ પ્રકારે તત્ત્વસંખ્યા જેટલા સિદ્ધાન્તીઓ જુદી જુદી માની છે આપણા શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ એક જ અદ્વિતીય બ્રહ્મ માન્યા પછી તે અદ્વિતીય બ્રહ્મને અધીન બધાએમાં બધાયે ૨૮ તત્ત્વ[3] માન્યા છે

---

१ अव्यक्तोऽक्षरमित्याहुः । २ यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परम मम ।

३, સત્ત્વ, રજ , તમ , પુરૂષ, પ્રકૃતિ, મહત્તત્ત્વ, અહંકાર, પંચતન્માત્ર, પંચમહાભૂત, પંચકર્મેંદ્રિય, પંચજ્ઞાનેન્દ્રિય, અને મન એ પ્રકારે ૨૮ તત્ત્વના નામ નિબંધમા શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ આપેલા છે.

અદ્વૈતવિશ તત્ત્વમા પુરુષ અથવા જીવતત્ત્વનો વિચાર હાલ આપણે કરવાનો છે કેટલાક જડ-
વાદીઓ તો જીવનુ પણ અસ્તિત્વ જ માનતા નથી, અને પાશ્ચાત્ય વિજ્ઞાન
જીવન અસ્તિત્વ (Modern Science) તેમને નિશ્ચય નહિ કરી આપે ત્યા સુધી તેઓ જીવનુ
અને બ્રહ્મનુ અસ્તિત્વ માને એમ લાગતુ પણ નથી પરતુ જેમને અલૌકિક
ભગવાનિ શ્વાસરૂપ વેદાદિ શાસ્ત્ર ઉપર શ્રદ્ધા છે તે પુરુષોને જીવનુ અસ્તિત્વ માન્યા વિના છુટકો નથી.
બ્રહ્મ સદ્રૂપ છે, ચિદ્રૂપ છે. અને આનદરૂપ છે, એ બ્રહ્મની ઇચ્છાથી જ્યારે આનદધર્મ ગુપ્ત થઈ
જાય છે ત્યારે માત્ર સદંશ અને ચિદંશ પ્રકટ રહે છે, અર્થાત્ બ્રહ્મના જે
જીવસ્વરૂપ સ્વરૂપમા સત્ત્વ અને ચૈતન્ય પ્રકટ છે પણ આનદ ગુપ્ત છે તે જ બ્રહ્મ-
સ્વરૂપ જીવ છે
જીવના પરિમાણ વિષે મતભેદ છે કેટલાક જીવને વ્યાપક માને છે, તે આપણને સમત નથી,
કારણ કે જીવ પણ વ્યાપક થઈ જાય તો વ્યાપક જીવને બ્રહ્મ નિયમમા ન
પરિમાણ રાખી શકે, અને તેથી બ્રહ્મના નિયામકત્વમા દોષ પ્રાપ્ત થાય જીવને પણ
વ્યાપક માનવામા આવે તો ઐચ્છિક નિયમ્યનિયામકત્વ રહી શકે નહિ જંતની પેઠે શરીરના જેટલો
જ લાંબો પહોળો જીવ માનીએ તો જીવ એક દેહમાથી બીજા દેહમા જાય ત્યારે તે બીજા દેહના
જેટલો લાંબો પહોળો થવો જોઇએ, અને તેમ માનતા જીવમા વિકારદોષ પ્રાપ્ત થઈ જાય, તેથી
આપણા બ્રહ્મવાદી આચાર્યોએ જીવને અણુ અર્થાત્ સૂક્ષ્મમા સૂક્ષ્મ માન્યો છે જીવમા જે આનદ
ગુપ્ત થઈ ગયો છે તે આનદ પ્રકટ થશે ત્યારે જીવની વ્યાપકતા પણ તે આનદની સાથે જ પ્રકટ
થશે, પરતુ ત્યા સુધી તે આનદ પ્રકટ થયો નથી ત્યા સુધી વ્યાપકતા પણ પ્રકટ નથી, તેથી પૂર્ણ
જ્ઞાન થતા સુધી જીવનુ પરિમાણ અણુ જ માનવુ યોગ્ય છે વિરુદ્ધધર્માશ્રય સિદ્ધાતથી તપાસતા
તો જીવ અણુ પણ છે અને વ્યાપક પણ છે. આનદ નિરોધાન થયે તેથી જીવ અણુ છે, અને
નિજ બ્રહ્મસ્વરૂપથી વ્યાપક પણ છે બીજા રામાનુજાદિ વૈષ્ણવ આચાર્યો કોઈ પણ કાલમા જીવનુ
વ્યાપકત્વ અગીકાર કરતા નથી, પરતુ આપણા આચાર્યો જ્ઞાનકાલમા મુક્તિસમયે બ્રહ્મના સબધથી
જીવને વ્યાપક પણ માને છે

બ્રહ્મનુ રૂપ જ જીવ હોવાથી જીવ બ્રહ્મથી પૃથક્, ભિન્ન, જૂદો નથી પરતુ તેથી જીવ જેટલુ
જ બ્રહ્મ છે એમ પણ ન કહેવાય, કારણ કે જીવમા આનદ ગુપ્ત છે
અભેદ અને બ્રહ્મમા આનદ પ્રકટ અને પૂર્ણ છે, અર્થાત જીવ અને બ્રહ્મ
વસ્તુત જૂદા નથી તો પણ બ્રહ્મસ્વરૂપ જીવસ્વરૂપથી અધિક છે,
તેથી જ વ્યાસાચાર્ય તત્ત્વસૂત્રમા કહે છે કે 'બ્રહ્મ તો જીવથી અધિક છે, કારણ કે ભેદનિ-
દેશ છે' જીવમા આનદ ગુપ્ત છે પણ બ્રહ્મમા આનદ પ્રકટ અને પૂર્ણ છે, બ્રહ્મસ્વરૂપ આન-
દમય છે, અને જીવ તે આનદનો ગ્રહણકર્તા છે, તે રસનો પાનકર્તા છે, તેથી રૂપભેદથી જોતા જીવથી
બ્રહ્મ અધિક છે જીવ બ્રહ્મનો અશ હોવાથી, બ્રહ્મથી પૃથક્ નથી અગ્નિવિસ્ફુલિગ અગ્નિનો અશ
હોવાથી પૃથક્ નથી, તેમ બ્રહ્માશ જીવ પણ બ્રહ્મથી ભિન્ન નથી જો બ્રહ્મથી પૃથક્ જ હોય તો
કોઈ કાલમા જીવ બ્રહ્મરૂપ થઈ શકે જ નહિ જીવની સાયુજ્યમુક્તિ જ ન થઈ શકે, તેથી
જીવ બ્રહ્મથી ભિન્ન નથી જીવ અને બ્રહ્મ અત્યત સમાન જ હોય તો જેમ બ્રહ્મને સસાર પ્રાપ્ત થતો
નથી તેમ જીવને પણ સસાર કદાપિ પ્રાપ્ત થાય નહિ, પરતુ જીવને તો સસાર પ્રાપ્ત થાયછે, અને બ્રહ્મને
સસાર પ્રાપ્ત થતો નથી, તેથી જીવ બ્રહ્મનો અશ હોવા છતા, બ્રહ્મથી અભિન્ન હોવા છતા, પણ
જીવસ્વરૂપથી બ્રહ્મસ્વરૂપ અધિક છે જેમ જેમ જીવનો ગુપ્ત આનદ આવિર્ભાવ પામતો જશે તેમ
તેમ ઐચ્છિક ભેદ પણ ન્યૂનતર થતો જશે.

---

૨ અધિકં તુ ભેદનિર્દેશાત્।

શાસ્ત્રમા ધર્મ અર્થ કામ મોક્ષ અને ભક્તિ એ પાંચ પુરુષાર્થ નિરૂપણ કર્યા છે તેનો અધિકારી જીવ જ છે, માટે સાંખ્યાદિ એકદેશી જીવને અકર્તા માને છે તેમ ન માનતા, જીવને કર્તા માનવો યોગ્ય છે '[1] જીવ કર્તા છે, કારણ કે પુરુષાર્થને અર્થે શાસ્ત્રમા કહેલા કર્મનો તે અધિકારી છે' એમ સૂત્રકાર પણ પ્રત્યક્ષ

जीवकर्तृत्वभोक्तृत्व

સૂત્ર જોઈ છે આપણા બ્રહ્મવાદી આચાર્યોએ બ્રહ્મમા કર્તૃત્વ માન્યુ છે, તેથી તે કર્તૃત્વ બ્રહ્મમા પણ હોય એ યુક્ત જ છે ધર્મ અર્થ કામ મોક્ષ અને ભક્તિ એ પાંચ પુરુષાર્થ સિદ્ધ કરવાનો અધિકાર ચૈતન્ય જીવને છે 'અચેતન બુદ્ધિના સમાગમથી જીવમા કર્તૃત્વ તો ભાસે છે, વાસ્તવિક કર્તા જીવ નથી પણ બુદ્ધિ છે' એમ કલ્પના કરવી યોગ્ય નથી અચેતન બુદ્ધિમા કર્તૃત્વ જ ક્યાથી હોઈ શકે ? એટલા જીવને પ્રેરનાર અંતર્યામી છે, અને ઈશ્વરે જીવને બુદ્ધિમાન્ કર્યો છે, તેથી તે બુદ્ધિનો સદુપયોગ કરીને ઈશ્વરે વિચારેલી લીલા પરિપૂર્ણ કરવામા જીવે ઈશ્વરના સહાયક થવુ, એ જીવનો પરમ ધર્મ છે. જીવ કર્તા છે, માટે પોતે કરેલા સત્ અસત્ કર્મના ફલનો ભોક્તા પણ તે છે

બ્રહ્મવત્ જીવની પણ અનેક શક્તિઓ છે, તેમા હાલ કર્તા ભોક્તાના પ્રસંગમાં માટે ત્રણ શક્તિ ઉપર આપનુ ધ્યાન દોરવુ જરૂરનુ છે જીવમા જ્ઞાનશક્તિ ભાવનાશક્તિ અને ઇચ્છાશક્તિ એ ત્રણ શક્તિ મુખ્ય છે જો જીવમા જ્ઞાનશક્તિ ન હોય તો જીવથી કાંઈ પણ જ્ઞાનનુ ગ્રહણ થઈ શકે નહિ,

जीवना त्रण शक्ति

જીવમા ભાવનાશક્તિ ન હોય તો જીવને સુખદુ:ખ લાગે નહિ, અને જીવમા ઇચ્છાશક્તિ ન હોય તો કાંઈ પણ કર્મ તરફ જીવની પ્રવૃત્તિ થાય નહિ ઇચ્છાશક્તિથી જીવ ઇચ્છાપ્રધાન લૌકિક વૈદિક અને ભગવદીય કર્મમા પ્રવૃત્ત થાય છે, જ્ઞાનશક્તિથી જીવ લૌકિક વૈદિક અને ભગવદીય જ્ઞાનનુ ગ્રહણ કરે છે, અને ભાવનાશક્તિ વડે જીવ લૌકિક વૈદિક અને ભગવદીય આનંદનો સ્પર્શ અનુભવે છે

હાલના અર્વાચીન માનસશાસ્ત્રીઓ (modern Psychologists) જ આ ત્રણ શક્તિઓનુ નિરૂપણ કરે છે એમ નથી, જીવમા એ ત્રણ શક્તિઓ પ્રધાન છે એ જ્ઞાન આપણા આર્ય બ્રહ્મવાદીઓને પણ હતુ જ, અને તેથી જ એ ત્રણ શક્તિઓને અનુકૂલ કર્મ જ્ઞાન અને ભક્તિમાર્ગ આપણા પ્રાચીન આચાર્યોએ પ્રગટ કર્યા છે ઇચ્છાપ્રધાન કર્તૃત્વ ઇત્યાદિ ત્રણ શક્તિ વિના જીવ એકલો રહી શકતો જ નથી માટે એ ત્રણે શક્તિ સાથે કર્મ જ્ઞાન અને ભક્તિમાર્ગને નિકટનો સંબંધ છે જેઓ માત્ર કર્મમાર્ગમા પ્રવૃત્ત થાય છે, તેઓ માત્ર કર્મથી જ પોતાનું કર્તવ્ય પરિપૂર્ણ થઈ રહ્યુ

तदनुसार त्रण मार्ग

એમ સમજે છે, પરંતુ વસ્તુત ત્રણ શક્તિમાથી માત્ર એકજ ઇચ્છાશક્તિને તેઓ કર્મમાર્ગ વડે ખીલવી શકે છે, એ જ પ્રકારે જેઓ માત્ર જ્ઞાનમાર્ગમા પ્રવૃત્ત થાય છે તેઓ જ્ઞાનમાર્ગ વડે માત્ર જ્ઞાનશક્તિને જ ખીલવે છે, અને નીચ ભક્તિમાર્ગીય પુરુષો પણ માત્ર ભક્તિ વડે પોતાની ભાવનાશક્તિને જ ખીલવે છે. આ પ્રકારે માત્ર એક જ માર્ગ તરફ લક્ષ રહેવાથી ત્રણ શક્તિમાથી માત્ર એક જ શક્તિ ખીલે છે, અને તેથી એકદેશીય વૃત્તિ થઈ જાય છે તે ઇષ્ટ નથી, અને યોગ્ય પણ નથી ત્રણે શક્તિ યથાયોગ્ય ખીલવવી જોઇએ એમ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી સ્વીકારતા હોવાથી શ્રીમદાચાર્યજી એકદેશીય નથી પણ સર્વદેશીય છે કર્મ જ્ઞાન અને ભક્તિ એ ત્રણે માર્ગનો અંગીકાર કરીને ત્રણે શક્તિ યથાયોગ્ય ખીલવવી એમ શ્રીમદાચાર્યજીનો સર્વદેશીય સિદ્ધાન્ત છે, માત્ર એક જ માર્ગમા પડીને એક જ શક્તિ ખીલવવી શ્રીમદાચાર્યજીને ઇષ્ટ નથી.

---

[1] कर्ता शास्त्रार्थवत्त्वात् ।

બ્રહ્મના તત્ત્વનો વિચાર કરતા જીવનો વિચાર કર્યો હવે બ્રહ્મના કાર્યનો વિચાર કરીએ જે

કાર્યવિચાર જગત્

પ્રકારે બ્રહ્મનો આનંદાંશ ગુપ્ત થઈ જવાથી બ્રહ્મ જીવસ્વરૂપ થઈ જાય છે તે જ પ્રકારે જ્યારે બ્રહ્મના ચૈતન્ય અને આનંદ બે અંશ ગુપ્ત થઈ જાય છે અને માત્ર સદંશ પ્રકટ રહે છે, ત્યારે બ્રહ્મ જગદ્રૂપ થઈ જાય છે ગણિતશાસ્ત્રની પદ્ધતિથી બોલીએ તો,

પરબ્રહ્મ=પ્રકટ પૂર્ણ સત્+પ્રકટ પૂર્ણ ચિત્+પ્રકટ પૂર્ણ આનંદ
અક્ષર=પ્રકટ પૂર્ણ સત્+પ્રકટ પૂર્ણ ચિત્+પ્રકટ પણ ગણિત આનંદ
જીવ=પ્રકટ સત્+પ્રકટ ચિત્+ગુપ્ત આનંદ
જગત=પ્રકટ સત્+ગુપ્ત ચિત્+ગુપ્ત આનંદ

આ પ્રકારે અક્ષર જીવ જગત્ સર્વ પરબ્રહ્મના સત્ ચિત્ અને આનન્દની વિવિધ આવિર્ભાવ-તિરોભાવાત્મક રચના હોવાથી બ્રહ્મરૂપ જ છે જેમ જીવ બ્રહ્મનો અંશ હોવાથી બ્રહ્મથી અભિન્ન છે, તેમ જગત્ પણ બ્રહ્મનુ સદંશરૂપ હોવાથી સત્ય છે, બ્રહ્માંશ છે, બ્રહ્મથી અભિન્ન છે

જગત્ પણ બ્રહ્મરૂપ છે તો જગતમાંથી મુક્ત થવાની ખટપટ શા વાસ્તે કરવી? એમ કોઈલાક

સંસાર

આક્ષેપ કરવા તત્પર થાય તો શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી ઉત્તર આપે છે કે નામરૂપા-ત્મક સમસ્ત જગત્ બ્રહ્મરૂપ જ છે, અને જગતનો બ્રહ્મરૂપે અનુભવ થતો હોય તો બીજી ખટપટની જરૂરે નથી જ, પણ આનંદાંશ ગુપ્ત થઈ ગયાથી જીવના ઐશ્વર્યાદિ છ ધર્મ તિરોભાવ પામી જાય છે, ત્યારે અવિદ્યા વડે જીવ અહંતામમતાત્મક સંસારની કલ્પના કરે છે, અને જગતનુ બ્રહ્મરૂપ ભુલી જાય છે જીવે અવિદ્યાથી કલ્પેલો અહંતામમતાત્મક સંસાર મિથ્યા છે અને બ્રહ્મકૃત નામરૂપાત્મક જગત્ સત્ય બ્રહ્મરૂપ છે એમ માહાત્મ્યજ્ઞાન થવામા કર્મ, જ્ઞાન, અને ભક્તિ સર્વ ઉપયોગિ જ છે અર્થાત્ જગત્ સત્ય છે પરંતુ સંસાર મિથ્યા છે, અને જગતમા અવિદ્યાથી જે અહંતામમતાત્મક સંસારની કલ્પના જીવે કરી લીધેલી છે તે અન્યથા-બુદ્ધિનો ત્યાગ કરવામા ત્રણે માર્ગ ઉપયોગી છે હવે આપને સ્મરણ કરાવવુ જોઇએ કે જે લોક એમ કહે છે કે 'બ્રહ્મ[1] સત્ય છે જગત્ મિથ્યા છે અને જીવ બ્રહ્મ જ છે ભિન્ન નથી,' તેઓ ભ્રાન્ત છે, ભ્રમવાદી છે, બ્રહ્મવાદી નથી બ્રહ્મ સત્ય છે, જગત્ પણ બ્રહ્મનુ કાર્ય હોવાથી સત્ય છે, અને જીવ પણ બ્રહ્મનો અંશ હોવાથી સત્ય છે જીવ અને જગત્ ઉભયે ક્રમશ બ્રહ્મના અંશ અને કાર્ય હોવાથી બ્રહ્મરૂપ જ છે, બ્રહ્મથી ભિન્ન નથી. જગત્ મિથ્યા નથી પણ સંસાર મિથ્યા છે જગત્ અને સંસારનો આ પ્રકારે ભેદ શાસ્ત્રીય રીતિથી પ્રતિપાદન કરવાનુ માન શ્રીમદ્ વલ્લભાચાર્યજીને ઘટે છે

જીવ અને જગત્ પાછા બ્રહ્મરૂપ થઈ જશે કે નહિ? એ વિષયમા બહુ જ મતભેદ છે

શુદ્ધ અખંડ અદ્વૈત

પાશ્ચાત્ય દેશમા હાલ જે પરિણામવાદ ચાલે છે તે પણ એમ ઉપદેશે છે કે જગતમા પદાર્થનુ માત્ર રૂપાંતર થાય છે, કોઈ પણ પદાર્થની સર્વથા ઘટ થતી નથી, પદાર્થ સદાસર્વદા તે જ રહે છે, પરંતુ તેના માત્ર રૂપાંતર થાય છે શંકરાચાર્યનો વિવર્તવાદ જગતને મિથ્યા જ બતાવે છે પરંતુ મિથ્યા જગત્ સત્ય બ્રહ્મ સહ એકરૂપ થઈ શકે કે કેમ એ વિચારકોએ તપાસવુ. નૈયાયિક અને વૈશેષિક શાસ્ત્ર આરંભવાદિ છે, તે એમ બતાવે છે કે મૃત્તિકામા ઘટ ગુપ્ત ન હતો પણ ઘટનામનો નવો પદાર્થ કુંભારે બનાવ્યો પરંતુ વસ્તુત પદાર્થ જ ન હોય તો તે કોઈ પણ પ્રકારે અસ્તિત્વમા આવી શકતો નથી, તેથી એ નૈયાયિક અને વૈશેષિક પક્ષ પણ યોગ્ય નથી સાંખ્યશાસ્ત્ર પરિણામવાદિ છે તે એમ

---

[1] ब्रह्म सत्य जगन्मिथ्या जीवो ब्रह्मैव नापर ।

બતાવે છે કે ઘટ મૃત્તિકામા પ્રથમ હતો જ અને કુલાલ માત્ર પોતાની ચાતુરીથી મૃત્તિકામાથી તે ઘટને બહાર કાઢે છે. નવો જ પદાર્થ અસ્તિત્વમા આવ્યો એમ નૈયાયિકવત્ સાખ્ય માનતા નથી, પણ ઘટ મૃત્તિકામા ગુપ્ત હતો જ એમ તે માને છે. આટલે અંશે સાંખ્યશાસ્ત્ર બ્રહ્મવિદ્યાને અનુકૂલ છે, પરતુ બ્રહ્મવાન્વિત જગત્નુ પરિણામ બ્રહ્મમાથી ન માનતા સાખ્યવાદી પ્રકૃતિમાથી જગતનુ પરિણામ માને છે એ લક્ષમા રાખવા જેવુ છે.

પરિણામ પણ બે જાતના છે, વિકૃત પરિણામ અને અવિકૃત પરિણામ દૂધનુ પરિણામ દહિ છે, પરતુ દૂધનો વિકાર થઈ ચુકવાથી દહિ કોઈ પણ કિમ્મે પુન દૂધ થઈ શકતુ નથી, તેથી એ ઉદાહરણ વિકૃત પરિણામનુ છે સાખ્ય વોદ આ વિકૃત પરિણામ માને છે સુવર્ણનાં અનેક આભરણ સુવર્ણના પરિણામ છે, રૂપાતર છે, અને તે આભરણ જોવામા સુવર્ણરૂપ જ છે, સુવર્ણમા કોઈ પણ જાતનો વિકાર થયો નથી, તેથી એ ઉદાહરણ અવિકૃત પરિણામનુ છે શ્રીમદાચાર્યજી અવિકૃતપરિણામવાદી છે એમનો અભિપ્રાય એમ છે કે જીવ અને જગત્ સર્વ શુદ્ધ વિકારરહિત બ્રહ્મના જ રૂપાતર છે, માત્ર પોતાના આનદ અને ચૈતન્ય ધર્મ તેમા ગુપ્ત છે તે ધર્મ પ્રકટ કરવાની બ્રહ્મની ઇચ્છા થાય કે તરત જ જીવ અને જગતમા તે ધર્મ પ્રકટ થતા પુન સર્વ બ્રહ્મરૂપ જ થઈ રહે છે તાત્પર્ય એ છે કે સર્વ બ્રહ્મરૂપ જ છે એ બ્રહ્મરૂપનો અનુભવ કરવાને જ કર્મ જ્ઞાન અને ભક્તિની જરૂર છે જે આનદધર્મનો તિરોભાવ થયો છે તેનુ પુન પ્રાકટ્ય કરવા જ કર્મ જ્ઞાન માટે ભક્તિની આવશ્યકતા છે, અર્થાત્ આ સર્વ જગત્ મિથ્યા છે અને તેને પેલ પાર બ્રહ્મ છે એમ નહિ, પણ આ સર્વ જીવ જગત્ સત્ય છે, બ્રહ્મ છે, અને એની બ્રહ્મરૂપતા અનુભવ કરવામા કર્મ જ્ઞાન અને ભક્તિનો ઉપયોગ છે

અવિકૃત પરિણામ.

જગત્ શૂન્ય નથી, Cipher નથી, zero નથી, પણ બ્રહ્મરૂપ છે, જીવ પણ બ્રહ્મરૂપ છે, સાયુજ્ય જોડણ કૈવલ્ય નહિ. એટલે માત્ર જીવ અને જગતનુ ઘટસ્ફોટવત્ કૈવલ્ય (elimination) કરવુ યોગ્ય નથી, પરતુ જે આનદાદિ ધર્મ ગુપ્ત છે તેનુ અગ્નિવત્ મથન કરીને પ્રાકટ્ય કરવુ, તેનુ Evolution કરવુ, યોગ્ય છે પ્રાકટ્યન (Evolution) વિકાસક્રમમા ઈશ્વરે આપણને જે કર્તવ્ય ફરમાવ્યું છે તે કર્તવ્ય કરીને ઈશ્વરની લીલામા સહાયભૂત થઈને પૂર્ણ આવિર્ભાવને (Complete Evolution) કરવાને પહોચવુ એ શુદ્ધાદ્વૈત સિદ્ધાતનુ પરમ મર્મ છે

Evolution, not annihilaton

એ પૂર્ણ આવિર્ભાવ (Complete Evolution) યજ્ઞ વિના થતા નથી, માટે વેદમા યજ્ઞને જ પ્રથમ ધર્મ[1] કહ્યો છે પ્રથમ શુદ્ધ કાલમા સર્વ આધિદૈવિક ભક્તિયજ્ઞ જ કરતા હતા, પણ કાલક્રમે ભક્તિયજ્ઞપર્યતનો અધિકાર ઘટતા આધ્યાત્મિક જ્ઞાનયજ્ઞ થવા માડ્યા, અને તે આધ્યાત્મિક અધિકાર પણ ન રહેતા છેક આધિભૌતિક કર્મયજ્ઞનો પ્રારભ થયો. હાલ પુન વિકાસક્રમને અનુકૂલ કાલનો પ્રારભ થયો છે, એટલે પાછો આધિદૈવિક ભક્તિયજ્ઞ જ ઉત્કૃષ્ટ ગણાવા માડ્યો છે સમયાનુસાર કોઈ પણ યજ્ઞ ભક્તિયજ્ઞ જ્ઞાનયજ્ઞ વા કર્મયજ્ઞ યોગ્ય જ છે ત્રણે યજ્ઞમા વિરોધ છે જ નહિ માત્ર જે કાલ જે યજ્ઞને વાસ્તે અનુકૂલ હોય છે તે કાલમા તે યજ્ઞની પ્રવૃત્તિ સ્વાભાવિક રીતિથી જ થાય છે

આધિદૈવિક યજ્ઞ

---

૧ યજ્ઞેન યજ્ઞમયજન્ત દેવાસ્તાનિ ધર્માણિ પ્રથમાન્યાસન્। દેવતાઓએ યજ્ઞથી યજ્ઞનુ યજન કર્યું તે ધર્મ પ્રથમ હતા

આ ક્રમમુક્તિ ઉપરાંત બીજી એક સદ્યોમુક્તિ છે, અર્થાત બીજો એવો પણ ઉપાય છે કે જેથી માત્ર એક જ જન્મમા પરમ ફલની પ્રાપ્તિ થઈ જાય છે આ સદ્યોમુક્તિના અધિકારી, પોતાની ક્ષુદ્રતા હીનતા દીનતા અંગીકાર કરીને, પ્રારંભથી જ પ્રભુને શરણે જઈને, શુદ્ધ નિરભિમાન અંતઃકરણથી પોતાની નિ સાધનતા પ્રભુને નિવેદન કરે છે. પરમકૃપાલુ પરમદયાલુ પુરુષોત્તમ આ જીવની શુદ્ધ નિ સાધનતાથી જ પ્રસન્ન થઈને તે જીવનુ કલ્યાણ જીવકૃત સાધનથી કરવાની ઇચ્છા રાખતા નથી, પણ પોતાના અચિંત્ય સામર્થ્યથી જ તે વિશિષ્ટ કૃપાપાત્રનુ સર્વ કલ્યાણ કરે છે

નિરાધનજીવોદ્ધારણકરણ પ્રભુના ધામને આપણા શાસ્ત્રમા 'શ્રીમદ્ગોકુલ' કહે છે 'ગોકુલ' એટલે 'ઇંદ્રિયનુ (વાસનાનુ) સ્થલ' એવા કપોલકલ્પિત અર્થ કોઇવામા આવે છે, તે યોગ્ય નથી- થિયોસોફિસ્ટ ઉત્તરોત્તર લોક (Plane) અંગીકાર કરે છે તે આ શ્રીમદ્ગોકુલસ્થલ ખરુ જ સારી રીતિથી સમજી શકશે આ આધિભૌતિક લોકમા સર્વ વ્યવહાર પંચમહાભૂતરૂપ પ્રાકૃત દેહ પ્રાણ ઇંદ્રિયાદિથી થાય છે, તેથી પર (આગલ) વિકાસક્રમમા આધ્યાત્મિક લોક આવે છે, જ્યા સર્વ વ્યવહાર પ્રાકૃત ભૌતિક નથી, પણ આધ્યાત્મિક છે ચૈતન્યથી જ ત્યા સર્વ વ્યવહાર ચાલે છે એ આધ્યાત્મિક સ્થલને જ આપણા શાસ્ત્રમા 'અક્ષર' વા 'વ્યાપિવૈકુંઠ ધામ' કહ્યુ છે આ આધ્યાત્મિક લોકથી પણ આગલ વધતા [આધિદૈવિક લોક આવે છે જ્યા સર્વ વ્યવહાર, માત્ર ચૈતન્યથી જ કે ગણિત આનંદથી નહિ પણ પૂર્ણ પ્રગટાનન્દથી જ ચાલે છે એ આનંદઘન રસઘન ઉત્તમોત્તમ ઉત્કૃષ્ટોત્કૃષ્ટ ભૂમિકાને જ 'શ્રીમદ્ગોકુલ' કહે છે ત્યા દેહ ઇંદ્રિય પ્રાણ અંતઃકરણાદિ પ્રાકૃત નથી, ચિન્મય નથી, પણ આસ્ત આનંદસ્વરૂપ જ છે જેમ કોઈ સંપત્તિમાન્ પુરુષને ત્યા સર્વ વ્યવહાર સુવર્ણાદિથી જ ચાલે છે, મૃત્તિકાથી ચાલતો નથી, તેમ આ અપ્રાકૃત શ્રીમદ્ગોકુલમા સર્વ વ્યવહારમાત્ર આનંદથી જ ચાલે છે દેહ પ્રાણ ઇંદ્રિય અંતઃકરણ સર્વ અત્ર આનંદસ્વરૂપ જ હોય છે સાધનપ્રાપ્ય પુરુષોત્તમ વ્યાપિવૈકુંઠમા આનંદદાન કરે છે, પણ નિ સાધનતાથી પ્રાપ્ય શ્રીપુરુષોત્તમ પોતાના શુદ્ધ દીન અનન્ય નિ સાધન ઉત્તમોત્તમ કૃપાપાત્ર ભગવદીયને સ્વરૂપનિષ્ઠ સુધાનુ દાન આ શ્રીમદ્ગોકુલમા જ કરે છે વ્યાપિવૈકુંઠથી પણ શ્રીમદ્ગોકુલનો સમુત્કર્ષ શ્રીમદ્ભાષ્યકારે તત્ત્વસૂત્રના ચતુર્થ અધ્યાયમા સરસ પ્રતિપાદન કર્યો છે થિયોસો ફિસ્ટ લોકની ભાષામા કહુ તો શ્રીમદ્ગોકુલ ઉચ્ચૈસ્તમ ઈશ્વરલોક (Highest Divine Plane) છે આ શ્રીમદ્ગોકુલમા જે નિ સાધન ભક્તિનો નિરંતર પ્રવાહ દૃશ્યમાન થાય છે તે ભક્તિ સ્વતંત્ર છે નારદાદિ વૈદિક ભક્તોને જે ભક્તિ પ્રાપ્ત થઈ છે તે શીતલ ભક્તિ, કર્મ જ્ઞાન કર્યા પછી પ્રાપ્ત થઈ છે. પરંતુ નિરપેક્ષ સ્વતંત્રભક્તિ, શુદ્ધ અંતઃકરણથી દીનતાપૂર્વક પ્રભુને શરણે જવાથી, એકદમ જ પ્રાપ્ત થાય છે, કારણ કે એ વિરુદ્ધરૂપ સ્વતંત્ર ભક્તિને કર્મ કે જ્ઞાનની અપેક્ષા જ નથી આ સ્વતંત્ર ભક્તિમાર્ગ વેદથી કોઈ પણ પ્રકારે વિરુદ્ધ નથી, પરંતુ વેદને અનુકૂલ જ છે, આ કરાલ કલિકાલમા વૈદિક સાધન ન બની શકવાથી આ સ્વતંત્ર સર્વદેશી સર્વગ્રાહ્ય ભક્તિ ઉપર વિશ્વાસ રાખવા શ્રીમદાચાર્યચરણ આગ્રહથી ભલામણ કરે છે.

સ્વતંત્ર શરણમાર્ગ વેદથી વિરુદ્ધ નથી. પણ લોકવેદાતીત છે

આર્ય અને અનાર્ય સર્વ જીવોનુ એક જ જન્મમા કલ્યાણ કરનાર આ સ્વતંત્ર ભક્તિમાર્ગ વેદથી વિરુદ્ધ નથી, એટલે નિ સાધનતાથી પ્રભુને શરણે આવનાર ભક્તોએ કોઈ પણ પ્રકારે વેદની નિંદા કરવી જોઇએ નહિ વેદની નિંદા કરવાથી નિ સાધન જીવોની દીનતામા ન્યૂનતા આવે. અભિમાનવૃત્તિ થઈ આવે તો હીનયોનિમા અવતરીને તે વેદનિંદાનુ ફલ ભોગવવુ પડે વેદનિંદક ભક્તોને ફલ મલવામા આ પ્રકારે પ્રતિબંધ નડે માટે સ્વતંત્ર ભક્તિમાર્ગસ્થ ભક્તોએ સર્વદેશી સર્વગ્રાહ્ય ભગવન્માર્ગમા સદાચારપૂર્વક સ્થિતિ કરીને પરમ ફલ પ્રાપ્ત

કરવુ, પણ અજ્ઞાનથી કે ગર્વથી વેદની નિંદા કરવી નહિ આપણો માર્ગ લોક અને વેદથી પણ અતીતછે એમ નિશ્ચય રાખીને એ લોકવેદાતીત ભક્તિમાર્ગનુ ફલ ગ્રહણ કરવુ, પરતુ ફલમા સ્વત જ પ્રતિબંધ નાખવા નહિ

એકદેશિત્વ કે સર્વદેશિત્વ?

જૂદા જૂદા આચાર્યો વેદના કેટલાક વાક્ય પકડીને વસ્તુત એકદેશી થઈ ગયા છે જૈમિનિ ઋષિના મીમાસક શિષ્ય સમસ્ત વેદમાથી કર્મપ્રતિપાદક મત્રો ગ્રહણ કરીને કર્મ ઉપર જ ભાર મુકે છે, તો બીજા અર્વાચીન આચાર્યો ખાસ વેદમાથી જ્ઞાત્મજ્ઞાનપ્રતિપાદક મત્રોનું ગ્રહણ કરીને તે ઉપર જ ભાર મુકે છે આમ વેદના વાક્યને મારીમચડીને આખા વેદનો વિપ્લવ કરવો યોગ્ય નથી. શુ નિષ્કામ કર્મથી મુક્તિ પ્રાપ્ત થાય એવા વચનો વેદમા નથી? શુ નિર્ગુણ જ્ઞાનથી મુક્તિ પ્રાપ્ત થાય એવા વચનો ત્યાં વેદમા નથી? વેદ સર્વદેશી છે, યથાપ્રસગ કર્મજ્ઞાનભક્તિ સર્વનો ઉપદેશ કરે છે. કામના જ વાક્ય પકડી લઈને તે ઉપર ધર્મ ઉભા કરવામા આવે તો તે એકદેશી જ કહેવાય વેદના સમસ્ત વાક્ય ધ્યાનમા લઈને તે સર્વનો યથાર્થ, કાઈ પણ ન્યૂનતા કે વૃદ્ધિ કર્યા વિના, અર્થ આપવો એ પ્રામાણિકતા છે આખા વેદમા કર્મ જ્ઞાન અને ભક્તિ સર્વ નિરૂપણ કરેલુ છે, અને યથાધિકાર તે સર્વ યુક્ત જ છે એકદેશી દૃષ્ટિ ન રાખતા સર્વદેશી દૃષ્ટિ રાખવી કર્મમાર્ગને અનુકૂલ સમય આવે છે ત્યારે કર્મથી પણ નૈષ્કર્મ્યપર્યંત મુક્તિ થઈ શકે છે જ, જ્ઞાનમાર્ગને અનુકૂલ સમય આવે છે ત્યારે જ્ઞાનથી પણ સાયુજ્યમુક્તિ પ્રાપ્ત થાય છે, અને ભક્તિમાર્ગને અનુકૂલ સમય આવે છે ત્યારે ભક્તિથી પણ પીયૂષપાન થાય છે આ ત્રણમાથી કોઈ પણ માર્ગને પરસ્પર વિરોધ છે જ નહિ વસ્તુત વિચારીએ તો યથાક્રમ કર્મમાર્ગ અને જ્ઞાનમાર્ગ ભક્તિમાર્ગના જ અગ છે, એટલે કર્મમાર્ગ અને જ્ઞાનમાર્ગમા સ્થિતિ કરીને પણ જો પરમ ફલ પ્રાપ્ત થાય નહિ તો સર્વ શ્રમમાત્ર કેવલ તુષાવઘાત છે, તેથી આધુનિક દેશકાલની નિરીક્ષા કરીને દીર્ઘદૃષ્ટિમાન્ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ વેદથી અવિરુદ્ધ સ્વતન્ત્ર શરણાત્મક ફલરૂપ ભક્તિમાર્ગ આધુનિક આર્ય અને અનાર્ય જીવોનુ કલ્યાણ કરવામા યુક્તતમ છે એમ પ્રતિપાદન કર્યું છે

[इ] ફલ વિચાર.

સાંખ્યયોગ ઇત્યાદિથી ભક્તિનો સર્વત ઉત્કર્ષ

આ પ્રકારે કર્મમાર્ગ જ્ઞાનમાર્ગ અને ભક્તિમાર્ગ એ ત્રણે સાધનનો વિચાર કર્યા પછી ફલનો વિચાર કરતા એટલુ જ કહેવાનુ રહે છે કે વસ્તુત સર્વ માર્ગ ભગવદ્ધર્મનુ જ પ્રતિપાદન કરે છે, પરતુ કર્મમાર્ગથી સકામના વધે, અને જ્ઞાનમાર્ગથી અભિમાન વધે એમ પણ સભવ હોવાથી, દીનતાપોષક ભક્તિમાર્ગ પરમ રમણીય છે સાંખ્યયોગાદિથી પણ મુક્તિ થઈ શકે છે, પરતુ આધુનિક સમય તે જ્ઞાનાનુકૂલ સાંખ્યયોગને અનુકૂલ નથી, માટે શ્રીમદાચાર્યજી આજ્ઞા કરે છે કે સાંખ્યમા દુ ખ સાધન કરવુ પડે છે, યોગમા કુવો ખોદવા જેવુ છે, અને ભક્તિમા તો સાક્ષાત્ ગગા સમીપ આવીને ફલદાન સમર્પે છે ભક્તિમાર્ગ આ પ્રમાણે પરમસુસાધ્ય અને સરલ હોવાથી આ સમયમા યુક્તતમ છે ભક્તિમાર્ગમા પ્રભુનો આશ્રયમાત્ર રાખવાથી પ્રભુ સર્વ વસ્તુ સિદ્ધ કરી આપીને જીવનુ એક જ જન્મમા કલ્યાણ કરે છે

[ફ] ઉપસંહાર.

આપણા પ્રાચીન ગોસ્વામી આચાર્યો

વૈષ્ણવો, આ પ્રમાણે આપણા સિદ્ધાતની નિરીક્ષા કરતા આપની ધ્યાનમા આવ્યુ હશે કે જ્ઞાનસામગ્રી દુર્બલ હોવાનો આક્ષેપ વાસ્તવિક નથી માત્ર શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી જ આવા સમર્થ આચાર્ય થઈ ગયા એમ નથી પરતુ આજથી પચ્ચાસ વર્ષ સુધીમા પણ બહુ સારા વિદ્વાન્ ગોસ્વામીઓ

થઈ ગયા છે નમુનાદાખલ થોડાક વિદ્વાન્ ગોસ્વામીઓના નામ આપું. ૧ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યના જ્યેષ્ઠ પુત્ર શ્રીમદ્ગોપીનાથજીનો એક ગ્રંથ મને હાલ મળી આવ્યો છે, તે હાલના સમયમાં બહુ ઉપયુક્ત થશે અત્યાર સુધી એમનો કરેલો એક પણ ગ્રંથ મલતો ન હતો શ્રીમદ્વિઠ્ઠલનાથજીના દ્વિતીય પુત્ર શ્રીમદ્ગોસ્વામી શ્રીવિઠ્ઠલનાથદીક્ષિતે શ્રીમદગ્નિકુમારે 'વિદ્વન્મંડન' ઇત્યાદિ અનેક ગ્રંથો પ્રકટ કર્યા છે સાત બાલકોમાં શ્રીગોકુલનાથજી એક અનુપમ પંડિત થઈ ગયા છે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યના સિદ્ધાંત ઉપર ચિદ્રૂપમિશ્રોએ આક્ષેપ કર્યો, ત્યારે સ્વધર્મનું રક્ષણ એ શ્રીગોકુલનાથજીએ કર્યું હતું એમના સ્વતંત્ર અને ટીકારૂપ ગ્રંથો હાલ પણ અનેક મળી આવે છે આપણે જે તિલક અને તુલસીની માલા ધારણ કરીએ છીએ તે તિલકમાલા એમણે જ બાંધવી રાખી એ એમનો આપણા ઉપર પરમ ઉપકાર છે શ્રીરઘુનાથજીએ પણ ઘણા ગ્રંથો પ્રકટ કર્યા છે શ્રીહરિરાયજીના 'શિક્ષાપત્ર' જેવો પ્રાથમિક ગ્રંથ દુર્લભ છે શ્રીહરિરાયજીએ નાના મોટા અનેક ગ્રંથો કર્યા છે સુરતવાલા દશહિન્તવિજ્યી શ્રીપુરુષોત્તમજીએ નવલક્ષશ્લોકાત્મક ગ્રંથો કર્યા છે એમનો 'પ્રસ્થાનરત્નાકર' ગ્રંથ નિર્ણયસાગર પ્રેસમાં છપાય છે તે પ્રસિદ્ધ થયા પછી દક્ષિણના પંડિતોની પણ આંખ ઉઘડશે એમ આશા રહે છે કાશીવાલા શ્રીગિરિધરલાલજીએ બીજા નાના ગ્રંથો ઉપરાંત શ્રીમુખોદ્ગિતીજીના દક્ષિણમુખથી બાલપ્રબોધિનીનામની સંપૂર્ણ ટીકા શ્રીમદ્ભાગવત ઉપર કરેલી પ્રસિદ્ધ જ છે ભાવનાદાર શ્રીદ્વારિકેશજી ગીતાના અઢાર અધ્યાયમાં શ્રીમદ્ભાગવતના ૧૮૦૦૦ શ્લોકની સંગતિ કરી આપતા ! શ્રીમદ્ભાગવતનો પાઠ છેલ્લેથી પહેલેસુધી ઉલટા ક્રમે પણ કરી શકતા ! આપણા સૈકામાં પણ શ્રીકોટાવાલા કન્હૈયાલાલજીએ સહસ્રાક્ષના અનુકરણરૂપ જે 'પ્રાભાજન' ગ્રંથ કર્યો છે, તે સાધારણ પંડિતોને તો શું પણ એમ એ પાસ પ્રયાગવાળાઓને પણ ગોથા ખવડાવી શકે એવો છે એમના પુત્ર શ્રીરણછોડલાલજી હજી કોટામાં બિરાજે[1] છે. એમના દર્શન કરનારને એમના આચારવિચારથી પ્રાચીન આચાર્યોની સદાચારવૃત્તિનો સરસ ખ્યાલ આવે છે એવા સદાચારી સુશીલ ગોસ્વામીના એકાદ વાર દર્શન કરવાની હું આપના સર્વને ભલામણ કરું છું વૈષ્ણવો, આપે જોયું કે જે સર્વદેશી સંપ્રદાય શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ દીર્ઘ દૃષ્ટિથી સ્થાપ્યો છે તેને દૃઢ કરવા તેમના કેટલાક વિદ્વાન્ વંશજોએ પોતાથી બનતો પ્રયાસ પણ કર્યો છે

શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યના ગ્રંથોના લક્ષણ (Characteristics)

આપણા સંપ્રદાયમાં ધર્મધૂર્તના (priestcraft) શરૂ થઈ ચુકી છે શ્રીમદાચાર્યચરણના નામથી બહુ ગ્રંથો થોડાક વર્ષ ઉપર જ નવા લખાવવા શરૂ થઈ ગયા હતા એવા ગ્રંથો શ્રીમદાચાર્યના નામથી પ્રસિદ્ધ થાય ત્યારપહેલા શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના ગ્રંથોની શૈલી હું આપને જણાવું છું, જેથી અમુક ગ્રંથ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીનો છે કે નહિ એમ આપ પણ કાંઈક અંશે નિર્ણય કરી શકો પ્રથમ શ્રીમદાચાર્યજીના ગ્રંથોમાં કાદંબરીમાં આવે છે એવા બહુ લાંબાલાંબા સમાસ ભાગ્યે જ આવે છે કાદંબરીના જેવા મોટામોટા વાક્ય પણ એમના ગ્રંથમાં બહુધા આવતા નથી તેમના ગ્રંથોના વાક્યો ટુંકા મુદ્દાસર અને રમણીય હોય છે દરેક લખાણની શરૂઆતમાં પ્રસ્તાવના આવે છે. પ્રકરણની શરૂઆતમાં વા સમાપ્તિમાં આખા પ્રકરણનો સૂક્ષ્મમાં સાર આવે છે ટીકાના ગ્રંથોમાં च જેવા અવ્યયનો પણ સરલ અર્થ આપવા ચુકતા નથી પાયથેગોરસની (Pythagoras) માફક સંખ્યામાંથી પણ ગહન તાત્પર્ય બતાવે છે. અધિકરણમાં સૂત્રની અમુક સંખ્યા જ શા વાસ્તે ? તેથી વધતી કે ઓછી શા વાસ્તે નહિ ? તેનું પણ સમાધાન સંતોષકારક રીતિથી આપે છે ગ્રંથોમાં ધર્મ જ્ઞાન અને ભક્તિનું સામ્ય (Balance) સાચવવાને ઘણી જ દરકાર રાખેલી હોય છે બીજાના મતનું શાસ્ત્રીય પદ્ધતિથી ખંડન કરવા છતાં તે મતને કોઈ પણ પ્રકારે અન્યાય થાય એવી રીતિથી અન્યાયઆક્ષેપક નિંદા કરી નથી. ગ્રંથકાર અને વાચકની બુદ્ધિને વાસ્તે (Intellectual sympathy)

---

૧. શ્રીગિરિરાજ ઉપર ગયે વર્ષ જ એમણે આસુરવ્યામોહલીલા કરી

અહુ માન હોય એમ એમના ગ્રંથ ઉપરથી મને જણાય છે લાડુ તૈયાર કરીને શિષ્યને આપતા નથી, પણ શિષ્યની બુદ્ધિ પાકે, શિષ્યને પોતાની બુદ્ધિનો ઉપયોગ કરવાની જરૂર પડે, એ પ્રકારે શિષ્યની બુદ્ધિને માન આપીને કોમલતાથી કામ લે છે. તેમના ગ્રંથમા સર્વોત્તમ એકેશ્વરવાદ ઉપર બહુ જ લક્ષ ખેંચવામા આવેલુ હોય છે વેદથી વિરુદ્ધ મત ઉપર તીવ્ર અરુચિ તેમના અર્થોમા સ્પષ્ટ જણાય છે ગ્રંથોના વાક્ય ઘણા દુર્ગા હોવા છતા તેની અંદર અનિગદન અર્થનો સમાવેશ કરે છે, જેથી વાચકમા ધૈર્ય રહે છે આવા લક્ષણો જે અર્થોમા ન હોય તે ગ્રંથ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના સમજ્યા નહિ

આપણા સંપ્રદાયમા આમ એકંદર ધર્મધૂર્તતા (Priestcraft) શરૂ થઈ છે, ત્યારે અન્યશ્રીમદાચાર્યજીના સ્વતંત્ર ગ્રંથ છપાવવા કોઇએ પણ દરકાર લીધી નથી શ્રીમદણુભાષ્ય જેવો મુખ્ય ગ્રંથ કલકત્તાની Asiatic Society of Bengal તરફથી પ્રસિદ્ધ થયો[1] તેની રીતિથી ગ્રંથ છપાવતા તે ગ્રંથ અશુદ્ધ છપાય એટલુ જ નહિ પણ બીજી પણ અનેક હાનિ થાય પ્રારંભમા અણુભાષ્યના પ્રથમ મુખપૃષ્ઠ ઉપર **શુદ્ધાદ્વૈતપર** ને બદલે **દ્વૈતાદ્વૈતપરં વ્યાખ્યાનં** લખીને ગંભીર ભૂલ કરવામા આવી છે શુદ્ધાદ્વૈત અને દ્વૈતાદ્વૈતમા તારતમ્ય શું[2] તેની તે પંક્તિને ખબર નહિ હશે, પણ આપણને તો તેના આવા અજ્ઞાનથી હમેશને વાસ્તે નુકસાન થયુ છે તત્ત્વદીપનિબંધ હાલ જ મુંબઇમા પ્રસિદ્ધ[2] થયો શ્રીસુબોધિનીજી મુદ્રણ કરવાની કરજ હજી આપણે સમજતા જ નથી વૃંદાવનમા એક ત્રિરક્ત સમ્પ્રદાયજ્ઞ શ્રીમદ્ભાગવત છપાવે છે, અને તે સાત ટીકામા આપણા શ્રીસુબોધિનીજી પણ છપે છે, પણ તે ઘણા અશુદ્ધ[3] છપે છે આપણા સંપ્રદાયના ગ્રંથો સભાષાંતર પ્રસિદ્ધ કરવા એ પ્રથમથી આપણી જ કરજ છે

આપણા મથો પ્રસિદ્ધ કરવા ૮ આપણી જ ફરજ છે

ઇંદ્રિય વશમા રાખવાનુ કામ કેટલુ કઠિન છે તે શ્રીમદાચાર્ય જાણતા હતા, તેથી જ તેમણે ગૃહસ્થાશ્રમ રાખીને જ સદાચાર પાળવાની કરજ કરી છે ગૃહસ્થાશ્રમ રાખીને સદાચારથી વર્તીને ભક્તિ કરવી અને કરાવવી એ એમના વલ્લભોનો પરમ ધર્મ છે વ્યાસજી પણ ગૃહસ્થ જ હતા ગૃહસ્થ આચાર્ય જ ન થઇ શકે એમ તો ન કહી શકાય. ગૃહસ્થાશ્રમી શિષ્યને આચારવિચારમા ગૃહસ્થાશ્રમી ગુરુ વધારે સહાયકારક થઈ પડે એ સ્પષ્ટ છે. સન્યાસીના આચારવિચારથી ગૃહસ્થ શિષ્યને સાક્ષાત્ લાભ બહુ થોડો થાય, અને ભક્તિમાર્ગમા આપન અવસ્થામા તો ભક્તિમાર્ગીય સન્યાસની પણ જરુર નથી

ગૃહસ્થાશ્રમી આચાર્યો નક્કિનો પ્રચાર કરાવવામા બહુ જ ઉપયોગી છે

ચોખ્ખુંચો, સમાપ્તિમા મારે હવે એટલુ જ કહેવાનુ છે કે આપણે કોઈ આચાર્યોના ગુલામ નથી આચાર્યો પ્રતિ આપણા પણ કેટલાક હક છે આચાર્યોના યોગ્ય ધાર્મિક કાર્યમા આપણે એમને મદદ કરવી, પરતુ આચાર્યો પાસે સદુપદેશ માગવાનો આપણો હક છે એ આપણે ભૂલવાનુ નથી આચાર્યોનુ કામ પારકે પૈસે રમવા બેસવાનુ નથી આપણા સંપ્રદાયમા એક ગાયા છે કે એક વખત શ્રીગુસાઇજી બેસતા હતા ત્યારે શ્રીગોકુલનાથજીએ વિનયથી જણાવ્યુ હતુ કે 'આપણો સંપ્રદાય ઠકુરાઇકરીનો નથી, પણ

વૈષ્ણવોના હક

---

૧ કાશીસ્થ રત્નગોપાલભટ્ટે પ્રકાશ સાથે અણુભાષ્ય પ્રકટ કર્યું છે

૨ કાશીસ્થ રત્નગોપાલભટ્ટે નિબંધના બે પ્રકરણ આવરણભંગ સાથે છપાવ્યા છે તૃતીય શ્રીમદ્ભાગવતાર્થ પ્રકરણ સાહિત્ય સાથે છપાવવું એ આપણુ કર્તવ્ય છે

૩ મુંબઈના ગોકાભદિરવાલા શ્રીગોકુલનાથજીએ શ્રીસુબોધિનીજી છપાવવાનુ કબુલ કર્યું છે, પણ હજી તે કાર્ય આરંભાયુ નથી !

પાટણ મધ્યે સ્માર્ત બ્રાહ્મણ મણિશંકર અયાચી અને શ્રૌત વૈષ્ણવ શાસ્ત્રી જયેષ્ઠારામ વચ્ચે શાસ્ત્રાર્થ માટે પરસ્પર આવ્હાન.

નીચે પ્રકટ કરવામા આવેલા પત્રવ્યવહાર ઉપરથી શંકરાચાર્ય માધવતીર્થ અને તેમના શિષ્ય વર્ગની શાસ્ત્રાર્થ કરવા માટેની કેવી ઉત્સુકતા અને તૈયારી છે તે સ્પષ્ટ માલમ આવશે, તેમ જ શ૦ માધવતીર્થ કેટલાક તરફથી કહેવામા આવે છે કે પોતે રેલમાં જાય છે અને કલહને તારમા મોકલે છે તે અક્ષરશ: સત્ય છે તે પણ નિશંક વાચક વર્ગને સિદ્ધ થઈ જશે ઉમરેઠ વગેરે સ્થલે સ્વામિનારાયણ પંથ સહ કલેશ ઉપાડી બ્રાહ્મણોની જ્ઞાતિયોમા પરસ્પર વૈમનસ્ય કરાવ્યુ હતુ તે વાત પ્રસિદ્ધ છે તેવી જ રીતે હાલમા સિદ્ધપુર મુકામે બ્રાહ્મણોમા પરસ્પર વૈર અને અશાતિના જ્વાલા પ્રજ્વલાવી. કર્ણોપકર્ણે સાંભરયુ છે તેમ તુલસીની માલાનો પુજ કરી તેને અગ્નિસંસ્કારરૂપી અઘોર અધર્મ કૃત્ય કરી વૈષ્ણવોની અનેકશઃ લાગણી દુખાવી પાટણમા ચાતુર્માસ કરવા પધારી નાગરોમા કલિને પ્રવેશ કરવો ઔદિચ્ય બ્રાહ્મણ જ્ઞાતિમા વિખવાદ ઉપસ્થિત કરી સ્માર્ત વૈષ્ણવના ચાલુ ઝઘડાને ઉત્તેજીત કરી, શાસ્ત્રાર્થમા ફલીભૂત થવાય તેમ ન હોવાથી શાસ્ત્રાર્થની ઉપમા આપી, શાસ્ત્રાર્થનો સત્ય પ્રસંગ આવે સરકારનો આશ્રય લઈ મળા બધ કરવી, છાણ નાખ્યાની વાત કે જે વાતનો વૈષ્ણવો બાર વર્ષને ધનકાર કરે છે, તેને છાપામા મોટુ રૂપ આપ્યાથી કજીયો કોર્ટ સુધી ચઢયો છે ભારત વર્ષની ઉન્નતિ કરવાને આ કૃતિ વાચો, વિચારો અને શોકમાં નિમગ્ન થાઓ, અને પ્રભુ પાસે માગો કે કુસંપ કરાવનાર કલિ-પ્રિય મહાજનથી હિંદને હવે દૂર રાખો, અને સંપમા સ્વારથ્ય માનનાર સત્યપ્રિય સાધુ સજ્જ-નોથી તેને અલકૃત કરો ઇતિલમતિવિસ્તરેણ

॥ શ્રીમત્પરમશિવો વિજયતેતમામ્ ॥

શ્રી વૈષ્ણવોદય માર્તંડના સંપાદક શાસ્ત્રી
જેષ્ઠારામ હરજીવન જોશી, હાલ મુકામ પાટણ.

પી તમોને અમો નીચે સહીઓ કરનાર સ્માર્ત પ્રજા આથી જણાવીએ છીએ કે ગોસ્વામી શ્રીદેવકીનદનજી મહારાજની આજ્ઞાનુસાર વૈષ્ણવોદય માર્તંડ નામનું માસીક તમો કાઢો છો તેમા સ્માર્ત પ્રજાની લાગણી દુખાવા જેવા જણીબુજીને કેટલાક ખોટા અને બનાવટી આક્ષેપો દ્વેષબુદ્ધિથી છાપેલા છે અને છાપો છો તેથી શ્રી જગતગુરૂ શારદાપીઠાધીશ્વર મહારાજશ્રીના આગળ નિવેદન કરતા તેઓશ્રીએ આજ્ઞાથી તે તે આક્ષેપોનો સપ્રમાણ પરિહાર પોતાના સ્વારી મુકામ પાટણ નારાયણજીની વાડીમા કરવાનો આરંભ દરરોજ સાજના સાડા પાંચથી સાત સુધી કરવાનો છે માટે તમો કરેલા આક્ષેપ સપ્રમાણ બતાવી આપવા આવશો

તમારા તથા તમારી સાથે આવનાર સભાજીત ગૃહસ્થો પ્રત્યે સરવે પ્રકારે વિવેકથી વર્ત્તન રહેશે છતા આ આપેલ તકનો તમે લાભ લેવા બેદરકાર રહેશો તો તમે સ્માર્ત પ્રજાની લાગણી દુખાવવા જાણી જુજી દ્વેષબુદ્ધિથી અઘટિત આક્ષેપ કરેલો છે અને કરો છો એમ સમજી તેનો જે ચોગ્ય લાગશે તે પ્રમાણે માર્ગ લેઇશું તા ૧૫ માહે સપ્ટેમ્બર સન ૧૯૧૬ ભાદરવા વદી ૭ ને વાર શુક્ર

(સહી) અયાચી મણીશંકર મગનલાલ, સહી દા પોતે.

॥ શ્રીવલ્લભો જયતિતમામ્ ॥

અયાચી મણિશંકર મગનલાલની

નોટિસનો પ્રત્યુત્તર.

અયાચી મણિશંકર મગનલાલ, મુ. પાટણ

તમારો તા૦ ૧૫-૯-૧૧ નો પત્ર મળ્યો તેનો પ્રત્યુત્તર લખવો યોગ્ય નથી કારણકે તે પત્રની શરુઆતમા લખેલુ છે કે "વિ૦ તમોને અમો નીચે સહીઓ કરનાર સ્માર્તપ્રજા આથી જણાવીએ છીએ કે" જ્યારે નીચે સહી ફક્ત તમારીજ છે તેથી તે વદતોવ્યાઘાત સમાન તદ્દન અસત્ય છે જેવી પત્રની શરુઆત અસત્યથી છે તેમજ પત્રની અંદર લખેલી સર્વ બિના પણ અસત્ય છે તમો લખો છો કે "સ્માર્ત પ્રજાની લાગણી દુભાવા જેવા જણી બુઝને કેટલાક ખોટા અને બનાવટ આક્ષેપો દ્વેષ બુદ્ધિથી છાપેલા છે અને છાપો છો" પરતુ અમોએ એક પણ ખોટો આક્ષેપ કર્યો છે તે તમે તમારા પત્રમા બીલકુલ જણાવી શકતા નથી એ અન્યાયીની વાત છે હું સ્પષ્ટ કહુ છુ કે મે કોઈ પણ પ્રજાની લાગણી દુભાવા અસત્ય આક્ષેપો દ્વેષબુદ્ધિથી કર્યા નથી તેમજ મારા લખાણમા જેને (તમને કે તમારા ગુરુને) શકા થતી હોય તેને મારી રુબરુ આવતા મોઢેથી ખુલાસો કરવા તૈયાર છુ તેમજ લેખી ખુલાસો માગતા તે પણ કરવા તૈયાર છુ શારદાપીઠાધીશ્વરની સ્વારી મુકામમા મને બોલાવો છો તે ખરેખર હાસ્યજનક છે કારણકે પ્રથમ તો તમને તે પ્રમાણે આમત્રણ આપવાને અધિકાર છે! તમો કોના તરફથી મને આમત્રણ આપો છો! જેના તરફથી તમો મને આમત્રણ આપો છો તેની વતીની પણ તમે સહી કરી છે? શુ તેઓ સ્વત આમત્રણ કરવાને સમર્થ નથી? શારદાપીઠાધીશ્વરની સ્વારી મુકામમા મારે શા માટે આવવુ જોઇએ? તમને મારા લખાણમા શકા હોય તો તેના પરિહાર સારુ તમારે સ્વત મારી રુબરુ આવવુ જોઇએ હું મારે જે પ્રમાણે શાસ્ત્રદૃષ્ટિયા ધર્મસિદ્ધાત માનુ છુ અને જે હું સિદ્ધ કરવાને મારી બુદ્ધિ અનુસાર સમર્થ છુ તે સિદ્ધાતાનુસાર શારદાપીઠાધીશ્વરની સ્વારીમા મારાથી આવી શકાય નહિ શાસ્ત્રાર્થ કરવો હોય તો મધ્યસ્થ નીમી જે વિષય ઉપર શાસ્ત્રાર્થ કરવો હોય તો તે પ્રથમ નક્કી કરી બન્ને તરફના વક્તા નક્કી કરી બન્નેને અનુકૂલ સ્થાન, તથા દિવસ, અને સમય નક્કી કરો. વસ્તુત હું દ્વેષબુદ્ધિથી કોઇની પણ લાગણી દુખવવા લખાણ કરતો નથી', પરતુ જે સ્વારીમા મને બોલાવો છો જે સ્વારી તરફથી વૈષ્ણવવર્ગની ધાર્મિક લાગણી દુખાય તેવા આક્ષેપો થયા છે અને થાય છે જે મારુ અમદાવાદ, પાટણ, મુબાઇ તથા અન્ય ઘણા સ્થલોએ સભા મળેલી છે તેના ઠરાવ પરથી જણી લેવુ તમો મને "જે યોગ્ય લાગશે તે પ્રમાણે માર્ગ લઇશુ" એમ લખી જે ધમકી આપવા માગો છો, તે ધમકીની હું જરાકે દરકાર કરતો નથી. કારણકે સત્ય હમેશા નિડર છે તેમજ "અભય" એ દૈવી સૃષ્ટિનુ પ્રથમ લક્ષણ છે હવે તમને હું પુછુ છુ કે 'સ્માર્ત પ્રજા' એટલે શુ તેની સખ્યા કેટલી અને તે તરફથી સદરહુ પત્ર લખવાનો તમને શુ અધિકાર છે તે જણાવશો

તા૦ ૨૨-૯-૧૧
ભાદ્રપદ કૃષ્ણ ૭૦ ભૃ-
ગૌ પાટણ

શાસ્ત્રી જ્યેષ્ટારામ હરજીવન જોશી
સહી દ૦ પોતે

ૐ

॥ परम शिवो विजयते तमाम् ॥

નોટિસનો જવાબ.

વૈષ્ણવ માર્તંડ માસિકપત્રના સંપાદક.
જેષ્ટારામ હરજીવન મુ૦ પાટણ.

૧. તમારી તા. ૨૨-૯-૧૧ની છાપેલી નોટીસ પહોંચી, તેમા તમે લખો છો કે " મારા લખાણમા જેને (તમને કે તમારા ગુરુને) શંકા થતી હોય તેને મારી રુબરુ આવતા મોઢેથી ખુલાસો કરવા તૈયાર છું " આ તમારા લખ્યા પ્રમાણે અમે તથા અમારા ગુરુ તમારા રુબરુ ખુલાસા કરવા આવવા તૈયાર છીએ

૨ તમારા જવાબમા છાપેલી સહી છે, તે ગ્રાહ્ય નથી, માટે આમ તમારા હસ્તાક્ષરની સહી કરી લખી મોકલવુ તમારા ખુદ હસ્તાક્ષરની સહી વિનાનો કોઈપણ કાગળ ગ્રાહ્ય થશે નહીં માટે કલરના બદલે લખવુ કે " અદ્દર હમારા હસ્તાક્ષરની સહી છે " તો જ લેવામા આવશે

૩ તમારા બોલાવ્યાથી અમો તથા અમારા ગુરુ તમારા મુકામમા શંકાના ખુલાસા માટે આવવાના છીએ તે વખતે કોઈ પ્રકારે સ્વસ્થતાનો ભંગ થાય અગર અવિનય વર્તન થાય તેનું જોખમ તમારે શીર રહેશે એમ નક્કી સમજવુ

૪ તમે પુછો છો કે વક્તા કોણ ? તેના જવાબમા લખવાનુ કે—" સ્માર્ત ધર્મના મુખ્ય પીઠાચાર્ય, તથા પુષ્ટિમાર્ગના મુખ્ય ગાદીપતિ " એ બે વક્તા

અને વિષય શો છે ? તેનો જવાબ એ છે કે-પુષ્ટિમાર્ગ અવૈદિક છે એમ આક્ષેપ મુકયાનું તમે માનો છો તો તે જ

ન્યાય અને મધ્યસ્થ વિગેરેનુ બને પક્ષના સંભાવિત પંચ મારફતે મુકરર થશે તે

૫. ઉભય પક્ષની પ્રજામા સૌમનસ્ય સંચયાય માટે આ મોખમ જવાબ આપેલો છે, છતા જેમ જેમ તમે ઉદ્ધતાઈથી અપ્રસ્તુત પ્રસંગ લાવશો તો પ્રજામા સ્વાસ્થ્યતાના ભંગ જોખમ તમારે શીર રાખી અમારે સ્પષ્ટીકરણ કરવાની ફરજ રહેશે

૬ તમોએ તમારા માસીકમા ઓજદગુરુ શારદાપીઠાધીશ્વર અહારાજના નામ લઈ પ્રશ્નો પુછેલ છે તેનો ખુલાસો સાંભળવા તમને ત્યારે મુકામ બોલાવ્યા હતા

૭ પ્રથમની નોટીસમાં મારી એકલાની જ સહી છે તોપણ તે સહી દ્વારા સ્માર્ત પ્રજાની અનુમતિથીજ કરેલ છે

૮ આનો ઉત્તર આ પત્ર પહોંચેથી ચોવીસ કલાકની અંદર આપવો, કારણ કે ગુરુસ્થાન અત્રે રોકાણ્યું તે ટલા જ માટે થશે તો અમારા ગુરુને અત્રે રોકવામા દરરોજ પચાસ રુપીઆ ખર્ચ થાય છે,તે દરરોજનો ખર્ચ જેટલા દિવસ રોકાશે તે તમારા ઉપર ચઢશે તે નક્કી સમજવુ. તા ૨૩-૯-૧૧ મીતી સંવત ૧૯૬૭ના આશ્વિન શુકલ ૧ રાનીવારે

સ્માર્તપ્રજાની વતી.

ભટ્ટાચાર્ય માણેકલાલ મગનલાલ સહી. દ. પોતે.

॥ શ્રીવલ્લભો જયતિતમામ ॥

અયાચી મણીશંકર મગનલાલના તા. ૨૩-૯-૧૧ ના

જવાબનો પ્રત્યુત્તર.

તમારી મૂલ નોટિસ તા ૧૫-૯-૧૧ ની આવી તેનો જવાબ અમોએ તા ૨૭-૯-૧૧ ના રોજ મોકલાવ્યો તે ઉપરથી તેના જવાબ તરીકે તમારી તરફથી તા ૨૩-૯-૧૧ નો જવાબ મળ્યો તેથી તેના જવાબમા તમને જણાવવામા આવે છે કે—મૂલ નોટીસમા તમોએ સ્માર્ત પ્રજાની લાગણી દુખાયામબધી હકીકત મે મારા માસિકમા પ્રસિદ્ધ કરી છે એવો આક્ષેપ કરી તેના ખુલાસાની ઇચ્છા ધરાવી હોવાથી ફક્ત તેના ખુલાસા માટે તેનો મે જવાબ આપેલો છે અને તેમા " જે વિષય ઉપર શાસ્ત્રાર્થ કરવો હોય તે " એમ લખી વક્તા મુકરર કરવા મે માગણી કરી છે વિષય મારા કહેવાતા જે લખાણથી તમારી કહેવાતી સ્માર્ત પ્રજાની લાગણી દુખાઇ હશે તે મબધનો જ હોવો જોઇએ એમ સાધારણ સમજનો કોઇપણ મનુષ્ય અનુમાન કરી શકશે. પરંતુ તે ચાલતો વિષય બાજુ ઉપર મૂકી અગર ખોટીરીતે ઉત્પન્ન કરી પાછો કુઢાવી દઇ સમસ્ત વૈષ્ણવોની લાગણી દુખાવવાના હેતુથી ખોટી રીતે પુષ્ટિસપ્રદાયને અવૈદિક ઠરાવવાનો વિષય હાથ ધર્યો છે તેથી તમારી મોટી જવાબદારી ભવિષ્યમા ઉભી થવા સભવ છે અને એ વાત તમારા જાણવામા છે એમ સદર વિષય બતાવવા જે તમે યુક્તિ કરી છે તે સમજાવે છે પણ એ પ્રમાણે કરવાથી તમારી જવાબદારીમા કઇ કચેશપણુ થવાનું નથી વળી સદર વિષય તમે યુક્તિપૂલક બતાવી અટકયા નથી પણ તેની સાથે ગામમા ઢઢેરો પીટાવી દ્વેષબુદ્ધિથી પ્રસિદ્ધ કર્યો છે તેથી કોઇ પણ રીતે તમારો બચાવ થઈ શકે તેમ નથી આ વિષે કાલમા આ ઠેકાણે આટલુજ કહેવુ બસ થશે

તમારા સદર જવાબની ૧ લી કલમમા " આવવા તૈયારછીએ" ત્રીજીમા " આવવાના છીએ " અને ચોથીમા વિષય બતાવી તે ઉપર શાસ્ત્રાર્થ કરવા તૈયારી બતાવો છો આ પ્રમાણે દરેક લખાણ છે તે પરસ્પર વિરોધી હોઈ તેનો ભાવાર્થ સદિગ્ધ છે તેમજ મૂળ નોટીસમા ખોટા અને બનાવટી આક્ષેપો છાપ્યા છે તથા છાપવા ચાલુ રાખી સ્માર્ત પ્રજાની લાગણી દુખાવી છે તે આક્ષેપો સપ્રમાણ બતાવી આપવા માગણી કર્યાનું લખાણ છે અને હવે લખો છો કે તમારા પ્રશ્નોનો ખુલાસો સાંભળવા બોલાવ્યા હતા આ બંને લખાણ કેવા પરસ્પર વિરુદ્ધ છે તેનો સુજ્ઞ પુરુષોએ વિચાર કરવાનો છે અતલબકે આ ઉપરથી કેવળ ખોટા ભને ત્રાસ કરવાના હેતુથી મારા ઉપર હલ્લો કરવામા આવ્યો છે એમ સિદ્ધ થાય છે અને હવે પછી તેનો વ્યાજબી નિકાલ થશે જે પ્રશ્નોના ખુલાસો સાભળવા મને સ્વારી મુકામે બોલાવ્યો હતો એવુ તમે લખ્યુ છે પણ તે પ્રશ્નો "આમ્નાય તત્વતરગિણી" એ નામની ચોપડી શારદાપીઠાધીશ્વરના ખુલ્લા નામ સાથે પ્રસિદ્ધ થઈ હતી તેથીજ મે ભાગ માસિકમા ખુલ્લા નામ સાથે પૂછ્યા હતા અને તે લેખી હોવાથી તેનો લેખી ખુલાસો કરવા ફરેજ છતા મને સ્વારી મુકામે ખુલાસો સાભળવા બોલાવ્યો એ કેવળ આડગરરૂપ છે અર્થાત્ સદર પ્રશ્નોનો લેખી ખુલાસો આપવાથીજ સતોષ થશે

તમારા સદર જવાબની પાચમી કલમના ખુલાસામા લખવાનુ કે તમારી મૂળ નોટિસના પ્રત્યુત્તરમા મે માત્ર મારા માસિકમા તમારા કહેવા પ્રમાણે ખોટા અને બનાવટી આક્ષેપો કર્યા નથી તે માટે શાસ્ત્રાર્થ કરવાનું સૂચવ્યું હતુ તે તમારી મૂળ નોટિસ ને યોગ્ય હતુ પરતુ "પુષ્ટિમાર્ગ અવૈદિક છે" એવો અપ્રાસગીક વિષય તમે પોતે ઉભો કર્યો છે સબબ અપ્રસ્તુત પ્રસગ ઉભો

કરી પ્રજામા વૈમનસ્ય ઉત્પન્ન કરવાની પહેલ કરનાર તરીકે તમે જ જવાબદાર થયા છો એ નકકી સમજવુ.

જે વિષય બતાવી તે ઉપર બન્ને પક્ષના વકતા કોણ તે તમે પોતે જણાવેા છેા પરતુ તે સબધમા કહેવાનુ કે તમે બતાવેલા વિષય માટે પુષ્ટિમાર્ગ અવૈદિક છે એમ સ્પષ્ટ રીતે તમેા કહેવા તૈયાર હશેા તેા તેવા શબ્દેામા એ વિષય તમારે જણાવવેા સુગમ થશે તેમજ તમે બતાવેલા વકતા એાધમ હેાવાથી તે મારા સમજવામા આવતા નથી માટે તમારા તરફના વકતાનુ નામ તેમની લેખી કબુલાત સાથે જણાવેા એટલે તે પછી મારા તરફના વકતાનુ નામ તેમની લેખી કબુલાત સાથે હુંબહાર પાડીશ. કારણકે મારા તરફના વકતા નિમવાનેા અધિકાર તમને નહી છતા મને છે માટે એ પ્રમાણે તજવીજ કરી મને ખબર આપવી

તમારા લખવા પ્રમાણે શાસ્ત્રાર્થ કરવા હુ તૈયાર છું એટલા માટે મૈં સભાનું સ્થાન મુંબઈનુ તથા સભાના પ્રમુખ તરિકે શ્રીમાન્ પ્રેાફેસર ભાંડારકર નકકી કરેલ છે તે કબુલ રાખી જણાવવું

છેવટે એવી સુચના આપવાની જરૂર છે કે શાસ્ત્રાર્થ કરવા જેવી મેાટી અને મહત્વની બાબતના જવાબ માટે ચેાવીસ કલાકની મુદત આપવી તેનેા અર્થ કેવળ આડંબર માત્ર છે એમ થઈ શકે હવેથી એવેા કુક સમય જણાવવેા નહિ તેમ જ મારે તમારી માફે વાદ હેાવા છતા તમારા ગુરુના ખરચની માગણી કરેા છેા તે કોઈ પણ રીતે વ્યાજબી નહિ છતા અપ્રાસંગીક છે માટે તે માગણી પાછી ખેંચી લેવી

તારીખ ૨૬-૯-૧૧ સ૦ ૧૯૬૭ આશ્વિન શુકલ ૪ગણ

શ્રી વલ્લભદાસાનુદાસ

શાસ્ત્રી જ્યેષ્ઠારામ હરજીવન જોશી, સહી દ૦ પોતે.

ૐ

॥ परमशिवो विजयते तमाम् ॥

પ્રત્યુત્તરનેા ઉત્તર.

જ્યેષ્ઠારામ હરજીવન વૈષ્ણવ ભાર્ગવના

સંપાદક મુ. પાટણ.

તમારેા તા. ૨૩ સપ્ટેંબર સન ૧૯૧૧ નેા પત્ર તા ૨૬ વાર ૪ગળના રેાજ માજના ચાર વાગે અમને પહેાચ્યેા છે તેના પ્રત્યુત્તરમા લખવાનુ કે—

૧. તમારી તા ૨૨ ની છપેલી નેાટિસમાં જે જે માગણી તમેાએ કરી છે એ તમામના કબુલાપત જવાબ અમારી તા. ૨૩ ની નેાટિસમા આપેલા છે. ફકત છપેલી નેાટિસ નીચે તમારા હસ્તાક્ષરની સહી માગેલી છે તેા એટલું જ કરવુ બસ હતુ છતા એક આખેા પુલસકેપ કાગળ બગાડયેા છે તે અવ્યવહારે હેાવાથી કાશકુશાવલબન છે, માટે અમારે સ્વીકાર નથી

૨. વળી તમારા તા ૨૩ ના લખેલ પત્રમા તમેા લખેા છેા કે "તમારા લખ્યા પ્રમાણે શાસ્ત્રાર્થ કરવા હુ તૈયાર છુ" તેા એ લેખથી અમારી તા. ૨૩ મા લખેલી નેાટિસમાં વિષય,

વકીલતા, અને ઉભય પક્ષના પંચ મારફતે મધ્યસ્થ, કથાળા, વિગેરે નક્કી કરવા અમારા લેખ છે, તે તમોએ પૂર્ણરીતે સ્વીકારેલ છે એમ ન હોત તો "તમારા લખ્યા પ્રમાણે" એવો શબ્દપ્રયોગ જ નહિ થઈ શકે

૩ તમોએ તા ૨૨ ની છાપી પ્રસિદ્ધ કરેલી નોટિસમા અમારા પૂજ્યપાદ ગુરુશ્રીને શંકા સમાધાનને માટે તમારા રુબરુ બોલાવેલ છે, તો તે તારીખથી જ્યાં સુધી તેઓશ્રીનું અત્રે રોકાણ થશે ત્યા સુધી તેઓશ્રીનુ ખર્ચ અમારી તા ૧૩ ની નોટિસમા લખ્યા મુજબ તમારા શિરે ચઢે છે, એ બાબત અમો પાછી ખેંચી લેતા નથી એ તમારે નક્કી સમજવુ

૪. એટલું જ નહિ પરતુ અમારી તા ૧૫ ની નોટિસમા શાસ્ત્રાર્થનો, શંકા સમાધાનનો, અને તમારા ગુરુનો કોઈ પણ પ્રકારે સબંધ નહિ છતા શાસ્ત્રાર્થ વિગેરેનો આડંબર તમોએ ઉભો કરેલ છે, તો બન્ને પક્ષના ખર્ચનો બોજો તમારે શિર છે, એમ આથી નક્કી સમજવું

૫ માટે તમારી તા ૨૨ ની છપેલી નોટિસમા રીતસર તમારી સહી કરી મોકલવી, જેથી અમારી તા ૨૩ ની નોટિસ પ્રમાણે વ્યવસ્થા કરતા અડચણ દૂર થાય.

૬ અમારી તા ૨૩ ની નોટિસમા સમસ્ત વૈષ્ણવ એવા શબ્દો છે જ નહિ છતા સમસ્ત વૈષ્ણવની લાગણી દુ ખાવાનો તમોએ જ આક્ષેપ મુક્યો છે, તે તદ્દન ખોટુ છે વાસ્તવરીતે પુષ્ટીમાર્ગીય સમસ્ત વૈષ્ણવની લાગણી દુ ખાય એવા શબ્દ જે તમોએ તમારી નોટિસના મથાળે વાપર્યા છે, એવા શબ્દ અમે કદી વાપરીયે નહિ અને તેનો અર્થ જો પુષ્ટીમાર્ગીયો જાણતા હોત તો તમારી માફે તેઓ કોઈ પણ પ્રકારનો સબંધ રાખત નહિ

૭ તમોએ પ્રથમ અમારા પૂજ્યપાદ જગદ્ગુરુશ્રીની અવજ્ઞા કરનારા શબ્દો સાથેની નોટિસ છાપી-શહેરમા પ્રસિદ્ધ કરી અમારી જ્ઞાતે પ્રજાની લાગણી ઉશ્કેરાવી તેના શમનાર્થે જ અમારે તમારે પગલે પગલુ ભરવુ પડ્યુ છે તેમા કાઈ નોખમ હશે તો તે તમારે જ શિર છે એમ નક્કી સમજવુ તા ૨૭ સપ્ટેંબર સન ૧૯૧૧ મીતી આશ્વિન શુદ્ધ ૫ બુધવાર

સ્માર્તપ્રજાની વતી,

અયાચી. મણિશંકર મગનલાલ,

સહી ૯૦ પોતે.

ઉત્તરનો પ્રત્યુત્તર.

તમોએ મારાપર પ્રથમ તા ૧૫-૯-૧૧ ની નોટીસ કરી તેનો મે તા ૨૨-૯-૧૧ ને દીવસે સ્પષ્ટ જવાબ આપ્યો જેનો સંરલ પ્રત્યુત્તર બાજુએ મૂકી વિતંડાવાદ ઉભો કરી વૈષ્ણવ વર્ગની તમો લાગણી જણીબુજીને દ્વેષબુદ્ધિથી દુ ખવવા તમારા પત્રમા વારવાર તમારા ગુરુને ઉદ્દેશીને લખ્યુ છે તેથી તમારા ગુરુની સમતિથી શહેરમા ઢંઢેરો પીટાવી મારા જવાબનો અસબદ્ધ અને ઉડાઉ જવાબ આપ્યો છે જેથી કરીને મને તેનો લખાણુ ખુલાસાવાર જવાબ આપવાની જરૂર પડી તેનો તમારો તા ૨૭-૯-૧૧ નો પણ તમારા તા ૨૩-૯-૧૧ ના પત્ર સમાન પાછો અસબદ્ધ અને ઉડાઉ જવાબ મળ્યો છે તો તેના છેવટના પ્રત્યુત્તરમા લખવાનુ કે-

૧ તમો લખો છો કે 'તે અવ્યવહાર હોવાથી કાશકુશાવલબન છે માટે અમારે સ્વીકાર નથી એ શુદ્ધભાષામા લખાયલું છે કે કેમ તેનો વિચાર અત્ર બાજુએ મુકી ફક્ત એટલુજ કહેવુ બસ ચર્શે કે 'નાચનારીના પગ વાકા ત્યારે કહેશે કે આગણું વાકુ ' તે ન્યાયે શાસ્ત્રાર્થ કરવાનુ તમારું કે તમારા કહેવાતા ગુરુનુ સામર્થ્ય ન હોવાથી "અમારે સ્વીકાર નથી" એમ કહી છટકી જવાની યુક્તિ પકડી છે પણ તેમ છટકી જવાશે નહિ.

૨. તમો સ્મર્ત પ્રશ્નની વતીની સહી કરો છો. તેમજ તમો લખોછો તેમાં તમો તમારા ગુરુની સમતિ છે તે સ્પષ્ટ મને જણાવીને તથા મને તેની સપૂર્ણ ખાત્રી કરી આપીને પ્રશ્નની અનુમતિ અને તમારા ગુરુની સહી મીક્ષા સાથેની સમતિ રજુ કરવાની તમોને આવશ્યકતા છે તે તમો રજુ કરતા નથી તેથી એમ લાગે છે કે તમારુ લખાણ કેવળ મનસ્વી છે

૩. તમો તમારા તા ૨૭–૯–૧૧ ના જવાબના બીજા પેરામા 'તમારા લખ્યા પ્રમાણે શાસ્ત્રાર્થ કરવા હું તૈયાર છુ' તેટલું મારા જવાબમાથી બડ વાક્ય લઈ પૂર્વાપરનું અનુસધાન કર્યા વિના જે ટીકા કરી છે તે બિલકુલ ટકી શકતી નથી

૪ તમોને તથા તમારા લખવા મુજબ તમારા ગુરુને મે સ્મર્ત પ્રશ્નની લાગણી દુ ખ.-વવા દ્વેષબુદ્ધિથી ખોટા અને બનાવટી આક્ષેપ કર્યા છે એમ લાગ્યુ જેથી તમોએ મારાપર૨ા નોટીસ કરી તથા તેને સપ્રમાણ બતાવી આપવા તમારા ગુરુના સ્વારી મુકામે આવવાને નિ-મત્રણ કર્યું તેનો સીધો અને સ્પષ્ટ જવાબ મેં તા ૨૨–૯–૧૧ ના પત્રમાં આપી તમો લખો છો. તેવો કોઈપણ આક્ષેપ મે કર્યો નથી છતાં તમો તથા તમારા ગુરુ તેવા આક્ષેપો થયાનું માનતા હો તો તે બાબતની મેં મારી રાકા સમાધાન કરવાની ઉત્કટ્ટા તથા તૈયારી બાબતની રીતે બતાવી, તમારા ગુરુને મેં રોક્યા નથી અને રોકતો પણ નથી તેમને અત્ર રહેવું હોય તો ભલે રહે નહિ તો તેમની મરજી વળી તમોએ લખ્યુ હતુ કે 'અમો તથા અમારા ગુરુ તમારા રુબરુ ખુલાસા કરવા આવવા તૈયાર છીએ' પણ કયારે અને કઇ બાબતનો તેતો જણાવતા નથી અને પછીથી છેવટના જવાબમા 'અમોને સ્વીકાર નથી' કરી તમારી બધી કબુલાતોમાંથી ખસી જવાની બાજી રચી છે એ સ્પષ્ટ છે તમારા ગુરુના ધર્મ માટે મને જે વારવાર લખો છે તે તદન હાસ્યાસ્પદ છે એ નિર્વિવાદ છે

૫ મારા તરફથી આજરોજ સધ્યા સમયે તમારા આવા પ્રકારના પત્રવ્યવહારને લઇને અત્ર લાલવાડીમા જાહેર સભા કરવામા આવનાર છે તો તે સમયે તમારા તરફથી આવનાર મનુષ્યો તરફથી કોઈપણ પ્રકારનો સુક્ષેહનો કે વિવેકની મર્યાદાનો ભગ નહિ થાય તેવી મને પૂર્ણ ખાત્રી આપવી તમને તથા તમારા ગુરુને મારી પાસેથી જે ખુલાસો માગવાની ઇચ્છા હોય તે મને પ્રથમથી લેખી જણાવી ઉક્ત સમયે અને સ્થળે ઉપસ્થિત રહેવુ જેથી જનસમાજની સમક્ષ જાહેરમા સર્વ ખુલાસો થઈ જાય પરતુ તમો તે સમયે અને તે સ્થળે ઉક્ત બાબતસર કરી આવશો નહી તો તમારી અને તમારા ગુરુની ઇચ્છા સત્ય ખુલાસો મેળવવા નથી પણ મને જાણી જોઈને પ્રજાજન આગળ હલકો પાડવાની તથા હેરાન કરવાની છે એમ સ્પષ્ટ થશે અને તે બાબતના તમારા ઉપર મને સલાહ મળશે તેના પગલાં તમારા ખરચે અને જોખમે લેવામા આવશે અને આ સર્વ પરિણામના જવાબદાર તમે થશો

૬ મારા આક્ષેપથી જે વિષય ઉત્પન્ન થાય તત્સબધી સ્પષ્ટ ખુલાસો આ શાસ્ત્રાર્થ કરવામા આવશે એટલુજ નહિ પણ તમો તમારા દરેક પત્રના મથાળે परमशिवो विजयतेतमाम् । એમ લખો છો જે ઉપરથી સિદ્ધ થાય છે કે તમો શૈવમતના અનુયાયી હોવા જોઇએ અને તેથી તમારા ગુરુ શ્રીકણ્ઠ યા નીલકણ્ઠ સ્થાપિત શૈવ માર્ગના હોવા જોઇએ પરતુ તમો તમારા ગુરુ શ્રીજગદ્ગુરુ શારદાપીઠાધીશ્વર શકરાચાર્યને બતાવો છો અને તમારા લખ્યા પ્રમાણે તેઓના કહેવા અનુસા તમો લખો છો એટલે તેઓ તમારા ગુરુ હોવાનું કબુલ રાખે છે તો આદિ શકરાચાર્યનું બાષ્ય તમને અને તમારા ગુરુને માન્ય છે કે નહિ? અને માન્ય હોય તો તેની તમને કે તમારા ગુરુને માહિતી હશે કે નહિ તે અત્યંત શકાસ્પદ છે કારણ કે શૈવમતનું અથવા પાશુપત મત અનુસરન "पत्युरसामञ्जस्यात्." એ વ્યાસ સૂત્ર અધ્યાય બીજાના બીજા પાદના સાતમા અધિકરણન

ભાષ્યમાં શંકરાચાર્યે કરેલું છે આથી વલી શાંકર સિદ્ધાંત પ્રમાણે શિવતો આવિર્ઘક છે અને તમો બ્રહ્મને પરમ શિવ માનતા હોતો તે તો તદ્દન નિર્વિશેષ અને અક્રિય હોવાથી 'વિજયતે તમારૂ કહી શકાય નહિ અને એમ કહેવાથી શાંકર મતનું તમારા પોતાના જ હાથે ખંડન થઈ જાય છે તમારા પત્ર ઉપરથી જ તમને તથા તમારા ગુરુની તેમાં તમારા લખવા પ્રમાણે સમતિ હોય તો તેમને પણ પોતાના મૂલ સિદ્ધાંતની ખબર જ નથી એ સ્પષ્ટ થાય છે અને શાસ્ત્રાર્થ કરવાની યોગ્યતા તમારી કે તમારા ગુરુની સ્વસિદ્ધાંતના અજ્ઞાનને લઈને રહી શકિત નથી તો તમારો અને તમારા ગુરુની તે બાબતની યોગ્યતા છે અને શાંકરમત પ્રમાણે વાસ્તવિક રીતે તમો લખો છો તેવું બથાણું થઈ શકે છે તે પણ ઉક્ત રથલે અને સમયે આવીને સિદ્ધ કરો તેમાં ઉપર પ્રમાણે આવવા બે દરકાર રહેશો કે સિદ્ધ નહિ કરો તો તમારો તથા તમારા ગુરુનો તે બાબતમા પરાજય પ્રસિદ્ધ કરવામા આવશે

૭ આ શાસ્ત્રાર્થ કે શંકા સમાધાનની આપત્તિ તમોને કે તમારા ગુરુને આવી પડી હોય તો તે તમારી તમારા ગુરુની સમતિ સહુની નોટીસથીજ આવેલી છે માટે તે બાબતના સર્વ અર્થના અને તેથી આવતા સર્વ પરિણામના તમો તથા તમારા ગુરુ જવાબદાર છો એ સ્પષ્ટ છે.

૮ તમો લખો છો કે અમારી તા૦ ૨૩ ની નોટીસમા સમસ્ત વૈષ્ણવ એવા શબ્દ છે જ નહિ છતા સમસ્ત વૈષ્ણવની લાગણી દુખાવાનો તમોએ જે આક્ષેપ મુકયો છે તે તદ્દન ખોટું છે તેના જવાબમાં લખવાનું કે હું તે શબ્દો તમારી નોટીસમા છે તેમા કહેતો નથી પરતુ તમોએ શહેરમા કાંઇ પણ જરૂર ન હોવા છતા જાહેર ઢંઢેરો પીટાવી જે બિના પ્રકટ કરી હતી તેથી અત્યંત સમસ્ત વૈષ્ણવોની લાગણી દુખાઇ હતી અને લાગણી દુખાવવાના દુષ્ટ હેતુથી જ એ પ્રમાણે હકીકતથી પ્રસિદ્ધ કરવામા આવી હતી જેથી તેને માટે પણ તમારા ઉપર અને તેમા તમને મદદ કરનારા ઉપર યોગ્ય ધસારજ લેવામા આવનાર છે

૯ મારી સામી વૈષ્ણવ લાગણી ઉશ્કી કરવાને પણ તમોએ પેરા છમા જે આગલ વાત લખી છે તેથી તમો બિલકુલ ફાવવાના નથી

૧૦ તમો મારી તા૦ ૨૨-૯-૧૧ની નોટીસમા સહી માગો છો તે નોટીસ મે મારા જવાબમા કબુલ રાખી છે તો તમારે જે બ્યવસ્થા કરી મારી સામે પગલા લેવા હોય તો તે ખુશેથી હું મારો બચાવ તમારા ખર્ચે અને જોખમે કરવાને તૈયાર છુ તમારી છેવટની ધમકી માટે મેં પ્રથમ જણાવ્યુ છે તેમ સત્ય નિકર છે એટલાથી જ સમજી લેવુ

૧૧ આ પત્રવ્યવહાર તમારો મારી સાથે ચાલે છે માટે તે બાબતમા પુષ્ટિમાર્ગના ગાદીપતિ વકતા હોય એવા છટકી જવાના બહાના આગળ મુકવાની કાંઇ પણ જરૂર નથી અને તેમા તેઓશ્રીનુ નામ પણ લેવાની જરુર નથી

૧૨ આ પત્રનો તમારો સીધો અને સ્પષ્ટ જવાબ તમોને સ્માર્ત પ્રશ્ન તરફથી અનુમતિ છે તેના પુરાવા સાથે તથા તમારા ગુરુની સમતિ છે તે બતાવનાર તમારા ગુરુના સહી શીક્કા સાથેના તથા પ્રમાણ પત્ર સાથે નહિ આવે તો તે પર કોઈ પણ પ્રકારનુ ધ્યાન આપવામા આવશે નહિ

તા૦ ૧-૧૦-૧૧ અશ્વિન શુકલ ૯ ભાનો

શાસ્ત્રી ગંગેશ્વરામ હરજીવન જોશી, સહી દ૦ પોતે

॥ પરમશિવો વિજયતે તમામ ॥

વૈષ્ણવ માર્તંડના સંપાદક જેષ્ટારામ હરજીવન જોશી.

તમારી લખેલી નોટીસ હાથો હાથ બાર ઉપર એક વાગે આજ રોજ મલી અને આજ રોજ તમે અમને તથા અમારા પૂજ્યપાદ ગુરુશ્રીને શાસ્ત્રાર્થ માટે લાલબાડીમાં સંધ્યાકાલ

વખતે બોલાવ્યા છે તે વખત બહુજ દુકાે છે તોપણ નીચેના નિયમ પ્રમાણે કબુલાત રાખી લખી મોકલવાથી આવવા તૈયાર છીએ

(૧) જે માણસ પોતાને ઘેર શાસ્ત્રના વાદવિવાદ સારુ બીજાને બોલાવે તો મુબેહનો ભગ બોલાવનારને શીર છે એમ સમસ્ત લોક જણે છે અને કાયદાનો નિયમ પણ તેમજ છે

(૨) તમારા આમત્રણથી અમારા પૂજ્યપાદ ગુરુશ્રી પધારવાના છે માટે નીચે પ્રમાણે સૂચના કરવામા આવે છે તે પ્રમાણે સવડ રાખવી

(૧) પૂજ્યપાદ આચાર્યશ્રીની બેઠકની વ્યવસ્થા પૃથક્ રહેશે ને ઇતર માણસનો સ્પર્શ સ્પર્શ થવો જોઇએ નહી

(૨) બ્રાહ્મણ વર્ગની બેઠક દલિયદી રહેશે

(૩) ઇતર વર્ગની બેઠક સ્પર્શ વગર પૃથક રહેવી જોઇએ ને તેનુ કપાઉન્ડ પણ જુદુ રહેવુ જોઇએ, કે જેથી કીચ્આ કપાઉન્ડમાથી મુબેહનો ભગ થાય છે તે જણાઈ આવે

(૪) સભામા બ્રાહ્મણ સિવાય કોઇથી પણ ભાષણ કરાશે નહી કારણ કે વેદિકાંદિકના વીશેનો સવાદ છે તેમા એ બાબત બ્રાહ્મણ શિવાય બીજાનો અધિકાર નથી

(૫)પ્રત્યપાદજગદ્ગુરુ ગુરૂશ્રીની સ્વારી તમારા આમત્રણથી લાલવાડીમા આવાની છે તે વખતે કોઇપણ ગેરવર્તન કરશે તથા મુબેહનો ભગ થશે એ તમામનું જોખમ તમારે પોતાને શીર છે એમ સમજવુ

(૬) એક માણસ બોલતી વખતે વચમાં કાઈ પણ માણસથી સવાદ થઈ શકશે નહી

(૭) જે કોઈ બ્રાહ્મણ વક્તા ઊભો થશે તેને અમુક ધર્મ અને અમુક આચાર્યની વતી વક્તા તરીકે તે હાજર થાય છે તેવી તેણે લેખી કબુલાત આપ્યા શિવાય કોઇને બોલવા દેવામા આવશે નહી

(૮) તમારા તરફથી જે કોઈ શાસ્ત્રી બોલવાને ઉભો થશે તેનો પરાજય થશે તો તમારી અને સમસ્ત પુષ્ટિમાર્ગીઓની એમ બન્ને પક્ષની હાર થઈ એમ સમજવુ

(૯) આ નિયમ વિરુદ્ધ કોઇ વર્તન કરશે તેને પોલીસની મારફત સભામાથી બાહાર કાઢવામા આવશે

(૧૦) "તમારા તરફથી લખાઈ આવેલા કલમવાર નિયમો અમારે કબૂલ છે એમ તમારી સહીથી આવેલ માણસ સાથે મોકલવુ.

(૧૧) ઉપર પ્રમાણેના નિયમ કબૂલાતમા લખ્યા પ્રમાણે તમે કબૂલ ન રાખો તો જાણી જુઈને સ્માર્ત વર્ણવ પ્રજામા સ્વસ્થતાનો તમે ભગ કરો છો, એટલા માટે અમારા પૂજ્યપાદ ગુરુશ્રીનુ રોકાણ થયુ છે, ને તેનુ જે ખરચ થશે તે તમામનું જોખમ તમારે શિર છે

(૧૨) તમો લખો છો કે "સ્માર્ત પ્રજાની સમતિથી સહી કરી છે કે નહિ?" તે પૂછવાનો અધિકાર તમારો નથી, સ્માર્ત પ્રજાનો છે

(૧૩) તમારા પુષ્ટિમાર્ગના સહી સીક્કાથી લખાઇ આવશે તો અમ તરફથી પણ અમારા પૂજ્યપાદ ગુરુશ્રીના સિક્કા સહીથી લખાણ મળશે

તા ૧ ઓક્ટોબર
સને ૧૯૧૧

સ્માર્ત પ્રજાવતી,
અયાચી મણિશંકર મગનલાલ,
સહી દા પોતે

અયાચી મણિશંકર.

તમારો પત્ર નિયમોનો મળ્યોછે તેનો જવાબ વિગતવાર લખી મોકલ્યુ છુ તેથી ઉતાવળ કરીને તમો તથા તમારા ગુરુશ્રીલાલવાડીમા ન જતા કારણ તમારા નિયમો આપ્યાથી તમારા તરફ ખુલાસો લખી મોકલવાની જરૂર જણાઇ છે તેથી સમય લાગશે માટે અમારા ખુલાસા બાદ તમારે લાલવાડીમા આવવાનુ છે

શાસ્ત્રી જ્યેષ્ઠારામ હરજીવન, સહી દા. પોતે

अक्षरार्थ.

अभेदादनुपाधित्वाज्जगद्प्रत्ययास्पितः ।
सर्वाधारत्वतस्तावच्छक्तित्वान्नास्य बाधनम् ॥

સિ૦—અત્ર ઉત્તર આપીએ છીએ.

(સોપાધિ બ્રહ્મ હોય તો) જગતનો પ્રત્યય થાય નહિ તેથી (બ્રહ્મ) ઉપાધિરહિત છે તેથી (સવિશેષ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મના) અભેદને લીધે, (બ્રહ્મ) વિરુદ્ધધર્માધાર સાધકશક્તિયુક્ત હોવાથી સર્વાધાર છે તેથી, સવિશેષત્વનો બાધ થતો નથી

અત્ર મિથ્યાવાદીને પૂછવું કે જગત્કર્તૃત્વ ઈશિતૃત્વ વિગેરેથી વિશિષ્ટ (બ્રહ્મ) અને નિર્વિશેષ (બ્રહ્મ) નો ભેદ અંગીકાર કરે છે કે અભેદ? ભેદ અંગીકાર કરતો હોય તો તે (ભેદ) તાત્ત્વિક કે અતાત્ત્વિક? પ્રથમ પક્ષ—(તાત્ત્વિક ભેદ) 'सर्वत्र प्रसिद्धोपदेशात्' અધિકરણથી વિરુદ્ધ હોવાથી સંભવિત નથી 'વેદાન્તમાં સર્વત્ર પ્રસિદ્ધ બ્રહ્મનો જ ઉપાસ્ય તરીકે ઉપદેશ હોવાથી, મનોમયત્વ વિગેરે વિષય-વાક્યમાં વર્ણવેલા ધર્મથી વિશિષ્ટ બ્રહ્મ જ આ વાક્યનો વિષય છે' એવો આનો અર્થ છે, આ સર્વ વ્યાસસૂત્રભાષ્યમાં પિતૃચરણે વિસ્તારથી લખેલું હોવાથી અત્ર વિસ્તારની ભીતિથી લખતા નથી વળી, જો એમ (સવિશેષ અને નિર્વિશેષનો તાત્ત્વિક ભેદ) હોય તો જીવમાં વિશેષ તેમ થાય તેથી 'તે તું છે' ઇ અભેદ બોધક શ્રુતિનો વિરોધ થાય, અને બ્રહ્મ અનેક થવાથી 'તે એક જ છે' ઇત્યાદિ શ્રુતિનો વિરોધ થાય વળી તેમ તમે (પૂર્વપક્ષી) અંગીકાર કરતા નથી. જે એમ અંગીકાર કરે છે તેમનો મત વેદાન્તમા એવી (જીવ બ્રહ્મના અભેદની) ભાવના માત્ર છે, પરન્તુ વસ્તુ જ એમ છે એમ નથી' એમ તેનો આગળ નિરાસ કર-વામાં આવશે. દ્વિતીય પક્ષ—(સવિશેષ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મનો અતાત્ત્વિકભેદ) પણ ઉચિત નથી, કારણ કે તેમાં ઘટાદિ પદાર્થથી જેમ આકાશનો ભેદ થાય તેમ ઉપાધિથી થએલો ભેદ જ સંભવે છે પ્રકૃત વિષયમાં એવી ઉપાધિ કઇ છે? તે પણ અનાદિ છે કે સાદિ એ પણ વિચાર કરવાનુ છે 'અવિદ્યા જ ઉપાધિ છે અને તે અનાદિ છે' એ પક્ષ યોગ્ય નથી, કારણ કે ઉભય અનાદિ હોવાથી, ઉપ-હિત પણ અનાદિ હોવાથી, અને તે જ તમારા મતમાં કર્તા હોવાથી, હમેશ સર્ગ થાય, પરતુ પ્રલય કદાપિ થાય જ નહિ, કારણ કે શ્રુતિમાં ઈચ્છા વિશિષ્ટ બ્રહ્મને જ કારણ કહેલુ છે તથી બીજા કોઈ કારણની અપેક્ષા રહેતી નથી. સ્મૃતિમતનુ અવલમ્બન કરી ગુણની અપેક્ષા છે એમ કહેશો તોપણ ગુણનો અમુક અનુક્રમે આવિર્ભાવ થવાનું કારણ

અવશ્ય કહેવુ પડશે. તે કારણ બ્રહ્મની તેવી ઇચ્છા જ કહેવી પડશે. આમ છે ત્યારે 'નેતુ કારણ જ કારણ' એ ન્યાયથી ઇચ્છા જ કારણ કહેા, ગુણની જરૂર નથી. તમારા મતમાં એમ પણ કહી નહિ શકાય. ઉપહિતની ઇચ્છાના ક્રમમાં હેતુની અપેક્ષા હેાવાથી, તે ઉપાધિને અધીન હેાવાથી, તેના ગુણ જ ઇચ્છાના પણ કારણ તરીકે કહેવા જોઇશે. ગુણના ક્રમનુ કારણ તેનેા એવેા સ્વભાવ જ કહેવું પડશે. તેથી એવા સ્વભાવવિશિષ્ટ ગુણને જ કારણ કહેા, તેને આધીન બ્રહ્મની જરૂર નથી, એ પ્રમાણે અનીશ્વરવાદ થશે. 'સૌમ્ય આ પ્રથમ સત્ જ હતું' એ શ્રુતિનેા વિરેાધ થશે, કારણ કે 'જ' શબ્દથી સત્ બ્રહ્મ સિવાય બીજાનેા વ્યવચ્છેદ થાયછે.—કાલવાચક 'પ્રથમ' શબ્દથી તેનું પણ કથન હેાવાથી, 'જ' શબ્દથી અન્યનેા વ્યવચ્છેદ થતેા નથી, પરન્તુ તે સમયે પણ બ્રહ્મ હતું જ એમ (બ્રહ્મના) અયેાગનેા વ્યવચ્છેદ થાયછે—એમ નહિ એમ તેા ('પ્રથમ' શબ્દ તેા) માત્ર બેાધ થાય માટે જ કહેલેા છે. નહિ તેા 'તેણે જોયું તેા પેાતાથી બીજા કેાઇને જોયેા નહિ' એ શ્રુતિનેા વિરેાધ થાય. એ શ્રુતિનેા અનુરેાધ કરવા અને 'પ્રથમ' શબ્દ હેાવાથી, કાલ પણ બ્રહ્મ જ છે એમ જો ધારેા તેા અમે પણ એમ કહીએ છીએ. તેથી જ 'કાલ છું' 'કાલરૂપે અવતરેલેા' ઇત્યાદિ ભગવદ્વાક્ય છે. વળી આ (શ્રુતિથી) જ ઉપક્રમ કરી 'સૌમ્ય આ પ્રજાનું મૂલ સત્ છે, સત્માં રહે છે, અને સત્માં તેની પ્રતિષ્ઠા છે' ઇત્યાદિ શ્રુતિઓ સત્-નુંજ કર્તૃત્વ વર્ણવેછે. વળી, તમારા મતમાં ઉપહિત (બ્રહ્મ) ઉપાધિને અધીન હેાવાથી સ્વતન્ત્ર નથી, તેથી કર્તા થઈ શકે નહિ. જો કદાપિ કેાઈ કર્તા થાય તેા ઘટક્રિયાની પેઠે ઉપાધિ જ કર્તા થાય, પરન્તુ ઉપહિત કર્તા થાય નહિ.—એમ ભલે થાય,—એમ કહેવુ યેાગ્ય નથી; કારણ કે તેથી 'જેમાંથી આ ભૂતેા' 'સૌમ્ય આ પ્રજાનુ સત્ જ મૂલ છે' 'અરે આનન્દમાંથીજ આ ભૂતેા ઉત્પન્ન થાયછે' વિગેરે, 'હું સર્વનેા પ્રભવ છું વિગેરે' 'આના જન્મ વિગેરે જેમાંથી' ઇત્યાદિ શ્રુતિસ્મૃતિ અને ન્યાયનેા કેાપ થાયછે —આ સર્વત્ર ઉપચાર જ છે—એમ પણ કહેવાય નહિ, કારણ કે (અત્ર) મુખ્ય (અર્થનેા) બાધ થતેા નથી, અને મુખ્ય સભવે ત્યાંસુધી એવી કલ્પના કરવી અયેાગ્ય છે. તેથી જ વ્યાસજીએ 'ગૌણ (કહેા) તેા નહિ, કારણ કે આત્મશબ્દ છે' એ સૂત્ર યેાજ્યું છે શ્રુતિમાં આત્મ-શબ્દ પણ ઉપચારથી ઉપાધિ માટે જ યેાજ્યેા છે એવી શકા થાય તેથી 'તેમાં નિષ્ઠ હેાય તેને મેાક્ષનેા ઉપદેશ છે તેથી' એમ ફરીથી (સૂત્ર) યેાજ્યું. જેનું આત્મશબ્દથી વર્ણન કર્યું તેમાં જે નિષ્ઠ હેાય તેને જ મેાક્ષ પ્રાપ્ત થાય છે એમ શ્રુતિમાં કહેલુ હેાવાથી, આત્મશબ્દ ઔપચારિક નથી પરન્તુ શુદ્ધબ્રહ્મ માટે જ

યોજેલો છે વળી, તમારા મતમાં ઉપહિત જીવ હોવાથી પુત્રાદિતુલ્ય છે, તેથી મુમુક્ષુને સાધનનો ઉપદેશ કરતાં, પુત્રાદિત્યાગ કરવા યોગ્ય છે એવા ઉપદેશ પેઠે, ને (ઉપહિત) પણ ત્યાગ કરવા યોગ્ય છે એવો ઉપદેશ કરે, પરન્તુ તેની ઉપાસનાનો ઉપદેશ કરે નહિ. આ હેતુથી પણ નિર્ગુણ જ બ્રહ્મ જગત્કારણ છે એવા આશયથી, 'ત્યાજ્ય કહ્યું નથી તેથી' એમ સૂત્રકાર બીજો હેતુ કહે છે. વળી 'હવે તેથી બ્રહ્મનો વિચાર (કરીએ છીએ)' એમ નિર્ગુણ બ્રહ્મના વિચારની પ્રતિજ્ઞા કરી, તેનું શું લક્ષણ એવી આકાંક્ષા થવાથી, 'જેમાંથી આ (જગત્ના) જન્મ વિગેરે થાય છે એમ કહ્યું, તે સગુણબ્રહ્મનું નિરૂપણ કરે છે એમ વદતાં વ્યાસજીની પ્રતિજ્ઞાહાનિ અને ઉપક્રમવિરોધ થાય છે તે જોતા નથી તેથી હૃદયશૂન્ય લાગો છો. વળી, એમ કહેતાં 'સર્વે વેદ જેના પદનું આ મનન કરે છે,' 'સર્વ વેદથી વેદાન્તકૃત્ જ જ વેદ્ય છું' ઇત્યાદિ શ્રુતિસ્મૃતિનો વિરોધ પણ થાય છે. તેથી (સવિશેષ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મનો) ભેદપક્ષ તો અયોગ્ય જ છે. દ્વિતીય (અભેદ) પક્ષ હોય.—વિરોધને લીધે ન હોય—એમ કહેવાય નહિ, 'અસ્થૂલ' વિગેરે વાક્યો જડ અને જીવના ધર્મનો જ બ્રહ્મમાં નિષેધ કરે છે, શ્રુતિસિદ્ધ જગત્કર્તૃત્વ વિગેરે ધર્મનો નિષેધ કરતા નથી એમ હોય તો (શ્રુતિસિદ્ધ ધર્મનો નિષેધ કરતા હોય તો) 'પંકમાં પડી તેનું પ્રક્ષાલન કરવાં કરતાં દૂરથી ત્યાગ કરવો સારો' એ ન્યાયે ધર્મનું પ્રતિપાદન જ વ્યર્થ થાય. વળી તમારા મતમાં બ્રહ્મનિરૂપક મહાવાક્યમાં સૃષ્ટિનિરૂપક વાક્યની સગતિ થતી નથી, કારણ કે તે બ્રહ્મનું નિરૂપણ કરતા નથી.

વિવેચન.

સિદ્ધાન્ત.

સવિશેષ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મ એકજ છે ભિન્ન નથી તેથી સવિશેષ બ્રહ્મ ઉપાસના માટે છે, સવિશેષ શ્રુતિનો વિષય અન્ય છે એ પૂર્વપક્ષીના બીજા પ્રથમ હેતુનો નિરાસ થાય છે સવિશેષ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મ એકજ છે કારણ કે ઉપાધિ નથી તેથી સોપાધિક અથવા ઉપાધિવાળું અને નિરુપાધિક અથવા ઉપાધિરહિત બ્રહ્મ ભિન્ન છે એમ કહી શકાય નહિ આમ હોવાથી નિર્વિશેષ શ્રુતિ સવિશેષ શ્રુતિની નિર્બાધક અને અન્તરંગ છે એ બે હેતુનો નિરાસ થાય છે કારણ કે સવિશેષ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મ એકજ હોવાથી, ઉપાધિ ન હોવાથી, કોઈ પ્રકારની શ્રુતિ અન્ય પ્રકારની શ્રુતિની નિર્બાધક અથવા અન્તરંગ નથી જગત્ના કર્તાપણું વિગેરે ધર્મ જો ઔપાધિક હોત, અને વાસ્તવિક ન હોત તો જગત્ની પ્રતીતિજ ન થાત. જગત્ની પ્રતીતિ થાય છે તેથી ઉપાધિ નથી આ પ્રમાણે નિર્વિશેષ શ્રુતિ સવિશેષનો બાધ કરતી નથી એ સિદ્ધ કરવા સવિશેષ અને નિર્વિશેષનો ભેદ નથી એમ એક હેતુ આપી બીજો સર્વના આધારપણાનો હેતુ કહે છે બ્રહ્મ વિરુદ્ધ ધર્મનો આશ્રય છે સર્વ વિરુદ્ધ ધર્મનો આધાર છે અને વિરુદ્ધ ધર્મના આશ્રયપણાની સાધક અચિન્ત્ય

શક્તિ તેમાં છે તેથી તે સવિશેષ અને નિર્વિશેષ ઉભય છે, તેથી નિર્વિશેષ શ્રુતિથી સવિશેષશ્રુતિનો બાધ થતો નથી આ પ્રમાણે બે હેતુથી પૂર્વપક્ષીનો નિરાસ કરી બ્રહ્મ વિરુદ્ધ સર્વ ધર્મનો આશ્રય છે એમ કારિકાથી કહી તેનુ વિસ્તારથી વિવેચન કરે છે

સિદ્ધાન્તી—અહિં મિથ્યાવાદીને પૃચ્છુ કે જગતના કર્તાપણુ વિગેરે ગુણોથી વિશિષ્ટ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મમા ભેદ અંગીકાર કરે છે કે અભેદ ? જો ભેદ સ્વીકારતો હોય તો તે ભેદ વાસ્તવિક છે કે અવાસ્તવિક. આ પ્રમાણે ત્રણ પક્ષ થાયછે સવિશેષ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મમા (૧) તાત્વિક અથવા વાસ્તવિક ભેદ છે (૨) અતાત્વિક અથવા અવાસ્તવિક ભેદ છે અને (૩) અભેદ છે. આ ત્રણ પક્ષમાથી મિથ્યાવાદી કયો પક્ષ સ્વીકારે છે એમ તેને પૃચ્છુ મિથ્યાવાદી બોલ્યો તો હુલ્લેકા છે કે અધકાર પોતે તેને પૂછતા નથી, પણ કોઈ મધ્યસ્થને તેને પૂછવા કહે છે

આ ત્રણમાથી પ્રથમ તાત્વિક ભેદનો પક્ષ યોગ્ય નથી, કારણ કે બ્રહ્મસૂત્રના પ્રથમ અધ્યાયના દ્વિતીય પાદનુ આરભનુ જ અધિકરણ એનો અભેદ કહે છે આનુ પ્રથમ સૂત્ર 'સર્વ શ્રુતિ પ્રસિદ્ધ બ્રહ્મનો જ ઉપદેશ છે, તેથી વેદાન્તમા સર્વ શ્રુતિએ પ્રસિદ્ધ બ્રહ્મનોજ ઉપદેશ છે એમ સિદ્ધ થાય છે. જો સવિશેષ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મમા તાત્વિક ભેદ હોત તો શ્રીવ્યાસચરણ સર્વત્ર વેદાન્તમા પ્રસિદ્ધ બ્રહ્મનોજ ઉપદેશ છે એમ કહેત નહિ તેથી આ સૂત્રના ' **स कर्तुं कुर्वीत मनोमयः प्राणशरीरो भारूप** ' જે વિષયવાક્યમા વર્ણવેલા ધર્મવાળુ બ્રહ્મજ છે. સર્વત્ર વેદાન્તમા એજ બ્રહ્મનો ઉપદેશ છે આ સર્વ શ્રીમદાચાર્યચરણે શ્રીમદનુભાષ્યમા વિસ્તારથી કરેલુ છે વળી ધારો કે નિર્વિશેષ બ્રહ્મ અને સવિશેષ બ્રહ્મમા વાસ્તવિક ભેદ છે, તો પછી નિર્વિશેષ બ્રહ્મ અને જીવમા તેથી પણ વિશેષ ભેદ હોવો જોઈએ બ્રહ્મ અને જીવમા આ પ્રમાણે ભેદજ હોય તો ' તે તુ છે ' એ અભેદનો બોધ કરનારી શ્રુતિનો વિરોધ થાય. વળી સવિશેષ બ્રહ્મ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મમાં તાત્વિક ભેદ હોય તો બે બ્રહ્મ થાય અને તેથી 'એકજ બ્રહ્મ છે' શ્રુતિનો વિરોધ થાય વળી તમે પૂર્વપક્ષી માયાવાદીજ તાત્વિક ભેદ સ્વીકારતા નથી મધ્વાચાર્ય તાત્વિક ભેદ સ્વીકારે છે તેમનો મત પણ વેદાન્ત અભેદની ભાવના કરે છે એવો છે તેનો આગળ જીવના સ્વરૂપનુ નિરૂપણ કરતી વખતે નિરાસ કરીશુ. આ પ્રમાણે નિર્વિશેષ બ્રહ્મ અને સવિશેષ બ્રહ્મમા તાત્વિક ભેદ છે એ પક્ષનો નિરાસ થાય છે

હવે નિર્વિશેષ અને સવિશેષ બ્રહ્મમા અતાત્વિક ભેદ છે એ બીજા પક્ષનો વિચાર કરીએ આ પક્ષ શંકરાચાર્યને સમ્મત છે માયાવાદના ૧ અવચ્છેદવાદ અને ૨ પ્રતિબિમ્બવાદ એ બે મુખ્ય વાદમા સવિશેષ બ્રહ્મ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મમા અતાત્વિક ભેદનો સ્વીકાર કરેલો છે તે મત પ્રમાણે નિર્વિશેષ બ્રહ્મ શુદ્ધ ચૈતન્ય છે અવચ્છેદ વાદ પ્રમાણે માયાથી અવચ્છિન્ન* ચૈતન્ય સવિશેષ બ્રહ્મ કહેવાય છે અને અવિદ્યાથી અવચ્છિન્ન ચૈતન્ય જીવ કહેવાય છે પ્રતિબિમ્બવાદ પ્રમાણે માયામા ચૈતન્યનો પડેલો પ્રતિબિમ્બ ઈશ્વર અથવા સવિશેષ બ્રહ્મ કહેવાય છે અને અવિદ્યામા પડેલો પ્રતિબિમ્બ જીવ કહેવાય છે આ ઉભય પક્ષનો નિરાસ કરવા સવિશેષ બ્રહ્મ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મમા અતાત્વિક ભેદ કરનાર ઉપાધિના સ્વરૂપનો વિચાર કરે છે

અતાત્વિક ભેદનો પક્ષ પણ યોગ્ય નથી, કારણ કે જેવો ભેદ ઉપાધિથીજ સર્વત્ર આકાશ સર્વત્ર એકજ છે, પરન્તુ અમુક સ્થળે ઘટ હોય ત્યા તેને ઘટાકાશ કહી બીજા આકાશથી જુદા

---

* અવચ્છિન્ન એટલે કહેવાનુ માયાથી અવચ્છિન્ન એટલે જેટલા દેહમા માયા હોય તેટલી દેહમા રહેલુ.

છે હવે જીવમા રહેલો વિશુદ્ધસત્ત્વસ્વરૂપ ભગવદ્ધર્મ ભગવદિચ્છાથી પ્રગટ થાય છે. એથી જ જીવમા રહેલો આનદાશ ઢકાઈ જાય છે, જ્યારે આનદાશ ગુમ થઈ જાય છે, ત્યારે તે ઉપાધિરહિત, સૂક્ષ્મ, અક્ષરધામનો અશ, મુખ્યત્વે કરીને ચૈતન્યગુણ ધરાવનાર, ગુમાનદ જીવ શબ્દથી ઓળખાય છે અર્થાત્ ત્યારથી તેને જીવ કહેવામા આવે છે ૧શ્રીવેદસ્તુતિની સુબોધિનીમા શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે,—'જીવ એટલે ભગવાનના ચિત્ત્વ ધર્મનો અશ' ફરી શ્રીવૈશ્વાનરાચાર્ય ભાષ્યમા ઉપદેશે છે કે,—'તેમાનો આનદાશ તો પહેલા જ તિરોહિત થાય છે, માટે જ તે જીવ કહેવાય છે' આ ઠેકાણે 'આનદાશ તો પહેલા જ તિરોહિત થાય છે' એટલે કોની પહેલા ? એ આકાક્ષા તુરત ઉઠે છે એ આકાક્ષાનુ શમન અથકાર કરે છે આ સ્થળે 'પહેલા જ' એટલે ભગવાનના ઐશ્વર્યાદિના અશભૂત ઐશ્વર્યાદિના તિરોધાન પહેલા એવો અર્થ લેવો ભગવાન્ છ ધર્મથી યુક્ત છે ૧ ઐશ્વર્ય, ૨ વીર્ય, ૩ શ્રી, ૪ યશ, ૫ જ્ઞાન, ૬ વૈરાગ્ય એ ભગવાનના છ ધર્મ છે જીવ પણ ભગવદશ છે, માટે તેમા પણ એ છ ધર્મના અશ હોવા જ જોઈએ. તે બધા જેમ આનદાશ ગુમ રહે છે, તેમ ગુમ જ રહેવાના છે. તો હવે આ ઠેકાણે આનદાશ પહેલા ગુમ થાય કે છ ધર્મ ? આ શકા પણ ઉપસ્થિત થવા લાગે છે. તેનુ નિગદરણ આ છે પહેલા આનદાશ ગુમ થાય, ત્યારપછી છ ધર્મો ગુમ થાય છે. માટે ભાષ્યોક્ત પક્તિમાના 'પહેલા જ' એ શબ્દનો અર્થ ઐશ્વર્યાદિ છ ધર્મના તિરોભાવ પહેલા એવો કરવો, વારતે કોઈ પણ શકાનો અવસર રહેતો નથી નિમધમા શ્રીમહાપ્રભુજી આજ્ઞા કરે છે કે,—ત્યારપછી તે સાકાર હતા, ભગવદ્રૂપ હતા, પણ કોઇને ઉચ્ચ બનાવવાની અને કોઇને નીચ બનાવવાની ભગવાનની ઇચ્છાને લઇને અક્ષરબ્રહ્મમાથી નિકળ્યા માટે તે નિરાકાર થયા" આ સ્થળે આકાર એટલે આનદાકાર અને નિરાકાર એટલે કે આનદથી રહિત હોય તે આ શાસ્ત્રમા આનદ અને આકાર એ બને પર્યાય શબ્દ છે ભગવાનનો આકાર એટલે આનદરૂપી આકાર જ, લૌકિક તુચ્છ આકાર નહિ. બ્રહ્મવાદમા આનદ જ બ્રહ્મના સાકારપણાને સાબીત કરે છે શ્રીમહાપ્રભુજીએ નિમધમા આવો જ નિર્ણય કરેલ છે નિમધના કથનનો ભાવાર્થ હવે સમજાય જીવો પહેલા સાકાર હતા એટલે આનદાકાર હતા—અર્થાત્ તેમા આનદાશ પ્રકટ હતો પછી જ્યારે ભગવદ્ઇચ્છાથી નિસર્યા ત્યારે જ નિરાકાર થઈ ગયા—એટલે આનદાશ તેમાથી ગુમ થઈ ગયો

શકા—બ્રહ્મ તો સર્વ સ્થળે વ્યાપક છે એવુ બીજુ સ્થળ કયા છે કે જે બ્રહ્મમય ન હોય ? પરતુ તમે તેના વ્યાપકત્વનો વિચાર કરતા હોય તેમ લાગતુ નથી બ્રહ્મમાથી જીવ નિકળે છે, પણ તે ક્યાં ? બ્રહ્મરહિત બીજુ સ્થળ છે ? જો હોય તો તેમાથી જીવ નિકળે એ કથન સંભવે બ્રહ્મમાંથી નીકળે અને રહે પણ બ્રહ્મમા એ વાત કેમ મનાય ? શ્રુતિ દૃષ્ટાત આપેછે કે, જેમ અગ્નિમાથી તણખાઓ નિકળે છે, તેમ બ્રહ્મમાથી જીવ નિસરે છે અગ્નિના વ્યાપકપણાના અભાવને લઇને, અગ્નિરહિત પ્રદેશની વણી જ છત હોય છે માટે અગ્નિમાથી વિસ્ફુલિંગો ઉડતા જણાય છે માટે વ્યાપક પદાર્થમાથી નીકળવુ કદી સભવે જ નહિ શ્રુતિ જે દૃષ્ટાત આપે છે તે તો આ પાઠ લિખવે છે વાસ્તે વ્યાપક બ્રહ્મમાથી અશો પ્રકટે એ કેમ સભવે ? તે અશો વણી એની જે બ્રહ્મવિનાની ખાલી જગા પડી છે કે ત્યા જાય ?

---

૧ સ્વકૃતપ્રેમ્વમીયુ એ શ્લોકના સુબોધિનીજીમા આચાર્યચરણ આ સિદ્ધાત સ્પષ્ટ કરે છે

૨ પુષ્ટિમાર્ગમા જેમનો લૌકિક આકાર છે એવુ મિથ્યા કલપનારા પશુતુલ્ય પામર આધુનિકોને આનો ખ્યાલ શુ નહિ આવ્યો હોય" આ સપ્રદાયના ગ્રથો વાચે છે છતા આવુ કલપન શાસાર કરતા હશે ? શુ દ્વેષ અને મત્સરે તેમની બુદ્ધિને સત્યશોધનની દિશાથી વિમુખ કરે છે ? હા, તેમ જ હોવુ જોઇએ નહિતર આવા ઉજ્જવલ સિદ્ધાતોમાથી દોષોદ્ભાવન કરવુ જ અશકય છે માયાવાદીઓનો તો પરપરાનો પથો ચાલ્યો આવ્યો છે કે, પોતાના મિથ્યા તર્કો દરેકમા ઘુસાડવા. વેદમા પણ મિથ્યાકલ્પના પેસાડી, તો આપણા ગ્રથમા તે પેસાડીને ગામાટે પોતાનુ ધાષ્ટર્ય ન દેખાડે ?

સમાધાન—શ્રુતિ કહે છે કે બ્રહ્મ જ આ જગદ્રૂપે પરિણામે છે, એટલે સર્વ બ્રહ્મમય જ છે, માટે જ બ્રહ્મ વ્યાપક છે વેદ બ્રહ્મને વ્યાપકરૂપે વર્ણવે છે વ્યાપકસ્વરૂપે વર્ણવતા છતા કેમ વેદ જ વ્યાપક બ્રહ્મમાંથી તેના સૂક્ષ્મ અંશો નિકળે છે, એમ પ્રતિપાદન કરે છે. ત્યારે શું વેદ પણ પરસ્પર વિરુદ્ધ અર્થ જણાવે છે? ના, તે કદી સંભવે જ નહિ વ્યાપક છતા પોતાના સૂક્ષ્મ અંશો પ્રગટ કરે છે, એમ યથાર્થ વર્ણન આપી વેદ તો બ્રહ્મના અલૌકિક નિગૂઢ સામર્થ્યને સ્ફુટ કરે છે. વ્યાપકના વ્યુચ્ચરણનો અભાવ લૌકિકન્યાયને આધીન છે, એટલે અગ્નિના દૃષ્ટાંતને અનુસરીને કરવામા આવેલો નિશ્ચય લૌકિક અનુભવજન્ય છે લૌકિક દૃષ્ટાંત અને તેથી મળેલો અનુભવ બ્રહ્મવાદના અલૌકિકવિચારમા કામ ન જ લાગે માટે લૌકિકવિચારયુક્ત દૃષ્ટિ ન રાખતા વેદમા ઉપદેશેલ અલૌકિકવિચારયુક્ત દૃષ્ટિ જ બ્રહ્મવાદના તાત્પર્યને જોવા યોગ્ય છે, એમ સમજી લૌકિક તર્કકલ્પનાથી દૂર રહેવું, અહીં તો સાક્ષાદ્ભગવત્સ્વરૂપ વેદ જે જણાવે તે જ અર્થનો આનાકાની વગર અંગીકાર કરવામા આવે છે. વ્યાપક છતાં વ્યુચ્ચરે છે એટલે બ્રહ્મ અગ્નિના જેવો લૌકિક પદાર્થ નથી, કે તેને પોતાના અભાવ વિનાના અવકાશવાળા સ્થલની અપેક્ષા હોય. લૌકિક પદાર્થમા પરસ્પર વિરુદ્ધધર્મો રહી શકતા નથી. બ્રહ્મ તો વિરુદ્ધસર્વધર્માશ્રય છે, એમ શ્રુતિ કહે છે બ્રહ્મ જગદ્રૂપે પરિણામ પામે છે, છતાં તેમા વિકાર નથી થતો, એમ જે પહેલા વિદ્વાનથી બતાવ્યું તે શું લખવે છે? તે બ્રહ્મનુ વિરુદ્ધધર્માશ્રયપણું જ બતાવે છે પરિણામ પામે પણ વિકારથી વિરુદ્ધ રહે એ જ અલૌકિકતાની ખુબી! પ્રસ્તુતમા પણ બ્રહ્મ વ્યાપક છતા અંશો પ્રગટાવે છે એ જ અચિંત્ય ચમત્કારનિશ્ચય!! બ્રહ્મને જીવો પ્રગટાવવા માટે અગ્નિ માફક બહારની જગા રોકવા જરૂર પડતુ નથી જીવના વ્યુચ્ચરણમા (નીકળવામા) કારણભૂત બ્રહ્મમાંથી જ બ્રહ્મરૂપ જ જીવ નિકળે છે તે પણ બ્રહ્મમય પ્રદેશમા જ! અરે જીવનુ જે વ્યુચ્ચરણ જે થાય છે તે પણ બ્રહ્મરૂપ જ!! બ્રહ્મવાદમાં બ્રહ્મવિના બીજી વાત જ ન હોય. બીજી બાજુ ઘુમાડાનુ માન (!) નો મિથ્યામાયાના બૂતથી બ્રાંત થયેલા માયાવાદિઓ જ બહુ ભારી કલપ કરે રાજાનો લેખ પણ અસ્તિત્વ નહિ જ ધરાવે. આ અચિંત્ય રમણીય સિદ્ધાંતના બળ ઉપર જ શ્રુતિ ગર્જે છે કે,—'આ[1] સર્વ બ્રહ્મ છે' શ્રીમદ્ભાગવતમા સ્પષ્ટરીતે કહ્યું છે કે,—'જ્યા,[2] જેનાથી, જેથી, જેનુ, જે માટે, જેને, જે, જેવી રીતે, જ્યારે આ જગત્ થાય છે તે સાક્ષાત્ પ્રધાનપુરુષેશ્વર ભગવાન્ જ છે' મતલબ કે સર્વ ભગવદ્રૂપ છે. આ સર્વ પ્રમાણસિદ્ધવિચારથી એમ જ સિદ્ધ થયું કે જ્યારે જીવમાંથી આનંદાંશ નિકોલિત થાય છે, ત્યારે જ તેમા જીવપણું આવે છે પહેલા જીવની જણ અવસ્થા વર્ણવી તેમા પહેલી અવસ્થા કઈ? આ પ્રશ્નનુ ઉત્તર અન્યત્ર આપે છે પહેલા તો જીવ બ્રહ્મમાંથી નિકળે છે, પછી તેનો આનંદાંશ ગુપ્ત થાય છે, અને પછી તેને અવિદ્યાના સંબંધ થતા લગણ શુદ્ધ જીવ કહેવામા આવે છે જ્યાંસુધી તેને અવિદ્યાનો સંબંધ થયો નથી ત્યાંસુધી તે શુદ્ધ છે, માટે તે શુદ્ધ છે, માટે તે શુદ્ધ જીવ કહેવાય છે. સદ્ગીતામાં પણ કહ્યું છે કે—'[3]શુદ્ધસત્ત્વમુગુણે તેની અવસ્થિતિ છે' જીવનુ શુદ્ધપણું એટલે અવિદ્યાના સંબંધથી જોગવા જેવું તે, અવિદ્યાના સ્પર્શ પછી જીવ પોતાનુ શુદ્ધપણું ગુમાવે છે. આનંદાંશ ગુપ્ત થયા પછી અને અવિદ્યાના સંબંધ પહેલાં શુદ્ધ જીવમા ભગવાનના જે ધર્મો છે એ જે ધર્મો પણ ધીમે ધીમે ભગવદિચ્છાથી ગુપ્ત થાય છે શ્રીભાગવત પ્રમાણે કહે છે કે,—'જીવના' અંશરૂપ ધર્મો ભગવાનની ઇચ્છાથી ગુપ્ત છે, તેથી જ જીવનો બંધ અને મોક્ષ થાય છે.'

ભગવાન્ પોતે જગત્ કરવાની ઇચ્છાથી બહુરૂપે થયા છે, એમ શાસ્ત્રવાક્ય સિદ્ધ કર્યું છે આ ઇચ્છા બે પ્રકારની છે ૧. **ઉચ્ચભાવેચ્છા** (શ્રેષ્ઠ થવાની ઇચ્છા), ૨. **નીચભાવેચ્છા** (હલકા થવાની

---

૧ સર્વં ખલ્વિદ બ્રહ્મ । ૨ યત્ર યેન યતો યસ્ય કૃષ્ણે યદ્યસ્યા યદા । સ્યાદિદ ભગવાન્ગાણ્યપ્રધાનપુરુષેશ્વર । ૩. શુદ્ધસત્ત્વમુગુણેયતિ. । ૪ પરાસ્યશક્તિર્વિવિધૈવ શ્રૂયતે, તથા સ્વાભાવિકી જ્ઞાનબલક્રિયા ચ ।

ઇચ્છા) ભગવાન્ પોતાની પહેલી ઉચ્ચભાવેચ્છા પૂર્ણ કરવાને કેટલાક જીવોને દૈવી બનાવે છે અર્થાત્ જીવમા રહેલા ઐશ્વર્યાદિ ગુમ થયા પછી, મોક્ષના અધિકારરૂપ, સૂક્ષ્મસદ્ભાવનાયુક્ત દૈવપણું પ્રગટ કરે છે આથી નિર્ણય થાય છે કે ભગવદિચ્છાથી જેને જીવ દૈવ બન્યો હોય તો જ મોક્ષનો અધિકારી અને માટે જ ભગવાન્ આજ્ઞા કરે છે કે,—'દૈવી સંપત્તિ મોક્ષ માટે છે.' દૈવીપણું મળ્યા પછી જીવને [1]અવિદ્યાનો બંધ લાગુ પડે છે એટલે અવિદ્યાથી તે બંધાય છે [2]'જીવનો અવિદ્યાનો બંધ અનાદિ છે એમ વાક્ય છે તેથી પણ ઉપરના કથનને ટેકો મળે છે આ વાક્યમા 'અવિદ્યાનો બંધ અનાદિ છે' એમ આવે છે તેથી એમ પણ સમજ થવાનો સંભવ છે કે જીવ અવિદ્યાથી બંધાયેલો છે જ પછીથી અવિદ્યાથી બંધાય છે એ હેતુ યોગ્ય લાગતુ નથી. મતલબ કે આનંદાદિ ગુમ થયા પછી, ઐશ્વર્યાદિ તિરોહિત થયા પછી, ભગવદિચ્છાજન્ય દૈવત્વ પ્રાપ્ત કીધા પછી અવિદ્યાથી બંધાય છે વગેરે ક્રમને આ વાક્ય તોડી પાડે છે ક્રમે અવિદ્યાબંધ અનાદિ છે એટલે સર્વથી પહેલા તે બંધ છે એમ અર્થ નિકળે છે આ શંકાનુ ઉત્તર ગ્રંથકાર પોતે આપે છે અનાદિ એટલે બીજા પછી થનાર કાલની અપેક્ષાથી અનાદિ, નહિ કે પહેલેથી જ અનાદિ શબ્દનો યૌગિક [3]અર્થ માનશો તો જીવ જ્યારે ભગવદ્રૂપ હતા ત્યારે પણ અવિદ્યાસંબંધથી ન હોતા બચ્યા, એમ શ્રુતિવિરુદ્ધ કલ્પનાપ્રસંગ તજવુ પડશે માટે અનાદિ એટલે બીજા કાર્ય પહેલા જેવો અર્થ લેવો, જેમ કે 'દેવો અમર છે' એટલે અમરનો અર્થ યૌગિક રીતિએ તો કોઈ પણ દિવસે તેનો નાશ સંભવે જ નહિ નાશ તો દેવોનો થાય છે એ શાસ્ત્રસિદ્ધ છે પરંતુ બીજા કરતા તેઓ (દેવો) વધારે જીવે છે માટે અમર કહેવાય છે આ વિષય શ્રીપ્રભુચરણે (શ્રીગુસાઈજીએ) 'વિદ્વન્મંડનમા' સારીપેઠે ચર્ચ્યો છે અવિદ્યાનો સંબંધ થાય છે એટલે અવિદ્યાના પાંચ પર્વો જીવને વળગે છે અવિદ્યાના પાંચ પર્વ—૧ દેહ, ૨ ઇન્દ્રિય, ૩ અંતઃકરણ ૪. અધ્યાસ, ૫ સ્વરૂપનુ વિસ્મરણ આ પાંચે પર્વોના સંપાટમા જીવ આવે છે, ત્યારે જીવ જ દુઃખી થાય છે 'આનો જીવસંસાર કહેવાય છે,' એમ નિબંધથી પણ એમ જણાય છે જીવસંસાર કહેવાય છે નહિ કે ઉત્પન્ન થાય છે કેમકે જીવ જે ભાડુ તાડુ માની બેસે છે તે જ અહંતામમતાત્મક સંસાર છે તે ઉત્પન્ન થતો નથી, પણ જીવનો કહેવાય છે આ સંસાર કેવલ જીવાભિમાનરૂપ છે અવિદ્યાના સંબંધ પછી જીવ સૂક્ષ્મદેહ અને સ્થૂલદેહના સંબંધથી જન્મ, મરણ વગેરે સંસારધર્મોનો અનુભવ કરે છે આ જીવને પ્રભુએ ઉચ્ચભાવેચ્છાથી દૈવી બનાવ્યો છે, માટે જન્મ, મરણ વગેરેનો અનુભવ કરાવ્યા પછી ભગવાન્ તેના ઉપર કૃપા કરે છે ભગવત્કૃપા

---

૧ દૈવો સમ્પદ્વિમોક્ષાય૦ ૨ શાંકર સિદ્ધાંતના પોકળથી પરિચિત થયેલા વાચકો આ બ્રહ્મવાદમા અવિદ્યાશબ્દ વાંચી કદાચ ચમકશે પણ તેમ થવાનુ કંઈ કારણ નથી માયાવાદી અવિદ્યાને શશશૃંગ જેવી તુચ્છ માને છે, અને તેમા બ્રહ્મનુ પ્રતિબિંબ પડે છે અને તે જીવ કહેવાય છે, એમ કહે છે બ્રહ્મ કેવુ' નિર્ગુણ નિરાકાર' તેનુ રૂપ ગ્રહણ કરનાર 'અવિદ્યાદર્પણ કેવુ' બાપુ મળ્યુ વ્યાપુ જેવુ!' આ શાંકર સિદ્ધાંતની ખરેખરી ખુબી' વાયુનુ પ્રતિબિંબ તે પણ કાષ્ઠમા' નિરાકાર બ્રહ્મનુ પ્રતિબિંબ તે પણ તુચ્છ અવિદ્યામા' જોડી ઠીક મળી' બ્રહ્મ પોતે નિર્ગુણ નિરાકાર એટલે પોતાના જેવુ જ બીજુ ખોળી કાઢવુ જોઈએ ને આ પ્રમાણે શાંકરમ તવ્ય સ્વપ્રજલ્પન સરખુ ઉપહસનીય લાગે છે આ શાસ્ત્રમા અવિદ્યા કપોલકલ્પિત નથી, પણ શાસ્ત્રસિદ્ધ છે તેના પાંચ પર્વ છે વગેરે લેખમા સ્પષ્ટ થશે શાંકરના કનિષ્ઠ વિચારો અલૌકિક શાસ્ત્રમા નથી એતો પ્રથમથી જ સિદ્ધ છે માટે અત્ર અવિદ્યાથી જીવ બંધાય છે વગેરે વાંચી વિમાસણમા પડવુ નહિ ૩ બન્ધોઽસ્યાવિદ્યયાનાદિ ।

૪ પંકજ શબ્દનો અર્થ કમળ થાય છે તે રૂઢિના બળથી તેનો યોગ બળથી અર્થ કરીએ તો 'કાદવથી ઉત્પન્ન થનાર' તમામ પદાર્થનુ ગ્રહણ થાય તેમ અત્ર યૌગિક અર્થને સ્વીકારી વિરમવુ નહિ, પણ યોગરૂઢિ સ્વીકારવી પ બુદ્ધિમાન્ પુરૂષોએ જાણવુ જોઈએ કે, પરમાત્માને નિર્ગુણ નિરાકાર કહી અને તે જ્યારે માયામા ડોકીઉ કરે અને તેથી જે તેનુ પ્રતિબિંબ પડે તે જ સર્વકાર્ય કરે છે બાકી બ્રહ્મ તો કશાકામનુ નથી, વગેરે પ્રલપી સર્વશાસ્ત્રવિપ્લવ કરનારા માયાવાદિઓ ક્યા અને સર્વરસે ભગવાન્ની કૃપાનો જ આશ્રય લેનાર બ્રહ્મવાદિઓ ક્યા?

જ્યા થઇ કે તુરત તેની વળણુ સત્સગ તરફ વળે છે અને સત્સંગ થયા પછી પાચ પર્વવાળી અવિદ્યાની વૈરિણી પાચપર્વવાળી વિદ્યા જીવને પ્રાપ્ત થાય છે. અને પછીથી પરમાનદરૂપ મોક્ષનો અનુભવ કરવા જીવ ભાગ્યશાળી બને છે. વિદ્યાના પાંચ પર્વ આ છે—૧ '૧વૈરાગ્ય, ૨ સાખ્ય, ૩ યોગ, ૪. તપ, ૫ કેશવભક્તિ આ પાચ પર્વવાળી વિદ્યાથી જીવ હરિમા પ્રવેશે છે' જ્યારથી અવિદ્યાનો અબધ થયો અને જ્યાસુધી તે રહ્યો ત્યાસુધી તે જીવ **સંસારિ** કહેવાય છે જ્યારે અવિદ્યાના પાચ બધો તુટી જાય છે, જ્યારે પચપર્વાત્મકવિદ્યાને જીવ મેળવે છે ત્યારે તે જીવને **મુક્ત** કહેવાય છે આ પ્રમાણે જીવના ત્રણે ભેદનુ સ્પષ્ટીકરણ થયુ

ઉપર કહેલા ત્રણ જીવમાંના છેલ્લા મુક્ત જીવના બે ભેદ છે ૧ જીવન્મુક્ત, ૨ મુક્ત તે બેમા જીવન્મુક્ત કોને કહેવા ? ગ્રથકાર તે જણાવે છે સનદ વગેરે અવિદ્યાથી રહિત મહાત્માઓ **જીવન્મુક્ત** કહેવાય છે, જે વ્યાપિવૈકુંઠેતર ભગવલ્લોકના નિવાસી છે, તે જીવો **મુક્ત** કહેવાય છે. પછીથી આ જીવો ભગવત્કૃપાથી શુદ્ધ બ્રહ્મરૂપ થાય છે માટે એ બે જ તેઓને પરમમોક્ષ છે. આ પ્રકારનો નિર્ણય કરવામા આવ્યો છે કેટલાક ઉત્તમ દૈવી જીવો તો સત્સગ પ્રાપ્ત કરે છે, અને તેથી આ માર્ગમા રુચિવાળા થાય છે, અને તેથી ભગવત્કૃપાનુ શ્રવણ વગેરે કરવાનું તેઓને વ્યસન થાય છે, અને પછી ભગવત્કૃપાથી ફલરૂપ સ્વતત્રભક્તિ તેઓમા પ્રગટે છે, તેથી જ તેઓ ગણિતાનદ અક્ષરધામ વટાવીને નિત્યલીલાપ્રવેશના અધિકારી થાય છે આ ઉત્તમ દૈવી જીવનો પરમમોક્ષ છે હવે જે જીવો દૈવી નથી તેઓની વ્યવસ્થા નીચે મુજબ સમજવી

આ જીવ પહેલા અક્ષરમાથી નીકળે છે પછી તેનો આનદાશ ગુપ્ત થાય છે. પછી ભગવાનુના તેમા રહેલા જ ધર્મનો પણ તિરોભાવ થાય છે ત્યારપછી તે જીવ અવિદ્યાના સબધમા આવે છે. એટલે તે જીવમા ભગવાન્ પોતે નીચભાવેચ્છાથી મોક્ષને અટકાવનાર અસદ્વાસનાયુક્ત આસુરપણુ પ્રકટ કરે છે, ત્યારે તે **આસુરજીવ** કહેવાય છે. આ જીવો અનાદિવાસનાને વશ થઇને, તેવા જ સ્થૂલદેહને મેળવીને નિંદ્ય કર્મો કરે છે, માટે ઉત્તરોત્તર નીચ યોનિમા જન્મ છે. આ જીવો સર્વદા સસારમા જ રહેવાના, તેઓનો મોક્ષ થવાનો નહિ કારણકે પ્રભુએ જ મોક્ષના દ્વારને અટકાવનાર આસુરપણુ તે જીવોને બક્ષેલુ છે, એટલે તે જીવોનો મોક્ષ કેમ થાય? ભગવાન્ શ્રીમુખથી આજ્ઞા કરે છે કે,—'અશુભ જીવોને હુ નિરતર આસુરી યોનિમા જ ફેકુ છુ આસુરી યોનિને પ્રાપ્ત કરીને તે જીવો જન્મમરણના ચક્રમા આવી પડે છે. હે અર્જુન! આ જીવો મને પ્રાપ્ત કરી શકતા નથી, અને અધમ ગતિને પામે છે.' હવે જ્યારે ભગવાન્ આત્મક્રીડા કરવા ઇચ્છે, ત્યારે જ આસુરી જીવોનો અવિદ્યાકલ્પિતસસાર નાશ પામે છે, મતલબકે શ્રુતિસિદ્ધ બહુત્વ ભવનેચ્છાથી ભગવાન્ જ્યાસુધી બહુરૂપે બહીરમણ (બાહ્ય રમણ) કરી રહ્યા છે, ત્યાસુધી તો આસુરી જીવો અવિદ્યાના સબધમા અથડાતા રહેવાના પરતુ જ્યારે પ્રભુ સર્વ સકેલી લે છે, બધાને પોતાનામા લીન કરી દે છે, ત્યારે પેલા આસુરીજીવોનો સબધ પણ કરી લે છે. ભગવાન્ પોતે અવિદ્યાથી બનેલો સર્વત્રથકે રહેલો સસાર જીવના કરેલા સાધનની અપેક્ષા રાખ્યાવગર કરી લે છે એટલે પ્રભુને જીવ અમુક સાધન કરે તો જ સસાર પગિદરવો નહિ તો નહિ. એવી

---

૧ વૈરાગ્યં સાઙ્ખ્યયોગૌ ચ તપો ભક્તિશ્ચ કેશવે। પઞ્ચપર્વેતિ વિદ્યેય યયા વિદ્વાન હરિં વિશેત્। ૨ શ્રીલાક્ષભાષ્યે રચેલો આ ગ્રંથ પ્રકરણ ગ્રથ છે. પ્રકરણ ગ્રથ સિદ્ધાતોમાં કેવલ પ્રવેશ કરવાથી આપે છે શ્રીમદ્વાપ્રભુજી, શ્રીપ્રભુચરણ, શ્રીપુરુષોત્તમજી વગેરેના પડીતમાનમર્દન કરનારા અપૂર્વ ગ્રથોમા કઈ ચચુમત્રેશ થાય માટે આવા પ્રકરણ ગ્રથ દ્વારભૂત છે. આટલું જણાવવાના જરૂર એ છે કે, આ ગ્રથમાં જે કઈ સિદ્ધાતો કરવામા આવે છે, તે સૂક્ષ્મરૂપમા છે અર્થાત્ તેને જ વળગીને બેસવાનુ નથી આના કરતાં અધિક સિદ્ધાતો નિબધાદિમા જાગરૂક છે

૨. દિવ્યાજન્યમશમાનાસુરીષ્વેવ યોનિષુ। આસુરીં યોનિમાપન્ના મૂઢા જન્મનિ જન્મનિ। મામપ્રાપ્યૈવ કૌન્તેય તતો યાન્ત્યધમા ગતિમ।

પતો નથી તેનો નિશ્ચય નીચે આપેલા શ્રીબ્રહ્મસૂત્ર ઉપરથી થશે. શ્રીવિદ્યાસજી તમે કેવી રીતનો અનુવાદ કરી તેનો ઉત્તર આપે છે. ' જીવને આખુ હોવનારી શ્રુતિ મળતી નથી (વ્યાપક હોવનારી મળે છે) માટે જીવ આખુ નથી, એમ નક્કી ન કરવી, કેમકે જીવને વ્યાપક હોવનારી જે શ્રુતિ તમે આપો છો તે શ્રુતિ જીવને વ્યાપક નથી બતાવતી એ શ્રુતિ તો બ્રહ્મના અધિકારમાં છે એટલે બ્રહ્મના સ્વરૂપનો પરિચય કરાવે છે" એને બે-સૂત્રમા શંકરાનુભાઇ કરી સમાધાન કરે છે ઉપરના સૂત્રથી નિશ્ચય થાય છે કે શ્રુતિ તો બ્રહ્મવ્યાપક છે, એમ કહે છે માટે જીવ અણુ છે

શંકા—શ્રુતિએ વસ્તુવિશ વ્યાપકત્વનું બ્રહ્મમા પર્યવસાન કરી શ્રુતિની સંગતિ તમે તમને વિરોધ ન આવે તેમ કરી શક્યા પરતુ ભગવાન્ પોતે જ જીવને વ્યાપક કહેતા હોય તો કેમ " 'આ નિત્ય છે, આત્મા સર્વત્રએ વ્યાપ્ત છે, સ્થાણુ છે, અચલ છે, સનાતન છે" આ ભગવદ્વાક્યમા જીવનુ વ્યાપકપણુ સ્પષ્ટ છે હવે તો જીવને વ્યાપક માનો કે નહિ'

સમાધાન—એ ભગવદ્વાક્ય છે માટે સર્વાને માન્ય છે પણ તમે જેવીરિતે એ વાક્યનો અર્થ સમજ્યા છો તે અર્થ માન્ય નથી " 'જે બ્રહ્મને જાણે છે તે બ્રહ્મરૂપ થાય છે" એની શ્રુતિ છે. જ્યારે જીવને બ્રહ્મજ્ઞાન થાય ત્યારે જીવ બ્રહ્મરૂપ થઈ જાય અને પછીથી તેમા ભગવદ્ધર્મનો આવિર્ભાવ થાય. પછી આખુ જીવ વ્યાપક બને. એમને એમ જીવ વ્યાપક હતો નથી ભગવદ્વાક્ય જે વ્યાપકત્વ બતાવે છે તે ભગવદ્રૂપ થયેલા જીવનુ જ. વાસ્તે આચાર્યચરણ નિબંધમાં ઉપદેશે છે કે,—" 'જીવને વ્યાપક હોવનારી શ્રુતિનો અર્થ જ્યારે જીવ ભગવદ્રૂપ થાયછે ત્યારે જ તે વ્યાપક થાય છે, એમ પણ છે' આ જ અર્થ યોગ્ય છે." આવીરીતે માનવામા એક ગડબડ દોષ રહે છે જીવ જો ભગવદ્રૂપ થયને વ્યાપક બની જતો હોય તો પોતાના અણુત્વધર્મનો ત્યાગ કરીને વ્યાપક બને એવો આચાર્ય સમજાવ

સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાન્તો.

૧ જગત્ સત્ય છે

૨ જગત્, જીવ, અંતર્યામી, અક્ષર ઇત્યાદિના નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ
પ્રભુ કૃષ્ણ પરમાત્મા જ છે

૩ જીવે અવિદ્યાથી કલ્પેલો અહન્તામમતાત્મક સંસાર મિથ્યા છે.

૪ જીવ અંશ છે, શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મનો અંશ છે, વ્યાપક નથી

૫ પરબ્રહ્મ પુરુષોત્તમ કૃષ્ણનું ધામ અક્ષર બ્રહ્મ ગણિતાનંદ છે

૬ જ્યોતિષ વેદાન્તશાસ્ત્રે પ્રતિપાદિત પરમકાષ્ઠાપન્ન વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે.

૭ કૃષ્ણની સેવા એ જીવ અંશ જીવનો ધર્મ છે, એટલે વસ્તુત સ્વધર્મ કૃષ્ણસેવા જ છે.

૮. આત્મનિવેદન અને પ્રભુપ્રપત્તિ વિના અન્ય વિશ્વધર્મ હોઈ શકે જ નહિ

Reg. No B. 896.

પુષ્ટિભક્તિસુધાના ગ્રાહકોને સવિનય નિવેદન.

આ માસિકના સર્વ લેખકો જે લેખ લખે છે તે સાંપ્રદાયિક સેવા કરવાની વિમલ બુદ્ધિથી લખે છે, તેથી બીજા પત્રોની માફક આ માસિકના લેખકોને આપવામા દ્રવ્યનો જરાય સિદ્ધાન્ત થતો નથી, એ જણાવતા આનંદ થાય છે. માસિકની છપામણી વગેરે ખરચ ઘણી જ કરકસરથી કરવામા આવે છે, તેથી લવાજમમાથી જે કાંઈ બચશે તેમાથી સાંપ્રદાયિક પ્રાચીન અર્વાચીન ગ્રંથો પ્રસિદ્ધ કરવામા આવશે વૈષ્ણવભાઇઓએ આવા માસિકના પોતે ગ્રાહક થવું જોઇએ, એટલું જ નહિ પણ પોતાના મિત્રોને પણ આવા ધાર્મિક કાર્ય તરફ પ્રેરવાનું ખાસ લક્ષમાં રાખવુ જોઇએ.

મુંબાઇ,
ગિરગામ સ્ટ્રીટ. } પ્રકાશક.

વર્ષ ૨ જું] શ્રીકૃષ્ણાબ્દ ૫૧૩૮, કાર્ત્તિક

पुष्टिभक्तिसुधा.

કૃષ્ણ ૧૨ શ્રીવલ્લભાબ્દ ૪૩૩ [અંક ૮ મો

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनुं स्वाम् ॥ १ ॥
नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ २ ॥
भक्त्या त्वनन्यया शक्यः अहमेवविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥ २ ॥

પ્રકાશક,

વાડીલાલ નગીનદાસ શાહ,

બી એ એલએલ. બી, વકીલ હાઇ કોર્ટ,

નોંધાયેલ ૩૪ ૨-૬-૦ કિંમત આનો ૩ ૦-૨-૦

Printed by D Miller Superintendent British India Press Bombay and Published by Vadilal Nagindas Shah, B.A. LL.B. Princess Street, Bombay

Reg. No B. 896.

પુષ્ટિભક્તિસુધાના ગ્રાહકોને સવિનય નિવેદન.

આ માસિકના સર્વ લેખકો જે લેખ લખે છે તે સાંપ્રદાયિક સેવા કરવાની વિમલ બુદ્ધિથી જ લખે છે, તેથી બીજા પત્રોની માફક આ માસિકના લેખકોને આપનામા દ્રવ્યનો અત્યન્ત બિલકુલ લોભ નથી, એ જણાવતા આનંદ થાય છે માસિકની છપામણી વગેરે ખરચ ઘણું જ કરકસરથી ચલાવામા આવે છે, તેથી નોણાવરમાંથી જે કાંઈ બચેરો તેમાથી સાંપ્રદાયિક પ્રાચીન ગ્રંથો પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવશે વૈષ્ણવભાઇઓએ આવા માસિકના પોતે ગ્રાહક થવુ જોઇએ, એટલુ જ નહિ પણ પોતાના મિત્રોને પણ આવા ધાર્મિક કાર્ય તરફ પ્રેરવાનું ખાસ લક્ષમા રાખવુ જોઇએ

મુંબાઇ,
મિનરોસ સ્ટ્રીટ, } પ્રકાશક.

॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥

॥ श्रीगोपीजनवल्लभाय नमः ॥

॥ श्रीगोवर्द्धनलीलाके पद ॥

(राग बिलावल, ताल त्रिताल.)

बोलिलिये सवग्वाल कहत गिरि पूजिये ।
दीपमालिका आजु गोवर्द्धनलीला गाई ।
नंदमहोच्छव होय चलो सब देखन जाई ।
कनकथार मोतिनभरे दीपक बरे मंझार ।
सबमिल आई गोपिकाहो गावत मंगल चार । कहत गिरि पूजिये ॥ १ ॥
आपु आपुही रूपवनी सब ब्रजकी नारी ।
लहगा कंचुकी अंगवनी बहु झूमक सारी ।
काजररेख टीकों बन्यो ओर मोतिनके हार ।
सबमिल गोपी करत हे अपनो अपनो सिंगार । कहत० ॥ २ ॥
गामगामतें अहीर बोलिलिये नंदजू ।
न्योंतो दीनो आजु बेगि वृखभानचंदजू ।
बरष तरुणी बाला सबे बलिबालिक संग लाई ।
गोदलिये सुतसांवरोहो कहत जसोदामाई । कहत० ॥ ३ ॥
सुरपतिपूजा मेटि महागिरि कान्ह पुजावे ।
नंद कहि यह बात बात सरके मन भावे ।
अन्नतृण बहु नीपजे बहुतजु बरखे मेह ।
गाय दूध दूनो करेहो घरघर बढे स्नेह । कहत० ॥ ४ ॥
नानाविधि करिपाक सबे मिल आन चढाई ।
खीरखांड अतिबहुत महापकवान मीठाई ।
दारभात और घी घनो दधि ओदन धरि माथ ।
सबमिल पूजो गोपीकरनो लेले अपने हाथ । कहत० ॥ ५ ॥
दोना भरे बनाय बहोतविध बरा पकोरा ।
भोजन बिजन आनिधरे सिखरन चहुओरा ।
नींबू सुरन गयता अदरख बहुत बनाय ।
कोरकरोदा काचरीहो लाई जसोदामाय । कहत० ॥ ६ ॥
खाजा गुंजा फेनी पापर अरु अनरसो ।
लुचई लपसी घेवरबावर बडीखरसो ।

दृध पेडा अरु डवका मठा जलेबी ओर ।
पकवान पंगति अतिबनीहो भलो भयो अन्नकूट । कहत० ॥ ७ ॥
धूपदीप चहु आनि महागिर पोतो छायो ।
चोवा चंदन अगर अरगजा चरचि चढायो ।
होम जग्य सबही करे ब्रजवासिन आनंद ।
धनि धनि यहदिन आजुकोहो धनि धनि बाबानंद । कहत० ॥ ८ ॥
गोदलिये हरि नंद ठाडी जसोदारानी ।
चहुदिस धुरे निसान धुजावर महा फहरानी ।
सुरनरमुनि सबदेवता गुनि गंधर्व करे गान ।
नारद शारद शेषजूहो ब्रह्माविष्णुसमान । कहत० ॥ ९ ॥
एकभुजा नंदनंदन ठाडे करगहि हाथा ।
एकभुजा दे सीस सकलगोपीनके माथा ।
एकभुजा भोजन करे एकभुजा गहे मात ।
देखो अचरज आजकोहो पर्वत पूजा स्वात । कहत० ॥ १० ॥
ब्रजवासिन सब वालि महागिरिपूजा कीनी ।
सुरपतिको बलमेटि महागिरिकों ले दीनी ।
इंद्र कोप तबही कयों दीयो मेघ छटकाय ।
एसो कोन पूजा लेहहो देहो गोप बहाय । कहत० ॥ ११ ॥
सात दिवस ओर रात महागिरि कर हरि लीनो ।
वृथा भये सबमेघ गोपको कछुव न कीनो ।
इंद्रमान सबही मिट्यो मेघ पुकारे जाय ।
ब्रज राख्यो नद लाडिले कीनो अपनो अपनो भाय । कहत० ॥ १२ ॥
सुनिहो मैया ग्वाल आजु अचरज हे एको ।
कर कोमल गिरि धर्यो ग्वाल लकुटी लेटेको ।
सातवरसको सांवरो राखलिए सबगोप ।
ब्रजबासिन छायाकरीहो मानो सबसिर टोप कहत० ॥ १३ ॥
इं करे स्तुति महाप्रभु सुनो हमारी ।
काम धेन उरमाल कान्हके आगे धारी ।
तुम करता ईश्वर हरी देहो हमारी चूक ।
तुमारी गति जानी नहीहो हों अग्यानी मूक । कहत० ॥ १४ ॥
तब बोले गिरिधरन इंद्र सुन बात हमारी ।
तें कीनो अभिसेक लईमें मानि तिहारी ।

कामधेन ताको दई दई कनक उरमाल ।
असुर सिंघारन प्रकटियो हो कीनो यहविध ख्याल । कहत० ॥ १५ ॥
सो जनको बडभाग गोवर्द्धन लीला गावे ।
सीखे सुन विचार भक्ति जन कोटीक पावे ।
नंदगृह क्रीडाकरी सुखदीनो व्रजबाल ।
परिब्रह्मलीला करीहो बलि बलिदास गुपाल । कहत० ॥ १६ ॥

॥ श्रीहरिरायजीकृताष्टपदी ॥

(रामकलीरागेण गीयते)

वर्णये वल्लभार्धीशचरणम् ।

सकलसाधनविमुखमुख्यफलफलनम् संसारसरिदीगगोचरणकरणम् ॥ ध्रु० १ ॥
नीलमणिमंजुमंजीरमंजुलरणितभणितनिजभक्तजनजनितभावम् ॥
राजते रुचिरकलहंसयुगल किमुत मानिजनचित्तहरमधुरराबम् ॥ २ ॥
कोटिकन्दर्पसुपमासीमनिजरूपशमितविरहानलज्वलितभक्तम् ॥
किमुत पदपद्मलसदङ्गुलीमधुपकुलमरुणमकरदयुतरेणुरक्तम् ॥ ३ ॥
अतिरुचिररम्यपदपद्मपल्लवतुल्यविलसदङ्गुलीवृन्दसुपमालम् ॥
किमुत शृङ्गाररसविटपिपरिभागयुतभूमिगतसरसतममूलजालम् ॥ ४ ॥
मथितनिजभावदूरीकृताखिलदोष (मोष) साधनितकलिराजकालम् ॥
अङ्गुलीवीथिविद्योतनारुणतरं किमुत पल्लवशोभिनवरसालम् ॥ ५ ॥
स्फुरदघोरक्तिमोपरितनश्यामिकावोदितध्वनिशगतसुखवितानम् ॥
दशसंख्यनखं सुधाधिपतिसततस्थानजातविज्ञानगगनोपमानम् ॥ ६ ॥
उपरिगतनखचन्द्रवृन्दयोगामन्दजातशोभामृदङ्गुलीजटालम् ॥
किमुत पदकमलयुगसरसपल्लववृन्दावकसदग्रारक्तचक्रवालम् ॥ ७ ॥
विगतसाधनमधोऽकृतसमाराधनं, जीवमतिबाधनं पाहि नित्यम् ॥
दीनमिह जलवियुतमीनामिव मादृशं, मतिरहितमङ्ग तवभृत्यभृत्यम ॥ ८ ॥
सहजकस्तूरिकातिलकशोभितभालविह्वलार्धीशपदतलनिवासम् ॥
देहि निजरूपदर्शनजनिततापमिह सकलसिद्धार्थहरिदासदासम् ॥ ९ ॥

આ અષ્ટપદી શ્રીહરિરાયજીવિરચિત છે, અને સસ્કૃતમા છે આની બે પ્રત મળી હતી, ... રથી જેવી છે તેવી ને તેવી જ અત્ર આપવામા આવે છે તેમા કઈપણ સુધારો વધારો નથી કરવામા આવેલો કેમકે તેથી આ ભાવને સમજનાર રસિકજનની ભાવવૃત્તિનો સકોચ થવાનો ભય રહે છે. * मोक्षसाधनिनेत्यपि पाठ ।

મગનલાલશાસ્ત્રીના ભાષણો.

વૈષ્ણવના કર્તવ્યે.

પરમભાગ્યવાન્ વૈષ્ણવો,

મારા ગયા વ્યાખ્યાનમા મે સામાન્યરા શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યના સિદ્ધાન્તનું તત્ત્વ આપના સમક્ષ મૂકવા પ્રયત્ન કર્યો હતો આપણા સંપ્રદાય ઉપર અનેકાનેક વિચારશૂન્ય આક્ષેપ કરવામાં આવે છે, પરતુ તે સર્વ આક્ષેપોમા બે આક્ષેપ મુખ્ય છે તેમાનો પ્રથમ આક્ષેપ એ છે કે " શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યના સંપ્રદાયમા ગ્રથસામગ્રી વા જ્ઞાનસામગ્રી ન્યૂન છે " આ આક્ષેપનુ યથાશક્તિ ઉત્તર આપવાનો પ્રયત્ન મે ગયા વ્યાખ્યાનસમયે કર્યો હતો, અને આપણા સંપ્રદાયમા શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્ય શ્રીમદ્વિઠ્ઠલેશ્વર શ્રીમદ્ગોકુલનાથજી શ્રીહરિરાયજી દશદિગ્વિજયી શ્રીપુરુષોત્તમજી આદિ ધુરધર વિદ્વાન્ ગોસ્વામીઓ અને તેમના શિષ્ય પ્રશિષ્યો તરફથી કેવાકેવા ઉત્તમોત્તમ ગ્રંથો પ્રકટ કરવામા આવેલા છે તેનુ દિગ્દર્શન આપને કરાવ્યુ હતુ છેક પચીસ વર્ષ ઉપર પણ આપણા સંપ્રદાયમા કેવાકેવા પ્રૌઢ પંડિત થઈ ગયા તેનો પણ તે પ્રસંગે ખ્યાલ આપ્યો હતો પરતુ બીજો આક્ષેપ એ છે કે " શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ પ્રાચીન શુદ્ધ વૈષ્ણવમાર્ગને વિષયાત્મક બનાવી દીધો " આ પ્રૌઢતર આક્ષેપમા શુ સત્ય છે અને શુ અસત્ય છે તે આપના સમક્ષ સ્પષ્ટ કરવાને જ આજનો વિષય "વૈષ્ણવોનુ કર્તવ્ય" રાખવામા આવેલો છે. પ્રથમ ભાષણ સાથે આ વ્યાખ્યાનની સંગતિ મેલવવાની છે. જ્ઞાનસામગ્રી દુર્બલ નથી એમ પ્રથમ વ્યાખ્યાનમા પ્રતિપાદન કર્યું હતુ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના શુદ્ધ ઉપદેશમા વિષયની ગંધ નથી એમ આજે પ્રતિપાદન કરીશ

ઉપક્રમ.

આજનો વિષય "વૈષ્ણવોનુ કર્તવ્ય" છે, ત્યારે "વૈષ્ણવ" એટલે શુ એ પ્રથમ નક્કી કરી લેવુ જોઇએ. "વિષ્ણુ"શબ્દનુ તદ્ધિત[૨] રૂપ વૈષ્ણવ છે, અર્થાત્ વિષ્ણુનો સંબંધી તે "વૈષ્ણવ" પણ વિષ્ણુ એટલે શુ ? વિષ્ણુશબ્દ પ્રવેશાર્થક વા વ્યાપ્ત્યર્થક [૩]વિશ્ ધાતુને આનન્દવાચક નુપ્રત્યય લાગીને સિદ્ધ થયો છે, અર્થાત્ વ્યાપક સર્વવ્યાપક, બાહ્ય અને અભ્યંતર આનંદાવિષ્ટ, બાહ્યાભ્યંતરરસાવિષ્ટ, પરમકાષ્ઠાપન્ન પરમનિર્ગુણ પરિપૂર્ણ " પુરુષોત્તમ " જ વિષ્ણુનો યૌગિક અર્થ છે યદ્યપિ આ આનંદવ્યાપ્ત રસાવિષ્ટ પુરુષોત્તમ સર્વવ્યાપક છે, તથાપિ જ્યા એ રસાવિષ્ટ સ્વરૂપના સદાસર્વદા સાક્ષાત્ દર્શન થાય છે તે સ્થલને ધામ અથવા લોક કહેવામા આવે છે વસ્તુમાત્ર બ્રહ્મસ્વરૂપ હોવાથી આ સ્તંભ પણ ભગવદ્રૂપ છે, સ્તંભમા પણ વિષ્ણુ પુરુષોત્તમ વ્યાપીને જ રહેલા છે, તથાપિ સ્તંભમા આપણને સદાસર્વદા ભગવદ્દર્શન થતા નથી સ્તંભમા માત્ર બ્રહ્મનો સદંશ જ પ્રકટ થયો છે, બ્રહ્મનો ચિદંશ અને આનંદાંશ સ્તંભમા પ્રકટ નથી. જે સ્થલે પરબ્રહ્મનો સદંશ ચિદંશ અને આનંદાંશ પણ સદાસર્વદા પરિપૂર્ણ પ્રકટ છે તેને જ, તે સ્થલને જ, આપણે "ભગવદ્ધામ" વા "ભગવલ્લોક" કહીએ છીએ પૂર્વોક્ત આનંદરૂપ

વૈષ્ણવશબ્દની વ્યુત્પત્તિ

---

૧. શ્રીમદ્વૈષ્ણવપરિષદ્ની સૂચનાથી વડોદરામા સ્થાપિત શ્રીવલ્લભીય સભા તરફથી સંવત્ ૧૯૬૩ના કાર્તિક શુક્લ એકાદશીની (દેવદીપાવલીની) સાજે વડોદરામા શ્રીદાઉજીના મંદિરમાં વે શા સ ભગનલાલ ગણપતરામ શાસ્ત્રી એમ એ એમણે રા બ ડાહ્યાભાઈ હરજીવનદાસ નાણાવટીની અધ્યક્ષતા નીચે જન્માદ્યસ્ય યતોન્વયાદિતરતશ્ચાર્થેષ્વભિજ્ઞ સ્વરાટ્, તદ્રૂપીડ નટવરવપુ કર્ણયો કર્ણિકાર, નમામિ હૃદયે હરે, શ્રીમદ્વૃન્દાવનેન્દુમન્દારિતૂરસિકાનન્દસન્દોહરૂપ, સર્ગાદૌ સ્વમત સમસ્ત વિધયે ય બ્રહ્મવાદં જગૌ, અને સાય કુંજાલયસ્થાસનસ્થો હરી સ્વર્ણપાત્ર સુધૌત એમ શ્લોકસપ્તકથી મંગલાચરણ કરીને વ્યાખ્યાનનો ઉપક્રમ કર્યો હતો

૨ વિષ્ણો અસૌ વૈષ્ણવ ।

૩ વિશ્લ ન્યામૌ ।

વિષ્ણુનુ (પુરુષોત્તમનુ) ધામ "વ્યાપિવૈકુંઠ" છે, અર્થાત પુરુષોત્તમ સર્વત્ર વ્યાપક છે તથાપિ વ્યાપિવૈકુંઠ ધામમા જ નિરંતર પૂર્ણ આનંદસ્વરૂપે દર્શન થાય છે વેદશાસ્ત્રોક્ત સાધનસમૂહ કરીને ભગવત્કૃપાબળે ભક્તિ ઉદય પામે છે, ત્યારે જ્ઞાનવાન ભક્તની આ વ્યાપિવૈકુંઠ ધામમા ગતિ થાય છે. વેદશાસ્ત્રોક્ત સાધન દુર્લભ થઈ જતા સાધનક્રમે વ્યાપિવૈકુંઠ પર્યન્ત આરોહણ કરવાનો પ્રસંગ રહેતો નથી, અને જ્યારે પૂર્વોક્ત પરિપૂર્ણ પુરુષોત્તમ જીવકૃત સાધનની પણ અપેક્ષા ન રાખતા વ્યાપિવૈકુંઠથી નીચે પધારે છે, અવતરે છે, અવતાર અંગીકાર કરે છે, ત્યારે એ જ પુરુષોત્તમ "શ્રીકૃષ્ણ "સંજ્ઞાથી પ્રસિદ્ધ થાય છે, અને એમની પરમાનંદરૂપ લીલાસ્થલી 'શ્રીમદ્ગોકુલ'નામથી પ્રસિદ્ધ થાય છે શ્રીમદ્ગોકુલ ઇત્યાદિ નિજ નિત્ય લીલાસ્થલીમા પ્રાકૃત દૈહિક વૈષયિક ગંધમાત્ર પણ નથી, ત્યાં સર્વ વ્યવહાર સચ્ચિદાનંદ "પરમાનન્દ"થી જ થાય છે, એ સર્વ પ્રસંગ ગયા વ્યાખ્યાનમા નિરૂપણ કર્યો હતો, તેથી શ્રીમદ્ગોકુલની અલૌકિકતા આપ સર્વની સમ્મતિમા જ હશે વૈષ્ણવો, આપ સર્વની સ્પષ્ટ પ્રતીતિ થઈ જ હશે કે વિષ્ણુ એટલે વ્યાપક સર્વવ્યાપક રસાત્મક પુરુષોત્તમ, અને સર્વત્ર વ્યાપક છતા આનંદાત્મક સ્વરૂપે જ્યાં નિરંતર પ્રકટ હોય તે એ પુરુષોત્તમનુ ધામ વેદશાસ્ત્રોક્ત સાધનસંપત્તિ પ્રાપ્ત કરીને શુદ્ધ બ્રહ્મવાદનુ અવધારણ કરી રહ્યા પછી જીવને ભક્તિદાન થાય ત્યારે જ તે જીવ વ્યાપિવૈકુંઠ ધામ પ્રાપ્ત કરી શકે છે વૈદિક સાધનને અનુકૂલ દેશકાલ ન હોય ત્યારે પરમકૃપાલુ પુરુષોત્તમ વ્યાપિવૈકુંઠથી સર્વાંશે અવતરણ કરે છે, ત્યારે એ અવતારી મૂલ સ્વરૂપ પુરુષોત્તમ 'શ્રીકૃષ્ણ' કહેવાય છે એ શ્રીકૃષ્ણનુ નિત્ય રસાત્મક ધામ તે જ શ્રીમદ્ગોકુલ, અર્થાત્ વ્યાપિવૈકુંઠસ્થ વા શ્રીમદ્ગોકુલસ્થ પરિપૂર્ણ પ્રકટ આનંદાત્મક રસાત્મક પુરુષોત્તમનો જેને નિત્ય સંબંધ હોય તે વૈષ્ણવ પૂર્વનિરૂપિત વિષ્ણુ (પુરુષોત્તમ) અને તદીય વૈષ્ણવનો જે નિત્ય સંબંધ તે જ આપણા સંપ્રદાયમા [1]બ્રહ્મસંબંધ કહેવાય છે સમ્યક્ કદાપિ શિથિલ ન પડે એવો બંધ, એવી ગ્રંથિ, તે સંબંધ, અને નિર્દોષ સર્વસમ[2] બ્રહ્મ સાથે કદાપિ શિથિલ ન પડે એવી ગ્રંથિના તેજ બ્રહ્મસંબંધ બ્રહ્મસંબંધથી પુરુષોત્તમ પ્રતિ જીવને શા શા અધિકાર પ્રાપ્ત થાય છે એ પણ સમજવા યોગ્ય છે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજી બાલબોધનામના ગ્રંથમા આજ્ઞા કરે છે કે "દેહ, પ્રાણ, ઇંદ્રિય, અંતઃકરણ, અને આત્મા સર્વે પ્રભુને 'નિવેદન કરે તો જીવ નિશ્ચય તદીય થાય, વૈષ્ણવ થાય, ભગવદીય થાય, ભગવત્સંબંધી થાય' સિદ્ધાંતરહસ્યનામના પરમનિગૂઢ ગ્રંથરત્નમા શ્રીમદાચાર્યજી ઉપદેશ કરે છે કે "નિર્દોષ સર્વસમ [3]બ્રહ્મનો સંબંધ કરવાથી દ્વિજમાત્રના જ નહિ પણ સર્વના, માત્ર દેહના જ નહિ પણ દેહ અને જીવ ઉભયના, એકાદ દોષની નહિ પણ દોષમાત્રની નિવૃત્તિ નિશ્ચય થાય છે જ" મહાનુભાવી શ્રીહરિરાયજી એક ગ્રંથમા સ્પષ્ટ પ્રતિપાદન કરે છે કે "નિર્દોષ સર્વસમ બ્રહ્મના સંબંધથી ફલરૂપ સદાનંદ શ્રીકૃષ્ણના [4]સાક્ષાત્સંબંધની યોગ્યતા થાય છે ત્યારપછી, બ્રહ્મના સંબંધથી શ્રીકૃષ્ણના સાક્ષાત્સંબંધની યોગ્યતા પ્રાપ્ત કરીને, સ્વકીય સર્વ પદાર્થનો વિનિયોગ શ્રીકૃષ્ણની સેવારૂપ શ્રીકૃષ્ણમા કરવાથી અક્ષય પરમાનન્દનિધિ શ્રીકૃષ્ણનુ સ્વત્વ પ્રાપ્ત થઈ જાય છે, વશીકરણ થઈ જાય છે" વૈષ્ણવો, આપના સમક્ષ 'વિષ્ણુ' શબ્દનો અર્થ પ્રકટ કર્યો, અને એ વિષ્ણુના સંબંધનું સ્વરૂપ પ્રતિપાદન કર્યું હવે આપના ધ્યાનમા આવ્યુ હશે કે પૂર્વનિરૂપિત પુરુષોત્તમ સાથે જે પૂર્વપ્રતિપાદિત નિત્ય સંબંધ ધરાવે છે તે વૈષ્ણવ.

---

१ सम्यङ् बंध संबंध ब्रह्मण संबंध ब्रह्मसंबंध ।

२ निर्दोष हि सम ब्रह्म ।

३ समर्पणेनात्मनो हि सदीयत्व भवेद् ध्रुवम् ।

४ ब्रह्मसंबंधकरणात् सर्वदा देहजीवयो सर्वदोषनिवृत्तिर्हि ।

५ ब्रह्मसंबंधत कृष्णसाक्षात्संबंधयोग्यता । ततस्तत्सेवया स्वीयसर्वस्वविनियोगत । गृहीत परमानन्दनिधि कृष्णोऽक्षय स्वत ।

નિયામક છે, એવી જ પુષ્ટિમાર્ગની વ્યવસ્થા છે " શ્રીમદ્ગુમાષ્યના સાધનાધ્યાયના તૃતીય ચરણના નવવિંશ સૂત્રમા શ્રીમદ્ભાષ્યકાર આજ્ઞા કરે છે કે " જીવકૃતિસાધ્ય[1] જ્ઞાન અને ભક્તિરૂપ સાધનનો શાસ્ત્રમા ઉપદેશ કરેલો છે, તે શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત જીવપ્રયત્ન વડે થયલા જ્ઞાનભક્તિથી મુક્તિ થાય છે એ મર્યાદા કહેવાય છે, પણ શાસ્ત્રપ્રતિપાદિત જીવપ્રયત્નસાધ્ય જ્ઞાનભક્તિથી રહિત જીવોને પણ પ્રભુ કેવલ સ્વસ્વરૂપબલવડે કરીને સ્વપ્રાપ્તિ કરાવી દે એનુ નામ પુષ્ટિ " એ જ ગ્રથમા એ જ અધ્યાયમા ચતુર્થપાદના પટ્ચત્વારિશ સૂત્રના ભાષ્યમા શ્રીમદ્ભાષ્યકાર કથે છે કે " મર્યાદા અને પુષ્ટિ એમ બે પ્રકારે ભગવાન્ જીવનો અગીકાર કરે છે, તેમા અંગીકાર સાથે બીજું સહકારિ સાધનની અપેક્ષા કહેવામા આવે છે તે મર્યાદાપક્ષથી જ, પુષ્ટિમાં તો બીજા કોઇની અપેક્ષા જ નથી." એ જ ગ્રથના ફલાધ્યાયના પ્રથમ પાદના ત્રયોદશ સૂત્રના ભાષ્યમા પ્રતિપાદન કર્યું છે કે " કોઇ પણ સાધન વિના પ્રભુ નિજ સ્વરૂપબલવડે કરીને કાર્ય કરી દે એ પુષ્ટિ " એ જ ગ્રથના એ જ અધ્યાયના દ્વિતીય ચરણના સપ્તમ સૂત્રના ભાષ્યમા નિરૂપણ કર્યું છે કે " જે સાધનદ્વારે મુક્તિ આપવાની ઇચ્છા થાય એ મર્યાદામાર્ગની રીતિ છે, પણ શાસ્ત્રોક્ત સાધન વિના જ જીવની મુક્તિ થાઓ એવી ઇચ્છા પ્રભુ કરી દે એ પુષ્ટિમાર્ગીય રીતિ છે " વ્યાસસૂત્રના ફલાધ્યાયના અતિમ પાદના નવમ સૂત્રના શ્રીમદણુભાષ્યમા સ્પષ્ટ કથન છે કે " પુષ્ટિમાર્ગ કેવલ અનુગ્રહસાધ્ય છે અને વૈદિક માર્યાદિક પ્રમાણુમાર્ગથી તે વિલક્ષણ છે " વૈષ્ણવો, આ સર્વ વાક્યોથી આપ સર્વને સ્પષ્ટ થયુ હશે કે પુષ્ટિમાર્ગનો સર્વ આધાર ભગવદનુગ્રહ ઉપર છે, તેમા દૈહિક લૌકિક વિષયાસક્તિનો લેશમાત્ર પણ નથી 'પુષ્ટિ'શબ્દનો આવો નિર્દોષ પૂર્ણગુણ અર્થ સમજવાનો શ્રમ લીધા વિના જ જે અજ્ઞાની જીવો આક્ષેપ કરવા પ્રવૃત્ત થાય છે તે સર્વ આક્ષેપ નિર્મૂલ છે એમ આપનો નિશ્ચય થયો જતો હશે તો મારા આજના વ્યાખ્યાનનો પરિશ્રમ સફલ થયો માનીશ

કેટલાક એમ જલ્પ કરે છે કે 'આ માર્ગ શ્રીગોપીજનનો છે અને ગોપિકાઓ કામી હતા તો કામને શા વાસ્તે દોષ માનવો જોઇએ ? આનો ખુલાસો હું ખાસ શ્રીમદ્ભાગવતના શ્લોકથી જ કરીશ શ્રીરાસોત્સવના પ્રસ્તાવમા વેણુનિનાદ કરીને વ્રજભક્તોને વૃંદાવનમા પધરાવીને પરમમાર્મિક ધર્મજ્ઞ શ્રીકૃષ્ણે શ્રી ગોપીજનની પરીક્ષાર્થે જે અનેક વચનો કહ્યા તેના ઉત્તરમા શ્રીવ્રજરત્નગોપિતિની આજ્ઞા કરે છે કે " હે વિભો ! હે સર્વસમર્થ ! (કામદોષ અભાગમા હોય તો કામનુ પણ મથન કરીને ભગવત્સ્વરૂપાનદનુ દાન કરવા પર્યન્ત સમર્થ !) આ પ્રકારે નિર્દય વચન વદવા આપને યોગ્ય નથી, અમે સર્વ વિષયોનો (सम्यक्) સારી રીતિથી (પુન ઉદય ન પામે તેવી રીતિથી સમૂલ સબીજ) આપના ચરણના મૂલમા ત્યાગ કરીને મુક્તપદ પ્રાપ્ત કર્યું છે, (જેમ અદ્યાવધિ અમે આપનુ ભજન કર્યું તેમ હવે આપ) અમારૂ ભજન કરો (અમારી ભક્તિથી અમારે અધીન થઈ જાઓ, અને નિજાનદનું પાન કરાવો), હે મિથ્યાપ્રહિન્ ! હે દુરાપ્રહિન્ ! અમારો ત્યાગ ન કરો. જેમ આદિપુરુષ વ્યાપિવૈકુંઠસ્થ શ્રીપુરુષોત્તમ મુમુક્ષુઓને સ્વરૂપાનદનુ દાન કરીને ભજે છે તેમ આપ અમને ભજો " વૈષ્ણવો, આથી આપનો નિશ્ચય થયો હશે કે

કેટલાકનો મત.

---

૧ કૃતિસાધ્ય સાધન જ્ઞાનભક્તિરૂપ શાસ્ત્રેણ બોધ્યતે તાભ્યા વિહિતાભ્યા મુક્તિ મર્યાદા । તદ્રહિતાનામપિ સ્વસ્વરૂપબલેન સ્વપ્રાપણ પુષ્ટિ ।

૨. મર્યાદાપુષ્ટિભેદેન દ્વિધોચ્યતે તત્ર સહકાર્યન્તરવિધિસ્તુ મર્યાદાપક્ષેપોચ્યતે પુષ્ટૌ તુ નાન્યાપેક્ષા ।

૩. સાધન વિના સ્વસ્વરૂપબલેનૈવ કાર્યકરણે હિ પુષ્ટિ' ।

૪ સાધનફલેન મોચનેચ્છા હિ મર્યાદામાર્ગીયા મર્યાદા વિહિતસાધન વિનૈવ મોચનેચ્છા પુષ્ટિમાર્ગમર્યાદા ।

૫ પુષ્ટિમાર્ગ અનુગ્રહૈકસાધ્ય પ્રમાણમાર્ગાદ્ વિલક્ષણઃ ।

૬ મૈવં વિભોઽર્હતિ ભવાન્ ગદિતું નૃશંસ સર્વત્યજ્ય સર્વવિષયાસ્તવપાદમૂલમ્ । ભક્તા ભજસ્વ દુરવગ્રહ મા ત્યજાસ્માન્ હેયો યથાદિપુરુષો ભજતે મુમુક્ષૂન્ ।

ગોપિકાઓએ તો વિષયનો ત્યાગ કર્યો હતો, અને તે ત્યાગ પણ સમૂલ હતો, મર્યાદાભક્ત પ્રેમલક્ષણા ભક્તિની ધ્વજા છે એ નિરુપધિ પ્રેમલક્ષણા ભક્તિમા કામનો આરોપ કરવા કરતા બીજુ અજ્ઞાન-તિમિર શુ હોઈ શકે ?

પરમભાગવત ભગવદીયો, વિષય અને ભગવદ્રતિમા બહુ તારતમ્ય છે તે સર્વ નિરૂપણ કરીને વિષય અને ભગવદ્રતિને કોઇ પણ જાતનો સબંધ નથી એ સિદ્ધ કરીશ, આપ સર્વને વિદિત છે કે વિષયાસક્તિ આસુર સંપત્તિ છે, વિષયાસક્તિ પ્રવાહ-માર્ગસ્થ જીવમા હોય છે, પણ ભગવદ્રતિ તો ઉત્તમોત્તમ દૈવી સંપત્તિ છે,

પુષ્ટિ અને વિષયા-સક્તિનુ તારતમ્ય

અર્થાત્ પુષ્ટિસ્થ ભગવદ્ભક્ત દૈવશિરોમણિ છે આસુર પ્રાવાહિક વિષયાકાંત જીવ નરકનો અધિકારી છે, વસ્તુત નરકાધિપતિ યમરાજ પણ તેમનો સાક્ષાત્ સ્પર્શ કરતો નથી, પરતુ પુષ્ટિસ્થ ભગવદાસક્ત જીવ તો ભગવલ્લોકના અધિકારી છે. પ્રાવાહિક આસુરી કામી જીવનો દેહ પ્રાણ ઇંદ્રિય અંતકરણ સર્વ વિષયાધાર આગમાપાયી અનિત્ય છે, પરંતુ પુષ્ટિસ્થ ભગવન્માધુર્યવિવશ ભક્તનો દેહ પ્રાણ ઇંદ્રિય અંતકરણ એ સર્વ ભક્તિરસાધાર ભગવદ્રૂપ હોવાથી નિત્ય છે પ્રાવાહિક આસુરી વિષયી લોકનુ વ્યુચ્ચરણ ભગવદિચ્છામાથી જ થયુ છે, પરતુ દૈવશિરોમણિ પુષ્ટિસ્થ જીવનુ વ્યુચ્ચરણ સાક્ષાત્ પ્રભુની તનુમાથી થયુ છે, શ્રીઅંગમાથી થયુ છે પ્રાવાહિક વિષયાસક્તિનિષ્ઠ જીવની કૃતિમાત્ર પ્રાકૃત હોય છે, ભગવદંગમાથી પ્રાદુર્ભૂત પરમરસિક ભક્તની કૃતિ સર્વાંતર્ભાવયુક્ત હોવાથી અપ્રાકૃત છે કામી પ્રાવાહિક જીવની લૌકિક કૃતિથી પરિણામે રોગાદિ ઉદ્ભવે છે, ભગવદ્ભક્તિરસિક પુષ્ટિસ્થ નિજ ભક્ત વાસ્તે તો શ્રીમદાચાર્યજી આજ્ઞા કરે છે કે " પુષ્ટિસ્થ [1]ભક્ત કદાપિ પાપને પ્રાપ્ત થતો નથી, રોગાદિ ઉપદ્રવ તે ભક્તને નડતા નથી, પ્રાય તે ભક્તો મહાનુભાવી હોય છે, શુદ્ધિ સંપાદન કરવાને તેઓ શાસ્ત્રોક્ત આચરણ કરે છે, અને કરાવે છે " પ્રાવાહિક કામીને વિષયાસક્તિમા પણ ભય રહે છે, શ્રીમદાચાર્યચરણ સેવાફલમા આજ્ઞા કરે છે કે " લૌકિક [2]ભોગમા " વિઘ્ન " આવ્યા વિના રહેતા જ નથી, કદાચિત વિઘ્ન નિવૃત્ત થાય તો પણ લૌકિક[3] ભોગનુ સુખ " અલ્પ " છે અને પરિણામે લૌકિક ભોગ " ઘાતક " થાય છે, ભગવદ્ભક્તિરસમાં કોઇ પ્રકારની ભીતિ કે વિઘ્ન જ નથી. ઉપનિષદો ઉદ્ઘોષ કરે છે કે " પૂર્ણ પ્રકટ પરબ્રહ્મ શ્રીકૃષ્ણના સ્વરૂપાનદનુ પાન કરનાર કદાપિ કોઇથી પણ ભય પામતો નથી " કામી લોક પણ કામી જીવની નિંદા જ કરે છે, પુષ્ટિભક્તિની ધ્વજારૂપ શ્રીગોપીજનની તો ઉદ્ધવ જેવા જ્ઞાનિભક્ત પણ પરમ પ્રશંસા કરે છે અને આજ્ઞા કરે છે કે "શ્રીનદરાયજીના[4] વ્રજની સ્ત્રીઓના ચરણારવિંદની રજને અભીક્ષ્ણશ હુ વદન કરુ છુ" પ્રાવાહિક કામી સર્વથા દુષ્ટ હોય છે, નિંદાપરાયણ છે, પરતુ પુષ્ટિસ્થ વ્રજભક્તના તો સાક્ષાત્ શ્રીકૃષ્ણ ઋણી (કરજદાર) થઇને રહેલ છે, અને સ્વત આજ્ઞા કરે છે કે "હે ગોપીજનો, [5]દેવતાઓનુ આયુષ્ય પ્રાપ્ત કરીને પણ આપના સ્નેહનો બદલો મારાથી વળી શકે એમ નથી" વિષ્ણુવો, આપને સ્પષ્ટ થયુ હશે કે વિષય અધર્મનુ મૂલ છે, વિષયાત્મક કામ Sensuality કહેવાય છે, પરતુ પુષ્ટિ ભગવદ્ભક્તિ હોવાથી ધર્મનો પણ ધર્મ છે, જ્ઞાનનુ પણ જ્ઞાન છે, યોગનો પણ યોગ છે, સાખ્યનુ પણ સાખ્ય છે, તપનુ પણ તપ છે, મુક્તિની પણ મુક્તિ છે ભક્તિની પણ ભક્તિ છે, રસનો પણ રસ છે, અને Lyrics નુ પણ Lyric છે

---

૧ न ते पाषण्डतां यान्ति न च रोगाद्युपद्रवा । महानुभावा प्रायेण शास्त्र शुद्धत्वहेतवे ।

૨ सविघ्नोऽल्पो घातक स्याद् ।

૩ आनन्द ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन ।

૪. वन्दे नन्दव्रजस्त्रीणा पादरेणुमभीक्ष्णश ।

૫ न पारयेऽह निरवद्यसयुजा स्वसाधुकृत्य विबुधायुषापि व । या माऽभजन् दुर्जरगेहशृखला सवृश्च्य तद्व प्रतियातु साधुना ।

ભાગ્યવાન્ વૈષ્ણવો, "વૈષ્ણવ"શબ્દનો અર્થ સ્પષ્ટ થઈ ગયો તેમના કર્તવ્યનો વિચાર કરતા પહેલા અકર્તવ્યનો વિચાર કરવાની પ્રતિજ્ઞા પરિપૂર્ણ થઈ. અકર્તવ્યમાં પ્રથમ વિષય છે, વિષય અને પુષ્ટિનો સભ્રમ કરીને પુષ્ટિને નામે વિષયાસક્તિનો આદર કરવો અત્યત અયોગ્ય છે એક અર્ધ શ્લોકમાં શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીએ અકર્તવ્યનુ નિરૂપણ કર્યું છે "મિથ્યા[1] આલાપ મિથ્યા ક્રિયા અને મિથ્યા ધ્યાનનો સર્વથા પરિત્યાગ કરવો" વાણી વડે મિથ્યા આલાપ ન કરવો, શરીર વડે મિથ્યા ક્રિયા ન કરવી, મન વડે મિથ્યા ધ્યાન ન કરવુ અર્થાત્ મિથ્યા માર્ગમાંથી વૃત્તિઓનો કાયિક વાચિક અને માનસિક નિરોધ કરી દેવો એ દોષનિવૃત્તિ પણ જીવકૃત સાધનથી સર્વાંશે અશક્ય છે, શરણદ્વારા ભગવદાશ્રય સિદ્ધ થતા શરીર વાણી અને મનમા પૂર્ણ ભગવત્પ્રવેશ થાય ત્યારે જ સર્વ દોષની સપૂર્ણ નિવૃત્તિ થાય છે એ સિદ્ધાન્તનુ વિસ્મરણ થવુ જોઇએ નહિ

અકર્તવ્યનો ઉપસંહાર.

વૈષ્ણવોએ શુ ન કરવુ એ વિચાર થઈ રહ્યો. હવે વૈષ્ણવોએ શુ કરવુ એ પ્રતિપાદન કરવાનો આરભ થાય છે. કર્તવ્યનો ઉદ્દેશ નક્કી થયાથી કર્તવ્યની સ્ફૂર્તિ સરસ થાય છે તિરોહિતાનન્દ જીવના સર્વ દોષ નિવૃત્ત થાય, દેહ પ્રાણ ઇંદ્રિય અત કરણ નિર્દોષ પૂર્ણગુણ થાય, અને પરમકાષ્ઠાપન્ન પુરુષોત્તમ શ્રીકૃષ્ણના રસાત્મક સ્વરૂપાનન્દનુ સદાસર્વદા પાન બન્યુ રહે એ આપણા સર્વ કર્તવ્યનો ઉદ્દેશ હોવો જોઇએ. દેહ ઇંદ્રિય ઇત્યાદિના દોષ ભક્તિમાર્ગમા કેવી રીતિથી નિવૃત્ત કરવા એ સબંધી વિચાર અનેક સ્વમાર્ગીય ગ્રંથોમા થયેલો છે, પરતુ તદ્નુસાર આચારવિચારને અનુસરનાર ગુરુ વિના તે વિચાર ઉપયોગમા યથાવત્ મૂકી શકાતા નથી શ્રીમદાચાર્યચરણ નિરોધલક્ષણમા આજ્ઞા કરે છે કે "વિષયના આવેશ વડે દુષ્ટ થયલી ઇંદ્રિયોનુ કલ્યાણ કરવાને સર્વ વસ્તુ ભૂમસ્વરૂપ ઈશ્વર શ્રીકૃષ્ણમાં યોજવી" ભક્તિશાસ્ત્રમા ઇંદ્રિયોનુ નિર્દોષત્વ સપાદન કરવાને સર્વ પદાર્થ ભગવાનને નિવેદન કરવા એમ સ્પષ્ટ કહ્યુ છે, પરતુ પ્રભુને સર્વ પદાર્થનુ નિવેદન કરવાથી જે પ્રકારે ઇંદ્રિયો નિર્દોષ થાય છે તે પ્રકારનો સાક્ષાત્કાર જ્યાં સુધી થતો નથી ત્યાં સુધી ભક્તિશાસ્ત્રાજ્ઞા પણ વસ્તુત દુર્બલ રહે છે. ભક્તિશાસ્ત્રમા જે પ્રકાર નિરૂપણ કર્યો છે તે પ્રકારનો જ આદર કરીને ઇંદ્રિય ઇત્યાદિના દોષ નિવારણ કરનાર મહાપુરુષના સદાચાર દૃષ્ટિગોચર થાય છે ત્યારે જ સામાન્ય પુરુષોને ભક્તિમાર્ગોક્ત પ્રકાર પણ ઉપયુક્ત થવાનો સભવ છે, અર્થાત્ ભક્તિમાર્ગમા પણ ગુરુની આવશ્યકતા પ્રાથમિક છે ગુરુ વિના અકર્તવ્યતાનો ત્યાગ અને કર્તવ્યતાનો આદર કયા પ્રકારે કરવો એ યથાવત્ ગ્રહણ કરી શકાતુ નથી.

કર્તવ્યનો ઉદ્દેશ

ભક્તિમાર્ગમા ગુરુ કેવા કરવા જોઇએ એ વિષે શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીનાં વચન કેવા નિસ્વાર્થી અને નિષ્પક્ષપાતી છે તેનો સાક્ષાત્કાર કરો. નિબધના ભક્તિપ્રકરણમા એ સત્યવક્તા આચાર્ય આજ્ઞા કરે છે કે 'જિજ્ઞાસુએ શ્રીકૃષ્ણની સેવામા તત્પર દમાદિરહિત શ્રીમાગવતના તત્ત્વના જ્ઞાતા નરની નજરેનજર ખાત્રી કરીને આદરપૂર્વક ભજન કરવુ' આ શ્લોક વિષે મારે ઘણુ વક્તવ્ય છે ગુરુ જો સેવાને જ ઉત્તમ જાણતો હોય તો તે સ્વત સેવા કેમ ન કરે? જે ગુરુ સેવાનો ઉપદેશ કરતો હોય પરતુ સ્વત સેવા ન કરતો હોય તો તે ગુરુ યોગ્ય નથી એ વૈષ્ણવોએ ધ્યાનમા રાખવુ શ્રીમદાચાર્યચરણ આજ્ઞા કરે છે કે પ્રથમ તો ગુરુ શ્રીકૃષ્ણની સેવામા સ્વત તત્પર જોઇએ ગુરુ પરમકાષ્ઠાપન્ન પરિપૂર્ણ સાક્ષાત્

ભક્તિમાર્ગીય ગુરુનાં લક્ષણ

---

૧ મૃષાલાપક્રિયાધ્યાન સર્વથૈવ પરિત્યજેત્ ।

૨ વિષયાવેશદુષ્ટાનામિન્દ્રિયાણા હિતાય વૈ । કૃષ્ણસ્ય સર્વવસ્તૂનિ ભૂમ્ન ઈશસ્ય યોજયેત્ ।

૩ કૃષ્ણસેવાપર વીક્ષ્ય દમાદિરહિત નરમ્ । શ્રીમાગવતતત્ત્વજ્ઞ ભજેજ્જિજ્ઞાસુરાદરાત્ ।

શ્રીકૃષ્ણની જ સેવામા તત્પર હોવા જોઇએ, કોઈ વિભૂતિમાં આસક્ત ન હોવા જોઇએ શ્રીકૃષ્ણની સેવામા તત્પર હોવા જોઇએ, અર્થાત્ શ્રીકૃષ્ણની પણ સેવા અથવા પરિચર્યા મુખ્ય છે, ઉપાસનાવત્ પૂજાવત્ મોટા આડંબરની જરૂર સેવામાં નથી! શ્રીકૃષ્ણસેવામા તત્પર જોઇએ, અર્થાત તેણે અહર્નિશ પ્રભુસેવા કરવી જોઇએ, એમ નહિ કે ૧। કલાકમાત્રની સેવાકૃતિથી કૃતાર્થતા માનીને ચાલ્યા બૅન્ડસ્ટૅન્ડ ઉપર ફરવા! અર્થાત્ પ્રથમ તો ગુરુએ શ્રીકૃષ્ણ પોતાનુ સર્વસ્વ છે એમ જાણવુ જોઇએ, શ્રીકૃષ્ણની સેવા કરવી જોઇએ, અને શ્રીકૃષ્ણની સેવામાં તત્પર રહેવુ જોઇએ ગુરુમા આ પ્રથમ અભંગાત્મ્ય સદ્ગુણ છે, તેથી એ સદ્ગુણ વિષે માત્ર કર્ણોકર્ણિકાથી શ્રવણ કરીને જ ગુરુ ન કરી દેવા, પરતુ નજરે-**નજર ખાત્રી કર્યા પછી** તે ગુરુને શરણે જવુ "શ્રીકૃષ્ણની સેવામા તત્પરતા" એ કાંઈ જેવો તેવો સદ્ગુણ નથી એ સદ્ગુણ વસ્તુત ન હોવા છતા દંભાદિનિમિત્તપુર સર પણ કેટલાક કૃષ્ણસેવા કરે છે, તેમ ન હોવુ જોઇએ ગુરુ દંભાદિ દોષથી મુક્ત હોવા જોઇએ, ગુરુ **દંભાદિરહિત** જોઇએ, એમ દ્વિતીય સદ્ગુણની આવશ્યકતા શ્રીમદાચાર્યજી પ્રતિપાદન કરે છે ગુરુમા **દંભ આદિ** છ આસુર સંપત્તિમાની એક પણ આસુર સંપત્તિ ન હોવી જોઇએ અર્થાત્ ગીતાના ષોડશાધ્યાયમાં **દંભ દર્પ અભિ-માન ક્રોધ કઠોરતા** અને **અજ્ઞાન** એ છ[1] આસુર સંપત્તિ નિરૂપણ કરી છે તે છએ આસુર સંપત્તિથી ગુરુ સદાસર્વદા મુક્ત હોવા જોઇએ ગુરુ **દાંભિક** ન જોઇએ, ગર્વિષ્ઠ ન જોઇએ, **અભિમાની** ન જોઇએ, **ક્રોધી** ન જોઇએ, **કઠોર** ન જોઇએ અને **અજ્ઞાની** ન જોઇએ "દંભાદિરાહિત્ય" એ ગુરુમા દ્વિતીય સદ્ગુણ થયો શ્રીમદાચાર્યજી તૃતીય સદ્ગુણ નિરૂપણ કરતાં આજ્ઞા કરે છે કે 'ગુરુ **નર** હોવો જોઇએ,' પુરુષ હોવો જોઇએ, અર્થાત્ ધર્મ અર્થ કામ અને મોક્ષથી પણ પરમ અધિક સર્વોત્કૃષ્ટ[2] ભક્તિપુરુષાર્થ સિદ્ધ કરવાની અને કરાવવાની યોગ્યતા તે ગુરુમા હોવી જોઇએ, જે ગુરુ પોતે સ્ત્રૈણ હોય તે અન્યને ભક્તિપુરુષાર્થ કયાથી સિદ્ધ કરાવી આપે? અર્થાત્ ભક્તિપુરુષાર્થ સિદ્ધ કરવામા અને કરાવવામા સ્ત્રી[3] વા સ્ત્રીવત્ આચાર કરનાર ગુરુ **નિરર્થક** છે ચતુર્થ સદ્ગુણ નિરૂપણ કરતા શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્ય આજ્ઞા કરે છે કે 'ગુરુ **શ્રીભાગવતના તત્ત્વના જ્ઞાતા** હોવા જોઇએ'. ગાયત્રી **બીજ** છે, વેદ **વૃક્ષ** છે, અને શ્રીમદ્-ભાગવત એ વૃક્ષનુ ફલ છે, તેથી બીજાત્મક ગાયત્રીનુ મનન કરીને, વૃક્ષાત્મક વેદનુ અવગાહન કરીને, ગીતા અને બ્રહ્મસૂત્રથી સિદ્ધાંતવિનિશ્ચય કરીને, શ્રીમદ્ભાગવતને પરમફલરૂપ માનનાર ગુરુ જોઇએ શ્રીમદ્-ભાગવત ફલરૂપ છે એમ જેને નિશ્ચય નથી તે ગુરુ થવાને પણ યોગ્ય નથી માત્ર શ્રીમદ્ભાગવતનો જ જ્ઞાતા નહિ, પણ શ્રીભાગવતના **તત્ત્વનો**[4] **જ્ઞાતા** ગુરુ જોઇએ શ્રીમદ્ભાગવતના તત્ત્વનુ જ્ઞાન એ ગુરુમા ચતુર્થ સદ્ગુણ છે ભક્તિમાર્ગમા એવા **ચતુર્ગુણવિશિષ્ટ** ગુરુ હોવા જોઇએ, અને એવા ચતુર્ગુણ-વિશિષ્ટ ગુરુને શરણે જઈને જીજ્ઞાસુએ પરમ આદરપૂર્વક ભજન કરવું આવા ગુરુ તરફ જીજ્ઞાસુએ પણ કૌતુક આદિ દૃષ્ટિથી જોવુ નહિ, પરતુ શુદ્ધ આદર રાખવો, એમ શિષ્યનો પણ ધર્મ કહ્યો. ગુરુમા

---

૧. દંભો દર્પોઽભિમાનશ્ચ ક્રોધ પારુષ્યમેવ ચ । અજ્ઞાન ચાભિજાતસ્ય પાર્થ સંપદમાસુરીમ્ ।

૨ સર્વોત્કૃષ્ટ ભક્તિપુરુષાર્થ સિદ્ધ કરવાની યોગ્યતા શ્રીગોપીજનમા પરિપૂર્ણરૂપે હોવાથી શ્રી-ગોપીજનનુ પુષ્ટિમાર્ગીય ગુરુત્વ તો નિરાબાધ જ છે

૩ "હે પુત્ર, શ્રીગોપીજન "સ્ત્રી" નથી, પરતુ તે તો ખરે શ્રુતિ છે, બ્રહ્મ (બ્રહ્મા) શિવ રોષ અને લક્ષ્મી કોઈ ક્વચિત્ પણ તેમની સમાન નથી" એ બૃહદ્વામનપુરાણના શ્લોકનો ઉપન્યાસ શ્રીમદ્ગિરિ-ધરકુમાર શ્રીવિઠ્ઠલેશ્વરે શ્રીવિદ્વન્મંડન ગ્રંથમાં કર્યો છે તેનુ અનુસન્ધાન પેલો ગ્રહિલ મૂલશંકર વિદ્યાર્થી હજી પણ સાત્ત્વિક શક્તિથી કરવા શ્રમ લેશે? લો આ રહ્યો તે શ્લોક. ન સ્ત્રિયો વ્રજસુન્દર્યં પશ્ય સા મૃતય કિલ । નાહ શિવશ્ચ રોષશ્ચ શ્રીશ્ચ સામિ સમા ક્વચિત્ ।

૪ શ્રીમદ્ભાગવતના તત્ત્વનુ જ્ઞાન શ્રીસુબોધિનીજી અને તત્ત્વદીપનિબંધ વિના થતુ નથી એ લક્ષમા રાખીને વૈષ્ણવોએ ગુરુને શરણે જવુ

સ્માર્ત કોલાહલ.

(અનુસંધાન પૃષ્ઠ ૧૧૦)

॥ શ્રીવલ્લભો જયતિતમામ્ ॥

શાસ્ત્રાર્થની છેલ્લી નોટિસ.

અયાચી મણિશંકર ભગનલાલ મુ૦ પાટણ

તમારો જવાબ મળ્યો, તમારા નિયમાનુસાર શબ્દેશબ્દ વર્ત્તવુ બહુ મુસ્કેલ છે. તો પણ અમે તે પ્રમાણે વર્ત્તના કાલજી રાખીશુ શાસ્ત્રાર્થ મારી સાથે નોટીસોથી કરવાનો પત્રવ્યવહાર થએલો છે એટલે તમને મારી હાર અથવા મારી જીત શિવાય બીજી હાર જીત વચ્ચે લાવવાની નથી

૧ મારા તરફથી મારી સમજ મુજબ જે આક્ષેપો મારા માસિકમા આવેલાનુ તમો માનો છો તે જ વિષયનો શાસ્ત્રાર્થ છે અને તે તમે માન્ય રાખ્યો તેથી ખુશી થયો છુ

૨ શરુઆતમા તમો જે **परमशिवो विजयतेतमाम्** એ વાકય વાપરો છો તે શંકરાચાર્યના મતથી વિરુદ્ધ છે માટે પ્રથમ તમારા મતાનુસાર તે વાકય પ્રતિપાદન કરવાની જરુર છે તે સિદ્ધ કરવાની તમારી પ્રથમ ફરજ છે અને તે પ્રમાણે તમારા સિદ્ધાન્તાનુસાર સદરહુ વાકય **परमशिवोविजयते तमाम्** નુ પ્રતિપાદન કર્યા બાદ મારા માસિકમા તમારા વિરુદ્ધ જે આક્ષેપો તમે માનો છો તે લેવામા આવશે બીજી કોઈ વિષયને તમારે અડવાનુ નથી તે પણ તમે માન્ય રાખ્યું છે તેથી ખુશી થયો છું.

૩ અમારા તરફથી કોઇ પણ જાતનો સુબેહનો ભગ થવાનો નથી તમારા ગુરુ ભાઇઓનો તમે યોગ્ય કાણુ રાખી કોઇ પણ જાતનુ તોફાન ન કરે તેમજ વિતંડાવાદ કે વિષયાતર ન થાય તેનુ પૂર્ણ લક્ષ અને કાળજી રાખશો

૪ શાસ્ત્રાર્થ કરનાર હુ મારી તરફથી શાસ્ત્રીજી ભગનલાલ ગણપતિરામ તથા શાસ્ત્રીજી વસંતરામ હરિકૃષ્ણ આ બે છે તમારા તરફથી જેઓના નામ પ્રથમ થી આપવામા આવશે તેમને તમારા ગુરુની સાથે ક્રમશ બોલવાનો અવકાશ આપવામા આવશે તે સિવાય કોઈ અન્ય માણસ તમારા તરફથી બોલશે તો શાસ્ત્રાર્થ બધ કરવામા આવશે, અત્યાર સુધી તમારા ખુલાસાના અભાવે તમારા ગુરુ સિવાય બીજા કોઇ શાસ્ત્રાર્થ કરનાર નથી એમ મેં સ્વીકારેલુ છે એટલે બીજા કોઇને બોલવાનો હક નથી અને તે તમે માન્ય રાખ્યો છે તે માફ થયું છે

૫ શાસ્ત્રાર્થ સસ્કૃત ભાષામા કરવામા આવશે અને તેની ના પાડવામાં આવશે તો પ્રાકૃતમા કરવા હરકત નથી

૬. મધ્યસ્થ તરીકે તટસ્થ શ્રીરામાનુજ સંપ્રદાયના શ્રી લક્ષ્મીનારાયણના પંડિતજી મધુસૂદનજી ને હુ પસંદ કરુ છું

૭ તમોએ નિયમો લખ્યા પ્રમાણે કેટલોક બંદોબસ્ત રાખવાની જરૂર છે તેથી હુ બંદોબસ્ત અને યોગ્ય ગોઠવણ થયા બાદ તમને ખબર આપુ તે સમયે તમારે આવવાનુ છે તે પ્રમાણે ખબર આપ્યા સાથે સાજના ૭ વાગ્યાની જણાવી છે

૮. તમારા ગુરુ માત્ર વાદી છે મધ્યસ્થ નથી માટે પક્ષકારને યોગ્ય બોલક આપવામા આવશે

૯ તમો તમારા આચાર્યની બેઠક પૃથક્ રાખવા સંબંધી લખો છો તો તમારા પક્ષની બેઠક તરફ તે તમારે તમારી મરજી મુજબ ગોઠવવા અને હરકત નથી.

૧૦. આ નોટિસ તમને મળ્યા પછી અઘાં કલાકની અદર તેનો જવાબ જો નહિ આપવામાં આવે તો તમે વિનાકારણ લબાવો છો એમ ઠરશે

અને આ શાસ્ત્રાર્થ અટકી પડશે માટે તુરત જવાબ આપશો અને શાસ્ત્રાર્થ કરવા આપના ગુરુશ્રી સાથે પધારશો. તા. ૧—૧૦—૧૧

शास्त्री ज्येष्ठाराम हरजीवन जोशी, सही दा० पो.

તા૦ ક૦—આ નોટીસ મારા માણસ બારોટ લલ્લુભાઈ કાલીદાસ સાથે મોકલાવેલી પરંતુ તેને ઠેરઠેર રખડાવી રાત્રે ચઢાવી આખરે સાંજે છ વાગે સત્તાધિકારી આર્હત સભા બધ કરાવ્યા બાદ છેક સાત વાગે પરત આવી તેથી સુજ્ઞ લોકની જાણ માટે અત્ર પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવે છે.

પ્રસિદ્ધિ પત્રિકા.

પાટણના વૈષ્ણવમાર્તંડના સપાદક પંડિત જ્યેષ્ઠારામ હરજીવન જોશી ઉપર તા—૧૫ ૯—૧૧ ના રોજ સ્માર્તપ્રજાની અનુમતિ છે એવા અર્થની અયાચી મણિશકર ભગનલાલે એક નોટિસદ્વારે તેમના ધર્મની લાગણી દુખાય એવો વિષય "વૈષ્ણવમાર્તંડ" મા લખાયો છે એવા બ્હાનાથી આપેલી, તેનો જવાબ તા ૨૧—૯—૧૧ ના રોજ યોગ્ય ખુલાસો કરવા અને તે સબધી શાસ્ત્રાર્થ કરવા શાસ્ત્રી તરફથી આપવામા આવેલો તેથી શાસ્ત્રાર્થ કરવાની તૈયારી તા ૨૩—૯—૧૧ ની નોટિસ મણિશકર અયાચીએ તથા 'સ્માર્તધર્મના મુખ્ય આચાર્ય તેમના ગુરુ કમુલ રાખી સયુક્તિક શાસ્ત્રાર્થનો વિષય ફેરવી પુષ્ટિમાર્ગ ઉપરે અગત હુમલો કરી વળ-ગવા આવ્યા જે ઉપરથી પુન તેમને સમજ પડે તેવો તા. ૨૬—૯—૧૧ ના રોજ શાસ્ત્રી જ્યેષ્ઠારામે જવાબ મોકલ્યો અને તે લોકોએ પુછેલુ હોવાથી શાસ્ત્રાર્થનુ સ્થળ મુબાઈ અને મધ્યસ્થ તરીકે ડાક્ટર ભાડારકરનુ નામ આપવામા આવ્યુ, જેનો જવાબ તા. ૨૭—૯—૧૧ ના રોજ વિલાયતી તરીકે આપવામા આવ્યો અને અમો જવાનુ આમ રાખ્યુ, આમ કર્યુ, પરતુ તેમને કોઈ રીતે માર્ગ ન મળે તે સારુ તા ૧ લી ઓક્ટોબર ૧૯૧૧ ના રોજ શાસ્ત્રી ભગન-લાલ ગણપતિરામ એમ એ તથા શાસ્ત્રી વસન્તરામ હરિકૃષ્ણ તથા મિ મૂલચદદાસ તેલી વાળા બી એ તથા રા૦ વાડીલાલ બી એ એલ્ એલ્ બી વિગેરે જેઓને પાસ આ કામ માટેજ મુબાઇથી બોલાવવામા આવ્યા હતા તે પછી શાસ્ત્રી જ્યેષ્ઠારામજી તરફથી આજ રોજ એટલે તા૦ ૧—૧૦—૧૧ ના રોજ શાસ્ત્રાર્થ કરવા નિમંત્રણ કરવામા આવ્યુ હતુ, અને શાસ્ત્રીજી ભગ-નલાલભાઈ તરફથી સસ્કૃતમા માયામતખડનકારિકાના શ્લોક રા૦ લક્ષ્મીદાસ નાગરદાસ શ્રૉફ મા-ફતે મોકલવામાં આવતા તેનો અસ્વીકાર કર્યો નિમત્રણમા **परमशिवो विजयतेतमाम्** એ વાક્ય જે વારવાર પ્રતિપક્ષી તરફથી આરભમા તેમના સપ્રદાયના ખરા જ્ઞાનના અભાવથી લખ-વામા આવે છે તે ખુદ શંકરમતવિરુદ્ધ હોવાથી તેઓ કેવી રીતે લખે તેનું જ પ્રતિપાદન પ્રથમ આગણ કરવામા આવ્યુ હતુ તે ઉપરાત બતર બાબતો પર પણ શાસ્ત્રાર્થ કરવા તેમને સપૂર્ણ છુટ આપી હતી તે તમામ નોટિસો આજલગી છપાઇ બહાર પડી ચુકેલી છે તેનો જવાબ અયાચીના ગુરુશ્રી શકરાચાર્ય અમારી પસદ કરેલી જગ્યાએ એટલે પાટણ ચાચરીઆમાં આવેલી લાલવાડીમા સાજના પાચ વાગે આવવા ખુશી છે અને તે સબંધે વિગેરેની યોગ્યતા સારુ અને બદોબસ્ત માટે કેટલાક નિયમો લખી મોકલ્યા અને વિ-

પમા જણાવ્યું કે પાંચ વાગ્યાનો વખત બહુજ વહેલો છે આ જવાબ અમને આશરે ચાર વાગે સાંજે મળ્યો હતો તેમના આગેલા ખુલાસાનો જવાબ લખતા કેટલોક વખત જાય તેમ હોવાને લીધે અમે તાત્કાલિક એક ચિઠ્ઠી લખી મોકલી કે અમે તમારો આગેલ ખુલાસો મોકલી એ છીએ અને તે જવાબ પહોંચ્યા પછી તરતજ તમારે શાસ્ત્રાર્થ માટે આવવુ આ ચીઠ્ઠી તેમને સાડાચાર વાગે પહોંચી તેવો જવાબ લઈને આવેલ માણસ સાથેજ તુરત તેમના આગેલા ખુલાસાઓનો વિગતવાર જવાબ મધ્યસ્થનું નામ જણાવી મોકલી દીધો પરતુ તે માણસને ટલ્લેચડાવી તે જવાબનો સાંજના સાત વાગ્યા સુધી સ્વીકાર કરવામા ન આવ્યો અને અદ્યાપિ પણ તે લીધેલો નથી

શાસ્ત્રાર્થ કરવાની જગાએ બેઠક વિગેરેનો પૂર્ણ બંદોબસ્ત કરવાનીગોઠવણ કરવામા આવી અને શ્રોતાજનના ટોળા બિલકુલ શાંતિથી શાસ્ત્રાર્થ સાંભળવાને ઉત્સુક બેસી રહ્યા હતા, પરતુ પ્રતિપક્ષ ફસાઈ પડયો હોય એમ એમને ભય થવાથી અને તેમના પોતાના વહાલા સૂત્ર પરમ-શિવો વિજયતેતમામ્નુ વાસ્તવિક રીતે મહન કરી નહિ શકીએ એવી ધાસ્તિથી કિંવા કોઈ એવા બીજા ભયથી સરકારની ઓથ લીધાનું જણાયુ કારણ કે સાંજના ૬ લાગ્યા ને સુમારે પોલીસ અમલદારોએ આવી શાસ્ત્રી જયેષ્ઠારામને વાડી ખાલી કરવાનો સરકારી હુકમ મોઢેથી કહ્યો. અને સભા બંધ કરવા લેખી સૂચના આપવામાં આવી. પ્રતિપક્ષનો એક પણ મનુષ્ય આ હકિકતથી માહિતગાર હશે તેથી વાડીમા આવ્યો નહોતો

રા૦ ગોકુલદાસ વકીલ તથા બીજા ગૃહસ્થોએ મે૦ નાયબ સુબા સાહેબ તથા બીજા અ-મલદારોને સભામા આવવાનુ આમંત્રણ કરેલુ તે તેમણે ખુશીથી કબુલ કર્યું હતુ અને સભા ન થવા દેવાનો તેમનો જરાપણ વિચાર જણાયો નહોતો પણ પછાડીથી સભા અટકાવાના હેતુથી કિંવા એવા કોઈ કારણથી પ્રતિપક્ષના કેટલાક ગૃહસ્થોએ જઈ મે૦ નાયબ સુબા સાહેબને તેમને કરાવતી હકીકત જણાવી સભા બંધ કરાવી એમ જણાય છે એટલે પ્રથમ શરુઆતમા શાસ્ત્રાર્થ કરવાનો ડોળ કરી તેમના ખર્ચની મોટી મોટી માગણીઓ કરી જ્યારે ખરો પ્રસંગ આવ્યે ત્યારે ખશી જવાનો રસ્તો લીધો છે. તા૦ ૧–૧૦–૧૧.

પ્રકાશક,

શ્રી પુષ્ટિમાર્ગીય જ્ઞાનવર્ધક વૈષ્ણવ સભા.

આ હેકાણે કોમકોમમા કલહ કરાવનાર તરીકે લોકોમા ઓલખાતા એક પ્રખ્યાત મહાપુ રુષના (!) આ વર્ષના ચાતુર્માસ્યના કાર્યનો અમુક હદ સુધીનો ક્રમ પૂરો થાય છે.

વિચારો.

ધાર્મિક મતભેદ, ધાર્મિક વાદવિવાદ અને ધાર્મિક કલેશ આજના જમાનામાં જ અને તે પણ ભારતવર્ષમા જ અસ્તિત્વ ધરાવે છે–બીજે હેકાણે નહિ, એમ માનવામા કઇ પણ સબલ કારણ મલતુ નથી તે તો સર્વ દેશોમા ચાલુ જ હતા, છે, રહેશે પરંતુ એટલુ તો વિના ઘુટકે માની લેવું પડશે કે આ દેશમા ધાર્મિક આંદોલન જે ઈર્ષ્યા અને પરસ્પર કડવાસનુ હાનિકારક સ્વરૂપ પકડે છે, તેવું સ્વરૂપ બીજા દેશોમા ક્વચિત્ જ આવતુ હશે આ દેશની ધાર્મિક ચર્ચા ઘરઘરમા, જ્ઞાતિ-જ્ઞાતિમા, સમહના હિતકાર્યમા પણ આડે આવી જાય છે આ વાત સ્માર્ત અને વૈષ્ણવોના સબ-ધમા અનુભવમા આવી છે ધર્મસબધી ખડનમડનો આજના નહિ, પરતુ સદી થયા આવ્યા આવે છે ગોકુની વાત છે કે તે તત્ત્વશોધક માર્ગનો આશ્રય કરી થતા ખડનો હાલ બધ થઈ ગયા

છે, અને કેવલ દ્વેષપૂર્વક પોતાના હલકા સ્વાર્થની તૃપ્તિ કરવા માટે જ હાલના ખંડનમંડનો ચાલુ થયા હોય એમ લાગે છે શંકરાચાર્ય માધવતીર્થે પોતાનું નામ યાદગાર થઇ પડે એવા અથવા બીજા કોઇ હેતુથી ગુજરાતમા છેલ્લા પાચ વર્ષમા ધાર્મિક કલેશથી લોકોની લાગણી ઉશ્કેરવાની પેરવી કરી હોય એમ જણાય છે સ્વામિનારાયણ સાથે કલેશ કર્યો, પણ તે લોકો સ્વપક્ષસમર્થનમા નિસાધન હોવાથી નમી પડ્યા આ સંપ્રદાય પણ એમ જ નમી પડશે એની ધારણાથી સ્વામીનારાયણ સંપ્રદાય ઉપર છપાવેલી ચોપડીમાં જ આ સંપ્રદાય ઉપર પણ ગર્ભિત હુમલા કરવામાં આવ્યા હતા આ સંપ્રદાય કંઇ તુરત નમણા લે એવો નથી. સામા પક્ષના હુમલાનો જવાબ વાલી, પોતાના સિદ્ધાંતનું વૈદિકત્વ બતાવી માયાવાદનું અવૈદિકત્વ જાહેરમા પ્રસિદ્ધ કર્યું. આ વાદ થોડાવખત સુધી કઇ ઠીક ચાલ્યો, પણ સામો પક્ષ જર્જરિત થઇ ગયો હોય એમ હોવાથી એકદમ બીજે રસ્તે ઉતરી પડ્યો, અને ગાવિપ્રદાનમા જ જય માનવા લાગ્યો આથી માયાવાદના અવૈદિકત્વની ચર્ચા બંધ પડી અને કેવલ સામસામી અંગત બાબતો અને અશ્લીલ શબ્દોની ધારા ચાલી આમા આ સંપ્રદાયના આગેવાનો તથા વિદ્વાનોનો બિલકુલ હાથ ન હતો સામા પક્ષ તરફથી વૈષ્ણવોને ગોહત્યારા બનાવનારું પુસ્તક પ્રકટ થયું વૈષ્ણવોએ ફકત એ ચીયરા ઉપર તિરસ્કાર દર્શાવી પોતાની સાત્વિકતા દર્શાવી હાલમા એ વર્ષથી આ કલેશ બન્ધ થયો હતો તદ્દન નહિ પણ રાખથી ઢંકાયલા અગ્નિ જેવો હતો તેને ફરી સિદ્ધપુરમા અને પાટણમા ચેતાવ્યો છે 'કલ્પિતમાર્ગકટકકુમદાવાનલ' નામનું, અધમ પુસ્તક બહાર પાડી શાંત થયલા કલેશને ફરી વધાર્યો. આ ચોમાસું શંકરાચાર્યે પાટણમા કરવાનું ઠરાવ્યું ત્યા પુષ્ટિમાર્ગીય વૈષ્ણવો છે તેને સતાવવા માટે પ્રયત્ન થવા લાગ્યો

બાવણો દ્વારા ગર્ભિત અને ખુલ્લા તુલસીમાલાને ફેંકી દેવાના અને પુષ્ટિમાર્ગ ઉપરના બીજા હુમલા શરૂ થયા એક ભાડુતી ભાવણકનો તેને માટે બાસ મોક્લ્યો છે વૈષ્ણવોની લાગણી દુખાવનારા પુસ્તકો વેચ્યા, વૈષ્ણવોએ બંધ કર્યું. દેવેતર સૃષ્ટિ આથી નારાજ થઇ બીજો રસ્તો શોધવા લાગી. શાસ્ત્રી જ્યેષ્ઠારામને નોટીસ આપી. અર્થાત્ ઝઘડાની શરૂઆત નોટીસથી છે શાસ્ત્રી જ્યેષ્ઠારામ ફકત પોતાના તરફથી બહાર પડેલા (શંકરાચાર્યના પુસ્તકના ખંડનસ્વરૂપે) પુસ્તકો શંકરાચાર્યની માફક વેચતા હતા તેને બદલે નોટીસ અપાઇ પત્રવ્યવહાર ચાલ્યો તે છપાઇ ગયો છે જો સ્માર્ત લોકોની લાગણી શાસ્ત્રી જ્યેષ્ઠારામના પુસ્તકથી દુખાઈ હોય તો અવશ્ય તેનો જવાબ રા જ્યેષ્ઠારામને લખી મોકલવો જોઇતો હતો પરતુ તેમ ન કરતા રા જ્યેષ્ઠારામને પોતાને ત્યા બોલાવ્યા. શું આથી તે લોકોની કલેશ કરવાની ઇચ્છા નથી સાબિત થતી?

કહેવાતા શંકરાચાર્ય અને તેમને અનુસરનારી (બંધપરાથી વા ગમેતેમ) કહેવાતી સ્માર્ત પ્રજાની દ્વેષવૃત્તિ શું નથી જણાતી? નોટીસો પરસ્પર ચાલ્યા બાદ રા જ્યેષ્ઠારામ તથા પાટણના વૈષ્ણવોએ વૈષ્ણવ પરિષદની મદદ માગી પરિષદ્ તરફથી શાસ્ત્રી ભગવાનલાલભાઈ વગેરે ત્યા જઇ પહોચ્યા શાસ્ત્રાર્થ માટેનું આમંત્રણ કર્યું પક્ષીથી કહેવાતા સ્માર્તોએ સ્થાનના સુધારા સાથે અરજી કરી કે "સુવેહનો ભંગ થાય એમ લાગે છે" સુધારાએ સભા બંધ કરવાનો લેખી હુકમ મોકલી સભા બંધ કરાવી એ લોકોની શાસ્ત્રાર્થ કરવા માટે કેટલી ઉત્કંઠા છે અને કેટલી ભીતિ છે તે સ્પષ્ટ આ ઉપરથી જણાય છે વૈષ્ણવો તરફથી બિલકુલ સુવેહનો ભંગ ન થાત. સુધારાને તે ઉપરાંત વૈષ્ણવોએ ત્યા આવવા આમંત્રણ પણ કરેલું અને તેઓએ કબૂલ્યું પણ હતું પણ હાથમાં દડા લઈ કેવલ શાસ્ત્રાર્થ કરવા નિકળેલા સ્માર્તાભાસોની વર્તણુકને લઇને જ સભા બંધ કરાવી. આ ઉપરથી છેલ્લી પ્રસિદ્ધપત્રિકા છાપવામા આવી છે પાટણની પોલીસે સુવેહના ભંગની દહેશત માટે બને પક્ષના માણસ ઉપર ફરીયાદ નોધાવી છે વૈષ્ણવોએ શંકરાચાર્યના સહી સિક્કા સાથે પ્રકટ થયેલી ચોપડી કે જેમા પુષ્ટિમાર્ગના સેવ્યની અને શ્રીમદ્ભાગવતની અત્યંત નિંદા કરવામા આવી છે, તેને લઇને એક કેસ મેસાણામાં દાખલ કર્યો છે શંકરાચાર્ય ઉપર વૉરંટ નીકળી ગયેલ છે વૈષ્ણવોના આ કાર્યમા

ધન વગેરેની સહાય તાદરેક વૈષ્ણવ ગૃહસ્થે આપવી જોઇએ, અને પોતાની ફરજ અદા કરવી જોઇએ. યથાશક્તિ મદદ કરવા ઇચ્છનારે આ માસિકની ઑફિસમા લખવુ

એક સૂચના.

નંદરબાર અને સુરતની પરિષદ્ વખતે કેટલાક વૈષ્ણવોએ પરિષદ્ને યથાશક્તિ સહાય કરેલી છે, પરંતુ તેઓએ પોતાનાં સરનામા ચોકસ આવેલા ન હોવાથી, પરિષદ્ના રિપોર્ટ મોકલવાની અગવડ પડે છે વૈષ્ણવપરિષદ્ના પ્રત્યેક સહાયકે પોતાનું સરનામુ સત્વર નીચેને સરનામે મોકલવાની કૃપા કરવી, જેથી તેમને પરિષદ્ના રિપોર્ટ જલદી મોકલવામા આવે

પત્રોનો ઉત્તર.

૨૦ મોતીરામ સિંધી—જુઓ જયેષ્ઠારામ મુકુંદજીની, કલકત્તાની રોયલ એશીઆટીકની સોસાઇટીની તેમજ જીવાનંદ વિદ્યાસાગર પંડિતે છપાવેલા વૈદિક ગ્રંથોની સૂચી

૨૦ તટસ્થ—મગનલાલશાસ્ત્રીના બીજા ભાષણો પણ આ માસિકમા ક્રમશ પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવશે, તેમા તમારી શંકાનુ સમાધાન આવી જશે

અવલોકન.

નડીઆદના હિંદુ અનાથાશ્રમનો સને ૧૯૦૮થી તે સને ૧૯૧૧ સુધીનો રિપોર્ટ અમને મલ્યો છે વાચતા જણાય છે કે સદ્હું અનાથાશ્રમે ગરીબ હિંદુઓને દુષ્કાળના સમયમા સારી મદદ કરી છે છેલ્લાં વર્ષોમા હિંદમા સર્વત્ર દુકાળે પગપસારો ઘણો જ કર્યો છે, અને તેથી ગરીબની–તેમા પણ મધ્યમવર્ગની–સ્થિતિ ખરેખર દયાજનક થઈ પડી છે. માટે આવા સમયમાં આવા અનાથાશ્રમો ગરીબોને આશીર્વાદ સમાન થઈ પડે ખરા. શ્રીમત હિંદુઓની આવા ઉપયોગી ખાતાને મદદ કરવાની ફરજ છે મદદ કરવાની યોજના અનાથાશ્રમ તરફથી નીચે મુજબ ઘડવામા આવી છે

૧ ઓરડીઓ—એકકી વખતે રૂ ૨૫૧) પ્રદાન કરનાર ગૃહસ્થના નામની એક ઓરડી બાંધી તે ઉપર આરસપહાણની તકતી ચોંટી આશ્રયદાતાનુ નામ અમર કરવામા આવે છે

૨ આના ફંડ—દરેક બુકમા ૮૦ પાના હોય છે તે જુદાજુદા ગૃહસ્થો પાસે એકેક આનો ઉઘરાવી બુક પુરી કરી લેવી. બહારગામ આના ફંડની બુક ફક્ત વી પી થીજ મોકલવામા આવે છે

૩ કોરી પાવતી બુકો—કોઈ ગૃહસ્થ આશ્રમને સારૂ રૂ ૬ એકદમ કરાવી આપવાની ખાત્રી આપશે અને તેમને આશ્રમના મંત્રી અગર નડીઆદના બીજા કોઈ ગૃહસ્થ ઓળખતા હશે તો કોરી પાવતી બુક આપવામા આવશે.

૪ પેટીઓ—આશ્રમ તરફથી રેલવેમા પેટીઓ ફરે છે તે ઉપરાંત દરેક ગૃહસ્થ જેને આશ્રમના મંત્રી અથવા બીજા કોઈ સારા ગૃહસ્થ ઓળખતા હોય તેમને પોતાના ઘરમાં અગર દુકાનમા રાખવા આશ્રમની પેટી આપવામા આવશે

૫ પાલક—દર માસે રૂ ૭) પ્રમાણે આપવાથી તે ગૃહસ્થના નામથી એક અનાથને પાળવામા આવશે સદ્હું અનાથ આશ્રમમાં રહે ત્યાસુધી તે ગૃહસ્થ તેનો પાલક ગણાશે

૬ સભાસદો—જે ગૃહસ્થ આશ્રમને એકી વખતે વગર સરતે રૂ. ૧૦૦૦) કે તેથી વધુ દાન કરશે તો તે આશ્રમ કમીટીના સહાયક સભાસદ ગણાશે જે એકકી વખતે વગર સરતે રૂ. ૧૦૦) આપશે તે જીંદગી પર્યન્તના સભાસદ અને જે દરેક વર્ષે રૂ ૫) આપે તે સાધારણ સભાસદ ગણાય છે દરેક ગૃહસ્થને સભાસદ થઈ આશ્રમ કમીટીમા જોડાઈ સહાયભૂત થવા પ્રાર્થના છે

કહીએ છીએ, એ અતાત્વિક ભેદ છે ને તે ભેદ કરનાર ઘટ ઉપાધિ છે તેવીરીતે સવિશેષ બ્રહ્મ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મમા અતાત્વિક ભેદ હોય તો ઉપાધિથી તે થએલો હોવો જોઇએ. આકાશના દૃષ્ટાંતમાં જેમ ઘટ ઉપાધિ હતી તેમ અહિં કઇ ઉપાધિ છે અને તે ઉપાધિ કયા કાળથી શરૂ થઇ અથવા અનાદિ અર્થાત્ આરંભ વિનાની, ઘણા સમયથી ચાલી આવતી, કોઇ પણ કાળે શરૂ નહિ થએલી એવી છે તે વિચારવુ જોઇએ

પૂર્વપક્ષી—(અહિં માયા અને અવિદ્યા એકજ છે અને તે અનાદિ છે એમ માનનાર કેટલાક માયાવાદી પૂર્વપક્ષી છે) અવિદ્યા એજ ઉપાધિ અર્થાત્ અવિદ્યા ઉપાધિ સવિશેષ અને નિર્વિશેષ બ્રહ્મમા અતાત્વિક ભેદ કરે છે અને તે અનાદિ છે સત્ત્વ, રજ અને તમ એ ત્રણ ગુણવાળી અવિદ્યા ભાવરૂપ અજ્ઞાન જ છે (વિદ્યાનો અભાવ તે અવિદ્યા અને જ્ઞાનનો અભાવ તે અજ્ઞાન એમ નહિ, પરન્તુ જેમ વિદ્યા જ્ઞાન એ અમુક વસ્તુ છે તેમજ અવિદ્યા અજ્ઞાન પણ અમુક વસ્તુ છે માત્ર અભાવ નથી તેથી તેને ભાવરૂપ કહી છે)

સિદ્ધાન્તી—એ પ્રમાણે માનવામા સગતિ નથી કારણકે એમ માનીએ તો બ્રહ્મ અને અવિદ્યા ઉભય અનાદિ હોવાથી, બ્રહ્મ અનાદિ કાળથી ઉપાધિવાળુ છે ઉપાધિવાળુ અથવા સવિશેષ બ્રહ્મ અનાદિ હોવાથી, અને એજ તમારા મતપ્રમાણે જગતનુ કર્તૃ હોવાથી નિરંતર જગત્ રચ્યા જ કરે, પરતુ કદાપિ પ્રલય થાય નહિ વળી 'બહુ સ્યામ્' ઇત્યાદિ શ્રુતિમા ઇચ્છાવિશિષ્ટ માત્ર બ્રહ્મ જ સર્ગ અર્થાત્ જગતની ઉત્પત્તિનુ કારણ કહેલુ છે તેથી જગત્ રચવામા કોઇ સહકારિ કારણની જરૂર રહેતી નથી તેથી સહકારિ કારણ હોય ત્યારે જ સવિશેષ બ્રહ્મથી જગત્ રચાય અને સહકારિ કારણ સદા નહિ હોવાથી સદા જગત્ રચાતુ નથી એમ તમારાથી કહી શકાશે નહિ

પૂર્વપક્ષી—માયા તરીકે જ તે ઉપાધિ નથી, પરન્તુ સત્ત્વ, રજ અને તમ ગુણ તરીકે ઉપાધિ છે, અને જે ગુણ જે સમયે ઉપાધિ હોય તે ગુણને ઉચિત કાર્ય તે સમયે કરે છે જ્યારે સત્ત્વગુણ ઉપાધિ હોય ત્યારે સર્ગ કરે છે રજોગુણ ઉપાધિ હોય ત્યારે સ્થિતિ કરે છે, અને તમો ગુણ ઉપાધિ હોય ત્યારે પ્રલય કરે છે.

સિદ્ધાન્તી—રમાર્તંભનતુ અવલંબન કરી જગત્ રચવા વિગેરેમા ગુણની અપેક્ષા છે એમ કહો તોપણ પ્રથમ સત્ત્વગુણ ઉપાધિ થાય, પછી રજોગુણ અને પછી તમોગુણ એવો નિયમ કયાથી થયો? અમુક નિયમ પ્રમાણે જ ગુણો એક પછી એક ઉપાધિ થાય તેનુ કારણ અવશ્ય કહેવુ જોઇએ ભગવાનની ઇચ્છાથીજ તેનુ કારણ છે એમ કહેવુ પડશે કારણ કે ગુણ જડ હોવાથી પોતે તેનુ કારણ થઇ શકશે નહિ. ભગવાનની ઇચ્છાથી જ ગુણો અમુક નિયમમાજ ઉપાધિ થાય છે એમ કહો તો જગતની રચના વિગેરેમા 'તેનુ કારણ જ કારણ હો' એ ન્યાયથી ઇચ્છાજ જગતની રચના વિગેરેનુ કારણ છે એમ કહો, ગુણનુ કાંઇ પ્રયોજન નથી, આ પ્રમાણે ગુણના પહેલા જ ઇચ્છા સિદ્ધ થવાથી બ્રહ્મનુ સવિશેષપણુ સિદ્ધ થાય છે ને તમારા સિદ્ધાન્તનો ભંગ થાય છે ત્યારે ગુણથી શુ કાર્ય થયુ? તેથી ગુણ ને પણ ઉપાધિ કહેવી ઉચિત નથી વળી ગુણની ઉપાધિવાળુ બ્રહ્મ જગતનું કારણ છે એમ કહેનાર તમારા મતમા ઇચ્છાને પણ કારણ કહી શકાય નહિ કારણ કે ઇચ્છા સામાન્યરીતે જગતની ઉત્પત્તિ, સ્થિતિ અને લયનુ કારણ થાય, પરતુ અવિદ્યાની પેઠે સામાન્યરીતે જ કારણ હોવાથી, પ્રથમ સર્ગ પછી સ્થિતિ પછી લય થાય છે એ નિયમસર ક્રમનુ કારણ થઇ શકે નહિ તેથી આ ક્રમનુ કારણ અવશ્ય હોવુ જોઇએ ઉપાધિવાળુ બ્રહ્મ ઉપાધિને અધીન હોવાથી, સામાન્ય કારણ ઇચ્છા હોવા છતા, ક્રમનું કારણ ગુણ કહેવા પડશે ગુણમા પણ પ્રથમ સત્ત્વ, પછી રજ અને પછી તમ એવા ક્રમનુ કારણ શોધતા, તેમનો

એવો સ્વભાવ જ કમનું કારણ છે એમ કહેવુ પડશે. આમ હોવાથી, અમુક કમમાં આવિર્ભાવ પામવાના સ્વભાવવાળા ગુણ જ જગતનુ કારણ છે એમ કહેા, તેમને અધીન બ્રહ્મની કાઇ અપેક્ષા રહેતી નથી, અને તમારો વાદ અનીશ્વરવાદ થઇ જાય છે.

પૂર્વપક્ષી—ગુણ જડ હોવાથી તેમના પ્રેરક ચૈતન્યની જરૂર છે તેથી બ્રહ્મને પણ કારણ કહીએ છીએ.

સિદ્ધાન્તી—એમ કહેા તેા 'હે સૌમ્ય, આ પ્રથમ સત્ જ હતુ' શ્રુતિનેા વિરોધ થાય. કારણ કે શ્રુતિમા રહેલેા 'જ' શબ્દ સત્ અર્થાત્ બ્રહ્મથી અન્ય ગુણ, અવિદ્યા, ગુણસ્વભાવ વિગેરે સર્વનેા નિષેધ કરે છે અર્થાત્ બ્રહ્મ સિવાય અન્ય કોઈ પણ પદાર્થ ન હતેા એવેા 'જ' શબ્દનેા અર્થ છે.

પૂર્વપક્ષી—'જ' શબ્દનેા એવેા અર્થ નથી, કારણ કે 'પ્રથમ' શબ્દ કાળવાચક છે તેથી કાળની સત્તા એ શ્રુતિમા સ્વીકારેલી છે 'જ' શબ્દ બ્રહ્મથી અન્ય સર્વનેા નિષેધ કરવા મટ્યેા હેાત તેા 'પ્રથમ' શબ્દથી કાળની સત્તા સ્વીકારે નહિ તેથી 'જ' શબ્દનેા એવેા અર્થ નથી, પરન્તુ બ્રહ્મ તે સમયે પણ હતુ જ એમ તે સમયે બ્રહ્મના અભાવની શંકા દૂર કરવા 'જ' શબ્દનેા પ્રયેાગ કરેલેા છે

સિદ્ધાન્તી—એમ નથી 'પ્રથમ' શબ્દ તેા બેાધ કરેલા માટે મુક્યેા છે, કાલની સત્તા સ્વીકારવા યેાજેલેા નથી, 'પ્રથમ' શબ્દ ન હેાય તેા 'બ્રહ્મ જ હતુ' એ વાક્ય સંપૂર્ણ થતુ નથી. કાળ સર્વનેા આધાર હેાવાથી કાળવિના નિરૂપણ થઇ શકે નહિ, તેથી બેાધ કરવા માટે જ 'પ્રથમ' શબ્દ યેાજ્યેા છે ને 'પ્રથમ' શબ્દથી કાળની સત્તા સ્વીકારી હેાય તેા 'તેણે જોયુ તેા પેાતાથી બીજા કોઇને જોયેા નહિ' શ્રુતિનેા વિરોધ થાય, કારણ બ્રહ્મથી અન્ય કાળ વિગેરે કોઇપણ ન હતુ એજ એ શ્રુતિનુ તાત્પર્ય છે આ શ્રુતિ અને પ્રથમની શ્રુતિમા 'પ્રથમ' શબ્દ ઉભયની સંગતિ મેળવવા કાળ પણ બ્રહ્મ જ છે એમ માનતા હેા તેા અમને પણ ઇષ્ટાપત્તિજ છે. શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતામા વિગેરેમા 'હુ કાળ છુ' હુ કાળ રૂપે અવતરેલેા છુ' વિગેરે વાક્યેા પણ છે.

પૂર્વપક્ષી—(પણ 'તેણે જોયુ' શ્રુતિ અને 'સૌમ્ય આ પ્રથમ સત્ જ હતુ' શ્રુતિ જુદી જુદી શાખાની છે, તેથી એ પ્રમાણે સંગતિ કરવી આવશ્યક નથી અને તેથી પ્રથમ શ્રુતિને લીધે દ્વિતીય શ્રુતિનેા તમે કહેા છેા એવેા અર્થ કરવાની આવશ્યકતા નથી)

સિદ્ધાન્તી—પરતુ 'આ પ્રથમ સત્ જ હતુ' એજ વાક્યથી ઉપક્રમ કરી 'સૌમ્ય આ પ્રજાનુ મૂલ સત્ છે, સત્મા તે રહે છે અને સત્મા તેની પ્રતિષ્ઠા છે' શ્રુતિથી સત્ જ જગતની ઉત્પત્તિ સ્થિતિ વિગેરેનુ કર્તૃ છે અને ઉપાધિવાળુ બ્રહ્મ કર્તૃ નથી એમ સિદ્ધ થાય છે તેથી પણ 'પ્રથમ સત્ જ હતુ શ્રુતિથી માત્ર બ્રહ્મ જ હતુ એમ સિદ્ધ થાય છે ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविध स्मृत. શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતાવાક્યથી પણ સત્નેા અર્થ બ્રહ્મ જ થાય છે, ઉપાધિવાળુ બ્રહ્મ એવેા અર્થ થતેા નથી

વળી તમારા મતમા ઉપાધિવાળુ બ્રહ્મ ઉપાધિને અધીન હેાવાથી સ્વતંત્ર નથી. અને સ્વતન્ત્ર ન હેાવાથી કર્તૃ પણ થઈ શકે નહિ. કારણ કે કર્તાપણાનુ પ્રયેાજક સ્વાતન્ત્ર્યજ છે પાણિનિ પણ 'स्वतन्त्र कर्ता' અર્થાત્ સ્વતન્ત્ર હેાય તે કર્તા એવુ સૂત્ર યેાજે છે ઉપાધિવાળુ બ્રહ્મ સ્વતન્ત્ર ન હેાવાથી કર્તૃ થઇ શકે જ નહિ.

પૂર્વપક્ષી—યુદ્ધમા ભટ રાજાને આધીન હેાવા છતાં કર્તા થઈ શકે છે તેા સ્વતન્ત્ર ન હેાય તે કર્તા થઈ શકે નહિ એવેા નિયમ કયા રહ્યેા ?

સિદ્ધાન્તી—પેાત પેાતાના કાર્યમા ભટ વિગેરે સ્વતન્ત્ર છે તેથી યુદ્ધમા સ્વતન્ત્ર ન હેાવા છતા કર્તા થાય તેમા બાધ આવતેા નથી પરતુ કોઈ પણ કાર્યમાં સ્વતન્ત્ર ન હેાય એવુ આકાશ જેવુ

ઉપાધિવાળું બ્રહ્મ કર્તૃ કેમ થઈ શકે ? ઉપાધિવાળા બ્રહ્મમાં જો કર્તૃત્વ હોય તો તે ઉપાધિમાં હોવું જોઇએ, બ્રહ્મમા નહિ. ઘટાકાશમાં ક્રિયા થાય ત્યારે તે ક્રિયા વસ્તુત આકાશની નથી, પરતુ આકાશની ઉપાધિ ઘટની છે તે પ્રમાણે ઉપાધિવાળા બ્રહ્મમા કર્તૃત્વ હોય તો તે ઉપાધિનુ હોવુ જોઇએ, બ્રહ્મનુ નહિ

પૂર્વપક્ષી—એમ ભલે હો ઉપાધિવાળા બ્રહ્મમા કર્તૃત્વ ઉપાધિનુ ભલે હો તેથી પણ સાખ્યની પેઠે અમારો વાદ અનીશ્વરવાદ કહી શકાય નહિ.

સિદ્ધાન્તી—એમ હોઈ શકે જ નહિ ઉપાધિવાળુ બ્રહ્મ જગતનુ કારણ થઇ શકે જ નહિ. એમ હોય તો 'જેમાથી આ ભૂતો ઉત્પન્ન થાય છે, જેનાથી ઉત્પન્ન થયેલા જીવેછે, અને જેમા લય પામે છે' 'સૌમ્ય આ પ્રજાનુ મૂલ સત્ જ છે' 'આ ભૂતો આનદમાથી જ ઉત્પન્ન થાય છે' વિગેરે શ્રુતિઓ, 'હુ સર્વનો પ્રભવ છુ' વિગેરે સ્મૃતિઓ અને 'આના જન્મ વિગેરે જેમાથી' વિગેરે બ્રહ્મસૂત્રનો વિરોધ થઇ જાય કારણ કે આ સર્વ શ્રુતિ, સ્મૃતિ અને સૂત્રો જગતનુ કારણ કારણ બ્રહ્મ જ કહે છે, ઉપાધિ કહેતા નથી

પૂર્વપક્ષી—જેમ ભટ યુદ્ધ કરે તેને જગતમા ઉપચારથી રાજાનુ જ યુદ્ધ કહીએ છીએ તેમ વસ્તુત ઉપાધિ જ જગત્ રચે છે તો પણ ઉપચારથીજ આ સર્વ શ્રુતિ, સ્મૃતિ અને સૂત્રે બ્રહ્મને કર્તૃ કહે છે

સિદ્ધાતિ—એમ થઇ શકે નહિ. જ્યા સુધિ મુખ્યાર્થ સભવતો હોય ત્યા સુધિ લક્ષ્યાર્થ લઇ શકાય નહિ શુદ્ધ બ્રહ્મજ કર્તૃ થઇ શકે છે તો તેમા કર્તૃત્વ ગૌણ છે ને વસ્તુત તે ઉપાધિનુજ છે એમ કહી શકાય નહિ જેમ શરીરવાળો જીવ લોકમા કર્ત્તા થાય છે તેમ 'તેણે ઈચ્છ્યુ અહુ થાઉં' વિગેરે શ્રુતિમા ઇચ્છાવાળા મુખ્ય ઈશ્વરનેજ કર્ત્તા કહેલા છે. અને તેમા કર્ત્તાપણુ સભવે છે. તેથી તેનુ કર્તૃત્વ ગૌણ છે એમ કહી શકાય નહિ તેથીજ '**ईक्षतेर्नाशब्दम्**' સૂત્રથી વ્યા-સજીએ 'જગત્ના કર્ત્તાની ઇચ્છા કહેલી હોવાથી પ્રકૃતિમા આ કર્તૃત્વ રહેલુ નથી' એમ સિદ્ધ કર્યું, ત્યારે 'ઇચ્છાનો પ્રયોગ ગૌણ છે તેથી પ્રકૃતિમાજ કર્તૃત્વ રહેલુ છે' એવી સાખ્યની શકા થઇ તે દૂર કરવા '**गौण्यसंभवात्तत्प्रधानात्**' સૂત્ર યોજ્યુ છે ઇચ્છાનો પ્રયોગ ગૌણ છે એમ કહેવાય નહિ કારણ કે '**सेयं देवतैक्षत हताहमिमास्तिस्रो देवता अनेन जीवेनात्मनानुप्रविश्य नामरूपे व्याकरवाणि**' વાક્યમા ઇચ્છા કરનારને માટે 'આત્મ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે. 'આત્મ' શબ્દનો પ્રયોગ જડ પ્રકૃતિ માટે થઈ શકે નહિ.

અહિ શકા થાયકે શ્રુતિમા 'આત્મ' શબ્દનો પણ ઉપચારથી પ્રકૃતિમાટે જ પ્રયોગ કર્યો છે જેવી રીતે આપણે સર્વે કાર્ય કરનાર ચાકરમાટે 'ભદ્રમેત માત્મા છે' એમ 'આત્મ' શબ્દનો પ્રયોગ કરીએ છીએ તેમ જ ઉપરના વાક્યમા પ્રકૃતિ માટે 'આત્મ' શબ્દનો પ્રયોગ ઉપ-ચારથી કર્યો છે તો તેનો નિરાસ કરવા '**तन्निष्ठस्य मोक्षोपदेशात्**' સૂત્ર યોજ્યુ છે તેનો અર્થ એવો છે કે જેને માટે 'આત્મ' શબ્દનો પ્રયોગ કર્યો છે તેમા જે નિષ્ઠ હોય તેને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય છે એમ શ્રુતિમા કહેલુ છે તેથી 'આત્મ' શબ્દના ઉપચારથી પ્રકૃતિ માટે પ્રયોગ કરેલો નથી, કારણ કે પ્રકૃતિમા નિષ્ઠ હોય તેને મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય નહિ, પરતુ મુખ્ય રીતે બ્રહ્મ માટે જ તેનો પ્રયોગ કરેલો છે, કારણ કે બ્રહ્મમાં નિષ્ઠ હોય તેને જ મોક્ષની પ્રાપ્તિ થાય.

વળી તમારા મતમા ઉપાધિવાળુ બ્રહ્મ જીવ બરાબર હોવાથી, પુત્ર વિગેરે જીવનો જેમ ત્યાગ કરવાનુ શાસ્ત્રમા કહેલુ છે તેમ ઉપાધિવાળા બ્રહ્મનો પણ ત્યાગ કરવાનોજ ઉપદેશ શાસ્ત્રમા હોવો જોઇએ. પરતુ ત્યાગ કરવાનો ઉપદેશ ન કરતા તેની ઉપાસના કરવાનો જ ઉપદેશ સર્વત્ર છે તમારા

મત પ્રમાણે જીવ બરાબર જ હોય તો મુમુક્ષુના સાધનના ઉપદેશમા તેની ઉપાસના કરવાનો ઉપદેશ ન જ હોય આ પણ એમ જ સિદ્ધ કરેછે કે નિર્ગુણ બ્રહ્મ જ જગત્નુ કારણ છે, અને ઉપાધિવાળુ બ્રહ્મ જગતનુ કારણ નથી. આવા જ આશયથી વ્યાસજીએ પણ 'ત્યાજ્ય અર્થાત્ ત્યાગ કરવા લાયક કહ્યું નથી તેથી' એ સૂત્ર યોજ્યુ છે. વળી 'હવે બ્રહ્મનો વિચાર કરીએ છીએ' એમ પ્રથમ સૂત્રથી વ્યાસજીએ નિર્ગુણ બ્રહ્મનો વિચાર કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરી પછી દ્વિતીય 'જેમાથી આ જગત્ના જન્મ વિગેરે થાય છે' સૂત્રથી બ્રહ્મનુ લક્ષણ કર્યુ પ્રથમ સૂત્રમા નિર્ગુણ બ્રહ્મનો વિચાર કરવાની પ્રતિજ્ઞા કરી, તે બ્રહ્મ કેવુ એવી આકાક્ષા થાય તેથી તેનો ઉત્તર આપવા દ્વિતીય સૂત્રમા બ્રહ્મનુ લક્ષણ આપ્યુ આ લક્ષણ નિર્ગુણ બ્રહ્મનુ જ હોવુ જોઇએ તમે કહો છો તેમ સગુણ બ્રહ્મનુ હોય તો પ્રથમ સૂત્રમા કરેલી પ્રતિજ્ઞાની હાની થાય, અને બીજુ સૂત્ર પ્રથમ સૂત્રથી વિરુદ્ધ થાય વ્યાસજી આવી ચૂક કરે જ નહિ આવી ચૂક વ્યાસજીએ કરી એમ કહેનાર હૃદય શૂન્ય જ ગણાય

વળી સગુણ બ્રહ્મ અને નિર્ગુણબ્રહ્મ એવા બે બ્રહ્મ ભિન્ન હોય તો 'સર્વે વેદ જેના પદનુ આમનન કરે છે' 'સર્વ વેદથી વેદાન્તકૃત્ હું જ વેદ્ય છુ' વિગેરે શ્રુતિ સ્મૃતિનો પણ વિરોધ થાય, કારણ કે એ શ્રુતિ સ્મૃતિ માત્ર એક જ બ્રહ્મ હોવાનુ સૂચવે છે વેદમા માત્ર એક જ બ્રહ્મ વર્ણવેલુ છે એવો સ્પષ્ટ ભાવાર્થ તેમાંથી સ્ફુરે છે, આવા આવા દોષયુક્ત હોવાથી સગુણ બ્રહ્મ અને નિર્ગુણબ્રહ્મમા ભેદ છે એ પક્ષ નિર્મૂલ જ છે

બીજો 'સગુણ અને નિર્ગુણબ્રહ્મ એક જ છે ભિન્ન નથી' એવો પક્ષ યોગ્ય જ છે કારણ કે' આ પક્ષમાં ઉપાધિ સ્વીકારેલી નહિ હોવાથી, બ્રહ્મ સ્વતન્ત્ર જ છે અને તેથી કેવલ ઇચ્છાથી જ જગતના સર્ગ સ્થિતિ અને લય કરી શકે છે વળી ઇચ્છાથી જ જગતના સર્ગ વિગેરે થાય છે તેથી નિરંતર સર્ગ થયા કરે એ દોષ પણ રહેતો નથી. અને જગત્નુ કારણ વસ્તુત સ્વતંત્ર ઈશ્વર પોતે જ હોવાથી અનીશ્વરવાદમા પર્યવસાન પણ થતુ નથી. આ પ્રમાણે સર્વદોષરહિત હોવાથી આ પક્ષ યોગ્ય છે

પૂર્વપક્ષી.—એ પક્ષ પણ યોગ્ય નથી કારણ કે એક જ બ્રહ્મ સગુણ અને નિર્ગુણ હોઈ શકે નહિ એકજ પદાર્થને સગુણ અને નિર્ગુણ કહેવો એ પરસ્પર વિરુદ્ધ છે.

સિદ્ધાન્તી—એમ નથી કારણ કે નિષેધનો વિષય ભિન્ન છે જે બ્રહ્મના ગુણો સવિશેષ શ્રુતિ વર્ણવે છે તે ગુણોનો નિર્વિશેષ શ્રુતિ નિષેધ કરતી રથી, પરતુ લૌકિક ગુણોનોજ નિષેધ કરે છે 'અસ્થૂલ' વિગેરે નિર્વિશેષ શ્રુતિઓ લૌકિક જડ અને દોષના ધર્મનોજ બ્રહ્મમા નિષેધ કરે છે, અપ્રાકૃત ઈશ્વરના ધર્મ જગત્નુ કર્તૃત્વ વિગેરેનો નિષેધ કરતી નથી. કદાપિ સવિશેષ શ્રુતિમા વર્ણવેલા અપ્રાકૃત જગત્નું કર્તૃત્વ વિગેરે ધર્મનો પણ નિર્વિશેષ શ્રુતિ નિષેધ કરે છે એમ માનીએ તો સવિશેષ શ્રુતિ વ્યર્થ થઇ જાય 'પ્રસાદ્યમાદ્વિ પક્વમ્ય દૂરાદસ્પર્શનં વરમ્' કીચડમા પડી કીચડ ધોવો તે કરતા દૂરથી તેને સ્પર્શ કર્યાવિના જતુ એ વધારે સારુ છે એ ન્યાયે બ્રહ્મમા ગુણનુ વર્ણન કરવુ અને પછી તેનો નિષેધ કરવો એ કરતા ગુણનુ વર્ણન ને જ કરવુ વધારે સારુ એટલુ ભાન દેવને પણ અવશ્ય હોવુ જ જોઇએ તેથી જો આગળ ગુણનો નિષેધજ કરવો હોત તો પ્રથમથીજ વેદ ગુણનુ વર્ણન કરત નહિ તેથીજ યતો વાચો નિવર્તન્તેઽપ્રાપ્ય મનસા સહ' ઇત્યાદી વાણી મનસહિત પહોચ્યા વિના પાછી ફરે છે' શ્રુતિ 'આત્મા વારે દ્રષ્ટવ્યો શ્રોતવ્ય' 'આત્માનું દર્શન કરવુ શ્રવણ કરવુ' શ્રુતિએ વર્ણવેલા શ્રોતવ્યત્વ વિગેરે ગુણોનો નિષેધ કરતી નથી જો વાણી બ્રહ્મને પહોચતી નથી, એ

લૌકિક વાણીજ છે મન બ્રહ્મને પહોચતુ નથી એ શુદ્ધ મન જ છે. તેથી પ્રથમ શ્રુતિ લૌકિક વાણી અને અશુદ્ધ મન બ્રહ્મને પહોચતા નથી એમ જ કહે છે તેથી સવિશેષ શ્રુતિ બ્રહ્મના અપ્રાકૃત અલૌકિક ગુણનુ વર્ણન કરે છે અને નિર્વિશેષ શ્રુતિ બ્રહ્મમા પ્રાકૃત જડ જીવના ધર્મનો નિષેધ કરે છે ઉભય શ્રુતિનો વિષય હોવાથી, ઉભય પ્રકારની શ્રુતિ એક જ બ્રહ્મનું નિરૂપણ કરે છે તો પણ વિરોધ નથી.

વળી તમારા મત પ્રમાણે નિર્ગુણ બ્રહ્મ જગતનુ કર્તૃ નહિ હોવાથી બ્રહ્મનિરૂપક મહાવાક્યમાં સૃષ્ટિનિરૂપક વાક્યોની સગતિ થતિ નથી 'બ્રહ્મવિદાપ્નોતિ પરમ' બ્રહ્મ જાણનાર પરને પામે છે શ્રુતિ બ્રહ્મનું નિરૂપણ કરે છે તેની સાથે 'તસ્માદ્વા એતસ્માદાત્મન આકાશ સંભૂત' 'આ આત્મામાથી આકાશ ઉત્પન્ન થયુ' સૃષ્ટિનિરૂપક શ્રુતિની સગતિ થતી નથી

પૂર્વપક્ષી—એ શ્રુતિઓમા અધ્યારોપાપવાદરૂપી સગતિ છે પ્રથમ બ્રહ્મમા ગુણનો અધ્યારોપ કરવામા આવે છે, બ્રહ્મમા ગુણનો આરોપ કરી ગુણનો અપવાદ અથવા નિષેધ કરવામા આવે છે આ પ્રમાણે શ્રુતિમા બ્રહ્મમા ગુણનો અધ્યારોપ અને પછી અપવાદ કરે છે તેથી બ્રહ્મમા જગતના કર્તૃત્વનો પણ અધ્યારોપ અને પછી અપવાદ કરેલો છે તેથી બ્રહ્મનિરૂપક અને સૃષ્ટિનિરૂપક વાક્યમા અધ્યારોપાપવાદરૂપી સગતિ છે

આ અધ્યારોપ અને અપવાદ પણ શ્રુતિ હેતુપૂર્વક કરે છે, તેથી કાદવમાં પડી કાદવ ધોવા કરતા દૂરથી સ્પર્શ કર્યા વિના જવુ વધારે સારૂ એ ન્યાયે શ્રુતિ અધ્યારોપ અને અપવાદ કરે નહિ એમ કહી શકાય નહિ

શુદ્ધ બ્રહ્મ ઘણુ દુર્જેય છે શુદ્ધ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન થવુ અતિશય કઠિન છે શુદ્ધબ્રહ્મનુ જ્ઞાન થાય નહિ તેથી તે જ્ઞાન થવા માટે પ્રથમ સગુણ અથવા ઉપાધિવાળા બ્રહ્મનુ જ્ઞાન શ્રુતિ કરાવે છે તેથી શ્રુતિ બ્રહ્મને કર્તૃ ભોકતૃ વિગેરે કહે છે આ ઉપાધિવાળા સગુણ બ્રહ્મની ઉપાસના કરીએ તો આપણુ ચિત્ત શુદ્ધ થાય આવા ચિત્ત શુદ્ધ કરવાના હેતુથી જ શ્રુતિ ઉપાધિવાળા બ્રહ્મનુ નિરૂપણ કરે છે અર્થાત્ બ્રહ્મમા કર્તૃત્વ ભોકતૃત્વ વિગેરે ગુણનો અધ્યારોપ કરે છે આ સગુણ બ્રહ્મની ઉપાસના કરવાથી ચિત્તની શુદ્ધિ થાય છે, અને ઉપાધિવાળા અર્થાત્ સગુણ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન થાય છે સગુણ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન થયા પછી પ્રથમ વર્ણવેલા કર્તૃત્વ ભોકતૃત્વ વિગેરે ગુણો દૂર કરવાથી નિર્ગુણ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન થાય છે સગુણ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન થયા પછી આ નિર્ગુણ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન અરુન્ધતીન્યાયથી થાય છે અરુન્ધતી અતિસૂક્ષ્મ નક્ષત્ર હોવાથી એકદમ દેખાતી નથી તેથી કોઇને અરુન્ધતી દેખાડવી હોય તો 'વૃક્ષની આ શાખાપર અરુન્ધતી રહી' એમ કહીએ એટલે તે વૃક્ષની શાખાપર જોઈએ છે ત્યારે તેને અરુન્ધતી દેખાય છે પછી અરુન્ધતી જોવામા શાખાની આવશ્યકતા રહેતી નથી, શાખા વિના એકલી અરુન્ધતી પણ જોઇ શકે છે તે જ પ્રમાણે દુર્જેય નિર્ગુણ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન કરાવવા વેદ પ્રથમ બ્રહ્મને જગતનું કર્તૃ ભોકતૃ વિગેરે કહે છે પછી સગુણ બ્રહ્મનુ બરાબર જ્ઞાન થાય ત્યારે કર્તૃત્વ ભોકતૃત્વ દૂર કરવાથી કેવલ નિર્ગુણ બ્રહ્મનુ જ્ઞાન થાય છે તેથીજ બ્રહ્મમા આ ગુણોનો અધ્યારોપ કર્યા પછી શ્રુતિ તેનો અપવાદ કરે છે

સિદ્ધાન્તી—એમ કહેવુ યોગ્ય નથી, અધ્યારોપ અને અપવાદનો સ્વીકાર કરી બ્રહ્મમા કર્તૃત્વ વિગેરેનો નિષેધ કરી શકાય નહિ કારણ કે એમ હોય તો જગત્ દેખાય જ નહિ શ્રુતિ પ્રથમ જગતનો બોધ કરે છે અને પછી તેનો નિષેધ કરે છે એમ કહી શકાય નહિ, કારણ કે જગતની પ્રતીતિ વેદને લીધે થતી નથી, પરતુ બોધથી જ થાય છે વેદ આપણને જગત્ દેખાડતા નથી, પરતુ આપણે આપણી મેળે જ જગત્ જોઇએ છીએ. વેદ પ્રથમ જગતનો બોધ કરે છે ને પછી

તેનો નિષેધ કરે છે એમ કહી શકાય નહિ કારણ કે વેદ જગતનો બોધ કરતાજ નથી આપણે આપણી મેળેજ જગત્ જોઈએ છીએ, આપણી મેળે આપણે જે જગત્ જોઇએ છીએ તેનો કર્તા હોવોજ જોઇએ એમ તેના કર્તાની અપેક્ષા થવાથી વેદ માત્ર તે કર્તાનો ઉપદેશ કરે છે એમ જ કહેવું યોગ્ય છે, તેને બદલે આપણે જે જગત્ જોઇએ છીએ તે જ જગતનો અનુવાદ કરી, તેના કર્તાનો બોધ કરી, પછી કર્તૃત્વનો નિષેધ કરે છે એમ કહેવુ એ યોગ્ય નથી, લોકસિદ્ધ જગતનો અનુવાદ કરી, તેના કર્તાનો બોધ કરી, પછી વેદ કર્તૃત્વનો નિષેધ કરતા હોય તો કાર્ય જગત્ માત્ર પ્રતીતિસિદ્ધ થાય આપણે જગતને જોઇએ છીએ તે જગતના કર્તૃત્વનો વેદ પ્રથમ નિષેધ કરતા હોય તો બીજો કોઇ કર્તા ન હોવાથી, જગતની પ્રતીતિ છીપમાં રહેલા રુપાની પ્રતીતિ પેઠે ભ્રાન્તિ ગણાય અને જગતનો કર્તા ન હોવાથી જગતજ હોઈ શકે નહિ, જગત્ ન હોવાથી વેદ જગત્નો અનુવાદ કરે છે તેના વિષયનો પણ બાધ થાય છે જગતજ ન હોવાથી જગતનો અનુવાદ યોગ્ય નથી. સર્વ અર્થનુ તત્વ પ્રતિપાદન કરનાર શ્રુતિ બેઠેલી ડાળ કાપવા પેઠે અથવા મા વાઝણી છે એવુ આવા પ્રકારનુ કથન કેમ કરે ? તેથી વેદ કર્તૃત્વનો નિષેધ કરતાજ નથી જગતનો કર્તા ન હોય તો જગતજ ન હોવું જોઇએ અને તેથી તેનો અનુવાદ પણ વેદ ન કરે. આ અનુવાદની અનુપપત્તિ સર્વથી બલિષ્ઠ હોવાથી અનુવાદ ઘટે તે માટે પણ વેદ જગતના કર્તૃત્વનો નિષેધ કરતા નથી એમજ કહેવુ પડે.

પૂર્વપક્ષી—જગતની ઉપલબ્ધિ થાય છે તેથીજ આપણાથી એમ કહી શકાય નહિ કે જગત્ છે. કોઇ પણ વસ્તુની પ્રતીતિ થાય તે પરથી જ તે વસ્તુ છે એમ તેના સત્વનો નિર્ણય કરી શકાય નહિ કારણકે માત્ર પ્રતીતિથીજ વસ્તુના સત્વનો નિર્ણય કરીએ તો સ્વપ્નમા ચિત્રવિચિત્ર પદાર્થની પ્રતીતિ થાય છે તે સમયે તે પદાર્થ છે એમ આપણે કહેવુ પડશે અર્થાત્ સ્વપ્નમા અનુભવાતા સર્વ પદાર્થ સત્ય થઇ જશે પરતુ 'न तत्र रथा न रथयोगा ' 'ત્યા રથ નથી અશ્વ નથી ' શ્રુતિજ સ્વાપ્નિક પદાર્થના અસત્ત્વનો નિર્ણય કરે છે ત્યા રથ અને અશ્વ નથી, પરતુ સ્વપ્નમા રથ અને અશ્વનો આપણે અનુભવ થાય છે અને તે રથ અને અશ્વનો ' अथ रथान् रथयोगान् ' શ્રુતિ અનુવાદ કરે છે તેજ પ્રમાણે વસ્તુત જગત સત્ય નથી પરતુ અજ્ઞાન અવસ્થામાં જગતની પ્રતીતિ થાય છે અને શ્રુતિપણ એ જગતનો અનુવાદ કરે છે

સિદ્ધાન્તી—ઓ મૂર્ખ ! ત્યારે પ્રતીતિ કેમ થાય છે તે સમજાવ, જગત્ અસત્ય જ હોય, વસ્તુત જગત હોય જ નહિ તો જગતની પ્રતીતિ કેમ થાય ? જગતની પ્રતીતિ થવાનુ કારણ શુ ?

પૂર્વપક્ષી—પ્રતીતિ વાસનાથી થાય છે

સિદ્ધાન્તી—વાસનાથી પ્રતીતિ થઇ શકે નહિ કારણ કે પદાર્થનો આપણને અનુભવ થાય ત્યારે પછીજ વાસના થઇ શકે અનુભવ વાસનાનું કારણ છે, વાસના અનુભવથીજ થાય છે તમે જગત્ અસત્ય કહેા છેા જગત કોઇ પદાર્થ છેજ નહિ, તેા જગત અથવા જગત્ના કોઇ પદાર્થનેા અનુભવ પણ હોઈ શકે જ નહિ, જે પદાર્થ હોય જ નહિ. તે પદાર્થનેા અનુભવ કયાંથી જ થાય ? અનુભવ ન હોય તેા અનુભવનું કાર્ય વાસના પણ કયાથીજ હોય ?

પૂર્વપક્ષી—વાસના સતાન અનાદિ છે પ્રથમ અનાદિ વાસનાથી જગત્ના પદાર્થનેા ભ્રમરૂપી અનુભવ થાય છે પછી આ અનુભવ વાસના ઉત્પન્ન કરે છે, એ વાસનાથી પાછેા એ પદાર્થનેા અનુભવ થાય છે એ પ્રમાણે વાસનાસતાન અનાદિ છે, તેથી 'પદાર્થ ન હોવાથી, તેનેા અનુભવ ન થાય ને તેથી વાસના સભવે નહિ' એમ કહી શકાય નહિ. આ પ્રમાણે વાસનાસતાન અનાદિ છે. તેથી જગતમા આપણે પહેલવહેલેા જે પદાર્થ જોઇએ છીએ તે અનાદિવાસનાથી દેખાય છે એનેા એ પદાર્થ ફરીથી જોઇએ ત્યારે તે ભ્રમરૂપી અનુભવથી ઉત્પન્ન થયેલી વાસનાથી દેખાય છે એમ માનવું.

મૂલસ્વરૂપનિરૂપણ.

ગ્રંથકાર જગત્ અને જીવના સ્વરૂપનો વિવેક કરીને હવે મૂલસ્વરૂપનો વિવેક દર્શાવે છે

હવે મૂલસ્વરૂપનો વિચાર કરવામા આવે છે (આપણા સિદ્ધાંતો વેદમૂલક છે, કપોલકલ્પનાના પાયા ઉપર નથી મંડાયા, માટે જ દરેક વિષયના વિચારનો પ્રારંભ કરતા પહેલા વેદને જ પ્રમાણ-તરીકે આગળ રજુ કરવામા આવે છે ગ્રંથકાર આ નિયમને બેકસરખીરીતે અનુસરતા આવ્યા છે, અને પ્રસ્તુતવિચારમા પણ તેજ નિયમને અવલંબે છે) 'પરબ્રહ્મ, પૂર્ણપુરુષોત્તમ શ્રીકૃષ્ણ જ છે કૃષ્ણશબ્દ જ પ્રભુની પરબ્રહ્મતાનુ ભાન કરાવે છે કૃષ્ણશબ્દમા બે શબ્દ નજરે પડે છે. ૧ 'કૃષ્' ૨ 'ણ' આ બન્ને શબ્દનો શું અર્થ થાય છે, તે શ્રુતિ ભગવતી સ્પષ્ટરીતે સમજાવે છે "કૃષ્" એ શબ્દ પૃથ્વીનો વાચક છે (અર્થાત્ 'કૃષ્' એટલે પૃથ્વી) 'ણ' શબ્દ સુખનો વાચક છે ('ણ' એટલે સુખ)" 'કૃષ્' અને 'ણ' ની જે એકતા તે જ પરબ્રહ્મ શ્રીકૃષ્ણ કહેવાય છે (ભાવાર્થ—પૃથ્વીને સુખ કરનાર જે કોઈ હોય તો તે પૂર્ણપુરુષોત્તમ રસાત્મક શ્રીકૃષ્ણ ચંદ્ર જ છે) 'તે[2] સદ્રૂપ, પરબ્રહ્મ કૃષ્ણરૂપ નિત્ય, આનંદસ્વરૂપી' એક સ્વરૂપવાળા હું ગોપાલ, તે જ અબાધિત સત્ય છે' 'આ પરબ્રહ્મનુ જે ધ્યાન કરે છે, રટે છે, ભજે છે' વગેરે શ્રુતિથી એમ જ નિશ્ચય થાય છે કે પરબ્રહ્મ પૂર્ણ પુરુષોત્તમ શ્રીકૃષ્ણ જ છે ફક્ત શ્રુતિ વર્ણવે છે એમ નહિ પણ શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતા પણ એમજ નિશ્ચય કરાવે છે 'હે[3] અર્જુન! મારાથી પર બીજું કંઈ નથી! અક્ષરથી પણ હું ઉત્તમ છું, અર્થાત્ અક્ષર તો મારૂ ધામ છે, (ગૃહ છે,) અને હું એનો દંશ છું માટે જ હું સર્વથી પર છું મારાથી પર બીજુ કોઈ નથી આ પ્રમાણે ભગવદ્વાક્યથી શ્રીકૃષ્ણ જ પરબ્રહ્મ છે એમ ભાન થાય છે આવા શ્રુતિ વગેરેના પ્રમાણોના સંદોહથી જ શ્રીમદાચાર્યચરણ મુક્તાવલીમા આજ્ઞા કરે છે કે, " પરબ્રહ્મ તો સાક્ષાત શ્રીકૃષ્ણ જ છે.

આપણે પ્રભુને સાકાર માનીએ છીએ ત્યારે પ્રભુનો આકાર કેવો? એમ સંદેહ થાય તે સંદેહનુ નિરાકરણ કરવા માટે ભગવાનના આકારનુ નિરૂપણ કરવામા આવે છે પહેલા ભગવાનનુ શ્રી અંગ પ્રાકૃત (લૌકિક) નથી, એમ વેદથી સિદ્ધ કરી પછી ભગવાનના આકાર માટે વિચાર કરવામા આવશે "તે[4] હસ્ત અને પાદથી રહિત છે, છતા વેગવાળા છે અને ગ્રહણ કરે છે તેમને પ્રાણ નથી, મન નથી, તે શુભ્ર છે" વગેરે શ્રુતિથી ભગવાન્ લૌકિક હસ્તપાદથી રહિત છે અને અલૌકિક, સદ્રૂપ, ચિદ્રૂપ અને આનંદરૂપ અંગ શ્રીકૃષ્ણ ભગવાનનુ છે (નિષ્કર્ષ—ઉપરની શ્રુતિમા પ્રભુને હસ્તપાદ નથી છતાં વેગવાળા અને ગ્રહણ કરનારા કહ્યા હસ્ત ન હોય તો ગ્રહણ શાથી કરે? ચરણ ન હોય તો વેગપૂર્વક ગતિ કઈ રીતે કરે? આવો સંશય સ્વાભાવિક ઉત્પન્ન થાય જ ત્યા આ પ્રમાણે સમાધાન કરી લેવુ વેદ જે કહે છે કે હસ્તપાદ નથી, તે ખરી વાત છે આપણા જેવા લૌકિક હસ્તપાદ પ્રભુને હોય જ નાના તે લૌકિક હસ્તપાદનો જ નિષેધ કરે છે. અલૌકિક હસ્તપાદ વગેરે બધું પ્રભુને છે અલૌકિક પણ ન હોય તો શ્રુતિ જે કહે છે કે 'તે ગ્રહણ કરે છે અને વેગવાળા છે' તે પરસ્પર વિરુદ્ધ થઇ જાય માટે લૌકિક અવયવો પ્રભુને નથી અને

---

૧ [कृषिर्भूवाचकः शब्दो णश्च निर्वृतिवाचकः । तयोरैक्यं परब्रह्म कृष्ण इत्यभिधीयते ॥

૨ ओम् सच्चित् परब्रह्म कृष्णात्मको निरवधानैकस्वरूपः सोऽहमों तत्सोपाल मन्त्र पर सत्यमबाधितमिति। पर ब्रह्मैतद्यो ध्यायति रसति भजति।

૩ मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनञ्जय। अक्षरादपि चोत्तमः ।

૪ पर ब्रह्म तु कृष्णो हि ।

૫ अपाणिपादो जवनोगृहीता, अमाणो ह्यमना शुभ्र ।

અલૌકિક સર્વે અવયવો છે એ વેદસિદ્ધ મતવ્ય સ્વીકારી લેવુ આમ વ્યવસ્થા કરી આ મતવ્ય ન માનવામા આવે તો વેદના યથાર્થ કથન ઉપર પાણી જ ફરી વળે) ભગવાનનુ શ્રીઅગ આનદનુ બનેલુ છે સદ્રુપ છે ચિદ્રૂપ છે. આપણા શરીરો પચમહાભૂતના (૧ આકાશ, ૨. વાયુ, ૩ અગ્નિ, ૪ જલ, ૫ પૃથ્વી) બનેલા છે, પ્રભુના શરીરમા તેવા શરીરની સભાવના પણ સભવે નહિ. કેમકે પચમહાભૂતને તો ભગવાન્ પોતે જ પોતાના શ્રીઅગમાથી પ્રકટ કરે છે વાસ્તે પ્રભુનો આકાર (હસ્ત, પાદ વગેરે.) આનદમયજ સમજવો લૌકિક ભાવના સ્વપ્નમા પણ કરવી નહિ પ્રમાણબલ (વેદાદિ) શુ કહે છે? જુઓ. '૧આનદ બ્રહ્મનુ રૂપ છે' 'શ્રીકૃષ્ણને નમસ્કાર છે શ્રીકૃષ્ણ કેવા? સત્સ્વરૂપ, ચિત્સ્વરૂપ, આનદમય. વળી જેમના કર્મ (લીલા) ક્લેશયુક્ત નથી જે વેદાંતથી જાણી શકાય છે, જે ગુરુસ્વરુપ છે, જે બુદ્ધિના સાક્ષી છે એવા શ્રીકૃષ્ણને પ્રણામ છે' 'ચોતરફ હસ્ત તથા પાદ છે' વગેરે શ્રુતિ પણ પ્રભુના આનદસ્વરૂપનુ જ ભાન કરાવે છે ' અત્યત તાપનો આનદરૂપ મૂર્તિને હૃદયમા રાખીને ત્યાગ કર્યો ' ' આનદ જ હસ્ત, ચરણ, મુખ, ઉદર વગેરે જેના છે,' વગેરે પુરાણો અને તંત્રોથી પણ પ્રભુના હસ્ત, ચરણ વગેરે બધુ માત્ર આનદ જ છે એમ દૃઢનિશ્ચય થાય છે. '૩ક્લારહિત છે, ક્રિયારહિત છે, શાત છે, સર્વકામનાવાલા છે, સર્વગધ છે, આની ઉત્કૃષ્ટશક્તિ તરેહતરેહની છે ' વગેરે શ્રુતિયોથી ભગવાન્ લૌકિકધર્મવાળા નથી અને અલૌકિક સર્વધર્મવાળા છે એમ નિશ્ચય થાય છે નિષધમા પણ કહ્યુ છે કે,—'૪સર્વના આધાર, માયાને વશમાં રાખનાર, આનદાકાર (અક્ષરની અપેક્ષાએ) ઉત્તમ, સર્વ પ્રાપચિકપદાર્થોથી તે વિલક્ષણ છે ' આપણા સિદ્ધાતમાં શ્રુતિની સગતિ ઘણી જ યથાર્થ રીતે કરવામા આવે છે જેટલી શ્રુતિ ધર્મના (પ્રભુના) નિષેધ કરનારી છે તેટલી શ્રુતિ લૌકિકધર્મના નિષેધ કરે છે, એમ વ્યવસ્થા કરવી મતલબ કે ભગવાનમા લૌકિકધર્મ નથી, એમ શ્રુતિનુ તાત્પર્ય છે નહિ કે ભગવાન બિલકુલ ધર્મરહિત છે. જે ઉપનિષદો પ્રભુના ધર્મનુ પરિજ્ઞાન કરાવે છે તે ધર્મ અલૌકિક નિત્ય, વેદસિદ્ધ છે એમ ઉપનિષદનુ રહસ્ય સમજવું. (આ વ્યવસ્થા કરવાથી કોઈપણ જાતનો શ્રુતિનો પરસ્પર વિરોધ પણ પ્રાપ્ત થતો નથી અને શ્રુતિના અર્થનુ ખૂન કર્યા વગર શ્રુતિના યથાર્થ અર્થને સમજવા સહેલો માર્ગ થઈ પડે છે) ભગવાન્ ભાષ્યકાર આજ્ઞા કરે છે કે,—' જેનુ લોકને પ્રત્યક્ષ થાય તેનો નિષેધ કરવો જેનું લોકોને પ્રત્યક્ષ ન થાય તેનો નિષેધ ન કરવો (આખુ બ્રહ્માડ આપણને પ્રત્યક્ષ નથી થતુ માટે તેના કર્તા પ્રભુ નથી એમ માની પ્રભુમા કર્તૃત્વનો નિષેધ કરવો નહિ.) અને જે શ્રુતિ જણાવે તેનો પણ નિષેધ ન કરવો તે પરમકાષ્ટાપન્ન પુરુષોત્તમશબ્દથી ઓળખાતા શ્રીકૃષ્ણ સદા પોતાના અલૌકિક સર્વ ધર્મ પ્રકટ રાખે છે અને નિત્ય સર્વ લીલા કરે છે, '૫દશમની વિશુદ્ધિ માટે અત્ર નવનું લક્ષણ કહ્યુ " (દશમસ્કધ સમજવાની યોગ્યતા માટે નવસ્કધ કહ્યા) એ શુકવાક્યથી અને ' જેની લીલા નવપ્રકારની છે તે શુદ્ધ પુરુષોત્તમ છે ' એ નિબધ વાક્યોથી પ્રભુ નિત્યલીલા

---

૧ आनन्दं ब्रह्मणो रूपम् । सच्चिदानन्दरूपाय कृष्णायाक्लिष्टकर्मणे । नमो वेदान्तवेद्याय गुरवे बुद्धिसाक्षिणे । सर्वत पाणिपाद तत् ।

૨. आनदमूर्तिमजहादतिदीर्घतापम् । आनदमात्रकरपादमुखादरादि ।

૩ निष्कल निष्क्रिय शान्त, सर्वकाम सर्वगन्ध , परास्य शक्तिर्विविधैव श्रूयते ।

૪ सर्वाधार वश्यमायमानदाकारमुत्तमम् । प्रापञ्चिकपदार्थानां सर्वेषा तद्विलक्षणम्

૫ दशमस्य विशुद्धयर्थं नवानामिह लक्षणम् ।

ખુલાસો—ગયા અકમાં પ્રમેયરત્નાર્ણવમાં ૧૮ મા પાનાના ૧ લા પેરેગ્રાફની છેલ્લી લીટીમાં 'જીવને બધ અને મોક્ષ થાય છે' એમ છે તે ઠેકાણે 'જીવને બધ અને અન્યથાજ્ઞાન થાય છે' એમ વાચવુ વળી ૧૯ મા પાનાની ૧૮, ૧૯ લીટીમાં '૧ દેહાધ્યાસ, ૨. પ્રાણાધ્યાસ, ૩ ઇદ્રિયાધ્યાસ, ૪ અતકરણાધ્યાસ, ૫ સ્વરૂપનુ વિસ્મરણ,' એમ સુધારી લેવુ.

સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાન્તો.

૧ ઈશ્વર સત્ય છે

૨ ઈશ્વર, જીવ, અંતર્યામી, અક્ષર ઇત્યાદિનાં નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ
અને પૂર્ણ પુરુષોત્તમ ઈશ્વરનું ધામ અક્ષર બ્રહ્મ ગણિતાનંદ છે

૩ જીવે અવિદ્યાથી ઉપજેલ અહન્તામમતામય સંસાર મિથ્યા છે.

૪ જીવ અણુ છે, શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મનો અંશ છે, વ્યાપક નથી

૫ પરબ્રહ્મ પુરુષોત્તમ ઈશ્વરનું ધામ અક્ષર બ્રહ્મ ગણિતાનંદ છે

૬ સર્વોપરિ વેદાન્તિશાસ્ત્રે પ્રતિપાદિત પરમતત્વાપન્ન વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે.

૭ કૃષ્ણની સેવા એ જ અંશ જીવનો ધર્મ છે, એટલે વસ્તુત સ્વધર્મ કૃષ્ણમૈત્ર જ છે.

૮. આત્મનિવેદન અને પ્રભુપ્રાપ્તિ વિના અન્ય વિશ્વધર્મ હોઈ શકે જ નહિ

બલાકટ પુરાણનો પરિચ્છેદ.

(કીંમત ચાર આના.)

શ્રીનાથજી અને ભૈરવ વચ્ચે બત્રીસ આસમાન જેટલો તફાવત.

શ્રીનાથજી અને ભૈરવનાં રંગીન ચિત્રો સાથે કરી બતાવેલો મુકાબલો.

સ્વામી બલાકટાનન્દના ગપાટાનો રદીયો.

મળવાનાં ઠેકાણાં—

પં૦ જયેષ્ઠારામ મુકુંદજી—કાલબાદેવી રોડ, મુબઈ.

ઓન—ઓમ—ત્રિપાઠીની કંપની—પ્રીન્સેસ સ્ટ્રીટ,"

દી. લખમીદાસની કંપની—પારસી બજાર સ્ટ્રીટ,"

સયાજી વિજય ઑફીસ—વડોદરા.

પુષ્ટિભક્તિસુધાના ગ્રાહકોને સવિનય નિવેદન.

આ માસિકના સર્વ લેખકો જે લેખ લખે છે તે સાંપ્રદાયિક સેવા કરવાની નિર્મલ બુદ્ધિથી જ લખે છે, તેથી બીજા પત્રોની માફક આ માસિકના લેખકોને આપવામાં દ્રવ્યનો ખરચ બિલકુલ થતો નથી, એ જણાવતાં આનંદ થાય છે માસિકની છપામણી વગેરે ખરચ ઘણી જ કરકસરથી કરવામા આવે છે, તેથી નોંધવરમાંથી જે કાંઈ બચશે તેમાંથી સાંપ્રદાયિક પ્રાચીન ગ્રંથો પ્રસિદ્ધ કરવામા આવશે વૈષ્ણવભાઇઓએ આવા માસિકના પોતે ગ્રાહક થવુ જોઇએ, એટલું જ નહિ પણ પોતાના મિત્રોને પણ આવા ધાર્મિક કાર્ય તરફ પ્રેરવાનું ખાસ લક્ષમાં રાખવુ જોઇએ

પ્રકાશક.

વર્ષ ૨ જી] શ્રીકૃષ્ણાબ્દ ૫૧૩૮, માર્ગશીર્ષ-પૌષ

पुष्टिभक्तिसुधा.

કૃષ્ણ ૧૧ શ્રીવલ્લભાબ્દ ૪૩૩ [ઈ.સ ૯-૧૦ મો

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनुं स्वाम् ॥ १ ॥
नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ २ ॥
भक्त्या त्वनन्यया शक्यः अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥ ३ ॥

પ્રકાશક,

વકીલાલ નગીનદાસ શાહ,

બી એ એલએલ બી, વકીલ હાઇ કોર્ટ

મોલજી, ૩૫ ૨-૦-૦ ઉપર ભાવની ૩ ૦-૪-૦

Printed by D Miller Superintendent, British India Press Bombay and Published by Vakilal Nagindas Shah B A LL B Princess Street Bombay

पश्य दशामयि रुचिरदृशा, विरचय सुमतेरवधानम् ॥
हरये विरहतापहृदयाय परं दापय रसदानम् ॥ ३ ॥
स्मरसि किमिति पुनरपि कथितानि हि सम्पादय गुणगणहृद्यानम् ॥
आरोपयसि दोषरहिते दोषं परिहर सखि निजमज्ञानम् ॥ ४ ॥
यद्यपि भाति तथापि विभावय शुक्तिरजतमिव ते भानम् ॥
कुरु गोकुलकरिणे हरिणोपमनयने निजमि (मे?) लनालानम् ॥ ५ ॥
श्रुतमेतावदये यदिह वै मयोदितमधुना कुरु पानम् ॥
इति हरिदासमनसि निवसतु वचनं लेखुविहिति विरहहानम् ॥ ६ ॥
श्रीवल्लभपदसरसिजसेवनमेव वितर सुवितानम् ॥
क इह करोति सकलगुणसुन्दर सौभगनिधिगुणसङ्ख्यानम् ॥ ७ ॥
श्रीगोपीजनचरणरेणुमङ्गतिविरहितमस्थानम् ॥
चेतो वितर विश्वहितविपुलपदसन्ततसेवनरानम् ॥ ८ ॥

॥ हिलग के पद ॥

(राग असावरी)

नंदलाल सों मेरो मन मान्यो कहा करेगो कोय री ॥
हों तो चरणकमल लपटानी जो भावि सो होय री ॥ १ ॥
गृहपति मातपिता मोहि त्रासत हसत घटाऊ लोग री ॥
अब तो जिय ऐसी बनि आई विध ना रच्यो हे संयोग री ॥ २ ॥
जो मेरो यह लोक जायगो ओर परलोकन साय री ॥
नंदनंदन को तोड न छांडु मिलुंगी निसान बजाय री ॥ ३ ॥
यह तन धर बहुयों नाहि पैये वल्लभवेप मुरार री ॥
परमानंदस्वामिके ऊपर सर्वस्व डारों वार री ॥ ४ ॥

(पद २.)

जाको मन लाग्यो गोपाल सों ताहि ओर कैसे भावे हो ?
ले कर मीन दूधमें राखो जल बिन नाहि सचु पावे हो ॥ १ ॥
ज्यों सूरारण घूम चलत हे पीर न काहू जनावे हो ॥
जो गूंगो गुर खाय रहत हे सुखस्वाद नहि बतावे हो ॥ २ ॥

---

१ लघुविदितविरहहानमित्यपि पाठ ।
२. गुणगणेत्यपि पाठ. ।

आर्य गुजराती सभा
विठ्ठलभाई
मुंबई

जसें सरिता मिलि सिंधुमें उलट प्रवाह न आंव हो ॥
जेसें सूर कमलमुख निरखत चित इतउत न डुलावहो ॥ २ ॥

(पद ३.)

मेरो माई हरि नागर सों नेह ॥
जब तें दृष्टि परे मनमोहन तब तें बिसर्यो गेह ॥ १ ॥
कोऊ निंदो कोऊ वंदो मो मन गयो सदेह ॥
सरिता सिंधु मिली परमानंद भयो एकरस तेह ॥ २ ॥

(पद ४.)

मेरो माई नयनन नेह बढ्यो ॥
कमलनयन घनश्याम छबीलो चितमें रहत चढ्यो ॥ १ ॥
को जाने कहे धों कहा कीनो मोहनमंत्र पढ्यो ॥
यह वंसी गोपाल हिदई बिधिजु बनाय गढ्यो ॥ २ ॥
मनगज पर्‍यो रूपसरितामें नाहि न परत कढ्यो ॥
विद्यादास सकल व्रज वार्‍यो प्रेमनिसान मढ्यो ॥ ३ ॥
नयना माई नाहिन करत कह्यो ॥
कहा करूं कैसे नहि छूटे जो हठ हरख गह्यो ॥ १ ॥
आवत हुती सहज मग आपने चपलन उलट चह्यो ॥
निगमस्वरूप धायखन अपने लोभित चाहि लह्यो ॥ २ ॥
जो व्रत लियो मथमही निरखत अत ह सो निबह्यो ॥
विद्यापति श्रीगोपाल सदा इन अखियन लाग रह्यो ॥ ३ ॥

(पद ५.)

नदलालसों माई अरुझ रह्यो मन मेरो क्यों सुर जाऊं री ॥
श्रवन बेनरूप नयन मनमनसा नाहिने चैन रोमरोम रही मूरति कितन
गुरुजन दुर्जन धरे नाह ॥ १ ॥
जंत्र मंत्र टोना टमनासो कछु न कीनो हो उपाऊ ॥
खेम रसिकप्रभुपें अब कैसे छूट न पाऊ अपना देव मनाऊं ॥ २ ॥

(पद ६.)

अब हों कहा करों री माई ॥
सुंदरश्याम कमलदललोचन मेरो मन लियो हं चुराई ॥ १ ॥

लोक कुटुंब सबन मिलके मोह वारवार समुझाई ॥
तोऊ मोहि तिहारे घर विनु नाहिन परत रहाई ॥ २ ॥
अब लों कठिन हिलग के कारन लोकलाज विसराई ॥
कुंभनदासप्रभु सैलधरनपिय मुसक ठगो री लाई ॥ २ ॥

(पद ७.)

अब हों कहा करों री माई ॥
जब ते दृष्टि परी नंदनदन पलभर रह्यो न जाई ॥ १ ॥
भीतर मातपिता मोहि त्रासत ते कुलगार लगाई ॥
बाहिर सब मुख हेर रहत हे कान सनेह न आई ॥ २ ॥
निसवासर मोहि कल न परत हे घट अंगना न सुहाई ॥
चतुर्भुजप्रभु गिरिधरन छबीलो मो चित लियो हे चुराई ॥ ३ ॥

(पद ८.)

बात हिलग की कासों कहिये ॥
सुन री सखी व्यवस्था या तनकी समझसमझ मन चुपकर रहिये ॥ १
मर्मी विना मर्म को जाने? यह उपहास जान जग सहिये ॥
चतुर्भुजप्रभु गिरिधरन मिले जब तब ही सब सुख पैये ॥ २ ॥

(पद ९.)

लगन मन लागी हों लागी ।
कहा करें गे लोग मेरो हों मीतमरसपागी ॥ १ ॥
कछु न सुहाय जाय न कह मन एसी बनि आई अनभागी ॥
अब धरियत चित्त आसपास रहिये रसिकमीतम बडभागी ॥ २ ॥

(पद १०.)

सखी री हों जीवत हरिमुख हेरे ॥
कोउ मेरे सगो न हों काहु की कहत सबन सों हेरे ॥ १ ॥
जोइ यह हठसोई भलें कर हो कहा भयो कहे ते रे ॥
परमानद हिलगकी बातें निबरत नांहि निबेरे ॥ २ ॥

(पद ११.)—(राग, धनाश्री.)

चितवन आप भई चितेरो ॥
मंदिर लगन छांड हरि अंक देखनकों सुख नेरो ॥ १ ॥

मानो टगी परी जो एक टक इतउत करतन फेरो ॥
और न कछु सुनत समझत कोऊ श्रवननिकट व्हे टेरो ॥ २ ॥
चक्षुभुजप्रभु मनमृगको पर्‍यो कठिन कामको घेरो ॥
गोवर्द्धनधर श्यामसिंधुमें पर्‍यो प्रानको बेरो ॥ ३ ॥

(पद १२.)

अखियन ऐसी टेव परी ॥
कहा करों वारिजमुख ऊपर लागत ज्यों भ्रमरी ॥ १ ॥
हरख हरख प्रीतमसुख निरखत रहत न एक घरी ॥
ज्यों ज्यों राखत यतनन करकर त्यों त्यों होत खरी ॥ २ ॥
गड कर रही रूपजलनिधिमें प्रेमपीयूष भरी ॥
सूरदास गिरिधरनगपरसत लूटत निधि सगरी ॥ ३ ॥

(पद १३.)

मोल लई इन नयननकी सैन ॥
श्रवनन सुनत सुधबुध सब बिसरी लुब्ध मोहनबैन ॥ १ ॥
कमलनयन बिरकते आवन एक जो बात कही इस ऐन ॥
परमानंदप्रभु नंददुलार मेरी गाय कही दुहि देन ॥ २ ॥

(पद १४.)

मेरो माई माधो सो मन मान्यो ॥
अपनो तन ओर वा ढोटाको एकमेक कर सान्यो ॥ १ ॥
लोक वेद कुलकान त्यजी मे न्योति आपने आन्यो ॥
एक नंदनंदनके कारन बैर सबन सों ठान्यो ॥ २ ॥
अब क्यों भिन्न होय मेरी सजनी मिल्यो दूध अरु पान्यो ॥
परमानंददासको ठाकुर है पहली पहेचान्यो ॥ ३ ॥

(पद १५.)

सखी मन लाग्यो वहीं ठोर ॥
विव्हल भई सकल ब्रज डोलत बात बिसर गई ओर ॥ १ ॥
मारग जात अचानक देखे अखियन कीनी दोर ॥
प्रफुलित कमल निरख मुख हरिको छवि रस गयो भोर॥ २ ॥
विरच न सक्यो कहा कहु यद्यपि बंधू बगरस बखोर ॥
विष्णुदास विलोकि विमोहि श्रीगोपाल सिर मोर ॥ ३ ॥

(पद १६.)

नयना माई अटके सांवलगात ॥
निरख निरख सादर चकोर ज्यों मुख ससी भुर मुसकात ॥ १ ॥
कहा करों वनी यह कहां तेंने कन इतउत जात ॥
भये रहे नौका के खज्यों विसर गई सब गात ॥ २ ॥
कटि पट पीत उर सुमनमाला निरखत नयन सिरात ॥
कुंडल मकर कपोल मिलि छवि अंबुज कण जिम प्रात ॥ ३ ॥
सुभग भुजन मणि भूषन राजत पद अंबुज सुखदात ॥
विद्यापति श्रीगोपाल विलोकत निमिष न अति अनखात ॥ ४ ॥

(पद १७.)

में अपनो मन हरि सों जोर्यो हरि सों जोर सबन सो तोर्यो ॥
नाच नच्यो तब घूंघट केसो? लोकलाज डर पटक पिछोर्यो ॥ १ ॥
आगें पाछें सोच मिट्यो जिय को बाट माझ मटुका ले फोर्यो ॥
कहनो होय सो कहो सखी री कहा भयो काहुने मुख मोर्यो ॥ २ ॥
नवल लाल गिरिधरन पिया संग प्रेमरंग में यह तन बोर्यो ॥
परमानंद प्रभु लोग हसन दे लोक वेद तिन काज्यों तोर्यो ॥३॥

(पद १८.)

मेरो मन बावरो भयो ॥
लरका एक इहां हुतो ठाडो ताहि के संग गयो ॥ १ ॥
जानों नहीं कोन को छोटा चित्रविचित्र ठयो ॥
पीतांबर छवि निरख हर्यो मन पढ कछु मोहि दयो ॥ २ ॥
ग्वालनी एक पाहुनी आई ताकी यह गति कीनी ॥
परमानंद प्रभु हसत सेन दे प्रेम पाणि गहि लीनि ॥ ४ ॥

पद (१९.)

मेरो मन कान्ह हर्यो ॥
गयो जो संग नंदनदन के वहां ते नही टर्यो ॥ १ ॥
कहा कहूं जो बगदन आयो श्यामसमुट पर्यो ॥
अतिगंभीर बुद्धि को आलय प्रेमपीयूष भर्यो ॥ २ ॥
अब तो जिय ऐसी बनि आई भवन काज बिसर्यो ॥
परमानंद भले ठां अटक्यो यह सब रह्यो धर्यो ॥ ३ ॥

(पद २०.)

मेरो मन ह्न्यो दुहुं ओर ॥
सुंदर वदन मुकुट की शोभा श्रवनन सुरली घोर ॥ १ ॥
तब हों भाज भवन तें निकसी हरि आये इहि ओर ॥
मृदु मुसकाय बंक अवलोकन सर्वस्व लीनो चोर ॥ २ ॥
हों वहु ते समझाय रही ये कछु वश नाहि न मोर ॥
रह्यो उपचार दास परमानंद बिन नागर नंद किशोर ॥ ३ ॥

छान्दोग्योपनिषत्.

नवमप्रपाठक

सनत्कुमारनारदसंवाद.

सर्वात्मभाव.

આ નીચે આપેલુ ભાષાન્તર છાંદોગ્ય ઉપનિષદ્‌ના નવમા પ્રપાઠકનું છે આમાં બે બ્રાહ્મણ પ્રપાઠકને જુદા પાડીએ તો સમગ્ર પ્રપાઠકનું આ સંપૂર્ણ પ્રપાઠક પુષ્ટિમાર્ગીય

પ્રસ્તાવના

સર્વાત્મભાવનુ–જે સર્વાત્મભાવવડે શ્રીમદ્‌ગજવંદુઓ કૃષ્ણરૂપ પરમફલને પામેલા છે–તેનુ અતિસરસ પ્રતિપાદન કરે છે આ પ્રપાઠકની રસિકતા અને ગૂઢાર્થસિધિ સર્વત્ર પ્રપાઠકમા વ્યાપી રહી છે ભાવુક વૈષ્ણવોને આના વાચનથી કંઇ લાભ થાય તેવા આશયથી આજ પ્રપાઠકનુ ભાષાન્તર પ્રથમ આપવામા આવ્યુ છે આ પ્રપાઠકના અર્થનો નિર્ણય શ્રીમદ્‌ભાષ્યકાર **लिंगभूयस्त्वाधिकरण**મા સરસમા કરે છે, અને દક્ષિણાન્તનિવાસી ગોસ્વામી મહારાજાધિરાજ શ્રીમત્ પુરુષોત્તમજી **भाष्यप्रकाश**મા આ જ પ્રપાઠકનો યથાયોગ્ય વિસ્તારથી અર્થનિર્ણય કરે છે. શ્રી પુરુષોત્તમજી આ જ સ્થલે છાંદોગ્યોપનિષત્પરના સ્વકૃત વ્યાખ્યાનનો ઉપન્યાસ કરે છે, પરંતુ દુર્ભાગ્યની વાત તો એ છે કે અદ્યાપિપર્યન્ત પ્રયત્ન કરવા છતા એની એક પ્રત પણ અમને પ્રાપ્ત થઈ નથી ઘણીવાર સાંભળવા ગોચર થાય છે કે જામનગરવાલા શ્રીમન્મધુસૂદનલાલજીને ત્યા પુસ્તકભંડારમા આ પુસ્તક છે, કાંકરોલીવાલા શ્રીમદ્ બાલકૃષ્ણલાલજી અસ્મદ્‌ગુરુચરણ–ને ત્યા પણ પુસ્તકનો સારો ભંડાર હોવાથી ત્યા પણ હોય, શ્રીનાથદ્વારમા પણ હોય, વળી શ્રીપુરુષોત્તમજી સ્વકૃત ગ્રન્થોની ત્રણ પ્રત લખાવતા અને તેમાની એક પ્રત ચાપાસેરીવાલા સ્વમિત્ર ગોસ્વામી શ્રી વિઠ્ઠલેશજી પર મોકલાવતા હતા કહેવાય છે કે તેમના વંશ્ય વા સંબંધી આ મુખઈવાલા શ્રીગોકુલનાથજી છે, અને તેઓ પણ જો વૈષ્ણવોપર કૃપા કરવા ધારે તો એ ગ્રંથની પ્રાપ્તિ કદાચિત્ થાય ગમે તેમ હો પણ અમને એ છાંદોગ્ય ઉપનિષદ્‌ની દીપિકા દૃષ્ટિગોચર થઈ નથી, ભાષાન્તર અને તદનુસારી વ્યાખ્યાન માત્ર ભાષ્ય અને ભાષ્યપ્રકાશને આધારે યોજ્યુ છે ભાષાંતર વા ટીકા ગમે તેટલી સાવધાનતાથી કરવામા આવે તોપણ મૂલની વાત ઓર જ છે, તેથી તેવા અધિકારીઓને તો ત્યા જ દૃષ્ટિ ફેરવાને ભલામણ છે માત્ર રસિક વૈષ્ણવોને ઉપયોગી થાય તેવા જ ઉદ્દેશથી આ સવ્યાખ્યાન ભાષાંતર અપાય છે શાંકરભાષ્યથી આ વ્યાખ્યાન કેટલુ વિલક્ષણ છે તેના ઉપર વાચકવર્ગનું ધ્યાન ખેંચવામા આવશે, જેથી એ ઉપનિષદ્ ભાગ ઉપર બન્ને મતનો સંભ્રમ થવાનો સંભવ ન રહે.

૧ નારદ સનત્કુમાર સમીપ આવ્યા (અને કહ્યું) હે ભગવન્ (મને) ઉપદેશ કરો સનત્કુમારે

સનત્કુમારનારદસંવાદ નારદને કહ્યું જે તું જાણે છે તે મને કહે, ત્યારપછી હું તને અતિરિક્ત કહીશ

૧ નારદે કહ્યું હે ભગવન્ ઋગ્વેદ હું ભણ્યો છું, યજુર્વેદ, સામવેદ, ચતુર્થ અથર્વવેદ, પંચમ ઇતિહાસ પુરાણ, વ્યાકરણ, શ્રાદ્ધકલ્પ, ગણિત, ઉત્પાતજ્ઞાન, નિધિ (મહાકાલાદિ નિધિશાસ્ત્ર), તર્કશાસ્ત્ર, નીતિશાસ્ત્ર, દેવવિદ્યા (નિરુક્ત) બ્રહ્મવિદ્યા (શિક્ષા કલ્પ છંદ વગેરે) ભૂતવિદ્યા, ક્ષત્રવિદ્યા (ધનુર્વેદ), નક્ષત્રવિદ્યા (જ્યોતિષ), સર્પવિદ્યા (ગારુડ), દેવજનવિદ્યા (ગન્ધર્વોક્ત યુક્તિ નૃત્ય ગીત વાદ્ય શિલ્પ વગેરે), આ સર્વે ભાગ સ્મરણમાં છે

૨. તે હું હે ભગવન્ મન્ત્રવિદ્ જ છું, આત્મવિદ્ નથી, પણ આપ જેવા કહેથી સાંભળ્યું છે કે આત્મવિદ્ શોકને તરી જાય છે, (પરન્તુ) હે ભગવન્ હું (તો) શોચ્ય કરું છું, તેથી ભગવાન્ મને શોકની પાર તારો તેણે કહ્યું જે કંઈ તું અધીત થયેલો છે તે આ નામ જ છે ૩

નામ જ ઋગ્વેદ, યજુર્વેદ, સામવેદ, ચતુર્થ અથર્વવેદ, પંચમ ઇતિહાસપુરાણ, વેદોનો વેદ (વ્યાકરણ), પિત્ર્ય, રાશિ, દૈવ, નિધિ વાકોવાક્ય, એકાયન, દેવવિદ્યા, બ્રહ્મવિદ્યા, ભૂતવિદ્યા, ક્ષત્રવિદ્યા નક્ષત્રવિદ્યા, સર્પવિદ્યા, દૈવજનવિદ્યા, આ (સર્વ) નિશ્ચય નામ છે (આ સર્વ ભગવાનનું નામરૂપ છે) નામની ઉપાસના કરે. ૪

જે કોઈ નામરૂપ બ્રહ્મને ઉપાસે છે, તેનો નામની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમાં યથાકામચાર થાય છે, જે નામરૂપ બ્રહ્મને ઉપાસે છે (તેનો) (નારદ પૂછે છે) હે ભગવન્ નામથી અધિક કંઈ છે? (સનત્કુમાર પ્રત્યુત્તર આપે છે કે) નિશ્ચય નામથી અધિક છે (નારદ કહે) ભગવાન્ તે મને કહો (૫) પ્રથમ ખંડ સમાપ્ત.

૨ વાક્ (વાણી) નામથી અધિક છે ઋગ્વેદ, યજુર્વેદ, સામવેદ, ચતુર્થ અથર્વવેદ, પંચમ ઇતિહાસપુરાણ, વ્યાકરણ, શ્રાદ્ધકલ્પ, ગણિત, ઉત્પાતજ્ઞાન, મહાકાલાદિ નિધિશાસ્ત્ર, તર્કશાસ્ત્ર, નીતિ શાસ્ત્ર, નિરુક્ત, શિક્ષા કલ્પ છંદ વગેરે, ભૂતવિદ્યા, ધનુર્વેદ, જ્યોતિષ, ગારુડ, ગન્ધર્વોક્ત યુક્તિ નૃત્ય ગીત વાદ્ય શિલ્પ વગેરે, દ્યૌ (સ્વર્ગ) અને પૃથિવી, વાયુ અને આકાશ, આપ (જલ) અને તેજ, દેવો અને મનુષ્યો, પશુઓ અને પક્ષિઓ, તૃણ, વનસ્પતિઓ, કીટ, પતંગ, પિપીલક (કીડી) સુધીનું સર્વ, ધર્મ અને અધર્મ, સત્ય અને અનૃત, સાધુ અને અસાધુ હૃદયજ્ઞ અને અહૃદયજ્ઞ (આ) સર્વનું વાક્ જ વિજ્ઞાન કરાવે છે જો વાણી ન હોત તો ધર્મ અને અધર્મ, સત્ય અને અનૃત, સાધુ અને અસાધુ, હૃદયજ્ઞ અને અહૃદયજ્ઞ વગેરેનું વિજ્ઞાન ન થઈ શકત. વાણી જ (આ) સર્વનું વિજ્ઞાન કરાવે છે વાણીની ઉપાસના કર

જે કોઈ વાણીરૂપ બ્રહ્મને ઉપાસે છે તેનો વાણીની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમાં યથાકામચાર થાય છે, જે વાણીરૂપ બ્રહ્મને ઉપાસે છે (તેનો) ભગવન્, વાક્થી અધિક કંઈ છે? હા વાક્થી અધિક છે ભગવાન્ તે મને કહો દ્વિતીય ખંડ સમાપ્ત

૩. મન વાણીથી અધિક છે જેમ મુષ્ટિ (મુઠ્ઠી) બે આમલક (ફલ), બે કોલ, બે અક્ષ ધારણ કરે છે બેમ મન વાણી અને નામને ધારણ કરે છે જ્યારે મનથી મનન કરે છે

---

૧ હૃદયને વિષે

૨ મનો મનસ્યનવ્યાપારવિશિષ્ટમન્તઃકરણમ્, મનસ્યનવ્યાપારશ્ચવિવક્ષાદ્યાત્મક । વિચાર વ્યાપાર-વાળું અન્ત કરણ તે મન, અને વિચાર વ્યાપાર તે વિવક્ષાદ્યાત્મક વિચાર થાય ત્યારે બોલવાની ઇચ્છા થાય છે, આવી ઇચ્છાવાળું અન્ત કરણ તે જ મન

(વિચારે છે) કે તું મન્ત્રોનુ અધ્યયન કર કે તત્ત અધ્યયન કરે છે, કર્મ કર કે કર્મ કરે છે, પુત્રો અને પશુઓને ઇચ્છ કે, ઇચ્છે છે, આ લોક કે પરલોક ઇચ્છ કે તે ઇચ્છે છે, કારણકે મન આત્મા છે. મન લોક છે, મન બ્રહ્મ છે મનને ઉપાસ ૧

જે કોઇ મનોરૂપ બ્રહ્મને ઉપાસે છે તેનો મનની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમાં યથાકામચાર થાય છે, જે મનોરૂપ બ્રહ્મને ઉપાસે છે (તેનો) ભગવન્, મનથી અધિક છે ? હા, મનથી અધિક છે. ભગવાન્ તે મને કહો ૨ તૃતીય ખંડ સમાપ્ત.

૪ સંકલ્પ[1] મનથી અધિક છે જ્યારે તે સંકલ્પ કરે છે ત્યારે વિચાર કરે છે, વાણીને પ્રેરે છે, તેને નામમા પ્રેરે છે, નામમા મન્ત્રો એક થાય છે, મન્ત્રોમા કર્મ (એક થાય છે) ૧.

આ સર્વ (મનથી તે કર્મ સુધી) સંકલ્પમા જ પર્યવસાન પામે છે (સંકલ્પૈકાયન છે), સંકલ્પાત્મક છે, અને સંકલ્પમા પ્રતિષ્ઠિત છે દ્યાવાપૃથિવીએ સંકલ્પ કર્યો, વાયુ અને આકાશે સંકલ્પ કર્યો, આપ્ (જલ) અને તેજે સંકલ્પ કર્યો. તેમના સંકલ્પથી વર્ષ સંકલ્પ કરે છે, વર્ષના સંકલ્પથી અન્ન સંકલ્પ કરે છે, અન્નના સંકલ્પથી પ્રાણો સંકલ્પ કરે છે, પ્રાણોના સંકલ્પથી મન્ત્રો સંકલ્પ કરે છે, મન્ત્રોના સંકલ્પથી કર્મો સંકલ્પ કરે છે, કર્મોના સંકલ્પથી લોક સંકલ્પ કરે છે, લોકના સંકલ્પથી સર્વ સંકલ્પ કરે છે તે જ આ સંકલ્પ સંકલ્પની ઉપાસના કર ૩

જે કોઈ સંકલ્પરૂપ બ્રહ્મને ઉપાસે છે, તે પોતે ધ્રુવ, પ્રતિષ્ઠિત અને દુઃખરહિત (હોવાથી) સંકલ્પ કરેલા, પ્રતિષ્ઠિત અને દુઃખરહિત લોકોની અભિસિદ્ધિ કરે છે, (પ્રાપ્તિ કરે છે) સંકલ્પની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમા તેનો યથાકામચાર થાય છે, જે સંકલ્પ બ્રહ્મ છે એમ (જાણી) ઉપાસે છે ભગવન્, સંકલ્પથી અધિક છે ? સંકલ્પથી અધિક છે ભગવાન્ તે મને કહો ૩ ચતુર્થ ખંડ સમાપ્ત.

૫. ચિત્ત[2] સંકલ્પથી અધિક છે જ્યારે તે ચિંતન કરે છે ત્યારે જ સંકલ્પ કરે છે, મનન (વિચાર) કરે છે, વાણીને પ્રેરે છે, તેને (વાણીને) નામમા પ્રેરે છે, નામમા મન્ત્રો અને મન્ત્રોમા કર્મો એક થાય છે ૧.

તે આ સર્વ ચિત્તૈકાયન, ચિત્તાત્મક અને ચિત્તમા પ્રતિષ્ઠિત છે તેથી યદ્યપિ (જે કોઈ) અચિત્ત બહુવિદ્ હોય છે, (લોકો) તેને કહે છે કે એ કઈ નથી, જે કંઇ આ જાણતો હોય તો પણ (બહુ જાણતા હોય તો પણ) અથવા જો આ વિદ્વાન્ હોત તો આમ અચિત્ત ન હોત હવે જો (કોઇ) ચિત્તવાન્ અલ્પવિદ્ હોય છે, (તો પણ) તેને જ (લોકો) સાભલવાની ઇચ્છા રાખે છે. આ સર્વનું ચિત્ત એકાયન, ચિત્ત આત્મા છે, ચિત્ત પ્રતિષ્ઠા છે ચિત્તની ઉપાસના કર ૨

જે કોઈ ચિત્તરૂપ બ્રહ્મને ઉપાસે છે, તો તે ધ્રુવ[3], પ્રતિષ્ઠિત અને અવ્યથમાન્[4] (થઇને) ચિંતન કરેલા, ધ્રુવ, પ્રતિષ્ઠિત અને અવ્યથમાન્ લોકોની પ્રાપ્તિ કરે છે ચિત્તની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમા તેનો યથાકામચાર થાય છે, જે ચિત્તને બ્રહ્મરૂપે ઉપાસે છે. ભગવન્, ચિત્તથી અધિક કંઈ છે ? ચિત્તથી અધિક છે ભગવાન્ તે મને કહો ૫ચમ ખંડ સમાપ્ત

---

૧ સંકલ્પોઽપિ કર્તવ્યાકર્તવ્યયોર્વિષયસમર્થનરૂપસ્તાદૃશાન્તઃકરણસ્યૈવ વૃત્તિવિશેષ । સંકલ્પ પણ કર્તવ્ય અને અકર્તવ્યના વિષય સમર્થનરૂપ તાદૃશ અન્ત કરણનો વૃત્તિવિશેષ છે આ તો કરવુ અને આ તો ન કરવું એમ વિચાર કરીને વિષયને સમર્થન કરવાવાલુ અન્ત કરણ તે જ સંકલ્પ

૨. ચિત્ત ચેતયિતૃત્વ ત્રૈકાલ્યાનુસન્ધાનત્વમ્, અતીતાનાગતવિષયપ્રયોજનનિરૂપણસામર્થ્યમ્ । ભૂત ભવિષ્ય વિષયના પ્રયોજન નિરૂપણ કરવાનુ સામર્થ્ય, અને વર્તમાન આવે અનુસંધાન કરવાપણુ, સમયસૂચકતા અને વિચાર એ બન્ને ચિત્તના લક્ષ્ય છે

૩. નિશ્ચલ ૪ દુઃખરહિત

૬. ધ્યાન [૧] ચિત્તથી અધિક છે પૃથિવી પણ જાણે ધ્યાન ધરે છે, અન્તરિક્ષ પણ જાણે ધ્યાન ધરે છે, આકાશ (દિવ) પણ જાણે ધ્યાન ધરે છે, આપ (જલ) પણ જાણે ધ્યાન ધરેછે, પર્વતો પણ જાણે ધ્યાન ધરેછે, દેવો મનુષ્ય પણ જાણે ધ્યાન ધરેછે. તેથી જેઓ અહિં મનુષ્યોની મહત્તા પ્રાપ્ત કરેછે તેઓ ધ્યાનાપાદાંશ જેવા થાય છે. જેઓ અલ્પ છે તેઓ કલહી પિશુન [૨] ઉપવાદી [૩] છે. હવે જેઓ પ્રભુઓ છે (મોટા છે) તેઓ ધ્યાના [૪] પાદાંશ જેવા થાય છે ધ્યાનની ઉપાસના કર. ૧.

જે કોઇ ધ્યાનસ્વરૂપ બ્રહ્મને ઉપાસે છે તેનો ધ્યાનની અન્તર્ગત માત્ર-માત્રમા યથાકામચાર થાય છે, જે ધ્યાન બ્રહ્મને ઉપાસે છે ભગવન્, ધ્યાનથી અધિક છે ? ધ્યાનથી અધિક છે ભગવાન્ તે મને કહો. ૨. દશમ ખંડ સમાપ્ત

૭. વિજ્ઞાન [૫] ધ્યાનથી અધિક છે વિજ્ઞાનથી ઋગ્વેદનુ વિજ્ઞાન થાય છે. યજુર્વેદ, સામવેદ, અથર્વવેદ, પંચમ ઇતિહાસપુરાણ, વ્યાકરણ, શ્રાદ્ધકલ્પ, ગણિત, દૈવ, નિધિ, તર્કશાસ્ત્ર, નીતિશાસ્ત્ર, દેવવિદ્યા, બ્રહ્મવિદ્યા, ભૂતવિદ્યા, ક્ષત્રવિદ્યા, નક્ષત્રવિદ્યા, સર્પવિદ્યા, દેવજનવિદ્યા, દિવ્-સ્વર્ગ અને પૃથ્વી, વાયુ અને આકાશ, જલ અને તેજ, દેવો અને મનુષ્યો, પશુઓ અને પક્ષીઓ, તૃણ વનસ્પતિઓ, શ્વાપદ, કીટ, પતગ, પિપીલક (મુધીનું સર્વ), ધર્મ અને અધર્મ સત્ય અને અનૃત, સાધુ અને અસાધુ, હૃદયજ્ઞ અને અહૃદયજ્ઞ, અન્ન અને રસ, આ લોક અને પરલોક વિજ્ઞાન વડે જ વિજ્ઞાત થાય છે વિજ્ઞાનની ઉપાસના કર ૧.

જે કોઈ વિજ્ઞાન બ્રહ્મને ઉપાસે છે તેને વિજ્ઞાનવાલા અને જ્ઞાનવાલા લોકોની અભિસિદ્ધિ ાય છે, (પ્રાપ્તિ થાય છે) વિજ્ઞાનના અન્તર્ગત માત્ર-માત્રમા તેનો યથાકામચાર થાય છે, જે વિ-ાન બ્રહ્મને ઉપાસે છે ભગવન્, વિજ્ઞાનથી અધિક છે ? વિજ્ઞાનથી અધિક છે. ભગવાન્ તે મને હો. ૨. સપ્તમ ખંડ સમાપ્ત.

૮. બલ વિજ્ઞાનથી અધિક છે. એક બલવાન્ સો વિજ્ઞાનવાનને કંપાવે છે. જો કોઈ બલ-વાન્ થાય છે ત્યારે તે [૬] ઉત્થાતા થાય છે, ઉત્થાતા થઇને પરિચરિતા થાય છે, પરિચરિતા થઇને [૭] ઉપસત્તા થાય છે, ઉપસત્તા થતો તે દ્રષ્ટા થાય છે, શ્રોતા થાય છે. મન્તા થાય છે, બોદ્ધા થાય છે, કર્તા થાય છે, વિજ્ઞાતા થાય છે. બલવડે જ પૃથ્વી સ્થિતિ કરે છે, બલવડે અન્તરિક્ષ, બલવડે દિવ્ (સ્વર્ગ), બલવડે પર્વતો, બલવડે દેવ મનુષ્યો, બલવડે પશુઓ અને પક્ષીઓ, તૃણ, વનસ્પતિઓ, શ્વાપદો (ટોળા), કીટ, પતંગ, પિપીલક વગેરે બલવડે લોક, સ્થિતિ કરે છે બલની ઉપાસના કર ૧

જે કોઈ બલ બ્રહ્મને ઉપાસે છે તેનો બલની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમા યથાકામચાર થાય છે, જે બલ બ્રહ્મને ઉપાસે છે. ભગવન્, બલથી અધિક છે ? બલથી અધિક છે ભગવાન્ તે મને કહો. ૨. અષ્ટમ ખંડ સમાપ્ત.

---

૧ ધ્યાન શાસ્ત્રોક્તદેવતાલમ્બનો વિજાતીયાનન્તરિત પ્રત્યયસન્તાન એકાગ્રતાવત્પર્યાયઃ શાસ્ત્રમર્યાદે દેવતાનું આલમ્બન, કોઇપણ પ્રકારના અંતરાય વિનનો પ્રત્યયસન્તાન એકાગ્રતા વગેરે Perfectly undisturbed concentration on one object

૨, ધ્યાનસ્યાપાદાનમાપાદ્યં ધ્યાનફલલાભદ્વારયેતત્તસ્યાંશ । ધ્યાનના ફલનો લાભ, તેનો અંશ, ભાગ ધ્યાનના પ્રતાપથી જે મને મહત્તા પ્રાપ્ત થઈ છે તેવા

૩ પરદોષોદ્ઘાટક પારકામાં દોષ જ જનાર ૪. પરઠાની નિન્દા કરનાર.

૫ શાસ્ત્રાર્થવિષયક વિશિષ્ટજ્ઞાનમ્ વિજ્ઞાનમ્ । શાસ્ત્રના અર્થના વિષયક વિશિષ્ટ જ્ઞાન તે વિજ્ઞાન.

૬ બ્રહ્મણાપ્તજનિતં મનસો વિજ્ઞેયવિષયવનસામર્થ્યં બલમ્ । બ્રહ્મના ભક્તપ્રથી પ્રકટ થયેલું મનનું જાણવાનું અને વિચારવાનું સામર્થ્ય તેનું નામ બલ

૭ ઉત્થાન કર્તા તૈયાર બનાર ૮. સેવા કરનાર ૯ અન્તરગ પ્રિય સમીપગ

૯. અન્ન, બલથી અધિક છે તેથી જો કોઈ દશ રાત્રિ અન્ન લે, તે છતે તો પણ, અદ્રષ્ટા, અશ્રોતા, અમન્તા, અબોદ્ધા, અકર્તા અને અવિજ્ઞાતા થાય છે અન્નની પ્રાપ્તિ થાય છે ત્યારે દ્રષ્ટા થાય છે, શ્રોતા થાય છે, મન્તા થાય છે, બોદ્ધા થાય છે, કર્તા થાય છે, વિજ્ઞાતા થાય છે અન્નની ઉપાસના કર ૧

જે કોઈ અન્ન બ્રહ્મને ઉપાસે છે તેનો અન્નની [1]અન્તર્ગત યાવન્માત્રમા યથાકામચાર થાય છે, જે અન્ન બ્રહ્મને ઉપાસે છે. ભગવન્ અન્નથી અધિક છે? અન્નથી અધિક છે ભગવાન્ તે મને કહો. ૨. નવમ ખંડ સમાપ્ત

૧૦. આપ (જલ) અન્નથી અધિક છે તેથી જ્યારે સુવૃષ્ટિ (સારો વર્ષાદ) થતી નથી ત્યારે અન્ન થોડુ થશે એવા હેતુથી પ્રાણો દુ ખ પામે છે, પણ જ્યારે સુવૃષ્ટિ થાય છે ત્યારે અન્ન બહુ થશે એવા હેતુથી પ્રાણો આનન્દ પામે છે જલની જ આ મૂર્તિઓ છે આ પૃથ્વી, આ અન્તરિક્ષ આ આકાશ, પર્વતો, દેવમનુષ્યો, પશુઓ, પક્ષીઓ, તૃણ વનસ્પતિઓ, શ્વાપદો (જનવર), કીટ (કીડા) પતગીઆ, પિપીલક (કીડી) વગેરે સર્વ જલની જ મૂર્તિઓ છે (જલના જ રૂપો છે). જલની ઉપાસના કર ૧.

જે કોઈ જલ બ્રહ્મને ઉપાસે છે તેની સર્વ ઇચ્છાઓ પૂર્ણ થાય છે, તે તૃપ્તિમાન્ થાય છે જલની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમા તેનો યથાકામચાર થાય છે, જે જલ બ્રહ્મને ઉપાસે છે ભગવન્, જલથી અધિક છે? જલથી અધિક છે, ભગવાન્ તે મને કહો. ૩ દશમખંડ સમાપ્ત

૧૧ તેજ જલથી અધિક છે તે આ વાયુને લઈને આકાશને તપાવે છે, ત્યારે (વાદળો) કહે છે કે તાપ પડે છે, બળે છે, વર્ષશે (વરસશે) તેજ જ તે પૂર્વ દર્શાવીને જલ સર્જે છે તે આ (તેજ જ છે), (કારણ કે) ઉંચી અને નીચી વિદ્યુતોની સાથે આક્રંદો (ગર્જનાઓ) થાય છે, તેથી કહે છે વિદ્યુત્ (વિજલી) પ્રબળ છે, ગર્જે છે વા વરષશે તેજ જ તે (સ્વયિન્દુ) દર્શાવીને જલ સર્જે છે તેજની ઉપાસના કર. ૧.

જે કોઇ તેજોબ્રહ્મને ઉપાસે છે તે તેજસ્વી યશને તેજવાના, પ્રકાશવાલા, અપહતતમસ્ક (અધકાર જેમાથી નાશ થયો છે તેવા) લોકોની પ્રાપ્તિ કરે છે, તેજની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમા તેનો યથાકામચાર થાય છે જે તેજોરૂપ બ્રહ્મને ઉપાસે છે ભગવન્, તેજથી અધિક છે? તેજથી અધિક છે ભગવાન્ તે મને કહો ૪ એકાદશ ખંડ સમાપ્ત

૧૨ આકાશ તેજથી અધિક છે આકાશમા જ સૂર્ય અને ચન્દ્રમા ઉભય, વિદ્યુત્, નક્ષત્રો, અગ્નિ છે. આકાશવડે આહ્વાન કરે છે (બોલાવે છે), આકાશવડે શ્રવણ કરે છે, આકાશવડે પ્રતિશ્રવણ કરે છે, આકાશમાં રમણ કરે છે, આકાશવડે રમણ કરે છે, આકાશમા જનન થાય છે, (આકાશ તરફ વલણ થાય છે) આકાશને અભિજનન થાય છે, આકાશની ઉપાસના કર. ૧

જે કોઈ ઓંકાર બ્રહ્મને ઉપાસે છે તે આકારવાલા, પ્રકાશવાલા, અસ્ખલિત ઉરુગાયવાલા લોકોની પ્રાપ્તિ કરે છે આકાશની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમા તેનો યથાકામચાર થાય છે, જે આકાશ

---

૧. 'અમુકની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમાં તેનો યથાકામચાર થાય છે' આ વાકય પ્રત્યેક ખંડની અન્તે આવે છે જેવી રીતે રાજાની સત્તા સ્વરાજ્યમા સર્વત્ર વ્યાપી રહે છે તેમ જે મનુષ્ય અહિ દર્શાવેલા પદાર્થોની બ્રહ્મરૂપે ઉપાસના કરે તો તે મનુષ્યનો જ્યા જ્યા તે પદાર્થની સત્તા પહોચે છે ત્યા ત્યા તેને સ્વેચ્છાનુસારે કામ ઇચ્છા પૂર્ણ કરવાનુ સામર્થ્ય પ્રાપ્ત થાય છે આવો ઉક્તવાકયનો ફલિત અર્થ લાગે છે

૨. અસ્ત બાધ-જ્યાં કોઇનેકોઈ તરફથી દુ ખ નથી તેવા અન્યોન્યની પીડા રહિત દુ ખ વિનાના.
૩ ઉરુગાયવાલા-વિસ્તીર્ણ ગતિવાલા, વિસ્તીર્ણ પ્રચારવાલા વિશાલ.

બ્રહ્મને ઉપાસે છે ભગવન્ આકાશથી અધિક છે? આકાશથી અધિક છે. ભગવાન્ તે મને કહો
૨. દ્વાદશ ખંડ સમાપ્ત

૧૩. [1]સ્મર આકાશથી અધિક છે તેથી સ્મરણ નહિ કરતા (એવા), બહુ હોય તો પણ તેઓ કંઈ શ્રવણ કરતા નથી, મનન કરતા નથી, વિજ્ઞાન કરતા નથી પણ જ્યારે સ્મરણ કરે છે ત્યારે શ્રવણ કરે છે, મનન કરે છે, વિજ્ઞાન કરે છે સ્મરણવડે જ પુત્રો વિજ્ઞાત થાય છે, સ્મરણ વડે પશુઓ, સ્મરણની ઉપાસના કર. ૧

જે કોઈ સ્મર બ્રહ્મને ઉપાસે છે તેનો સ્મરની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમાં યથાકામચાર થાય છે, જે સ્મર બ્રહ્મને ઉપાસે છે ભગવન્, સ્મરથી અધિક છે? સ્મરથી અધિક છે ભગવાન્ તે મને કહો. ૨ ત્રયોદશ ખંડ સમાપ્ત.

૧૪. [2]આશા સ્મરથી અધિક છે. આશાથી પ્રેરિત સ્મરણ મન્ત્રોનું અધ્યયન કરે છે. કર્મો કરે છે, પુત્રો અને પશુઓ ઇચ્છે છે, આ લોક અને પરલોક ઇચ્છે છે આશાની ઉપાસના કર ૧

જે કોઈ આશા બ્રહ્મને ઉપાસે છે તેના આશાથી સર્વે કામો (ઇચ્છાઓ) સમૃદ્ધ થાય છે, એની આશિષો સફલ થાય છે. આશાની અન્તર્ગત યાવન્માત્રમા યથાકામચાર થાય છે, જે આશાને બ્રહ્મરૂપે ઉપાસે છે ભગવન્ આશાથી અધિક છે? આશાથી અધિક છે. ભગવાન્ તે મને કહો ૨. ચતુર્દશ ખંડ સમાપ્ત

૧૫ [3]પ્રાણ આશાથી અધિક છે. જેમ અરાઓ (રથની) નાભિમાં સમર્પિત છે તેમ આ પ્રાણમા સર્વ સમર્પિત છે. પ્રાણ વડે પ્રાણ ગમન કરે છે, પ્રાણ પ્રાણનુ દાન કરે છે, પ્રાણને પ્રાણ દાન કરે છે પ્રાણ પિતા છે, પ્રાણ માતા પ્રાણ ભ્રાતા, પ્રાણ ભગિની, પ્રાણ આચાર્ય, પ્રાણ બ્રાહ્મણ છે.

જો તે પિતાને, માતાને, ભાઈને, બહેનને, આચાર્યને અથવા બ્રાહ્મણને કડવુ કહે સામુ બોલે, તો એને કહે છે 'ધિક્કાર છે તને,' તુ પિતૃહા છે, તુ માતૃહા છે, તુ ભ્રાતૃહા છે, તુ સ્વસૃહા છે, તુ આચાર્યહા છે, તું અરેરે બ્રાહ્મણહા છે. ૨.

હવે જો [4]પ્રાણ ગયા પછી એમને જો કોઈ શસ્ત્રથી ભોંકે છે, એટલુ કરીને અથવા કડે કડકા કરીને બાળે તો પણ (બિચારા) એને નહિ કહે કે તુ [5]પિતૃહા છે. (પણ કહેશે કે) તુ માતૃહા નથી, ભ્રાતૃહા નથી, સ્વસૃહા નથી, આચાર્યહા નથી, બ્રાહ્મણહા નથી. ૩

પ્રાણ નિશ્ચય આ સર્વ થાય છે એ આવુ જોતો, આવુ મનન કરતો, આવુ વિજ્ઞાન કરતો [6]અતિવાદી થાય છે. તેને જો કહે કે તુ અતિવાદી છે તો કહેવુ કે હું અતિવાદી છું, પરન્તુ નહિ ૪ પંચદશ ખંડ સમાપ્ત

---

૧ स्मरः स्मरणम्, अन्तयस्तश्चित्तव्यापारः। સ્મર એટલે સ્મરણ સમજવુ, આ યૌગિક અર્થ છે, પરન્તુ સ્મરનો અર્થ કામ ન થઈ શકે? જુઓ श्रीयमुनाष्टक, स्मरपितृ।

૨. आशा अप्राप्तवस्त्वाकाक्षा।નહિ પ્રાપ્ત થયેલી વસ્તુની ઇચ્છા તે આશા

૩ प्राण्य-मुख्य प्राण आसन्य

૪ उत्क्रान्तप्राणान्, उत्क्रान्ताःप्राणा येषांते, उत्क्रान्तप्राणा, तान् उत्क्रान्तप्राणान्, જેમના પ્રાણ ત્યજી ગયેલા છે તેવા, મરણને શરણ થયેલા તેવા

૫ અહિ ઉપનિષદ્માં પિતૃહા ઈત્યાદિ જ્યાં જ્યાં 'હા' લગાડવામા આવેલો છે ત્યાં 'હા'નો અર્થ હણનાર કર્યો સેવો પિતૃહા-પિતાને હણનાર, માતૃહા એટલે માતાને હણનાર ઈત્યાદિ

૬ અતિવાદી- વિશેષ બોલનારો-નામર્યા તે આજ્ઞા મુજબ સર્વ અતીત પણને બોલનારો પ્રાણો પાસક પ્રાણનુ સર્વ માહાત્મ્ય તેનામાં આવિર્ભાવ પામેલુ છે

૧૬. તે તો અતિવાદી [૧] જે સત્યથી અતિવાદી છે ભગવન્, તે હુ સત્યથી અતિવાદી થાઉ [૨] સત્યની જ તો વિજિજ્ઞાસા કરવી ભગવન્ સત્યની વિજિજ્ઞાસા[૩] કરાવો ૧ ષોડશ ખંડ સમાપ્ત.

૧૭. જ્યારે વિજ્ઞાન થાય છે ત્યારે સત્ય વદે છે, વિજ્ઞાન નથી થતુ ત્યારે સત્ય વદતો નથી, વિજ્ઞાન થાય ત્યારે જ સત્ય વદે છે વિજ્ઞાનની જ તો વિજિજ્ઞાસા કરવી ભગવન્ વિજ્ઞાનની વિજિજ્ઞાસા કરાવો ૧ સપ્તદશ ખંડ સમાપ્ત

૧૮ જ્યાંજે મનન કરે છે ત્યાંજે વિજ્ઞાન[૪] થાય છે, મનન કર્યા વિના વિજ્ઞાન[૪] થતુ નથી, મનન કરીને જ વિજ્ઞાન થાય છે. મતિની[૫] જ (મનનની જ) વિજિજ્ઞાસા કરવી જોઇએ. ભગવન્ મતિની વિજિજ્ઞાસા કરાવો ૧ અષ્ટાદશ ખંડ સમાપ્ત

૧૯ જ્યારે શ્રદ્ધા થાય છે ત્યાંજે મનન કરે છે શ્રદ્ધા વિના મનન નથી, શ્રદ્ધા થાય ત્યારે જ મનન થાય છે શ્રદ્ધાની જ તો વિજિજ્ઞાસા કરવી જોઇએ ભગવન્, શ્રદ્ધાની વિજિજ્ઞાસા કરાવો ૧ એકોનવિંશ ખંડ સમાપ્ત

૨૦. જ્યારે નિષ્ઠ[૬] થાય છે ત્યારે શ્રદ્ધા રાખે છે, નિષ્ઠા વિના શ્રદ્ધા થતી નથી, નિષ્ઠા થાય ત્યારે જ શ્રદ્ધા રાખે છે નિષ્ઠાની વિજિજ્ઞાસા કરવી જોઇએ ભગવન્, નિષ્ઠાની વિજિજ્ઞાસા કરાવો ૧ વિંશ ખંડ સમાપ્ત.

૨૧ જ્યારે કૃતિ (સાધન) કરે છે, ત્યારે નિષ્ઠા થાય છે, કૃતિ કર્યા વિના નિષ્ઠા થતી નથી, કૃતિ કરીને જ નિષ્ઠા થાય છે કૃતિની વિજિજ્ઞાસા કરવી જોઇએ ભગવન્, કૃતિની વિજિજ્ઞાસા કરાવો ૧ એકવિંશ ખંડ સમાપ્ત.

---

૧. પ્રાણોપાસક અતિવાદી છે આ પ્રાણનુ આવુ માહાત્મ્ય હોવાથી, અને અપહતપાપ્મ હોવાથી અન્ય સર્વ કરતા ઉત્કૃષ્ટ છે,તેથી ઉત્કૃષ્ટવાદિત્વ જ અતિવાદિત્વ, પરન્તુ પરમકાષ્ઠાપન્ન ઉત્કૃષ્ટવાદિત્વ નહિ અતએવ પ્રાણની પણ અલ્પભાવથી ઉપાસના અભિપ્રેત છે આવા આશયથી પ્રાણને પણ ભાષ્યમાં ઉપાસનાના વિષયમા ગણવામાં આવ્યો છે શ્રુતિમાં આમ સ્પષ્ટ નથી કહ્યુ તેનું કારણ નારદની પરીક્ષાને માટે છે માટે અગાડી 'તુ અતિવાદી છે, તુ અતિવાદી છે' એમ કોઈ પૂછે તો કહેવુ કે હા હું અતિવાદી છુ, છુપાવવું નહિ, સત્યવાદી તે જ અતિવાદી, એમ કહીને પ્રાણોપાસકનુ સત્યવાદિત્વથી અતિવાદિત્વ સૂચવ્યુ છે આ પ્રમાણે ક્લિષ્ટ પ્રયોગ કરવાથી જો નારદને અધિક જિજ્ઞાસા થાય તો તે યોગ્ય નહિ તો અયોગ્ય પણ નારદ સમજ્યો કે પ્રાણનુ તત્વ પ્રાણ નહિ પણ કંઈ અન્ય છે તેથી કહ્યું કે હુ સત્યથી અતિવાદી થાઉ' વસ્તુત અહિં વિદ્યાની અપ્રાપ્તિ થાય છે, તેથી આ પ્રમાણે પ્રાણના માહાત્મ્યનુ દર્શન નારદને કરાવ્યુ છે ત્યારપછી નારદને અધિકની જિજ્ઞાસા ઉત્પન્ન કરીને અન્તમા ભૂમનુનો ઉપદેશ કર્યો છે

૨ सत्यम् अर्थमनतिक्रम्य स्थित वस्तु स्वरूपम् । વસ્તુનુ યથાર્થ યથાસ્થિત સ્વરૂપ

૩ विशेष ज्ञातुमिच्छा

૪. विज्ञान सत्यविषयक विशिष्टज्ञानम् । સત્યવિષયક વિશિષ્ટજ્ઞાન

૫ मति सङ्कल्प मदर्थस्वरूपविचार । તર્કવડે તેના અર્થનો અને સ્વરૂપનો વિચાર

૬ श्रद्धा आस्तिक्यबुद्धि । આસ્તિક્યબુદ્ધિ

૭ निष्ठा तद्विषयक आदर, तत्परस्वरूप । શ્રદ્ધાવિષયક આદર, તત્પરતારૂપ.

૮ कृति तद्विषयकसाधनानुकूल इन्द्रियव्यापार । નિષ્ઠાના વિષય અને સાધનની અનુકૂલ ઇન્દ્રિયોનો વ્યાપાર, પ્રવૃત્તિ

૧૨ જ્યારે સુખનો[1] લાભ થાય છે ત્યારે કૃતિ કરે છે, અસુખ પ્રાપ્ત કરીને કૃતિ કરતો નથી, સુખનો લાભ લઈને જ કૃતિ કરે છે. સુખની જ વિજિજ્ઞાસા કરવી જોઈએ. ભગવન્, સુખની વિજિજ્ઞાસા કરવી. ૧ દ્વાવિંશ ખંડ સમાપ્ત.

૨૩. જે ભૂમન્ છે તે નિશ્ચય સુખ છે, અલ્પમાં સુખ નથી, ભૂમન્ જ સુખ છે. ભૂમનની વિજિજ્ઞાસા કરવી જોઈએ. ભગવન્ ભૂમનની વિજિજ્ઞાસા કરવી. ૧ ત્રયોવિંશ ખંડ સમાપ્ત.

૨૪. જ્યાં અન્યનું દર્શન થતું નથી, અન્યનું શ્રવણ થતું નથી, અન્યનું વિજ્ઞાન થતું નથી તે ભૂમન્ છે જ્યાં અન્યનું દર્શન થાય છે, અન્યનું શ્રવણ થાય છે, અન્યનું વિજ્ઞાન થાય છે તે અલ્પ છે જે ભૂમન્ છે તે અમૃત છે. હવે જે અલ્પ છે તે મર્ત્ય છે (મરણધર્મા છે) હે ભગવન્, તે કોમા પ્રતિષ્ઠિત છે? સ્વમહિમામા, અથવા મહિમામા પણ નહિ ૧.

ગાય, અશ્વ, હસ્તી, હિરણ્ય, દાસ, ભાર્યા, ક્ષેત્રો, આયતનો (ઘર) આ સર્વને અહિં (આ લોકમાં) મહિમા કહે છે તેણે (સનત્કુમારે) કહ્યું હું એમ કહેતો નથી, (આવો મહિમા હું કહેતો નથી), હું કહું છું કે અન્ય (હોય તે) અન્યમા પ્રતિષ્ઠિત થાય છે. ૨. ચતુર્વિંશ ખંડ સમાપ્ત.

---

૧ સુખ અનુકૂલઅનુભવિત્વેય આન્તર ધર્મઃ। અનુકૂલઅનુભવિત્વેય આન્તર ધર્મ ,આ સુખનું સ્વરૂપ લૌકિક અભાનાકાર છે. ત્યાર પછી સુખમાં વિશેષ કહેવાને ભૂમતના સ્વરૂપનો નિરવધિ સુખરૂપ પરમ આનન્દનો ઉપદેશ કરે છે. આ ઉપદેશ થયા પછી નારદને અધિકની જિજ્ઞાસા થતી નથી, એટલે એમ અનુમાન થાય છે કે વિદ્યાનુ પર્યવસાન ભૂમનૂમા જ થાય છે. એવો નારદનો નિશ્ચય થયો હોવો જોઈએ. અને તેથી જ નારદે અધિક નહિ પૂછતાં તેની પ્રતિષ્ઠા શેમાં છે એમ પૂછયું. વળી નિરવધિસુખ એ જ ભૂમનનું સ્વરૂપ છે એમ દર્શાવીને પરમ વિચારનો વિષય પણ તેજ જ છે એમ સૂચવ્યું અને આ સ્વરૂપને જ કૃતિ, નિષ્ઠા શ્રદ્ધા, મતિ, વિજ્ઞાન અને સત્યદ્વારા જાણીને સત્યવાદી થાય, ત્યારે જ અનિવાર્ય થવાય, આપ્તોપાસક પણ ત્યારે જ સત્ય રીતે ગણાય તેથી પ્રાણ સત્યસ્વાદિત્વ વગેરેનુ પરમકારણ પણ આ જ સ્વરૂપ છે એમ સમજવુ, અને આ વિદ્યામાં અભિપ્રેત પરમકાષ્ઠાપન્ન વસ્તુ પણ આ જ સમજવી. ભૂમનનો અર્થ સુષુપ્તિ નથી ગાઢ નિદ્રા નથી એવુ ભગવાન ત્યાંથી સિદ્ધ કર્યું છે. ભૂમન અનન્ત બાહુલ્યાદિ પર્યાયવાચક હોવાથી અને સુખ રૂપ પણ હોવાથી નિરવધિ સુખરૂપ અને નિરવધિ આનન્દરૂપ પણ આ જ સ્વરૂપ છે એમ નિશ્ચય થાય છે. ઉપનિષદોમાં કેટલીક વખત પરમ વસ્તુનુ રસરૂપે વર્ણન કર્યું છે, કેટલીક વખત આન ન્દમયરૂપે વર્ણન કર્યું છે અને અહિં પણ નિરવધિ સુખરૂપે વર્ણન કર્યું છે તે ઉપરથી એમ સિદ્ધ થાય છે કે પ્રાચીન મહર્ષિઓને પરમ પ્રાપ્ય વસ્તુ આનન્દરૂપ, રસરૂપ અને નિરવધિ સુખરૂપ હતી આ ઉપરથી તેમનો પરમ મોક્ષ પણ કેવળ દુઃખાભાવમાત્ર નહિ, પણ અત્યન્ત દુઃખાભાવ પૂર્વક નિરવધિ નિરૂપધિ રસરૂપ આનન્દરૂપ સુખરૂપ પરમ પુરુષોત્તમની પ્રાપ્તિ સમજવી.

૨ આ મહિમા-વિભુતિ. સ્વ. છે ભગવત્સ્વ રૂપ છે. પ્રભુએ જેનુ વરણ કર્યું છે અને જેની પ્રપચવિસ્મૃતિ પૂર્વક ભગવદાસક્તિ થઈ છે, અને જેને પ્રભુની સંચ સ્ફૂર્તિ મળી, પ્રભુ જ જેનુ સર્વ થઈ રહ્યા છે તેવા સર્વાત્મભાવવિશિષ્ટ ભક્તમાં પોતે અત્યન્ત કૃપા કરીને વિરાજે છે તેમ આ મહિમા પણ તેવો જ સમજવો, લૌકિક મહિમા જેમાં મન વગેરેમાં પ્રભુની પ્રતિષ્ઠા નહોવા એ અત્યન્ત સમીચીન છે, પણ પ્રભુ જ જેનું સર્વ છે એવા સર્વાત્મભાવવાળા ભક્તમાં જેનો સ્વીયત્વેન અંગીકાર કરેલો હોવાથી તેનામા પોતે સ્થિતિ કરે તે પણ અત્યન્ત પૂર્ણ છે તેથી તેવો જ ભક્ત અહિ મહિમારૂપે અભિપ્રેત છે એમ સિદ્ધ થાય છે

૨૫ તે જ નીચેથી, તે ઉપરથી, તે પાછલથી, તે આગલથી, તે દક્ષિણત, તે ઉત્તરત, તે જ આ સર્વ છે અથ અહંકારાદેશ, હું જ નીચેથી, હું ઉપરથી હું પાછલથી, હું આગલથી, હું દક્ષિણત, હું ઉત્તરત, હું જ આ સર્વ છું ૧

અથ આત્માદેશ આત્મા જ નીચેથી, આત્મા ઉપરથી, આત્મા પાછલથી, આત્મા આગલથી, આત્મા દક્ષિણત, આત્મા ઉત્તરત, આત્મા જ આ સર્વ છે તે આ આમ દર્શન કરતો, આમ મનન કરતો, આમ વિજ્ઞાન કરતો, આત્મરતિ, આત્મક્રીડ, આત્મમિથુન આત્માનન્દ તે સ્વરાટ્ થાય છે તેનો સર્વ લોકમા યથાકામચાર થાય છે હવે જેઓ આથી અન્યથા જાણે છે, તેઓ અન્ય રાજાઓ છે, તેઓ ક્ષય્યલોક થાય છે, તેમનો સર્વે લોકોમા અકામચાર થાય છે. ૨ પચ્ચવિશ ખંડ સમાપ્ત.

૧ આમ-દર્શન કરતો, આમ મનન કરતા, આમ વિજ્ઞાન કરતો તેવા આને આત્મત પ્રાણ, આત્મત આશા, આત્માત સ્મર, આત્મત આકાશ, આત્મત તેજ, આત્મત અપ્, આત્મત આવિર્ભાવ અને તિરોભાવ, આત્મત અન્ન, આત્મત બલ, આત્મત વિજ્ઞાન, આત્મત ધ્યાન, આત્મત ચિત્ત, આત્મત સંકલ્પ, આત્મત મન, આત્મત વાચ્, આત્મત નામ, આત્મત મન્ત્રો, આત્મત કર્મો આત્મત જ આ સર્વે થાય છે. ૧.

તેનો આ શ્લોક પશ્ય મૃત્યુનુ દર્શન કરતો નથી, રોગ પણ નહિ અને દુ:ખતા પણ નહિ, પશ્ય સર્વનુ દર્શન કરે છે, સર્વશ સર્વની પ્રાપ્તિ કરેછે તે એકધા થાય છે, ત્રિધા થાય છે, પચધા, સપ્તધા અને નવધા; અને પુન. એકાદશ પણ (તેજ) સ્મૃત છે, અને શત અને દશ (૧૧૦) અને સહસ્ર અને વિંશતિ (૧૨૦) પણ (તેજ) સ્મૃત છે, આહારશુદ્ધિ થાય ત્યારે સત્ત્વશુદ્ધિ થાય છે, સત્ત્વશુદ્ધિ થાય ત્યારે નિશ્ચય સ્મૃતિ થાય છે સ્મૃતિનો લાભ થાય છે ત્યારે સર્વ ગ્રન્થીનો વિપ્રમોક્ષ થાય છે, (ગાંઠો છૂટી જાય છે) ભગવાન્ સનત્કુમાર તે મૃદિતકષાયને તમસની પાર દર્શાવે છે. તેને (સનત્કુમારને) સ્કંદ કહે છે, સ્કંદ કહે છે, ૨. પચ્ચવિશ ખંડ સમાપ્ત

---

૧ વિરહાવસ્થા અનુભવનારા ભક્તના રસશાસ્ત્રોક્ત વ્યભિચારી ભાવો આ સમજવા. વ્યભિચારી ભાવો અનિયત હોવાથી અહિં પણ ભગવત્સ્ફૂર્તિ પછી અહંકારાદેશ અને પછી આત્માદેશ, એટલે પ્રથમ વિરહદશા અને પછી સંયોગદશા એમ અનુવિષે અત્યન્ત ગૂઢ ભાવવાળા અન્યત પ્રેમાસક્ત ભક્તની દશાદ્વયનુ વર્ણન છે

૨ આત્મરતિ વગેરે શબ્દો ભક્તની સંયોગાવસ્થા વર્ણવે છે પરમકાષ્ઠાપન્ન પુરુષોત્તમ અહિ નિરુપાધિ પ્રિયત્વનો વિષય હોવાથી આત્મ શબ્દનો પ્રયોગ શ્રુતિમા કર્યો છે, અર્થાત વસ્તુત પરમપ્રેમનો વિષય જીવાત્મા નહિ પણ પરમપુરુષોત્તમ જ તેને વિષે જ્યારે પ્રેમ આસક્તિ અને વ્યસન થાય ત્યારે જ ગોપિકાવત્ પરમફલની પ્રાપ્તિ થાય

૩. અન્યરાજાઓ ભગવાનૂથી ઇતર પદાર્થ જેમને રાજી કરે છે તેઓ રઞ્જયતિ ઇતિ રાજા, અન્યો રઞ્જયિતા યેષા તે અન્યરાજાન.

૪ નાશ પામે એવા લોકોની પ્રાપ્તિ કરવાવાલા

૫ પશ્ય ભૂમદર્શનવાન

૬ આહાર શુદ્ધિએ આ ભૂમદર્શનનુ પરમકારણ છે ભગવાન જ જ્યારે પ્રાપ્યોપક થાય ત્યારે આ બની શકે આત્મત આત્મામાથી જ સર્વની આ ભૂમદર્શનવાનને પ્રાપ્તિ થાય છે.

૭ મૃદિતકષાય, સત્ત્વશુદ્ધિ થવાથી રાગ દ્વેષાદિ આસુર સંપત્તિ જેનામાથી નષ્ટ થઈ છે, તે સનત્કુમાર નારદને માત્ર દર્શાવે છે; પણ આ પરમફલ આપી શકતા નથી આ પરમફલ તો ભગવત્કૃપૈકસાધ્ય છે. આ પણ દર્શાવ્યુ તેનુ કારણ સનત્કુમારની નારદપર કૃપા સનત્કુમારનો સ્વભાવ દયાલુ છે પોતે વરદાનથી શિવના પુત્ર પણ થયા તેથી લોકો એને સ્કંદ કહે છે

પૂર્વોક્ત સદ્ગુણોની વૃદ્ધિ થાય અને શિષ્યમા સદ્ગુણી ગુરુ તરફ જ આદરભાવ વૃદ્ધિ પામે એમ આપણે આશા રાખીશુ પ્રથમથી જ પૂર્વોક્ત સદ્ગુણવિશિષ્ટ ગુરુની પકકી તપાસ કરીને જ ગુરુ કર્યા હોય તો અર્ધદગ્ધ જીવોને જે પશ્ચાત્તાપ પાછલથી થાય છે તે થવાનો સભવ જ ન રહે પાછલથી પશ્ચાત્તાપ થાય તે કરતા પ્રથમથી જ નિશ્ચય કરવાનો પરિશ્રમ લેવો પડે એ વધારે સારુ છે આધુનિક સમયમાં એવા સદ્ગુણવિશિષ્ટ ગુરુ માત્ર શ્રીવલ્લભાધીશ જ છે એમ વિનિશ્ચય રાખીને ગુરુ તરફ જે આદરભાવ રાખવો આવશ્યક છે તે સર્વ ભાવ કેવલ શ્રીમદાચાર્યચરણમા જ ઘટાવવો મને અત્યત યોગ્ય લાગે છે, અને શ્રીમદ્ગોસ્વામી શ્રીપુરુષોત્તમજી તેમા [1]સર્વાંશે સમ્મતિ આપે છે આધુનિક ગુરુનો આદરસત્કાર પૂર્વોક્ત સદ્ગુણોના પ્રમાણમાં થાય તો ગુરુઓને સદ્ગુણી થવાની જરુર જ પડે, અને તેથી સપ્રદાયની અવનતિ શિથિલ થાય જ, અર્થાત્ ઉન્નતિ થવામા કાઈ પણ પ્રતિબધ રહે નહિ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યના સર્વોત્કૃષ્ટ સર્વમાન્ય સિદ્ધાન્તની વિજયપતાકા દશદિગન્તમા પ્રસાર થાય એવા સદુદ્દેશથી પ્રતિકૂલ સામગ્રીમાત્રનો પરિત્યાગ કરીને કેવલ અનુકૂલ સામગ્રીમાત્રનુ જ ગ્રહણ કરવુ એ ફલરૂપ છે.

સામાન્ય કર્તવ્ય

વૈષ્ણવોના કર્તવ્યનુ ઘણા જ નિરૂપણ કરે છતુ, પરતુ તે કર્તવ્યનું આચરણ કરવામા અનુકરણીય ગુરુની આવશ્યકતા છે, તેથી ગુરુમા અપેક્ષિત સદ્ગુણોનુ યથાપ્રસગ મધ્યમા નિરૂપણ કર્યું શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના સંપ્રદાયમાં કર્તવ્યના બે પ્રકાર છે કેટલાક કર્તવ્ય બાહ્ય છે, અને કેટલાક કર્તવ્ય આંતર છે, અથવા કેટલાક કર્તવ્ય સામાન્ય છે, અને કેટલાક કર્તવ્ય વિશેષ છે બાહ્ય વા સામાન્ય કર્તવ્યનુ નિરૂપણ કરતા શ્રીમદાચાર્યજી આજ્ઞા કરે છે કે "સર્વ[2] કઠોરતા સહન કરવી, વસ્તુમાત્ર શ્રીકૃષ્ણનુ જ રૂપાતર છે એમ ભાવના રાખવી" 'મારા દોષ નિવૃત્ત કરવા માટે જ એ પુરુષદ્વારા શ્રીકૃષ્ણ જ ઉપદેશ કરવાની કૃપા કરે છે' એવો ભાવ રાખીને ગમે તે કઠોર વચન કહે તે સહન કરવા વૈરાગ્ય અને સતોષનો કદાપિ પરિત્યાગ કરવો નહિ," અર્થાત્ વૈરાગ્ય વડે વિષયાસક્તિથી નિવૃત્ત રહેવુ, અને સતોષવડે લોભથી દૂર રહેવુ વલી શ્રીમદાચાર્યજી આજ્ઞા કરે છે કે "સર્વ અપેક્ષાનો[3] પરિત્યાગ કરીને, કેવલ નિરપેક્ષ વૃત્તિ ધારણ કરીને, પ્રભુને વિષે મનને સ્થિર કરીને, પ્રભુમા અચલ વિશ્વાસ રાખીને, યુક્તિપૂર્વક જે પ્રકારે ફલ સિદ્ધ થાય તે પ્રમાણે આચાર રાખવો" પુનઃ શ્રીમદાચાર્યજી સ્પષ્ટ કથન કરે છે કે "યથાશક્તિ[4] સ્વધર્માચરણ કરવુ, વિધર્મથી નિવૃત્તિ રાખવી" સ્વધર્મનુ આચરણ તો યથાશક્તિ જ કરવુ, શક્તિ ઉપરાત ધર્મ કરવાનો મિથ્યા આગ્રહ કરવાથી

---

૧. कलेर्बलिष्ठत्वेनाग्रिमेषु गुरुलक्षणाभावमालोक्य स्वस्मिन्नेवैतन्मार्गीयगुरुत्व नियच्छन्त आहः ઇત્યાદિ અવતરણિકાથી શ્રીપુરુષોત્તમજી કેવલ શ્રીમહાપ્રભુજીને જ ગુરુ માને છે જે પુષ્ટિમાર્ગમા સાક્ષાત્ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના વશમને પણ શ્રીપુરુષોત્તમજી કાશ્મીરસ્થ શ્રીગિરિધરજી પ્રભૃતિ વિદ્વાન્ અને મહાનુભાવો બાલકો કેવલ 'ગુરુદ્વાર' જ લેખે છે તે ભગવદ્દાસ્યાત્મક સમ્પ્રદાયમાં શ્રીગોકુલસ્થ અને મથુરા તૈલંગ ભટ્ટોને 'ભટ્ટાચાર્ય' થઈ બેસવાની અને ઇતર બ્રાહ્મણોને 'હરિહરાત્મક સમ્પ્રદાયના આચાર્ય કહેવવાનો લેશમાત્ર પણ અધિકાર નથી એ સુજ્ઞ વાચકોએ લક્ષમાં લેવા યોગ્ય છે. 'આચાર્ય' 'ભટ્ટાચાર્ય' અને કેવલ કપોલકલ્પિત 'હરિહરાત્મક સમ્પ્રદાયના આચાર્યનુ પદ પ્રાપ્ત કરવાનો તેમનો વ્યામોહ દૂર થાય, અને સર્વાત્મભાવત ભગવદ્દાસ્ય પ્રાપ્ત કરવાની પ્રચુર આકાક્ષાનો સમુદય થાય એટલે પ્રકારે પુષ્ટિસ્થ ભગવાન્ સર્વ પુષ્ટિમાર્ગીય ભગવદીયોની બુદ્ધિને ફેરે.

૨ सर्वं सहेत परुषं सर्वथा कृष्णभावनात्। वैराग्यं परितोषं च सर्वथा न परित्यजेत्।
૩ सर्वापेक्षा परित्यज्य दृढं कृत्वा मनः स्थिरम्। दृढविश्वासतो युक्त्या यथा सिध्येत्तथाचरेत्।
૪ स्वधर्माचरणं शक्त्या विधर्माच्च निवर्तनम्। इन्द्रियाणामनियमाद् सर्वथा न व्यवेत् क्वचित्।

પરિણામે "અશ્રદ્ધા" થઈ જતાં કદાચિત્ વિમુખ થવાનો પણ પ્રસંગ આવી જાય, તેથી શક્તિ ઉપરાંત ધર્માચરણ ન કરવું, શક્તિ ઉપરાંત ધર્મનો આડંબર કરનાર કદાચિત્ ઋણી થઈને મહાદુઃખમાં પડે છે; તેથી પણ ધર્માચરણ યથાશક્તિ જ કરવું, પરંતુ અધર્મથી નિવૃત્તિ તો સર્વત પૂર્ણ રીતે થવી ધર્માચરણ યથાશક્તિ, પરંતુ અધર્મનિવૃત્તિ તો સર્વશ પૂર્ણ જ હોવી જોઇએ "ઇંદ્રિયરૂપી અશ્વને વિશેષ નિગ્રહમાં રાખવા" અર્થાત્ "યથાશક્તિ ધર્માચરણ, અધર્મમાથી સર્વાંશે નિવૃત્તિ, અને ઇંદ્રિયરૂપી અશ્વનો વિશેષ નિગ્રહ," એ ત્રણ વસ્તુનો ત્યાગ સર્વથા ન કરવો, એ ત્રણ વસ્તુ ઉપર પૂર્ણ લક્ષ રાખવું શ્રીમદાચાર્યજી પુન આજ્ઞા કરે છે કે "યથાશક્તિ ધર્માચરણ અધર્મનિવૃત્તિ, અને ઇંદ્રિયાશ્વનો[1] વિનિગ્રહ એ ત્રણથી જે કાઈ લેશમાત્ર પણ વિરૂદ્ધ હોય તેનો શીઘ્ર પરિત્યાગ[2] કરવો" નિબધમા એથી પણ આગલ વધીને આજ્ઞા કરે છે કે "સર્વના[3] આત્મા શ્રીકૃષ્ણ છે, તેથી સર્વથા સદાસર્વદા દૈન્યભાવના રાખવી, અહકાર ન કરવો, માનની અપેક્ષાનો ત્યાગ કરવો," માનની આકાક્ષા સર્વથા ન રાખવી સામાન્ય બાહ્ય ધર્મનો ઉપસહાર કરતા આજ્ઞા કરે છે કે "નિરતર[4] સર્વથા પ્રભુના ગુણનો આલાપ કરવો," અથવા ગુણગાનસામર્થ્ય ન હોય તો "માત્ર નામોચ્ચાર કરવા", પરતુ તે "સભામા પણ કરવા," સભામા પણ પ્રભુનુ નામ લેતા શરમાવુ નહિ, કારણ કે સભામા પણ ગુણગાન વા નામોચ્ચાર કરવાથી "નિર્ભય થવાય છે," અને લોકવેદનો ભય મટી જતા નિસ્પૃહતા સિદ્ધ થઈ જાય છે.

વિશેષ કર્તવ્ય

પરમ ભાગ્યવાન્ વૈષ્ણવો, સામાન્ય અને બાહ્ય કર્તવ્યનો કાઈક ખ્યાલ આપને આવ્યો હવે વિશેષ અને આતર કર્તવ્યસબધી કાઇક નિરૂપણ કરુ છુ સામાન્ય કર્તવ્ય મનુષ્યમાત્ર કરી શકે એમ છે કર્મમાર્ગીય અને શુદ્ધાદ્વૈતીય અન્યવાદી જ્ઞાની પણ પુર્વોક્ત બાહ્ય નીતિમય આચાર રાખી શકે છે, પરતુ પુરુષોત્તમના નિત્યસબધવાન વૈષ્ણવને, નીતિમાન્ કર્મઠ અને જ્ઞાનીના જેવા આચારવિચાર ઉપરાત, કેટલાક આતર અને વિશેષ કર્તવ્ય પણ પ્રાપ્ત થાય છે આ વિશેષ આતર કર્તવ્યમા "સેવા" અથવા "ભક્તિ" સર્વથી મુખ્ય છે "ભક્તિ" એટલે શુ ? એનો નિર્ણય ઉપનિષદ્મા જ આપ્યો છે કે "ભક્તિ" એટલે એ પુરુષોત્તમનુ "ભજન," અને "ભજન" "એટલે આ લોક અને પરલોકની ઉપાધિમાત્રમાથી નૈરાશ્ય અને નૈરાશ્ય પ્રાપ્ત કરીને જ એ પુરુષોત્તમ વિષે આત્માનો વિનિયોગ, તે જ નૈષ્કર્મ્ય પણ" આ ઉપનિષદ્ના વચનનો ગભીર અર્થ પ્રકટ કરતા ભક્તિસૂત્રકાર આજ્ઞા કરે છે કે "ભક્તિ" એટલે "ઐશ્વર્ય વીર્ય યશ શ્રી જ્ઞાન અને વૈરાગ્ય એ ષડ્ દિવ્ય ધર્મથી સપન્ન ઈશ્વરમાં પુરુષોત્તમમા, આ લોક અને પરલોકની ઉપાધિમાત્રમાથી નૈરાશ્ય પ્રાપ્ત કરીને સિદ્ધ થયેલો પરમ[5] અનુરાગ" નારદપચરાત્રમા પણ ભક્તિનુ લક્ષણ આપતા કહ્યુ છે કે "પ્રભુના[6] માહાત્મ્યજ્ઞાનપૂર્વક દૃઢ અને સર્વાધિક સ્નેહ એ જ ભક્તિ, અને એ ભક્તિથી જ સસારનિવૃત્તિપૂર્વક પરમાનદપ્રાપ્તિરૂપ મોક્ષ સિદ્ધ થાય છે મોક્ષાર્થે બીજો ઉપાય જ નથી" "ભક્તિ" શબ્દમાં ભજ્ ધાતુ છે, તેનો અર્થ સેવા અથવા પરિચર્યા જ થાય છે, તેથી ઉપનિષદ્ના વચન ભક્તિ સૂત્રકારનાં વચન, નારદના વચન અને ધાતુપાઠ એ સર્વનો આશય હૃદયમા રાખીને પરમનિપુણ શ્રીમદાચાર્યજી સેવાનુ લક્ષણ સિદ્ધાતમુક્તાવલીમા આપે છે કે "પ્રભુમા ચિત્ત પ્રવણ થઈ જાય (પોરવાઈ જાય) એનુ નામ "સેવા" એ સેવા આતર વા વિશેષ સાધન છે, તેથી શ્રીમદાચાર્યજી

---

१. एतद्विरोधि यत्किञ्चित् तत्तु क्षिप्रं परित्यजेत् ।

२ कृष्णे सर्वात्मके नित्य सर्वथा दीनभावना । अहकारं न कुर्वीत मानापेक्षा च वर्जयेत् ।

३ सर्वदा सद्गुणालापं नामोच्चारणमेव वा । सभायामपि कुर्वीत निर्भयो निःस्पृहस्तत ।

४. भक्तिरस्य भजन तदिहामुत्रोपाधिनैराश्येनैवामुष्मिन्मनः कल्पनमेतदेव नैष्कर्म्यमिति ।

५ सा परानुरक्तिरीश्वरे ।

६ माहात्म्यज्ञानपूर्वस्तु सुदृढ सर्वतोधिक । स्नेहो भक्तिरिति प्रोक्तस्तया मुक्तिर्न चान्यथा ।

● "चेतसस्तत्प्रवण सेवा ।

આજ્ઞા કરે છે કે " યથાશક્યનુસાર નિષ્કામતાથી અચ્છિન્ન નિરવકાશ નિરંતર સેવાથી જ શ્રીહરિનો સાક્ષાત્કાર **સર્વને** થઈ શકે છે હરિનો સાક્ષાત્કાર બીજા કોઇ પણ પ્રકારે થઈ શકતો જ નથી" આ આતર વિશેષ કર્તવ્ય કરતી વખતે પણ સામાન્ય બાહ્ય કર્તવ્યની વિસ્મૃતિ ન થવી જોઇએ, તેથી આતર વિશેષ સાધનનો ઉપદેશ કરતા પણ શ્રીમદાચાર્યજી બાહ્ય સામાન્ય સાધનનો સિંહાવલોકનન્યાયે ઉપદેશ કરે છે કે " પ્રાણિમાત્ર તરફ ઇશ્વરે પ્રકટ કરેલા પદાર્થમાત્ર તરફ દયાથી, યથાલાભ યથાદેશ યદૃચ્છાથી જે કાઇ પ્રાપ્ત થઈ જાય તેમા સતોષ રાખવાથી, સર્વ ઇન્દ્રિયને પ્રભુ સમીપ લાવીને વિષયોનુ ઉપશમન કરવાથી, અવિદ્યાને અર્દન કરનાર જનાર્દન શ્રીમત્પ્રભુચરણ સત્વર પ્રસન્ન થાયછે સેવાનો આગ્રહ રાખવો, પરંતુ સેવા કરતા પણ બાહ્ય સામાન્ય કર્તવ્યની વિસ્મૃતિ ન જ કરવી જોઇએ આપણા સપ્રદાયમા જે ચિત્તપ્રવણરૂપ સેવા નિરૂપણ કરી તે સિદ્ધ થવાને સિદ્ધાન્તમુક્તાવલીગ્રથમા કહ્યુ છે કે, " ચિત્તપ્રવણરૂપ સેવા સિદ્ધ કરવાને "તનુજ" એટલે શરીરવડે અને "વિત્તજ" એટલે " દ્રવ્ય વડે" સેવા કરવી" તનુજ સેવાથી અહતા નિવૃત્ત થઈ જાય છે, નિરંતર ભગવદ્વિનિયોગમા જ શરીર આવે તો શરીરાદિની અહતા વિરામ પામ્યા વિના ન રહે. વિત્તજ સેવાથી મમતા નિવૃત્ત થઈ જાય છે સર્વ મમતાનુ મૂલ વિત્ત છે, અને વિત્તનો વિનિયોગ જો પ્રભુસેવામા જ થાય તો વિત્તથી ઉત્પન્ન થતી મમતા શમી જાય છે તનુજ સેવાથી અહતાનો અને વિત્તજ સેવાથી મમતાનો નાશ થયો, એટલે અહતામમતાત્મક સંસારનાં દુ:ખમાત્ર નિવૃત્ત થઈ જાય છે, અર્થાત્ આપણા સંપ્રદાયના શુદ્ધાદ્વૈતીય બ્રહ્મવાદીને શુદ્ધ અખંડ અદ્વૈત જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવાથી જેમ અહંતામમતાત્મક સંસાર રહેતો નથી, તેમ જ સેવાનો આદર કરનાર ભક્તને પણ તનુજ વિત્તજ સેવાથી પરમ માનસી-સેવારૂપ ફલ પ્રાપ્ત કરતા પહેલા મધ્યમા અવાતર ફલ તરીકે અહતામમતાત્મક સંસારના દુ:ખ નિવૃત્ત થઈ જવાથી બ્રહ્મવાદનુ ફલ સિદ્ધ થઈ જાય છે બીજા પ્રકારથી કહેતાં, તનુજ સેવાથી પ્રેમ પ્રકટ થાય છે, અને પ્રભુમા સ્નેહ પ્રકટ થવાથી સાસારિક અનુરાગ વિનાશ પામી જાય છે, વિત્તજ સેવાથી પ્રભુમા પ્રેમથી પણ અધિક આસક્તિ પ્રકટ થાય છે, પ્રભુમા આસક્તિ સિદ્ધ થતા જ ગૃહમા અરુચિ થઈ જાય છે, અને ગૃહમા અનાત્મત્વ ભાસવા માડે છે. તનુજ સેવાથી બ્રહ્મવિદ્યાનુ ફલ શુદ્ધ અખંડ અદ્વૈત જ્ઞાન પ્રાપ્ત થાય છે અને વિત્તજ સેવાથી વૈરાગ્ય સિદ્ધ થાય છે, આ પ્રકારે તનુજવિત્તજ સેવાથી પ્રેમ અને આસક્તિથી જ જ્ઞાનવૈરાગ્યરૂપ અવાતર ફલ પણ સિદ્ધ થઈ જાય છે, એટલે ભક્તિમાર્ગસ્થને જ્ઞાનવૈરાગ્યાર્થ પણ ભક્તિ વિના અન્ય પરિશ્રમ કરવો પડતો નથી જ્ઞાનવૈરાગ્ય પૂર્વક સંસારનિવૃત્તિરૂપ ફલ ભક્તને પ્રાપ્ત થાય છે તે તો માત્ર અવાતર વા મધ્ય ફલ છે, ઉત્તમ ફલ તો માનસીસેવાત્મક વ્યસન છે અર્થાત્ તનુજવિત્તજ સેવા કરનાર ભક્ત જ્ઞાનવૈરાગ્યદ્વારા સંસાર-નિવૃત્તિને જ પરમ પુરુષાર્થ માનતો નથી, પરતુ સંસારનિવૃત્તિપૂર્વક પરમાનદપ્રાપ્તિને જ સર્વોત્કૃષ્ટ પુરુષાર્થ માને છે, સંસારનિવૃત્તિરૂપ મધ્યમ ફલ પ્રાપ્ત કરીને વિરામ ન પામતા અતિમ માનસી સેવારૂપ વ્યસન અવસ્થા પ્રાપ્ત કરે છે નિરોધાત્મક માનસીસેવારૂપ વ્યસન સેવાની પરા કાષ્ઠા છે અર્થાત્ભાવ [૪] ઉપરાંત સેવા જ નથી, તેથી શ્રીમદ્વલ્લભાધીશ્વર મુક્તિબુદ્ધિનીગ્રથમા આજ્ઞા કરે છે કે " સ્નેહથી (પ્રેમથી) લૌકિક અનુરાગ વિનાશ પામે છે, અને આસક્તિથી ગૃહમા અરુચિ થાય છે, ગૃહસબંધી સર્વ પદાર્થ પ્રતિબધક અને અનાત્મ લાગે છે" આ પ્રકારે પ્રેમ અને આસક્તિ વડે ભક્તિવૃદ્ધિનો પ્રકાર નિરૂપણ કરીને સમાપ્તિમા તૃતીય વ્યસન અવસ્થાનુ પ્રતિપાદન

---

૧ અચ્છિન્નસેવનાદ્યેન નિષ્કામત્વાદ્યન્વયોગત. । દ્રષ્ટુ શક્યો હરિ સર્વૈર્નાન્યથા તુ કથચ્ચન ।

૨ દયયા સર્વભૂતેષુ સતુષ્ટ્યા યેનકેનચિત્ સર્વેન્દ્રિયોપશાન્ત્યા ચ તુષ્ટ્યસ્યાશુ જનાર્દન ।

૩ તસ્સિદ્ધ્યર્થં તનુવિત્તજા । તત સંસારદુ:ખસ્ય નિવૃત્તિર્જ્ઞાનબોધનમ્ ।

૪ સ્નેહાદ્રાગવિનાશ સ્યાદાસક્તત્વા સ્યાદ્ગૃહારુચિ' । ગૃહસ્યાના ધિકસ્વમનાત્મત્વશ્ચ ભાસતે ।

કરતા આજ્ઞા કરે છે કે "જ્યારે [1]સકલ શ્રીકૃષ્ણમાં વ્યસન સિદ્ધ થાય છે ત્યારે જ ભક્ત કૃતાર્થ કહેવાય છે." વ્યસન થયા પછી પતનનુ ભય નથી, એટલે કૃતકૃત્યતા સિદ્ધ થાય છે

ફલ

બંધુવો, આંતર વા વિશેષ કર્તવ્ય તરીકે આપણે સર્વેએ તનુજાવિત્તજા સેવા કરીને માનસી સેવારૂપ વ્યસન અવસ્થા પ્રાપ્ત કરીને સાક્ષાત્ ભગવલીલાનુભવ કરવાનો છે. લૌકિકનો સબંધ કરવાથી લૌકિક કર્તવ્ય પ્રાપ્ત થાય છે. વૈદનો સબંધ કરવાથી વૈદિક કર્તવ્ય પ્રાપ્ત થાય છે, તે જ પ્રકારે ભગવત્સબંધ થવાથી ભક્તને ભગવદ્ધર્મ-રૂપ પરમ કર્તવ્ય પ્રાપ્ત થાયછે. બ્રહ્મસબંધ થયા પછી કર્તવ્ય બંધ થતા નથી, પણ કર્તવ્યની ક્રિયા બદલાઈ જાય છે પ્રથમ લૌકિક વૈદિક ધર્મ કર્તવ્ય હતો, પણ હવે ભગવદ્ધર્મ ભગવત્સેવા કર્તવ્ય થઈ અત કરણપ્રબોધનામના ગ્રંથમા શ્રીમદાચાર્યજીએ આજ્ઞા કરી છે કે "જીવ પ્રથમ બ્રહ્મસબંધ પહેલા સર્વદા દુષ્ટ હોવાથી ચાંડાલસદૃશ હતો, તેમા પણ સાધનસંપાદન કરવાનુ સામર્થ્ય ન હોવાથી, નિર્બલ હોવાથી, જીવ ચાંડાલીરૂપ હતો એવા સર્વથા દુષ્ટ નિર્બલ જીવ ઉપર પરમ કૃપા કરીને, જેમ કોઇ રાજા સ્વેચ્છામાત્રથી ચાંડાલીને વરે તેમ પ્રભુ જીવનો વરણાત્મક અંગીકાર કરે છે", અંગીકાર પછી ચાંડાલી "રાણી"પદ પ્રાપ્ત કરે છે તેમ જીવ "ભગવદીય પદ પ્રાપ્ત કરે છે, ચાંડાલી "રાણી"પદ પ્રાપ્ત કરે ત્યાર પછી રાજાના જ વિનિયોગમા આવી શકે છે, રાજા વિના ઇતર ક્ષુદ્ર જીવના વિનિયોગમા પૂર્વવત્ આવી શકતી નથી, તે જ પ્રકારે બ્રહ્મસબંધદ્વારા ભગવાને અંગીકાર કરેલા જીવનો વિનિયોગ સર્વાંશે પ્રભુમા જ થવો જોઇએ પ્રભુ વિના અન્યત્ર તેનો વિનિયોગ થવો યોગ્ય નથી, ભગવદીયનો વિનિયોગ ભગવાન્ વિના અન્યત્ર થાય તો જેમ રાણી પણ વ્યભિચારિણી કહેવાય, રાણીના પાતિવ્રત્યનો ભંગ થાય, તેમ જ ભગવદીયના પણ પાતિવ્રત્યનો ભંગ થાય. અર્થાત્ "રાણી"પદ પ્રાપ્ત કર્યા પછી પણ ચાંડાલીવૃત્તિ જ ચાલુ રહે તો "રાણી" થવાનુ ફલ પ્રાપ્ત થતુ નથી,. તેમ જ બ્રહ્મસબંધ થયા પછી પણ ભગવદ્ધર્મ ન કરતા પૂર્વવત્ પ્રાકૃત ક્રિયાઓ જ કરવામા આવે તો પ્રભુવરીતરણરૂપ ફલ તેને પ્રાપ્ત ન થવાથી બ્રહ્મસબંધ નિરર્થકવત્ થાય છે ભગવદ્ધર્મ ન કરવામા આવે ત્યારે જીવનુ કલ્યાણ કરવાને જ પ્રભુ અપમાન કરે તો તે અપમાન નથી પણ હિત જ છે એવો નિશ્ચય રાખીને પૂર્વ દુષ્ટ વૃત્તિનો સત્વર ત્યાગ કરીને ભગવદ્યોગ્ય સેવા કરવાને જ તત્પર થવુ જોઇએ ગજા તો માત્ર લૌકિક છે, અને રાજા વશ થાય તોએ માત્ર લૌકિક જ ફલ આપી શકે, પરતુ પ્રભુ તો અલૌકિક છે, અને ભગવદુપદિષ્ટ માર્ગનુ સરક્ષણ કરીને ભગવદધીન વૃત્તિ રાખવામા આવે તો ભગવાન્ અલૌકિક હોવાથી ભક્તિવશ ભક્તિથી અધીન, થઈ જતા અલૌકિક સ્વરૂપાનન્દનુ દાન કરે છે લૌકિક વૈદિક ફલ પ્રાપ્ત કરવાને ભક્તિમાર્ગનો આશ્રય કર્યો નથી, પણ સ્વરૂપાનન્દનો લાભ લેવાને જ ભક્તિમાર્ગમા પ્રવેશ કર્યો છે એનુ નિરતર સ્મરણ રહેવુ જોઇએ એ જ ગ્રંથમા શ્રીમદાચાર્યજી વ્યાવહારિક દૃષ્ટાન્ત ઘટાવે છે કે જેમ કોઇ કન્યા મોટી થઈ જાય, અને માતાપિતા સ્નેહવિવશ થઈને, મોટી થઈ ગયેલી કન્યાને સાસરે ન મોકલાવે તો વર અપ્રસન્ન થઈ જાય છે અને કન્યાનુ સર્વસ્વ બગડે છે, તે જ પ્રકારે લૌકિક વિષયોથી મુક્ત થઇને દેહ પ્રાણ ઇંદ્રિય અને અત કરણને સમય આવે પણ જો પ્રભુના વિનિયોગમા સમર્પણ કરવામા આવે નહિ તો દેહપ્રાણાદિનુ સર્વસ્વ બગડે છે, તેથી પ્રૌઢ દુહિતા પાસે વરની પત્રિકાઓ કરાવવી એ જ, જેમ કન્યાના માતાપિતાનો પરમ ધર્મ છે, તે જ પ્રકારે દેહપ્રાણાદિ વડે સદાસર્વદા ભગવત્પત્રિકાઓ કરાવવી એ જ આત્માનો પરમ ધર્મ છે આ સર્વ નિગૂઢ સિદ્ધાતનુ ચતુશ્લોકીમા

---

[1] यदा स्याद्व्यसन कृष्णे कृतार्थ स्यात् तदैव हि ।

[2] चाण्डालीचेद्राजपत्नी यथा राज्ञा च मानिता । कदाचिदपमाने वा मूलत का क्षतिर्भवेत् ।

[3] प्रौढापि दुहिता यद्वत् स्नेहान्न प्रेष्यते वरे । तथा देहे न कर्तव्य वरस्तुष्यति नान्यथा ।

પણ સક્ષેપથી નિરૂપણ કરતા શ્રીમદાચાર્યજી આજ્ઞા કરે છે કે, [૧] "નિરતર સર્વભાવ થકે વ્રજના અધિપતિ શ્રીકૃષ્ણની જ ભક્તિ કરવી યોગ્ય છે. "શ્રીકૃષ્ણના નિજ અગીકૃત વૈષ્ણવોનો એ જ ધર્મ છે. એ વિના બીજો ધર્મ કોઇ પણ દેશમાં કોઇ પણ કાલમા હોઈ શકે જ નહિ."

વૈષ્ણવો, ભગવત્સેવા પણ બે પ્રકારની છે, એક રૂપસેવા અને બીજી નામસેવા. રૂપસેવા તમે યથાશક્તિ કરો છો, પણ ગ્રંથાવગાહનરૂપ ગુણગાનરૂપ નામસેવામા તમે અત્યત શિથિલ થઈ ગયા છો સેવા અને કથા ઉભયે કર્તવ્ય છે. શ્રીકૃષ્ણદાસજીનો પ્રસગ વાચનારને સ્મૃતિ હશે કે સેવા અને કથા બેમાથી એક જ કરવામાં આવે તો માત્ર અર્ધી સેવા જ કહેવાયછે. અદ્યાપિ પર્યત તો અર્ધી જ સેવા કરો છો, પણ હવેથી ગ્રંથાવગાહનરૂપ ગુણગાનરૂપ નામસેવા પણ તમે કરો અને તમારી સેવા માત્ર અર્ધી ન રહે, પરતુ પરિપૂર્ણ થાય, તમને પરિપૂર્ણ સેવાનુ સ્વરૂપાનદરૂપ ફલ પ્રાપ્ત થાય, એવા અલૌકિક ઉદ્દેશથી જ શ્રીમદ્વૈષ્ણવપરિષદ્ અત્ર ભરીને રા. રા ચીમનલાલભાઈ આદિ આગ્રહી વૈષ્ણવોએ અત્ર શ્રીવલ્લભીય સભા સ્થાપીને જીર્ણોદ્ધારરૂપ પરમ ગંભીર પ્રયત્ન આદર્યો છે. શ્રીગુસાઇજીએ ભક્તિમાર્ગ આપણા ગુર્જર દેશમા જ વિશેષ પ્રકટ કર્યો છે, અને ગુર્જર દેશમા પણ વડોદરામા જેવો ભક્તિભાવ આજે પણ દૃશ્યમાન થાય છે તેવો બીજા ગામમા ભાગ્યે જ દૃશ્યમાન થાય છે, તેથી પ્રભુએ કૃપા કરીને તમને જે ભક્તિનુ દાન કર્યુ છે તે ભક્તિ માત્ર અર્ધી જ ન રહે પરતુ પરિપૂર્ણ થાય એમ આકાંક્ષા રાખીને શ્રીવલ્લભીય સભાને સપૂર્ણ ઉત્તેજન આપવુ એ આપ સર્વનુ પરમ કર્તવ્ય છે

સ્વમાર્ગીય ગ્રંથોની સેવના

ગભીર પ્રયત્નની ગભીરતાથી ચકિત ન થતા પ્રભુ ઉપર જ વિશ્વાસ રાખવો, કારણ કે એ પ્રયત્નનો આરભ કરાવનાર પણ પ્રભુ જ છે, અને પ્રભુના આશ્રય વિના એ પ્રયત્ન સાગોપાગ ફલીભૂત થઈ શકે જ નહિ પ્રભુમા પૂર્ણ વિશ્વાસ રાખીને જે જે કાર્ય આદરવામા આવે છે તેમા પ્રભુ યુક્ત સહાય કરે છે શ્રીમદાચાર્યજી જ આજ્ઞા કરે છે કે "અશક્ય" કાર્ય આવે તો ત્યા હિમ્મત હારવી નહિ પરતુ ધૈર્ય રાખવુ," કારણ કે આપણુ સામર્થ્ય નથી તો પણ આપણા હરિનુ તો છે જ, અને શ્રીહરિના પ્રતાપબલથી સર્વ સિદ્ધ જ થશે. કોઈ પણ પ્રકારે મોહ પામવાનુ કારણ નથી, પ્રભુ ઉપર સપૂર્ણ વિશ્વાસ રાખવો, તેથી અશક્ય સુશક્ય થઈ જાય છે, અસાધન સસાધન થઈ જાય છે [૩]

ઉપસહાર

---

૧ સર્વદા સર્વભાવેન ભજનીયો વ્રજાધિપ. । સ્વસ્યાયમેવ ધર્મો હિ નાન્ય કવાપિ કદાચન ।

૨ અશક્યે હરિરેવાસ્તિ મોહમ્મા ગા: ક્વચન ।

૩ આ આપણની સભામિ પથા પછી રા ખ નાણાવટીએ સ્વમાર્ગીય-સસ્કૃત ગ્રથો-સભા માતર પ્રસિદ્ધ કરવાની આવશ્યકતા ઉપર શ્રોતૃસમૂહનુ લક્ષ આકર્ષ્યું હતું, અને રા ચીમનલાલ ભાઈએ આપણા સામદાયિક ગ્રંથોની મહત્તાનુ સ્પષ્ટીકરણ કરીને વક્તા અને પ્રભુનો ઉપકાર માન્યો હતો

(આર્યપ્રકાશ ઉપરથી)

ગોસ્વામી શ્રી દેવકીનંદનાચાર્યજી તથા પંડિત ગટ્ટુલાલાજી સાથે થયેલા ધર્મસંબંધી પ્રશ્નોત્તરો.*

શેઠ રતનશી મુલજીએ તા. ૬ ઠી નવેમ્બર અને રવીવારને દિને સાજના પાંચ વાગતે ગોસ્વામી શ્રી દેવકીનંદનાચાર્યજીની પોતાના ઘરમા પધરામણી કીધી હતી, તે પ્રસંગે કેટલાક સારા સારા સભ્ય મહાશ્યો, પોતાના જાતી બાંધવ સાથે અત્રેના જાણીતા પંડિતો, પંડિત ગટ્ટુલાલાજી, મહામહોપાધ્યાય રાજારામ શાસ્ત્રી, કાશીનાથ શાસ્ત્રી, પ્રભાકર ભટ્ટ વૈદિક, શાસ્ત્રી રણછોડજી ઓધવજી વગેરે કેટલાક શાસ્ત્રીઓ, પુરાણીઓ અને સંસ્કૃત વિદ્યાર્થીઓનો સારો મેલાવડો થયો હતો

એ સભાની શરૂઆતમાં પંડિત ગટ્ટુલાલાજીએ કહ્યું કે કોઇને કંઇ ધર્મ સંબંધી પ્રશ્ન કરવા હોય તો મુજને કરવો હું મારી મતિ પ્રમાણે તેનો પ્રત્યુત્તર આપીશ

મી૦ મેવકલાલ કરશનદાસ—ધર્મસંબંધી બાબતોનો વિચાર કરવાને હાલ ઘણી જરૂરીયાત માલમ પડી છે, કેમકે ધીરે ધીરે આપણામાંથી પરંપરા છટી ધાર્મિક કેળવણી નાશ પામતી જતી આ દશાએ આવી પોહોંચી છે તેમા વિશેષ કરીને ગૃહસ્થોમા તો ધર્મકેળવણી નાબુદ થઇ ગઇ છે એમ કહેવામા કંઈ અડચણ નથી તેમ આપણી માબાપની સરકારની રાજ્યનિતી આ દેશમા જુદા જુદા ધર્મ માનનારી જુદી જુદી કોમો હોવાથી ધર્મ બાબતથી અલગ રહી છે, અને ઉધરતા જુવાનિયાઓને પશ્ચિમાંત પદાર્થ વિદ્યા વગેરેની કેળવણીથી તેઓના મનપર જુદી જ અસર થાય છે અને જે જે ધાર્મિક સવાલો તેઓના મનમા ઉપસ્થિત થાય છે તેનુ નિરાકરણ કરવાનું જોઇતુ સાધન આપણામાં નથી તેથી તેઓની ધર્મસંબંધી લાગણી કંઈક વિચિત્રરૂપ પકડે છે તેથી તેઓને ધર્મરહસ્ય સમજાવવાનુ કંઈ સાધન ઉભુ કરવાની જેમ જરૂરીયાત થઈ છે તેમ અજ્ઞાન લોકો ઉપરેશ જળમાં કૂસાઇ આપણો અપઢિત વર્ગ ધર્મના નામથી કયાંનો કયાં દોરાઇ જાય છે તેનો પણ વિચાર કરવાની જરૂર ઉત્પન્ન થઇ છે એ ખોટ પુરી પાડવી તે આપણા વિદ્વાન વર્ગનુ કામ છે અને વિદ્વાન વર્ગને જોઇતો આશ્રય આપી સપાટ્યકતા કરવા તે શ્રીમંત ગૃહસ્થોનુ કાર્ય છે તે કાર્યનો હાલ ધીરે ધીરે પ્રારંભ થયો છે તો મારી ખાતરી છે કે તે આગળ વધી આપણામા જે ધર્મની હાનિ થવા લાગી છે તેનો અટકાવ થશે.

પંડિત ગટ્ટુલાલાજી—આ વિચારો મને બહુ વાજબી લાગે છે જ્યારે ગૃહસ્થો પોતાનું કર્તવ્ય સમજી પંડિતોને આશ્રય આપી શાળાઓ સ્થાપી ધર્મની પ્રવૃતી કરશે ત્યારેજ લોકો ખરા ધર્મનું રહસ્ય સમજી તે પ્રમાણે આચરણ કરશે હાલ મારાથી જેટલુ બને છે તેટલુ હું કરૂ છું. લોકો મારે માટે ગમે તેમ લખે છે તેની દરકાર ન કરતા ધર્મોન્નતિનું કામ કરૂ છું અને જ્યારે ગૃહસ્થો તૈયાર થશે ત્યારે તે પોતાની મેળે મોટા પાયાપર ચલાવશે એ કાર્ય મુખ્ય કરી ગૃહસ્થોનું છે

તેટલે એક મૈથીલ શાસ્ત્રીએ આગળ આવી સંસ્કૃતમા વ્યાકરણસંબંધી એક પ્રશ્ન કીધો તેને પંડિત ગટ્ટુલાલાજીએ પ્રત્યુત્તર આપ્યો અને વિષ્ણુશાસ્ત્રી તેપર અનુવાદ કરતા હતા તેટલે શેઠ જીવણદાસ મુળજી બોલ્યા કે "લગભગ અર્ધો કલાક થયો સંસ્કૃતમા જે તકરાર ચાલે છે તેમા અમે ગૃહસ્થો કંઈ સમજતા નથી તેટલા માટે ધર્મસંબંધી કંઇ ચર્ચો ભાષામા થાય જેથી આપણા

---

* કચ્છ માંડવીના કરસનદાસ દામોદરદાસ તરફથી આ પ્રશ્નોત્તરો મથા પચ્ચીસથી છપાયલા પત્રમાંથી કાઢવામા આવ્યા છે. તે આખા લેખમાં લેવા યોગ્ય હોવાથી અત્રે યથાસ્થિત આપવામા આવે છે.

બધાના સમજવામા આવે તો બહુ સારૂં પડિત ગટ્ટુલાલાજીએ અને ગોસ્વામીજીએ સમતિ આપી એટલે શાસ્ત્રીય વિચાર બધ થયો અને મી૦ રતનશી મુળજીએ એક પત્ર વાચી સભળાવ્યો.

સજ્જન ગૃહસ્થો—ગૃહસ્થોનો ધર્મ પોતાના આચાર્યો અથવા ગુરૂઓને પોતાના ઘરમા બોલાવી, પધરામણી કરી રૂપીયા આપવામાજ બધો ધર્મ આવી જતો નથી. પરતુ આપણુ કર્ત્તવ્ય તો આચાર્યોને તેડી તેમના મુખથી ધર્મસબધી ઉપદેશ સાંભળી પોતાને જે જે શકાઓ થાય તેનું સમાધાન કરાવી લઇ ધર્મસબધી પોતાના જ્ઞાનનો વધારો કરવાનુ છે અને તે પ્રમાણે આજે મારાથી બન્યાથી મને ઘણો હર્ષ થાય છે અને આશા રાખું છુ કે મારા બીજા ભાઇઓ પણ આચાર્યોની પધરામણીઓનો આવો ઉત્તમ લાભ લેશે અને આચાર્યો પણ તેથી ધર્મ લાભ થવાનો સભવ સમજી બેઠકોને ઉપદેશ કરી ધર્મો પ્રમાણે વર્તવાને કહેશે મારે આજે કેટલાક ધર્મસબધી પ્રશ્નો પુછવાના છે અને હું આશા રાખુ છુ કે ગોસ્વામી મહારાજ દેવકીનદનાચાર્યજી મને તે બાબત બોધ કરશે

આ પ્રશ્નો અસ્પષ્ટ ભાષામા હોવાથી કેટલાક ગૃહસ્થે અને મી૦ રતનશીએ મી૦ મેવકલાલ દરશનદાસને એ પ્રશ્નો સરલ અને મુલકી ભાષામા મકવા કહ્યુ તેથી તેઓએ એ પ્રશ્નો મૂકી તેના ઉત્તરે પણ સરલ ભાષામા નીચે પ્રમાણે સભળાવ્યા હતા.

મી૦ મેવકલાલ—કેટલાક ગૃહસ્થો, સ્ત્રીઓ, વગેરે જે છ પ્રકારની મરજાદ લે છે તેમાં જુદા જુદા ભેદો હોવાથી ઘણી ઘણીયાણી, મા દીકરો, ભાઇ બેન, સગાંવહાલા હોય તોપણ જાણે એક બીજાથી અભડાઇ જતા હોય તેમ એક બીજાના હાથનુ ખાતાં નથી, અને જેમ નીચવર્ણને ઊચેથી નાખે છે તેમ પીરસે છે અને એક બીજાનો સ્પર્શ પણ અભડાઇ જવાની ધાસ્તીથી કરતા નથી એવો જે હાલ રીવાજ ચાલે છે તેમા કાઈ શાસ્ત્ર સંમતિ છે?

શ્રીગોસ્વામીજી દેવકીનદનાચાર્યજી—પરણેલા સ્ત્રી પુરૂષો એક બીજાના સ્પર્શથી આવી રીતે જો અભડાય તો પછી તેમના સસારનો બાકી બધો વ્યવહાર ચાલે જ કેમ? ગર્ભાધાનજ કેમ થાય? **ધર્મ શાસ્ત્રમાં આવી મર્યાદ છેજ નહીં.** આ રીત આધનિક હોવાથી તેના ઉપર તેઓની જેમ સમતિ નથી તેમ કટાક્ષ પણ નથી. પરંતુ શાસ્ત્રમા એમ મરજાદ લેવાની આજ્ઞા નથી તેથી તે લેવાની કઇ જરૂરીયાત હોય એમ નથી.

પડીત ગટ્ટૂલાલાજી—વર્ણાશ્રમના ધર્મપ્રમાણે ચાલવુ જોઇએ આચાર એજ પરમ ધર્મ છે

મી૦ મેવકલાલ—વર્ણાશ્રમના ધર્મસબધી કઈ પ્રશ્ન નથી. છ જાતની મરજાદ એ વર્ણાશ્રમના ધર્માતર્ગત છે કે નહીં, એ ગૃહસ્થોનો પ્રશ્ન છે

મી૦ મેવકલાલ—બ્રહ્મસબધની જે દિક્ષા હાલ આપવામા આવે છે તેને કાઇ શાસ્ત્રાધાર છે? કેટલાક એક વર્ષના બાળકને પણ બ્રહ્મસબધ કરાવે છે. પરણેલી સ્ત્રીને પણ દિક્ષા આપે છે, તેનું શુ પ્રમાણ? તે કૃપા કરી ગ્રહસ્થોને સમજાવો.

શ્રીગોસ્વામીજી—બાળકને બ્રહ્મસમર્પણ આપવાની હમણાની રીતિ તદન શાસ્ત્ર વિરૂદ્ધ છે કારણ કે બાર વર્ષની ઉમરે જનોઈ આપ્યા આગમજ વયમા જે કઈ તેવી ધર્મના નામથી ક્રિયા કરવી તે મિથ્યા છે. તેમજ **પતિની આજ્ઞા વગર સ્ત્રીએ** લીધેલુ બ્રહ્મસમર્પણ પણ મિથ્યા સમજવુ. પતિની આજ્ઞા વગર સ્ત્રીએ કરેલા સઘળા વર્તાદિક કર્મો તેણીને સ્વર્ગને બદલે નરકે લઈ જનારા છે સ્ત્રીએ પતાની સેવા કરવી એજ મુખ્ય ધર્મ છે અને પતિની આજ્ઞા પાળવી.

સ્ત્રીએ પરમેશ્વરવત્ પતિની સેવા કરવી **બ્રહ્મસમર્પણ** એ તો એક રૂઢી છે,—એ કંઈ **શાસ્ત્રાધાર નથી**[1].

પંડિત ગટ્ટુલાલજી—ધર્મ શાસ્ત્રમા જે વર્ણાશ્રમના ધર્મો છે તે ધર્મોને પ્રતિપાદન કરવા જોઇએ તે ઉપરાંત બ્રહ્મસબંધ સ્ત્રીએ પતિની આજ્ઞા વગર લેવુ યોગ્ય નથી. પણ તેમ નાના બાળકને પણ આપવુ ન જોઇએ. **બ્રહ્મસબંધ એક આધુનિક રીત હોવાથી તેને શાસ્ત્રની સંમતિ નથી** તેને રૂઢી સમજવી જોઇએ[2]

મી૦ સેવકલાલ—હાલ ઉચ્છિષ્ટ એ૬ ઓગાળ ધર્મના નામથી આપવામા આવે છે, તે શું શાસ્ત્રાધારે છે ?

શ્રીગોસ્વામીજી—ઉચ્છિષ્ટ રાંધેલુ અન્ન માણસને ખાવા આપવુ નહી એટલુજ નહીં પણ ગાયને પણ ખવડાવવુ નહીં **આપણા શાસ્ત્રમાં તેની ખુલ્લી મના કરેલી છે** મનુસ્મૃતિમા ઉચ્છિષ્ટ અન્નને પૃથ્વિમા દાટવાનુ કહ્યુ છે એનુ એ કારણ છે કે એ૬ અન્ન જમવાથી જમનારની બુદ્ધિ બગડે છે અને તેનુ આયુષ્ય અને પરાક્રમ નષ્ટ થાય છે

મી૦ સેવકલાલ—મહારાજની વિધવા સ્ત્રી સમ કરતી વખતે હસ્તમલાપ કરાવવા જાય છે અને તે પોતાનો હક સમજે છે તે વાજબી છે અને તેમ કરવાને કંઇ શાસ્ત્રાધાર છે ?

શ્રીગોસ્વામીજી—**હસ્તમેલાપ કરાવવો એ માત-પિતાનુ કામ છે અને પ્રોક્ષિતે ક્રિયા કરાવવી એમાં ગુરૂની પણ કઈ જરૂર નથી, તો વિધવાથી તો આવા માંગલિક કાર્યના લાયજ કેમ ધારાય ?** એમ કામ કરવુ શાસ્ત્રવિરૂદ્ધ છે ભલે, કોઈ પોતાના ગુરુ બનવી આવા શુભ પ્રસંગે બોલાવે અને તેનો સત્કાર કરે બાકી તેઓની કઈ જરૂર નથી. પ્રભુ વિધવાઓનુ તો એવા માંગલીક પ્રસંગોમા કામ જ નહી

મી૦ સેવકલાલ—મહારાજ, વેદ લખ્યા પુસ્તકાને કહેવા વેદનો પઠન શ્રવણનો અધિકાર કોને છે ? અને વેદમા હિંસા છે કે નહીં

પંડિત ગટ્ટુલાલજી—વેદની બધી શાખાઓ અને બ્રાહ્મણ મળીને વેદ કહેવાય જેમ ભાગવતના બારસ્કંધ છે તે મળીને શ્રીમદ્ભાગવત કહેવાય છે તે પ્રમાણે વેદ પણ શાખાઓ મળીને માનવો

મી૦ સેવકલાલ—એ લક્ષણ વેદમા ઘટતુ નથી જેમ શ્રીમદ્ભાગવતના બાર ભાગ છે તેમા વિષયથી કરી વિભાગ કરીલા છે, અને તેમા જુદો જુદો વિષય છે. અને વેદની જુદી જુદી શાખાઓમા કેટલાક એના એજ મંત્રો આવે છે અને કેટલાક મંત્રામા વધ ઘટ કરેલી હોય છે અને કેટલાક મંત્રો નવીન પણ હોય છે તેમ જેનુ મૂળ જ નહીં તેની શાખા કેમ થાય ? (નષ્टે मूले कुतो शाखा) પતંજલ મહાભાષ્યમા ચાર વેદ કહેલા છે—

---

૧ મહારાજ આદિવરીનન્દનલાલજી જતપ ઉપર વિરાજમાન જ છે, અને જો એ મહારાજશ્રીએ બ્રહ્મસંબંધ અને પુષ્ટિમાર્ગીય મર્યાદા વાસ્તે આ શબ્દોનો ઉચ્ચાર ન જ કર્યો હોય તો બ્રહ્મસંબંધ અને પુષ્ટિમાર્ગીય મર્યાદા વિષે શાસ્ત્રીય પ્રમાણો આપને પોતાની નિર્દોષતા પ્રકટ કરવાનો શ્રમ લેશે એમ આશા રાખીએ છીએ પ્રકાશક

૨ પંડિત ગટ્ટુલાલજીનો દેહાન્ત થયો છે, તથાપિ તેમના અનેક શિષ્યો છે એમ કહેવાય છે જો તેમનો કોઈ પણ શિષ્ય બ્રહ્મસંબંધ અને પુષ્ટિમાર્ગિય મર્યાદા વિષે પંડિત ગટ્ટુલાલજીની કેવી માન્યતા હતી તે સપ્રમાણ સ્પષ્ટ કરશે તો ખરેખર તેણે નિજ વિદ્યાગુરૂની સેવા કરી કહેવાશે પ્રકાશક.

वेदो शब्दात्मा । लौकिकालो वैदिका च । तत्र लौकिकास्तावत् गौरश्व-पुरुषो-हस्तिसिंहभृंगो-ब्राह्मण-हति । वैदिका इत्वपि । श न नो देवीरभिष्टये । इषेत्वोर्जेत्वा । अग्निमीळे पुरोहितम् । अग्न आयाहि वीतये हति ॥

શબ્દ રૂપે દેહવા. સૌકિક અને વૈદિકને. તેમા લૌકિક આ પ્રમાણે—ગૌ। દેવી એ અર્થને વેદનો પહેલો મંત્ર, ઇષેત્વોર્જે એ યજુર્વેદને પહેલો મંત્ર, અગ્નીમીળે પુરોહિતમ્ એ ઋગ્વેદનો પહેલો મંત્ર, અને અગ્ન આયાહી એ સામ વેદના પહેલા મંત્રથી આરંભ થાય છે. પ્રાચીન અર્વાચીન પુસ્તકોમા ઘણે ઠેકાણે એ ચાર વેદ બતાવેલા છે તેમ નિરુક્તમાં પણ છે અને આપ બધીએ આપ્તો પણ વેદ બતાવે છે તો તેથી તે બાબતની ઉત્પત્તિ થાય છે.

પંડીત ગટુલાલ—વેદની ઘણી શાખાઓ નષ્ટ થઇ ગઇ છે તે કંઇ મળતી નથી પતંજલ મહાભાષ્યમા કહ્યું છે કે "चत्वारोवेदा साग, सरहस्याबहुधाभिन्ना एकशतमध्वर्युशाखा । सहस्रवर्त्मा सामवेद एकविंशधा बाहव्य नवधाथर्वणो वेदो के भारेली ઘણી શાખાઓ નષ્ટ થઇ ગઇ છે. અને મંત્ર બ્રાહ્મણ મળીને વેદ કહેવાય છે.

મિ૦ મેવકલાલ—નષ્ટ શાખાઓને જૈમિનીએ ગૌણત્વ આપેલુ છે. એટલે કંઇ અડચણ નથી મળી આવતુ હોવુ જોઇએ અને વૈશેષિક દર્શનના છઠ્ઠા અધ્યાયમા લખેલુ છે કે श्रुति पूर्वा वाक्यकृतिर्वेदे ब्राह्मण मंत्रा सिद्धंयुग लिंगमिति ॥ વેદમાં શ્રુતિને આગે એવી વાક્યરચના છે અને બ્રાહ્મણમાં તેની સંજ્ઞા, સિદ્ધિ યુગ્મ અને લિંગ છે. (આ પ્રમાણે હેતુ એ હતો કે મંત્ર બ્રાહ્મણ મળીને વેદ માનવા જે પંડીતજીએ કહ્યું તે પ્રમાણે જો વૈશેષિક દર્શનના કર્તા કણાદમુની માનતા હોત તો પહેલા સૂત્રમા વેદ શબ્દ ન વાપરતાં મંત્ર શબ્દજ વાપરત કેમકે વેદ તો મંત્ર બ્રાહ્મણ મળીને કહેવાય તો આ ઉપરથી એમ જણાય છે કે કણાદ મુની એ પ્રમાણે ન માનતા માત્ર મૂલ સહિતાને જ વેદ માનતા હોવા જોઇએ)

એણે બોલવાની પદ્ધતિ લગાડી સર્વેએ એટલે ચારે વર્ણોએ મંત્ર ભણવો તેમ કેટલાક મંત્રો બોલવાનો અધિકાર શ્રોતસૂત્રોમા ક્ષત્રિય, વૈશ્ય અને સ્ત્રીઓને પણ આપેલો છે

પાડત ગટુલાલાજી—એમાં એમ યજ્ઞનો પ્રયોગ કહેલો છે તે હું તમને સમજાવું (કરી બોલવા માંડયું)

મિ૦ મેવકલાલ—એનું કંઇ પ્રયોજન નથી શૂદ્રને અધિકાર છે કે નહી તે આપણને જોવાનું છે

પડિત ગટુલાલાજી—એમાં શૂદ્રને અધિકાર નથી તે હું તમને ઘેર આવશો ત્યારે સમજાવીશ આપસ્તંબ શ્રોતસૂત્ર-૧-૧૬-૯ હવિષ્કૃદેહીતિ બ્રાહ્મણસ્ય હવિષ્કૃદાગહીતિ રાજન્યસ્ય હવિષ્કૃદાદ્રવેતિ વૈશ્યસ્ય હવિષ્કૃદા ધાવેતિ શૂદ્રસ્ય। પ્રથમ વા સર્વેષામ્ એ પ્રત્ર પણ એટલેથીજ રહ્યો)

મી૦ મેવકલાલ મહારાજ વેદમાં હિંસા લખી છે કે નહીં ? કેમકે થોડા મહિના ઉપર અહીંઆના નાસ્તીઓ, અને મી૦ જીવનજીવાલા વચ્ચે વેદની બાબત શાસ્ત્રાર્થ થયો હતો. ત્યારે એઓએ એવો વાદ ઉપસ્થિત કર્યો હતો કે વેદમા હિંસાનુ પ્રતિપાદન કરેલુ હોવાથી પણ તે ઈશ્વર પ્રેરિત હોય એમ સંભવતુ નથી

પડિત ગટુલાલાજી—મી૦ જીવનજીવાલા બ્રાહ્મણ કુળમા જન્મેલા હોવાથી તેમને પ્રત્યે મારી એટલી જ વિનતિ છે કે વેદમા હિંસાની બાબત એક વાર પડતી મૂકી પ્રથમ એમણે ચાતુર્માસ્ય કર્મ કરવુ જો�ેઆ મુદ્દા લિખા નથી, અને પછી તેમની વેદમા હિંસાની બાબતની જે બુદ્ધિ થશે, તે આપણે ગ્રહણ કરીશુ.

મી૦ મેવકલાલ—આ બુલાસમા મારા પ્રશ્નના ઉત્તરનો હોય એમ મને લાગતુ નથી મારો પ્રશ્ન એટલોજ છે કે વેદમા હિંસા કરવાનુ કહ્યુ છે કે નહી ? એક મહાત્મા થોડા વર્ષ ઉપર અત્રે પધાર્યા હતા તેમને ધર્મ સબધી કેટલાક પ્રશ્ન પૂછવા હુ ગયો હતો ત્યારે તે મહારાજે જોશથી ઉત્તર આપ્યો હતો કે બાર વર્ષ સુધી પ્રતિદિન મને દડવત્ કરતા જાઓ, તો પછી હુ તમને તમારા પ્રશ્નોનો જવાબ આપીશ, તેવાજ પ્રકારનો મને હમણા ઉત્તર મળેલો લાગે છે

પડિત ગટુલાલાજી—હુ કબૂલ કરુ છઉ કે ધર્મસબધી કેટલાક બાબતોના તેવા ઉડાવનારા જવાબો મને આપવાની ફરજ પડે છે કારણ કે ધર્મ તત્વની સૂક્ષ્મ બાબતો યથાર્થે સમજી શકે તેવી બુદ્ધિ લોકોની જણાતી નથી મારો ખરો અભિપ્રાય તો એવો છે કે ઘણી કાલકારક તથા લાભકારક થઈ પડે એવી થોડી હિંસા વેદમા છે

એક મેમ્બર-પડિત—વેદમે હિંસા નહી હૈ (જોરથી)

ત્યાર બાદ ગૃહસ્થોએ સસારમા કેમ વર્તવુ તે સબધી થોડુક વ્યાખ્યાન ગોસ્વામીજીએ મી૦ રતનશી મુળજીના કહેવાથી કર્યું, અને મહારાજને ભેટ ધરાવવાનો પ્રારભ થયો એ ક્રિયા થઈ રહ્યા પછી મી૦ રતનશી મુળજીએ મહારાજના સ્પષ્ટ વક્તા સ્વભાવની ઘણી સ્તુતિ કરતા કહ્યુ કે "તમારા જેમ જો પડિત ગટુલાલાજી હાલમા જેમ દહીમા અને દૂધમા હાથ રાખે છે તે છોડી દઈ સત્યની તલવાર હાથમા લઈ યથાર્થ કહે તો અમને ધર્મ સબધી મોટો ફાયદો થાય." ત્યારે ગોસ્વામી દેવકીનદનાચાર્યજી બોલ્યા કે "એ તો હિજડો[1] છે મે ઘણી વખતે કહ્યુ કે તમારે વાડાની દરકાર

---

[1] પડિત ગટુલાલાજી માટે મહારાજ શ્રીદેવકીનન્દનજી આવા અસભ્ય શબ્દનો ઉચ્ચાર શિષ્ટ અને અન્યસંપ્રદાયી બ્રાહ્મણોની સભાની વચ્ચોવચ્ચ કરે એમ અમારા માનવામા આવી શકતુ નથી. પ્રકાશક

રાખવી નહીં, ખરેખર કહેવું. અને જો તમને કઈ આશ્રય ન મળે તો હમારા કામ વનમા આવી રહેા તો તમારે। અધર્મો। ખરચ હુ ચલાવીશ। તો પણ એ સમજતો નથી"

પંડિત ગઢુલાલાજી—ભાઈએો મને જે ખરૂ લાગે છે તે કહુ છઉં હુ તો એકવો પડી ગયેા છું સર્વે મને બોધ કરવા આવે છે પણ મારા દુ ખને કોઈ જાણતુ નથી જ્યારે કોઈ બહારનેા વિદ્વાન આવે છે, ત્યારે સ પ્રદાયને બચાવવા મારે મોખરે ચઢવુ પડે છે હાથેથી લખાવી કેટલીકવાર છાપખાના વાળાઓને પૈસા આપીને મારે ચર્ચાપત્રો છપાવવા પડતા હતા, કેમકે હુ જાણતો નહેાતો કે છાપાવાળા તે ફોકટ છાપે છે! આથી થયુ છે શુ કે કોઈ બહારથી આવે તે પણ મને દબાવે, અને વળી આપણા લોકો પણ મને દબાવે. એવી મારી સ્થિતિ થઈ પડીછે. તો પણ એથી હુ કઈ ડરતો નથી મારા ઉપર જે જે દુ ખો પડશે તે હુ સહન કરીશ તેમા કઈ સ શય નથી મને માત્ર માઠુ એટલા જ માટે લાગે છે કે આશ્રય આપવાને તો કોઇને સુઝ પડતું નથી પણ જે આવે છે તે મારા ઉપર ઉતરી પડે છે. એમા હુ કોઇને દોષ આપતો નથી મારા સચીત એવા જ હશે!

ત્યાર બાદ દેવકીનદનાચાર્ય પધારી ગયા અને પડિતજીએ પાછેા પ્રશ્નોનેા વિષય ઉપાડયેા અને બોલ્યા કે દિક્ષા લેવાની શાસ્ત્રમા આજ્ઞા છે કેમકે આપણા કર્મો ચાર પ્રકારના છે. એક વૈદિક, વૈદિક તાન્ત્રિક, તાંત્રિક વૈદિક, અને તાન્ત્રિક તેમાંથી દિક્ષા સિદ્ધ થઈ શકે છે

મી० સેવકલાલ—વેદમા યજ્ઞાદિકોની દિક્ષા કહી છે જે સૂત્રોમા પ્રતિપાદન કરેલી છે બાકી આ તાન્ત્રિક દિક્ષાઓ તો મને નિર્મૂળ લાગે છે, કેમકે એમા મ ત્રો પણ નવીન બનાવેલા છે પ્રાચીન આર્ષ ગ્રંથોમા માત્ર વેદ વાકયનેજ મ ત્રત્વ આપેલુ છે તેથી એવી નવીન દિશાઓ વેદ મૂલક થઈ શકતી નથી.

પંડિત ગઢુલાલાજી—કોઈની કઈ શકા રહી ગઈ હોય તો સુખેથી કરવી

મી० સેવકલાલ—શકા કરવાને પણ યોગ્યતા જોઇએ છે, કેમકે વિષય જાણ્યા વગર શકા થતી નથી અમારી જે શકાઓ છે તે તો આપ જ્યારે મળો છો ત્યારે વિચાર ચાલ્યા જ કરે છે માત્ર આપને અવકાશ બહુ થોડો હોવાથી વિચાર થઈ શકતો નથી.

ત્યાર બાદ બ્રાહ્મણોને દક્ષણા આપી રૂતના સાડાસાત વાગતે સભા વિસર્જન થઈ હતી

ભટ્ટ બલભદ્રશર્માએ પ્રકટ કરેલા 'પુષ્ટિમાર્ગીય આચાર્યપરંપરા' નામક પુસ્તકની સમીક્ષા.

(લેખક — એતન્માર્ગીય પંડિતો)

હાલમા પુષ્ટિમાર્ગીય આચાર્યપરપરાની ચોપડી પ્રસિદ્ધ થઈ છે, તે વાચતા જણાય છે કે, તે શ્રીમાન્ બલભદ્રલાલાજી કૃતિ છે, છતા આશ્ચર્યની વાત છે કે તે પુસ્તકમા કોઇ પણ ઠેકાણે શાસ્ત્રીય પ્રમાણોનો સ્પર્શ સુદ્ધા કરવામા આવ્યો નથી કેવલ સ્વધર્મરક્ષણ માટે જેમણે વખતનો અને દ્રવ્યનો મોટો ભાગ અર્પણ કરી, પુષ્ટિમાર્ગીય પડિતોના મોહક લેખોથી છવાઇ ગયલા મોહાધકારને સ્વમાર્ગીય ગ્રથરત્નોના પ્રમાણરૂપ પ્રકાશથી દૂર કરેલો છે, એવા મહાપ્રતાપી ગોસ્વામી શ્રીનૃસિંહલાલજી મહાગજ ઉપર અને શાસ્ત્રી ભગનલાલ ગણપતરામ એમ. એ ઉપર આક્ષેપો સિવાય બીજુ જણવાનુ તત્ત્વ કાઇ પણ જોવામા આવ્યુ નથી ઉપરની બે વ્યક્તિ ઉપર આક્ષેપો સાથે પ૦ ગટૂલાલજીની પ્રશસા પણ સ્પષ્ટમા આવતી ગઈ છે પણ તે પ્રશસા તો જગ જાહેર થઇ ગયલી હોવાથી તેમા કઇ પણ લાલાજી વિરોધ બજવાણુ પાડી શક્યા નથી, પરતુ ઉપરની બે વ્યક્તિ ઉપર અણગમો તો જાહેર થયેલો છે

હવે તે ચોપડીમા જે કલમવાર લેખ છે તે વિષે નીચે પ્રમાણે સુદ્દાઓના ખુલાસા મળવાની વૈષ્ણવોના મનમા ઉત્કંઠા રહે છે

૧, वन्दे श्रीपुरुषोत्तमम् એ શ્લોકમા બતાવેલી પરપરા કયા સ્વમાર્ગીય પ્રાચીન ગ્રથોમા છે? તેના નામ તથા લેખ સહિત પ્રસિદ્ધિમા આવવુ જોઇએ

૨ જેમા એ પરપરા લખી હોય તેવા પ્રાચીન કયા કયા ગ્રથોની અજ્ઞાતતા ભારતમાર્તડના ટાઈટલવાળા પ૦ ગટૂલાલાજીના વિચારોથી સિદ્ધ થઇ ચૂકી છે? હોય તો તેના નામ આપવા જોઈએ

૩ સાતપીઠમાથી કયા કયા પીઠાધીશોએ તે પરપરા સ્વીકૃત કરી છે? તેઓના નામો અને તેઓની સમતિ સહિત લેખો પ્રસિદ્ધિમા આવવા જોઇએ વળી આ પરપરાને સ્વીકારે નહિ તેને આચાર્યપાદથી અને શ્રીપુરુષોત્તમથી બહિર્મુખ થવાનુ કલક લાગે છે, એવો લેખ જે સ્વમાર્ગીય પ્રાચીન ગ્રથમા હોય તે પ્રસિદ્ધ થવો જોઇએ

૪ ઉપરની પરપરા સ્વમાર્ગીય ગ્રથોથી સિદ્ધ થયા પછી વૈષ્ણવો માને નહિ તો બહિર્મુખ થાય કે આપના કેવલ લેખથી જ બહિર્મુખ થાય?

૫ આ પરપરામા સ્વમાર્ગીય ગ્રથોના કેટલા વચનો હાથ ધર્યા છે? જેટલા હાથ કર્યા હોય તેટલા પ્રસિદ્ધ કરવા જોઇએ

થોડો વખત થયા ભટ્ટ કવિ બલભદ્રશર્મા તરફથી 'પુષ્ટિમાર્ગીય આચાર્યપરપરા' એ નામનુ પુસ્તક બહાર પડયુ છે, તેમા વિષ્ણુસ્વામીની પરપરાની નેત્રનિમીલન પુર્વક મજબુત હિમાયત કરવામા આવી છે તે પરપરાને નહિ સ્વીકારનારા ગોસ્વામિબાલકો અને સાપ્રદાયિક વિદ્વાનો ઉપર વચનપુષ્પોનો (!) વર્ષાદ વરસાવવામા આવ્યો છે આ લેખની સમીક્ષા એ તન્માર્ગીય પડીતો તરફથી કરવામા આવી છે, તેને અમે અમારા પત્રમાં યોગ્ય સ્થલ આપીએ છીએ આનો ઉત્તર આપવાની લાલાજીને ઇચ્છા હોય તો તેમણે વિવેકની મર્યાદામા રહીને યોગ્યતાપુર સર ગુજરાતીમા (બનતાસુધી) લખી મોકલવો અમે અમારા વાચકોને બન્ને બાજુ તપાસવાની સવડ માટે સદુદ્દેશથી તેને યોગ્ય સ્થાન આપીશુ

: પ્રામાણિકતાના વિચારમા શાસ્ત્ર તથા શિષ્ટાચારથી સિદ્ધ થાય તેની જ માન્યતા રહે છે એ વાત ઉભય પક્ષને તુલ્ય છે

૧૦ ગમે તેટલા આચાર્યોએ એ પ૨ પગનો સ્વીકાર કર્યો હોય તો પણ જ્યા સુધી સ્વમાર્ગીય ગ્રન્થોથી કોઈ સિદ્ધ કરી શકે નહિ, ત્યા સુધી એક એ આચાર્યો તથા વૈષ્ણવો તે પ૨પરાને માને નહિ તો ગેરવ્યાજબી ગણાય નહિ

૧૧ કોટાવાળા શ્રીમથુરેશજી મહિના અધિષ્ઠાતા શ્રીવિઠ્ઠલનાથજી (શ્રીકનૈયાલાલજી) મહા રાજે પ્રસિદ્ધ કરેલી પુષ્ટિમાર્ગીય આચાર્યપરપગ દૃષ્ટિગોચર કરવાનો શ્રમ શ્રીમાન્ વલ્લભાચાર્યજીએ લીધા હોય એમ જણાતુ નથી, તેથી જ શ્રીગુસાંઈજી મહારાજના સમયમા પ્રસિદ્ધ થયાતુ લાગે છે પરંતુ તે પ૨ પગ શ્રીકનૈયાલાલજી મહારાજે જ પ્રસિદ્ધ કરી છે, ને વાચવાનો હવે શ્રમ લેશે?

૧૨ શ્રીકનૈયાલાલજી મહારાજે પ્રાભક્તનેમા આ પ૨ પગનો સ્વીકાર કર્યો છે એમ લખે છે, પરંતુ તેમા પ૨પરાની લક્ષીકત બીલકુલ નથી કેવલ ગૌતમગોત્ર વિપ્રો આ કલિયુગમા થયા એમ સદુત્સાહમા લખ્યુ છે તેના ઉત્તરમા એવી રીતે લખ્યુ છે કે પુરાણમા હવમૂવુ એમ જે ભૂત કાળ લખ્યો છે તેથી ગયા કલિયુગમા થવાનુ સિદ્ધ થાય છે અને આવતા અઠ્ઠાવીશમા કલિયુગમા થવાનુ વાક્ય શ્રીવલ્લભનુકા એ વાક્ય છે, તે ઉપરથી માલતશાક્તિમા પણિત ગટ્ટુલાલજીએ તે પ૨ પગ લખી છે.

૧૩ એ પ૨ પગ નહિ સ્વીકારવાનુ તાત્પર્ય એવુ જણાય છે કે પૂર્વજ તે વિદ્વાન આચાર્યોતો સ્વીકરેલી નહિ હોવાથી પ્રાચીન ગ્રન્થમા લખેલી નથી તેમ જો નિવડે આચાર્ય પરપગમા હોય એ તેમનુ પ્રજન કરવાથી અન્યાશ્રય થાય જ નહિ પરંતુ શ્રીમાન્ વલ્લભાચાર્યજીએ શિવપુરાણમા અન્યા શ્રય લખેલો છે તેથી તેમની સિદ્ધ માનવાનુ સાહસ ગ્રન્થના ખરા અભિપ્રાય જાણનારા વૈષ્ણવો કરી શકે નહિ પરંતુ કોટાથી પ્રસિદ્ધ થયેલુ પુસ્તક વાચ્યા બાદ શ્રીકનૈયાલાલજી મહારાજે એ પુસ્તક કર્યું નથી, પણ શ્રીગુસાંઈજી મહારાજે કર્યું છે એમ કહેનાર સ્વમાર્ગીય ગ્રન્થ વાચવાના આવશ્યમા મગ્ન રહેનાર તે પરંપરા સ્વીકારી શકે

૧૪ જ્યાસુધી કોઇ પણ રીતથી એ પરપરા સિદ્ધ થઈ નથી ત્યાસુધી સ્વમાર્ગીય ગ્રન્થને જાણ નાર કોઇ પણ એ પરપરાનો સ્વીકાર કરે નહિ અને મુબાઈમા મોટા મદિરવાળા શ્રીદ્વારકાનાથજી મહારાજે ' મતસિદ્ધાન્તમાર્તંડ ' એ પુસ્તક પ્રકટ કરવાની પણિત ગટ્ટુલાલજીને આજ્ઞા આપી એ વાત ખરી છે, પરન્તુ તેમા લખેલી પરપરા તેઓએ સ્વીકૃત કરેલી છે, એવો દાખલો આજ દિવસ સુધી પ્રકટ થયો નથી અને ગ્રન્થ બહાર પાડવાની આજ્ઞા આપે તે પરથી તેમના તમામ વિચારો માનવા માટે બધાયેલ છે એમ આપણાથી માની શકાય નહિ, પણ પોતે ગ્રન્થકર્તા જ તેમા લખેલા વિચારો માનવા માટે બધાયેલ છે

૧૫ એ સમયમા શ્રીદ્વારકાનાથજી મહારાજે તથા શ્રીગોકુલાંતીનાથજી મહારાજે ત પરંપરા વિ ષેમાં પણિતજીને કેમ પૂછ્યુ નહિ ? પરન્તુ જે બાબત એવડો મોટો ગ્રન્થ આખરથી અતસુધી વાચ વાનો તેમને અવકાશ મળે, ત્યારે તેઓ વાચે તો જેવી અન્યથા વાત હોય તે પડવાની ઈચ્છા થાય

આટલા બાબતના જ દર્શન કરી આપ સ્વમત બાધતા કે તેઓશ્રીને કેટલો અવકાશ મળે છે? અને આપને કેટલો અવકાશ મળ્યો છે કે તે આ પરપરાની સામેના પુસ્તકો પ્રસિદ્ધ થયા છે તે વાચવાનો આપને અવકાશ ક્યા મળ્યો છે? વગર વાચ્યે જ અભિપ્રાય આપ્યો છે, ત્યારે તેઓને અવકાશ ક્યારે મળે એ બીનાથી જ જોવાનુ છે.

૧૬. જેમના ઉપર ભરોસો ન હોય તેમની કહેવી બાબત આજ્ઞા વિના સાવધાનીથી જોઈ શકે, પણ જેમનાં ઉપર ભરોસો હોય તેમની કરેલી બાબતની વિશેષ તપાસ થતી નથી, અને તે પ્રમાણે તેમને આજ્ઞા આપી હોય તેથી તે જવાબદાર નથી અને પડિતજી હાથે લખતા નહિ, તેથી બીજા વિદ્વાનપાસે લખાવતા એ અર્થના જણાવામા છે, પરતુ તે લખનાર પડિતો સ્વમાર્ગીય ગ્રન્થોના જાનવાલા હોય, તો વિવેદથી પણ પડિતજીને પ્રશ્ન કહી શકે, પરતુ જેને સ્વમાર્ગીય ગ્રન્થોનુ જ્ઞાન ન હોય તે તો સાહિત્ય અથવા તો વ્યાકરણની જે ચૂકો હોય તે કહાડી શકે તેમ પડિત જયેષ્ઠારામે પણ સ્વમાર્ગીય ગ્રંથોના અવલોકનમા પ્રવૃત્તિ કરી હોય એમ જણાવામા નથી તેથી તે સબળાઓને પડિતજીપર જ ભરોસો હતો.

૧૭ એટલે તાત્પર્ય એ છે કે બ્યાસુધી કોઇ પ્રાચીન આચાર્યોના ગ્રથમા એ પરપરા જોવામા આવતી નથી અને પ્રાભિજનના કર્તા શીવિઠ્ઠલનાથજી (શ્રીગોયાલાલજી) મહારાજે એ પરપરાથી વિરુદ્ધ પરપરા પ્રકટ કરી છે તેનુ સમાધાન કોઇ પણ આચાર્યશ્રી તરફથી પ્રસિદ્ધ થયુ નથી ત્યાસુધી તો શ્રીગોયાલાલજી મહારાજે પ્રકટ કરેલ પુસ્તકમાં જેપરપરા લખેલ છે તે જ સર્વે આચાર્યો તથા વૈષ્ણવોને માન્ય છે (તે પરપરાનુ પુસ્તક શ્રીનૃસિહજી મહારાજની લવેલીમા મળે છે ઇચ્છા હોય તેણે વાચી જોવુ)

૧૮. ઉપરના લેખથી એ સિદ્ધ થયુ કે શિવજીની આવલ પરપરા કોઇ પ્રાચીન ગ્રથમા નથી.

૧૯ શ્રીનૃસિહલાલજી મહારાજ સ્વધર્મસરક્ષણમા જેવા બદ્ધ પરિકર હતા, તેવીરીતે બીજા મહાપરિકર કોઇ પણ આજકાલના સમયમા દર્શન થતા નથી ગ્યાનદ સરસ્વતી મુબઇમા આવેલા ત્યારે ગમદ્ર મદિરમા સભા કરી તેમને શાસ્ત્રાર્થે માટે પણ તેમણે જ બોલાવ્યા હતા, પરતુ તેઓ આવ્યા નહિ અને આજદિવસ સુધી વિરાજતા હોત તો માધવતીર્થ નારદગ્યાર્યની સામે થઇ તેમનો કોલાહલ બધ કરાવ્યા વગર રહેત જ નહિ તેઓ દર રવિવારે પોતાના મંદિરમા સ્વમાર્ગીય ગ્રથોનો જ ઉપદેશ કરતા હતા

૨૦ વિઠ્ઠલજીની આચાર્યપરપરા સ્વમાર્ગીય કોઇ ગ્રથમા નહિ હોવાથી તેથી વિરુદ્ધ થયા હતા બીજુ કઇ પણ કારણ નહિ હતુ, કેમ કે તેઓ સ્વમાર્ગીય ગ્રથોના અભિપ્રાય પ્રમાણે જ ચાલવામા દૃઢ આગ્રહી હતા

૨૧ પ્રાચીન ગ્રથોને તત્વદૃષ્ટિથી જોઇને જ તેના અભિપ્રાય પ્રમાણે તેઓ ચાલતા હતા નહિ કે જેઓ આજના સમયમા ગ્રથ જોયા વગર કલમ ચલાવે છે, તેવા હતા

૨૨ તેઓ પડિતોનુ સર્વદા સન્માન જ કરતા હતા અને સ્વમાર્ગ ગ્રથોની પ્રસિદ્ધિ માટે અમૂલ્ય દ્રવ્ય અને દાનવડે વ્યય કરતા હતા તે તેઓના પરિચયવાળાઓને પૂછવાથી કે તેમણે આશ્રય આપી પ્રસિદ્ધ કરાવેલ ગ્રથોથી સર્વને વિદિત થશે તમે શ્રીનૃસિહલાલજી અમો ધર્મન્યાય છીએ એમ પૂર્ણ રીતિ સમજતા હોવાથી તદનુકૂલ જ તેમનુ સર્વ વર્તન હતુ અને બીજાઓના મનમા તો અમો સરદાર છીએ એમ પાસેના લોકોના કથનથી પોતાને સરદાર જ સમજતા હોવાથી તદનકૂલ જ તેઓની કૃતિ છે અને તેમાથી જેઓની પાસે વિદ્વાનો રહે છે તેઓ સ્વમાર્ગીય ગ્રથો વાંચવાનો અગ લેવામા આવશ્યવાન્ હોવાથી સ્વમાર્ગીય વિદ્વાનોથી તેઓને અલગ જ રાખે તે એ જ સ્વમાર્ગીય વિદ્વાનનાં નિન્દ્યનુ કારણ છે.

૨૩. અણુભાષ્ય આદિ પ્રાચીન ગ્રંથો મર્યાદામાર્ગીય છે એમ કોઇ પંડિત (તે ગ્રંથોને જાણનાર) કહે જ નહિ; પરંતુ તેમા મર્યાદામાર્ગ તથા પુષ્ટિમાર્ગનુ સ્વરૂપ બતાવેલુ છે તે સમજી પુષ્ટિમાર્ગમા વર્ત્તવાનો કોઇ ઉપદેશપૂર્વક આગ્રહ કરતા હોય તો અમારી સમજ પ્રમાણે ગેર-વ્યાજબી કહેવાય નહિ.

૨૪. લાઇબલ કેસના સમય પછી તો ઘણા વર્ષોસુધી શ્રીનૃસિંહલાલજી મહારાજ અને પંડિત ગટ્ટુલાલાજી વચ્ચે ગાઢ મિત્રતા હતી. તેનો દાખલો સુધર્મોદયસભાનુ સ્થાપન જ સમજીએ, પરંતુ આચાર્ય-પરંપરામા, દોલોત્સવનિર્ણયમા અને શ્રીરામનવમીનિર્ણયમા સ્વમાર્ગીય ગ્રંથોથી વિરુદ્ધ પંડિતજીનો આગ્રહ બધાયો એટલે તેઓ પંડિતજીથી જુદા પડયા એટલે લાઇબલ કેસના સમયમા પંડિતજી તથા તેમના પિતા ધનશ્યામજી ભટ્ટજી વિદ્યમાન હતા અને તેમનુ માન સર્વ રીતે બાલકો જાળવતા હતા તે છતાં લાઇબલ કેસમા સિદ્ધાન્તરહસ્યનો અર્થ ટીકા ગ્રન્થમા ઉલટ કર્યો છે, તે તેમના પણ વાચવામા તથા જાણવામા આવેલો જ હોવો જોઇએ તે છતાં તેમણે તે વિષે કાંઈ પણ પ્રવૃત્તિ કરી નહિ તેનુ કારણ શું હશે? તે તેમના પરિચિત લોકો સમજી શકે. આપણે સમજી શકીએ નહિ, પરંતુ એટલુંજ સમજવામા આવે કે, જો તેઓએ પ્રવૃત્તિ કરી હોત તો કોર્ટસુધી પણ ખરેખર્થ સમજાવવાની તેઓ શક્તિ ધરાવતા હતા પરંતુ તેઓએ તે બાબતની ઉપેક્ષા જ રાખેલી છે.

૨૫ પંડિતજીને બુદ્ધીગમ્ય તરફથી છડી મળી તેને લીધે બાલકોએ અદેખાઇથી વિરોધ કર્યો, એ અનુમાન ખોટુ છે કારણકે પંડિતજીને છડી મળ્યા પછી થોડો જ વખત પૃથ્વીપર રહ્યા હતા, પણ હવે કહ્યા વગર ચાલતુ નથી કે "૩૪" ની સાલમા વરસાદ થયો નહિ, ત્યારે મૂલજી જેઠા વિગેરે શેઠીઆઓ પંડિતજી પાસે ગયા અને તેઓએ જણાવ્યુ કે વરસાદ થાય એવુ કંઇક કાર્ય બતાવો, ત્યારે પંડિતજીએ એવી સરત કરી કે કોઇ ગોસ્વામિબાલકોને આ કામમા પૂછવુ નહિ અને મારા કહેવા પ્રમાણે જ બધે કરો તો હુ આ કામ માથે લઇને કરૂ અને વરસાદ અવશ્ય થાય તે સમયે શેઠીઆઓને વરસાદની જરૂર હોવાથી તેઓએ તેઓનુ કહેવુ કબુલ રાખ્યુ એટલે પંડિતજીએ મુખ્યપદ ભોગવી મૃગી ઋષિનાયકનુ મુખ્ય પદ ભોગવ્યુ, તે દિવસથી બાલકોએ જાણ્યુ કે પંડિતજી બાલકોથી વિરુદ્ધ છે, તે પરથી બાલકોને તેમની ઉપેક્ષા થઈ એમ અમોએ કર્ણોકર્ણિ ન્યાયથી સાંભળ્યુ છે

૨૬ ઘણા પુરુષોની જેમા સમતિ હોય તે વાત પ્રમાણ મનાય એ વાત ખરી છે, પરંતુ આ આચાર્યની પરંપરામા કોઇ પ્રાચીન ગ્રન્થની કે કોઇ આચાર્યની સમતિ નથી અને આધુનિક બાલકો પંડિતજીપર ભરોસો રાખી પોતે ગ્રંથ વાચવાનો શ્રમ લીધા વગર પંડિતજી ગ્રન્થ વિરુદ્ધ સમતિ આપે નહિ એમ માને તો તે બનવા યોગ્ય છે અને શ્રીનૃસિંહલાલજી મહારાજે જાતે પ્રાચીન ગ્રંથો જોવાનો શ્રમ લીધેલો હોવાથી ઉપર લખેલી બાબતો પ્રાચીન ગ્રંથોથી વિરુદ્ધ જણાતાં તે બાબતથી જ તેઓ પંડિતજી સાથે વિરુદ્ધ પડયા હતા, પણ તેઓની જાત સાથે વિરુદ્ધ પડયા નહિ હતા, અને જે પ્રાચીન ગ્રન્થને આધારે હોય તે પ્રમાણ ગણાય અને પ્રાચીન ગ્રન્થને આધારે ન હોય તે અપ્રમાણ ગણાય, એ નિયમ સર્વત્ર પ્રચલિત છે, તે નિયમને અનુસારે મથુરાજીમા સર્વ પંડિતો તરફથી આચાર્યપરંપરાના નિર્ણય માટે સભા ભરાઈ હતી, તે સભામા શ્રી નૃસિંહલાલજી મહારાજનું મતવ્ય ખરૂ હતુ એમ સિદ્ધ થયુ હતુ અને તે પુસ્તક મથુરાજીમા છપાઇને પ્રસિદ્ધ થયુ છે, તેમા મથુરાજી તથા વૃંદાવનના પંડિતોની સહી છે તે પુસ્તક પણ શ્રી નૃસિંહલાલજીના મંદિરમા મળે છે, તે મગાવી વાચવાથી સર્વને ખાત્રી થશે

૨૭. સર્વ વૈષ્ણવોને સર્વ ગોસ્વામિબાલકો સમાનભાવથી વંદ્ય છે, પરંતુ પ્રાચીન ગ્રન્થોને અનુસારે જેઓ ઉપદેશ કરે તે સર્વને માન્ય છે, એટલે ઉપદેશ માનવામા અડચણ આવે તેમ નથી.

૨૮. શ્રીનૃસિંહલાલજી મહારાજનો સિદ્ધાંત તો પ્રાચીન આચાર્યોનો જે સિદ્ધાંત છે તે જ હતો માટે તે સિદ્ધાંત માનવામા પ્રાચીન યાવત્ આચાર્યોનો સિદ્ધાંત મનાઇ જાય છે કોઇનો ઉપમર્દ થતો નથી અને પંડિતનો (ઉપર લખેલી બાબતોનો) સિદ્ધાંત માનવામા પ્રાચીન સર્વ ગ્રન્થોનો ઉપમર્દ થાય છે પંડીજી જે યોગ્ય લાગે તે સિદ્ધાંત સ્વીકારે.

૨૯ શ્રીનૃસિંહલાલજી મહારાજનો સિદ્ધાંત સ્વીકારવાથી શ્રીઆચાર્યચરણ, શ્રીપ્રભુચરણ કે કોઇ બીજા ગ્રન્થકાર પ્રાચીન ગોસ્વામિબાલકોના અભિપ્રાયથી વિરોધ આવવાની શંકા ઉત્પન્ન થાય છે તે કેવળ શ્રીનૃસિંહલાલજી મહારાજનો સિદ્ધાંત અને પ્રાચીન ગ્રન્થોના અભિપ્રાય નહિ સમજવાનુ પરિણામ છે

૩૦ આ કલમનો ખુલાસો ઉપરની કલમમા આવી જાય છે

૩૧ એકને એક બાબત જરાઉપ બદલાવી આ કલમમા લખી છે બન્ને તરફના ગ્રન્થો વાચવાથી એમ જ જણાઇ આવશે કે પ્રાચીન ગ્રન્થોના અભિપ્રાય પ્રમાણે જ શ્રીનૃસિંહલાલજી મહારાજનો સિદ્ધાંત છે. એટલે તેનો સિદ્ધાંત સ્વીકારવાથી પ્રાચીન ગ્રન્થકારોનો સિદ્ધાંત સ્વત સ્વીકારાઇ જશે.

૩૨ શ્રીનૃસિંહલાલજી મહારાજ તરફથી ઉપર લખેલી બાબતોના પુસ્તકો (છપાઇ) પ્રસિદ્ધ થઇ ગયા છે તે વાચવાનો શ્રમ લેવામા આવે નહિ તો તેમનો સિદ્ધાંત જાણવાનુ સૌભાગ્ય કયાથી પ્રાપ્ત થાય ?

૩૩. આશ્ચર્યની વાત છે કે પ્રાચીન ગ્રંથોના અભિપ્રાયને અનુસરતો જે આચાર્યનો સિદ્ધાંત હોય તેનો આદર કરવો અને તેથી વિરુદ્ધ હોય તેને દૂરથી દંડવતપ્રણામ કરવા એ રાજમાર્ગ (પાકી સડકનો રસ્તો) ખુલ્લો છે પંડીજી કોની આજ્ઞાને આદર દેવો ? એ પ્રશ્ન જ ઉઠતો નથી, પરતુ સ્વભાગીય ગ્રંથોનુ અધ્યયને તેના અભિપ્રાયે કરવુ જોઇએ, તેમા વ્યાકરણાદિશાસ્ત્રોને જાણવાની ખુમારીને બતથી ખુણે બેશી મુકવી જોઇએ

૩૪ આ કલમમા દર્શાવ્યા પ્રમાણે પ્રાચીન ગ્રંથોને અને શિષ્ટાચારને અનુસરતો સિદ્ધાંત શ્રી નૃસિંહલાલજી મહારાજનો જ છે, માટે તે સિદ્ધાંત જ સત્ય છે, એમ સમજો !

૩૫ આ પરપરા પંડિતજીની કલ્પેલી છે, એમ કહે તો તે બાબતમા આ કલમ તથા ૩૬-૩૭-૩૮ એ કલમોમા યુક્તિઓ કરી છે તે ઉપરથી એટલુ તો સિદ્ધ થાય છે કે એ શીવજી આચાર્યવાળી પરપરા કોઇ પ્રાચીન ગ્રથમા નથી જો પ્રાચીન ગ્રથમા તેમના વાચવામા આવી હોત તો તેઓ તે ગ્રન્થની જ પક્તિ લખતે પરતુ ગ્રથમા હોય નહિં તે કયાથી લખે ? એટલે मा चौर कथयति क (મને ચોર કોણ કહે છે ?) એ ન્યાયપ્રમાણે શિવજી આચાર્યવાળી પરપરા પંડિતજીની કલ્પેલી છે એમ જે કહેતા હોય તેણે તેનુ કારણ બતાવવુ જોઇએ ઇત્યાદિક વાક્પેશલતાની યુક્તિઓ ૩૫ કલમથી ૩૮ કલમ સુધી લખી છે તે તે પરપરા પ્રાચીન ગ્રથમા નથી તે સિદ્ધ કરી આપે છે.

૩૯ આ કલમમા છેવટ શાસ્ત્રી મગનલાલ એમ એ એ પરપરા પંડિતજીની કરેલી છે એમ કહે છે, એવુ લખે છે તેનો ખુલાસો તો સહજ છે કે આપણા સપ્રદાયના પ્રાચીન ગ્રંથોમા શિવજી, નાગરજી વિગેરેને આચાર્ય માન્યા હોય તો તે પ્રાચીન લેખ પ્રસિદ્ધ કરવો જોઇએ, એટલે તે કહેતા બધ પડે અને પ્રાચીન ગ્રથોમા કોઇપણ ઠેકાણે શિવજી આચાર્યવાળી પરપરા જોવામા ન આવે તો પછી પંડિતજીએ કે કોઇ બીજાએ નવી ઘડી કાઢી છે એમ બલાત્કારથી માનવુ જ પડશે ત્યારે उपस्थितस्य त्यागे मानाभावात् (જેનો પ્રસગ ચાલતો હોય તે પ્રસંગમા ગ્રથમ જે આવેલ હોય તેનો ત્યાગ કરવામા કાંઈ પ્રમાણ નથી) એ ન્યાયને અનુસાર પંડિતજીના પુસ્તકમા તે પરપરા લખેલી હોવાથી તેમણે ઘડી કાઢી છે એમ કહે તો તે કોઇ રીતે અયોગ્ય ગણાય નહિં.

૪૦ આ શ્લોકમાં ગાસ્વામીજીએ પોતાના હૃદયને આજ્ઞા આપી દીધી છે કે આજ દિન તમને તમારા, કામથી રક્ત છે આ લેખ ગાસ્વામીજી એ પરંપરા નહિ માનતી વખતે હૃદયશબ્દ (પાઠભેદ) દેતા એમ અપમાન દર્શનારા શબ્દોથી વખોડેલો હોવાથી પોતાના પક્ષની નિર્બલતા સૂચવે છે

૪૧ પુષ્ટિમાર્ગનીઆચાર્યપરંપરા કોઇ પ્રાચીન ગ્રંથમાં (નિબદ્ધ આચાર્ય હોય એની) જોવામાં આવતી નથી પરંતુ સિદ્ધાન્તરહસ્યના પ્રારંભમાં શ્રાવણશ્યામલે પક્ષે એ શ્લોકમાં સાક્ષાત શ્રીભગવાને શ્રીઆચાર્યચરણને ઉપદેશ કર્યાની હકીકત સ્પષ્ટ છે સંપ્રદાયપ્રદીપ અને ચક્રિત ચિંતા મણિ એ બે ગ્રંથ જોવામાં આવે છે અને તેમાં પરંપરા પણ દર્શાવી છે પણ પરસ્પર તે ગ્રંથોનો લેખ મળતો આવતો નથી અને તેમાં દર્શાવેલી પરંપરા આદૌ શ્રીપુરુષોત્તમ પુરંદરમ એ શ્લોકમાં દર્શાવેલી પરંપરા સાથે મળતી નથી તેમ શ્રીયદુનાથવિજય નામનો સંપૂર્ણ ગ્રંથ સંસ્કૃતમાં મહોટા મહિમામાં જોયો હતો તે લાયબ્રેરીના થયા પછી બન્યો છે એમ વૈષ્ણવો કહે છે. અને તે બંને ગ્રંથોના લેખની પદ્ધતિ તેમના બીજા ગ્રંથોની પદ્ધતિથી તદ્દન જુદાઈ ભાષામાં હોવાથી સંદેહ ઉપજે તેમ છે

૪૨. લેખની જોડી બદલવાથી બીજાના લેખનો અનાદર થાય છે તેમ શ્રીઆચાર્યચરણ સ્વયંસિદ્ધ નિત્ય નિત્યસિદ્ધ બીજા પાસેથી કાંઇ પણ લેતા નહિ તેમણે તુલાપુરુષનું દાન કીધાનું તેમાં લખ્યું છે તે અશ્રદ્ધેય બાબત છે, તેમ તે ગ્રંથોમાં આદૌ શ્રીપુરુષોત્તમ પુરંદરમ એ પરંપરાનો શ્લોક જોવામાં આવતો નથી

૪૩ શ્રીઆચાર્યવંશજોના બીજા ગ્રંથો છે તેના લેખની જોડીથી જુદી જોડી હોય તો કૃતિમાં સંશય થવાનો સંભવ છે હવે શ્રીઆચાર્યવંશજોના કહેવા કયા પ્રાચીન ગ્રંથમાં એ પરંપરાનો શ્લોક છે તેનું નામ લખે તો તે ગ્રંથ જોઈ લઇએ પણ અમારી સમજ પ્રમાણે સત્સિદ્ધાંતમાર્તંડ સિવાય તેની પહોંચાના કોઇ ગ્રંથમાં તે શ્લોક નથી

૪૪ કોટવાળા શ્રીકન્હૈયાલાલજી મહારાજ તરફથી તથા ગોસ્વામિ શ્રીનૃસિંહલાલજી મહારાજ તરફથી આદૌ શ્રીપુરુષોત્તમ પુરંદરમ્ એ શ્લોકમાં લખેલી પરંપરાનું સપ્રમાણ યુક્તિપુર્વક ખંડન થઈ પ્રસિદ્ધ થયે ઘણા વર્ષ થયા છે, તે પુસ્તકો વાંચવાનો પરિશ્રમ લીધા વગર જે તેનું ખંડન થયું એમ માની બેસે, અને તે વિષે કલમ ચલાવે એ અમે વ્યાજબી જોતા નથી

૪૫ આ કલમથી આરંભીને ૫૭ મી કલમ સુધી એકની એક વાત કપાન્તરથી લખી છે પરંતુ આદૌ શ્રીપુરુષોત્તમ પુરંદરમ્ એ શ્લોક કયા પ્રાચીન ગ્રંથમાં છે? એ જણાવે બતાવી શકે ત્યારે જ તે કલમો ઉપયોગ થઈ પડે પણ અમારા સમજવા પ્રમાણે તે શ્લોક કોઈ ગ્રન્થમાં નથી તેથી તે બતાવી શકયા જ નથી માટે પ્રાચીન ગ્રન્થોમાં છે એમ બતાવવા માટે જે કલમો લખવામાં આવી છે તે જેમ મગનલાલશાસ્ત્રીના વચનને વેદવત્ માનવામાં જે વિકલ્પ કર્યો છે તે વિકલ્પો પોતાના લેખપર પણ સમાનતાથી લાગે છે માટે તેઓનો લેખ જો બેબુનિયાદ હોય તો પ્રાચીન ગ્રન્થમાંથી બતાવી આપવો

૫૮ પુષ્ટિમાર્ગના આચાર્યની પરંપરાનો નિર્ણય કરવા માટે પ્રાચીન ગ્રન્થો જ જોવા જોઇએ કારણ કે શ્રીગોકુલનાથજીએ ઘણા ગ્રન્થોમાં " પુષ્ટિમાર્ગ " શ્રીઆચાર્યજી પ્રગટ કર્યો છે, એમ જણાવ્યું છે.

૫૯. ભગનલાલશાસ્ત્રીના અનુસરણમાં પંડિત ગટુલાલજી ઉપર વિરોધ છે, એવું જણાવ્યું છે, તે ત્યારે સત્ય કહેવાય કે જ્યારે પ્રાચીન ગ્રન્થમાંથી "आदौ श्रीपुरुषोत्तम पुरहरम्" એ શ્લોક બતાવી આપે.

૬૦ "आदौ श्रीपुरुषोत्तम पुरहरम्" એ શ્લોકમાં બતાવેલી આચાર્યપરંપરા સર્વસમત નથી પણ પંડિત ગટુલાલજીને જ કેવલ સમત છે, એમ લોકો કહે તેનું મુખબંધન કરવાનો ઉપાય એ દોહ કરે છે, એમ કહીને બેસી રહેવું એ નથી કિંતુ તે શ્લોક પ્રાચીન ગ્રંથમાંથી બતાવવો એટલે લોકો પોતાની મેળે જ બોલતા બંધ પડશે પરંતુ જ્યાંસુધી પ્રાચીન ગ્રન્થમાં તેવું બતાવી શકે ત્યાં સુધી તો અન્યો બહુભાગ લોકો તેથી વિરુદ્ધ જ રહેશે

૬૧ અશ્રેષ્ઠ શિક્ષાની વિશેષતા હોવાથી લોકો ધર્મને સમજવા લાગ્યા છે એટલે કેવલ યુક્તિથી જે સિદ્ધ થાય તેને જ પ્રમાણ તરીકે માને એમ નથી પણ જેમાં શાસ્ત્રોના વચનો મળે તેને જ પ્રમાણ તરીકે માને એમ છે તેમ શ્રીઆચાર્યચરણો પણ અણુભાષ્યમાં શબ્દપ્રમાણને જ ઉચ્ચસ્થાન આપ્યું છે, અને યુક્તિથી સિદ્ધ થયેલ સિદ્ધાંતને બાધ ગણેલા છે, માટે પ્રમાણ જ આપવા જોઈએ

૬૨ માધવતીર્થ ભટ્ટગોપાલે જેટલા ગ્રન્થો પ્રકાશિત કરી પુષ્ટિમાર્ગ ઉપર દુષણ આક્ષેપો કર્યા છે તે તમામ ગ્રંથોના જવાબો પુષ્ટિમાર્ગીયો તરફથી પ્રસિદ્ધ થઈ ચૂક્યા છે જે ઉપરથી વણા વૈષ્ણવોના મનમાં માધવાદ્વૈતિક છે એવી ભ્રાંતિ હતી તે નિવૃત્ત થઇ છે, અને પુષ્ટિમાર્ગીય સિદ્ધાંત વેદાનુકૂલ છે એમ સમજી ગયા છે, પછી તેનાથી વિરોધ કર્તવ્ય રહ્યું રહે છે

૬૩ પ્રાચીન ગ્રંથોમાંથી તે પરંપરાનો શ્લોક બતાવી આપ્યો અથવા પ્રાચીન ગ્રંથોમાં જ્યાં જ્યાં તે શ્લોક લખેલ હોય તેના ઉપક્રમોપસંહારસહિત લેખો છપાવી પ્રસિદ્ધ કરે એટલે સર્વ લોકો બીનતકરારે તે પરંપરા સ્વીકારશે, તેમાં અડચણ માનવાનો અવકાશ જ નથી

૬૪ आदौ श्रीपुरुषोत्तम पुरहरम એ પરંપરાનો શ્લોક પ્રાચીન ગ્રન્થોમાં બતાવી આપ્યા પછી જો કોઇ માને નહિ તો તેનો દુરાગ્રહ કહેવાય પણ જ્યાં સુધી પ્રાચીન ગ્રન્થોમાં તે શ્લોક બતાવી આપે નહિ અને પ્રાચીન આચાર્યોએ સ્વીકારેલ છે એમ વ્યર્થ કાવાદાવા કર્યા કરે ત્યાં સુધી તો તે શ્લોક પ્રાચીન છે એમ કહેનારનો જ દુરાગ્રહ છે એમ લોકો માને છે

૬૫ ભાષાજ્ઞાન, કવિતા કરવી અને ગ્રંથનો અભિપ્રાય સમજવો એ જુદી જુદી બાબત છે જેને શુદ્ધ ભાષા બોલતા આવડતી હોય તે તે ભાષામાં લખેલ સિદ્ધાંતને જાણનારો જ હોય, એમ માનવું એ ભૂલ ભરેલું છે, કારણ કે શાસ્ત્ર સિદ્ધાંતને સંપૂર્ણ જાણનાર અખાતમાં વાંસો નાખનો વાણીયો છે તે મોટા પંડિતોને પણ વણી વખત ગાઢ સિદ્ધાંતના વિષયોમાં મુંઝવી આપે છે અને તે સંસ્કૃત ભાષામાં તદ્દન અનભિજ્ઞ છે તે ઉપરથી તે શાસ્ત્ર સિદ્ધાંતમાં અનભિજ્ઞ છે એમ કોઇ કહી શકશે? કદાપિ નહિ તેવી રીતે ભાષાજ્ઞ પોતાના મનમાં વ્યાકરણનો કાકો ધરાવતા હોવાથી સંસ્કૃત ભાષામાં શાસ્ત્રાર્થ કરતી વ્યાકરણની ચૂંકો ઢાંકી કોમાહલ કર્યા વારતા હોય તો તેમ કરવાથી ખરો સિદ્ધાંત લોકો સમજી શકે એ આશા ફોકટ છે, માટે સર્વ લોકો સમજી શકે તેવી રીતે ચાલતી પ્રસિદ્ધ ભાષામાં જ વિચાર બતાવવો જોઇએ કોય પણ પક્ષ સામાપક્ષવાળાના બોલવામાં કુતર્ક કરે તો લોકો અટકાવી શકે

૬૬ બન્ને પક્ષવાળાઓ આગ્રહ છોડીને પ્રાચીન ગ્રંથોમાંથી "आदौ श्रीपुरुषोत्तम पुरहरम्" એ પરંપરાનો શ્લોક ભાષાજ્ઞ બતાવી આપે તે છતાં ભગનલાલ શાસ્ત્રી સ્વીકાર ન કરે તો ગ્રંથસ્થ

૪૦ આ કલમમાં શાસ્ત્રીજીએ પોતાના હૃદયને આશ્વાસન આપી દીધી છે કે ચાર દિન નામને તમાશા, કામથી ગયા છે આ લેખ શાસ્ત્રીજી એ પરંપરા નહિ માનતી વખતે હૃદયશૂન્ય (પાગલ) હતા એમ અપમાન કરનારા શબ્દોથી સ્પષ્ટ થયેલો હોવાથી પોતાના પક્ષની નિર્બલતા સૂચવે છે

૪૧. પુષ્ટિમાર્ગનીઆચાર્યપરંપરા કોઇ પ્રાચીન ગ્રંથમા (શિવજી આચાર્ય હોય એવી) જોવામા આવતી નથી પરંતુ સિદ્ધાન્તરહસ્યના પ્રારંભમા શ્રવણસ્મરણે પદ્યે એ શ્લોકમા સાક્ષાત શ્રીભગવાને શ્રીઆચાર્યચરણને ઉપદેશ કર્યાની સ્પષ્ટીકરન સ્પષ્ટ છે સંપ્રદાયપ્રદીપ અને ચરિત્ર ચિંતા મણિ એ બે ગ્રંથ જોવામા આવે છે અને તેમા પરંપરા પણ દર્શાવી છે પણ પરસ્પર તે ગ્રંથોનો લેખ મળતો આવતો નથી અને તેમા દર્શાવેલી પરંપરા આદૌ શ્રીપુરુષોત્તમ પુરહરમ એ શ્લોકમા દર્શાવેલી પરંપરા સાથે મળતી નથી તેમ શ્રીયદુનાથવિજય નામનો અપૂર્ણ ગ્રંથ સુરતમા મહોટા મંદિરમા જોયો હતો તે લાયબ્રરીકમા થયા પછી બન્યો છે એમ લોકો કહે છે અને તે ત્રણે ગ્રંથોના લેખની પદ્ધિપાટી તેમના બીજા ગ્રંથોની પદ્ધિપાટીથી તદન જુદીજ ભાષામા હોવાથી સંદેહ ઉપજે તેમ છે

૪૨ લેખની શૈલી બદલવાથી બીજાના લેખનો સંશય થાય છે તેમ શ્રીઆચાર્યચરણ સ્વયંસિદ્ધ નિત્ય સિવાય બીજા પાસથી અન્ન પણ લેતા નહિ તેમણે તુલાપુરુષનુ દાન લીધાનુ તેમા લખ્યુ છે તે અશ્રદ્ધેય બાબત છે, તેમ તે ગ્રંથોમા આદૌ શ્રીપુરુષોત્તમ પુરહરમ એ પરંપરાનો શ્લોક જોવામા આવતો નથી

૪૩ શ્રીઆચાર્યવંશજોના બીજા ગ્રંથો છે તેના લેખની શૈલીથી જુદી જાતની હોય તો કૃતિમા સંશય થવાનો સંભવ છે હવે શ્રીઆચાર્યવંશજોના કરેલા કયા પ્રાચીન ગ્રંથમા એ પરંપરાનો શ્લોક છે તેનુ નામ લખે તો તે ગ્રંથ જોઈ શકાય પણ અમારી સમજ પ્રમાણે સત્સિદ્ધાન્તમાર્તંડ સિવાય તેની પહેલાના કોઇ ગ્રંથમા તે શ્લોક નથી

૪૪ કોટાવાળા શ્રીકન્હૈયાલાલજી મહારાજ તરફથી તથા ગોસ્વામિ શ્રીનૃસિંહલાલજી મહારાજ તરફથી આદૌ શ્રીપુરુષોત્તમ પુરહરમ એ શ્લોકમા લખેલી પરંપરાનુ અપ્રમાણ યુક્તિપૂર્વક ખંડન થઈ પ્રસિદ્ધ થયે ઘણા વર્ષો થયા છે, તે પુસ્તકો વાચવાનો પરિશ્રમ લીધા વગર જ તેનું ખંડન થયુ એમ માની બેસે, અને તે વિષે કલમ ચલાવે એ અમે વ્યાજબી જોતા નથી.

૪૫ આ કલમથી આરંભીને ૫૭ મી કલમ સુધી એકની એક વાત રૂપાન્તરથી લખી છે પરંતુ આદૌ શ્રીપુરુષોત્તમ પુરહરમ્ એ શ્લોક કયા પ્રાચીન ગ્રંથમા છે? એ બતાવી શકે ત્યારે જ તે કલમોનો ઉપયોગ થઈ પડે પણ અમારા સમજવા પ્રમાણે તે શ્લોક કોઈ ગ્રન્થમાં નથી તેથી તે બતાવી શકયા જ નથી માટે પ્રાચીન ગ્રન્થોમા છે એમ બતાવવા માટે જે કલમોમા લખવામા આવી છે તે જેમ મગનલાલશાસ્ત્રીના વચનને વેદવત્ માનવામા જે વિકલ્પ કર્યા છે તે વિકલ્પો પોતાના લેખપર પણ સત્તાન્તરથી નાખે છે માટે તેઓનો લેખ જો બરોબર હોય તો પ્રાચીન ગ્રન્થમાથી બતાવી આપશે

૫૮. પુષ્ટિમાર્ગના આચાર્યની પરંપરાનો નિર્ણય કરવા માટે પ્રાચીન ગ્રન્થો જ જોવા જોઇએ. કારણ કે શ્રીગોકુલનાથજીએ ઘણા ગ્રન્થોમા " પુષ્ટિમાર્ગ " શ્રીઆચાર્યજી પ્રકટ કર્યો છે, એમ જણાવ્યુ છે.

અમારી ભાષામા અમોએ લખની વખતે ઘણી જ મર્યાદા જણાવી છે, છતા જે તેઓને અમારી ભાષા મર્યાદા બહારની જણાય તો તેમણે તુરતજ પોતાના પુસ્તકની કોપી મગાવી અને લખાણોનો મુદ્દા બધો કાઢ્યો, કે જેથી પોતાના લખાણ કરતા અમારા લખાણોએ મર્યાદા ઓળગી નથી એમ જણાવામા આવશે

જણીને અમાને બહુ ખેદ થાય છે - ઉંમરી વખતે પોતાની સખત માંદગી હોવા છતા પણ શ્રીદ્વારકાની સેવાના મજબૂત હિમાયતી કોટાવાળા શ્રીગણેશોલાલજી મહારાજને આજ પરધર્મીઓ પણ પોતાના અતિકર્તવ્યો મટી જને હાથ જોડી તેઓશ્રીના શ્રીમુખથી પડતી આજ્ઞાને પૃથ્વીનો સ્પર્શ થયા વગર જ અદ્ધર ઉચકતી હતા, તેઓશ્રીની સામેપણ જે નહિ છાજતા શબ્દો વાપરવામા આવ્યા છે એ તેઓની કેટલી ભૂલ છે?

શ્રીગણેશોલાલજી મહારાજ વિના શ્રીકૈલાશલાલજી મહારાજે પંડિત ગટ્ટુલાલજી એ નામથી ગુરુપદ્ધતિ સામે છપાવ્યુ હતુ પણ શ્રીગણેશોલાલજી મહારાજે છપાવ્યુ નથી તેઓશ્રી તો કેવલ પોતાનો વખત શ્રીદ્વારકાની સેવામા અને તેના અનુભવમા જ પસાર કરતા હતા તે કોઈના પણ જાણવા બહાર નથી તેઓશ્રી લૌકિક બાબતથી તો દૂર જ રહેનાર હતા તેઓ કોઈના પર દોષની ચેષ્ટા કે તેવા નહિ હોવા છતા તેમનાપર આદૌ શ્રીપુરુષોત્તમ પુરદરમ્ એ પરપરાથી પ્રતિકૂલતારૂપ ચેષ્ટિત કરવાનો જુઠ્ઠો આરોપ મૂકી તેઓશ્રીને હલકા ચિતરવારૂપ કૃત્ય તો કહેવાતા શુદ્ધાદ્વૈત સિદ્ધાન્તપણ્ડિત માટે જ કરી શકે, શિવમસ્તુ સર્વજગતાં વિવેકવતા સજ્જનાનામ્ ॥

હવે અભ્યુપેત્યવાદને અનુસારે આદૌ શ્રીપુરુષોત્તમ પુરદરમ એ વાક્યમા બતાવેલી પરપરાનો સ્વીકાર કરીએ તો તેમા નીચે પ્રમાણે શકાઓ પ્રાદુર્ભૂત થાય છે તેનો પ્રમાણસહિત ખુલાસો શ્રીમાન્ બાલભટ્ટજીમાંથી તરફથી પ્રસિદ્ધ થવાની આશા રાખવામા આવે છે

૧. ઉપર બતાવેલો ગ્રન્થ કયા પ્રાચીન ગ્રથમા છે? તેનુ નામ તથા સ્થલ બતાવવુ જોઇએ.

૨ પ્રાચીનમા ન હોય તો આધુનિક કયા વિદ્વાનની કૃતિ છે? તે સિદ્ધ કરવુ જોઇએ

૩ પોતાના આચાર્યની ભક્તિ કરવાની બાબત સર્વમાન્ય છે તેને અનુસારે પુરદર (શિવજી) પુષ્ટિમાર્ગના આચાર્ય છે એમ પુષ્ટિવર્ધનમ્ એ શ્રુતિવાક્યનો સત્સિદ્ધાત માર્તડમા પડિતજીએ અર્થ કરેલો છે તે પ્રમાણે તેમને આચાર્ય માનવામાં આવે અને આચાર્ય હોવાને લીધે તેમની ભક્તિ કરવામા આવે તો અન્યાશ્રય કર્યો કહેવાય કે નહિ?

૪ જો અન્યાશ્રય કર્યો કહેવાય નહિ તો શ્રીઆચાર્યચરણે શ્રીસુબોધિનીજીમા શિવપૂજન કરવાને અન્યાશ્રય થવાનુ કહેલ છે તેનો અભિપ્રાય શો છે? તે બતાવવો જોઇએ

૫ જો શિવપૂજન કરવુ એ અન્યાશ્રય કહેવાય તો આચાર્યની પૂજનાદિક-ભક્તિ કરવામા અન્યાશ્રય કેમ? એ સિદ્ધ કરી પ્રસિદ્ધ કરવુ જોઇએ

૬ પોતાના મંત્રોપદેષ્ટા ગુરુના જન્મદિવસે ગુરુ ગામમા બિરાજતા ન હોય તો બીજા જે ગોસ્વામિબાલક બિરાજતા હોય તેમને (ગુરુમાની) કેસરસ્નાન કરાવવામા આવે છે તેમ શિવજીને કરાવી શકાય કે કેમ? તેનો અન્યના વાક્યથી ખુલાસો કરવો જોઇએ

૭. તે શિવજીને આચાર્ય માનવા પણ કૈવલ્યજ્ઞાન તેમને દેવાય નહિ એમ કહેવામા આવે તો તેનુ સપ્રમાણ કારણ બતાવવુ જોઇએ

૮. શ્રીઆચાર્યચરણથી આરંભીને આત્મનિવેદનસુધીના કોઇ પણ આચાર્યવર્ગે કે પંડિતજીએ જેમ શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીને કે શ્રીપ્રભુચરણને ગ્રન્થના પ્રારંભમા જેમ નમન કરેલ છે તેમ પુરહર (શિવજી) થી આરંભને શિવમંગલ સુધીના કોઇ પણ આચાર્યને નમન કરેલ નથી તેનુ કારણ શુ? આચાર્ય હોય તો તેમને તો અવશ્ય નમન કરવુ જ જોઇએ.

૯. શિવમંગલ માયાવાદી હતો પણ ભક્તિમાર્ગને અનુસરનારો હોવાથી તેનો મોક્ષ થયો, એમ શ્રીઆચાર્યચરણ નિબંધના પ્રકારમા આજ્ઞા કરે છે તો માયાવાદી પુષ્ટિમાર્ગની આચાર્ય પરંપરામા કેવી રીતે હોઈ શકે? તેનો સપ્રમાણ ખુલાસો થવો જોઇએ

૧૦ તૃતીય સ્કંધના શ્રીસુબોધિનીજીમા નારદજીને મર્યાદામાર્ગીય જ્ઞાની કહ્યા છે તે પુષ્ટિમાર્ગના આચાર્ય કેવી રીતે હોઇ શકે? તે સપ્રમાણ સિદ્ધ કરવુ જોઇએ

૧૧ તેજ શ્રીસુબોધિનીજીમા વિષ્ણુસ્વામ્યનુસારીઓને તામસ તથા દ્વૈતવાદી લખી પોતે પ્રતિપાદિત ભક્તિમાર્ગને નિર્ગુણ સંબંધી લખેલ છે તેનો શો અભિપ્રાય છે?

૧૨ જો વિષ્ણુસ્વામી જુદા અને તેમને અનુસરનારા જુદા છે એમ કહેવામા આવે તો તેનુ પ્રમાણ આપી અમુક અમુક વિષ્ણુસ્વામીના અનુસારીઓ વિષ્ણુસ્વામિસંપ્રદાયની કઇ કઇ મુખ્ય બાબતો સ્વીકારી છે? તે સપ્રમાણ સિદ્ધ કરવુ જોઇએ

૧૩ જે જેનો અનુસારી હોય તે તેની મુખ્ય મુખ્ય બાબતોને સ્વીકારે તો જ તેનો અનુસારી કહેવાય તેવી રીતે વિષ્ણુસ્વામીના અનુસારીઓએ વિષ્ણુસ્વામિસંપ્રદાયની કઇ કઇ મુખ્ય બાબતો સ્વીકારી છે? તે સપ્રમાણ સિદ્ધ કરવુ જોઇએ

૧૪ વિષ્ણુસ્વામિસંપ્રદાયની કઇ કઇ બાબતો શ્રીઆચાર્યચરણે સ્વીકારી તેમને આચાર્ય માનેલા છે? તે સપ્રમાણ બતાવવુ જોઇએ

૧૫ જો નારાયણમંત્ર તેમનો લીધો હોય તો પૃથક્ શરણમાર્ગોપદેષ્ટા એ નામને બાધ આવે છે, કેમકે જુદો જ નારાયણમાર્ગનો શ્રીઆચાર્યચરણે ઉપદેશ કર્યો છે એમ એ નામથી સિદ્ધ થાય છે

૧૬ જો નિવેદનમંત્ર તેમનો લીધો હોય તો સિદ્ધાન્તરહસ્ય ગ્રંથમા શ્રીપ્રભુએ પોતાને ઉપદેશ કર્યાનુ સ્પષ્ટ છે તેને બાધ આવે છે

૧૭ ઉપરની બે કલમોથી મંત્રોપદેશ તો વિષ્ણુસ્વામિસંપ્રદાયનો લીધો નથી એમ સિદ્ધ થાય છે ત્યારે કઇ બાબત આચાર્યશ્રીએ લીધી તે દર્શાવવુ જોઇએ કદાચિત્ શ્રીકૃષ્ણની ભક્તિ તેમા નામથી લીધી છે, એમ કહેવામા આવે તો શ્રીભાગવતની શ્રીધરીટીકામા વિષ્ણુસ્વામીના શ્લોકો લખ્યા છે, તેમા શ્રીનૃસિંહજીને નમન છે તેનો વિરોધ આવે છે

૧૮. કદાચિત્ ગુહ્યાંગ જ્ઞાન તેમનુ લીધુ છે એમ કહેવામા આવે તો તેમના શ્લોકમા શુદ્ધ દ્વૈતજ્ઞાનનો અભિપ્રાય દેખાય છે અને આચાર્યશ્રીએ તો શુદ્ધ અદ્વૈતજ્ઞાન પ્રકટ કર્યું છે, તે પરથી વિષ્ણુસ્વામીનો અમુક કોઇપણ અંશ લીધો હોય એમ જણાતુ નથી. જો કદાચ કોઇ અંશ લીધો હોય એમ જણાવામા હોય તો તે બતાવવુ જોઇએ

૧૯ કોઇ કોઇ ગ્રન્થની સમાપ્તિમા "इति श्रीविद्यानन्दिस्वामिमत वर्ति" એવો લેખ કોઇ કોઇ પુસ્તકમા જોવામા આવે છે અને પ્રતિમા પણ "विष्णुस्वामिपदी अवगाहत" એવુ જોવામા આવે છે તેટલા જ માત્રથી વિષ્ણુસ્વામીને આચાર્ય માનવાનુ કેવામા આવે તો ઉપર પ્રમાણે તેના સપ્રદાયનો અમુક અશ લીધો હોય એમ સાબીત કરવામા ન આવે ત્યા સુધી લેખકોએ અથવા તો તે બાબતમા તેના અભિપ્રાયનુ અજ્ઞાન જ સ્વીકારવુ જોઇએ, પણ તેટલા માત્રથી તેને આચાર્ય સ્વીકારી શકાય નહિ, તે છતા તેમને આચાર્ય તરીકે સ્વીકારવામા આવે તો કઈ બાબતમા તેમને આચાર્ય માનવા? એ વગેરેનુ જોઇએ

૨૦ અમો આવી વિવિધ આચાર્ય પરંપરા સ્વીકારવાનુ તેઓનુ કામ ચાલવી લેતા નથી, કારણકે તે સપ્રદાયને પ્રાચીન ઠરાવવાનો તેમનો જે આ શુભ પ્રયત્ન હોય તો તેઓનુ કામ ઘણુ જ આવકારદાયક છે અને મગરૂરી લેવા લાયક છે એમ અમારે સ્વીકારવુ જ જોઇએ પણ તેજ વેળા આ વાત પણ વિસારી નહિ મકવી જોઇએ કે શ્રીમાન્ વલ્લભાચાર્યજીએ ધર્મનો ઉપદેશ દેવા માટે શ્રીમદ્-આર્યસ્ત્રણના અમુક વખતે અને અમુક સયોગોમાં જ પ્રકટ થવાના પોતિકા પ્રોગ્રામ પ્રમાણે પ્રકટ થવા સુધીના સાતસો વર્ષસુધી વિશ્વમગલ પૃથ્વી પર રહ્યો એમ માનવુ એ કેળવણીના મધ્યાન્હ કાળમા બધ બેસતુ હોય તેમ જણાતુ નથી તેથી તે વાત કોઈ સ્વીકારે નહિ અને એમ થવાથી તેનો હેતુ સિદ્ધ થતો નથી આવી હાસ્ય ઉપજાવનારી કુકલ્પના કરવા કરતા શાસ્ત્રીય વિચાર કરવો તે અનીવ શ્રેયસ્કર છે

શ્રીમહાપ્રભુજીકી વંસાવલી.

કવિત.

શ્રીકૃષ્ણમુખી બાંસુરી બજત સુન સનનનનનનન,
ઉઠત ઘોર સુર ધનનનનન નભ ગજઈ હે. ૧.
શ્રીજમુનાજીકે તીર બહે ત્રિબિધ સમીર,
બલભદ્રજૂ કે બીજને બાછી છબી દિખલાઈ હે. ૨.
મોરમુકુટ લટક બલક મલક લટ ઝૂક રહી,
કુંડલશ્રી ઝલક ફલક કપોલન ઝલકાઈ હે. ૩.
બનમાલ તિલક ભાલ કેશરીશ્રી દિયે આર,
કમલપત્ર ગાલ દેખ કમલની લજ્જઈ હે. ૪.
કાછની ખૂબ કછે લાલ પીતબસન હે રસાલ,
પદુકા ફરહાત દુકૂલ છબિ છાઈ હે. ૫.
મોતિનશ્રી માલ દુલહાર ગરે દીયે ડાર,
બ્યારશેં સુવાસ સબ બ્રીજમેં ફેલાઈ હે. ૬.
કર કકન સુહાય કટ કિંકની ઢરકાય,
પગ પેંજની ઝુંનકાર ચરન કમલન સોભાઈ હે. ૭.
બિદ્રાબિપિન કુજધામ ડોર આપ સુંદરશ્યામ,
અધરનપે મુરલી ધરે મુસકની સુહાઈ હે. ૮.
ગૈયા સગ લિયે બાલ કરત બહોબિધ ખ્યાલ,
રૂપઢો રસાલ પ્યારો નંદકો કન્હાઇ હે. ૯.
શ્રીને ત્રિભગ અગ લાનસુતા બામસગ,
બખકે ઉઠત તરંગ તેજકાંતિ ખૂબ જાઇ હે ૧૦.
તિરછી દે દ્રગ શ્રી કોર ભ્રુકુટીસેં દઇ જોર,
કટાક્ષ કટાર ફેક કામપે ચલાઇ હે. ૧૧.
નખશિખ પ્રકાશપે કોટ કોટ ચદ્ર બાર ડારે,
ભ્રુકુટીકે કમાન કોટિ કામથી તોરાઇ હે. ૧૨.
એસે ત્રિજચંદને આનંદસો મુખારબિદ, મુરલી ગહી,
સમ સુર તાનમાન ભરકે બજઈ હે. ૧૩.

બન્યઇ કર ચ્યાર રસ અધિન ઢરકાય દિયો,
તાહીસેં અચલો પુષ્ટિલીલા બરસાઇ હે. ૧૪.
ચપાચરણ ગુપ્તધામ ભઇ પ્રગઢ,
અનલજ્વાલ મધ્યમેં શ્રીમુકુંદ પોઢે શેષ છાંહ છાઇ હે. ૧૫
સવત્ પધરા પૈંતીસ માસ માધવ ગ્યેકાદશી,
કૃષ્ણપક્ષ વાર રવિ પ્રભુ મુખકમ પ્રકટાઇ હે ૧૬.
બૈશ્વાનરરૂપ દેખ દેવ મુદિત ભયે બિસેખ,
રહે બિમાનન કર અભિશેખ કુસુમન બરખાઇ હે ૧૭.
લછમન ભટ તાત માત એલંમા જ્યુ કહાયે કહાની,
જગ્ય કુલકુલિત અતિ સભ્રમ કરાઇ હે. ૧૮.
દ્વિજકે શિરોમન કુલ પવિત્ર તૈલગ અતુલ,
શાખા તૈત્તરીય ગોત્ર ભારદ્વાજ સહુરાઇ હે. ૧૯
માનુદેહ ધરિ હરિ ભૂતલ જસ ગવાયો ફેરી,
ગૃહસ્થાશ્રમ બ્રહ્મચારી બસ યેહિ ગોત્રાઇ હે ૨૦.
શ્રીબલ્લભ પ્રભુ નામ ધારે શ્રીકૃષ્ણભક્તિકો બિસ્તાર કરે,
રસ પુષ્ટિ બરખાય દૈવી જીવન હરખાઇ હે ૨૧
બેદ શાસ્ત્ર સિદ્ધ કિયે રસના બસાય લિયે,
પાખડ ધર્મ ખડ કિયે બીજે ધ્વધા ફરકાઇ હે. ૨૨
પ્રતાપ હે અમાપ જાકો સુરમુનિ સબ બદન કરે,
શાસ્ત્ર સબે દેત શાખ તેજપુંજ અધકાઈ હે ૨૩
સમ્પ્રદાય બમાન દિયે આચાર્યપદ તિલક કિયે,
પ્રભુરૂપ હે પ્રમાન જાન જસ દુદુભિ ગજાઇ હે ૨૪
મૂલ પ્રચ્છ હે શ્રીવલ્લભ જાકે ફૂલ દોઉ,
તત્ત્વનિધુ પ્રથમ ગોપીનાથ રૂપ મરજાદા સોહાઈ હે ૨૫.
દૂજે પ્રકટ હે લાલ શ્રીબિઠ્ઠલનાથ હે દયાલ,
શ્રીકૃષ્ણરૂપ જનો જીને બાંસુરી બજાઇ હે ૨૬.
શ્રીગોપીનાથકે પુરુષોત્તમ પુત્ર રૂપ હે અનુપ ફેર,
બસ ભયો ગુપ્ત યહ મરજાદા દરસાઈ હે ૨૭
શ્રીબિઠ્ઠલનાથ હે બેનુરૂપ સમ્પ્રદ્ય હે સાત સ્વરૂપ,
સોહ સાત લાલ યહ પુષ્ટિ કહાઇ હે ૨૮

શ્રીગિરિધર ગોવિંદ ઔર બાલકૃષ્ણ ગોકુલપતિ,
રઘુપતિ જદુપતિ ઘનશ્યામ સુખદાઇ હે ૨૯.
યહે શ્રીગિરિધરલાલકો વંસ હે અખંડ મંડ,
તાહિકો વિસ્તાર બહુઅતહી હરખાઇ હે ૩૦.
શ્રીગિરિધરજી કે મુરલીધર તિનકે પ્રકટે દામોદર,
દામોદરજી કે બિકલેશ કેરી દામોદર પરસાઇ હે ૩૧
શ્રીદામોદરજી કે ગિરિધરલાલ તીનકે રઘુનાથલાલ,
તીનકે ગોવિંદ જનકે ગુન ન ગીનાઇ હે ૩૨.
શ્રીગોવિંદજી કે લાલજીનો શ્રીગોકુલ ઓચ્છવજી,
માનો તીનકે શ્રીબ્રિજરત્નજી સૂરત સોહાઈ હે ૩૩
શ્રીબ્રિજરત્નજીકે સાત લાલ પ્રથમ પુરુષોત્તમલાલ,
દૂજે ગોવર્દ્ધનેશ તીજે છગનજી શરણાઇ હે. ૩૪.
ચોથે શ્રીજદુનાથરામ પાંચમે શ્રીદાનીરામ,
છઠે શ્રીબકેલાલ સાતમે રસિક રસ ભરાઇ હે. ૩૫
છઠે જો શ્રીબકેલાલ સો હી પ્રભુ મગનલાલ,
જાકે કુવર શ્રીબ્રિજરત્નલાલ નિરખ નેનાં સિરાઇ હે. ૩૬
શત ઉનીસ બાવન બખાન બિક્રમશક હે પ્રમાન,
ભાદ્રપદશુકલપક્ષમી પ્રભુ પ્રકટે બધાઇ હે ૩૭.
શ્રીમદ્વાપ્રભુજીકો વંસ ગદ્દી સુરત પ્રશસ,
તેરા પરેડી અણતસ અગ્રજા શાખા ગીનાઇ હે ૩૮.
દેખો આજ સુરત શહેર શ્રીબાળકૃષ્ણજીનિધિ હે,
સદા સોત લીલા લહેર ગદ્દી રહી સુહાઇ હે ૩૯
બ્રિજ છાંડ બ્રિજરાજ આપ બિરાજે હો મહારાજ,
દેવિ જીવનકે કાજ બડી પ્રભુતા જનાઇ હે. ૪૦
મોતીબારે પૃથ્વીનાથ અચલ ગદ્દો સેવક માથ,
ગાને બુગ બુગ લીલા ગાથ દાન ચેતરી મનભાઇ હે ૪૧.
મનભાઇ લીલાસાર શ્રીબલ્લિભચરણકો આધાર,
કર પ્યાર ચીકમદાસને રસ બસ લીલા ગાઇ હે ૪૨.

॥ जपसमये स्वरूपध्यानम् ॥

શ્રીમદ્વલ્લિકુમારના પ્રપૌત્ર શ્રીહરિરાયચરણે વિરચિત 'जपसमये स्वरूपध्यान' એ નામના ગ્રંથનું શ્લોકાર્થ તથા ભાવાર્થસહિત ભાષાંતર કરવામાં આવે છે. સાંપ્રતકાલમાં ભગવત્સ્વરૂપમાં આસક્તિ કરાવનારા સાંપ્રદાયિક ગ્રન્થોના ભાષાંતરની ઘણી જરૂર છે. કારણ કે આધુનિક ભાતો પોતાનો ભ્રાંતમતનો પ્રસાર કરી ભાવુક લોકોની સ્વરૂપાસક્તિમાં વિઘ્ન નાખવા ધારે છે, માટે આવા શ્રીહરિરાયજીવિરચિત ગ્રંથો, જે ગ્રંથો બ્રહ્મવાદ અને ભજનાનંદના પ્રતિપાદક છે, જેના અભિપ્રાયો હૃદયગમ છે, તે ગ્રંથોથી સ્વમાર્ગથી પ્રચ્યુતિ થવાનો સંભવ કદાપિ પણ થાય નહીં આવા કરાલકલિમાં પણ સાક્ષાત્ શ્રુતિપ્રતિપાદિત, ફલાત્મક, આનંદાત્મક, ધર્મિસ્વરૂપમાં સદૈવ આસક્તિ બની રહે, ભ્રાંતમતથી ડગી જવાય નહીં, એ જ મુખ્ય ભાષાંતરનો ઉદ્દેશ છે

હવે આ ગ્રંથમાં જપસમયે કયા સ્વરૂપનું ધ્યાન કરવું, તે આપે બતાવ્યું છે. 'रासलीलैकतात्पर्यं' એ શ્રીમદાચાર્યચરણના નામથી શ્રીમદાચાર્યનું તાત્પર્ય સદા સર્વદા રાસલીલામાં છે 'सोऽश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चिता' એ શ્રુતિ પણ લીલાસ્થ પુરુષોત્તમ સાથે આનંદાત્મક, અલૌકિક સકલકામનો ભોગ કરવો એ જ ફલ છે, એમ કથન કરે છે વાસ્તે શ્રીહરિરાયજી પણ આ ગ્રંથમાં મુખ્યત્વે કરીને રાસસ્થસ્વરૂપની ભાવનાનો પ્રકાર આપ સુનિપુણતાથી ફલપ્રકરણાનુકૂલ જણાવે છે આ ગ્રંથનું પ્રયોજન પુષ્ટિમાર્ગીય ભગવદીયોને સર્વાત્મભાવપૂર્વક રાસસ્થસ્વરૂપનો સાક્ષાત્કાર કરાવવો, એ જ છે હવે મૂલગ્રંથ ઉપર લક્ષ આપિયે છિયે

भक्तिमार्गे तापयुक्तक्लेशैर्भगवदर्थकैः ॥
सर्वात्मभावसिद्ध्यर्थं जनः पञ्चाक्षरं जपेत् ॥ १ ॥

શ્લોકાર્થ.—ભક્તિમાર્ગમાં ભગવાન્ માટે થતા તાપસહિત ક્લેશોવડે સર્વાત્મભાવની સિદ્ધિ માટે ભક્તજને પંચાક્ષરનો જપ કરવો

રહસ્ય.—આ એક જ શ્લોકમાં આપે સમગ્ર પુષ્ટિમાર્ગના સિદ્ધાંતનું દર્શન કરાવ્યું છે, તેનું દિગ્દર્શન તેમના જ કૃપાબલથી આપણે કરીયે પુષ્ટિમાર્ગ સ્નેહમાર્ગ છે, તેમાં પ્રભુને મનવામાટે તાપક્લેશની આવશ્યકતા છે क्लिश्यमानान् जनान् दृष्ट्वा कृपायुक्तो यदा भवेत् (તાપક્લેશ પામતા જનોને જોઈને જ્યારે કૃપાયુક્ત પ્રભુ થાય) વળી त्रुटिर्युगायते त्वामपश्यताम् (તમને જોયા વિના એક પલ પણ યુગસમાન લાગે છે), વગેરે વાક્યોથી પુષ્ટિમાર્ગમાં જ્યારે ભગવાન્ માટે તાપ ક્લેશ થાય, ત્યારે જ ભગવદાવિર્ભાવ થાય છે ભગવદર્થક તાપક્લેશ ગોપીજનોએ (શ્રીગોપીજનોએ) ફલપ્રકરણમાં કર્યો છે, અને તે તાપક્લેશથી ભગવત્પ્રાકટ્ય થયું, તે સુપ્રસિદ્ધ જ છે સાક્ષાત્ પૂર્ણપુરુષોત્તમોક્ત ગદ્યમંત્રનું પર્યવસાન પણ તાપક્લેશના ઉદ્ભવમાં જ છે જેમ ગોપીજનોને વેણુનાદના શ્રવણમાત્રથી સર્વત્યાગપૂર્વક તાપક્લેશ વગેરે પ્રાપ્ત થયાં, તેમ જ અત્ર વેણુનાદસ્થાનાપન્ન અર્થસંબંધથી તાપક્લેશોદ્ભવપૂર્વક ભગવદર્થક પ્રયત્ન થાય, અને સર્વાત્મભાવ સિદ્ધ થાય માટે ગદ્યમંત્રના નિષ્કર્ષરૂપ પંચાક્ષરમંત્રનો ઉપદેશ કરવામાં આવે છે. દેહ, ઇંદ્રિય વિગેરેની ફલાનુસંધાન વગર ભગવત્સ્વરૂપમાં પ્રીતિ થવી, તેને સર્વાત્મભાવ કહે છે અલૌકિક, આનંદરસાત્મક નિકુંજનાયકની સાથે રાસાદિકલીલામાં સંપૂર્ણ રીતે અલૌકિક ભાવાશય કરવામાં સર્વાત્મભાવની જરૂર છે, માટે શ્રીહરિરાયજી પ્રથમ શ્લોકમાં સર્વાત્મભાવનું કથન કરે છે

पञ्चाक्षरे तवास्मीति स वै भावः प्रकाशितः ॥
सर्वात्मभावसंसिद्धौ न तत् साधनमुच्यते ॥ २ ॥

શ્લોકાર્થઃ—પંચાક્ષરમા હું તમારો છું, તે ભાવ સારીરીતે પ્રકાશિત કર્યો છે સર્વાત્મભાવની સમ્યક્ સિદ્ધિ થવામા (કેવલ પંચાક્ષર જ) સાધન નથી કહેવાતુ (કિંતુ દૈન્યપૂર્વક પંચાક્ષર સર્વાત્મભાવને સિદ્ધ કરે છે.)

રહસ્યઃ—મોક્ષ કૃષ્ણસ્ય चेत् ध्रुवम् ઇત્યાદિ વાક્યથી પંચાક્ષરપ્રતિપાદિત 'હું તમારો છું' એ જ પુષ્ટિમાર્ગીય મોક્ષ છે (આ પંચાક્ષરમાં ફલાત્મક દાસ્યનું પણ સૂચન છે.) વૃત્રાસુરચરિત્ર શ્લોકી વગેરેમા પણ આનુ પ્રતિપાદન કર્યું છે આ પુષ્ટિમાર્ગીય મોક્ષમા જલે નિમગ્ન જલપાનવત્ એ ન્યાયે કેવલ એકલા જ નહિ, પરતુ સ્વરૂપાનદના અનુભવપૂર્વક રસાત્મક પ્રભુની સાથે સકલેન્દ્રિયથી સર્વકામભોગ કરવો, એ જ આ પુષ્ટિમાર્ગીય મોક્ષની વિલક્ષણતા આ પંચાક્ષરમા સૂચવી છે કેવલ સાધનમા જ નિષ્ઠ હોય, દૈન્યતો આવિર્ભાવ મુદ્દલે ન હોય, અને જપ કરે તો તેનાથી કઈ સર્વાત્મભાવ સિદ્ધ થાય જ નહિ ફલાત્મક દૈન્યની ઘણી જરૂર છે, માટે આપ ત્રીજા શ્લોકમાં આજ્ઞા કરે છે કે—

किन्तु तज्जपतो दैन्यं तदीयत्वविभावनात् ॥
तदेवानुग्रहद्वारा सर्वभावप्रसाधकम् ॥ ३ ॥

શ્લોકાર્થઃ—પરતુ તદીયપણાની ભાવનાથી જપ કરે તો દૈન્ય પ્રાપ્ત થાય, અને તે દૈન્ય જ ભગવદનુગ્રહદ્વારા સર્વાત્મભાવનું સાધક છે

રહસ્યઃ—પંચાક્ષરના જપથી તદીયપણું એટલે 'હું તેનો જ છું' એમ ભાવના થવાથી દૈન્યની પ્રાપ્તિ થાય છે, અને તે દૈન્ય જ ભગવત્પ્રાપ્તિ કરાવવામા અને સર્વાત્મભાવની સિદ્ધિ કરાવવામા સાધનરૂપ થઈ પડે છે મતલબ કે દીનતાપૂર્વક પંચાક્ષરનો જપ કરવાથી સર્વાત્મભાવ સિદ્ધ થાય છે. એમ આ બે શ્લોકથી સિદ્ધ થયું. સર્વાત્મભાવ સાધ્યસ્વરૂપાનદ છે સર્વાત્મભાવવાલા ભગવદીયને જ ભાવાત્મક સ્વરૂપનો આનદ મલે છે વળી આ સર્વાત્મભાવવાલા ભગવદીયને તો વિરહદશા સદા સર્વદા રહ્યા કરે છે. અને તે વિરહદશામા અન્ય સર્વ વિસ્મૃત થઈ કેવલ ભગવત્સગમાકાક્ષા જ રહ્યા કરે છે. જે સર્વાત્મભાવની ઉદ્ધવસદૃશ જ્ઞાની ભક્ત પણ પ્રશસા કરે છે જુઓ સર્વાત્મભાવોઽધિકૃતો વિરહેગ વગેરે વાક્યો. વળી સર્વાત્મભાવ પણ સાધનસાધ્ય નથી, એ તો જ્યારે પ્રભુ કૃપા કરીને આપે ત્યારે જ મલે. માટે વેદાતસૂત્રમાં પ્રદાનવત્ એમ વ્યાસજી આજ્ઞા કરે છે પ્રમેયબલે કરીને પ્રભુ જ્યારે દાન કરે ત્યારે ત્યારે જ સર્વાત્મભાવ મલે છે આવો શ્રીહરિરાયચરણનો ત્રીજા શ્લોકમા આશય છે આ સર્વાત્મભાવના વિશેષ વિવરણના જીજ્ઞાસુઓએ શ્રીહરિરાયજીવિરચિત સ્વતત્ર 'સર્વાત્મભાવનિરૂપણ' ગ્રથ અવલોકવો.

વિશિષ્ટ છે ફરીથી શ્રીભાગવતાર્થપ્રકરણના પ્રારંભમા પણ એમ જ નિરૂપણ છે કે—[૧]નિરંતર પરમાનંદસ્વરૂપ, દશલીલાયુક્ત શ્રીકૃષ્ણને, વગેરે તે પુરુષોત્તમ કોઇવાર દ્વિભુજરૂપે (બે હસ્ત પ્રકટ કરીને) કોઇવારે ચતુર્ભુજરૂપે (ચાર હસ્ત પ્રકટ રાખીને) બૃહદ્વનમા, વૃન્દાવનમા અથવા તો વ્યાપિવૈકુંઠ વગેરેમા તે તે ભક્તો સાથે ક્રીડા કરતા નિરંતર વિજય પામે છે બ્રહ્મવૈવર્તપુરાણમા કહ્યુ છે કે,—' પોતેજ પરિપૂર્ણ પુરુષોત્તમ શ્રીકૃષ્ણ વૈકુંઠમાં છે અને ગોકુલમા પણ છે. વૈકુંઠમા ચતુર્ભુજ છે અને ગોકુલમા દ્વિભુજ છે. ' એટલા માટે જ પરમાનંદ છે શ્રુતિ કહે છે કે ' જેતે રસસ્વરૂપ છે ' ' આ આનંદમય આત્મા પ્રત્યે ઉપસંક્રમણ કરે છે ' વ્યાસસૂત્ર કહે છે કે,— ' ' ફરી ફરીને કહેલુ હોવાથી પરમાત્મા આનંદમય છે ' ' વેદસ્તુતિ વર્ણવે છે કે,—' આ સ્થળે પુરુષનો અન્વય છે, જે અન્નમય, પ્રાણમય, મનોમય અને વિજ્ઞાનમયથી આત્મસ્વરૂપે બિરાજે છે (આનંદમય પ્રભુ સર્વથી ભીતર છે અન્નમયાદિ બાહાર છે) આની રીતે વેદ, તત્વસૂત્ર અને શ્રીમદ્ભાગવતની વેદસ્તુતિનુ તાત્પર્ય પણ પ્રભુને આનંદમય જ કેહવાનુ છે આ બધુ ભાષ્ય અને સુબોધિનીજીમા સ્પષ્ટ છે. શ્રીમહાપ્રભુજી પણ એટલા વારતે જ આજ્ઞા કરે છે કે,—' [૨]આત્માનંદરૂપી સમુદ્રમા સ્થિત એવા શ્રીકૃષ્ણનુ સ્મરણ કરવુ ' આ પ્રમાણે મુક્તાવલીમા કહ્યુ છે વેદ કહે છે કે પુરુષોત્તમની ઇચ્છા થાય છે કે 'હુ અહુરૂપે થાઉ આ બહુત્વ ભવનેચ્છાને લઈને સકલ પદાર્થનુ કારણ ભૂત એનુ બીજુ રૂપ પ્રકટ થાય છે તે રૂપમા ભગવદ્ધર્મમાત્મક સત્ત્વગુણથી આનંદારા કઇક સહેજ સાજ ઢંકાયલા જેવો થઈ જાય છે (મુદ્દલ ઢંકાઈ જાય છે એમ નહિ પણ કઇક નહિ જેવો ઢંકાય છે બાકી આનંદરૂપ તો કહેવાય જ) ત્યારે આ રૂપને **અક્ષરબ્રહ્મ** કહેવામા આવે છે

આ અક્ષરબ્રહ્મ બે જાતના અધિકારિયોને બે રૂપે સ્ફુરે છે અધિકારી બે છે ૧ ભક્ત, અને ૨ જ્ઞાની ભક્તોને શ્રીપુરુષોત્તમના ધામરૂપે અથવા વ્યાપિવૈકુંઠરૂપે વગેરેરૂપે સ્ફુરે છે ' તે [૩]અક્ષર તથા અવ્યક્ત કહેવાય છે કેટલાકો તેને પરમગતિરૂપ માને છે ' જેને પામીને પાછુ વળવુ પડતુ નથી, તે મારું પરમ ધામ છે આ પ્રમાણે શ્રીગીતાનુ વાક્ય છે શ્રીમદ્ભાગવત પણ ઉપદેશે છે કે,—' [૪]ભગવાને પોતે પોતાના તમથી પર એવા લોકને ગોપોને દેખાડયો જે સત્યસ્વરૂપ, જ્ઞાન રૂપ, અનંત, બ્રહ્મ, જ્યોતિસ્વરૂપ અને સનાતન છે ' માટે જ નિબંધમા પણ શ્રીઆચાર્યચરણ આજ્ઞા કરે છે કે,—'(જ્યારે પુરુષોત્તમ પોતે પ્રકટ થાય છે ત્યારે અક્ષર પણ બહુ પ્રકારે થાય છે) ' [૫]જ્યારે વૈકુંઠવાસીરૂપે હરિની સ્ફૂર્તિ થાય છે ત્યારે તેનો ઉદ્ભવ લોકરૂપે થાય છે (જીવજડાકારે પ્રકટ થાય છે માટે જ વૈકુંઠવાસી લોક મુક્ત છે) ભક્તને પ્રત્યક્ષ થનારા આ અક્ષરબ્રહ્મમા ભગવાનના કેટલાક ગુણ પ્રકટ પણ હોય છે અને કેટલાક ગુપ્ત પણ રહે છે (અર્થાત કેટલાક ગુણોનો તિરોભાવ થાય છે આ સ્થળે તિરોભાવ તો અજ્ઞાનને લઈને થાય છે તો બ્રહ્મ સર્વજ્ઞ છે તેમા તિરોભાવ ન જ સંભવે, એવી શંકા ન કરવી કેમકે [૬]આવિર્ભાવ અને તિરોભાવ એ બે પ્રભુની

---

૧ શ્રીકૃષ્ણ પરમાનન્દ દશલીલાયુત સદા ।
૨ પરિપૂર્ણતમ કૃષ્ણો વૈકુણ્ઠે ગોકુલે સ્વયમ્ । ચતુર્ભુજશ્ચ વૈકુણ્ઠે ગોકુલે દ્વિભુજ સ્વયમ્ ।
૩ રસો વૈ સ । એતમાનન્દમયમાત્માનમુપસઙ્ક્રામતિ ।
૪ આનન્દમયોઽભ્યાસાત્ ।
૫ પુરુષવિધોઽન્વયોઽથ ચરમોઽક્ષરમયાદિષુ ।
૬ આત્માનન્દસમુદ્રસ્થ કૃષ્ણમેવ વિચિન્તયેત્ ।
૭ બહુ સ્યામ્પ્રજાયેય ।
૮ અવ્યક્તોઽક્ષરમિત્યુક્તસ્તમાહુ પરમા ગતિમ્ । ય પ્રાપ્ય ન નિવર્તન્તે તદ્ધામ પરમ મમ ।
૯ દર્શયામાસ લોકં સ્વ ગોપાના તમસ પરમ્ । સત્ય જ્ઞાનમનન્ત યદ્ બ્રહ્મ જ્યોતિ સનાતનમ્ ।
૧૦ પ્રભુરત્ર હરે સ્ફૂર્તૌ લોકરૂપેણ તદ્ભવેત્ । ૧૧ આવિર્ભાવતિરોભાવશક્તી વૈ સુરવૈરિણ ।

पञ्चाक्षरे तवास्मीति स वै भावः प्रकाशितः ॥
सर्वात्मभावसंसिद्धौ न तत् साधनमुच्यते ॥ २ ॥

શ્લોકાર્થઃ—પંચાક્ષરમા હું તમારો છું, તે ભાવ સારીરીતે પ્રકાશિત કર્યો છે સર્વાત્મભાવની સમ્યક્ સિદ્ધિ થવામાં (કેવલ પંચાક્ષર જ) સાધન નથી કહેવાતુ (કિંતુ દૈન્યપૂર્વક પંચાક્ષર સર્વાત્મભાવને સિદ્ધ કરે છે.)

રહસ્યઃ—મોક્ષ. કૃષ્ણસ્ય ચેતૂ ધ્રુવમ્ ઇત્યાદિ વાક્યથી પંચાક્ષરપ્રતિપાદિત 'હું તમારો છું' એ જ પુષ્ટિમાર્ગીય મોક્ષ છે (આ પંચાક્ષરમાં ફલાત્મક દાસ્યનું પણ સૂચન છે.) વૃત્રાસુરસ્તુતિ શ્લોકી વગેરેમા પણ આનુ પ્રતિપાદન કર્યું છે આ પુષ્ટિમાર્ગીય મોક્ષમા જલે નિમગ્ન જલપાનવત્ એ ન્યાયે કેવલ એકલા જ નહિ, પરતુ સ્વરૂપાનંદના અનુભવપૂર્વક રસાત્મક પ્રભુની સાથે સકલેંદ્રિયથી સર્વકામભોગ કરવો, એ જ આ પુષ્ટિમાર્ગીય મોક્ષની વિલક્ષણતા આ પંચાક્ષરમા સૂચવી છે કેવલ સાધનમા જ નિષ્ઠ હોય, દૈન્યનો આવિર્ભાવ મુદ્દલે ન હોય, અને જપ કરે તો તેનાથી કદી સર્વાત્મભાવ સિદ્ધ થાય જ નહિ ફલાત્મક દૈન્યની ઘણી જરૂર છે, માટે આપ ત્રીજા શ્લોકમા આજ્ઞા કરે છે કે—

किन्तु तज्जपतो दैन्यं तदीयत्वविभावनात् ॥
तदेवानुग्रहद्वारा सर्वभावमसाधकम् ॥ ३ ॥

શ્લોકાર્થઃ—પરંતુ તદીયપણાની ભાવનાથી જપ કરે તો દૈન્ય પ્રાપ્ત થાય, અને તે દૈન્ય જ ભગવદનુગ્રહદ્વારા સર્વાત્મભાવનુ સાધક છે

રહસ્યઃ—પંચાક્ષરના જપથી તદીયપણું એટલે 'હું તેનો જ છું' એમ ભાવના થવાથી દૈન્યની પ્રાપ્તિ થાય છે, અને તે દૈન્ય જ ભગવત્પ્રાપ્તિ કરાવવામા અને સર્વાત્મભાવની સિદ્ધિ કરાવવામા સાધનરૂપ થઈ પડે છે મતલબ કે દીનતાપૂર્વક પંચાક્ષરનો જપ કરવાથી સર્વાત્મભાવ સિદ્ધ થાય છે. એમ આ બે શ્લોકથી સિદ્ધ થયું. સર્વાત્મભાવ સાધ્યસ્વરૂપાનંદ છે. સર્વાત્મભાવવાલા ભગવદીયને જ ભાવાત્મક સ્વરૂપનો આનંદ મલે છે. વળી આ સર્વાત્મભાવવાલા ભગવદીયને તો વિરહદશા સદા સર્વદા રહ્યા કરે છે અને તે વિરહદશામાં અન્ય સર્વ વિસ્મૃત થઈ કેવલ ભગવત્સમાગમાકાક્ષા જ રહ્યા કરે છે જે સર્વાત્મભાવની ઉદ્ધવસદૃશ જ્ઞાની ભક્ત પણ પ્રશંસા કરે છે જુઓ સર્વાત્મમાર્ગોદ્ધિકૃતો વિરહેણ વગેરે વાક્યો. વળી સર્વાત્મભાવ પણ સાધનસાધ્ય નથી; એ તો જ્યારે પ્રભુ કૃપા કરીને આપે ત્યારે જ મલે. માટે વેદાંતસૂત્રમાં પ્રદાનવત્ એમ વ્યાસજી આજ્ઞા કરે છે પ્રમેયબલે કરીને પ્રભુ જ્યારે દાન કરે ત્યારે ત્યારે જ સર્વાત્મભાવ મલે છે આવો શ્રીહરિરાયચરણનો ત્રીજા શ્લોકમા આશય છે. આ સર્વાત્મભાવના વિશેષ વિવરણના જીજ્ઞાસુઓએ શ્રીહરિરાયજીવિરચિત સ્વતંત્ર 'સર્વાત્મભાવનિરૂપણ' ગ્રંથ અવલોકવો.

પડશે હવે 'દુ ખ નથી' એટલે દુ ખનો તિરોભાવ છે, અર્થાત્ દુ ખપણુ બ્રહ્મમાં ગુપ્ત રહે છે! દુઃખની પણુ બ્રહ્મમા સત્તા!! આ શકાનો નિરાસ આ પ્રમાણે છે દુ ખ માયિક (માયાનો બનેલો) પદાર્થ છે, વાસ્તે દુ ખ એ કાંઈ વસ્તુ જ નથી. દુ ખ એ મિથ્યા છે હવે દુ ખ જ જ્યા મિથ્યા એટલે તેનો અભાવ પણુ મિથ્યા જ હોય, એમા આશ્ચર્ય શુ! માટે દુ ખના અભાવને મિથ્યા સ્વીકારવો. વાસ્તે જ કેટલાક નિર્ધર્મવાદિયોએ સ્થૂલાદ્યભાવો મિથ્યા માન્યા છે એવુ ન માને તો જેનો અભાવ લેવામા આવે તેનુ હોવાપણુ તો સ્વીકારશો જ, અને તેમ થતા અભાવનિરૂપિત દ્વૈતપણું પ્રાપ્ત થશે આપણે અદ્વૈતને લક્ષિયે છિયે, દ્વૈતનો તો નિષેધ કરિયે છિયે આ ઉપરથી નિશ્ચય કરવાનો કે દુ ખાદિધર્મો માયાના છે, અને ફક્ત બ્રાત પુરૂષોને જ તેની પ્રતીતિ થાય છે, માટે તે મિથ્યા છે, એટલે તેનો અભાવ પણુ અત્યત મિથ્યા હોય જ. જેમ વધ્યાનો પુત્ર હોય જ નહિ, તો તેનો અભાવ કયાથી જ હોય? તેમ દુ ખ હોય જ નહિ, તો તેનો અભાવ તે વળી કેમ મનાય? શ્રુતિમા કહેલા બ્રહ્મધર્મોનો અભાવ સ્વીકારવો, તે તિરોભાવરૂપ જ સ્વીકારવો ઉપરની સર્વે યુક્તિ અને પ્રમાણોને અનુસરીને તિરોભાવ સ્વીકારવો, એટલે કોઈ પણુ દોષ પ્રાપ્ત થશે નહિ .

ઉપર કહ્યા પ્રમાણે જ્ઞાનિયોને પ્રત્યક્ષ થતા બ્રહ્મની સર્વે શક્તિયો તિરોહિત (ગુપ્ત) થયલી છે અને તે બ્રહ્મ સર્વે વ્યવહારથી પણ અતીત છે જ્ઞાનિયોને પ્રત્યક્ષ થતુ આ એક બ્રહ્મનુ સ્વરૂપ છે આ સ્વરૂપનુ વર્ણન શ્રીમદ્ભગવદ્ગીતામા છે "[1]નિર્દેશ કરવાને અયોગ્ય, અવ્યક્ત, સર્વત્ર વ્યાપ્ત, અચિંત્ય, કૂટસ્થ, અચલ, ધ્રુવ એવા અક્ષરની જે ઉપાસના કરે છે" આ વાક્યમા જ્ઞાનીયોને પ્રત્યક્ષ થતા અક્ષરનું સ્વરૂપ સ્પષ્ટ કહ્યું છે હવે પુરૂષોત્તમશબ્દ કહેનારનુ શ્રીકૃષ્ણ-સ્વરૂપ એક બીજુ અક્ષરસ્વરૂપ, જે જ્ઞાની અને ભક્ત એ બન્નેને જુદેજુદે રૂપે જણાય છે માટે અક્ષર બે પ્રકારનુ મળ્યુ પુરુષોત્તમ અને બે અક્ષર મળી ત્રણ સ્વરૂપો થયા

पूर्णपुरुषोत्तमानन्दरसात्मकश्रीकृष्ण.
|
गणितानन्दाक्षरब्रह्म.
|
———————————————————
|
मानगम्य,
(भगवद्देहस्वरूप)
ज्ञानिगम्य
(निर्धर्मकस्वरूप)

હવે તે જ પુરુષોત્તમનુ એક સ્વરૂપ અતર્યામિસજ્ઞક છે તે સ્વરૂપ નિયમન વગેરે સર્વ કાર્યની સિદ્ધિ માટે સૂર્યમડલાદિમા રહેલુ છે વળી પૃથ્વીના અધિદેવાદિમા પણુ તે સ્વરૂપ છે શ્રુતિ ઉપદેશે છે કે,—'જે[2] સૂર્યમા રહે છે, સૂર્યથી અતર છે, જેને આદિત્ય જાણતો નથી, જેનુ સૂર્ય શરીર છે, જે આદિત્યની અદર રહી નિયમન કરે છે, આ તારો **અંતર્યામી** અમૃત આત્મા છે ભેદવ્યપદેશાચ્ચાન્યઃ એ બ્રહ્મસૂત્રમા પણુ આ જ ભાવાર્થ કહ્યો છે "જે[3] આ લોકને અને પરલોકને વળી સર્વભૂતોને અદર રહી નિયમમા રાખે છે" આવી રીતે ઉપક્રમ કરીને

---

१ ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्त पर्युपासते सर्वत्रगमचिन्त्य च कूटस्थमचल ध्रुवम् ॥

२ य आदित्ये तिष्ठन्नादित्यादन्तरो, यमादित्यो न वेद, यस्यादित्य शरीर, य आदित्यमन्तरो यमयत्येष, स आत्मा अन्तर्याम्यमृत ॥

३. य इम च लोक पर च लोक सर्वाणि भूतान्यन्तरो यमयति ।

આગળ શ્રુતિ કહે છે કે,—'[૧]જે પૃથ્વીમાં રહે છે, પૃથ્વીની અંદર છે, પૃથ્વી જેને જાણતી નથી, જેનુ પૃથ્વી શરીર છે, જે પૃથ્વીને અદર રહી નિયમમાં રાખે છે, આ તારો અંતર્યામી અમૃત આત્મા છે.' આ શ્રુતિ છે '[૨]અધિદેવાદિમા અતર્યામિ છે તે ભગવત્સ્વરૂપ જ છે, ક્રમક્રમ તે ધર્મો વિશેષ કરીને ભગવાન્માં જ બતલાવાય છે' આ બ્રહ્મસૂત્ર પણ ઉપરનો અર્થ જ સૂચવે છે આ પુરુષ શબ્દથી કહેવાય છે '[૩]વિષ્ણુના પુરુષ નામના ત્રણરૂપ જાણે છે ૧. પહેલુ રૂપ મહાનને સરજનાર છે ૨ બીજું રૂપ બ્રહ્માડમા સ્થિત છે. ૩ ત્રીજુ રૂપ સર્વભૂતમા રહેલુ છે. આ ત્રણેને જાણીને મનુષ્ય મુક્ત થાય છે. આ વાક્ય પણ ઉપરના કથનનું આધારભૂત છે'

આ અતર્યામિસ્વરૂપ સર્વ મત્સ્યાદિ લીલાવતારોનુ મૂલ છે. '[૪]મહાન્ પુરુષના લીલાવતારોને' વગેરે દ્વિતીયસ્કધના વાક્યો તેના સાક્ષીભૂત છે વળી આ લીલાવતારો કોના છે, એમ સશય થતા શ્રીમદાચાર્યચરણ શ્રીસુબોધનીજીમા વ્યાખ્યાન કરે છે કે,—જે મહાન્ પુરુષ બ્રહ્માડથી અધિક છે, અતર્યામી છે, જે દ્વિતીયધ્યાનમા વર્ણવેલા છે, તેના અવતારો છે [૫]દ્વિતીયધ્યાન તો કેચિત્ એ શ્લોકમા દર્શાવ્યુ છે એ શ્લોકનું વ્યાખ્યા ન કરતા મહાપ્રભુ આજ્ઞા કરે છે કે,-પુરુષથી જુદા રૂપને અધિકાર્ય જેજે છે વળી તે રૂપ જુદુ છે, તો પણ પુરુષાકાર છે, (હૃદયમાં) વસે છે, (તે) તૃતીયપુરુષ છે આ પ્રમાણે (પુરુષોત્તમનુ '[૬]તૃતીયસ્વરૂપ સર્વભૂતમા સ્થિત છે' એ રથલે પણ અતર્યામિસ્વરૂપ જ સૂચવ્યું વાસ્તે જ [૭]યત્રોધતઃ એ શ્લોકના આભાસમા અન્તર્યામિસ્વરૂપમા, [૮]પ્રાદેશમાત્ર એ શ્લોકમા નિરૂપણ કરેલા ભગવત્સ્વરૂપના જ દશ અવતારો કહેવાય છે, એમ સુબોધિનીજીમાં કહ્યુ છે '[૯]આ અવતારો તો પુરુષની અશકલાઓ છે (બરી રીતે)ભગવાન્ તો શ્રીકૃષ્ણ પોતે જ છે' આ શ્લોકમા 'પુરુષ' શબ્દથી અતર્યામી જ કહ્યા છે એ શ્લોકનું વ્યાખ્યાન 'પુરુષ એટલે નારાયણ, બ્રહ્માડસ્વરૂપના આરો કલાઓ છે,' એવુ કરવામા આવેલું છે માટે પણ પુરુષશબ્દથી અતર્યામી જ લેવા એટલા માટે જ શ્રુતિમાં પણ '[૧૦]ય આદિત્યે એ

---

૧ ય પૃથિવ્યા તિષ્ઠન્ પૃથિવ્યા અન્તરો ય પૃથિવી ન વેદ યસ્ય પૃથિવી શરીર ય પૃથિવીમન્તરો યમ યસ્યષ સ આત્મા અન્તર્યામ્યમૃત ॥

૨ અન્તર્યામ્યધિદૈવાદિષુ તદ્ધર્મવ્યપદેશાત્ ॥

૩. વિષ્ણોસ્તુ ત્રીણિ રૂપાણિ પુરુષાખ્યાન્યથો વિદુ । પ્રથમ મહત સ્રષ્ટૃ દ્વિતીય ત્વણ્ડસશ્રિતમ્ ॥ તૃતીય સર્વભૂતસ્થ તાનિ જ્ઞાત્વા વિમુચ્યતે ॥

૪ લીલાવતારાન્ પુરુષસ્યભુવઃ ॥

૫ કેચિદ્દેહસ્થમાત્મનોવકાશે પ્રાદેશમાત્ર પુરુષ વસન્તમ્ । ચતુર્ભુજ કજ્જરથાઙ્ગશઙ્ખગદાધર ધારણયા સ્મરન્તિ ॥ અર્થ —કેટલાકો પોતાના દેહના અદર હૃદયાવકાશમાં વસતા પુરુષને ધારણાવડે સ્મરે છે તે પુરુષ પ્રાદેશમાત્ર છે, ચતુર્ભુજ છે, કમલ, ચક્ર, શખ, ગદાને ધારણ કરેછે

૬ તૃતીય સર્વભૂતસ્થમ્ ॥

૭ યદોદધાવ શિતિલોત્તરણાય બિભરત્ક્ષૌર્ી તનુ સકલસત્ત્વમર્યામનન્ત ॥ આ શ્લોક દ્વિતીયસ્કધના ૭ મા અધ્યાયમાં છે અર્થ —જે રથલે પૃથ્વીના ઉદ્ધાર માટે ઉદત થયેલા અને વરાહનુ શરીર ધારણકરનારા અનંત વગેરે

૮ આ શ્લોક પહેલા નોટમાં આપ્યો છે

૯ એતે ચાંશકલાઃ પુસ કૃષ્ણસ્તુ ભગવાન્સ્વયમ્ ॥

૧૦ આ શ્રુતિ પહેલા આપી છે

ઠેકાણે અતર્યામિનું નારાયણરૂપે સ્મરણ છે જુઓ "સૂર્યના[૧] મંડલના મધ્યમા સ્થિત અને કમલાસન ઉપર ઉપવિષ્ટ થયલા એવા નારાયણનુ સર્વદા ધ્યાન કરવુ વળી તે નારાયણનું સ્વરૂપ કેવુ છે? બાજુબંધ ધારણ કરનારા, મકરાકૃત કુંડલને ધારણ કરનારા, કિરીટ અને હાર ધરનારા, સુવર્ણમય શરીરવાળા, શંખચક્રને ધારણ કરનારા, નારાયણનું ધ્યાન કરવુ" આ ઉપરથી સિદ્ધ થાય છે કે, પુરુષોત્તમનુ અંતર્યામિસંજ્ઞાવાળુ એક બીજુ સ્વરૂપ છે. અને સર્વે અવતારો પણ તે જ સ્વરૂપના છે એતેં ચાંશકલા એ વાક્યથી અક્ષરબ્રહ્મમાંથી જે અંતર્યામિયોનુ નીકળવુ કહ્યું; તે આ મુખ્ય અંતર્યામિના અંશ છે, એમ સમજવુ તેમાં આનંદ મુખ્ય છે જીવની માફક દરેક શરીરે શરીરે જુદા છે નિયમને નિયમમા રાખવાવાળા છે. જે શરીરમા રહે છે, તે શરીરમા સ્થિત જીવને જ નિયમમા રાખે છે જડ, જીવ, અંતર્યામિમા અનેક અંશ જ પ્રકટ છે તત્ત્ત સમન્વયાત્ એ સૂત્રમા પણ આ જ કહ્યા છે

હવે અહીંથી આરંભિને ભગવાનના લીલાવતારો અને ગુણાવતારોનુ સ્વરૂપ વિસ્પષ્ટ કરીયે છિયે "વિશુદ્ધ[૨] સત્ત્વવાળુ તારુ ધામ શાંત છે" સત્ત્વ[૩] જેની પ્રિય મૂર્તિ છે" "આપ[૪] સ્થિતિમા વિશુદ્ધ સત્ત્વનો આશ્રય કરો છો" વગેરે વાક્યોથી પ્રાકૃત (લૌકિક) સત્ત્વથી ઉતર એક ભગવદ્ધર્મોત્મક સત્ત્વ છે. આવી જ રીતે પ્રાકૃત રજોગુણ તમોગુણથી ભિન્ન ભગવદ્ધર્મરૂપ રજોગુણ તમોગુણ પણ છે વિશુદ્ધસત્ત્વ તવ ધામ શાન્ત એ શ્લોકના સુબોધિનીજીમા સત્ત્વ, રજ., તમ, એ ત્રણે ગુણ અપ્રાકૃત પણ છે, એમ નિરૂપણ કર્યું છે વળી '[૫]સત્ત્વગુણ, રજોગુણ, તમોગુણ એ ત્રણે ગુણો નિર્ગુણ ભગવાનના છે" આ શ્લોકમા ત્રણે ગુણોને ભગવદ્ગુણ કહ્યા છે સુબોધિનીજીમા પણ તેને અનુસરીને જ વ્યાખ્યાન છે હવે તેમા અપ્રાકૃત સત્ત્વગુણ તો પોતે કરવા ઇચ્છેલું કાર્ય મત્સ્ય વગેરે આકૃતિ ધારણ કરીને કરે છે જેમ અગ્નિ લોહના ગોળામા પ્રકટ થઈ તે રૂપે કાર્ય કરે છે તેમ, તે તે આકૃતિયોમા પ્રકટ થઈ તે તે કાર્ય કરે છે. આ વિશુદ્ધસત્ત્વરૂપ શરીરમા જગતનું પોષણ કરવાની ઇચ્છાએ પ્રભુ જ્યારે રહે છે, ત્યારે વિષ્ણુ એ સંજ્ઞાને પ્રાપ્ત કરે છે જેમ તપેલા લોહાના ગોળાને અગ્નિ જ કહેવામા આવે તેમ તે સત્ત્વગુણાવતાર તે વિષ્ણુ છે, વળી અપ્રાકૃત રજોગુણમા વહ્નિ-અયોગોલકન્યાયે પ્રવેશ કરીને બ્રહ્મા બને છે. અપ્રાકૃત તમોગુણ રૂપી વિગ્રહમા વહ્નિ-અયોગોલકન્યાયે પ્રવેશે ત્યારે તે શિવ[૬]શબ્દથી બોલખાય છે આ ત્રણે ગુણાવતારો છે તેમના દેહ લૌકિક નથી, પણ અલૌકિક છે, છતા પ્રાકૃત સત્ત્વાદિગુણત્રયના નિયામક હોવાથી સગુણ કહેવાય છે 'સત્ત્વ,[૭] રજ, તમ એ ત્રણે પ્રકૃતિના ગુણો છે, તેનાથી યુક્ત પર પુરુષ છે' વગેરે પ્રમાણથી સિદ્ધ પ્રાકૃત સત્ત્વાદિયો પ્રથમ કહેલા ભગવદ્ધર્મોત્મક સત્ત્વાદિથી ભિન્ન છે અને તેના નિયામક વિષ્ણુ, બ્રહ્મા અને શિવ હોવાથી તે ત્રણે સગુણ છે માટે જ પુરાણાદિમા પરબ્રહ્મના ધર્મત્રણા તરીકે તેમની સ્તુતિ થાય છે કેમકે અંશિકૃષ્ણ સાથે તેમનો અભેદ છે આમા તફાવત આટલો છે ત્રણે અવતારો જો કે છે તો ગુણાવતારજ, પરંતુ સત્ત્વાત્મક વિષ્ણુમા ચતુર્ભુજ વગેરે આકારે,

---

૫ ધ્યેય સદા સવિતૃમંડલમધ્યવર્તી નારાયણ સરસિજાસનસન્નિવિષ્ટ ॥ કેયૂરવાન્ મકરકુંડલવાન કિરીટી હારી હિરણ્મયવપુર્ધૃતશંખચક્ર ॥

૬ વિશુદ્ધસત્ત્વં તવ ધામ શાન્તં।

૭ સત્ત્વં યસ્ય પ્રિયા મૂર્તિ ॥

૧ સત્ત્વં વિશુદ્ધ ભવતે ભવાન્ સ્થિતૌ ॥ ૨ સત્ત્વ રજસ્તમ ઇતિ નિર્ગુણસ્ય ગુણાસ્ત્રયઃ ॥

૧ ભગવાનના તમોગુણાવતાર શિવને પૂર્ણપુરુષોત્તમરૂપ આચાર્યના ગુરુ કહેવાનુ સાહસ શુ જેવુ તેવુ છે? ૨ સત્ત્વ રજસ્તમ ઇતિ પ્રકૃતેર્ગુણાસ્તૈર્યુક્ત પર પુરુષ ।

પીતાંબર, વનમાલા વગેરે ચિન્હો હોવાથી, આદિપુરુષોત્તમના ઘણા ધર્મો પ્રકટ હોવાથી શિવા દિથી કરતા ઉત્કૃષ્ટ છે માટે જ શ્વેતાસિ તત્ર વગેરે ભાગવતમા કહ્યુ છે

આટલા બધા વિવેચનથી નિષ્કર્ષ આ નિકળે છે. મૂલસ્વરૂપના ચાર રૂપ છે તેમા એક તો પુરુષોત્તમસ્વરૂપ શ્રીકૃષ્ણશબ્દવાચ્ય બીજુ અક્ષરસ્વરૂપ તે અક્ષર પ્રથમ કહ્યા મુજબ બે પ્રકારનુ એક અંતર્યામિરૂપ આ પ્રમાણે ચાર જાણવા.

(पूर्णपुरुषोत्तम) श्रीकृष्ण.

भक्तगम्याक्षरस्वरूप (भगवद्रूहरूप)	ज्ञानिगम्याक्षरस्वरूप. (निर्ब्रह्मक)	अन्तर्यामिस्वरूप (सर्वावतारमूल)

આ પ્રમેય અલૌકિક છે, વેદાંતપ્રતિપાદ્ય છે, ભગવત્કૃપા હોય તો જ મળે તેવુ છે, તે મે મારી બુદ્ધિ પ્રમાણે બતાવ્યુ વિશેષ જીજ્ઞાસા હોય તો ભાષ્ય, સુબોધિની, નિબંધ, વિદ્વન્મંડન વગેરે ગ્રંથો જોવા વધારે લખવાથી શુ

સર્વોપરિ વેદાદિશાસ્ત્રે પ્રતિપાદિત પરમકાષ્ઠાપન્ન વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે
પરબ્રહ્મપુરુષોત્તમ કૃષ્ણનુ ધામ અક્ષરબ્રહ્મ ગણિતાનંદ છે.
જગત્, જીવ, અંતર્યામી, અક્ષર ઇત્યાદિનાં નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ બ્રહ્મ કૃષ્ણ પરમાત્મા જ છે.

આ સ્થલે 'પ્રમેયરત્નાર્ણવ'માં 'મુલસ્વરૂપવિવેક' સંપૂર્ણ થાય છે

સૂચના — ગયા અંકના ૨૫ મે પાને 'કૃષ્ણ' શબ્દનો અર્થ 'પૃથ્વી' કરવામાં આવ્યો છે, તે સૂંઘાની સત્તાવાચક સેરો મત લેવો કે કૃષ્યશબ્દનો અર્થ સદાનંદ.

સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાન્તો.

૧ જગત્ સત્ય છે,

૨ જગત્, જીવ, અંતર્યામી, અક્ષર ઇત્યાદિનાં નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ
પ્રભુ કૃષ્ણ પરમાત્મા જ છે

૩ એ અવિદ્યાથી કલ્પેલો અહન્તામમતાત્મક સંસાર મિથ્યા છે.

૪ જીવ અણુ છે, શુદ્ધ નિર્ગુણ પ્રભુનો અંશ છે, વ્યાપક નથી

૫ પરપ્રભુ પુરુષોત્તમ કૃષ્ણનું ધામ અક્ષર પ્રભુ સન્નિધાન છે.

૬ સર્વોપરિ વેદાદિશાસ્ત્રે પ્રતિપાદિત પરમકાષ્ઠાપન્ન વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે.

૭ કૃષ્ણની સેવા એ જ આત્મ જીવનો ધર્મ છે, એટલે વસ્તુત સ્વધર્મ કૃષ્ણસેવા જ છે,

૮ આત્મનિવેદન અને પ્રભુપ્રપત્તિ વિના અન્ય વિધધર્મ હોઈ શકે જ નહિ

Reg. No. B. 896.

પુષ્ટિભક્તિસુધાના ગ્રાહકોને સવિનય નિવેદન.

આ માસિકના સર્વ લેખકો જે લેખ લખે છે તે સાપ્રદાયિક સેવા કરવાની નિર્મલ બુદ્ધિથી જ લખે છે, તેથી બીજા પત્રોની માફક આ માસિકના લેખકોને આપવામા દ્રવ્યનો ખર્ચ બિલકુલ થતો નથી, એ જણાવતા આનંદ થાય છે માસિકની છપામણી વગેરે ખર્ચ ઘણી જ કરકસરથી કરવામા આવે છે, તેથી નોંધાવરમાથી જે કાંઈ બચશે તેમાથી સાપ્રદાયિક પ્રાચીન ગ્રંથો પ્રસિદ્ધ કરવામા આવશે વૈષ્ણવભાઇઓએ આવા માસિકના પોતે ગ્રાહક થવુ જોઇએ, એટલું જ નહિ પણ પોતાના મિત્રોને પણ આવા ધાર્મિક કાર્ય તરફ પ્રેરવાનુ પણ લક્ષમા રાખવુ જોઇએ

મુંબાઇ,
પ્રિન્સેસ સ્ટ્રીટ.

અંકારીક.

વર્ષ ૨ જી] શ્રીકૃષ્ણાબ્દ ૫૧૩૮, માઘ

पुष्टिभक्तिसुधा.

કૃષ્ણ ૧૧ શ્રીનાથબાબ્દ ૪૩૩ [અંક ૧૧

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनुं स्वाम् ॥ १ ॥
नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ २ ॥
भक्त्या त्वनन्यया शक्यः अहमेवंविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥ ३ ॥

પ્રકાશક,

વાડીલાલ નગીનદાસ શાહ;

બી એ એલએલ. બી., વકીલ હાઇ કોર્ટ.

નોંધવર, ૩૬ ૨–૦–૦ છૂટક અંકના રૂ. ૦–૪–૦

Printed by B. Miller Superintendent British India Press Bombay, and Published by Vadilal Nagindas Shah, B.A LL.B Princess Street, Bombay.

आवश्यक निवेदन.

१ આ માસિક સંબધી સઘળો પત્રવ્યવહાર પ્રકાશકને નામે કરવો

૨. આ માસિક દરેક માસની કૃષ્ણ એકાદશીએ પ્રકટ થાય છે

૩. આ માસિકમાં છપાવવાને આવેલા લેખો લેવા ન લેવા તેમ જ તેમાં યોગ્ય સુધારોવધારો કરવો પ્રકાશકની ઇચ્છાધીન છે

૪. શ્રીમદ્વલ્લભાચાર્યજીના સિદ્ધાન્તાનુસાર જ લેખ લેવામા આવશે.

૫ વર્ષનુ નોછાવર પ્રથમથી લેવામા આવે છે.

૬ આ માસિકના પરિવર્તનમાં જેમના તરફથી માસિક વા પત્ર મલશે તેમને વગર નોછાવરે આ માસિક મોકલવામા આવશે

૭. કોઇ પણ બાબતની ખબર મગાવવી હોય તો જવાબ સારૂ ટિકિટ મિડવી તે સિવાય જવાબ આપવામા આવશે નહિ

૮. આ માસિકમાં જાહેર ખબર છપાવવી હોય કે રેન્ડમિલ વહેચાવવા હોય તેમણે પ્રકાશકને લખવુ અથવા મલવું.

પુષ્ટિભક્તિસુધા કાર્યાલય,
ખિન્સેસ સ્ટ્રીટ,
મુંબાઈ.
} પ્રકાશક

અનુક્રમણિકા.

	વિષયો.		લેખકો.
૧	શ્રીહરિરાયકૃતાનુપદી ...	...	રા રા. મૂલચદ તુલસીદાસ તેલીવાલા બી. એ.
૨.	પ્રાચીન કીર્તનો ..	...	બલ્લભદાસ કૃષ્ણદાસ કીર્તનીઆજી
૩	શ્રીમદાપ્રભુજી પ્રણીત ગ્રન્થો ...	...	એક જૂના પત્ર ઉપરથી
૪	મનુષ્યનુ કર્તવ્ય અને ધર્મજીજ્ઞાસા	...	Mr D, B A, L L B. High Court Pleader
૫	ઉત્તર	...	પ્રકાશક,
૬	છાદોગ્યોપનિષદ્ ..	...	રા રા મૂલચંદ તુલસીદાસ તેલીવાલા બી એ.
૭	જપસમયે સ્વરૂપધ્યાનમ્ ...	...	વે શા સં. બલરામભૂધરજી શાસ્ત્રી.
૮.	પ્રમેયરત્નાર્ણવ ..	...	વે. શા. સ. વસતરામ હરિકૃષ્ણ શાસ્ત્રી.
૯.	સિદ્ધન્મણ્ડન.... ...	...	ગ રા. નાનાલાલ નારાયણદાસ ગાધી. M A., L L. B.

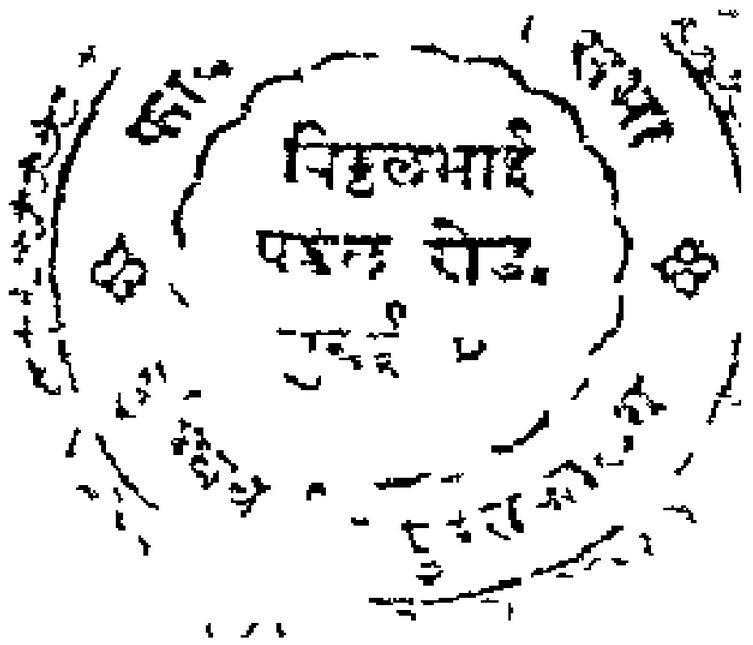

॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥

॥ श्रीगोपीजनवल्लभाय नमः ॥

॥ श्रीहरिरायजीकृताष्टपदी ॥

(गौडीरागेण गीयते)

रासरसिकवरमिलनं मानय ।
मदुदितवचनरचनमाकर्णय, करुणारसमपि मनसि समानय ॥ १ ॥ ध्रु०
चञ्चललोचननिर्जितमीनं, निर्भरभावविवेकविहीनम् ॥
अनुसर तव मिलने बहुदीन, गोपराजतनय त्वयि लीनम् ॥ २ ॥
विलपति जपति वदति तव नाम, त्यजति कुसुमशयनं निजधाम ॥
रचयति रुचिरतरं सुमदाम, तेन सम सम्पादय साम ॥ ३ ॥
शिशिरय वचनैरधिगततापं, दूरीकुरु तदहतमभिशापम् ॥
जहिहि मारमभितोधृतचापं, अमितमधुरमधु देहि दुरापम् ॥ ४ ॥
तव विपिनागमनं पश्यन्तं, आगतेति हृदि हृष्यन्तम् ॥
सपदि वशीकुरु निजवश्यं तं, सञ्जीवय मदनं नश्यन्तम् ॥ ५ ॥
अवलोकय सुन्दरतामारं, मा कुरु मानिनि मानमपारम् ॥
कण्ठे कुरु मुक्ताफलहारं, सुखय सुमुखि सखि नन्दकुमारम् ॥ ६ ॥
प्रकटीकुरु मानसगतभावं, तेन सम सेवय सखि दावम् ॥
शृणु कोकिलमधुरारावं, निर्जय रुचिरदृशा मृगशावम् ॥
दासीकुरु राधे हरिरायं, निःसाधनमिह विगतसहायम् ॥
अयि कथयामि वचोगतमाय, शोषय मानसनिहितकषायम ॥ ८ ॥
वन्दे हरिवल्लभवरचरणं, मम तु तदेव सदैव हि शरणम् ॥
साधनरहितजीवकृतवरण, जयति सदा भवसागरतरणम ॥ ९ ॥

---

१ हृदयन्तमित्यपि पाठ ॥
२ कोकिलगणमधुरेत्यपि पाठ ।

॥ हिलग के पद ॥

(पद १.)

जा दिन तें आंगन खेलत देख्यो श्रीयशोदा को पूत री ॥
तब ते गृह सूं नातो टूट्यो जेसे काचो सूत री ॥ १ ॥
अतिविशाल वारिजलोचन पर राजत काजर रेख री ॥
रच्छा दे मकरंद लेत मानो अलि गोलक के वेष री ॥ २ ॥
राजत द्वे द्वे दुध की दंतियां जगमग होत री ॥
मानो महामतमंदिर में रूपरत्न की जोत री ॥ ३ ॥
श्रवण उत्कण्ठा रहित सदाई जब बोलत तुतराय री ॥
मानो कुमुदिनी कामना पूजी पूरन चंद हि पाय री ॥ ४ ॥
परमानन्द देख सुंदर तन आनंद उर न समाय री ॥
चले प्रवाह नयनमारग व्हे का पें रोक्यो जाय री ? ॥ ५ ॥

(पद २.)

मेरो मन गोविंदसों मान्यो ताते ओर न जिय भावे ॥
जागत सोवत यह उत्कंठा कोऊ व्रजनाथ मिलावे ॥ १ ॥
बांधी प्रीत आन उर अंतर चरनकमल चित्त दीनो ॥
कृष्णविरह गोकुलकी गोपी घर ही में बन कीनो ॥ २ ॥
छांड अहारविहार सुख दे हों ओर न चाहत काऊ ॥
परमानंद वसत हे घरमें जेसे रहत वटाऊ ॥ ३ ॥

(पद ३.)

लगन इन नयनन की बांकी ॥
देखे हीं दुःख बिन देखें हिं दुःख पीर होत दुहु घाकी ॥ १ ॥
टारि न टरत जाय बिन देखें जिहीफवत हे साकी ॥
रसिकराय प्रीतम मन अटक्यो कहूं लगत नहि टांकी ॥ २ ॥

(पद ४.)

मन हर ले गये नंदकुमार ॥
बारकदृष्टि परी चरनन तन देखन न पायो बदनसुचार ॥ १ ॥
हों अपने घर सुच सेंा बेठी पोवत ही मोतिन के हार ॥
कांकर डार द्वार व्हे निकसे बिसर गयो तन करत शृंगार ॥ २ ॥

कहा री कहों क्यों मिल हे गिरिधर किहि मिस हों यशोदा घर जाऊं ॥
परमानंदप्रभु ठगी री अचानक मदनगोपाल भावतो नाऊं ॥ २ ॥

(पद ५.)

में तो प्रीत श्याम सों कीनी ॥
कोऊ निंदो कोऊ वंदो अब तो यह घर दीनी ॥ १ ॥
जो पतिव्रत तो या ढोटा सों इने समर्प्यो देह ॥
जो व्यभिचार तो नंदनंदन सों बाढ्यो अधिक सनेह ॥ १ ॥
जो व्रत गह्यो सो और न भायो मर्यादा को भंग ॥
परमानंद लालगिरिधरको पायो मोटो संग ॥ २ ॥

(पद ६.)

करन दे लोगन कों उपहास ॥
मन क्रम वचन नंदनंदन को निमिष न छांडो पास ॥ १ ॥
सब कुटुंब के लोग चिकनिया मेरे जाने घास ॥
अब तो जिय एसी बनि आई क्यों मानों लख त्रास ॥ २ ॥
अब क्यो रह्यो परे सुन सजनी एक गामको वास ॥
ये बाते नीकी जानत हे जन परमानंददास ॥ २ ॥

(पद ७.)

हों नंदलाल बिना न रहू ॥
मनसा वाचा और कर्मणा हित की तो सों कहूं ॥ १ ॥
जो कछु कहो सोई सिर ऊपर सो हों सबे सहूं ॥
सदा सर्माप रहूं गिरधर के सुंदरवदन चहूं ॥ २ ॥
यह तन अर्पण हरि को कीनो वह सुख कहां लहूं ? ॥
परमानंद मदनमोहन के चरनसरोज गहूं ॥ २ ॥

(पद ८.)

सखी री लोभी मेरे नेन ॥
बिन देखे चटपटी लागत देखत उपजे चैन ॥ १ ॥
मोर मुकुट काछे पीतांबर सुंदरता के एन ॥
अंगअंग छवि कहि न परत हे निरख थकित भयो मेन ॥ २ ॥
मुरली एसी लागत श्रवनन चितवत खगमृगधेन ॥
परमानंद प्रेमी के ठाकुर वे देखो ढाडे एन ॥ २ ॥

શ્રીમદાચાર્યચરણપ્રણીત ગ્રન્થો

અખંડભૂમંડલાચાર્યવર્ય શ્રીમહાપ્રભુજીયે પ્રકટ કરેલા ગ્રંથોના નામો એક પ્રાચીન હસ્તલિખિતપત્રમાં લખેલાં અમારા હાથમાં આવેલાં છે, તે ખાસ જાણવાયોગ્ય હોવાથી પ્રસિદ્ધ કરિયે છિયે.

॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥

॥ श्रीमद्वल्लभाचार्यकृतानां ग्रन्थानां नामानि ॥

---

१. श्रीयमुनाष्टकम् ।
२. बालबोधः ।
३. सिद्धान्तमुक्तावली ।
४. पुष्टिप्रवाहमर्यादा ।
५. सिद्धान्तरहस्यम् ।
६. नवरत्नम् ।
७. विवेकधैर्याश्रयः ।
८. अन्तःकरणप्रबोधः ।
९. कृष्णाश्रयः ।
१०. चतुःश्लोकी ।
११. भक्तिवर्धिनी ।
१२. जलभेदः ।
१३. भक्तिलक्षणम्। (पञ्च पद्यानि?)
१४. सन्न्यासनिर्णयः ।
१५. निरोधलक्षणम् ।
१६. सेवाफलम् ।
१७. सेवाफलविवृतिः ।
१८. मधुराष्टकम् ।
१९. परिवृढाष्टकम् ।
२०. शरणागत-आर्या ।
२१. त्रिविधनामावली ।
२२. पुरुषोत्तमसहस्रनाम ।
२३. निबन्धः ।
२४. तत्त्वदीपविवृतिः ।
२५. भाष्यम् ।
२६. पूर्वमीमांसाभाष्यम् ।
२७ सुबोधिनी ।
२८. पत्रावलम्बनम् ।
२९. लौकिकालौकिकभेदः ।
३०. भगवत्पीठिका ।
३१. आत्मनिवेदनपद्धतिः ।
३२. सूक्ष्मटीका ।
३३. गायत्रीभाष्यम् ।

मनुष्यनुं कर्तव्य अने धर्मजिज्ञासा.

(अनुसधान पृष्ट ५१)

બાગના અદરના દરવાજા આગળ મોટા ઉભા રાખી સર્વે અદર ગયા કુસુમ સર્વેથી આગળ દોડતી દોડતી ગઈ અને જમણી બાજુ તરફ વળી બરફ જેવા સફેદ બગલા અને બીજા પક્ષીઓને જોતી થોડીવાર ઉભી ત્યા એક સુદર વહેળો વહેતો હતો, તેની બને બાજુપર પુષ્કળ ઝાડો હતાં, અને સામી બાજુપર જવાને લાકડાનો નાનો સરખો પુલ હતો, તે ઉપર થઇ આનદમા આગળ ચાલી સામે જ પાજરામા કુસુમની વહાલી, સુદર ભાતભાતના રગની ઝીણી ચકલીઓ ચીંચીં કરી રહી હતી અને હીંચકા ખાતી હતી જે કુસુમનુ ચાલત તો એ પણ ચકલી થઇ પોતાની નાની સહીયરોની સાથે હીચકા ખાવા અને કલકલ કરવા મડી જાત એ નિર્દોષ નાના પક્ષીઓ અને નિર્મલ કુસુમની વચ્ચે સ્વાભાવિક સામ્ય હતુ, અને પોતાથી ચકલી થવાય એમ ન હોવાથી એ નિર્દોષ ચકલીઓને પોતાની સાથે રાખવાનુ એને બહુ મન થતુ પહેલા એણે પુરુષોત્તમને બે ત્રણવાર કહ્યું હતુ કે આવી ચકલીઓ આપણા કૃષ્ણોદ્યાનમા લાવો, પણ કૃષ્ણોદ્યાનની જોડે રેલવે સડક હોવાથી ગાડીના ઘોંઘાટમા આ સુદર પક્ષીઓને રાખવાનુ પુરુષોત્તમને ગમતુ ન હતુ, તેથી તેણે એ વાત કાનપર ધરી ન હતી આજે પાછી કુસુમે એ વાત કહાડી વિચિત્રવીર્યની સામુ જોઈ બોલી, "વિચિત્રભાઈ, હુ નાનાભાઇને કેટલીએવાર કહી ચુકી કે આવી ચકલીઓ આપણા કૃષ્ણોદ્યાનમા લાવો, પણ એ લાવતા જ નથી"

નીતિસેન પ્રેમથી તેની સામુ જોઈ બોલ્યો—"બહેન, મને કહ્યું હોત તો હું જરૂર આણી આપત".

વિચિત્રવીર્ય—કુસુમ બહેન, ચકલીઓની સોબતમા તમે પણ ઉડતા શીખી ચકલી થઈ હતી જાઓ ત્યારે! માટે પુરુષોત્તમભાઇ ન લાવ્યા એ બહુ સારુ કર્યું

પુરુષોત્તમ—હુ તો એમ નથી લાવ્યો કે વિચિત્રવીર્યે આ એમના બાગમાથી આ એમની ચકલીઓ આપણા બાગમા મુકી દેશે, એટલે બીજી આણવાની જરૂર જ નથી!

વિચિત્રવીર્ય બીજવાયો અને બોલ્યો "પુરુષોત્તમભાઈ, તમે એમ મને પજવો નહીં તમારા કહેવા પ્રમાણે 'આ બધુ બ્રહ્મ છે,' નહીં વારુ?

પુરુષોત્તમ—બેશક

વિચિત્રવીર્ય—ત્યારે હુ પણ બ્રહ્મ અને આ ચકલીઓ પણ બ્રહ્મ

પુરુષોત્તમ—નિ સંદેહ

વિચિત્રવીર્ય—ત્યારે એ ચકલીઓ વસ્તુત મ્હારીજ, એમા શુ આશ્ચર્ય!

પુરુષોત્તમ—Bravo! well done! વિચિત્ર!

નીતિસેન—ભાઈ વિચિત્રવીર્ય, એથી તો એમ થયુ કે તુ અને ચકલીઓ બને બ્રહ્મ, એટલે તુ અને ચકલીઓ બને સરખા ચકલીઓ તારી, કે તુ ચકલીઓનો, એવુ કાંઈ ધરતુ નથી પુરુષોત્તમ, મનુષ્ય અને ચકલીઓ બને સરખા?

પુરુષોત્તમ—હા બને વસ્તુત બ્રહ્મ છે તેથી સરખા એ સરખાપણુ જે સમજે અને અનુભવે તે જ બ્રહ્મવિત્ કહેવાય ગીતાના છઠ્ઠા અધ્યાયના ૨૯મા શ્લોકમા કહ્યું છે કે—

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ॥
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥

વળી બારમા અધ્યાયના ૧૯મા શ્લોકમા કહ્યું છે કે—

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः ॥
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः ॥

અને એની જ ઉપરના ૧૮મા શ્લોકમા સ્પષ્ટ કહ્યુ છે કે—

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ॥
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥

એટલે એમ કે વિદ્યા અને વિનયવાળા બ્રાહ્મણમાં, ગાયમા, હાથીમા, કુતરામા અને ચાંડાળમા પણ પડિતો સમતાનુ દર્શન કરે છે. માટે મનુષ્યો અને ચકલીઓ સમ-સરખા એમા કાંઈ આશ્ચર્ય નથી

જેમ સુવર્ણનાં કડા, કંઠી, કુંડળ વગેરે અલંકાર બનાવીએ તેના જૂદાં જૂદા નામ રૂપ અને ઉપયોગ છતા વસ્તુત: તે સર્વે સુવર્ણ જ છે, તેમ મનુષ્ય, પશુપક્ષીઓ, વનસ્પતિ તથા સર્વે ભૌતિક પદાર્થોના નામ, રૂપ અને ઉપયોગ જૂદા છતા વસ્તુત સર્વે બ્રહ્મ જ છે એ સર્વે બ્રહ્મના અવિકારી પરિણામ છે જેમ મૃત્તિકા-માટીના ઘડો કોડીયુ વગેરે સર્વે વસ્તુત માટી જ છે તેમ તેમ જડ, જીવ વગેરે સર્વે વસ્તુત બ્રહ્મ જ છે, માટે હું, તુ, બાગ, ચકલીઓ, પુણ્યવાન્ સાધુઓ તથા પાપકૃત્ ચાંડાલ સર્વે એક સરખા બ્રહ્મ છે, એમા ઉચ નીચ કોઈ નથી (વિચિત્રવીર્ય સાધુ જોઈ) એમાંથી ચકલીઓ તારી, એવો ભાવાર્થ નીકળતો નથી જ્યા સુધી આ ભાવ, આ તાદૃ એવો ભાવ રહે છે ત્યા સુધી આ બ્રાહ્મી સ્થિતિ અનુભવાતી નથી

આ વાતો આમ ચાલતી હતી, એટલામા કુસુમ દોડતી દોડતી મોરના પાંજરા આગળ જઈ ઉભી ઉભી મોર કળા કરતા હતા તે જોવા લાગી ત્યાથી બધાને ખ્યાલ પાડી આગળ લતામંડપમાં જઈ બાંકડાપર બેઠી પાછળથી સર્વે ત્યા આવી શીતળ પવનની લહેરમા સામસામા બાંકડાપર બેઠા નીતિસેન વિચારમા પડયો હતો, તે બોલ્યો, "પુરુષોત્તમ, આ બ્રહ્મજ્ઞાનમા તો બધુ સરખું એટલે સુખ દુ ખ, હર્ષશોક વગેરે કાંઈ જ નહીં, એટલે હૃદયના ભાવો પણ દબાઈ જાય, હૃદય તો પત્થરવત્ જડ થઈ જાય કાલિદાસે "वेदाभ्यासजड. कथ नु विषयव्यावृत्तकौतूहलो" વગેરેમા વેદાભ્યાસથી જે જડતા પ્રાપ્ત થવાનુ લખ્યુ છે તે વાસ્તવિક લાગે છે."

એટલામા સામેથી પુરુષોત્તમે પ્રો ફેરજજને આવતા દીઠા, તેમને નમ્રતાપૂર્વક આદરસત્કારથી બને ભાઈઓએ પોતાની પાસે બેસાડયા. બીજી પરચુરણ વાતો કરી પ્રો. ફેરજજે ગોવિંદભટ્ટજીની ઘણી પ્રશસા કરી, તેમના ઉંડા જ્ઞાન તથા અનુભવ વિષે પોતાનો આનદ પ્રદર્શિત કર્યો, અને બને ભાઇઓને ઉદ્દેશી કહ્યુ "એમના જેવા ગુરુ મળવાથી તમને અત્યત લાભ છે"

પુરુષોત્તમ—હા જી, પણ તેમની વિદ્યા શીખવાને યોગ્ય થવું એ મનુષ્યના હાથમા નથી મનુષ્યના સસ્કારો તેને જે રસ્તે લઈ જાય, ત્યાં જ તે વશે કરવશે જાય છે. કોઈ વ્યાકરણ, કોઈ ગણિત, કોઈ ઇતિહાસ એમ પોતપોતાના ઇચ્છિત વિષયો તરફ પ્રાકૃતન સસ્કારથી તેમની બુદ્ધિઅનુસાર તેઓ જાય છે પ્રભુએ અમને ગુરુ પણ આપ્યા તથા તત્વજ્ઞાન મેળવવાની ઉત્કટ ઇચ્છા આપી તેથી તેમની મહતકૃપા અમારા પર છે.

નીતિસેન—સાધુબ, મારે સ્પષ્ટ કહેવુ જોઇએ કે હું એટલો ભાગ્યશાળી નથી મને હાલમાં તત્વજ્ઞાન તરફ કોઇક વૃત્તિ થઈ છે, અને નવી નવી શકાઓ મનમા ઉત્પન્ન થાય છે. તત્વજ્ઞાન હૃદયને જડ કરે છે એવી શકા વિષે મેં કેટલાક જ પુરુષોત્તમને વાત કરી.

પ્રો. ફ્રેરજજ—તે કેવી રીતે?

પુરુષોત્તમ—હું આપને કહું. નીતિસેનભાઇનુ કહેવુ એમ છે કે જે બધું બ્રહ્મ માનીએ, પંડિત તથા મૂર્ખ તરફ સમાન દૃષ્ટિ રાખીએ, સુખદુ ખ, હર્ષશોક ન ગણીએ તો પછી, હૃદય જડ થઇ જાય, મૃદુતા અને કઠોરતા, કૃતજ્ઞતા અને કૃતઘ્નતા, સૌંદર્ય અને બેડોળપણું સર્વે સમાન ગણીએ, તો કલાકૌશલ્ય, કેળવણી, સર્વે નાશ પામે, અને સર્વવિપ્લવ થાય. કેમ એમ જ કે ની, મોટાભાઈ?

નીતિસેન—હા, એમ જ

પ્રો. ફ્રેરજજ (વિચાર કરી)—એ શંકા નિર્મૂલ નથી શંકર એનો પરિહાર વ્યવહાર અને પરમાર્થ ભિન્ન માની કરે છે એના કહેવા પ્રમાણે તો પ્રપંચ મિથ્યા છે, એટલે વાસ્તવિક રીતે-પરમાર્થત હૃદયને સ્થાન જ નથી કોણ કોનો હર્ષશોક કરે? શામાટે? બીજી રીતે વિચારીએ તો યોગશાસ્ત્ર પણ ચિત્તવૃત્તિનો નિરોધ કરવાનુ કહે છે. તેનો અર્થ પણ એમ કે સુખદુ ખથી, સારા નરસાથી, મનની વૃત્તિ અને હૃદયને ચલાયમાન ન થવા દેવુ સમતા ધારણ કરવી તો તેથી પણ જડતા દોષ પ્રાપ્ત થવાનો જ માટે મારુ પણ માનવુ એમ છે કે હિંદુધર્મમા હૃદયને સ્થાન નથી આ જ કારણને લીધે કેટલાક ખ્રિસ્તિ ધર્મને હિંદુધર્મ કરતા શ્રેષ્ઠ માને છે

પુરુષોત્તમ (પ્રોફેસર સામુ નમ્રતા પૂર્વક જોઈ)—હું કાંઇ વિદ્વાન્ કે તત્ત્વવેત્તા નથી, પણ મેં એ બાબતપર કાંઇક વિચાર કર્યો છે, ને મારુ માનવુ એથી તદ્દન ઉલટુ જ છે આપને ગોવિંદભટ્ટજીની સાથે એ બાબતમા કાંઇ પ્રસંગ ન નીકળ્યો એ ખેદકારક છે, અને મને તે જ સમયે એ વિચાર આવ્યો હતો (નીતિસેન સામુ જોઈ) ભાઈ, તારી શંકાનું મૂલ કાલીદાસની પંક્તિ છે તે તપાસો વેદાભ્યાસથી હૃદય ખરેખર જ જડ થતુ હોય તો તેવા હૃદયનો મનુષ્ય મનોહર સ્વરૂપ કેમ નિર્માણ કરી શકે? નહીં જ વસ્તુત નારાયણ મુનિના મન અને હૃદય વેદાભ્યાસથી દૃઢ અને સમર્થ થયા હતા સંસારમાથી વિરક્ત થઇ જેનું મન પ્રભુમા લીન થાય તેને પ્રભુના પ્રભુત્વ, ભગવત્ત્વ આદિ સર્વે ગુણ પ્રાપ્ત થાય એમા શું આશ્ચર્ય? એવા મનુષ્યો-સપ્તર્ષિમુનીઓની સન્નિધિમા મનુષ્યો તો શું પણ પશુપક્ષી ઓને પણ અભય અને શાંતિ પ્રાપ્ત થાય છે (પ્રો ફ્રેરજજ સામુ જોઈ) યોગાભ્યાસથી ચિત્ત જડ થતુ નથી, પણ તે વીર્યવાન્ અને દૃઢ થાય છે સુંદરતા, કોમળતા, દયા, વગેરે ભાવો એવા દૃઢ હૃદયમાથી ઉદ્ભવે તેવા સંસારી હૃદયમાથી ઉદ્ભવતા નથી હૃદયને જડ, કઠોર, નિર્દય કરી વિરક્ત થવાનુ નથી, પણ જન્મ મૃત્યુ જરા વ્યાધિ વગેરે દુ ખના દોષના અનુભવથી સંસારમાથી સ્વાભાવિક વિરક્તિ પ્રાપ્ત થાય છે, અને ચિત્ત પ્રભુમા લીન થાય છે તેથી વીર્યવત્તર થાય છે માટે ચિત્તવૃત્તિના નિરોધથી જડતા પ્રાપ્ત થાય એ ભ્રાંતિ છે, અને યોગશાસ્ત્ર અને વેદાંતશાસ્ત્ર ઉપરનો આક્ષેપ નિર્મૂલ છે

નીતિસેન—ત્યારે પંડિત અને મૂર્ખને સમાન ગણવા એનો અર્થ શુ?

વિચિત્રવીર્ય—એ બને મિથ્યા માટે સમાન

પુરુષોત્તમ—પંડિત અને મૂર્ખને સમાન ગણવાનો અર્થ એવો નથી કે તે બનેનું તારતમ્ય ભૂંસી જવુ, સુખદુ ખને સરખા ગણવાનો અર્થ એવો નથી કે હૃદયને જડ કરવુ, પણ એનો અર્થ એમ થાય છે કે "હુ કોણ, આ સર્વ પ્રપંચ શુ છે" વગેરેનો વિચાર કરવો, તેનુ મૂલ શોધવું, અને જ્યારે બહુ જન્મને અંતે 'વાસુદેવ સર્વમિતિ' 'સર્વં ખલ્વિદ બ્રહ્મ'

એમ તત્ત્વવિજ્ઞાન થઈ પ્રભુપ્રાપ્તિ થાય, ત્યારે જ સમતા સ્ફુરે, તે જ ખરી સમતા ત્યારે જ આ સર્વ પ્રપંચ બ્રહ્મમાંથી તેની ઇચ્છા પ્રમાણે ઉદ્ભવે છે અને તેમા જ લીન થાય છે, અને હાલની સર્વ પ્રપંચની સ્થિતિ બ્રહ્મની આવિર્ભાવ તિરો-ભાવ શક્તિથી જ છે એમ વિજ્ઞાન થાય, બ્રહ્મ સર્વેના નિયંતા છે, "ઈશ્વરઃ સર્વ-ભૂતાનાં હૃદ્દેશેઽર્જુન તિષ્ઠતિ ભ્રામયન્ સર્વભૂતાનિ યન્ત્રારૂઢાનિ માયયા એમ વિજ્ઞાન થાય ત્યારે જ ઈશ્વરે આપેલા સુખદુઃખમા કાંઇ પણ હર્ષશોક ધરવાનું કારણ નથી, એમ સ્પષ્ટ થાય. પંડિતાઇ અને મૂર્ખતાનું તારતમ્ય ભૂલી જવુ એમ નહીં, સુખ અને દુઃખની ભિન્નતા ભૂલી જવી એમ નહી, પણ તેના કારણ શોધવા, અને શોધતા શોધતા છેક ઉંડા ઉતરી તેનું મૂલ મેળવવુ, અને એ તારતમ્ય અને ભિન્નતાની છેક નીચે રહેલી સમાનતા મેળવી, અનુભવી, શાંતિ પ્રાપ્ત કરવી એનુ નામ તત્ત્વજ્ઞાન. એવુ જ્ઞાન આપણા વડિલોએ પ્રાપ્ત કર્યું છે, અને તે પ્રાપ્ત કરવાના સાધન-શાસ્ત્રો આપણે સારુ મુકી ગયા છે, એટલુ જ નહીં, પણ હાલમા પણ તે જ્ઞાન અને એવા તત્વજ્ઞાની વિદ્યમાન—

પ્રો ફ્રેરજી.—Bravo! bravo! શાબાસ, શાબાસ, પુરુષોત્તમ, well-done. તારા જેટલી નાની વયમા આવુ જ્ઞાન પ્રાપ્ત કરવુ, પોતે સ્પષ્ટ સમજવુ, અને બીજાને બરોબર સમજાવવુ અને તેની ભૂલો ખુલ્લી દર્શાવી આપવી, એ દુર્ઘટ કાર્ય તે ઘણુ સારી રીતે કર્યું છે તને જોઇને મારુ હૃદય બહુ પ્રફુલ્લિત થાય છે હિંદુસ્થાન તત્ત્વજ્ઞાનની ભૂમિ છે, એ તારી અલ્પવયમા મેળવેલા જ્ઞાનથી તે સિદ્ધ કરી આપ્યુ. વાહ, યોગ-શાસ્ત્ર તથા વેદાંત ચિત્તને જરૂર ઠરતા નથી પણ દૃઢ કરે છે એ હું સમજ્યો, પણ હૃદયના સુદ્ધ ભાવો જે ક્રિશ્ચિયાનીટીમા પ્રભુ પરત્વે રોજબરોજમા આવે છે, તે યોગ તથા વેદાંતમા છે? ક્રિશ્ચિયાનિટીની સુદ્ધતા, સરળતા, કોમળતા, પ્રેમ, સ્નેહ હિંદુધર્મમા છે?

પુરુષોત્તમ—(પ્રો ફ્રેરજીને નમન કરીને દૃઢતાથી)—ના જી, છે. સાયન્સ અને આર્ટ, જ્ઞાન અને ક્રિયા, બને પક્ષથી હિંદુધર્મ એટલો તો સુદ્ધ અને સંપૂર્ણ છે કે એવી સુદ્ધતા અને સંપૂર્ણતા અન્ય ધર્મમા નથી શુષ્ક, હૃદયશૂન્ય, ગણિતશાસ્ત્રીને હિંદુધર્મ મોક્ષ દ્વાર દેખાડે છે, સામાન્ય સંસારી જીવને હિંદુધર્મ મુક્તિને રસ્તે દોરી લઈ જાય છે, અને મૃદુ, રસિક મનુષ્યના હૃદયને સંપૂર્ણ રીતે ખિલવી, વિકાસ પમાડી રસમય પ્રભુ સમક્ષ લઇ જાય છે, ને સંપૂર્ણ સ્વરૂપાનંદનુ દાન કરે છે હૃદયની સુદ્ધતા જેટલી હિંદુધર્મમા, બિલકુલ સંકોચ વગર સંપૂર્ણપણે ખિલેલી છે, તેટલી ઇંચમા બન્ધ સુરીઓ પણ ખિલવી શકયા નથી, એટલુ જ નહીં, પણ હૃદયની મીઠી આસુરી વૃત્તિઓ, અસૂયા, ઈર્ષ્યા, લોભ વગેરેને પણ હિંદુધર્મે મોક્ષપ્રાપ્તિમાં યોજી છે હિંદુ ધર્મ જેવો પંડિતને તેમ બાળકને સર્વને માન્ય ધર્મ બીજો જડવો મુશ્કેલ છે

વિચિત્રવીર્ય—મને લાગે છે કે એ હિંદુધર્મ માગ જેવો જ વિચિત્ર હોવો જોઇએ!

નીતિસેન—મને તારા બોલવામા સત્ય કરતાં પક્ષપાત વધારે જણાય છે.

પુરુષોત્તમ—તને એમ લાગવાનું કારણ શાસ્ત્રની અજ્ઞાનતા છે હું સત્ય કહું છુ કે પક્ષપાત કે છુ તે તને શાસ્ત્રોનુ અધ્યયન અને મનન કર્યા વગર કેમ માલમ પડે? આખી પૃથ્વી પરની ખટપટ આપણા શાસ્ત્રોમા કોઇપણ શુષ્ક નહીં અથવા ગણિતશાસ્ત્રીનુ માથુ ભાગવાને પૂરતી છે એ સર્વને વિદિત છે, સૂક્ષ્મ બુદ્ધિને સંતોષ આપે એવા સર્વ

ચમત્કાર આપણા શાસ્ત્રોમાંથી મળશે શૂન્ય હૃદયના એવા શાસ્ત્રીઓ અણુ, કુમણુક, ત્રણુકનો દીર્ઘ વિચાર કરતા કરતા, કાર્ય કારણોની શૃંખલા યોજતા યોજતા, તત્ત્વોનો સૂક્ષ્મ વિચાર કરતા કરતા, કર્મોની વિચિત્રતા વગેરે મનન કરતા કરતા, પોતાના જેવા હૃદયજડ મનુષ્યોની સાથે દરરોજ તર્કના હથોડા ઠોકતા ઠોકતા માત્ર આ પ્રકારના અભ્યાસથી જ સંસારથી વિરક્ત થઈ મુક્તિ મેળવે છે, સામાન્ય સંસારી જીવ સકામપણાથી પોતાને ગમતી પ્રભુની કોઇપણ વિભૂતિમા ચિત્તને લીન કરી, કામ્ય કર્મોના ફલ ભોગવતા ભોગવતા ધીમે ધીમે ઉચ્ચતર ગતિને પામે છે, અને અંતે અક્ષર ધામમા મોક્ષપદ પ્રાપ્ત કરે છે, રાવણ, હિરણ્યકશિપુ, કંસ, શિશુપાલ વગેરેના હૃદયની આસુરી વૃત્તિઓ દ્વારા તેમના ચિત્તનો નિરોધ પ્રભુમા કરાવી હિંદુધર્મ તેમને પણ મોક્ષ આપે છે, નંદ, યશોદા અને ગોકુળ જેવા ગામડાના સાદા, પ્રેમાળ હૃદયના મનુષ્યોની સાદી, પ્રેમાળ વૃત્તિઓ ખિલવી હિંદુધર્મ તેમને પ્રભુધામમા લઇ લે છે, અને એકાદ ગોપીઓના સુકર, સ્નેહાર્દ્ર, પ્રેમ પીડિત હૃદયોને ખિલવી શૃંગારરસની ઉચ્ચતમ કોટિમા લઈ જઈ હિંદુધર્મ તેમને નિર્દોષ પૂર્ણ ગુણવાન્ રસમય પ્રભુ સાથે રાસક્રીડા કરાવી પ્રેમામૃતનુ-સ્વરૂપાનંદનુ દાન કરાવે છે, અને આ બધુ બીજો કયો ધર્મ આટલી સરલતાથી અને ચોખવટથી કરે છે તે મને બતાવીશ?

પ્રો. ફેરજજ—શાબાશ, પુરૂષોત્તમ, તને ધન્ય છે ગોવિંદભટ્ટજીએ મને હિંદુશાસ્ત્રની બારીકીઓની સમજ આપી, પણ હિંદુધર્મ કેટલો વિસ્તારવાળો છે, તે સર્વ ને કેટલો ઉપયોગી છે, તે કેવો Universal છે, તે છતા કેટલો ઉંડો છે, તે સમજવાની સહેલી પણ ખરી કુંચી તેં મને બતાવી છે. આ શરીરથી તો હિંદુ થવુ અશક્ય છે, પણ મનથી તો તે મને પૂરેપૂરો હિંદુ કરી દીધો છે, અને મારૂ હૃદય તારાજેવા શુદ્ધ સરકારી હિંદુના સબંધથી કેટલુ દ્રવે છે તે હું કહી શકતો નથી.

નીતિજ્ઞન તો વિચારમા લીન થઇ ગયો હતો, તે તો કાંઈ બોલ્યો નહીં, પણ છેક બોધુ સમજનાર, ભલકો વિચિત્રવીર્ય બોલી ઉઠ્યો "ત્યારે પુરુષોત્તમભાઇ, ગોપીઓ ધર્મશાસ્ત્રો સમજવા ને સમજવામા સર્વથી ઉત્તમ, નહીં વારૂ? એ ઉત્તમ ગુરુઓને શાસ્ત્રો સમજવાને સરકૃત ગ્રંથોએ શીખવેલુ કે ગોવાળોએ?

પ્રો. ફેરજજ—ભાઈ વિચિત્રવીર્ય, જેમ કોઇ ભાષાનુ વ્યાકરણ માત્ર ભણવાથી જ તે ભાષા બોલતા આવડતી નથી, પણ વ્યાકરણ ભણ્યા વગર જ સ્વાભાવિક રીતે નાનપણથી અશિક્ષિત બાળક સરળતાથી બોલી શકે છે, તેમ શાસ્ત્રો ભણ્યા વગર અશિક્ષિત પણ શુદ્ધ સરળ હૃદય ધર્મના તત્ત્વો સ્વાભાવિક રીતે સમજી શકે છે, અને ઘણા શાસ્ત્રો ભણ્યા છતા પંડિત અનેક કઠિન હૃદય તે સમજી શકતુ નથી.

વિચારમા લીન થયેલો, આડુ પડુ સાભળતો નીતિજ્ઞન વિચારના ઉડાણમાથી સંમતિ આપવા લાગ્યો—

"હોય ભણ્યા ધર્મશાસ્ત્રોને, ગણાયો જ્ઞાનિ પંડિતમા
પ્રીતિ રીતિ અખંડિતમા"

"I have Studied non philosophy
And Jurisprudence, Medicine,—
And even, alas! Theology,—
From end to end, with labour keen,

And here, poor fool ! with all my lore
I Stand, no wiser than before,
I am Magister--yea, Doctor--hight,
And straight or cross wise, wrong or right,
These ten years long, with many woes,
I have led my scholars by the nose,—
And see, that nothing can be known !
That knowledge cuts me to the bone."

Goethe's Faust

અર્થ—પુષ્કળ શ્રમ લઈ હું તત્ત્વવિદ્યા, ધર્મશાસ્ત્ર, વૈદ્યકશાસ્ત્ર અને હે દૈવ ! બ્રહ્મવિદ્યા પણ એક છેડેથી બીજા છેડા સુધી ભણી ચુક્યો, અને હે મૂર્ખ જીવડા ! મારી બધી પંડિતાઈ છતા હું મહેલા કરતા સેહેજ પણ વધારે સમજ્યો હોઉં એમ લાગતું નથી. હું મોટો માસ્ટર, ના,ના, ડાક્ટર છું, અને દુ.ખિત હૃદયથી મારા વિદ્યાર્થીઓને આ દશ વર્ષો થયા, સીધા કે આડા અવળા, ખરા કે ખોટા, મારી ધ્યાનમાં આવ્યુ તેમ દોરવ્યા છે, અને હું જાણું છું કે આ બધુ શુ છે તેની કાઇ સમજ પડે એમ નથી. એ અજ્ઞાન તાના જ્ઞાને મને છેક નિરાશ કરી નાખ્યો છે.

પુરુષોત્તમ—ભાઇ વિચિત્ર, નિર્દોષ, પૂર્ણ ગુણવાન્ પ્રભુએ પોતે ગોપીઓના વખાણ કર્યા છે, ઉદ્ધવ જેવા ભગવાનના પરમ ભક્તે તેમને તેમના પગની રજને શિરસાવદ્ય ગણી છે, તો પછી મારા જેવા અધમને ગોપીઓ ઉત્તમ લાગે તેમાં શું આશ્ચર્ય ?

નીતિસેન—વિચિત્રવીર્યની વક્રોક્તિનો આશય એવો છે કે એ અજ્ઞાન ભરવાડણો કામભાવથી-જારભાવથી કૃષ્ણપાસે ગઇ હતી, તેમને આવી ઉત્તમોત્તમ ગણી કેમ શકાય ?

વિચિત્રવીર્ય—એમ જ, અને તેથી જ કેટલાક ડાહ્યા ડમરા શાસ્ત્રીઓ તો ચોખ્ખુ કહે છે કે ૧૬૦૦ ગોપીઓ એટલે નાડીઓ, અને કૃષ્ણ એટલે મન, એટલે વસ્તુતઃ ગોપીઓનો બચાવ તો એમને ઉરાડી દેવામા જ છે. પુરુષોત્તમભાઇ જેવા ભણેલા ગણેલા અને ધર્મમા પુરુષોને વ્યભિચારી સ્ત્રીઓનો બચાવ કરતા સાભળતા મને તો ગમ્મત આવે છે કોઇવાર ઘણો વિચાર કરવાથી મગજ ચસકી જાય છે તેનુ આ દૃષ્ટાત !
આમ કહી વિચિત્રવીર્યે સમ્મતિ સારૂ નીતિસેન તથા પ્રો. ફેરજજ તરફ જોયુ.

પ્રો. ફેરજજ—ભાઇઓ, પુરુષોત્તમે તમારી શકાનો ઉત્તર કયારનોએ આપી દીધો છે જો કંસને વૈરભાવથી, રાવણ, કંસ વગેરેની મુક્તિ થઈ તો કામભાવથી ગોપીઓને પ્રભુપ્રાપ્તિ થાય, એમ માનવામા કાઇ પણ ખોટુ નથી જેમ વૈર, દ્વેષ, રાવણ, કંસ વગેરેમ હતા, પ્રભુમા ન હતાં, તેમ ભાગવતકાર સ્પષ્ટ કહે છે કે કામ ગોપીઓમાં હતો, કૃષ્ણમ ન હતો, એટલે ભગવાનમાં પણ દોષ આવતો નથી વળી કામ કેટલો બલવાન્ છે એ આપણે જાણીએ છીએ, તેથી તત્કૃત નિરોધ ઘણો જ બળવાન્ હોવો સ્વાભાવિક છે એ દૃઢ નિરોધને લીધે જ ગોપીઓને ઉદ્ધવે તથા શાસ્ત્રકારોએ વખાણી છે.

વિચિત્રવીર્ય તો સમ્મતિની આશા રાખતો હતો, તેને બદલે ફેરજજ સાહેબનું આવુ ઓલ સાંભળી જો તો આભો જ બની ગયો, અને ગભરાયલે મોઢે આમ તેમ જોઈ કાઈ નદી ગોદાવ રમાંથી વૈકુંઠની માફક ગબરડી મુકી દોડી ગયો

પુરુષોત્તમ—ભાઇ નીતિસેન, તારી નીતિના વિચારોને આઘાત થાય છે તે હું સમજુ છુ. વ્યભિચારી સ્ત્રીઓને ઉત્તમોત્તમ કેમ કહેવાય, એ શંકા તારા મનમાથી ખસતી નથી.

નીતિસેન—હા, પ્રભુને દૂષણ ન લાગે, વ્યભિચારના ઉચ્ચ ભાવથી નિરોધ થઈ ગોપીઓની મુક્તિ થાય એ બધુ ઠીક, પણ એથી જેમ કંસ, રાવણ વગેરેમા દૂષણ રહી જાય છે, તેમ ગોપીઓમા પણ દુષ્ટ વાસનારૂપ દૂષણ રહી જાય છે, એ મારી શંકા છે

પુરુષોત્તમ—હા, બરાબર. હવે વ્યભિચાર તે શુ, અને તે શા માટે ન કરવો તે વિચાર. પોતાના ધણીને અથવા સ્ત્રીને મુકી પરપુરુષ અથવા પરસ્ત્રી સાથે પ્રીતિ કરવી તેનુ નામ વ્યભિચાર અને તે ન કરવો કેમકે મુક્તિ મેળવવામા એટલે પરમાત્મા પાસે જવામા એ બાધક છે પણ અહીં તો પ્રભુ સર્વના ધણી છે, સર્વના હૃદયમા રહે છે, સર્વેએ પ્રભુ પાસે જ જવાનુ છે, અને તેનુ ઉત્તમોત્તમ સાધન ૧૮મા અધ્યાયના ૬૪મા શ્લોકમા કહ્યા પ્રમાણે એ જ છે કે "મારામા મન રાખ, મારો ભક્ત થા, મારૂ યજ્ન કર, મને નમસ્કાર કર, તું મારી જ પાસે આવશે, હું તને સત્ય પ્રતિજ્ઞા કરી કહુ છુ, કારણ કે તુ મને પ્રિય છે" ગોપીઓએ સંસારના સર્વ વિષયનો ત્યાગ કર્યો, અને ભગવાનના ચરણકમલમા પોતાનુ મન અર્પણ કર્યુ અને પ્રભુ પાસે ગઈ, અને એ જ પ્રમાણે સર્વે સ્ત્રી પુરુષોએ સંસારના સર્વ વિષયોનો ત્યાગ કરી, ગોપીઓનુ ઉત્તમ દૃષ્ટાંત લઈ, પ્રભુમા મનનો નિરોધ કરવાનો છે, ત્યારે જ પ્રભુ પાસે જવાય છે. પ્રભુ પાસે જવુ એને વ્યભિચાર કહેવાય જ નહિ, એ તો મોક્ષ કહેવાય मामेवैष्यसि એ તો ફલ છે.

ગોપીઓ સર્વે વિષયનો ત્યાગ કરી પ્રભુ પાસે ગઈ, એટલે ગોપીઓનો સંસાર તો ત્યા જ છૂટ્યો પ્રભુ પાસે જવુ, એ જ મોક્ષ પોતાના ધણીની, પુત્રની, ઘરબારની, સર્વેની દરકાર કર્યા વગર ગોપીઓ પ્રભુ પાસે ગઈ,-એમ જ આપણે સર્વેએ દારા, બાળક, પુત્ર, આપ્ત, વિત્ત, આ લોક, પરલોક સર્વેની દરકાર કર્યા વગર પ્રભુ પાસે જવાનુ છે.

નીતિસેન—એ બધુ તો ઠીક, પણ પછી પ્રભુ સાથે વ્યભિચાર કર્યો તેનુ કેમ?

પુરુષોત્તમ—અરે અધ, મોક્ષ મળ્યા પછી, પ્રભુ પાસે જવા પછી, ચૌદ લોકનો નાથ પાસે ગયા પછી તે પ્રભુ સાથે દિવ્ય, આનંદમય, રસાત્મક ક્રીડા કરવી, તેને તુ વ્યભિચાર કહે છે? કોની સાથે વ્યભિચાર કર્યો? પ્રભુ સાથે? ધર્મ સંસ્થાપનાર્થે અવતાર ધારણ કરનાર પ્રભુ વ્યભિચાર રૂપી અધર્મ કરે એ તારી મતિને સંભવિત લાગે છે? પ્રભુ યોગેશ્વરેશ્વર છે, આત્મારામ છે, ઊર્ધ્વરેતસ્ છે તે તને ખબર છે? ગોપીઓ પોતે પણ પ્રભુને બરાબર તરીકે ઓળખતી ન હતી સાભળ, તેઓ પોતે શુ કહે છે?

न खलु गोपिकानन्दनो भवान् अखिलदेहिनाम् अन्तरात्मदृक् ॥
विखनसार्थितो विश्वगुप्तये, सख उदेयिवान् सात्वता कुले ॥

પ્રભુ પોતે કોણ છે? સાંભળ रसो वै सः । रसं हि एवाय लब्ध्वाऽनन्दी भवति ॥ માટે પ્રભુ પોતે રસરૂપ છે એ રસને જોરવનાર ગોપીઓ સિવાય ભૂતળપર બીજુ કોઈ થયુ છે? એ રસ યોગીઓને સર્વથા દુર્લભ છે, એ રસ જ્ઞાનીઓને સર્વથા અલભ્ય છે, એ રસ મોક્ષ માત્ર ઇચ્છનાર ભક્તને સર્વથા અપ્રાપ્ય છે, જેને કાઇ જોઇતુ નથી,

જેને આ લોક પરલોક કશાની ઇચ્છા નથી, જેને મોક્ષની અપેક્ષા નથી, પણ ઉલટો જેને મોક્ષ બાધક છે, એવા ઉત્કટ રસિક જ આ રસના ભોક્તા છે—

सोऽश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चिता ॥

રાસલીલા એ વિષયભોગ નથી, પણ વિષયને જીતવાનુ ઉત્તમ સાધન છે, આ હુ જ કહુ છુ એમ નથી, પણ ભાગવતકાર પોતે કહે છે કારણ સ્પષ્ટ છે,—સાક્ષાત્ મન્મથમન્મથ મા જેનુ ચિત્ત છે, કોટિકદર્પલાવણ્યની સાથે જેને લગની લાગે છે, તેને બાપડો કામ શુ કરે ?

પ્રો. ફેરજજ—શાબાસ, પુરુષોત્તમ, આટલી નાની વયમા તેં ઘણું મેળવ્યુ છે. તારૂ કહેવુ હુ ઘણે ભાગે સમજ્યો છુ, તો પણ ગોવિંદભટ્ટજીની સાથે એ વિષયપર વિશેષ ચર્ચા થાય એવી મારી ઇચ્છા છે માટે અહીં વધારે રહેવાય એવુ નથી, માટે કાલે બપોરે જો બાગે હુ ગોવિંદભટ્ટજીને શ્રમ આપવા આવીશ એ સમય એમને અનુકુળ ન હોય તો મને કૃપા કરી ખબર કરશો

પુરુષોત્તમ—જરૂર. પણ હુ ધારૂ છુ કે એ સમયે ગોવિંદભટ્ટજીને અવકાશ મળશે જ, માટે આપે આવવાનો જરૂર વિચાર રાખવો.

મોકુ થઇ જવાથી પ્રો ફેરજજ પરસ્પર વદન કરી ગયો. મોટરમા બેસતા બેસતા પુરુષોત્તમે વિચિત્રવીર્યને કહ્યુ "તુ પણ આવજે."

ગોવિંદભટ્ટજીને પુરુષોત્તમે પ્રો. ફેરજજ વિષે સર્વે વાત કરી તેઓ બહુ પ્રસન્ન થયા, ને ગાર્ગીને બનેએ સર્વે વિગત કહ્યું બીજે દિવસે બે બાગે બહાર પુસ્તકશાળામા પ્રો. ફેરજજની વાટ જોતા બેઠા આજનો પ્રસંગ સુંદર હોવાથી અને પ્રો ફેરજજ નિખાલસ હૃદયનો ધાર્મિક સજ્જન હોવાની ખાત્રી થવાથી ગાર્ગી પણ કુસુમને લઇ આવી બેઠી પ્રો ફેરજજ આવી પહોચ્યા તેનો સત્કાર કરી બેસાડ્યા પછી તે બોલ્યો—

પ્રો ફેરજજ—ગોવિંદભટ્ટજી, આપના પ્રસંગથી મને બહુ આનંદ થયો હતો, પણ આપણા આ બાલ મિત્રે તો અનર્થ કરી છે गुणा पूजास्थानं गुणिषु न च लिङ्गं न च वयः એ એના કેસમા બરાબર લાગુ પડે છે કોઇપણ નિષ્પક્ષપાતિ સજ્જનને એની સાથે ચર્ચા કર્યા પછી હિંદુધર્મની ઉત્તમતા માટે શંકા રહે નહીં તેમા વળી એણે ગોપિકાઓના ભાવની અને સ્વરૂપની સમજ આપી ત્યારે તો હુ છક જ થઈ ગયો તે બન્ને ગોપીકાઓ રામી હતા કે નહીં, રમણથી એઓની મુક્તિ માનવી કે નહીં, એ બાબતમા વિશેષ ઉહાપોહ થાય તો બહુસારૂ, એ ઇચ્છાથી આજે આપને શ્રમ આપવો ઉચિત ધાર્યો છે.

ગોવિંદભટ્ટજી—બહુ સારૂ (વિચિત્રવીર્યના સામુ જોઈ બોલ્યા)—તુ ગોપિકાઓને કેવી ધારે છે? વિચિત્રવીર્ય આગળ બોલ્યો ગાર્ગી ને કુસુમ ન હોત તો તો તરત ઉત્તર આપત. પણ—

(અપૂર્ણ)

ઉત્તર.

छान्दोग्योपनिषत्.

सर्वात्मभाव.

સનત્કુમાર અને નારદનો સંવાદ આ પ્રમાણે સમાપ્ત થાય છે બન્ને ભક્તિભાવથી પૂર્ણ હોવાથી એમનો સવાદ પણ ભક્તિરસથી ભરપુર હોય એ સ્વાભાવિક છે નારદે પોતે સર્વ વિદ્યાનું અધ્યયન કર્યું છે, શુકવત્ શબ્દજ્ઞાન નારદને પ્રાપ્ત થયુ છે, પરન્તુ શબ્દની અન્તર્ગત તાત્પર્યના સ્વરૂપનો અનુભવ કર્યો નથી, અર્થસ્વરૂપ બ્રહ્મનો સાક્ષાત્કાર થયો નથી, તેથી એના શોકની નિવૃત્તિ થતી નથી બ્રહ્મ વિના સર્વ આર્ત છે, અલ્પ છે, દુઃખી છે, અને અલ્પ વસ્તુઓમાથી જે આનન્દ કથચિત્ પ્રાપ્ત થાય છે, તે પણ બ્રહ્મના સબન્ધથી થાય છે, તેથી બ્રહ્મના સાક્ષાત્ બ્રહ્મણના અભાવમા આનન્દનો પણ અભાવ, અને આનન્દના અભાવને લીધે, શોકની નિવૃત્તિનો પણ અભાવ નારદને થાય છે વલી સનત્કુમાર જેવા મહાત્માઓ કનેથી નારદે શ્રવણગોચર કર્યું છે કે આત્મવિદ્ શોકને તરી જાય છે, આત્માની સ્ફૂર્તિ થવાથી આત્માને વિષે નિરવધિ નિરુપધિ પ્રિયત્વ પ્રકટ થાય છે, અને આ પ્રિયત્વના પ્રાકટ્યની સાથે પૂર્ણાનન્દનો પણ પ્રાદુર્ભાવ થાય છે, અર્થાત્ આત્મસ્ફૂર્તિ આનન્દપ્રાપ્તિમા પરિણમે છે અત્ર ઉપનિષદ્રમા આત્મશબ્દ સર્વથા પરમાત્મવાચી છે, જીવાત્મવાચી નહિ, અર્થાત્ પરમપ્રેમનો વિષય પરમાત્મા છે, જીવાત્મા નહિ એ નિરવધિ નિરુપધિ સુખસ્વરૂપ રસસ્વરૂપ આનન્દમય પરમાત્માની જ્યારે અત્યન્ત આર્તિપૂર્વક સ્ફૂર્તિ થાય છે ત્યારે તેના દર્શનાદિની ઉત્કટ અભિલાષા મહાનુભાવી ભક્તમા પ્રકટ થાય છે, અને તે અન્તરમા તે વિરહાવસ્થા અને તેના વ્યભિચારી ભાવો સર્વત્ર પ્રભુની સ્ફૂર્તિ, અલ્કારાદેશાદિ અનુભવે છે, અન્તે આત્મારામા ભગવતી શ્રુતિ તેવા મહાનુભાવી ભક્તની આ મરતિ, આત્મક્રીડ, આત્મમિથુન, આત્માનન્દ ઇત્યાદિ શબ્દો વડે સયોગદશા વર્ણવી નિવિધસંભોગચતુર બ્રહ્મની સાથે સર્વ કામનુ અશન (તે ભક્ત) કરે છે ઇત્યાદિ અન્ય શ્રુતિ સાથે એકવાક્યતા પ્રકટ કરે છે. આ પ્રમાણે સંપૂર્ણ પ્રપાઠકનુ પરમ નિગૂઢ રહસ્ય છે

પરન્તુ આવુ નિગૂઢ રહસ્ય નારદ જેવા શાબ્દપડિતને સહસા કહેવુ એ યોગ્ય નહિ હોવાથી, સનત્કુમાર પૂછે છે કે ભાઈ તુ શુ ભણ્યો છે? આના પ્રત્યુત્તરમા નારદ સ્વય વિદિત સર્વ વિદ્યાનુ નિરૂપણ કરે છે, અને વિશેષમા દર્શાવે છે કે હે ભગવન્, હુ તો માત્ર શબ્દને જાણનારો છુ, હુ તો માત્ર મન્ત્રવિદ્ છુ, આત્મવિદ્ નથી, વલી આપ જેવા કનેથી સાભળ્યુ છે કે આત્મવિદ્ શોકને તરી જાય છે, પરન્તુ મને તો શોક થાય છે, તેથી મને એમ લાગે છે કે આત્યન્તિક શોકની નિવૃત્તિ ત્યારે જ થઈ શકે કે જ્યારે આત્મવિદ્ થવાય, માટે હે ભગવન્, આપ મને એવો ઉપદેશ કરો કે જેથી મારુ અભીષ્ટ સિદ્ધ થાય આમ જ્યારે નારદે સનત્કુમારની પ્રાર્થના કરી ત્યારે સનત્કુમાર નારદ જેવા શાબ્દપડિતને એકદમ પરમરહસ્ય નિરૂપણ નહિ કરતા, પ્રથમ તો નારદને નામસ્વરૂપ બ્રહ્મની ઉપાસના, અને નામસ્વરૂપ બ્રહ્મોપાસનાથી યત્ કલ દર્શાવે છે નારદનો આ ઉપદેશથી નિશ્ચય થાય છે કે કેવલ નામની ઉપાસના કરવાથી કઈ સિદ્ધ થતુ નથી, પણ જ્યારે નામને બ્રહ્મરૂપ જાણી, નામસ્વરૂપ બ્રહ્મની ઉપાસના કરે તો ઉક્ત ફલ પ્રાપ્ત થાય, પરન્તુ તે પણ નામની ગતિથી પરિચ્છિન્ન, અર્થાત્ શોકની અત્યન્ત નિવૃત્તિ નામોપાસનામાત્રથી થતી નથી એમ જાણી નારદ નામથી અધિકની જિજ્ઞાસા કરે છે આ ઉપદેશ કરતી વખતે સનત્કુમારના હૃદયમાં શાખાચન્દ્રદર્શનના ન્યાય પ્રમાણે મિથ્યા નામોપાસનાદિનો પ્રક્રમ તે આત્મજ્ઞાનને વાસ્તે હોય એ સ્વાભાવિક લાગે છે ઉપનિષદ્ની અન્તે સનત્કુમાર નામાદિ સર્વની પ્રાપ્તિ બ્રહ્મમાથી જ આ ઉપદેશે છે, એટલે શાખાચન્દ્રદર્શનના દૃષ્ટાન્ત પ્રમાણે અદ્ધિ કઈ નામોપાસનાદિને અન્તમા મિથ્યા કહી, ત્યાન્ત્ય

ગણી નથી અર્થાત્ ત્યાન્ત્ય એવી હીનાધિકારીને યોગ્ય સગુણોપાસના સનત્કુમારે પ્રથમ નારદને ઉપદેશી અને પછી અન્તમા આત્માદેશથી પ્રથમને હેય દર્શાવી હોય એવુ શાખાચન્દ્રદર્શનના ન્યાયથી ગુરુતુ તાત્પર્ય સર્વથા ક્લિષ્ટ લાગે છે, એટલુ જ નહિ પણ ગુઢ રસહીન છે. વસ્તુત બ્રહ્મની અનન્ત વિભૂતિઓ છે, અને સનત્કુમાર નારદને પ્રથમથી જ રસરૂપ આનન્દમય નિરવધિ નિરુપધિ પ્રભુના સ્વરૂપનો નિર્દેશ કરે તો એને જોરવધુ બહુકહિન પડે તેથી પ્રથમ સાક્ષાત્ પ્રકટા-નન્દનો ઉપદેશ નહિ કરતા, પ્રથમ ભગવદ્વિભૂતિઓનો ઉપદેશ કરે છે આ પ્રમાણે વિભૂતિઓના ઉપદેશથી નારદનો અધિકાર સપાદન કરી અન્તમા પરમ રમણીય ભૂમનનો ઉપદેશ કરે છે અને સૂચવે છે કે અત્યન્ત શોકની નિવૃત્તિ ભૂમનથી થઇ શકે છે, એજ આત્મા છે, એના દર્શન મનન વિજ્ઞાનથી શોકને પાર જવાય છે આવા આશયથી સનત્કુમાર નારદની જિજ્ઞાસાને અનુસરીને નામ, વાચ્, મન, સકલ્પ, ચિત્ત, ધ્યાન, વિજ્ઞાન, બલ, અન્ન, જલ, તેજ, આકાશ, સ્મરણ, આશા ઇત્યાદિ ઉત્તરોત્તરની અધિકતા પ્રત્યેકની બ્રહ્મરૂપે ઉપાસનાના ફલદ્વારા ઉપદેશે છે. આટલેથી નારદની જિજ્ઞાસા તૃપ્ત થતી નથી ત્યારે સનત્કુમાર નારદને મુખ્ય પ્રાણ આસન્યનો ઉપદેશ કરે છે, પ્રાણની આજ્ઞાથી અધિકતા અને માહાત્મ્ય દર્શાવે છે, અને આ પ્રાણના દર્શન મનન અને વિજ્ઞાન કરનારનું અતિવાદિત્વ પણ કહે છે. અહિ પ્રાણનુ આવું માહાત્મ્ય તથા પાપરહિતત્વ પણ દર્શાવેલા છે, તેથી પૂર્વના સર્વ કરતા આ પ્રાણ ઉત્કૃષ્ટ છે. અને આ ઉત્કૃષ્ટત્વ તે જ પ્રાણોપાસકનું અતિવાદિત્વ પરન્તુ અહિ વિદ્યાની સમાપ્તિ થતી નથી, વિદ્યાની સમાપ્તિ તો નિરવધિ નિરુપધિ સુખરૂપ ભૂમનમા જ થાય છે, તેથી આ પ્રાણ પણ અહિ ઉપાસનાનો વિષય છે એમ સિદ્ધ થાય છે આવા જ આશયથી શ્રીમદ્ભાષ્યકાર પ્રાણને પણ ઉપાસનાના વિષયમા ગણે છે. આ પ્રમાણે સનત્કુમાર નારદના પ્રશ્નના અનુસાર પૂર્વ પૂર્વથી અધિક એના નામ, વાચ્, મન, સકલ્પ, ચિત્ત, ધ્યાન વિજ્ઞાન, બલ, અન્ન, જલ, તેજ, આકાશ, સ્મર, આશા અને પ્રાણ એ સર્વની બ્રહ્મરૂપે ઉપાસના કરવાનુ નારદને ઉપદેશીને, પ્રાણોપાસકનુ સત્યવાદિ-ત્વથી અતિવાદિત્વ દર્શાવીને, વિજિજ્ઞાસાયોગ્ય તરીકે સત્ય, વિજ્ઞાન, મતિ, શ્રદ્ધા, નિષ્ઠા, કૃતિ, સુખ એ સર્વને પૂર્વપૂર્વના કારણરૂપ દર્શાવીને અન્તમા પરમ વિચારના વિષયરૂપ ભૂમન્ બ્રહ્મનો ઉપદેશ કરે છે

અહિ એમ લાગે છે કે સનત્કુમારનો અભિપ્રાય નારદને આથી અધિક કહેવાનો નહિ હોય, અથવા કદાચિત્ જે કહેવાનો પણ હોય તો તે પણ નારદની પરીક્ષા કર્યા પછી જ. આવા આ શયથી અહિ ક્લિષ્ટ પ્રયોગ થયેલો હોય એમ લાગે છે તાત્પર્ય કે જો નારદ અધિક જિજ્ઞાસા કરે તો તે યોગ્ય નહિ તો અયોગ્ય પરન્તુ નારદ સમજ્યા કે પ્રાણનુ તત્વ માત્ર પ્રાણ નહિ પણ કઇ અન્ય જ છે, એમ જાણી કહ્યુ કે હે ભગવન્, મને સત્યથી અતિવાદી કરો આ ઉપરથી અનૃત વિકાર બ્રહ્મવિદ્યામા નારદે કૃતાર્થતા માની ત્યારે સનત્કુમારે એનુ માનમર્દન કરવાને અધિક ઉપદેશ કર્યો એ પક્ષનો નિરાસ થાય છે વસ્તુત પ્રાણ સુધીની વિદ્યા કઈ વિકૃત બ્રહ્મની નથી, પરન્તુ સંપૂર્ણરીતે પ્રકટ નહિ થયેલા એવા બ્રહ્મની જ છે, વળી નારદે આમા સતોષ માન્યો નથી, પણ હું સત્યથી અતિવાદી થાઉ એ ઉચ્ચાર કરીને પૂર્વવત્ પોતાની અધિક વિષે જિજ્ઞાસા પ્રદર્શિત કરી છે વળી આ પ્રપાઠકમાં નામાદિનો જે પ્રક્રમ કરેલો છે તે પૂર્વ પ્રપાઠકમા એક (બ્રહ્મના) જ્ઞાનથી સર્વ વિજ્ઞાન થાય છે એ શ્રુતિમા દર્શાવેલા સત્યમા કોઇને કુતૂહલતાથી શકા થાય તો તે શકા પરિહાર કરવાને વાસ્તે છે, તે પણ ઘટતુ નથી ગત પ્રપાઠકમા ' એકવિજ્ઞાનેન સર્વવિજ્ઞાનમ 'નો ઉપદેશ આરુણિએ સ્વપુત્ર શ્વેતકેતુને કર્યો અને ત્યાર પછી એ જ સત્યને સુદૃઢ બનાવવાને અનેક દૃષ્ટા-ન્તો પણ આપ્યા, એટલે ગત પ્રપાઠકમા શકા રહે એ જ પ્રથમ તો યુક્ત નથી, વળી નારદ જેવા દીન આર્ત મહાત્માની ભક્તને ભગવતી શ્રુતિના શબ્દમા સદેહ રહે એ પણ યોગ્ય નથી, અનએવ

ભગવદીય સનત્કુમાર આ શંકા લક્ષમા રાખીને નારદને આવો (નામાદિ પ્રકમકરીને) ઉપદેશ કરે છે એમ માનવુ તે તો બુદ્ધિવિલાસ માત્ર લાગે છે આ પ્રાણ પ્રત્યગાત્મા નથી જીવાત્મા નથી પરન્તુ બ્રહ્મ છે [1]અપહતપાપ્મત્વ, પાપરહિતત્વ (પ્રાણોપાસકનુ) આ સિદ્ધ કરે છે

આ પ્રમાણે જ્યારે નારદની જીજ્ઞાસા તૃપ્ત થતી નથી, પણ એની અધિકની જીજ્ઞાસા તો ચાલુ જ રહે છે, ત્યારે સનત્કુમાર સ્વત નારદને સત્ય, વિજ્ઞાન, મતિ, શ્રદ્ધા, નિષ્ઠા, કૃતિ, સુખ ઇત્યાદિ પૂર્વ પૂર્વના કારણરૂપને ત્રિજિ[2]જ્ઞાસાયોગ્ય દર્શાવીને અન્તમાં પરમ નિગૂઢ નિરવધિ સુખરૂપ ભૂમનનો ઉપદેશ કરે છે. આ ભૂમન્ કંઈ સુષુપ્તિ નથી, ગાઢ નિદ્રા નથી ભૂમન્ સ્વત 'અનન્ત'વાચક અને સુખાર્થક હોવાથી, ભૂમનનો અર્થ નિરવધિ સુખરૂપ બ્રહ્મ જ સિદ્ધ થાય છે ભૂમનનો અર્થ નિરવધિ સુખરૂપ એમ સિદ્ધ થવાથી, અન્ય શ્રુતિઓમા જ્યા જ્યા ક્વચિત્ બ્રહ્મનુ આનન્દમયરૂપે વર્ણન કરવામાં આવ્યુ છે, અથવા તો જ્યા રસરૂપે વર્ણન કરવામા આવ્યુ છે, તેઓની સાથે આની (શ્રુતિની) એકવાક્યતા સિદ્ધ થાય છે અર્થાત્ પરમ રમણીય ભજનીય વસ્તુ નિરવધિ સુખરૂપ, આનન્દમય વા રસરૂપ છે, અખિલ પ્રપચની વિસ્મૃતિપૂર્વક પ્રભુમા અત્યન્ત આસક્તિરૂપ નિરોધ પણ આજ વસ્તુ છે આ જ આત્મા છે નિરૂપધિ પરમ પ્રેમનો વિષય પણ આ જ છે. એને વિષે જ્યારે ઉત્કટ પ્રિયત્વ પ્રકટ થાય છે ત્યારે આત્યન્તિક દુખના ધ્વસપૂર્વક પરમ આનન્દની પ્રાપ્તિ થાય છે.

પરમવિચારનો વિષય પણ ભૂમન્ જ છે. પરમ કારણરૂપ એ જ છે, સત્યવદનાદ્યિતુ પરમ કારણ કેવલ પ્રાણોપાસકત્વ નહિ, પણ આ જ છે, આ સર્વ કૃતિ નિષ્ઠા, શ્રદ્ધા, મતિ ઇત્યાદિ દ્વારા જાણીને નારદ પૂછે છે કે હે ભગવન્, ભૂમનનુ સ્વરૂપ શુ છે ? ત્યારે સનત્કુમાર નારદને ભૂમનનુ સ્વરૂપ ઉપદેશે છે ભૂમન્ જ સુખ છે, અલ્પમા સુખ નથી, બ્રહ્મ સિવાય અન્ય સર્વ વસ્તુ અલ્પ છે, આવા આશયથી બૃહદારણ્યકીય શ્રુતિ ભગવાન્ વિના અન્ય સર્વ પદાર્થોનુ આતંત્વ પ્રતિપાદન કરે છે આ ભૂમનનો જ્યારે સાક્ષાત્કાર થાય ત્યારે તદિતર પદાર્થનુ દર્શન, મનન, વિજ્ઞાનાદિ ન થાય એ સમીચીન છે, અનન્ત આનન્દમા અવગાહન કરનારને અન્ય પદાર્થોની હીનતાને લીધે તેમનુ અનુસધાન નથી રહેતુ, પ્રપચવિસ્મૃતિપૂર્વક દૃઢ આસક્તિરૂપ નિરોધ પણ ભૂમન્ જ છે, તેથી જ્યારે ભૂમનનુ દર્શન, મનન, વિજ્ઞાનાદિ થાય છે ત્યારે તદિતર સર્વ પદાર્થોની વિસ્મૃતિ થાય છે, અને તેમનુ ભાન ભૂમદર્શન કરનારને રહેતુ નથી. વિદ્યાની પરિસમાપ્તિ પણ ભૂમનમા જ થાય છે, તેથી ભૂમનનો વિચાર સહજ વિસ્તારથી થયેલો છે ભૂમન્ સુખ છે, અલ્પમા સુખ નથી, અર્થાત્ ભૂમન્ અનન્ત છે, પૂર્ણ છે, જ્યારે તદિતર સર્વ પદાર્થ અલ્પ છે, અપૂર્ણ છે, ભૂમનના દર્શન કરનારને અન્યનુ ભાન નથી રહેતુ, જ્યારે ભૂમદર્શન જેને નથી થયુ તેને અન્યનુ ભાન રહે છે, અને તેથી તેનુ પ્રિયત્વ ગાઢ નિરુપધિ નહિ થતા અનિત્ય અને સ્વલ્પ બને છે, આવા જ આશયથી શ્રુતિ ભૂમન્ જ સિવાયના અન્ય સર્વ પદાર્થોને અલ્પ ગણે છે, મરણશીલ ગણે છે પૂર્ણ પ્રકટાનન્દ પ્રભુના દર્શન કરનારને નિત્ય આનન્દ પ્રાપ્ત થાય, અને ક્ષુદ્ર વસ્તુઓ મચ્યા રહેનારને નિત્ય દુખ થાય, મરણ થાય એ પણ અયોગ્ય નથી

ભૂમનનું આ સ્વરૂપ સાભળતા જ નારદનો નિશ્ચય થાય છે કે આથી અધિક પદાર્થની સત્તા હોય એ સભવતું નથી, અને એની (નારદની) અધિકની જિજ્ઞાસા નિવૃત્ત થઈ જાય છે, ત્યારે દીન થઈને પૂછે છે કે હે ભગવન્, એ ભૂમનની પ્રતિષ્ઠા શામા છે ? સ્વથી ઇતરમા આ ભૂમનની

---

૧ આ બ્રહ્મનો એક અસાધારણ ધર્મ છે,
૨ વિચારવાયોગ્ય

પ્રતિષ્ઠા થઈ શકે જ નહિ તેથી સનત્કુમાર કહે છે કે ભૂમનની પ્રતિષ્ઠા સ્વમહિમામા છે,'આ મહિમા તે કઈ સાધારણ સમજવો નહિ, લોકમા હાથી રથ ઘોડા (મોટરકાર!) વગેરે ને મહિમા માને છે, એવા લૌકિક મહિમામા ભૂમનની પ્રતિષ્ઠા થાય એ અસગત છે પ્રભુ લક્ષ્મીથી વા મોટી સત્તાથી મલી ન શકે એમા શુ આશ્ચર્ય? વલી અન્ય હોય તે અન્યમા પ્રતિષ્ઠા કરે, ભૂમન્ તો આત્મા છે, તેથી જ્યાં આત્મત્વનો સબધ હોય ત્યા જ ભૂમનની સ્થિતિ થઈ શકે છે. શેષશાયી નારાયણને સ્વસ્વરૂપ વેદરૂપ શેષ સ્થિતિ કરવાને જોઇએ છે, મહાવિષ્ણુને સ્વધામ વ્યાપિવૈકુઠ જોઇએ છે, કૃષ્ણને ગોપજનુનુ હૃદય જોઇએ છે, તાત્પર્ય કે સ્વ શિવાય અન્યમા સ્થિતિ થાય જ નહિ. પ્રભુને સ્થિતિ કરવાને સ્વસ્વરૂપ જ જોઇએ, અને તે સ્વરૂપ તે જ આ મહિમા-વા-સર્વાત્મભાવ, આ સર્વાત્મભાવવાળો ભક્ત જ પ્રભુની પ્રતિષ્ઠાને માટે યોગ્ય છે અર્થાત્ ભૂમન્ સ્વસ્વરૂપમા જ પ્રતિષ્ઠા કરે છે, પોતાની ઉત્કટ સ્ફૂર્તિ થવાથી જે તદ્રૂપ બની ગયો છે, તેવા મહાનુભાવી ભક્તમા જ ભૂમન્ સ્થિતિ કરે, પ્રતિષ્ઠા કરે, એ જ વિચાર રમણીય છે 'स एवाधस्तात्' આદિમા આજ મહિમાનુ પ્રતિપાદન ભગવતી શ્રુતિ વિશેષતાથી કરે છે અહિ જ સર્વાત્મભાવનુ તાદૃશ સ્વરૂપ ખડુ થાય છે

વિરહાવસ્થામા જ્યારે ભાવ અતિશય ઉત્કટ થાય છે ત્યારે પ્રભુની જ સ્ફૂર્તિ સર્વત્ર થાય છે, પ્રભુ વિના અન્યનુ દર્શન થતુ નથી, મનન થતુ નથી, વિજ્ઞાન થતુ નથી, પણ પ્રભુને જ ઉપર, નીચે, આગલ, પાછલ એમ સર્વત્ર અનુભવે છે, સર્વત્ર પ્રભુસ્ફૂર્તિ થાય છે, અને ક્વચિત્ આ સ્ફૂર્તિ એટલી બધી પ્રબલ થાય છે કે (ભક્તને) પોતાનામાં પણ (સ્વમા) પ્રભુસ્ફૂર્તિ થાય છે, ત્યારે પોતાને જ (પ્રભુરૂપથી) સર્વત્ર અનુભવે છે, પોતે જ સર્વ કઈ કરી શકશે એમ માને છે આ-પ્રમાણે વિરહાવસ્થાના અનેકાનેક વ્યભિચારી ભાવોનો અનુભવ પરમ પ્રેમાલુ ભક્તને થાય છે વ્યભિ-ચારી ભાવો નિયમિત નહિ હોવાથી, એમનુ સ્વરૂપ શ્રુતિમા પણ અનિયત વર્ણવ્યુ છે, અને તેથી તરત જ આત્માદેશનું વર્ણન કર્યુ છે. આ આત્મા જ પરમ નિરવધિ નિરુપધિ પ્રેમનો વિષય છે, અને આનો જ સાક્ષાત્ અનુભવ રસિક ભક્ત સર્વત્ર કરે છે અને વિરહાવસ્થાના તાપક્લેશથી જ્યારે ભક્ત અતિદીન થઈ જાય છે, સર્વ અનુસંધાન છુટી જાય છે, સર્વ પ્રાકૃત સામગ્રીનુ જ્યારે તિરોધાન થઈ જાય છે, ત્યારે પ્રભુ જ સ્વય પ્રકટ થઈ આવા ભક્તને પ્રાણતનુનુ દાન કરે છે, પ્રાણ, મન, ઇન્દ્રિય, વિમલ (દિવ્ય) ક્ષ્યાદિ સર્વ યથોચિત અલૌકિક સામગ્રીનુ દાન કરે છે, અને તેનુ (ભક્તનું) સ્વસમાનયોગ્યત્વ સપાદન કરે છે આ પ્રમાણે સર્વ અપેક્ષિત સામગ્રી સપાદન થઈ જાય છે ત્યારે ભક્ત વિરહદશાનું ઉત્તર-દશા સયોગદશાનો અનુભવ કરે છે, અને પોતે આત્મરતિ, આત્મક્રીડ, આત્મમિથુન, આત્માનન્દ બને છે આ ભક્તનો સર્વ વ્યવહાર (અપ્રાકૃત) પ્રભુથી જ ચાલે છે, પ્રાણપોષક પણ પ્રભુ જ થઈ જાય છે જેનું સ્વીય તરીકે પ્રભુએ કૃપાતિશયથી વરણ કર્યું છે, તેને જ આ ભાવ સ્ફુરે છે. આ ભક્તના આ ભાવને શ્રીમદ્ભાગવતમા અને સપ્રદાયમાં સર્વાત્મભાવની સજ્ઞા અપાય છે આ સર્વા-ત્મભાવ ભગવદાત્મક છે, તેથી જ અહિ સ્વમહિમારૂપે વર્ણન કરાયેલો છે પ્રભુની પ્રતિષ્ઠા પણ આવા ભક્તમા જ થાય છે એ પરમ રમણીય રહસ્ય છે

આ સર્વાત્મભાવનો ઉપદેશ ભગવાને શ્રીમદ્ઉદ્ધવને શ્રીમદ્ભાગવતમા કર્યો છે. આ ભાવમા પ્રથમ સર્વ પ્રપચની વિસ્મૃતિ થઇને તરત જ પ્રભુમા અત્યન્ત વિગાઢ ભાવવાળી આસક્તિ પ્રકટ થાય છે. શ્રીમદ્ગોપીમન્તિનીઓએ આ જ ભાવનો અનુભવ વિરહાવસ્થામા કર્યો હતો, તેથી પ્રભુ જ તેમના તે સમયે સર્વત સર્વ થઇ રહ્યા હતા સર્વાત્મભાવમા જે ભગવત્સ્ફૂર્તિનુ વર્ણન છે તે અખડ અલ્પભાવવાલા શુદ્ધાદ્વૈતી જ્ઞાનીને જે સ્ફૂર્તિ થાય છે તેનાથી વિલક્ષણ છે. જ્ઞાનીની સ્ફૂર્તિ આધ્યાત્મિક છે, પરતુ ભક્તની ભગવત્સ્ફૂર્તિ આધિદૈવિક છે, બ્રહ્માનન્દમાથી ઉદ્ભાગ પામેલા ભજનાનન્દનો સ્વ-

માન કરવાને યોગ્ય એવા ભક્તની છે, જ્ઞાનીની કક્ષા કરતાં ઉંચી કક્ષાની છે જ્ઞાનીની સ્મૃતિ અખંડ છે, 'तत्केन किं पश्येत्' વાક્યોક્ત સ્વરૂપવાળી છે, પણ ભક્તની સ્મૃતિ સખંડ છે, છ દિશાઓના નિર્દેશપૂર્વક અહિ કથન કરેલુ છે. તેમજ આ ભગવત્સ્મૃતિ (ભક્તની) વામદેવાદિની અહ્મબ્રહ્મરૂપ બ્રહ્મસ્મૃતિથી પણ વિલક્ષણ છે, કારણ કે અહિ અહંકારાદેશ પછી આત્માદેશનુ વર્ણન છે તેથી આ ભક્તની આત્મસ્મૃતિ–નિરુપધિ પ્રિયત્વના વિષયની સ્મૃતિ–ભગવત્સ્મૃતિ–ઉક્તજ્ઞાનીની સ્મૃતિદ્વયથી ભિન્ન છે, એટલે આ સ્મૃતિવાળો ભક્ત પણ ઉક્ત જ્ઞાનીઓથી વિલક્ષણ છે આ ભક્ત લોકથી પણ વિલક્ષણ છે કારણ કે મરણશીલ મનુષ્યોના સુખની ઇચ્છા (આ ભક્તને) નથી. તેમ જ આ ભક્ત દહરોપાસકથી પણ વિલક્ષણ છે, કારણ કે (એ ભક્ત) કામના રહિત છે આ સ્મૃતિ તો શ્રીમદ્ વ્રજવધુઓની છે જ્યારે શ્રીવ્રજવધુઓ કૃષ્ણના ઉત્કટ વિરહમાં છે તે સમયે કૃષ્ણની સ્મૃતિ તેમને સર્વત્ર થાય છે, માટે આ સ્મૃતિ અને તે સ્મૃતિ ઉભય વસ્તુત એક જ છે.

આ પ્રમાણે ઉપનિષદ્ પરમ પ્રેમાળુ ભક્તની વિરહદશામા અનુભવાતા સર્વોત્મભાવનું સ્વસ્વરૂપ ત્રિવિધરીતે પ્રતિપાદન કરીને આ મહિમાવાલા (સર્વોત્મભાવવાળા) પુરુષના ફલનો નિર્દેશ કરે છે જ્યારે વિરહભાવ પ્રબલ થાય છે ત્યારે સર્વત્ર પ્રભુની સ્મૃતિ થાય છે એટલે 'एव पश्यन्' આમ દર્શન કરતો (શ્રુતિ ચવુંવે છે), ક્વચિત્ વિરહદશામા બહારનું અનુસંધાન છૂટી જવાથી અહંકારાદેશ અનુભવે છે, (एवं मन्वान) ત્યારે હું આમ કરીશ એમ પ્રેમી ભક્ત ધારે છે, અને કદાચિત્ કરે છે પણ તેમ જ ગોપિકાઓએ પણ તેમ જ પ્રભુના અન્વેષણ (શોધ), ગુણગાનાદિ કર્યાં હતા (એટલે આમ મનન કરતો શ્રુતિ વર્ણવે છે), અને જ્યારે સ્મૃતિના વૈયર્થ્યનું (નિષ્ફલતાનું) ભાન થાય છે અને અતિદીન થઇ જાય છે, ત્યારે પ્રભુ સ્વત પ્રકટ થાય છે શ્રીગોપિકાઓએ પ્રભુની પ્રાપ્તિને માટે અનેક પ્રવૃત્તિઓ કરી અને જ્યારે તે સર્વે નિષ્ફલ થઇ ત્યારે શ્રીયમુનાજીના તટપર મલ્યા, અને અતિ દીન થઈ જઇને તાપકલેશ અનુભવ્યો, રુદન કર્યું, ત્યારે જ પ્રભુ પ્રકટ થયા અને પછી સ્વસ્વરૂપાનન્દનુ દાન કર્યું, (એટલે વિજ્ઞાન કરતો શ્રુતિ વર્ણવે છે) આ તાત્પર્ય આત્મા દેશનુ છે આ પ્રમાણે જ્યારે નિરુપધિ પ્રેમ રસરૂપ આનન્દમયનો સાક્ષાત્કાર થાય છે, કે તત્ત સયોગદશાનો અનુભવ કરતો તે ભક્ત આત્મરતિ, આ મક્રીડ, આત્મમિથુન, આત્માનન્દ થાય છે, આત્મ મા જ, સર્વના આત્મા પ્રભુમા જ એનો પ્રેમ સ્થિતિ કરે છે, પ્રભુમાં જ તે ક્રીડા કરે છે, પ્રભુમા જ યુગલત્વના સુખનો અનુભવ કરે છે, અને પરમ આનન્દ પણ પ્રભુમા જ અનુભવે છે ક્રિઅદ્વૈતના તે સ્વરાટ્ થાય છે, પ્રભુમા તે આનન્દ માને છે એટલુજ નહિ પણ પ્રભુને તે જ આનન્દ પમાડે છે આવા ભક્તનો કામચાર કર્મ નામોપાસક વા પ્રાણોપાસકની માફક પરિછિન્ન નથી, પણ સર્વમા આ ભક્તનો કામચાર થાય છે એમ શ્રુતિ પ્રતિજ્ઞા કરે છે, અને 'सोऽश्नुते सर्वान् कामान् सह ब्रह्मणा विपश्चिता' 'સર્વ કામનો ભોગ તે (ભક્ત) વિવિધરસભોગચતુર પ્રભુસાથે કરે છે' એ અન્ય શ્રુતિનું આપણને સ્મરણ કરાવે છે પ્રભુના પરમ સ્વરૂપના સાક્ષાત્કાર થયા પછી–સ્વરૂપાનન્દનુ પાન કર્યા પછી–નિજાનન્દનુ પાન કર્યા પછી–એની ગતિ સકુચિત કેમ રહી શકે?

આ પ્રમાણે ભૂમદર્શનવાનુનુ ફલ પ્રતિપાદન કરીને જે લોક આ સ્વરૂપથી અનભિજ્ઞ છે, જેઓએ ભૂમદર્શન કર્યું નથી, તેમના ફલનો નિર્દેશ ભગવતી શ્રુતિ સૂક્ષ્મમા કરે છે ભૂમદર્શનથી રહિત લોકોનો કામચાર સકુચિત હોય છે, સર્વ લોકમા એમનો કામચાર નથી હોતો, પણ નામોપાસકવત્ નામની ગતિથી પરિછિન્ન અથવા પ્રાણોપાસકવત્ અનિવાર્તિથી પરિછિન્ન હોય છે. જે લોકોને પ્રભુ વિના અન્ય રુચે છે–જેઓ વિષયમા આનન્દ માને છે– તેઓ અનિત્ય લોકની પ્રાપ્તિ કરવાવાલા છે. નિત્ય નિરુપધિ સુખ તેમને પ્રાપ્ત થતુ નથી. તેમનો તો વિષયભોગ સવિઘ્ન અલ્પ અને ધાતક હોવાથી દુઃખ છે

આ પ્રમાણે ભૂમનનું માહાત્મ્ય દર્શાવીને વિદ્યાની સમાપ્તિ પણ ભૂમનમાં જ થાય છે એમ સૂચવ્યું છે.

અન્તિમ ખંડમા ભગવતી શ્રુતિ કેટલીક આનુષંગિક શંકાનો નિરાસ કરીને ભૂમદર્શનવાનનુ માહાત્મ્ય શ્લોક વડે ગાન કરે છે. વિરહદશાનો અનુભવ કરનારો ભક્ત જ્યારે પ્રેમની અન્તિમ દશા (મૂર્છા–અન્ત નહી) અનુભવે છે એ ભક્તની અનુભવ કરવાને યોગ્ય એવી સર્વ પ્રાકૃત લૌકિક સામગ્રીનુ ઉપમર્દન થઇ જાય છે, ત્યારે એ ભોગ કેમ સંભવી શકે ? આવી શંકા કોઇને થાય તો તેનો પરિહાર શ્રુતિ બહુ સ્પષ્ટતાથી કરે છે ભક્તના પ્રાકૃત–લૌકિક વિગ્રહ ઇન્દ્રિય પ્રાણ ઇત્યાદિ સર્વ ભગવદનુભવમા અયોગ્ય હોવાથી ઉપમર્દન પામે છે, અને તેને બદલે તે અનુભવમા ન્યૂનતા ન રહે તેને વાસ્તે પ્રભુ સ્વય પ્રકટ થઇને આવા ભક્તને સ્વત અલૌકિક—અપ્રાકૃત સ્વયોગ્ય સર્વ સામગ્રીનું દાન કરે છે, અને અલૌકિક સર્વ કામોપભોગની યોગ્યતા તેનામા સંપાદન કરે છે નામ અને વાણી, પંચ જ્ઞાનેન્દ્રિય વિજ્ઞાન, ધ્યાન, ચિત્ત, સંકલ્પ અને મન, ચાર તત્વો અન્ન, જલ, તેજ અને આકાશ, બલ, મન્ત્રો , કર્મ સ્મરણ, આશા, પ્રાણ, આવિર્ભાવ અને તિરોભાવ આ સર્વ આત્મન–પ્રભુત ભક્ત સંપાદન કરે છે, એટલે આ ભક્તનો કામચાર પણ સર્વ પ્રકારે બધ વિનાનો હોય છે ભગવાન્ સ્વત જ્યારે આ સર્વ સામગ્રીનુ દાન કરે તો પછી પ્રાકૃત સામગ્રીના તિરોધાનથી અલૌકિક સર્વ કામોપભોગમા બાધ આવે એ શંકા કરવી સર્વથા અયુક્ત છે

આ પ્રમાણે ઉપનિષદ્ શંકાનો પરિહાર કરીને ભૂમદર્શનવાન્ ભક્તનુ માહાત્મ્ય વર્ણવે છે આ ભૂમદર્શનવાનને દુ ખતા નથી હોતી તો પછી રોગ અને ઉપદ્રવ તો ક્યાંથી હોય? અત્ર શ્રીમદાચાર્યજીએ આપ્યા કરેલુ શુદ્ધપુષ્ટિભક્તનુ લક્ષણ આપણને અક્ષરશ સ્મરણ થાય છે. ન તે પાષણ્ડતા યાન્તિ ન ચ રોગાદ્યુપદ્રવા । મહાનુભાવા પ્રાયેણ શાસ્ત્ર શુદ્ધ વહેતરે ' ॥ આ ભક્ત સર્વનું દર્શન કરે છે, સર્વ પ્રકારે સર્વની પ્રાપ્તિ કરે છે આ અનુભવ કરવામા ભક્ત એકધા, ત્રિધા, પંચધા ઇત્યાદિરીતિ આવિર્ભાવ પામે છે અત્ર ઉપનિષદમા દ્વિધા, ચતુર્ધા ઇત્યાદિ પ્રકાર નથી કહ્યો, તે તિરોભાવ પ્રકારનો બોધ કરવાને હોય, અથવા આવા અધિકારી અત્યન્ત વિરલ હોવાથી જેનુ કથન શ્રુતિમા ન કર્યું હોય તો તે પણ અનુપપન્ન નથી આમ સર્વ નિરૂપણ કરીને શ્રુતિ ભૂમદર્શનના પરમ કારણરૂપ આહારનો નિર્દેશ કરે છે આહારશુદ્ધિ થાય ત્યારે જ આ દર્શન સંભવે, અર્થાત્ પરમ નિર્દુષ્ટ વસ્તુ પ્રભુવિના અન્ય નથી તેથી પ્રભુ જ્યારે પ્રાણપોષક થાય ત્યારે જ આ સર્વાન્તર્ભાવાદિ ફલની પ્રાપ્તિ થાય છે. આહાર શુદ્ધ થવાથી સત્ત્વ શુદ્ધિ થાય છે સર્વ લીલોપયોગી સામગ્રી શુદ્ધ થાય છે—સત્વશુદ્ધિથી નિર્મલ સ્મૃતિ થાય છે, અર્થાત્ સ્વરૂપનુ વિજ્ઞાન થાય છે. સ્વરૂપનુ વિજ્ઞાન થાય ત્યારે લોકના અને વેદના સર્વ ધર્મના બધનો અત્યન્ત છૂટી જાય છે, એવા છૂટી જાય છે કે ફરીથી જોડાતા નથી. આ પ્રમાણે ઉપનિષદ્ ઉપસંહાર કરે છે. આનો ઉપદેશ માત્ર સનત્કુમાર કરે છે, તમસની પાર દર્શાવે છે, પણ આ પરમ ફલ આપી શકતા નથી. આ પરમ ફલ તો પ્રભુની કૃપાનિરપેક્ષથી પ્રાપ્ત થાય છે આટલુ એ દર્શાવ્યુ તે સનત્કુમારની નારદ ઉપર કૃપા સમજવી આ પ્રમાણે આ પ્રપાઠકનો ઉપદેશ કરનાર—કૃપાળુ—વરદાનથી શિવના પુત્ર થનાર ભગવદીય ભગવદાવેશયુક્ત સનત્કુમાર છે, અને ઉપદેશ ગ્રહણ કરનાર કામ ક્રોધાદિ સર્વ આસુર સંપત્તિ જેનામાથી નષ્ટ થયેલી છે તેવો ભક્ત નારદ છે આવુ યુગ્મ મળે તો જ આનો ઉપદેશ થાય, અસાધનસંપન્ન પામર જીવો આ ઉપદેશનુ શ્રવણ કરવાને પણ યોગ્ય નથી—શ્રીકૃષ્ણાર્પણમસ્તુ ।

॥ जपसमये स्वरूपध्यानम् ॥

अष्टाक्षरं तथा मन्त्र जप्यं शरणसिद्धये ॥
शरण्यं यतः कृष्णः स्वतः सर्वात्मनोद्धरेत् ॥ ४ ॥

શ્લોકાર્થઃ—તેમ જ શરણ સિદ્ધ થવા માટે અષ્ટાક્ષરમંત્રનો જપ કરવો કારણ કે શરણ્ય શ્રીકૃષ્ણ પોતે જ પ્રમેયબળવડે ઉદ્ધાર કરે

રહસ્યઃ—શ્રીમદાચાર્યચરણે પ્રભુની પ્રાર્થના કરતી વખતે કહ્યું છે કે,—' આપ શરણ આવેલાઓનો ઉદ્ધાર કરો છો ' પદ્મપુરાણમાં પણ આ પ્રકાર દૃષ્ટિગોચર થાય છે જુઓ ' હું આપને જ શરણ આવ્યો છું,' હું આપનો જ છું, એમ ફક્ત એક વાર જે મનુષ્ય બોલે, તેને હું સર્વ ભૂતમાત્રથી અભય આપું છું એવું મારું વ્રત છે, આ પ્રમાણે ભગવાન્ આજ્ઞા કરે છે વાસ્તે શરણસિદ્ધિની આવશ્યકતા માટે કશો સંદેહ રહેવા ન જોઈએ શરણ સિદ્ધ થયા પછી જ પ્રભુમાં સ્વામિત્વનું ભાન થાય છે પોતાનામાં દાસત્વની સ્ફૂર્તિ થાય છે શરણ દૃઢરીતે સિદ્ધ થયા પછી જ ' અન્યાશ્રય ' વગેરે બાધક દોષ અસ્તિત્વ ધરાવતા નથી દેવ, કાલ, મંત્ર, કર્મ વગેરેનો મુદ્દલે આશ્રય રહેતો નથી લૌકિક, વૈદિક કાર્યોમાં રહેતા વ્યાસંગ પણ નિવૃત્ત થઈ જાય છે આ ઉપરથી જણાય છે કે પ્રભુ પોતે જ પોતાના પ્રમેયબલવડે જ ઉદ્ધાર કરે છે શ્રીવલ્લભાચાર્ય અષ્ટાક્ષરમંત્રજપથી શરણસિદ્ધિ થાય એ હેતુથી જ તેના જપની અત્યંત આવશ્યકતા ઉપદેશે છે

उद्धारोऽप्यत्र मन्तव्यः स्वरूपावेशसाधकः ॥
फलान्तरानपेक्षस्य किं देयं प्रभुणापि हि ? ॥ ५ ॥

શ્લોકાર્થઃ—સ્વરૂપાવેશનો સાધક ઉદ્ધાર આ હેતુથી માનવો કારણ કે ઇતર ફળની આકાંક્ષા જ જેને ન હોય તેને પ્રભુએ શું આપવું ?

રહસ્યઃ—શરણ્ય જીવનો ઉદ્ધાર પ્રભુ કરે છે જ જુઓ, ' વ્યાપિનૈકુંઠવાચ્ય અક્ષર બ્રહ્મમાંથી શરણ્ય જીવોનો ઉદ્ધાર કર્યો ' એ શ્રીમદ્ભાગવતનું વાક્ય લૌકિકવૈદિકકાર્યથી શરણ્ય જીવનો ઉદ્ધાર કરીને કેવળ પ્રભુ પોતે સ્વરૂપાવેશ જ કરાવે છે પછી સ્વભાગાનુરૂપ, લીલાયોગ્ય, સત્ય, જ્ઞાનાનંદાત્મક, બ્રહ્મસંબંધી શરીર વગેરેનું દાન પ્રભુ શરણ્ય જીવને કરે છે આ શરણ્ય જીવને પ્રભુ મુક્તિપર્યંત આપવા તૈયાર થાય તો તે પણ તે જીવ સ્વીકારતો નહિ વાસ્તે તે જીવ સર્વથી નિરપેક્ષ છે માટે પ્રભુ એને આપે પણ શું ? આ ભગવદીય તો સદાસર્વદા ભગવદ્રસનિમગ્ન જ રહે છે. ભગવાન્ પણ તેઓની દશાનો આગેરૂડ્ય વિચાર આપે છે ' ભગવદીયો મારા સેવન વિના બીજું કંઈ આપવામાં આવે તો પણ લેતા નથી ' બીજા માર્ગ કરતાં સ્વમાર્ગીય શરણ્યજીવનો ઉદ્ધાર વિલક્ષણ છે એમ બતાવવા ઉદ્ધારશબ્દની રહસ્યમયી ભાવના વિશદ કરી છે

---

१ शरण्यसमुद्धारम् ।
२. सकृदेव प्रपन्नोऽह तवास्मीति च यो वदेत् । अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद्व्रत मम ।
३ दीयमान न गृह्णन्ति विना मत्सेवन जना ॥

तत्र स्वस्वामिरूपस्य भावनारीतिरुच्यते ॥
यतो भावनया भावः सिद्धयेन्नान्येन केनचित ॥ ६ ॥

શ્લોકાર્થઃ—તે રાસલીલામાં પોતાના સ્વામીના સ્વરૂપની ભાવનાનો પ્રકાર કહેવાય છે. કારણ કે ભાવનાવડે જ ભાવ સિદ્ધ થાય છે, બીજા કોઇથી નહિ

રહસ્યઃ—આ પુષ્ટિમાર્ગમાં સ્વરૂપની ભાવના કરવાની ઘણી જ આવશ્યકતા છે. ભાવ તો ભાવનાથી જ સિદ્ધ થાય છે, આચાર્યશ્રી ઉપદેશે છે કે,–'[1]ભાવ ભાવનાથી સિદ્ધ છે, બીજા સાધનની કંઈ જરૂર નથી.' માટે ભાવને સિદ્ધ કરનારી ભાવનાની પણ જરૂર હોવી જ જોઇએ। પુષ્ટિપુરુષોત્તમ પણ ભાવાત્મક છે. લીલાસામગ્રી પણ ભાવાત્મક છે વૃંદાવન તથા તત્સબંધિ ભૂમિકા પણ ભાવસ્વરૂપ જ છે આ સર્વ ફલપ્રકરણના શ્રીસુબોધિનીજીમાં આચાર્યચરણે વિસ્તારથી વર્ણવે છે વળી શ્રીહરિરાયજી પણ 'સહસ્ર'દોષની ભાવના' માં પણ સવિસ્તર ચર્ચન કરે છે. વિશેષ જીજ્ઞાસુઓએ તે ગ્રંથો અવલોકવા. મુખ્યત્વે કરીને ભાવનાની સંસિદ્ધિ શ્રીસ્વામિનીજીમાં જ થાય છે માટે તેમની કૃપાનો આશ્રય કરવો, અથવા તો તદ્રૂપ શ્રીમદાચાર્યવર્યની કૃપાનો સમાશ્રય કરવો તે વિના બીજા કોઇ જીવોના સમાશ્રયથી કંઇ પણ ફળ નથી આચાર્યશ્રીનું પ્રાકટ્ય કેવળ સ્વીય જીવોને ભાવનું દાન કરવામાટે જ છે માટે જ આચાર્યશ્રી પોતે પ્રકટ થઇને વેણુનાદ્યાનાપન્ન બ્રહ્મસંબંધકાળ સ્વીય જીવોની ભાવભાવનાસિદ્ધિ કરાવે છે વાસ્તે પૂર્વોક્ત ભાવ સિદ્ધ કરવા સારુ આચાર્યશ્રીનો જ સમાશ્રય અભ્યુપપન્ન છે ભાવના એટલે શું ? તે કૃપા કરીને જણાવે છે.

सर्वलीलाफलं रासलीलामाद्यौ विभावयेत् ॥
तस्यामेव हि लीलायां सर्वभावात्मिका यतः ॥ ७ ॥

શ્લોકાર્થઃ—સર્વલીલાનું ફળ રાસલીલા છે પહેલા એ ભાવના કરવી કેમ કે તે રાસલીલામાં જ સર્વ ભાવાત્મિકા લીલા છે

રહસ્ય—भगवता सह सलापो दर्शनं मिलितस्य च ॥ એમ આચાર્યશ્રી આજ્ઞા કરે છે, તે ઉપરથી નિશ્ચયાર્થ એ જણાય છે કે પ્રભુમાં જ એકાત્મ્યેન્દ્રિયોનો વિનિયોગ કરી દેવો આ મુખ્યફલ છે. એમ આપે સમર્થન પણ કર્યું છે તે જ પ્રેમગમા શ્રુતિરૂપા ગોપીજનો પણ એમ જ આજ્ઞા કરે છે કે –' નેત્રવાળા પુરુષોને કંઇ પણ ફલ હોય તો તે ભગવન્મુખારવિન્દનું દર્શન જ છે, બીજું કંઇ પણ અમારા જાણવામાં આવ્યું નથી' આ વાક્યથી દર્શિયવાળાને પ્રભુનો સંબંધ થયો તે ફળ છે, આ હેતુથી એમ સિદ્ધ થાય છે કે, પ્રભુ તો નિત્યસર્વલીલ હોવાથી દાન, માનાદિ અનેક લીલાઓ કરે છે, પણ પ્રધાનપદ તો રાસલીલા જ ભોગવે છે, એમ નિઃસંદિગ્ધ કહી શકાય

આ પ્રમાણાનુસારિવિચારથી રાસલીલાનું મુખ્યત્વ મનમાં લાવીને જ શ્રીહરિરાયજી પહેલા તેની ભાવના ઉપદેશે છે. બ્રહ્મને સર્વાત્મભાવનું દાન, સ્વરૂપાનંદનો પૂર્ણ અનુભવ વગેરે સર્વ ફલમંડ્યપાતિલીલામાં થાય છે. પુષ્ટિમાર્ગીય સર્વોત્કૃષ્ટ મોક્ષ પણ આ લીલામાં જ મનાય છે. શુદ્ધપુષ્ટિયુક્ત મૃગ્યા રૂપબ્રહ્મ પ્રભુની સાથે વિભાવ અનુભાવ વગેરે વિવિધ મનોભિલષિત ભાવની સિદ્ધિ પણ આ લીલામાં જ થાય છે વાસ્તે તેની ભાવના પ્રથમ કરવી એમ નિગૂઢ રહસ્ય છે.

---

१ भावो भावनया सिद्ध साधन मान्यविद्यते ॥

॥ શ્રીકૃષ્ણાય નમઃ ॥

પુષ્ટિવિવેક

ગ્રંથકાર ગત પ્રકરણત્રયથી જગત્, જીવ અને મૂલસ્વરૂપનો વિચાર વિચાર કરીને હવે ખાસ મુદ્દાના વિષય ઉપર આવે છે

હવે આ વિચારાય છે પુષ્ટિ એટલે શું ? પુષ્ટિમાર્ગ એટલે શું ? શ્રીશુકદેવજીનું વાક્ય છે કે—[૧]'પોષણ એટલે ભગવદનુગ્રહ' પ્રભુનો અનુગ્રહ-કૃપા તે જ પોષણ પોષણ એટલે પુષ્ટિ શ્રીઆચાર્યજી **નિબંધમાં** પણ આજ્ઞા કરે છે કે—[૨]'શ્રીકૃષ્ણના અનુગ્રહરૂપ પુષ્ટિ કાલ વગેરેને અપેક્ષા જ બાધ કરનારી છે.' આ ઉપરથી સમજાય છે કે અનુગ્રહરૂપ જે ભગવદ્ધર્મ તે જ પુષ્ટિ તે પુષ્ટિ વિલક્ષણ છે લૌકિક અને અલૌકિક બન્ને ફલને સાધનારી છે માટે જ કોઈ અધિકારી સાધનરહિત હોય તો તેને પણ પુષ્ટિ ધણુ જ ઉત્કૃષ્ટ ફલ આપે છે, અને આ ઉપરથી જ પુષ્ટિનું અનુમાન પણ થાય છે **નિબંધમાં** શ્રીમદાચાર્યચરણ આજ્ઞા કરે છે કે—[૩]'લોકસિદ્ધ અનુભવ ગૂઢભાવથી વર્ણવ્યો. આનો વિવૃદ્ધ અર્થ આ છે 'ગૂઢભાવથી' એટલે પ્રભુનો અનુગ્રહ ગૂઢ છે, તેથી 'લોકસિદ્ધ' એટલે લોકમા ઉત્તમફલ આપે એટલે તેથી પ્રકટ થયેલો તે અનુગ્રહ પ્રકરણબંધમા વર્ણવ્યો છે તે અનુગ્રહનું કાર્ય પણ અજામિલાદિમા બતાવ્યુ છે કારણ કે અજામિલ નિંદ્ય કર્મ કરનાર હતો, છતા સ્વકર્તવ્યવાળા પ્રભુના નામથી મુક્ત થયો અતએવ કે અવાર કૃત્ય કરનાર અજામિલ મરણસમયે નારાયણસંજ્ઞક સ્વપુત્રના આહ્વાનમાત્રથી જ મુક્ત થયો નારાયણ પ્રભુનુ નામ છે, પ્રભુના નામમા એવો પ્રભાવ હોય જ, વળી વિપ્રરૂપ કર્મી (કર્મ જ કરનાર) હતો, દુર્બુદ્ધિ જ્ઞાની (ફક્ત જ્ઞાન ધરાવનાર જ) હતો, દુષ્ટ બ્રહ્મ હતો, એ ત્રણેનો અન્ત કરણાર ઈંદ્ર પણ બચ્યો ! કેટલુ ભગવત્કૃપારૂપ પુષ્ટિનુ મહાત્મ્ય !! જેણે હત્યા કરનાર ઈંદ્ર કેવા ફલ ભોગવવા લાયક હતો ? ખરેખર ઘણા જ અનિષ્ટ ફલ તેને ભોગવવા પડતે પણ પ્રભુની કૃપા એટલી બલવતી છે કે ગમે તેવા અનિષ્ટને પણ દાબી દે છે જુઓ દિતિનો ગર્ભ હણવા માટે વજ્રતાડનની કોશીશ થઈ, પણ પુષ્ટિ પાસે તે પામર પ્રયુક્તિનુ શુ ગજુ ? ગર્ભનુ રક્ષણ થયુ એટલુ જ નહિ પણ તેનુ બહુત્વ થયુ માટે જ કહ્યુ છે કે—'આ વીરીતે ઈંદ્રમા સર્વનો બાધ કરનારી મહાપુષ્ટિ વર્ણવી, અને દૈત્યમા સર્વબાધકરૂપ પુષ્ટિ કહી' મહાપુષ્ટિ એટલે બલવાન્ પ્રતિબંધો તોડી શ્રીભગવચ્ચરણારવિંદની પ્રાપ્તિ કરાવી આપે તે સર્વનો બાધ કરનારી એટલ કાલ[૫], કર્મ, સ્વભાવ વગેરે સર્વનો બાધ કરનારી આ બધાનો બાધ થયો છે, એ ઈંદ્રના દૃષ્ટાતમા સ્પષ્ટ છે. ઈંદ્રે ઘણા જ નિંદ્ય કર્મો કર્યા છે, પણ તે કર્મો પોતાનો અનિષ્ટ ઉત્પાદન કરવાનો સ્વભાવ છોડી બેઠા છે એ જ પુષ્ટિનુ નિરતિશય સામર્થ્ય ! દિતિના ગર્ભના પ્રસંગમા વજ્રનો પ્રહાર પ્રાણથી વિખુટા પાડવાના સ્વભાવવાળો છે, પણ તે સ્વભાવ પુષ્ટિના પ્રભાવથી પરાભવ પામેલો છે કહ્યુ છે કે—'[૬]વજ્રથી ભેદાયેલ ત્રિખંડિત સ્થિતિમા આવી પડેલો પણ દિતિનો ગર્ભ ફક્ત ભગવત્કૃપાબલથી જ નાશ ન પામ્યો જેમ હે રાજન્ ! અશ્વત્થામાના બ્રહ્માસ્ત્રથી તુ (પ્રભુકૃપાવડે) બચ્યો' એમ બીજે ઠેકાણે પણ ભગવદનુગ્રહસ્વરૂપ સમજી લેવુ

---

૧ પોષણ તદનુગ્રહઃ।
૨ કૃષ્ણાનુગ્રહરૂપા હિ પુષ્ટિ કાલાદિબાધિકા।
૩ અનુગ્રહો લોકસિદ્ધો ગૂઢભાવાન્નિરૂપિત ।
૪ એવમિન્દ્રે મહાપુષ્ટિ સર્વબાધા નિરૂપિતા। સર્વબાધકરૂપા હિ દૈત્યે પુષ્ટિરથોચ્યતે ॥
૫ જેને કાલ કર્મ નવ બાધે રે, જમ તે શિર ધનુષ્ય ન સાધે રે ભક્તાનુભાવી ગોપાલદાસજી.
૬ न ममार दितेर्गर्भ श्रीनिवासानुकम्पया। बहुधा कुलिशक्षुण्णो द्रौण्यस्त्रेण यथा भवान्।

तत्र स्वस्वामिरूपस्य भावनारीतिरुच्यते ॥
यतो भावनया भावः सिद्ध्येन्नान्येन केनचित ॥ ६ ॥

શ્લોકાર્થઃ—તે રાગ્રણમાર્ગમાં પોતાના સ્વામીના રૂપની ભાવનાનો પ્રકાર કહેવાય છે. કારણ કે ભાવનાવડે જ ભાવ સિદ્ધ થાય છે, બીજા કોઇથી નહિ

રહસ્યઃ—આ પુષ્ટિમાર્ગમા સ્વરૂપની ભાવના કરવાની ઘણી જ આવશ્યકતા છે. ભાવ તો ભાવનાથી જ સિદ્ધ થાય છે, આચાર્યશ્રી ઉપદેશે છે કે;—'[1]ભાવ ભાવનાથી સિદ્ધ છે, બીજા સાધનની કંઈ જરૂર નથી.' માટે ભાવને સિદ્ધ કરનારી ભાવનાની પણ જરૂર હોવી જ જોઇએ પુષ્ટિપુરુષોત્તમ પણ ભાવાત્મક છે. લીલાસામગ્રી પણ ભાવાત્મક છે વૃંદાવન તથા તત્સબંધિ ભૂમિઓ પણ ભાવસ્વરૂપ જ છે આ સર્વ ફલપ્રકરણનાં શ્રીસુબોધિનીજીમા આચાર્યચરણ વિસ્તારથી વર્ણવે છે. વળી શ્રીહરિરાયજી પણ 'સહસ્રશ્લોકી ભાવના' મા પણ સવિસ્તર સૂચન કરે છે. વિશેષ જીજ્ઞાસુઓએ તે ગ્રંથો અવલોકવા. મુખ્યત્વે કરીને ભાવનાની સંસિદ્ધિ શ્રીસ્વામિનીજીમા જ થાય છે માટે તેમની કૃપાનો આશ્રય કરવો, અથવા તો તદ્રૂપ શ્રીમદાચાર્યવર્યની કૃપાનો સમાશ્રય કરવો. તે વિના ઘણા ક્ષુદ્ર જીવોના સમાશ્રયથી કંઇ પણ ફળ નથી. આચાર્યશ્રીનુ પ્રાકટ્ય કેવળ સ્વીય જીવોને ભાવનુ દાન કરવામાટે જ છે. માટે જ આચાર્યશ્રી પોતે પ્રકટ થઇને વેણુનાદસ્થાનાપન્ન બ્રહ્મસબંધદ્વારા સ્વીય જીવોની ભાવભાવનાસિદ્ધિ કરાવે છે વાસ્તે પૂર્વોક્ત ભાવ સિદ્ધ કરવા સારુ આચાર્યશ્રીનો જ સમાશ્રય અભ્યુપપન્ન છે. ભાવના એટલે શુ ? તે કૃપા કરીને જણાવે છે

सर्वलीलाफलं रासलीलामादौ विभावयेत् ॥
तस्यामेव हि लीलायां सर्वभावात्मिका यतः ॥ ७ ॥

શ્લોકાર્થઃ—સર્વલીલાનુ ફળ રાસલીલા છે પહેલા એ ભાવના કરવી કેમ કે તે રાસલીલામા જ સર્વ ભાવાત્મિકા લીલા છે

રહસ્યઃ—भगवता सह सलापो दर्शन मिलितस्य च ॥ એમ આચાર્યશ્રી આજ્ઞા કરે છે, તે ઉપરથી નિશ્ચયાર્થ એ જણાય છે કે પ્રભુમા જ એકાદશે દ્રિયોનો વિનિયોગ કરી દેવો. આ મુખ્યફલ છે. એમ આપે સમર્થન પણ કર્યું છે તે જ પ્રસંગમા શ્રુતિરૂપા ગોપીજનો પણ એમ જ આજ્ઞા કરે છે કે—' નેત્રવાળા પુરુષોને કંઇ પણ ફલ હોય તો તે ભગવન્મુખારવિન્દનું દર્શન જ છે, બીજું કંઇ પણ અમારા જાણવામા આવ્યુ નથી' આ વાક્યથી દંટિયવાળાને પ્રભુનો સબંધ થયો તે ફળ છે, આ હેતુથી એમ સિદ્ધ થાય છે કે, પ્રભુ તો નિત્યસર્વલીલ હોવાથી દાન, માનાદિ અનેક લીલાઓ કરે છે, પણ પ્રધાનપદ તો રાસલીલા જ ભોગવે છે, એમ નિસંદિગ્ધ કહી શકાય

આ પ્રમાણાનુસારિવિચારથી રાસલીલાનું મુખ્યત્વ મનમા લાવીને જ શ્રીહરિરાયજી પહેલા તેની ભાવના ઉપદેશે છે. ભક્તને સર્વાત્મભાવનુ દાન, સ્વરૂપાનંદનો પૂર્ણ અનુભવ વગેરે સર્વ ફલમધ્યપાતિ-લીલામા થાય છે. પુષ્ટિમાર્ગમા સર્વોત્કૃષ્ટ મોક્ષ પણ આ લીલામાં જ મનાય છે શુદ્ધપુષ્ટિયુક્ત મૃગા રસાત્મક પ્રભુની સાથે વિભાવ અનુભાવ વગેરે વિવિધ મનોભિલષિત ભાવની સિદ્ધિ પણ આ લીલામાં જ થાય છે વાસ્તે તેની ભાવના પ્રથમ કરવી એમ નિગૂઢ રહસ્ય છે.

---

[1] भावो भावनया सिद्ध्येत् साधन नान्यदिष्यते ॥

॥ શ્રીકૃષ્ણાય નમઃ ॥

પુષ્ટિવિવેક.

અથકાર ગત પ્રકરણત્રયથી જગત્, જીવ અને મૂલસ્વરૂપનો વિચાર વિચાર કરીને હવે બાસ મુદ્દાના વિષય ઉપર આવે છે

હવે આ વિચારાય છે પુષ્ટિ એટલે શું ? પુષ્ટિમાર્ગ એટલે શું ? શ્રીશુકદેવજીનુ વાકય છે કે—[1]'પોષણ એટલે ભગવન્નુગ્રહ' પ્રભુનો અનુગ્રહ-કૃપા તે જ પોષણ પોષણ એટલે પુષ્ટિ શ્રીઆચાર્યજી નિબંધમાં પણ આજ્ઞા કરે છે કે-[2]'શ્રીકૃષ્ણના અનુગ્રહરૂપ પુષ્ટિ કાલ વગેરેને બાધિત જ બાધ કરનારી છે' આ ઉપરથી સમજાય છે કે અનુગ્રહરૂપ જે ભગવદ્ધર્મ તે જ પુષ્ટિ તે પુષ્ટિ વિલક્ષણ છે લૌકિક અને અલૌકિક બને ફલને સાધનારી છે માટે જ કોઈ અધિકારી સાધનરહિત હોય તો તેને પણ પુષ્ટિ ઘણુ જ ઉત્કૃષ્ટ ફલ આપે છે, અને આ ઉપરથી જ પુષ્ટિનું અનુમાન પણ થાય છે નિબંધમાં શ્રીમદાચાર્યચરણ આજ્ઞા કરે છે કે-[3]'લોકસિદ્ધ અનુભવ ગૂઢભાવથી વર્ણવ્યો. આનો વિશદ અર્થ આ છે 'ગૂઢભાવથી' એટલે પ્રભુનો અનુગ્રહ ગૂઢ છે, તેથી 'લોકસિદ્ધ' એટલે લોકમા ઉત્તમફલ આપે એટલે તેથી પ્રકટ થયેલા તે અનુગ્રહ પકરણ ધમા વર્ણવ્યો છે તે અનુગ્રહનુ કાર્ય પણ અજામિલાદિમા બતાવ્યુ છે કારણ કે અજામિલ નિંદ્ય કર્મ કરનાર હતો, છતા સંકેતવાળા પ્રભુના નામથી મુક્ત થયો મતલબ કે અઘોર કૃત્ય કરનાર અજામિલ મરણસમયે નારાયણસંજ્ઞક સ્વપુત્રના આહ્વાનમાત્રથી જ મુક્ત થયો નારાયણ પ્રભુનુ નામ છે, પ્રભુના નામમા એવો પ્રભાવ હોય જ વળી વિશ્વરૂપ કર્મી (કર્મ જ કરનાર) હતો, દધીચિ જ્ઞાની (ફક્ત જ્ઞાન ધરાવનાર જ) હતો, વૃત્ર ભક્ત હતો, એ ત્રણેનો અંત કરનાર ઇંદ્ર પણ બચ્યો ! કેટલુ ભગવત્કૃપારૂપ પુષ્ટિનુ મહાત્મ્ય !! ત્રણેની હત્યા કરનાર ઇંદ્ર કેવા ફલ ભોગવવા લાયક હતો ? બરોબર ઘણા જ અનિષ્ટ ફલ તેને ભોગવવા પડતે પણ પ્રભુની કૃપા એટલી બલવતી છે કે ગમે તેવા અનિષ્ટને પણ દાબી દે છે જુઓ દિતિનો ગર્ભ હણવા માટે વજ્રતાડનની દ્વાગેશ થઇ, પણ પુષ્ટિ પાસે તે પામરપ્રયુક્તિનુ શુ ગજુ ? ગર્ભનુ રક્ષણ થયુ એટલુ જ નહિ પણ તેનુ મહત્વ થયુ માટે જ કહ્યુ છે કે-'આ વીરીતે ઇંદ્રમા સર્વનો બાધ કરનારી મહાપુષ્ટિ વર્ણવી, અને દૈત્યમા સર્વબાધકરૂપ પુષ્ટિ કહી' મહાપુષ્ટિ એટલે બલવાન્ નિબંધો તોડી શ્રીલગવચ્ચરણારવિંદની પ્રાપ્તિ કરાવી આપે તે સર્વનો બાધ કરનારી એટલ કાલ[5], કર્મ, સ્વભાવ વગેરે સર્વનો બાધ કરનારી આ બધાનો બાધ થયો છે, એ ઇંદ્રના દૃષ્ટાંતમા સ્પષ્ટ છે ઇંદ્ર ઘણા જ નિંદ્ય કર્મો કર્યા છે, પણ તે કર્મો પોતાનો અનિષ્ટ ઉત્પાદન કરવાનો સ્વભાવ છોડી બેઠા છે. એ જ પુષ્ટિનુ નિરતિશય સામર્થ્ય! દિતિના ગર્ભના પ્રસંગમા વજ્રનો પ્રહાર પ્રાણથી વિખુટા પાડવાના સ્વભાવવાળો છે, પણ તે સ્વભાવ પુષ્ટિના પ્રભાવથી પરાભવ પામેલો છે કહ્યુ છે કે—'વજ્રથી ઘણો જ છિન્નભિન્ન સ્થિતિમા આવી પડેલો પણ દિતિનો ગર્ભ ફક્ત ભગવત્કૃપાબલથી જ નાશ ન પામ્યો જેમ હે રાજન્! અશ્વત્થામાના બ્રહ્માસ્ત્રથી તુ (પ્રભુકૃપાબલે) બચ્યો' એમ બીજે ઠેકાણે પણ ભગવદનુગ્રહસ્વરૂપ સમજી લેવુ

---

१ पोषण तदनुग्रहः।
२ कृष्णानुग्रहरूपा हि पुष्टि कालादिबाधिका।
३ अनुग्रहो लोकसिद्धो गूढभावान्निरूपित ।
४ एवमिन्द्रे महापुष्टिः सर्वबाधा निरूपिता। सर्वबाधकरूपा हि दैत्ये पुष्टिरथोच्यते ॥
५ જેને કાલ કર્મ નવ બાધે રે, જમ તે શિર ધનુષ્ ન સાધે રે મહાનુભાવી ગોપાલદાસજી
६ न ममार दितेर्गर्भं श्रीनिवासानुकम्पया। बहुधा कुलिशक्षुण्णो दैन्यस्त्रेण यथा भवान्।

तत्र स्वस्वामिरूपस्य भावनारीतिरुच्यते ॥
यतो भावनया भावः सिद्ध्येन्नान्येन केनचित ॥ ६ ॥

શ્લોકાર્થઃ—તે શરણુમાર્ગમાં પોતાના સ્વામીના રૂપની ભાવનાનો પ્રકાર કહેવાય છે. કારણ કે ભાવનાવડે જ ભાવ સિદ્ધ થાય છે, બીજા કોઈથી નહિ

રહસ્યઃ—આ પુષ્ટિમાર્ગમા સ્વરૂપની ભાવના કરવાની ઘણી જ આવશ્યકતા છે. ભાવ તો ભાવનાથી જ સિદ્ધ થાય છે, આચાર્યશ્રી ઉપદેશે છે કે,–' [1]ભાવ ભાવનાથી સિદ્ધ છે, બીજા સાધનની કંઈ જરૂર નથી.' માટે ભાવને સિદ્ધ કરનારી ભાવનાની પણ જરૂર હોવી જ જોઇએ। પુષ્ટિપુરુષોત્તમ પણ ભાવાત્મક છે. લીલાસામગ્રી પણ ભાવાત્મક છે. વૃંદાવન તથા તત્સંબધિ ભૂમિકા પણ ભાવસ્વરૂપ જ છે આ સર્વ ફલપ્રકરણનાં શ્રીસુબોધિનીજીમા આચાર્યચરણે વિસ્તારથી વર્ણવે છે વળી શ્રીહરિરાયજી પણ 'સહસ્ર'દોષની ભાવના' મા પણ સવિસ્તર સ્પષ્ટન કરે છે. વિશેષ જીજ્ઞાસુઓએ તે ગ્રંથો અવલોકવા. મુખ્યત્વે કરીને ભાવનાની સમિદ્ધિ શ્રીસ્વામિનીજીમા જ થાય છે. માટે તેમની કૃપાનો આશ્રય કરવો, અથવા તો તદ્રૂપ શ્રીમદાચાર્યવર્યની કૃપાનો સમાશ્રય કરવો તે વિના ઘનશ્યામ સુંદર જીવોના સમાશ્રયથી કશ પણ ફળ નથી આચાર્યશ્રીનુ પ્રાકટ્ય કેવળ સ્વીય જીવોને ભાવનું દાન કરવામાટે જ છે માટે જ આચાર્યશ્રી પોતે પ્રકટ થઈને વેણુનાદધ્યાનાપન્ન અલૌકસબધદાર સ્વીય જીવોની ભાવભાવનાસિદ્ધિ કરાવે છે વાસ્તે પૂર્વોક્ત ભાવ સિદ્ધ કરવા સારુ આચાર્યશ્રીનો જ સમાશ્રય અભ્યુપપન્ન છે. ભાવના એટલે શું ? તે કૃપા કરીને જણાવે છે

सर्वलीलाफलं रासलीलामादौ विभावयेत् ॥
तस्यामेव हि लीलायां सर्वभावात्मिका यतः ॥ ७ ॥

શ્લોકાર્ધઃ—સર્વલીલાનુ ફળ રાસલીલા છે પહેલા એ ભાવના કરવી કેમ કે તે રાસલીલામાં જ સર્વ ભાવાત્મિકા લીલા છે

રહસ્યઃ—भगवता सह सलापो दर्शन मिलितस्य च ॥ એમ આચાર્યશ્રી આજ્ઞા કરે છે, તે ઉપરથી નિશ્ચયાર્થ એ જણાય છે કે પ્રભુમા જ એકાદશે દ્રિયોનો વિનિયોગ કરી દેવો. આ મુખ્યકલ્પ છે. એમ આપે સમર્થન પણ કર્યું છે તે જ પ્રમગમા શ્રુતિસ્વરૂપા ગોપીજનો પણ એમ જ આજ્ઞા કરે છે કે–' નેત્રવાળા પુરુષોને કદાપ પણ ફલ હોય તો તે ભગવન્મુખારવિન્દનુ દર્શન જ છે, બીજુ કંઈ પણ અભાગ જણવામા આવ્યુ નથી.' આ વાક્યથી દૃષ્ટિવાળાને પ્રભુનો સબધ થયો તે ફળ છે, આ હેતુથી એમ સિદ્ધ થાય છે કે, પ્રભુ તો નિત્યસર્વલીલ હોવાથી દાન, માનાદિ અનેક લીલાઓ કરે છે, પણ પ્રધાનપદ તો રાસલીલા જ ભોગવે છે, એમ નિ સદ્દિગ્ધ કહી શકાય

આ પ્રમાણુનુસારિવિચારથી રાસલીલાનુ મુખ્યત્વ મનમાં લાવીને જ શ્રીહરિરાયજી પહેલાં તેની ભાવના ઉપદેશે છે. ભક્તને સર્વાત્મભાવનુ દાન, સ્વરૂપાનંદનો પૂર્ણ અનુભવ વગેરે સર્વ ફલમધ્યપાતિ-લીલામા થાય છે. પુષ્ટિમાર્ગીય સર્વોત્કૃષ્ટ મોક્ષ પણ આ લીલામાં જ મનાય છે. શુદ્ધપુષ્ટિયુક્ત મૃગા રસાત્મક પ્રભુની સાથે વિલાસ અનુરાગ વગેરે વિવિધ મનોભિલષિત ભાવની સિદ્ધિ પણ આ લીલામાં જ થાય છે. વાસ્તે તેની ભાવના પ્રથમ કરવી એમ નિગૂઢ રહસ્ય છે.

---

[1] भावो भावनया सिद्ध. साधन नान्यदिष्यते ॥

વિદ્વન્મંડન.

અક્ષરાર્થ.

અધ્યારોપ અને અપવાદરૂપ સગતિ છે, કારણ કે શુદ્ધ બ્રહ્મ દુર્જ્ઞેય હોવાથી, તેનુ જ્ઞાન થાય માટે, જગજ્જનન કહી બ્રહ્મના કર્તૃત્વ ભોકતૃત્વનુ પ્રતિપાદન કરી, તેથી સોપાધિક બ્રહ્મનુ જ્ઞાન થવાથી, શાખાચન્દ્રન્યાયે પૂર્વોક્ત દૂર કરી, પછી કર્તૃત્વાદિરહિત બ્રહ્મનુ જ્ઞાન થાય છે.—જગત્ની અપ્રતીતિ થાય તેથી એમ કહેવુ યોગ્ય નથી કારણ કે જગત્પ્રતીતિ શ્રુતિસિદ્ધ નથી જેથી પ્રથમ તેનો બોધ કરી પછી તેનો નિષેધ કરે છે એમ કહેવાય, પરન્તુ લોકસિદ્ધ છે એમ હોવાથી તેના કર્તાની અપેક્ષા થાય તેથી કર્તાનો ઉપદેશ કરે છે એમ કહેવું યોગ્ય છે, પરન્તુ લોકસિદ્ધ જગત્નો અનુવાદ કરી, તેના કર્તાનો બોધ કરી પછી તેનો નિષેધ કરે છે એમ કહેવું યોગ્ય નથી. એમ સોપાધિક બ્રહ્મમાં કર્તૃત્વનો નિષેધ હોય તો કાર્ય પ્રતીતિસિદ્ધ હોવાથી અને અન્ય કોઈ કર્તા ન હોવાથી જગત્નો જ અસભવ થાય અને તેથી અનુવાદનો વિષય બાધિત થાય સર્વ અર્થનુ તત્ત્વ પ્રતિપાદન કરનાર શ્રુતિ એમ કેમ કહે? કારણ કે જગત્નુ અસત્ત્વ હોવાથી, અનુવાદ સભવતો નથી અન્યથાનુપપત્તિ સર્વથી બલવાન્ છે—કેવલ ઉપલબ્ધિથી વસ્તુસત્ત્વ કહી શકાય નહિ, કારણ કે સ્વપ્ન વિગેરેમાં સત્ત્વનો એવો પ્રસગ થાય તેથી નિષેધક શ્રુતિનો ભાવાર્થ પ્રપંચનું અસત્ત્વ જ છે—તો દેવાનાપ્રિય, પ્રતીતિની ઉપપત્તિ કરે વાસનાથી (તે થાય છે) એમ કહી શકાશે નહિ. કારણ કે વાસના અનુભવજન્ય છે, અને જગત્નુ અસત્ત્વ હોવાથી પૂર્વ અનુભવનો અસભવ જ છે વાસના (સન્તાન) અનાદિ હોવાથી પણ તેની ઉપપત્તિ થતી નથી, કારણ કે સર્વ અનુભવવાસનાનુ જનન કરે એવો નિયમ ન હોવાથી કદાચિત્ કોઈ અર્થની પ્રતીતિ ન થાય એવો પ્રસગ આવે એવો નિયમ હોય તો પણ સર્વદા તેનો ઉદ્બોધ કરનાર હોય તેવો નિયમ ન હોવાથી, એવો પ્રસંગ આવે. ઉદ્બોધ કરનાર દૃષ્ટ હોય નહિ, કારણ કે (એમ હોય તો) અન્યોન્યાશ્રય થાય. અદૃષ્ટ પણ ન હોય, કારણ કે તે દૃષ્ટસામગ્રીસમ્પાદનદ્વારા જ કારણ થાય છે. વળી 'વૈધર્મ્યને લીધે સ્વપ્નાદિ પેઠે નથી' એ તત્ત્વસૂત્રનો વિરોધ થાય છે.

પૂ૦—જીવની અવિદ્યા એ જ જગત્પ્રતીતિનુ કારણ છે કારણ કે જીવ અને બ્રહ્મના અભેદનો બોધ કરનાર શ્રુતિએ ત્યાં જ ભેદ જ્ઞાનનિવર્ત્ય છે એમ કહી, ભેદ અતાત્ત્વિક અજ્ઞાનકૃત છે એમ નિરૂપણ કર્યું (એમ સમજવું),

કારણ કે પરમાર્થતઃ ભિન્નનો અભેદ સંભવતો નથી, અને જ્ઞાન પણ અજ્ઞાનનું જ નિવર્તક છે. 'આનો અવિદ્યાથી બન્ધ અનાદિ છે' એ વચનને લીધે જીવ અને બ્રહ્મનો ભેદ અનાદિ છે તેથી, અનાદિ, અજ્ઞાનરૂપ, 'હું અજ્ઞ છું' એમ અનુભવસિદ્ધ ભાવરૂપ અવિદ્યાને જ તેનો (ભેદનો) અવચ્છેદ કરનાર માનવી તેથી વિચિત્રપરિણામશીલ દોષરૂપ અવિદ્યાને જ લીધે વિચિત્ર જગત્‌ની પ્રતીતિ થાય છે. કાર્ય કારણ સન્નતીય છે તેથી કાર્ય તુચ્છ હોવાથી તેનું કારણ પણ તેવું જ હોવું જોઇએ એ યોગ્ય જ છે. જેમ મુખના કેવલ સમ્બન્ધથી જ દર્પણાદિ (પદાર્થ) બિમ્બ પ્રતિબિમ્બ ભેદના નિમિત્ત થાય છે, તેમ ચિદ્રૂપ બ્રહ્મના કેવલ સમ્બન્ધથી જ તે પણ ભેદનું નિમિત્ત થાય છે (જીવબ્રહ્મ) ભેદકૃત અહમમુક ઇતિ આત્માધ્યાસઃ (પ્રતિબિમ્બરૂપજીવસ્ય) (પોતાના) અધ્યાસને લીધે પોતામાં અજ્ઞત્વ કર્તૃત્વ ભોક્તૃત્વ માનનાર જીવ વિધિનિયોજ્ય વગેરે ભાવ ધારે છે. જેમ રજ્જુસ્વરૂપજ્ઞાનથી પ્રાચીન સર્પનો અનુભવ અને તેથી થતા ભયની નિવૃત્તિ થવાથી સ્વાસ્થ્ય થાય છે તેમ શમ, દમ, ગુરુઉપસત્તિ, તેમનો ઉપદેશ, શ્રવણ, મનન અને નિદિધ્યાસન વડે, અવિદ્યાના અધિષ્ઠાનરૂપ સ્વકીય આત્મા અદ્વૈત કૂટસ્થ ચિદેકરસ છે. એમ સ્વરૂપજ્ઞાન થવાથી અજ્ઞાનની નિવૃત્તિ થાય છે, અને તેથી અજ્ઞાનકાર્યરૂપ પ્રપંચની પણ નિવૃત્તિ થવાથી 'બ્રહ્મ જાણનાર બ્રહ્મ જ થાય છે' ઇત્યાદિ શ્રુતિનિરૂપિત મોક્ષ થાયછે.—અવિદ્યાસંબંધ અજ્ઞ બનાવનાર હોવાથી સર્વજ્ઞ બ્રહ્મમાં સંભવે નહિ. જીવ અને બ્રહ્મનું ઐક્ય અંગીકાર કરેલું હોવાથી અવિદ્યાનો આશ્રય જીવ પણ હોઇ શકે નહિ આથી જ જીવનું પણ અજ્ઞત્વ અનુપપન્ન જ છે—એમ નહિ. કારણ કે જપાકુસુમને લીધે અરુણ સ્ફટિકસ્તમ્ભની શ્રેણીમાં પડતા પુંરુષપ્રતિબિંબના અરુણત્વ પેઠે જીવમાં અજ્ઞત્વનો આભાસ ઉપપન્ન છે. તેના બિંબની ઉજ્જ્વલતા પેઠે બ્રહ્મમાં સર્વજ્ઞત્વ પણ ઉપપન્ન જ છે અવિદ્યા (અજ્ઞત્વનો) આશ્રય હોવાથી અભેદ પણ અનુપપન્ન નથી

સિ૦—અત્ર કહીએ છીએ. જીવની તે શક્તિ છે તો પ્રથમ જીવસ્વરૂપનો વિચાર કરવો જોઇએ. ત્યાં (આ વિચારમાં) જીવ બ્રહ્મનો પ્રતિબિમ્બ છે એ પક્ષ યુક્તિવિરુદ્ધ છે. કારણ કે બ્રહ્મ રૂપરહિત હોવાથી અને પ્રતિબિંબનો આશ્રય અજ્ઞાન અસ્વચ્છ હોવાથી ક્યાં કોનો પ્રતિબિંબ પડે? કારણ કે રૂપવાળા (પદાર્થનો જ) પ્રતિબિમ્બ (પડે) એવો નિયમ છે. દૃષ્ટને અનુસરી કલ્પના કરવી ઉચિત છે, નહિતો વાયુ અને કાષ્ઠ (અનુક્રમે) બિંબ અને પ્રતિબિંબાશ્રય થાય.—દર્પણ વિગેરેમાં આકાશનો પ્રતિબિમ્બ દેખાય છે.—ના, એટલા પ્રદેશમાં રહેલું પ્રભામંડલ રૂપવાળું હોવાથી તેના જ (પ્રતિબિંબ) દેખાય છે. વળી

સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાન્તો.

૧. જગત્ સત્ય છે.

૨ જગત્, જીવ, અન્તર્યામી, અક્ષર બ્રહ્મોનિ નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ
પ્રભુ કૃષ્ણ પરમાત્મા જ છે

૩ જીવે અવિદ્યાથી કલ્પેલો અહન્તામમતાત્મક સંસાર મિથ્યા છે.

૪ જીવ અણુ છે, શુદ્ધ નિર્ગુણ પ્રભુનો અંશ છે, વ્યાપક નથી

૫. પરબ્રહ્મ પુરુષોત્તમ કૃષ્ણનું ધામ અક્ષર બ્રહ્મ ગણિતાનંદ છે.

૬ સર્વોપરિ વેદાન્તિશાસ્ત્રે પ્રતિપાદિત પરમકલ્યાણ વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે.

૭ કૃષ્ણની સેવા એ જ અંશ જીવનો ધર્મ છે, એટલે વસ્તુત સ્વધર્મ કૃષ્ણસેવા જ છે.

૮. આત્મનિવેદન અને પ્રભુપ્રાપ્તિ વિના અન્ય વિશ્વધર્મ હોઈ શકે જ નહિ.

Reg. No. B. 896.

પુષ્ટિભક્તિસુધાના ગ્રાહકોને સવિનય નિવેદન.

આ માસિકના સર્વ લેખકો જે લેખ લખે છે તે સાંપ્રદાયિક સેવા કરવાની નિર્મલ બુદ્ધિથી જ લખે છે, તેથી બીજા પત્રોની માફક આ માસિકના લેખકોને આપવામા દ્રવ્યનો ખરચ બિલકુલ થતો નથી, એ જણાવતાં આનંદ થાય છે માસિકની છપામણી વગેરે ખરચ ઘણી જ કરકસરથી કરવામાં આવે છે, તેથી નોંધવરમાથી જે કાંઈ બચશે તેમાથી સાંપ્રદાયિક પ્રાચીન ગ્રંથો પ્રસિદ્ધ કરવામાં આવશે. વૈષ્ણવભાઇઓએ આવા માસિકના પોતે ગ્રાહક થવુ જોઇએ, એટલું જ નહિં પણ પોતાના મિત્રોને પણ આવા ધાર્મિક કાર્ય તરફ પ્રેરવાનુ ખાસ લક્ષમા રાખવુ જોઇએ.

મુંબાઇ,
પ્રિન્સેસ સ્ટ્રીટ. }

પ્રકાશક.

भक्तिसुधा.

नायमात्मा प्रवचनेन लभ्यो न मेधया न बहुना श्रुतेन
यमेवैष वृणुते तेन लभ्यस्तस्यैष आत्मा वृणुते तनुं स्वाम् ॥ १ ॥
नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया
शक्य एवंविधो द्रष्टुं दृष्टवानसि मां यथा ॥ २ ॥
भक्त्या त्वनन्यया शक्यः अहमेवविधोऽर्जुन ।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्त्वेन प्रवेष्टुं च परंतप ॥ ३ ॥

પ્રકાશક,

વાડીલાલ નગીનદાસ શાહ,

બી એ એલએલ બી, વઢવાણ કેમ્પ

નોંધવા, રૂા. ૨-૦-૦

છૂટક અંકનો ૩ ૦-૪-૦

Printed by B Miller Superintendent British India Press Bombay and Published by Vadilal Nagindas Shah B A LL B Princess Street Bombay

आवश्यक निवेदन.

१. आ मासिक संबंधी सघळो पत्रव्यवहार प्रकाशकने नामे करवो.

२. आ मासिक दरेक मासनी कृष्ण एकादशीए प्रकट थाय छे.

३. आ मासिकमां छपाववाने आवेला लेखो लेवा न लेवा तेम ज तेमां योग्य सुधारोवधारो करवो प्रकाशकनी इच्छाधीन छे.

४ श्रीमद्वल्लभाचार्यजीना सिद्धान्तानुसार ज लेख लेवामा आवशे.

५ वर्षनुं नोछावर प्रथमथी लेवामा आवे छे.

६. आ मासिकना परिवर्तनमां जेमना तरफथी मासिक वा पत्र मलशे तेमने वगर नोछावरे आ मासिक मोकलवामा आवशे

७. कोइ पण बाबतनी खबर मगावची होय तो जवाब साठ टिकिट मिटची ते सिवाय जवाब आपवामा आवशे नहि

८. आ मासिकमां जाहेर खबर छपावची होय के, हेन्डबिल वहेंचाववा होय तेमणे प्रकाशकने लखवु अथवा मलवुं

पुष्टिभक्तिसुधा कार्यालय,
प्रिन्सेस स्ट्रीट,
मुंबाइ.

} प्रकाशक

अनुक्रमणिका.

विषयो.	लेखको.
१ श्रीहरिरायजीकृत अष्टपदी	१- भलचंद्र तुलशीदास तेलीवाला, B A
२ दयारामभाइनां अप्रसिद्ध काव्यो	२ मनमोहनदासभाई
३. मनुष्यनुं कर्तव्य अने धर्मजिज्ञासा	Mr. D., B A, LL B.
४ जपसभये स्वरूपध्यानम्.	वे शा सं अवलगम भूधरजी शास्त्री
५ आव्हाननो अंगीकार	वे शा. सं भगनलाल गणपतिगम शास्त्री, एम् ए
६ सूचना	२ तेलीवाला
७ साम्प्रदायिक अेोत्सव	२ नानाभाइ कालीदास
८. विद्वन्मंडन.	३ नानुभाई नागयणदास गांधी, एम् ए. एलएल् बी
९ प्रमेयरत्नार्णव.	वे. शा. स. वसंतगम हरिकृष्ण शास्त्री

॥ श्रीकृष्णाय नमः ॥

॥ श्रीगोपीजनवल्लभाय नमः ॥

॥ श्रीहरिरायजीकृताष्टपदी ॥

(५)

(श्रीरागेण गीयते)

एहि मम गोकुलार्धीश सदनम् ॥
शमय विरहानलं वपुरलङ्कु रुते, रहसि दर्शय रसिकभरसवदनम ॥ १ ॥
अन्यगेहेषु वद किमिति गच्छसि? किमिति सहसि तदुपालम्भभूरिवचनम?॥
नैव कथयिष्यामि मातृपदसन्निधौ रुचिरतरवालर्लीलाविस्वनम ॥ २ ॥
मृदुलपर्यङ्कमथवा नाथ दासिकाहृदयमभितिष्ठ चिरकालशयनम् ॥
कोटिकन्दर्पलावण्यरूपामृतैरहह शिशिरय मामकीननयनम् ॥ ३ ॥
एवमेवमिह चिन्तयामीश चिरकालमहमातुरा विपिनगमनम् ॥
नित्यमागच्छ सङ्कोचमपि मैव कुरु चरणपतिता वहु करोमि नमनम् ॥ ४ ॥
नैव विदितं भवेदेतदागमनमिह नाथ कस्यापि कृतवत्ससङ्गम् ॥
मोहकं रूपमपि मुग्धभावामृतैरतिमृदुलतमरुचिरविलसदङ्गम ॥ ५ ॥
मुखकमलदर्शनाभावसञ्जातपश्चितापभरचिरविहितदेहदहनम् ॥
शमय पूरय सदा मम मनोरथमहो विविधगानिचित्तगतभावगहनम ॥ ६ ॥
नाथ ते गृहमह दासिका तावकी कुलमखिलमेव तव चरणशरणम ॥
अन्यथा नाथ विफलीभावि सर्वथा जीवितार्धीश तव पुष्टिवरणम ॥ ७ ॥
मनसि निवसतु सदा दासहरिदासकस्यैतदेवेह निजनाथमिलनम ॥
वल्लभार्धीशचरणाश्रयणमानमपि कुरु चित्त नित्यमानन्दगिलनम ॥ ८ ॥

(६)

(कर्णाटरागेण गीयते)

मिल माधवमपि वेणुधर,
सुन्दररूपविमोहितयुवतीवृन्दरसिकवरम् ध्रु० ॥
रजनीपतिमपि दिनपतिमिव कलयति ते [1]विरहेण ॥
चन्दनमपि सखि भस्मसमानं व्याकुलतानिवहेन ॥ १ ॥

---

१ चिरविरहेणेत्यपि पाठः ।

बहुदीनं कथयति तव सङ्गमसञ्जननाय सुखेन ॥
गुञ्जद्भ्रमरयने विपिने पवनेन दुनोति सुखेन ॥ २ ॥
तव पदवीमभिपश्यति भामिनि सचकितनयनयुगेन ॥
गोपीपरिवृढमपि वशगं कुरु मनसा नमदनुगेन ॥ ३ ॥
तपति जलजशयनेऽपि परं सञ्जातसुखस्मरणेन ॥
बहु तनुते सन्तापभरं सखि मारशराहरणेन ॥ ४ ॥
पुनरुत्थाय मृदुलपल्लवशयनं विदधाति करेण ॥
किं कथयामि परं बहुवारं ? नाम जपति सुचिरेण ॥ ५ ॥
द्रुममभिसारसमयगृङ्गारमकारि तया रभसेन ॥
मिलिता नन्दकिशोरचतुरचूडामणिना सरसेन ॥ ६ ॥
नो वचनीयमियं सुखजातमवाप किशोरवरेण ॥
श्रीमन्नन्दकुमारुचिरगोवर्द्धनशैलधरेण ॥ ७ ॥
श्रीविट्ठलचरणानुसारिणा चरितं तदनुचरेण ॥
श्रीवल्लभकृपया रचितं हरिरायवराकृतरेण ॥ ८ ॥

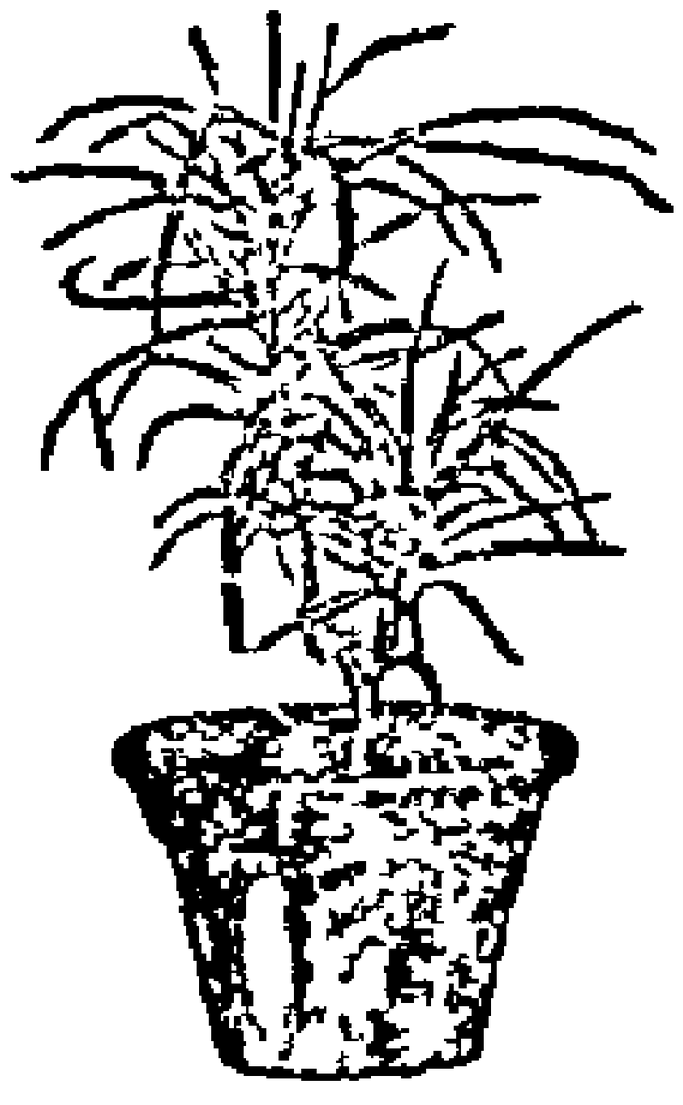

કવિવર દયારામનાં અપ્રસિદ્ધ ભક્તિવિષયક કાવ્યો.

રાગ કલ્યાણ, ધ્રુપદ.

શ્રીકૃષ્ણ ગોપાલ ગોવિંદ ગોકુલેશ, ગોપીજનવલ્લભ ગોવર્ધનધરનધીર. ૧.
પરબ્રહ્મ પુરુષોત્તમ પ્રાણનાથ, પદ્મનાભ પદ્માકાંત હરન પ્રણતપીર ૨.
ભક્તવત્સલ દીનબંધુ દુષ્ટનિકંદન, જગદ્ગુરુ જગન્નાથ બાલકૃષ્ણ બલવીર. ૩
યશોદાત્સંગલાલિત નંદલાલ નટવર, દયાપ્રભુ રાધિકેશ બિહરત શ્રીયમુનાતીર ૪.

રાગ બિહાગ, ધ્રુપદ

મહામંગલરૂપ શ્રીગુરુ મહાપ્રભુ જાકે પદપદ્મકો પ્રથમ સિર નાઇયે ૧
નામ લેત ઉદે હોત પરમ આનંદકંદ, સકલ સંતાપ પાપ ટરે છળ ધાઇયે. ૨
બ્રહ્મા શિવ વિષ્ણુ પરબ્રહ્મ સોઈ શ્રીગુરુરાય, અધિક સકલતીરથ અંઘ્રિજ નાહાઇયે. ૩
દયા કહે આચારજ સરકો કૂબ્બો નાહી, ગુરુસેવા ચિંતામનિ ઇચ્છાફૂલ પાઇયે. ૪.

રાગ ગુર્જરી.

શ્રીકૃષ્ણ તમારો દાસ થયો, તેને દુઃખદાયક નહિ કોઈ રે,
આનંદમંગલ થાય દોષ ગુણ, અવળું સવળું હોય રે. ૧.

ત્યાં લગી રાગાદિક તસ્કર, ત્યા લગી ઘર બંધીખાનું રે,
મોહબેડી જ્યાં લગી હરિજન નહિ, વાક્ય એ પ્રમાનુ રે. ૨.

અજીતેંદ્રિય વિષય બાધ્યમાન તે, હરિભક્તિ સાધે રે,
શ્રીભાગવત વિષે હરિ બોલ્યા, તેને વિષય ના બાંધે રે . ૩.

ઘરઘંઘો કરતા હરિ બોલે, કર્મ શકે નહિ બાધ રે,
ભૂર્જિત અન્ન ના ઉગે, તેમ તેને જાણો સેજ સમાધિ રે. ૪

સ્વધર્મ તજી હરિભજન આરંભે, પડે કદા રહી કાચો રે,
અકલ્યાણ તેનું પણ થાય ના, તો સ્વધર્મ શીદ રાચો રે. ૫.

સદા કરે પાવન હરિ સુધર્મ, વિશ્વદ્રોહી કદી હોય રે,
એકવાર હરિપદ ચિતવે, હરિ પામે જમ નહિ જોય રે. ૬.

દુરાચાર ભક્ષી ભાત કરતો, ભજે અનન્ય હરિને રે;
સુંદર સાધુ તેને માન્ય કહ્યું, અર્જુન દૃઢ કરીને રે. ૭.

સ્વધર્મ તજી આવ શરણ મુજ, કૃષ્ણે આજ્ઞા આપી રે,
સર્વ પાપથી મુકાવીશ, સોચીશ મા પાર્થ કદાપિ રે. ૮.

બાધ ન અસાધ્ય સાધુ અસાધુ, શરણ માત્ર સુખ સર્વ રે;
પ્રપન્નપાલક પુરુષોત્તમ છે, મા ધરો સાધન ગર્વ રે. ૯.

[1]દ્વાદશ ગુણસંયુક્ત વિપ્ર હોય, જો હરિશરણ ન આવ્યો રે;
તે થકી શ્રેષ્ઠ શ્વપચ શરણાગત, પ્રહ્લાદે ગાઈ બતાવ્યો રે ૧૦.

સેવાસ્મરણ કીર્તન વંદન, હરિ શ્વપચ કરે કોઈ વાર રે;
તેને પણ દીક્ષિતસમ સમજો, યજ્ઞકર્મ અધિકાર રે. ૧૧.

હત્યા અયુતવાર મદ્યમ, ગુરુદારાગમની ચોર રે;
ઇત્યાદિક સહુ અઘલય, એક જ નામે નંદકિશોર રે. ૧૨.

પવનપુરાણે વ્રજપતિવાક્ય, કૃષ્ણ કહે એકવાર રે;
તે જન કૃષ્ણતુલ્ય કરી જાણો, ભાગ્યતણો નહિ પાર રે. ૧૩.

એક નામ શ્રીકૃષ્ણતણું, જેટલો મહાપાતક ધોય રે;
યત્નથી પાપ કરે પાપી, તોયે તેટલાં પાપ ન હોય રે. ૧૪.

હરિસંબંધી વસ્તુ કેરો, પ્રભાવ [2]સ્વલ્પાચાર રે;
પણ જેટલી ઇચ્છા હોય જે સ્થલ, તેટલે કરે દરસાવ રે. ૧૫.

કુબ્જા કામ, કંસ ભય ભાવે, શત્રુભાવ શિશુપાલ રે;
તે ભવ તરિયા સ્નેહે સમર્પે, શું કહેવું ગોપાલ રે. ૧૬.

વ્યાધ ગીધ ગણિકાદિ અનામિલ, પાપી તર્યા હરિનામે રે,
મૃગી માંજરી મેડકી કપોત ખગ, સુખી સ્મરણ સામે રે. ૧૭.

---

૧ ધર્મ, સત્ય, દમ, તપ, અમાત્સર્ય, યજ્ઞ, તિતિક્ષા, અનસૂયા, યજ્ઞ, દાન, ધૃતિ, અને શ્રુતત્વ

૨. દયારામવિગ્રથિત સ્વલ્પાચારપ્રભાવગ્રન્થ છે.

मनुष्यनुं कर्तव्य अने धर्मजिज्ञासा.

અનુસંધાન પૃષ્ઠ ૧૮૦.

અહીં તો એક તરફ ગાર્ગી અને કુસુમ બેઠા હતા, બીજી તરફ ગોવિંદભટ્ટજી અને પુરુષોત્તમ બેઠા હતા, અને ફેરજજ સાહેબ પણ એના વિરુદ્ધ મતના હતા વળી ગાર્ગીને તો એ ઘણું જ માન આપતો, સાક્ષાત્ દેવી તરીકે ગણતો, અને પુરુષોત્તમ અને કુસુમ એની કૃપાથી જ આટલા સુંદર, ઉચ્ચાશયવાન્ પરોપકારી બન્યા અને સદ્ગુણી થયાં હતા એમ પોતે માનતો. વળી પોતે ગમે તેવો છતાં પુરુષોત્તમના એના પર ચારે હાથ હતા, અને સુંદર કુસુમ પણ એની સાથે નિર્દોષ વાર્તાલાપ કરતી ગોવિંદભટ્ટ આગલ એ અદબમા રહેતો, અને પુરુષોત્તમ એને પોતાનો મિત્ર ગણતો, તે છતા એના નીચ વિચારોને લીધે એની ઠેકડી કરતો, તે એને લાગી આવતુ વળી ફેરજજ સાહેબ જેવા પણ પુરુષોત્તમથી અંજાઈ ગયા હતા, એટલે આવી મંડલીમા પોતે શું ઉત્તર આપવો તે એને સુઝ્યુ નહીં. પણ પ્રશ્ન ઉડાવાય તેવો ન હતો "તું ગોપીઓને કેવી ધારે છે?" એ પ્રશ્ન પોતે પોતાના મનમા ફરીથી બોલ્યો, અને ગાર્ગી કુસુમ ગોવિંદભટ્ટ અને પુરુષોત્તમ સામુ એણે સામટી નજર કરી શુ ઉત્તર આપે? પોતાથી હજાર દરજ્જે વધારે સદાચારી પરોપકારી ઉચ્ચાશયવાન્ નિષ્કલંકી નીતિમાન્ ધર્મવાન્ અને પ્રભુમા આસક્ત ચિત્તવાન્ આ સજ્જનોનો સમૂહ ગોપીઓને અત્યંત ઉચ્ચ કોટિમા મુકે છે, શ્રુતિનો અવતાર માને છે, તેમના પગની રજને શિરસાવંદ્ય ગણે છે, તેમના નિરવધિ સુખનો કાંઇક અંશ પોતાને મળે તો પોતાનું અહોભાગ્ય સમજે છે,—એવા આગલ પોતે શુ ઉત્તર આપે?

વિચિત્રવીર્ય આ સજ્જન પ્રશ્નનુ ઉત્તર થોડીક વાર સુધી આપી શક્યો નહિ પોતાના નીચ વિચારની અધમતા તેણે અનુભવી. આ ઉત્તમ ધાર્મિક સજ્જનો જે ગોપીઓમા નીતિ શ્રેષ્ઠતા અને સુંદરતા જુએ છે, તે જ ગોપીઓને પોતે વ્યભિચારિણી નીચ અને દુષ્ટ માને છે, માટે ગોપીઓ નીચ નહિ, પણ પોતે જ નીચ છે, પોતાના જ વિચાર નીચ છે, જે હૃદયમા એ વિચાર ઉદ્ભવ્યા તે હૃદય જ નીચ અને મલિન છે, અને તે હૃદયને ધારણ કરનાર મનુષ્ય હુ પોતે મલિન અને પાપી છુ એમ એને પ્રત્યક્ષ થયુ તેની દૃષ્ટિ પોતાની સામેની જમીન ઉપર પડી, અને જમીન ઉપરના કાંકરા ગણતો હોય તેમ દિગ્મૂઢ થઈ ઉભો.

સર્વ મંડલની નજર વિચિત્રવીર્યના મો સામે હતી, અને તેનો ઉત્તર સાંભલવા તેઓ તત્પર હતા, ત્યારે વિચિત્રવીર્ય આમ નીચી દૃષ્ટિએ કાંકરા ગણતો હતો તે કાંકરા ગણતો ન હતો, પણ મૂઢ થઈ ગયો હતો, જાણે કે આ બધાએ એના પર બુરકી નાખી હોય નહિ શુ? પાંચ મિનિટ માંડમાંડ તે આ પાશમાથી છુટતો હોય એમ તેને લાગ્યુ તેનુ હૃદય બળ કરવા લાગ્યુ, અને તેણે નીતિસેન સામુ આડી નજર કરી ગઈ કાલે નીતિસેન પોતાનો પક્ષ કરી ઉત્તર આપતો હતો, તેમ આજે પણ આપે તો પીડા ટળી, એવો વિચાર તેના મગજમા દાખલ થયો પણ નીતિસેનની નજર પણ જમીન તરફ હતી, અને તે પણ એ પ્રશ્નનું ઉત્તર શોધતો હોય, અને શોધતાં ન જડવાથી પોતે જ ભૂલો પડ્યો હોય એવો દેખાયો ' એટલામા ગોવિંદભટ્ટજીએ ફરીથી પ્રશ્ન કર્યો "ભાઈ વિચિત્રવીર્ય, ગોપીઓ વિષે તારું શું મત છે?"

વિચિત્રવીર્યે ફિક્કે મોંટે ગોવિંદભટ્ટ તરફ જોયુ, પણ તેના વિચક્ષણ તેજસ્વી ચક્ષુ તથા પવિત્ર સુંદર તપસ્વી મુખ સામે એની મલિન વિચારથી કલુષિત દૃષ્ટિ તે ટેકવી શક્યો નહિ, અને મૌન જ રહ્યો.

વાંચનાર ! વિચિત્રવીર્ય ગમે તેટલો અધમવિચારવાન્ હોય, પણ તુ તેનો તુચ્છકાર કરીશ નહિ તું ઉદાર વૃત્તિ રાખજે તે ગરીબ હતો. કાઈક અગ્રેજી સસ્કૃત વગેરે ભણ્યો હતો, પણ તેનુ ભગજ વિચિત્ર હતું, અને બધાનો બીચડો કરી ઘોટાળો કરતુ. વળી તે પુષ્ટિમાર્ગીય પણ ન હતો, અને એ ધર્મનાં તત્ત્વો સમજતો ન હતો પરતુ જેઓ દુનિયામા શાસ્ત્રી અને પડિત મનાય છે, વિશેષ જેઓ પોતાને પડિત અને શાસ્ત્રજ્ઞ માને છે, જેઓએ વેદ ગીતા ભાગવત વગેરે કાઇક અંશે પણ વાંચ્યાં હશે, અથવા વાચ્યા હોવા જોઈએ, તેઓમા પણ તે આવા અધમ વિચારના મનુષ્યો જોયા નથી ? તેમા પણ જેઓ પોતાને પુષ્ટિમાર્ગના પડિત તથા શાસ્ત્રી કહેવડાવે છે એવાઓ પણ ગોપિકાઓના નામ માત્રથી ભીરુ થઈ ડરતા તે જોયા નથી ? ગોપિકાઓને ગુરુ કહેતા તેઓ શરમાઈ જાયછે, તેમને લાજ લાગેછે, એ તેં અનુભવ્યુ નથી" રાસલીલૈકતાત્પર્યં । કૃપયૈતત્કથાપ્રદ । રાસસ્ત્રીભાવપૂરિતવિગ્રહ । વગેરે શ્રીમહાપ્રભુજીના નામો દરેજ તેઓ જપતા હોવા જોઈએ, તે છતા તેનો કાઈક પણ આશય તેઓ સમજ્યા હોય એમ તને લાગેછે ? શ્રીમદ્ભાગવત દશમ સ્કધ પૂર્વાર્ધના ૪૭મા અધ્યાયના ૨૫ મા શ્લોકમા શ્રીઉદ્ધવજીએ કહ્યું છે કે—

भगवत्युत्तमश्लोके भवतीभिरनुत्तमा
भक्तिः प्रवर्तिता दिष्ट्या मुनीनामपि दुर्लभा ॥ २५ ॥

અર્થ—ઉત્તમશ્લોક ભગવાનૂને વિષે ઉત્તમોત્તમ, મુનિઓને પણ દુર્લભ એવી ભક્તિ તમે પ્રવર્તાવી એ આનદની વાતો છે

कौण्डिन्यो गोपिकाः प्रोक्ता गुरवः साधनञ्च तत् ।

એ પ્રકારે શ્રીમહાપ્રભુજીએ સન્યાસનિર્ણયગ્રથમા ગોપીઓને 'ગુરુ' કહી છે
શ્રીગુસાઈજીએ દશમ પૂર્વાર્ધના ૪૬ અધ્યાયની ટિપ્પણીમા કહ્યુ છે કે—

एवं सति अस्मिन् मार्गे स्वामिन्यः एव गुरवः इति ज्ञापितं भवति

અર્થ—એમ હોવાથી આ માર્ગમા સ્વામિનીઓ જ ગુરુ છે એમ જણાવેલુ છે
લાલુભટ્ટજીએ પ્રમેયરત્નાર્ણવનામના સુદર ગ્રથમા ૩૦મે પાને કહ્યુ છે કે

एतद्भक्तिप्रवर्तिका व्रजभक्ता एव ।

અર્થ—આ ભક્તિ પ્રવર્તાવનાર વ્રજભક્તો જ છે

આવા આવા ગોપીઓને વિષે અનેક ઉત્તમ વચનો આ પડિતો અને શાસ્ત્રીઓએ વાચ્યા હોવા જોઇએ, તે છતા તેઓ ગોપીઓના દ્વેષી છે, તેમના જડ હૃદય એ ઉત્તમતા સમજી શકતા નથી, તેમના કામાસક્ત મલિન હૃદય પોતાના કામ અને મલિનતાનો આરોપ ગોપિકાઓ ઉપર કરે છે, ત્યારે બિચારા વિચિત્રવીર્યનો શો દોષ કાઢવો ? માટે ઉદાર વૃત્તિ રાખ. તેમના પર રોષ ન કરતા દયા આણુ, પ્રભુ તેમના હૃદયની કામાસક્તિ અને મલિનતા નિવૃત્ત કરો, અને તેમા પ્રેમ અને આસક્તિ પ્રભુ ભણે એવી પ્રાર્થના કર

જ્યારે કાઇ લાગ ન ફાવ્યો ત્યારે ઉત્તર આપવુ જ પડશે એવુ ધારી, મનમા ગોઠવતો ગોઠવતો વિચિત્રવીર્ય બોલ્યો "હોય,.....સ્ત્રી જાત,.. ...તેમા પણ ભરવાડણ,... અજ્ઞાની,.. ... હોય, ...દુનિયા એમ જ ચાલે છે.....વ્યભિચાર અને પાતિવ્રત્ય બધુએ એમને સરખુ"

બોલતાં બોલ્યો તો ખરો, પણ નીચેથી ઉંચુ જોવાયુ નહિ ગોવિંદભટ્ટજીને તેની અધમ હૃદય-વૃત્તિ તરફ દયા આવી, તોપણ જે ઢાકપિછોડો તેને કરવો પડ્યો હતો તેથી પવિત્ર વિચારોને—પ્રેમની સુધાને—ભવિષ્યમા એના હૃદયમા સ્થાન મલવાનો સભવ છે એ વિચારથી કાઇક પ્રસન્ન થયા કાઇક હસતા, વિચિત્રવીર્યને કાઇક દયાપાત્ર ગણતા, પુન તેને પૂછ્યુ "ત્યારે ભાઇ, કૃષ્ણ વિષે તારો શુ અભિપ્રાય છે?

વિચિત્રવીર્ય બીજ્યાયો તેને આ પ્રશ્નોત્તરે બહુ કહણ લાગ્યા પોતાના હૃદયની મલિનતા તેના મોં આગળ ખડી થઈ ગઈ આ સર્વ આપ્તમડ્યે તે જોઈ પોતાની આબરૂ ગઈ, પોતાનુ સર્વસ્વ ગયુ, એમ તેને લાગ્યુ વસ્તુત તેને આ પ્રકારના હૃદય નિરીક્ષણથી ફાયદો થયો હતો, અને ભવિષ્યમા વિરોપ થવાનો હતો, પણ તે કાઈ એને હાલ સુઝયુ નહિ આ પ્રસગ ઉપર જ તેને કટાલો આવ્યો, અને વિચાર કર્યા વગર પોતાના મનમા ઘણા વખતથી જે હતુ તે બોલી ઉઠ્યો "કૃષ્ણ વળી એક ગોવાળીઓ, છેલબટાઉ, જરા તિખ્ખો, પનઘટ ઉપર જઈને આખમિચામણા કરે, કાકરા મારીને યુવતિઓના ઘડા ફોડે, લાગ ફાવે તો છેડો પકડે, અને વખતે ગાલો પણ આપે, અને માર પણ પડે, જુવાની બધાની એવી જ હોય, કોઈ ઢાકવા ને કોઈ ઉઘાડા."

બોલી નાખ્યુ, અને મનનો ઉભરો ઢાળ્યો પછી ઉંચુ જોયુ અને કુસુમ તરફ એની દૃષ્ટિ પડી તે પવિત્ર, નિષ્કલક, સુદર મુખારવિદ તરફ જોતા પોતે ઝેરી કાળો નાગ હોય એમ તેને લાગ્યુ, પોતે બોલ્યો હતો તે કાળુ હલાહલ ઝેર—બોકયો હતો, એમ તેને સ્પષ્ટ થયુ અને જેમ નાગ સકોચાઈ ડુબ્બુ વળી જેમી રહે, તેમ એ નીચુ જોઈ સકોચાઈ જેમી રહ્યો, અને આ સુદર પવિત્ર મડલીના નેત્રોમાથી જે અમૃત વર્ષતુ હતુ તેનુ જાણ્યા જોયા વગર પાન કરવા લાગ્યો.

હવે ગોવિંદભટ્ટજી નીતિસેન તરફ જોઇને બોલ્યા "ભાઈ નીતિસેન, ગોપીઓ વિષે તારું શુ મત છે તે કહે"

ગઈ કાલના પ્રસગથી નીતિસેનને સતોષ વલ્યો ન હતો, તે પુરુષોત્તમને ઉત્તર આપી શકયો ન હતો, પણ તેથી કાઈ તેના મનનુ સમાધાન થયુ હતુ એમ ન હતુ. તેની શકા તો એવી ને એવી જ રહી, અને જ્યારે ગોવિંદભટ્ટે પ્રશ્ન કર્યો ત્યારે પોતે કેવી મડલીમા બેઠા હતો તેનુ ભાન છતા, પોતે બોલશે તે કાઇક અયોગ્ય જ થશે એમનુ કાઇક લાગવા છતા, પોતાની નીતિના બધનો આશ્રય લઇને, હુ જે મને સત્ય લાગે છે તે બોલુ છુ એવા વિચારથી સત્યનુ ખડ્ગ ધરીને, બોલ્યો—

નીતિસેન—હું ધારૂ છુ કે ગોપીઓ ગામડાની સાધારણ સ્ત્રીઓ જેવી હતી, ભોળુ હતી, અને તેમનુ ચિત્ત કૃષ્ણમા ઘણુ આસક્ત હતુ, પરતુ તે જર ભાવથી હતુ એમ શાસ્ત્ર પણ કહે છે કૃષ્ણમા આસક્તિને લીધે તેમનો મોક્ષ થયો, પણ તેથી ગોપીઓ ઉત્તમ કેમ તે મારી સમજમા ઉતરતુ નથી

ગોવિંદભટ્ટ—કૃષ્ણને વિષે તારુ શું મત છે?

નીતિસેન—કૃષ્ણને હું વિચિત્રવીર્યની માફક વિષયી માનતો નથી. ગીતાના કહેનાર કૃષ્ણ એવા હોય જ નહિ આખો આર્યાવર્ત જે કૃષ્ણને માને છે, આખી દુનિયા જેના વચનોથી મોહિત થઈ ગઈ છે, તે ગીતાના વક્તા પૂર્ણાવતાર પ્રભુ છે, એમનાથી કાઈ ઉંચું નથી (मत्तः परतरं नान्यत् किंचिदस्ति), એઓ પોતે સાક્ષાત્ પુરુષોત્તમ છે, એવા એમના પોતાના ઘણા વચન છે, અને મને તે સર્વાંશે માન્ય છે

ગોવિંદભટ્ટ—ત્યારે એવા પૂર્ણાવતાર પ્રભુને જર તરીકે કોઈ સ્ત્રીઓ ગણી શકે? બીજી કોઈ સ્ત્રીઓએ પ્રભુને પોતાના જર તરીકે ગણ્યા છે?

નીતિસેન (વિચાર કરીને)—ઘણીજ થોડી. મીરાબાઈ એવી એક ખરી, પતિનો ત્યાગ કરી પ્રભુ પાસે ગઈ.

ગોવિંદભટ્ટ—મીરાને તું ઉત્તમ માને છે ?

નીતિસેન—હા

ગોવિંદભટ્ટ—શા માટે ?

નીતિસેન—મીરા જેવી સ્ત્રી પોતે તજે, અને પતિ તથા સર્વે સબંધીને ત્યજે

વિચિત્રવીર્ય—મીરાં તો સવારનુ માગલિક નામ

ગોવિંદભટ્ટ—ત્યારે તારા માનવા પ્રમાણે ગોપીઓએ કૃષ્ણને ત્યજ કર્યો અને મીરાએ પણ કર્યો બંને મીરા ઉત્તમ, તો ગોપીઓ પણ ઉત્તમ

નીતિસેન (વિચાર કરતો કરતો)—હા—ના, હા—ના.

ગોવિંદભટ્ટ—તારા મનમા શુ ભાજગડ થાય છે, સ્પષ્ટ કહે

નીતિસેન—મીરા પ્રભુને પ્રભુ જાણતી હતી. ગોપીઓને માત્ર જારભાવ હતો, પ્રભુભાવ હતો જ નહિ, માટે ગોપીઓ કરતા મીરા ઉત્તમ

ગોવિંદભટ્ટ—તારી ભૂલ છે, ગોપીઓને પણ પ્રભુભાવ હતો એમ શાસ્ત્ર—

નીતિસેન—હા, કાલે જ પુરુષોત્તમે એક શ્લોક તો કહ્યો હતો (વિચાર કરીને) ત્યારે તો હું ધારૂ છુ કે મારી ભૂલ છે. મીરા અને ગોપીઓ બને સરખા ગણાય

ગોવિંદભટ્ટ—મીરાંના ચારિત્યમા તને દોષ લાગે છે ?

નીતિસેન—ના, લેશમાત્ર પણ નહિ

ગોવિંદભટ્ટ—કેમ ? સ્ત્રીઓએ પતિસેવા કરવી એ જ ધર્મ નથી ? સ્વપતિ છતા પ્રભુને પતિ માનવા અને તેમની સાથે પ્રેમ કરવો અને પતિનો ત્યાગ કરવો એ દોષ નહિ ?

નીતિસેન—ના, ના મને તો શુ, પણ આખી દુનિયાને મીરાનું ચારિત્ર્ય તો પવિત્ર અને સુંદર લાગેછે

ગોવિંદભટ્ટ—તેનું કારણ શુ ? મીરાએ નીતિશાસ્ત્રનો ભગ ન કર્યો ?

નીતિસેન—ના, ના આટલી નાની વયમા સસાર છોડી પ્રભુમા મન પોરવવુ એ અત્યત કઠિન કાર્ય છે. ધણી રાજ્યવૈભવ વગેરે છોડી દેવાં એ સહેલુ નથી.

ગોવિંદભટ્ટ—પણ રાજા જેવો ઉત્તમ ધણી છોડી પ્રભુ સાથે પ્રીતિ બાંધી, એટલે મીરામા કામ તો રહ્યો કે નહિ, અને કામ રહ્યો તો ઉત્તમ કેમ કહેવાય ?

નીતિસેન (વિચાર કરી)—મીરામા કામ રહ્યો કહેવાય નહિ કામ હોય તો સસાર ત્યાગ થાય નહિ, અને પ્રભુમાં ચિત પોરવાય નહિ.

ગોવિંદભટ્ટ—પણ મીરા પોતાના ગીતોમા કહે છે કે "પ્રભુ મારો ધણી છે, હું તેની સાથે સર્વે કામ ભોગવુ છુ. અને કશા વૈભવની ખોટ નથી", તેનું કેમ ? મીરાના શૃંગારભક્તિના પદ વાચ્યાં નથી ?

નીતિસેન—બહુ વાચ્યા છે.

ગોવિંદભટ્ટ—ત્યારે એવો સ્ત્રીપુરુષ વચ્ચેનો શૃગાર તે કામ નહિ તો શુ ?

નીતસેન (વિચાર કરતો)—તે—તે—કામ કોઈકે બીજે—કોઈકે દિવ્ય દૈવી હોવો જોઇએ

ગોવિંદભટ્ટ—તે દૈવી, દિવ્ય, પણ કામ જ કે નહિ ? અને કામ સર્વથા ત્યાજ્ય નથી ?

નીતિસેન—(વિચાર કરીને)-તે મીરા જાણે, મને કાઈ સમજ પડતી નથી મીરા કામી વિષયી નહિ હતી એ નક્કી. તે પવિત્ર હતી

ગોવિંદભટ્ટ—(હસીને)—તું અંગ્રેજી અને સંસ્કૃત ભણેલો, ઉંડા ઉંડા વિચાર કરનારો, પરોપકારી સજ્જન હોવા છતા મીરાંના પદ ન સમજે એમ હોય? એમાં શબ્દો તો કઠિન નથી ત્યારે તને શું સમજ પડતી નથી?

નીતિસેન—(વિચાર કરીને)—મીરાની તો સૃષ્ટિ જ કાંઇ જુદી છે એના વિચાર આ દુનિયાની બહારના છે.

ગોવિંદભટ્ટ—પણ તે બીજી દુનિયા મીરા ક્યાંથી ઉપજાવે છે-સર્જે છે?

નીતિસેન—એના ઉચ્ચ આશયના, પવિત્ર હૃદયમાંથી

ગોવિંદભટ્ટ—પણ એ પવિત્ર હૃદયમાંથી ઉત્પન્ન થતી બીજી સૃષ્ટિમાં પણ કામ, વિષય ખરો?

નીતિસેન—ના, ના, બીલકુલ નહિ.

ગોવિંદભટ્ટ—પણ એ પ્રભુને સ્વામી, ધણી કહે છે તે કામસૂચક નથી?

નીતિસેન—ના, ના, તે પ્રેમથી, સ્નેહથી

ગાર્ગી—પ્રેમ શું? તે તું સમજે છે?

નીતિસેન—કાંઇક સમજું છું,

ગાર્ગી—તે કહે.

નીતિસેન—પુરુષોત્તમ અને કુસુમ તમને વહાલા છે, તેટલો હું નથી મારા ઉપર તમારો પ્રેમ કાંઇક ઓછો છે.

ગાર્ગી—(હસીને) એ પ્રેમ ક્યાં રહે છે?

નીતિસેન—હૃદયમાં.

ગાર્ગી—એ પ્રેમનું બલ કેટલું છે તે તને ખબર છે?

નીતિસેન—હા, પ્રેમની મે ઘણી વાતો વાંચી છે અધરામાં અધરા કામ, અશક્ય કામો, પ્રેમ કરાવી શકે છે. પ્રેમી પોતાનું શિર આનંદથી આપવા તૈયાર થાય છે

ગાર્ગી—એવો પ્રેમ તને કોઈ ઉપર છે?

નીતિસેન—(વિચાર કરી) મને કુસુમ ઉપર પ્રેમ છે, મારૂ હૃદય એને જોઈ પ્રસન્ન રહે છે, એ ન હોય ત્યારે મને ગમતું—સોહતું નથી (મનમાં) આજ સવારે જ એને માટે ચકલીઓ લાવ્યો હું

ગાર્ગી—તેને કુસુમ ઉપર આટલો પ્રેમ છે તેનું કારણ શું?

નીતિસેન—એના હૃદયની સુંદરતા પવિત્રતા, મને તો એ કોઈ સુંદર દેવી જેવી લાગે છે. તમને જોઈને પણ મારૂ હૃદય—

ગાર્ગી—શું?

નીતિસેન—કંઇ નહિ કુસુમની પવિત્રતા અને સુંદરતા એ તમારી સુંદરતા અને પવિત્રતાનો માત્ર અંશ—માતાનો પુત્રીમાં હોય તેવો જ છે

ગાર્ગી—આપણા સર્વેનાં શરીર નાશવંત છે, નહિ વારૂ?

નીતિસેન—હા.

ગાર્ગી—પ્રેમપાત્રનું-પ્રેમી જોડામાથી એકનુ અનિત્ય શરીર પડે ત્યારે બીજાની શુ સ્થિતિ થાય ?

નીતિસેન—તેનું હૃદય ચીરાય, તે ભાન વગરનો રઝળે, રવળે અને મરે.

ગાર્ગી—ત્યારે અનિત્ય, મલિન શરીર પ્રેમને લાયક છે ?

નીતિસેન—ના, પણ ઉપાય શો ?

ગાર્ગી—એવા ઉત્તમોત્તમ પ્રેમને પાત્ર વસ્તુ નિત્ય જોઇએ, નહિ વા ?

નીતિસેન—હા

ગાર્ગી—વળી તે સર્વ પ્રકારે શ્રેષ્ઠ સુંદર જોઈએ, નહિ ?

નીતિસેન—હા.

ગાર્ગી—એવી નિત્ય, ઉત્તમોત્તમ, સુદર વસ્તુ તે ક્યાએ જોઈ છે ?

નીતિસેનને કુસુમનો પ્રસગ યાદ આવ્યો, કુસુમના સુદર હૃદયમાં એને પ્રભુનાં દર્શન થયાં હતાં તેનુ સ્મરણ થયુ વૃંદાવન વ્રજભૂતો સર્વેના દર્શન કર્યાં છતા, આ સાચું કે સ્વપ્ન એવી શકા એને થઈ હતી, તેનુ કારણ પોતાની અયોગ્યતા, હૃદયની મલિનતા, એમ એને સ્પષ્ટ થયુ. આ સુદર મડલમા, ગાર્ગીના સુદર પ્રશ્નોત્તરથી પોતાનુ હૃદય પવિત્ર કરતો, પ્રભુનું સ્મરણ કરતો તે બોલ્યો "હા કુસુમે તે વસ્તુ મને બતાવી છે, તમે તે વસ્તુ પ્રાપ્ત કરવાનો ખરો માર્ગ મને બતાવ્યો છે."

ગાર્ગી શાત થઈ. નીતિસેન વધારે પ્રશ્ન કરી શક્યો નહિ, સર્વેને શાત જોઈ પ્રો. ફેરબજ ગાર્ગી તરફ જોઈ બોલ્યો—"આપના પ્રશ્નોત્તરથી એમ પ્રાપ્ત થયુ કે પ્રભુ ઉપર પ્રેમ કરવો, મીરા અને ગોપીઓ બને ઉત્તમ, તેમણે પ્રભુ ઉપર પ્રેમ કર્યો, પણ એમાં કાંઇ શૃગાર અવશ્ય પ્રાપ્ત થતો નથી. મીરાંના ઉઘાડા શૃગારના પદ શુદ્ધ ભક્તિને, શુદ્ધ પ્રેમને, કાંઇક હાનિકારક નથી ? કાઇક મલિન કરતાં નથી ?

ગાર્ગી (હસીને)—બિલકુલ નહિ. તમારો પ્રશ્ન, હૃદયની દુર્બલતા, મલિનતાનો સૂચક છે. વસ્તુત' હું તો મીરાનો પ્રેમ પણ ઓછો માનું છું !

નીતિસેન—તેનું કારણ મને સમજાવશો !

ગાર્ગી—પ્રેમી સ્વાર્થની ખાતર પોતાના હૃદયના સ્વામીને બિલકુલ શ્રમ આપતો નથી, એ પ્રેમતત્ત્વ તું સમજે છે ?

નીતિસેન—હા, મારા કાઈ પણ સ્વાર્થ માટે હું સુંદર કુસુમને કાઈ પણ શ્રમ ન આપુ, મારે જોઈએ તે થાએ.

ગાર્ગી—કુસુમને બદલે તારા હૃદયનો સ્વામી પ્રભુ-ઈશ્વર હોય તો તેને તુ તારા સ્વાર્થ ખાતર શ્રમ આપે ખરો ?

નીતિસેન—ના, સ્વાર્થ ખાતર સેજ પણ શ્રમ આપવો એ શુદ્ધ પ્રેમમા ખામી છે.

ગાર્ગી—માટે જ મીરાને અને નૃસિંહમહેતાને અમે મર્યાદામાર્ગીય કહીએ છીએ શુદ્ધ પ્રેમમાર્ગમાં એવાઓને અવકાશ નથી શુદ્ધા પ્રેમ્ણાऽતિ દુર્લભા : ! શુદ્ધ પ્રેમી ભક્ત બહુ દુર્લભ છે, એમ શ્રીવલ્લભાચાર્ય પોતે પુષ્ટિપ્રવાહમર્યાદાગ્રંથમા કહે છે, તે સત્ય છે. નીતિસેન શાત થયો.

પ્રો. ફેરજજ—શૃંગાર ભક્તિનો પોષક છે, બાધક નથી, તેનાં કાંઈ પ્રમાણ બતાવશો?

ગાર્ગી—પ્રમાણ આપે પોતાનું હૃદય, મારો પોતાનો અનુભવ, વસ્તુત વ્રજસીમંતિનીઓના હૃદય, અને તેમનો નિર્દોષ પૂર્ણગુણ અનુભવ

પ્રો. ફેરજજ (હસીને) હૃદય કાંઈ શાસ્ત્ર નથી!

ગાર્ગી—હૃદય અને બુદ્ધિના અનુભવ સિવાય શાસ્ત્રમા બીજું શુ લખ્યુ હોય છે? અલંકાર-શાસ્ત્રમા પરમ પ્રમાણ શું છે?

પ્રો. ફેરજજ ચુપ રહ્યો

ગોવિંદભટ્ટ (ગાર્ગીને)—પણ તમારું હૃદય જે અનુભવની સાક્ષી પૂરતુ હોય તે અનુભવ બીજાના હૃદયને ન થાય ત્યારે મોટાના હૃદયનો અનુભવ જે શાસ્ત્રોમા વર્ણવ્યો હોય અને પંડિતોએ માન્ય કર્યો હોય તેનુ પ્રમાણ આપવું જ જોઇએ.

ગાર્ગી—તો રસો વૈ સ ઇત્યાદિ શ્રુતિ સ્વત એ અનુભવનું ગાન કરી રહી છે, અને એનાથી બીજુ શુ શ્રેષ્ઠ પ્રમાણ જોઇએ?

ગોવિંદભટ્ટ (પ્રો ફેરજજને)—તમને શૃંગાર ભક્તિનો બાધક લાગવાનું કારણ શુ?

પ્રો. ફેરજજ—શૃંગારમા કામશાસ્ત્રની સર્વ ક્રિયાઓ થાય છે, ભક્તિમાં તેને સ્થાન નથી દર્શન, સ્પર્શ, આલિંગન, ચુમ્બન વગેરે શૃંગારમા સંભવે, ભક્તિમા નહિ

ગોવિંદભટ્ટ—શા માટે નહિ? પ્રભુના દર્શન સ્પર્શ વગેરે અમે નિત્ય કરીએ છીએ એક માતા પણ પ્રેમપૂર્વક નિરખીને પુત્રનાં દર્શન કરે છે, તેના અંગને પ્રેમથી સ્પર્શ કરે છે, તેને સ્નેહથી આલિંગન કરે છે, તેને પ્રીતિથી ચુમ્બન કરે છે, તેના વિરહથી પીડાય છે, અને મૂર્છા પર્યંતની અવસ્થા અનુભવે છે ભક્તને પણ કાંઇક તેવો જ અનુભવ થાય છે

પ્રો. ફેરજજ—કેટલેક અંશે એ ક્રિયાઓનુ સામ્ય આપ્યુ આવે, પણ શૃંગારની અંતિમ ક્રિયા જે સંભોગ તે શુદ્ધ પ્રેમમા, માતાપુત્રના પ્રેમમા, ભાઇબેનના પ્રેમમા કેમ સંભવે? પ્રભુની ભક્તિમાં તેનો શું સંભવ? (અપૂર્ણ)

जपसमये स्वरूपध्यानम्.

रासलीलैकतात्पर्य इत्यतः स्वामिनाम हि ।
फलप्रकरणत्वं च तल्लीलाविनिरूपणात् ॥ ८ ॥

શ્લોકાર્થ:—શ્રીમહાપ્રભુનુ નામ જ ' रासलीलैकतात्पर्य ' છે, રાસલીલાના નિરૂપણથી જ ફલપ્રકરણપણુ છે.

રહસ્ય—શ્રી આચાર્યચરણનુ તાત્પર્ય સદૈવ રાસલીલામા જ છે 'પ્રભુ એક કાર્યમા સર્વ કાર્ય કરે છે. રાસલીલામા પ્રભુ જ્યારે અંતર્ધાન થઈ ગયા, અને વળી પાછા વ્રજયુવતિયૂથમાં પ્રકટ થયા, ત્યારે શ્રીગોપીજનોએ સ્વરૂપાસક્તિને પ્રકટ કરનારાં અને દૈન્યયુક્ત વચનો કહ્યા, તે સાભળી પોતે ગોપસીમંતિનીના નિસીમ પ્રેમને વશ થઈ આજ્ઞા કરવા લાગ્યા કે 'દેવતાઓનુ આયુષ્ય ગાળી આપનુ ભજન કરુ અને ઉપકારનો બદલો વાળવા ધારુ તો તે અશક્ય જ છે', (જુઓ-'न पारयेऽहं' એ શ્લોક અને તે ઉપરનાં શ્રીસુબોધિનીજી) આ શ્લોકમા પ્રભુએ શ્રીગોપાગનાઓના ઉપકારનો બદલો વાળવાનુ અસામર્થ્ય પ્રકટ કર્યું, પણ પ્રભુ વચનથી તો બધાયલા જ હતા, તેથી કોઈપણ પ્રકારે ભક્તજનનુ ભજન કર્યા વગર છુટકો ન હતો, તેથી પોતાનાં મુખારવિંદ રૂપ શ્રીમહાપ્રભુજીને તે કરવા ભૂતલ ઉપર પ્રકટ થવા આજ્ઞા કરી આચાર્ય પૂર્ણપુરુષોત્તમન મુખારવિંદરૂપ હોવાથી પ્રથમ આપેલા વચનની સિદ્ધિને માટે વ્રજસુંદરીઓના ભાવથી શ્રીમદાચાર્યે પુષ્ટિમાર્ગને પ્રકટ કર્યો, માટે જ આપશ્રીનુ તાત્પર્ય સદૈવ રાસલીલામા જ હોય, એમા કઈ સશય જેવુ થી જેમ શરીરમા પાચ પ્રાણની મુખ્યતા છે, તેમ જ શ્રીમદ્ભાગવતમા પણ રાસપચાધ્યાયીની જ મુખ્યતા છે, એમ શ્રીસુબોધિનીજીમા નિરૂપણ છે, તેથી તે લીલાનુ નામ 'ફલપ્રકરણ' પણ કહેવાય છે

तत्र स्थलं गूढतमं यमुनापुलिनात्मकम् ।
तच्चाति दुर्गवत् सर्वागम्यं हृदि विभावयेत् ॥ ९ ॥

શ્લોકાર્થ — તે ઠેકાણે શ્રી યમુનાજીના પુલિન (તટ) રૂપ અત્યંત ગૂઢ સ્થલ છે, તે દુર્ગની માફક સર્વથી અગમ્ય (ન જવાય તેવુ) છે, તેની હૃદયમા ભાવના કરવી

રહસ્ય—ગૂઢતમ સ્થલની કલ્પના પણ અત્યત ગૂઢ પ્રદેશમા જ થાય સર્વ ઇન્દ્રિયોમાં હૃદય છે, તે અતીવ ગૂઢ છે, તેથી તેની હૃદયમા ભાવના કરવી જેવાતેવા હૃદયમા તેવી ભાવના થવી મુશ્કેલ છે, માટે હૃદય પણ સર્વાત્મભાવવાલા હોવા જોઇએ તે ન હોય તો રાસસ્થ સ્વરૂપની ભાવનાનો ખ્યાલ પણ ન આવે વેણુનાદ શ્રવણ કરી વ્રજભક્તોએ સર્વાત્મભાવવાળા થઈ લીલાપરિકરસહિત ભગવત્સ્વરૂપ નો સાક્ષાત્કાર કર્યો સર્વથી અગમ્ય ભગવલ્લીલાસ્થાનની હૃદયમા ભાવના કરવા સર્વાત્મભાવની આવશ્યકતા એથી જ સિદ્ધ છે પહેલા ગ્રંથકાર આજ્ઞા કરી ગયા છે કે સર્વાત્મભાવની સિદ્ધિ માટે દૈન્યપૂર્વક પચાક્ષરનો જપ કરવો

જેમ રસાત્મક આનદકદ રાસસ્થ પુરુષોત્તમ અને તેમની લીલા ગૂઢ છે, તેમ જ તેમનુ સ્થાન પણ ગૂઢ જ હોય એમા આશ્ચર્ય શુ ? ઋગ્વેદની શ્રુતિમા પણ આ ભાવ સ્પષ્ટ છે પ્રભુની લીલાના સ્થાનને લીલાના અનુસધાનવાળો પુષ્ટિભક્ત જ પ્રકટ કરે છે, બાકી નથી આ ઉપરથી જણાશે કે લીલાસ્થાનની ભાવનાનો ઉપદેશ પુષ્ટિભક્તોને જ છે, કારણ કે તે સ્થાન સર્વથી અગમ્ય છે. એ સ્થલમા જવા માટે બ્રહ્મા રુદ્ર વગેરે ટળવળે છે, તો પણ જઈ શકતા નથી, તેથી તેની ભાવના પણ જો સિદ્ધ કરવી હોય તો લીલાનુભવકર્તા શ્રીમદાચાર્યપ્રભુનો જ આશ્રય કરવો

परितो यमुनातीरं ततो वृन्दावनं तथा ।
ततो भूमिः सापि गूढा वायुना पत्रचालनात् ॥ १० ॥

શ્લોકાર્થ —આસપાસ શ્રીયમુનાજીનું તીર છે, પાસે જ વૃન્દાવન પણ છે, ત્યારપછી અત્યત ગુપ્ત પૃથ્વી છે, ત્યા વાયુથી પાદડા ચાલી રહ્યા છે

રહસ્ય—આ શ્લોકમા ભાવનાનો ક્રમ બતાવ્યો છે. પ્રથમ શ્રીયમુનાજીના તીરનુ ધ્યાન, પછી શ્રીવૃન્દાવનનુ ધ્યાન, અને પછી ચંદ્રસરોવરનુ, કે જ્યા મુખ્યરાસનો સમારભ છે તીરની બાજુ પર જે વૃદાવન છે, તે વૃદાવનનુ, તીરનું, અને જે સ્થલે ચદ્રસરોવર છે તે સ્થલનુ ધ્યાન કરવું. જ્યા મદ સુગધ શીતલ લીલોપયોગી પવનથી નિકુજના પત્રો ચાલી રહ્યા છે વલી જ્યા ખીલેલાં કુંદ અને મદાર પુષ્પના સુગંધ હરનાર વાયુથી ભ્રમરો પણ મદોન્મત્ત થઇ રહ્યા છે એવા શ્રીયમુનાપુલિનનું ધ્યાન કરવુ રમણાત્મક ભૂમિ એવી છે કે જ્યા લીલાવ્યતિરિક્ત પવનનો પણ સચાર નથી તેમ જ ધ્યાન કરનાર પુષ્ટિભક્તના હૃદયમા લીલાસબધવર્જીત બીજુ વિજાતીય કઇ પણ હોવુ ન જોઈએ, તો જ આ ધ્યાનની સિદ્ધિ થાય, એમ 'गूढ' પદનુ તાત્પર્યછે શ્રીયમુનાજીના સમાશ્રય વિના નિકુજમા પ્રવેશ થતો નથી, માટે આપશ્રીએ તુરીયપ્રિયાનુ ધ્યાન કરવા પ્રથમ આજ્ઞા કરીછે તનુનવત્વમેતાવતા શ્લોકમા લીલોપયોગી દેહ શ્રીયમુનાજી કરી આપે છે એમ શ્રીમદાચાર્યચરણ આજ્ઞા કરેછે પૂર્વોક્ત વાક્યથી શ્રીયમુનાપુલિનની ભાવના પહેલા કરવી એમ સિદ્ધ થયુ शरणागतसञ्चाणनिपुणा[1] રક્ષણ કરવામા શ્રીયમુનાજી અતીવ નિપુણ છે ભગવલ્લીલામા પ્રવેશ પણ તે જ કરાવી આપે છે.

अलौकिकमनश्चन्द्रप्रकाशधवलीकृता ।
यमुनोर्मिभिरत्यन्तशीतलं सरसं तथा ॥ ११ ॥

શ્લોકાર્થ —તે ભૂમિ અલૌકિક મનરૂપી ચદ્રના પ્રકાશથી શ્વેત બનેલી છે, વળી તેનુ તટ શ્રીયમુનાજીના તરગોથી સુદર અને અત્યત શીતલ છે.

રહસ્ય—આ શ્લોકમા પૂર્વશ્લોકોક્ત લીલાસબધી ભૂમિકાનુ જ વર્ણન છે. અત્ર શ્રીસુબોધિનીજીનુ અનુસધાન કરીએ. તે ભૂમિકાને પ્રભુએ લૌકિક ચદ્રથી શોભાવી નહિ, પણ પોતાના મનરૂપી અલૌકિક ચદ્રથી, મતલબ કે પ્રભુના અલૌકિક નિકુજસ્થાનમા સર્વ સામગ્રી પ્રભુથી જ પ્રકટ થાયછે. જ્યારે પ્રભુએ રમણ કરવાનુ મન કર્યું, ત્યારે મનના અધિષ્ઠાતા અલૌકિક ચદ્રને પણ રમણાર્થ પ્રકટ કર્યો. રસાત્મક નિકુજનાયકનો મનરૂપી ચદ્ર આધિદૈવિક છે, તેથી લીલાસ્થાનમા પ્રકટ થયેલો ચદ્ર પૂર્ણ અને નિષ્કલક છે રમણાર્થ મનના આવિર્ભાવ સાથે જ તેનો પણ આવિર્ભાવ છે. ક્રીડાના ઉત્કર્ષમાં આ ચદ્રનો પણ ઉત્કર્ષ છે મધ્યાકાશ પર્યંત જ આ ચદ્રનુ ગમન છે આવા અલૌકિક ચદ્રથી પૂર્વોક્ત ભૂમિકા उज्ज्वल—પ્રકાશિત—થઇછે જ્યો નદીઓમા શ્રેષ્ઠ, નિઝરના જલે કરીને યુક્ત, શ્રીયમુના બ્યાપ્ત છે વળી શ્રીયમુનાજીના બને તટ રત્નથી બાધેલા છે હસ અને કમલનાયૂથ પણ ચોતરફ વિસ્તીર્ણ છે આ લીલાસ્થાનની ભાવના કરવામા ભક્તજનોના મન પણ શુદ્ધ તથા પવિત્ર હોવા જોઇએ, તો જ લીલાની ભાવના થઈ શકે, અન્યથા લીલાનો ભાવ આવવો દુર્ઘટ છે

१- शरणागतसञ्चाणनिपुणा

२ यत्र निर्झरपानीया कालिन्दी सरिता वरा । रत्नबद्धोभयतटी हसपद्मानिसङ्कुला ॥

जपसमये स्वरूपध्यानम्.

रासलीलैकतात्पर्य इत्यतः स्वामिनाम हि ।
फलप्रकरणत्वं च तल्लीलाविनिरूपणात् ॥ ८ ॥

શ્લોકાર્થ:—શ્રીમહાપ્રભુનુ નામ જ ' रासलीलैकतात्पर्य ' છે, રાસલીલાના નિરૂપણથી જ ફલપ્રકરણપણુ છે.

રહસ્ય—શ્રી આચાર્યચરણનુ તાત્પર્ય સદૈવ રાસલીલામાં જ છે 'પ્રભુ 'એક 'કાર્યમા સર્વ કાર્ય કરે છે. રાસલીલામા પ્રભુ જ્યારે અંતર્ધાન થઈ ગયા, અને વળી પાછા વ્રજયુવતિયૂથમા પ્રકટ થયા, ત્યારે શ્રીગોપીજનોએ સ્વરૂપાસક્તિને પ્રકટ કરનારા અને દૈન્યયુક્ત વચનો કહ્યા, તે સાંભળી પોતે ગોપસીમંતિનીના નિઃસીમ પ્રેમને વશ થઈ આજ્ઞા કરવા લાગ્યા કે 'દેવતાઓનુ આયુષ્ય ગાળી આપનુ ભજન કરે અને ઉપકારનો બદલો વાળવા ધારે તો તે અશક્ય-જ છે.' (જુઓ-'न पारयेऽहं' એ શ્લોક અને તે ઉપરના શ્રીસુબોધિનીજી) આ શ્લોકમાં પ્રભુએ શ્રીગોપાંગનાઓના ઉપકારનો બદલો વાળવાનુ અસામર્થ્ય પ્રકટ કર્યું, પણ પ્રભુ વચનથી તો બંધાયલા જ હતા, તેથી કોઈ પણ પ્રકારે ભક્તજનનું ભજન કર્યા વગર છુટકો ન હતો, તેથી પોતાનો મુખારવિંદ રૂપ શ્રીમહાપ્રભુજીને તે કરવા ભૂતલ ઉપર પ્રકટ થવા આજ્ઞા કરી આચાર્ય પૂર્ણપુરુષોત્તમન મુખારવિંદરૂપ હોવાથી પ્રથમ આપેલા વચનની સિદ્ધિને માટે વ્રજસુંદરીઓના ભાવથી શ્રીમદાચાર્યે પુષ્ટિમાર્ગને પ્રકટ કર્યો, માટે જ આપશ્રીનુ તાત્પર્ય સદૈવ રાસલીલામા જ હોય, એમાં કંઈ સંશય જેવુ નથી જેમ શરીરમા પાચ પ્રાણની મુખ્યતા છે, તેમ જ શ્રીમદ્ભાગવતમા પણ રાસપંચાધ્યાયીની જ મુખ્યતા છે, એમ શ્રીસુબોધિનીજીમા નિરૂપણ છે, તેથી તે લીલાનું નામ 'ફલપ્રકરણ' પણ કહેવાય છે

तत्र स्थलं गूढतमं यमुनापुलिनात्मकम् ।
तद्याति दुर्गवत् सर्वागम्यं हृदि विभावयेत् ॥ ९ ॥

શ્લોકાર્થ:— તે કારણે શ્રી યમુનાજીના પુલિન (તટ) રૂપ અત્યંત ગૂઢ સ્થલ છે, તે દુર્ગની માફક સર્વથી અગમ્ય (ન જવાય તેવુ) છે, તેની હૃદયમા ભાવના કરવી

રહસ્ય—ગૂઢતમ સ્થળની કલ્પના પણ અત્યંત ગૂઢ પ્રદેશમા જ થાય સર્વ ઇંદ્રિયોમાં હૃદય છે, તે અતીવ ગૂઢ છે, તેથી તેની હૃદયમાં ભાવના કરવી. જેવાતેવા હૃદયમા તેવી ભાવના થવી મુશ્કેલ છે, માટે હૃદય પણ સર્વાત્મભાવવાલા હોવા જોઇએ. તે ન હોય તો રાસસ્થ સ્વરૂપની ભાવનાનો પ્રયાસ પણ ન આવે. વેણુનાદ શ્રવણ કરી વ્રજભક્તોએ સર્વાત્મભાવવાળા થઈ લીલાપરિકરસહિત ભગવત્સ્વરૂપ નો સાક્ષાત્કાર કર્યો સર્વથી અગમ્ય ભગવલ્લીલાસ્થાનની હૃદયમા ભાવના કરવા સર્વાત્મભાવની આવશ્યકતા એથી જ સિદ્ધ છે પહેલા ગ્રંથકાર આજ્ઞા કરી ગયા છે કે સર્વાત્મભાવની સિદ્ધિ માટે દૈન્યપૂર્વક પંચાક્ષરનો જપ કરવો

જેમ રસાત્મક આનંદકંદ રાસસ્થ પુરુષોત્તમ અને તેમની લીલા ગૂઢ છે, તેમ જ તેમનુ સ્થાન પણ ગૂઢ જ હોય એમા આશ્ચર્ય શું ? ઋગ્વેદની શ્રુતિમા પણ આ ભાવ સ્પષ્ટ છે પ્રભુનો લીલાના સ્થાનને લીલાના અનુસંધાનવાળો પુષ્ટિભક્ત જ પ્રકટ કરે છે, ઇતર નહીં આ ઉપરથી જણાવે કે લીલાસ્થાનની ભાવનાનો ઉપદેશ પુષ્ટિભક્તોને જ છે, કારણ કે તે સ્થાન સર્વથી અગમ્ય છે. એ સ્થલમા જવા માટે યમુના રુદ્ર વગેરે ટળવળે છે, તો પણ જઈ શકતા નથી, તેથી તેની ભાવના પણ જો સિદ્ધ કરવી હોય તો લીલાનુભવકર્તા શ્રીમદાચાર્યપ્રભુનો જ આશ્રય કરવો.

સૂચના.

પ્રથમ અકના પૃષ્ઠ ૨૩મા 'શુદ્ધાદ્વૈતવિજ્ઞાન' નામના મારા લેખમા-વિરુદ્ધધર્માશ્રયત્વનુ પ્રતિપાદન કરતી વખતે જે દૃષ્ટાન્ત મે આપ્યુ છે, તેમા 'જલરૂપ કમલ' ને બદલે 'જલનું તત્ત્વ શખ' અને 'તેજોરૂપ ગદા' ને બદલે 'તેજનું તત્ત્વ સુદર્શન' એમ વાચવુ એ લેખ લખતી વખતે આ લેખકને 'શ્રીસુબોધિની' ના આશયનો અનુવાદ કરવાનો વિચાર ન હતો, અને તેથી સાધારણ રીતે વિષ્ણુના આયુધોની પરસ્પર વિરુદ્ધતા અને તેમ છતા એકત્ર સ્થિતિ દર્શાવવાનું મુખ્ય પ્રયોજન હતુ. પરન્તુ હાલ કાશીમા શ્રીસુબોધિનીજીના દશમસ્કન્ધનુ જન્મપ્રકરણ છપાયુ છે, અને તે વાચતા માલમ પડ્યું કે તેજોરૂપ ગદા નથી પણ સુદર્શન છે, ગદા તો વાયુરૂપ છે, અને કમલને (પદ્મને) જલરૂપને બદલે આચાર્યશ્રી 'ભુવનાત્મક' કહે છે, અને શખને 'જલનું તત્ત્વ' કહે છે, આચાર્યશ્રી આ પ્રમાણે નિરૂપણ કરે છે, તેથી વૈષ્ણવોએ પણ તેજ પ્રમાણે સમજવુ જોઈએ એવા હેતુથી આ સૂચના અહિં કરવામા આવી છે. આ સૂચના હુ લખવાના વિચારમા હતો તે જ સમયમાં રા. પ્રકાશકે અન્ય વિષયમાં વયોવૃદ્ધ સાપ્રદાયિક શાસ્ત્રી છગનલાલ અમરજીનુ પત્ર છે એમ જણાવ્યું. આ સમાચારથી મનમા આનન્દ અને સતોષ થયો છે, અને ઉક્ત શાસ્ત્રીજીએ જે પરિશ્રમ લીધો તેને વાસ્તે અન્તઃકરણથી ઉપકાર માનુ છું સંપ્રદાયને વાસ્તે જે કાળજી એ પ્રતિમાસ પ્રદર્શિત કરે છે તેને વાસ્તે તેમને જેટલો ધન્યવાદ આપવામા આવે તેટલો થોડો જ છે

મુબઈ,
તા. ૧૮-૨-૧૨

લિ. મૂલચન્દ્ર તેલીવાલા.

सांप्रदायिक व्रतोत्सव.

(લેખ માટે લેખક પોતે જ જવાબદાર છે)

શ્રીમાન્ ભારતમાર્તડ વેદાતભટ્ટાચાર્ય વગેરે અનેક બીરૂદ વિભૂષિત પડિત પંચનદી શ્રીગોવર્ધનલાલાજી ઉપનામ શ્રીગટ્ટુલાલાજીના સ્મરણાર્થ એમના શિષ્ય (શાસ્ત્રી નંદકિશોરજી) દ્વારા, નાથદ્વારના દ્વિતિય મહારાજ શ્રી ૧૦૮ ગોવર્ધનલાલજી મહારાજ દરવર્ષ વાર્ષિકોત્સવની દિપ્પણી નિર્માણ કરાવી છપાવે છે તે મહારાજશ્રી ઉક્ત પડિતજી અને તેમનો અનુયાયિવર્ગ એ દિપ્પણીને માન આપી તેમા લખ્યા પ્રમાણે ઉત્સવ વ્રતાદિક કરે છે, ઉક્ત પંડિતજીના શિષ્ય શાસ્ત્રીજી ગુરૂસેવા કરે છે, પરતુ તે તે દેશાતરીય તિથિપત્રનુ તથા સાપ્રદાયિક અસાપ્રદાયિક માન્ય ધર્મશાસ્ત્રીય નિર્ણયોનુ અવલોકન કરીને ઉત્સવાદિક લખતા હોય એમા શક રહે છે જો કોઈ તેની સામે તકરાર કરે તો ઉક્ત પડિતજીના મુબઈનિવાસી અનુયાયીઓ શાસ્ત્રીજીના મિત્ર જ્યોતિર્વિદ્ સુદરદેવજીને સૂચના કરે છે, અને સુદરદેવજી પોતાના સ્વતત્ર ગણિતથી તે તિથિ નક્ષત્રો સિદ્ધ કરી સૌને સમજાવી દે છે. અહીં શોચનીય એટલુ જ છે કે અનુયાયિવર્ગ જાણે છે, છતા ધાર્મિક વિષયમા સરલતાનો રસ્તો છોડી દુર્વ્યવસ્થા કરે છે. જો તેઓના મન નિ પક્ષપાત હોય તો જ્યારે જ્યોતિષ્ વિષયમા સુદરદેવજીનો મત લે છે તે જ વખતે મુબઈમા પ્રસિદ્ધ થતા પ્રતિષ્ઠિત પચાંગોના કરનારાઓને પણ બોલાવે અને તેઓની સમક્ષ ગણિત કરાવી તે પ્રમાણે વર્તે, પરંતુ તેમ ન કરતા નિયમિત માણસો ભેગા થઈ ઇચ્છાનુજબ ગણિત કરી નિર્ણય છાપી દે, 'એ લોકોની આંખમા ધણી ધૂળ જેવુ, નહિ તો બીજુ

શુ ? એથી ધર્મનિષ્ઠ મનુષ્યોના ધર્મને હાનિ પહોંચે છે, તેથી અંતરાત્માની પ્રેરણાથી આજે અમાં નિવેદન કરવુ પડે છે કે જેવી આ સાલમાં શાસ્ત્રોક્તની સહજ ભુલથી મનુષ્યસમુદાયને ધર્મહાનિ થઈ છે તેવી આગળ ઉપર ન થાય સંવત્ ૧૯૬૭–૬૮ની સાલની નાથદ્વારાની વાર્ષિકોત્સવની ટિપ્પણીમાં શાસ્ત્રી મજકુરે જે ભૂલ કરી છે તે હું નીચે લખી જણાવું છુ

૧. જ્યેષ્ઠ શુક્લ ૧૫ રવિ–જ્યેષ્ઠાભિષેક.

આ ઉત્સવના નામથી જ જ્યેષ્ઠાનક્ષત્રની સત્તા સિદ્ધ છે, ત્યારે જે જે દેશોમાં ચૌદશ શનિવારને દિવસે અનુરાધા ૬૦ ઘડી પૂર્ણ ભોગવી પુનેમ રવિવારને દિવસે પણ કાઈક શેષ રહે તે દેશોમાં તો એ જ્યેષ્ઠાભિષેક સર્વથા આષાઢ વદી ૧ સોમવારે થવો આવશ્યક છે. પણ મુંબઈના ગણપત કૃષ્ણાજીના પંચાંગમા જ્યેષ્ઠ સુદિ ૧૪ ને દિવસે અનુરાધા ઘ ૫૮ પળ. ૧૮ છે અને મુહૂર્તચિંતક પંચાગમાં અનુરાધા ઘ ૫૮. પળ ૩૦ છે, ત્યા પણ તારકછાયામાં જ્યેષ્ઠાની સત્તા ન હોવાથી આષા૰ કૃ૰ ૧ સોમવારને દિવસે જ પ્રાપ્ત થાયછે.

૨. આષાઢ શુક્લ ૩. ગુરૂ. રથયાત્રા.

या दिन वेग न बनी सके तो वीज बुधवारकुं भी होय सके छे.

નાથદ્વારાની છપેલી ટિપ્પણીમાં આ પ્રમાણે ત્રીજ ગુરૂવારને મુખ્ય માનેલ છે અને તેની નકલ મુંબઈમા છપાણી છે તેમા બીજ બુધવારને મુખ્યતા આપી છે, પરતુ સુંદર દેવજીએ તો પોતાના સ્વતંત્ર ગણિતથી બીજ બુધવારને દિવસે જ પુષ્ય નક્ષત્રને સમાપ્ત કરી દીધુ છે ત્યારે ત્રીજ ગુરૂવારની મુખ્યતા કેવી રીતે સિદ્ધ કરી શકશે એ પણ વિચારવા લાયક છે બને દેશભેદથી સમાધાન યોગ્ય છે એમ કહીએ તો ટિપ્પણીમા દેશનો સ્પષ્ટ નિર્દેશ નથી, એમા તો કેવળ ત્રીજ ગુરૂવારની મુખ્યતા અને બીજ બુધવારની ગૌણતા સ્પષ્ટ શાસ્ત્રીજીએ જ લખી આપી છે તેથી ત્રીજ ગુરૂવારને દિવસે જ રથયાત્રા મુખ્ય છે એમ સિદ્ધ થાય છે

૩. શ્રાવણ શુ૰ ૧૪ બુધ–સર્વ યજુર્વેદીનકી શ્રાવણી, શ્રાવણ શુ ૧૫. ગુરુ આપસ્તમ્બ—કી શ્રાવણી એમ શાસ્ત્રીજી લખે છે, પણ—

पर्वण्यौदयिके कुर्युः श्रावणं तैत्तरीयकाः ।
बह्वृचाः श्रवणे कुर्युः ग्रहसंक्रान्तिवर्जिते ॥ १ ॥
श्रावणी पौर्णमासी तु संगवात्परतो यदि ।
तदैवौदयिकी ग्राह्या नान्यदौदयिकी भवेत् ॥
श्रवणः श्रावणं पर्व संगवस्पृग्यदा भवेत् ।
तदैवौदयिकं ग्राह्यं नान्यदौदयिकं भवेत् ॥

અર્થ—"અહસ્કાનિરહિત ઔદયિક પર્વમા તૈત્તરીયશાખાવાળાઓ શ્રાવણી કરે અને ઔદયિક શ્રવણમા ઋગ્વેદીઓએ શ્રાવણી કર્તવ્ય છે બાર ઘડી ઉપરાત શ્રાવણની પૂર્ણિમા હોય તો જ ઉદયવ્યાપિની ગ્રહણ કરવી ને એમ ન હોય તો પૂનમ ન લેવી શ્રવણ નક્ષત્ર અને શ્રાવણની પૂનમ બેસવ કાળનો સ્પર્શ કરે તો પણ ઉદયવ્યાપિની લેવી, અને ન કરે તો ઉદય વ્યાપિની ન લેવી" એમ નિર્ણયસિંધ્વાદિ ગ્રથોમા ગાર્ગ્યનુ વચન છે. હવે પુનમ ગુરુવારને દિવસે પ્રાત કાલ સુધી પણ પૂણમા નથી તો પછી સવકાલ ઉપરાત હોવાનો સંભવ જ કયાથી હોય? ત્યારે ગુરૂવારે શ્રાવણી કરવાની લખનુ એ સર્વથા અયોગ્ય છે આર્ષ વચનને આધારે તો આપગ્રંથીઓની શ્રાવણી બુધવારને દિવસે લખવી યોગ્ય હતી

૪ શ્રાવણ શુ૦ ૧૫ ગુરુવાર—

रक्षाबंधन ७॥ बजे भीतर पिछें भद्रा आय जाय है तासूं.

આશ્ચર્યની વાત છે કે સાડાસાત વાગ્યા પછી ભદ્રા આવી જાય છે એમ શાસ્ત્રીજી લખે છે પરતુ તે દિવસે પુનમ લગભગ પાચ વડી છે ઉપરાત પડવો બેસે છે પડવામા ભદ્રા કયા પ્રમાણોથી શાસ્ત્રીજી સિદ્ધ કરશે? તે જો એમના ખ્યાલમા હોય તો પ્રમાણસહિત જાહેર કરશે.

५. भाद्र० शु० १३ बुधवार

वामनजयन्तीके पारणा २॥ बजे पिछें अर्थात् श्रवण नक्षत्र समाप्त भयेपर।

ઉપર પ્રમાણે શાસ્ત્રીજી સાફ લખે છે પણ તેનુ લખવુ શ્રીપુરુષોત્તમજીના લેખથી વિરુદ્ધ હોવાના કારણથી માન્ય ગણાય નહિ ઉત્સવપ્રદીપમા કહ્યુ છે કે—

यदा तु शुद्धौनायां विद्धौनायां वा स्वल्पं श्रवण द्वितीयदिने च भूयस्तदा श्रवणमध्यभागस्त्याज्यः 'मैत्राद्यपादे स्वपितीह विष्णुः पौष्णान्त्यपादे प्रतिबोधमेति श्रुतेश्च मध्ये परिवृत्तमेति सुप्तप्रबोधपरिवर्तनमेव वर्ज्य'मितिविष्णुधर्मोत्तरवाक्यात् ।

અર્થ—જ્યારે શુદ્ધોનામા વા વિદ્ધોનામા શ્રવણ થોડુ હોય અને ત્રયોદશીને દિવસે વિશેષ હોય ત્યારે શ્રવણના મધ્ય ભાગને છોડીને પારણા કરે, કેમ કે અનુરાધાના પ્રથમ પાદમા વિષ્ણુભગવાન્ શયન કરે છે, રેવતીના ચોથા પાદમા જાગે છે, અને શ્રવણના મધ્ય ભાગમા પડખુ બદલે છે, તેથી એ પાદનો ત્યાગ કરવો એવુ વિષ્ણુ—ધર્મોત્તરનુ વાક્ય છે તેથી અઢી વાગ્યા પછી પારણા કરવા વિષે શાસ્ત્રીજીનો લેખ સર્વથા નિર્મૂલ હોવાથી કોઇ રીતે માની શકાય જ નહિ

६. आश्विन शु० १४ शनि—ઇષ્ટિ चतुर्दशीने दिवसे ઇષ્ટિ, કયા વચનથી પ્રાપ્ત છે? જે વચનથી પ્રાપ્ત હોય તે વચન શાસ્ત્રસિદ્ધ શાસ્ત્રીજી પ્રકટ કરે તો જ માન્ય રાખી શકાય, નહિ તો એ મોટી ભુલ ગણાય

૭ પૈષ શુ૦ ૧૨ સોમ.–પુત્રદા એકાદશીનિતમ મુખ્ય પ્રાન્તના કોઇ પણ પંચાંગમાં દશમી શનિવારે પંચાવન ઘડી નથી, પણ ચોપન ઘડી અને ઉપર કાંઇક પળો છે, ત્યાં રવિવારે અવિદ્ધ એકાદશી છોડવી એ પુષ્ટિસિદ્ધાતવિરૂદ્ધ છે દીક્ષિત શ્રીવિઠ્ઠલનાથજીએ દ્વાત્રિંશદપરાધનિરૂપણ ગ્રન્થમા

"अविद्धभागवद्व्रतत्यागः ॥

અર્થ—જેમાં વેધ ન હોય એવા ભગવાનૂના વ્રતને ત્યાગ કરવો એ પણ મહા અપરાધમા ગણેલ છે ત્યારે શુદ્ધ એકાદશીનો ત્યાગ કરી બારશમા વ્રત કરવુ એ શાસ્ત્રવિરૂદ્ધ છે જો કોઇ ગણિતથી વેધ લાવી શકાય તો એ જ ગણિતથી પુષ્ટિમાર્ગનું પચાગ પ્રકટ કરાવવુ જોઇએ, અને દેશાતરોના પણ તિથિનિર્ણયો તેમાં લખવા જોઇએ, જેથી કોઇ પણ વ્રતમા સંદેહ ઉત્પન્ન ન થાય, અને સર્વ પચાગ બનાવનારાઓને સૂચના કરવી જોઇએ કે ભારતવર્ષમા એ જ ક્રમથી પંચાગો બને જેથી અપરાધ પાપની સંભાવના ન રહે

લા. વૈષ્ણવોનો દાસ,

નાનાભાઇ કાળીદાસ.

દર્પણરેખાપેઠે જે જ્યાં હોય તેનો ત્યાં પ્રતિબિંબ પડતો નથી. તેથી સર્વગત બ્રહ્મ સર્વગત અવિદ્યામાં પણ હોવાથી (તેનો ત્યાં) પ્રતિબિંબ કેમ પડે ?— ત્યાં (દર્પણરેખા દૃષ્ટાન્તમાં) (રેખા) સંયોગસમ્બન્ધથી રહેલી છે તેથી પ્રતિબિંબ પડતો નથી, અહિ ઉભય (બ્રહ્મ અને અવિદ્યા) વિભુ હોવાથી તેમનો સંયોગ નથી, તેથી કાંઇ અનુપપત્તિ નથી—એમ કહી શકાય નહિ. કારણ કે પ્રભામણ્ડલ સંયુક્ત છે તોપણ તેનો (પ્રતિબિંબ) દેખાય છે—જે અંશમાં સંયોગ હોય તે અંશમાં પ્રતિબિંબ ન પડે—એમ પણ કહેવાય નહિ. કારણ કે બિસિનીસૂત્ર જેટલાજ અંતરે રાખેલી અંગુલીના તલભાગની પ્રભાનો પણ દર્પણમાં પ્રતિબિંબ પડે છે. વળી લોકમા બિંબ અને પ્રતિબિંબની એકત્ર સ્થિતિ નથી, તેથી ' દ્વિસુપર્ણ સંયુજ ' ' પરમ પરાર્ધમા ગુહામા પ્રવેશ કરેલા ' ' ગુહામાં પ્રવેશેલા (દ્વિ) આત્મા, કારણ કે તેમનુ પ્રતિપાદન છે ' ઇત્યાદિ શ્રુતિ અને ન્યાયથી નિર્ણીત જીવ અને પરમાત્માની એકત્ર સ્થિતિની બિંબપ્રતિબિંબપક્ષમા સંગતિ થતી નથી. વળી, ' અવિદ્યામાં બ્રહ્મનો પ્રતિબિંબ તે જીવ, અને અવિદ્યાનો નાશ તે મોક્ષ, એમ કહેતાં તમારા મતમાં જીવસ્વરૂપનો નાશ એ જ મોક્ષ એમ થાય છે અને આત્મહાનિ અપુરુષાર્થ છે તેથી મોક્ષ અપુરુષાર્થ થાય જીવ પણ અલીક થાય એમ હોવાથી કોઇપણ પરલોકમાટે પ્રયત્ન કરે નહિ. કારણ કે મુમુક્ષુ મોક્ષનું સ્વરૂપ અને સ્વકીય બદ્ધ સ્વરૂપ જાણીને ઉક્તસાધન માટે યત્ન કરે. અને તે ઉભયસ્વરૂપનુ જ્ઞાન થાય ત્યારે ' સર્વ મિથ્યા છે ' એમ જાણીને અને ' ઐહિકી અને પારલૌકિકી પણ પ્રવૃત્તિ અવિદ્યાના અધ્યાસથી થએલી છે ' એમ જાણીને, ' ઐહિકી (પ્રવૃત્તિ) સારી, પરન્તુ પારલૌકિકી સ્વરૂપહાનિનુ કારણ હોવાથી સારી નહિ ' એમ (વિચારી) સર્વ અપ્રવૃત્ત રહે, અને નિવૃત્તિમાર્ગમાં જ ઉચ્છેદ પામે અથવા સર્વે શાંત જ રહે. વિહિત અને નિષિદ્ધ સમાન હોવાથી, કોઇપણ (કાર્યમાંથી) નિવૃત્ત જ ન રહે, આવી રીતે સર્વસન્માર્ગનો ઉચ્છેદ કરવા, આવો મત પ્રવર્તાવનાર વેદને પણ માત્ર વ્યવહારમાં જ પ્રમાણ તરીકે સ્વીકારનાર (તું) પ્રચ્છન્નબૌદ્ધ છે વેદને પણ સ્વઅજ્ઞાનથી કલ્પિત કહેનાર અતિધૃષ્ટ છે.—સર્વ પ્રપંચ જ તેવો છે તેથી વેદને પણ તેમા આવી જવાથી તેવો કહું છું—તારા મોઢાને ચોકકું નથી તેથી ભલે કહે, પરન્તુ યુક્તિયુક્ત કહેતો નથી. કારણ કે પ્રતિબિંબિત આમ્રતરુકદમ્બના ફલ લેવા, પ્રતિબિંબ છે એમ જાણનાર કોઇપણ હુરત પ્રસારતાં જોવામાં આવ્યો નથી તે પ્રમાણે વેદને એવો (અજ્ઞાન કલ્પિત) જાણનાર કયો (પુરુષ) તેણે વર્ણવેલા સ્વર્ગ અપવર્ગ આદિ ફલવાલા અતિશય

જેમ અમિત્ર એટલે મિત્ર નહિ તે, અર્થાત્ કોઇ તટસ્થ પુરૂષ એમ નથી, પરતુ આપણું અહિત કરનાર દુશ્મન જ છે તેમ અજ્ઞાન એટલે જ્ઞાનનો અભાવ એમ નહિ, પરતુ આપણને ભ્રમ ઉત્પન્ન કરનાર ભાવરૂપ અવિદ્યા છે આ અવિદ્યાના તમ, મોહ, મહાતમ, તામિસ્ર અને અધતામિસ્ર એ પાંચ પર્વ છે તેમા તમઃ અર્થાત્ સ્વરૂપનુ અજ્ઞાન એ અવિદ્યાનુ પ્રથમ પર્વ અન્ય સર્વનુ મૂળ છે. આ અવિદ્યા અનાદિ છે. 'જીવનો બંધ અવિદ્યાથી અનાદિ છે' એ વચનથી જીવના બંધનુ કારણ જીવ અને બ્રહ્મનો વિભાગ અનાદિ છે અને તે વિભાગ કરનારી અવિદ્યા પણ અનાદિ છે જીવનો બંધ અનાદિ છે તેથી તે બંધનુ કારણ જીવ અને બ્રહ્મનો વિભાગ પણ અનાદિ હોવો જોઇએ અને તેથી તે વિભાગનુ કારણ અવિદ્યા પણ અનાદિ હોવી જોઇએ જીવ અનાદિ કાળથી બદ્ધ છે અને જીવ અને બ્રહ્મ વસ્તુત એક જ છે તો પણ બ્રહ્મને બંધ થતો નથી કારણ કે જીવ અને બ્રહ્મનો વિભાગ થયા પછી જીવને બંધ થાય છે વિભાગ થયા પહેલા જીવને બંધ નથી અહિ અનાદિ શબ્દનો આદિ અર્થાત્ આરંભરહિત એવો અર્થ નથી, પરતુ અનાદિ એટલે ચિરંતન અર્થાત્ ઘણા લાંબા સમયથી ચાલ્યુ આવેલુ એવો અર્થ છે

આ વિચિત્ર રૂપે પરિણામ પામતી દોષરૂપ અવિદ્યાથી જ વિચિત્ર જગતની પ્રતીતિ થાય છે. વસ્તુત જગત્ છે જ નહિ, પરંતુ આ અવિદ્યાથી જગતની પ્રતીતિ થાય છે તુચ્છ જગતનુ કારણ તુચ્છ અવિદ્યા હોય એ યોગ્ય જ છે કાર્ય કારણ જેવુ જ હોવુ જોઇએ તેથી કાર્ય જગત્ તુચ્છ હોવાથી તેનુ કારણ બ્રહ્મ હોય શકે જ નહિ, પરતુ તુચ્છ અવિદ્યા જ તેનુ કારણ હોવુ જોઇએ

વળી માત્ર મુખના સંબંધથી જ દર્પણ બિંબ પ્રતિબિંબના ભેદનુ કારણ થાય છે તેમ ચિદ્રૂપ બ્રહ્મના સંબંધથી જ અવિદ્યા જીવ અને બ્રહ્મના ભેદનુ કારણ થાય છે જેમ માત્ર દર્પણની સન્નિધિથી જ બિંબ અને પ્રતિબિંબ એવા ભેદ પડે છે, તેમ માત્ર અવિદ્યાની સન્નિધિ જ બ્રહ્મ અને જીવ એવા ભેદ પાડે છે આ પ્રતિબિંબ રૂપ જીવમા 'હુ અમુક છુ' એવો અધ્યાસ થાય છે આવો અધ્યાસ થવાથી જીવ પોતાને અજ કર્તા ભોક્તા વિગેરે માને છે અને તેથી જ સ્વર્ગની ઇચ્છાવાળા એ યજ્ઞ કરવો' વિગેરે વિધિથી પોતાને એ પ્રમાણે વર્તવાની આવશ્યકતા માને છે, અને હુ સંધ્યા આદિ નહિ કરુ તો મને દોષ થશે એમ માને છે ત્યાર પછી શમ, દમ વિગેરે સાધનોથી અને બ્રહ્મના શ્રવણ, મનન, નિદિધ્યાસન વિગેરેથી અવિદ્યાના અધિષ્ઠાનરૂપ પોતાના આત્માનુ અદ્વૈત કૂટસ્થ સચ્ચિદેકરસરૂપનું જ્ઞાન થાય છે શમ, દમ વિગેરે સાધનોથી ચિત્ત શુદ્ધ થાય છે, અને શુદ્ધ ચિત્તથી શ્રવણ, મનન અને નિદિધ્યાસન કરવાથી અવિદ્યાના અધિષ્ઠાન પોતાના આત્માના સત્ય સ્વરૂપનું જ્ઞાન થાય છે ત્યારે હુ અમુક જીવ છુ એવા અજ્ઞાનને સ્થાને હુ અદ્વૈત કૂટસ્થ સચ્ચિદરસ બ્રહ્મ જ છુ એવુ જ્ઞાન થાય છે આ જ્ઞાનથી અજ્ઞાન દૂર થાય છે આ જ્ઞાન અજ્ઞાનના નાશનુ કારણ છે. અજ્ઞાન દૂર થવાથી અજ્ઞાનનુ કારણ પ્રપંચ અર્થાત્ જગત્ પણ દૂર થાય છે. અજ્ઞાન દૂર થવાથી જગત્ પણ અસત્ય મિથ્યા છે એમ તેને ભાન થાય છે કારણ અજ્ઞાન નાશ થાય ત્યારે તેના કાર્ય જગતની પણ નિવૃત્તિ થાય તે સ્વાભાવિક જ છે. જગતની નિવૃત્તિ થવાથી 'બ્રહ્મ જાણનાર બ્રહ્મ જ થાયછે' શ્રુતિએ વર્ણવેલો મોક્ષ થાય છે મોક્ષ સ્વત થાય છે સાધનો માત્ર અજ્ઞાનની નિવૃત્તિ કરેછે, મોક્ષ ઉત્પન્ન કરતા નથી કારણ કે મોક્ષ બ્રહ્મરૂપ હોવાથી ઉત્પન્ન થતો નથી. મોક્ષ સ્વત થાય છે જેમ રજ્જુને ભ્રાંતિથી સર્પ માનીએ ત્યારે ભય ઉત્પન્ન થાય છે, પરતુ તે રજ્જુ છે, સર્પ નથી, એવુ જ્ઞાન થાય ત્યારે પ્રથમ તેમા થએલો સર્પનો અનુભવ અને તેથી થતો ભય દૂર થાય છે, અને સ્વાસ્થ્ય પ્રાપ્ત થાય છે તેમ અત્યાસુધી ભ્રાંતિથી જગત્ સત્ય માનીએ ત્યાસુધી જગતના દુ ખ વિગેરે આપણને બાધ કરે છે, પરતુ બ્રહ્મના સત્ય સ્વરૂપનુ જ્ઞાન થાય ત્યારે અજ્ઞાન અને તેનું કાર્ય જગત્ દૂર થવાથી મોક્ષ પ્રાપ્ત થાય છે.

પ્રમેયરત્નાર્ણવ.

ભક્તિવિભેદનુ વિશદીકરણ આ કોષ્ટકથી ઘણી જ સારી રીતે થાય છે.

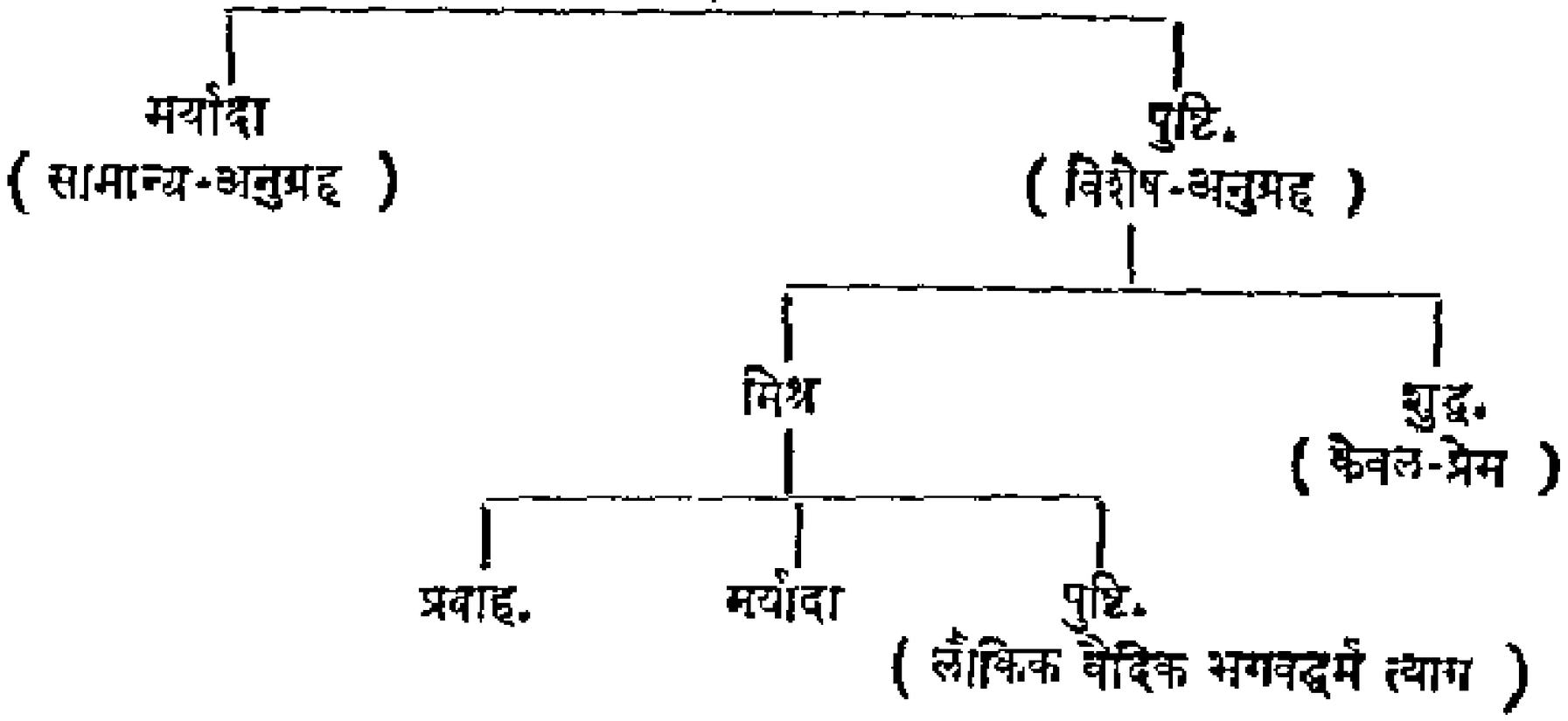

આ વિભેદ શ્રીમદાચાર્યચરણના વાક્યમા સ્પષ્ટ છે જુઓ, '[2]પુષ્ટિવડે યુક્ત સર્વજ્ઞ થાય છે, પ્રવાહથી યુક્ત ક્રિયા–કર્મમા આસક્ત થાય છે, મર્યાદાથી યુક્ત ગુણજ્ઞ થાય છે, અને પ્રેમવડે જ યુક્ત શુદ્ધ તો અત્યત દુર્લભ છે' આનુ રહસ્ય આ છે જે પુષ્ટિભક્તો પુષ્ટિથી યુક્ત હોય–એટલે ભગવદ્જનમા ઉપયુક્ત જ્ઞાનને પ્રકટ કરનાર પુષ્ટિરૂપ અનુગ્રહવિશેષથી યુક્ત હોય તો તે સર્વને જાણનાર થાય છે સર્વને જાણનાર એટલે પ્રભુ, પ્રભુની લીલા, પ્રભુનો પરિકર, પ્રપચસ્વરૂપ વગેરે સર્વને જાણનાર સમજવુ સર્વ પદાર્થનુ સ્વરૂપ જેવુ કહ્યુ છે, તેવુ સમજીને જેઓ ભજનરત થાય તે પુષ્ટિભક્ત કહેવાય છે હવે પ્રવાહમિશ્રનુ સ્વરૂપ સમજાવે છે પ્રવાહમા અહતામમતારૂપી મિથ્યા સસાર પ્રધાનપદ ભોગવે છે, તો તેવા પ્રવાહથી જે યુક્ત હોય તે ફક્ત કર્માસક્ત બને છે પરતુ તે પણ પુષ્ટિભક્ત હોવાથી અન્ય નિરર્થક કર્મ કરવામા કાલનિર્યાપન કરતા નથી, પણ ભગવદુપયોગિની ક્રિયામા જ યુક્ત રહે છે આનુ નામ પ્રવાહપુષ્ટિભક્ત કહેવાય છે મર્યાદાપુષ્ટિભક્તોનુ સ્વરૂપ આ છે મર્યાદા એટલે કાર્ય પણ વિષયમા જીવને કઈ સ્નેહથી પ્રવૃત્તિ થવા લાગે તો તેને યતી તે વિષયપ્રવૃત્તિને રોકી નિવૃત્તિમાર્ગના ધર્મોમા જીવની વૃત્તિઓને જોડી દેવી તે હવે તેવી મર્યાદાથી યુક્ત પુષ્ટિભક્તો વિષયાસક્તિની વિભાવના કર્યા વગર જ ભગવત્કથાશ્રવણ વગેરેમા પ્રવૃત્ત થાય છે આ પુષ્ટિભક્તો મર્યાદાપુષ્ટિભક્તો કહેવાય છે. હવે શુદ્ધ પુષ્ટિભક્તોનુ સ્વરૂપ બતલાવાય છે જેઓ કેવલ પ્રભુપ્રેમપરાયણ છે, જેઓ પ્રભુસેવા, પ્રભુગુણગાન વગેરે સ્નેહથી જ કરે છે, તે શુદ્ધપુષ્ટિ-ભક્તો છે તે અત્યત દુર્લભ પણ છે, મતલબ કે સર્વથી ઉત્કૃષ્ટ છે. સ્નેહોત્પત્તિ પછી સ્વત્વસ્નથી

---

૧ ગયા વર્ષમા 'ગુજરાતી' પત્રમા ભગવચ્છાસ્ત્રનિષ્ણાત મગ્નલાલશાસ્ત્રીના ભાષણ ઉપર 'વિદ્યાર્થી'ના નામથી જે વિતડાવાદ ચાલ્યો હતો, ત્યારે પુષ્ટિવિભેદનુ સ્પષ્ટીકરણ શાસ્ત્રીજીએ કર્યું હતુ, તે જ અત્ર કોઈપણ જાતના ફેરફાર વગર આપવામા આવે છે

૨ પુષ્ટયા યુક્તિમિશ્રા સર્વજ્ઞા પ્રવાહેણ ક્રિયારતા । મર્યાદયા ગુણજ્ઞાસ્તે શુદ્ધા પ્રેમ્ણાતિદુર્લભા ॥

કરાતા કૃષ્ણમક્ત શ્રવણ વગેરે ઉત્તમ પુષ્ટિભક્તિ છે, એમ 'ભક્તિહંસ'મા તેઓની જ ભક્તિનુ સ્વરૂપ વ્યક્ત કર્યુ છે, સામાન્ય પુષ્ટિભક્તિનુ સ્વરૂપ નહિ, કેમકે ઉપર આપેલા ભક્તિહંસના ઉપન્યાસમા 'સ્નેહ પાત્રી' અને 'ઉત્તમ' એ બે શબ્દો નજરે પડે છે, તે જ ઉત્કૃષ્ટ પુષ્ટિભક્તિના વ્યંજક છે

આ ગ્રથને આટલુ બાસ જાણવા જેવુ છે. જીવોએ [1]પુષ્ટિપુષ્ટિભક્તિ મારે યત્ન કરવો પ્રભુભક્તિમા ઉપયોગિ થઈ પડે એટલુ જ્ઞાન મેળવીને પ્રભુભક્તિમા નિરતર લેવાઈ જવુ. ચતુર્થ શુદ્ધપુષ્ટિભક્તિ તો પ્રભુ કૃપા કરી આપે ત્યારે જ તે મેળવવા ભાગ્યશાલી બનીએ, બાકી જીવની કોશેરો તો વ્યર્થ જ નીવડે છે, નિબધમા શ્રીમદાચાર્યચરણ આજ્ઞા કરે છે કે, '[2]શુદ્ધ અને સ્વતત્ર ભક્તિ તો દુર્લભ જ છે, માટે તેનુ કથન કરવામા આવતુ નથી.'

આ હેઠાણે એક આશકા ઉત્પન્ન થાય છે પુષ્ટિ એટલે પ્રભુનો અનુગ્રહ. પ્રભુનો અનુગ્રહ તો એક જ હોય, વધતો ઘટતો ન હોવો જોઈએ વધતો ઘટતો હોય તો જે આ બધા ભેદ બતાવ્યા તે માની શકાય, નહિ તો નહિ જ. આ શકાનો નિરાસ શ્રીમદ્ભાગવતના પ્રમાણોથી કરવામા આવે છે.

'ઉમોક્ષદ પ્રભુ પાસેથી જે પ્રસાદ ગોપીજનને પ્રાપ્ત કર્યો છે તે અનુગ્રહને બ્રહ્મા, રુદ્ર, અને વધારે તો શુ પણ પોતાના શ્રીઅગનો જ આશ્રય કરીને રહેનાર લક્ષ્મીજી પણ મેળવી શકયાં નથી' 'રાસોત્સવમાં અત્યત લીલા કરનાર પ્રભુનો જે પ્રસાદ, શ્રીવ્રજયુવતિઓએ પ્રભુના શ્રીહસ્તથી વીટાયેલા કંઠવાલા થઈને આશિષ મેળવીને પોતાના અગમા પ્રકટ કર્યો હતો, તે પ્રભુનો અનુગ્રહ શ્રીલક્ષ્મીજી તથા કમલગધથી શોભિત સ્વર્ગાંગનાઓ પણ સ્વાંગમાં પ્રકટ કરવા સમર્થ થઈ નથી બીજી તો પછી કયાથી જ થાય?' વગેરે વાકયથી નિશ્ચય થાય છે કે જેવા જેવા અધિકારીઓ હોય છે, જેટલી પોતાની ઈચ્છા હોય છે, તેના પ્રમાણમા પ્રભુકૃપા તેવા તેવા અધિકારીઓમા ઉતરે છે પ્રભુની ઈચ્છા વિશેષ અનુગ્રહ કરવાની હોય તો જ શ્રીવ્રજાગનાઓ પેઠે પુષ્ટિભક્તિ મેળવી શકાય છે. તે પુષ્ટિભક્તિથકે પ્રભુ તે ભક્તને અધીન બની રહે છે. '[3]મને ભક્તિ વડે વશ કરે છે' વગેરે નિજ વાકય અત્ર પ્રમાણ છે. ''પ્રભુને અધીન થઈ જવાય તે તો મર્યાદા છે, પણ પ્રભુ પોતાને અધીન બને તે જ પુષ્ટિ,' એમ શ્રીમદાચાર્યચરણ નિબધમા આજ્ઞા કરે છે આ શ્લોકમા 'પુષ્ટિ' એટલે પુષ્ટિભક્તિ સમજવી. જ્યા ભક્તનુ જ સામ્રાજ્ય ચાલતુ હોય, તેની જ સ્વતત્રતા હોય, પ્રભુ પણ ભક્તેચ્છાને જ અધીન બની કાર્ય કરતા હોય તે જ પુષ્ટિ. આ પુષ્ટિનું સ્વરૂપ દામોદરલીલામા જોવામા આવે છે આ જ પુષ્ટિશબ્દની વ્યાખ્યાનુ રહસ્ય છે

---

૧ કેટલાક પુષ્ટિમાર્ગના પ્રખ્યાત વિદ્વાનો આને 'ઉભય પુષ્ટિ' કહી, ઉપહાસ કરે છે અરેખર, ગયા જાણ્યા વગર, તેનુ નિગૂઢ રહસ્ય સમજ્યા વગર, પ્રતિષ્ઠાર્થ 'મસઉનો' કરવાની તેમની રીત દયાજનક જ લેખાશે દ્વિજમાત્રને પરમ પ્રેષ્ઠ ગાયત્રી ઉપર શ્રીમદાચાર્યચરણનુ ભાષ્ય એક વખત પણ વાચવાનો શ્રમ લેનારને સ્પષ્ટ જણાશે કે 'પુષ્ટિપુષ્ટિ' શબ્દ શાસ્ત્રસિદ્ધ છે, શાસ્ત્રીજીનો પોતાનો નથી

૨ ભક્તિ શુદ્ધા સ્વતન્ત્રા ચ દુર્લભેતિ ન સોચ્યતે ॥

૩ નૈવ રિરંસિતૈર્ભાવો ન શ્રીરત્યક્ષસંશ્રયા । પ્રસાદં લેભિરે ગોપી યત્તત્ પ્રાપ વિમુક્તિદાત્ ॥

૪ નાય શ્રિયોઽઙ્ગ ઉ નિતાન્તરતેઃ પ્રસાદ. સ્વર્યોષિતા નલિનગન્ધરુચા કુતોઽન્યાઃ' રાસોત્સવોઽસ્ય ભુજદણ્ડગૃહીતકણ્ઠલબ્ધાશિષા ય ઉદગાદ્ વ્રજયોષિતાં યઃ ॥

૫ યદા કુર્વન્તિ મા ભક્તદા ।

૬. કૃષ્ણાધીના તુ મર્યાદા સ્વાધીના પુષ્ટિરુચ્યતે ।

સ્વધર્મના મુખ્ય સિદ્ધાન્તો.

૧ જગત્ સત્ય છે

૨ જગત્, જીવ, અન્તર્યામી, અક્ષર પ્રત્યાદિના નિમિત્ત અને ઉપાદાન કારણ શુદ્ધ નિર્ગુણ
પ્રભુ કૃષ્ણ પરમાત્મા જ છે

૩ જીવે અવિદ્યાથી કલ્પેલો અહન્તામમતાત્મક સંસાર મિથ્યા છે.

૪ જીવ અણુ છે, શુદ્ધ નિર્ગુણ પ્રભુનો અંશ છે, વ્યાપક નથી

૫. પરબ્રહ્મ પુરુષોત્તમ કૃષ્ણનુ ધામ અક્ષર બ્રહ્મ ગણિતાનદ છે.

૬. સર્વોપરિ વેદાન્તિયાએ પ્રતિપાદિત પરમકારણાપન્ન વસ્તુ શ્રીકૃષ્ણ જ છે.

૭ કૃષ્ણની સેવા એ જ અંશ જીવનો ધર્મ છે, એટલે વસ્તુત સ્વધર્મ કૃષ્ણસેવા જ છે.

૮ આત્મનિવેદન અને પ્રભુપ્રપત્તિ વિના અન્ય વિશ્વધર્મ હોઈ શકે જ નહિ

Reg. No. B. 896

પુષ્ટિભક્તિસુધાના ગ્રાહકોને સવિનય નિવેદન.

આ માસિકના સર્વ લેખકો જે લેખ લખે છે તે સાંપ્રદાયિક સેવા કરવાની ચિમળ બુદ્ધિથી જ લખે છે, તેથી બીજા પત્રોની માફક આ માસિકના લેખકોને આપવામા દ્રવ્યનો ખરચ બિલકુલ થતો નથી, એ જણાવતા આનદ થાય છે માસિકની છપામણી વગેરે ખરચ ઘણી જ કરકસરથી કરવામા આવે છે, તેથી ગોછાવરમાથી જે કાઈ બચરો તેમાથી સાંપ્રદાયિક પ્રાચીન ગ્રથો પ્રસિદ્ધ કરવામા આવશે વૈષ્ણવભાઇઓએ આવા માસિકના પોતે ગ્રાહક થવુ જોઇએ, એટલુ જ નહિ પણ પોતાના મિત્રોને પણ આવા ધાર્મિક કાર્ય તરફ પ્રેમવાનુ ખાસ લક્ષમા રાખવુ જોઇએ

મુંબાઇ,
પ્રિન્સેસ સ્ટ્રીટ. }

પ્રકાશક.